रामायण और सतत विकास

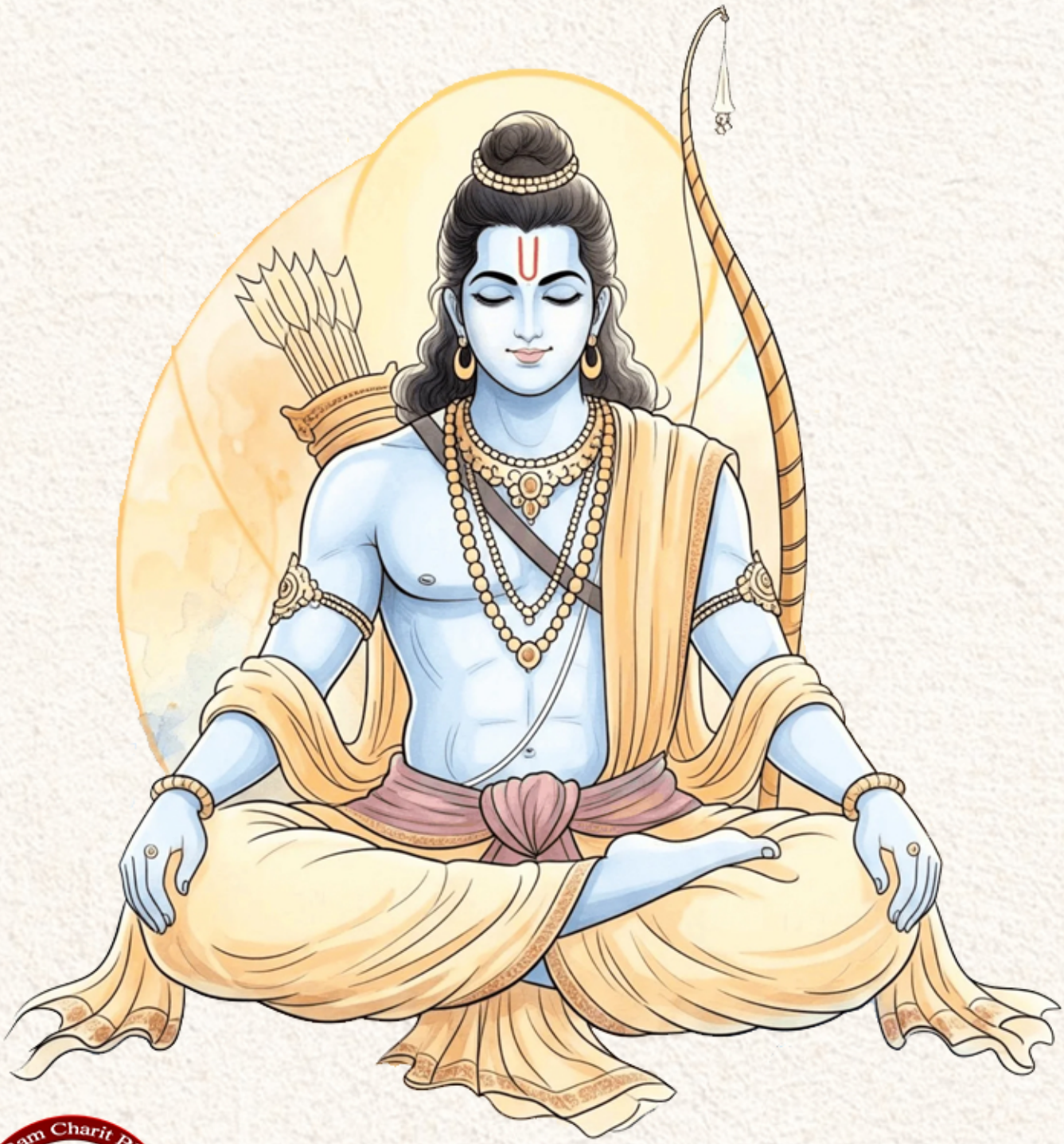

श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

Eighth International
Ramayana Conference

रामायण और सतत विकास

Eighth International Ramayana Conference

आठवाँ अंतरराष्ट्रीय रामायण अधिवेशन

December 11-13, 2025

Editors

Omprakash K. Gupta

University of Houston-Downtown

Shivprakash Agrawal

Shri Ram Charit Bhavan

श्री राम चरित भवन, ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

प्रकाशक
श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

Publisher
Shri Ram Charit Bhavan
Houston, USA

प्रथम संस्करण 2025
First Edition 2025

ISBN: 978-1-960627-07-0

पुस्तक में निहित विषयवस्तु, तथ्य, विचार अथवा विश्लेषण के लिए उसके लेखक पूर्ण रूप से उत्तरदायी हैं। इसके समस्त अधिकार भी लेखकों के पास सुरक्षित हैं। प्रकाशक अथवा संपादक मंडल की विषयवस्तु के प्रति सहमति और उत्तरदायित्व नहीं है। पुस्तक या उसके किसी भी अंश का पुनर्प्रस्तुतिकरण किसी भी माध्यम से स्वीकार्य नहीं होगा। चाहे यांत्रिक माध्यम हो या इलैक्ट्रॉनिक; जानकारी का संचयन लिखित आज्ञा लिए बिना नहीं किया जाना चाहिए। केवल एक समीक्षक को समीक्षा में आंशिक उदधृत करने की छूट रहेगी।

The contents, facts, views, and analysis in this work are entirely the responsibility of the authors and they reserve all rights. Neither the editorial board nor the publisher is responsible of contents by the authors. No part of this book may be reproduced in any form on by an electronic or mechanical means, including information storage and retrieval systems, without permission in writing, except by a reviewer who may quote brief passages in a review.

अनुक्रमणिका

1	रामचरित मानस में अग्नि के विविध रूप - *निवेदिता श्रीवास्तव 'निवी'*	1
2	रामायण की अल्प प्रचलित कहानियाँ: एक शाश्वत महाकाव्य के अनछुए पहलू - *अलका अग्रवाल*	3
3	वाल्मीकि रामायण में इंजीनियरिंग - *श्रीनिवास कुटुंबले, आशुतोष कुटुंबले*	9
4	राम का वनवास: सुनियोजित अथवा ईर्ष्यानुभावित - *हरि बाबू श्रीवास्तव*	33
5	The Golden Deer of the Rāmāyaṇa: Lessons in Finance, Governance, Psychology, and Decision-Making - *Venkatesh R Vedanthi*	38
6	Maharishi Valmiki's Ramayana and Sant Tulsidas's Ramacharitamanas—A Comparative Look - *Suman K Sharma*	50
7	Hanumana: The Icon of Selfless Service and Commitment - *Ravindra Nath Misra*	54
8	चंचल मन का सदुपयोग: रामचरितमानस के अभिमत का अनुसंधान - *आशुतोष कुमार*	57
9	From Brahmacharya to Birth: Hanuman, Makardhwaja and the Ethics of Resource Regeneration in Sustainable Development - *Sayali Kare*	63
10	रामायण और सतत विकास - *राकेश कुमार चौबे*	66
11	भगवान श्रीराम का अयोध्यावासियों को सार्वजानिक उद्बोधन - *कैलाश चन्द्र शर्मा*	80
12	The Ecology of Mind in the Ramayana: Mental Wellbeing and Sustainable Living (SDG 3) - *Tulsee Giri Goswami*	82
13	Revisiting the Ramayana: Ancient Wisdom for Modern Sustainability - *Rajesh Kumar Mishra*	87
14	रामचरितमानस में करुण रस - *अम्बे कुमारी*	96
15	Rama and Ramayana are Eternal - *Ujjwal Sardar*	100
16	Regent of Ayodhyā: Leadership Lessons from Bharata's Life in the Rāmāyaṇa - *Dharmesh Kumar, Jayashree Aanand Gajjam, Mahesh K*	103
17	सगुण - निर्गुण भक्ति परस्पर पूरक - *Ameeta Gupta*	107
18	उर्मिला की मौन प्रतीक्षा - *अलका श्रीवास्तव*	110
19	आंतरिक स्थिरता से सतत विकास: वाल्मीकि रामायण का एक योग-मनोवैज्ञानिक अध्ययन - *संगीता शर्मा*	114
20	त्रिजटा – एक अद्भुत व्यक्तित्व - *करुणा पांडे*	118
21	रामराज्य का आधार-राम का वनगमन - *Aasha Srivastava*	123
22	विभीषण गीता: धर्म, नीति और आत्मबल का प्रकाशपुंज - *नीलम झा*	126
23	Critical Astronomical Analysis of the Date of Rāma's Return to Ayodhyā - *Krutesh Patel, Vaidika Sansthan*	130
24	रावण : एक पराक्रमी व्यक्तित्व किंतु अभिशाप्त - *रसिका मुकुंद ढेपे*	136

25	वाल्मीकि रामायण में सीता चरित्र व अन्य स्त्री स्वरूप - *चेतना विलास काथार*	141
26	सीता (भक्ति) की खोज - एक विवेचना - *पुरुषोत्तम श्रीवास्तव 'पुरु'*	146
27	रामराज्य : सतत और समावेशी शासन का आदर्श मॉडल - *स्मिता कुमारी*	152
28	मन्दोदरी- एक चरित्र - *वीणा पाणि*	159
29	मानस शब्द मंथन - *स्मिता लाधावाला*	163
30	मंदोदरी की व्यथा - *सरिता श्रीवास्तव*	165
31	Sri Lanka is Ravana Lanka: A Scientific Correlation through Paleomagnetism, Oceanography and Ancient Scriptures - *Bala Venkateswara Rao Sankuratri*	167
32	रामचरितमानस में पक्षियों का कलरव - *चुंडूरी कामेश्वरी*	189
33	Geographical Study of Places Described in Valmiki Rāmāyaṇa: A Critical Analysis from Bāla-kāṇḍa - *Supriya Ashish Mahajan, Onkar Shamsundar Joshi, Nilesh Joshi*	195
34	"मानस के क्रम वैशिष्ट्य में अद्भुत प्राप्ति "विज्ञानभक्ति": विज्ञान, भक्ति और इंजीनियरिंग के द्वारा सस्टेनिबिलिटी के विशिष्ट परिपेक्ष्य में" - *मनीष दुबे*	199
35	मानस के प्रतिनायक दशानन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण : वाल्मीकि रामायण और आध्यात्म रामायण के तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में ..! - *राजरानी शर्मा, सुभाष शर्मा*	204
36	राम-कृष्ण के मध्य अद्वैतवाद - *अलका प्रमोद*	211
37	From Development to Dharma: Reimagining Sustainability through the Ramayana - *Prabhas Ranjan*	215
38	आत्मतोष (आत्मज्ञान से उत्पन्न संतोष या आनंद) - *ज्योत्सना सिंह*	221
39	Marketing Strategy Reflected in the Valmiki Ramayana: A Study of the Bala Kanda - *Rahul Sharadkumar Satghar*	223
40	राम की नीतिनिष्ठा - *मन्साराम गौड़*	226
41	रामायण में सतत विकास और जीवन-मूल्य आधारित शिक्षा: भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनर्पाठ - *अनुभूति शर्मा*	229
42	'महात्मा' बलसम्पन्नो रावणः': श्रीराम - *लिना सुनील पांडे*	233
43	Bridging Ancient Wisdom and Modern Ecology: The Ramayana and Sustainable Development Goals (SDGs) - *Sanjay Badoni, Subodh Saurabh Singh, Ashish Singh Chauhan*	236
44	Dharma & Ideal Polity - Social Sustainability through Shri Rama Raajya - *S. Vijaykrishnan*	241
45	हनुमान जी के आकाशगमन का वैज्ञानिक विश्लेषण - *प्रशान्त*	250
46	रामायण में इन्द्रजीत मेघनाद और सती सुलोचना की कथा - *राम मल्लिक, सरस्वती मल्लिक*	257
47	रामराज्य की व्यावहारिक कार्यप्रणाली - *आशीष कुमार दुबे, 'कौत्सश्री'*	259
48	मलयालम साहित्य में राम-कथा - *वत्सला 'किरण'*	267
49	भारत का सतत विकसन: ऋषीमुनियोंकी कार्यपरंपरा - *वृषली देवानंद जोशी*	273

50	महाकाव्य संकल्पना और वाल्मीकि रामायण: एक शोधपरक अध्ययन - *शरद कुबेर*	279
51	A Critical Study of the Lineage of Rāma in the Ayodhya Kāṇḍa: A Textual Analysis across Recensions of the Vālmīki Rāmāyaṇa - *Nilesh Joshi, Vaishnavi Pai*	283
52	रामायण में हनुमान की भूमिका: दैवीय वायुगतिकी तथा भक्ति, श्रद्धा, शक्ति और ब्रह्मांडीय चेतना में छिपा वैदिक विज्ञान - *भरत राज सिंह, प्रमोद कुमार सिंह, आशा कुलश्रेष्ठ*	287
53	आधुनिक युग में तुलसीदास के राम की प्रासंगिकता - *एन. लावण्या*	298
54	मंदोदरी और तारा का रामकथा में योगदान - *सरस्वती मल्लिक, राम मल्लिक*	302
55	Ramayana Documents Chandagupta-2 of Guptas - *Ramprasad Soghal MS*	305
56	Bee and Gardener Economic Sustainability Frameworks in the Vālmīki Ramayana - *Sriraman Chandramouli, S. Vijaykrishnan*	310
57	The Timeless Characters of the Ramayana: Symbols of Dharma, Devotion, and Ideal Conduct - *Bharti Sharma*	317
58	रामायण कालीन वानस्पतिक औषधिया - *संगम बाजपेयी, भुवनेश्वरी भारद्वाज, मयंक जिंदल*	320
59	पूर्ण नारीत्व के रूप में सीता मां का चित्रण - *Vandana Nohria*	325
60	मर्यादा से करुणा तक: विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में 'रामचरित' की पारिस्थितिकीय ज्ञान-मीमांसा और धारणीय विकास - *हेम कुमार गहतोड़ी*	327
61	रामराज्य आदर्श शासन का भारतीय दृष्टिकोण - *राजीव मिश्र*	329
62	रामराज्य और आधुनिक सुशासन - *राहुल कुलकर्णी, मंदार कुलकर्णी*	332
63	Examining the influence of Buddhism on the Rāma-Rāvaṇa Duel from the Reamker with Reference to VālmīkīrāmāyaṇaUdit Kulkarni	334
64	Vision, Mission, and Values in the Ramayana: A Blueprint for Modern Management - *Gauri Kulkarni*	340
65	A Comparative Analysis of the 17 UN Sustainable Development Goals and the Ideal of Ram Rajya in Shri Ramcharitmanas by Goswami Tulasidas - *Ashutosh Mishra, Akshay Dvivedi, Pradeep Kumar*	343
66	From Sevaka to Sadguru: The Unfolding of Guru-Tattva through Lakshmana in Valmiki Ramayana - *Dhananjay Vashistha*	348
67	The Dynamics of Counsel: Upadeśa in the Rāmāyaṇa - *Gouri Desai*	350
68	भारत और विश्व के लिए रामराज्य की मौलिकता - *महर्षि सुभाष*	357
69	Aditya Hrudayam – An Elixir for Getting out of Depression - *Uma Shankar*	363
70	Duties of the Ruler – Applicability of Rajadharma in Today's Global Context - *Shankar Venkatanarayanan*	370
71	Science and Technology in Ramayana - *Jayanthi Shreekrishna, Karthik N, Sharayu S Kulkarni*	377
72	"विधि का विधान और श्रीरामशलाका" (श्रीरामचरितमानस के विशेष सन्दर्भ में) - *राहुल रञ्जन*	383
73	रामचरितमानस महाकाव्य की प्रासंगिकता - *सन्तोष खन्ना*	389

74	मानस में संज्ञा - *विनीता मिश्रा*	393
75	Rama and Krishna the Eternal Dharma - *Sakshi Goyal, Chetan Gaur*	397
76	Glimpses of Sustainable Micro-Enterprises from Shri Ramcharitmanas - *Kritika Sharma, Vinay Sharma, Navneet Arora*	403
77	The Earth Does Not Belong to Us; We Belong to the Earth: An Eco-Concern in Ramayana - *Rachana*	407
78	Guidance from Ramayana on Navigating Moral and Ethical Dilemmas in Life - *Prateek Khanna*	410
79	The 16 Gems that Adorn Sri Rama - *Brinda Narayanan*	417
80	Vālmiki's Vānaras: Human or Humanoid - *Dhruv Parikshit*	421
81	Rāvaṇa of Vālmīki Rāmāyaṇa and Phammachak of Chinese Dai Rāmāyaṇa (Lanka Sip Ho): A Critical Comparison - *Irfan Ahmad*	429
82	Was Rāvaṇa an Ideal Brother? A Comparative Reading of the Rāmāyaṇa - *Kartik Iyer, Mohit Gaur*	435
83	वाल्मीकि रामायण में धर्म की सार्वभौमिकता: दक्षिण-पूर्व एशियाई रामायण के सन्दर्भ में - *संजीव मिश्र*	443
84	भरत चरित्र की भव्यता - *उर्मिला त्रिपाठी*	449
85	Leadership Redefined: The Principles of King Bharata's Rule - *Lalita Singhal*	452
86	"रामायण में पर्यावरण संतुलन और पारिस्थितिक चेतना" - *उत्तम वर्मन, स्मिता कुमारी*	457
87	Dharma in the Digital Age: Integrating the Values and Worldview of the Ramayana into building Devalay, a Culture-Centric Social Platform - *Abhinav Pandey*	460
88	गुणसागर हनुमान - *उषा श्रीवास्तव*	470

रामचरित मानस में अग्नि के विविध रूप

निवेदिता श्रीवास्तव 'निवी'
(Nivedita.Niveditasrivastava@gmail.com)

अग्नि,आग, पावक, अनल किसी भी नाम से सम्बोधित करें, यह जितनी पावन होती है उतनी ही दाहक भी होती है। यह अपनी विकट भूखी ज्वाला में सब कुछ हजम कर जाती है। परन्तु यही अग्नि जब रामचरित मानस के विविध प्रसंगों में उपस्थित होती है, तब शीतल और पावन होने के साथ ही संदेशप्रद भी होती है। कहा भी गया है कि जैसा स्वभाव, वैसा भाव। मानस की प्रकृति में, उसके स्वभाव में ही है उसको अपनाने वालों को विकार रहित करना। इसीलिये इसमें विविध रूपों में अपनी उपस्थिति दिखाती अग्नि सिर्फ़ प्रकृतिगत विकारों को ही जलाती है।

अग्नि दो तरह की होती है ... पहली जो स्थूल आँखों से बहुत से लोगों को एक साथ भी दिखाई दे सकती है। दूसरी अग्नि वह है जो दिखाई तो नहीं देती परन्तु अनुभव की जाती है, वह है अंतर्मन की अग्नि, जो मन की दुर्बलता को दूर कर देती है। रामचरित मानस में दोनों प्रकार की अग्नि दिखाई देती है।

कहीं-कहीं पर दोनों ही प्रकार की अग्नि दृष्टि में आती है जो अंतरमन में भी अपनी दाहकता से दस्तक देती लगती है। ऐसा ही प्रसंग आता है जब राक्षसों के अत्याचार से त्रस्त हुए सुतीक्ष्ण मुनि का राम की प्रतीक्षा करते हुए निराश हो कर अग्निप्रवेश करने का तुलसीदास जी ने वर्णन किया है। आत्मदाह के लिए बनी चिता पर जलते हुए सुतीक्ष्ण मुनि राम के अंतरमन में आक्रोश की अग्नि को अलग ही तीक्ष्णता दे जाते हैं।

इसी प्रकार की ही अग्नि हनुमान जी द्वारा लंका के भीषण दहन की भी है। मुझको लंका का यह अग्नि काण्ड हनुमान जी, जिन को सीता जी ने अपना पुत्र माना था, के आक्रोश की अग्नि लगती है। सामर्थ्यवान पुत्र अपनी माँ के अपहर्ता रावण की नगरी, लंका को जला कर उनके अपमान का प्रतिशोध लेते हुए चेतावनी सी देता है कि आततायी अपनी परिधि में रहे और सीता माता को ससम्मान वापस राम तक पहुँचा आये। उसके ऐसा नहीं करने पर, राम के आने पर उनकी विजयश्री की मार्ग में आनेवाली संभावित बाधाओं को नेस्तनाबूत करने का प्रयास भी था यह अग्नि काण्ड, जिसमें लंका के आयुध भंडार के साथ ही वहाँ के निवासियों का आत्मबल भी नष्ट हो गया था। लंका दहन एक पुत्र एवं भक्त के समर्पण का ज्वलंत उदाहरण है।

मानस में अग्नि का एक और चर्चित प्रसंग लंका विजय के पश्चात राम के पास वापस जाने पर सीता की अग्नि परीक्षा देने का है। यद्यपि इस प्रसंग से संबन्धित कई उप कथाएँ भी हैं, तथापि यदि साधारण मनुष्य के समान समझें तब यही लगता है कि नियमों के समक्ष, राजा हों या प्रजा, सब समान हैं। यद्यपि आध्यात्मिक रूप से देखा जाए तब यह प्रसंग इंगित करता है अग्नि देव को सीता जी की छाया अर्पित कर शक्ति के मूल तत्व ,असली सीता को वापस लाने का ही था।

मुझको इस का एक और ही अर्थ ज्यादा मोहक लगता है, जो दिखाता है कि सबसे नाजुक समझी जाने वाली स्त्री के प्रतीक के रुप में, पूरे वनवास काल में सबसे अधिक मुश्किलों का सामना सीता जी ने ही किया और इस का सामना करने में सहायक बना उनका आत्मबल जिसने अशोक वाटिका में एक नन्हे से तिनके को कवच सरीखा बना लिया था। एक तरह से सीता जी ने आमजन में यह विश्वास भरने की प्रेरणा दी कि कोई कितना भी असहाय क्यों न लग रहा हो, यदि वह आत्मबल को साधे रहे, तब विकटतम दुष्कर परिस्थियों का सामना कर सकता है। साथ ही यह भी बताता है कि यदि विश्वास प्रबल हो तो सबसे दुर्बल और उपेक्षित जीव अथवा वस्तु भी उस तिनके के समान सशक्त सहारा बन सकता है।

दिखाई देने वाली अग्नि का तीसरा प्रसंग है कामदेव के जलने के समय का। कामदेव प्रतीक हैं इच्छाओं के, ज्वलीभूत कामना के। वो गए थे शंकर भगवान की तपस्या भंग करने की कामना ले कर, परन्तु भोलेनाथ के तीसरे नेत्र के खुलते ही, स्वयं ही भस्म हो गए। यह प्रसंग इंगित करता है कि ईष्ट के पास सिर्फ़ उनको पाने की और स्वयं को समर्पित करने की ही कामना ले कर जाना चाहिए, न कि उनको अपनी इच्छानुसार परिवर्तित करने के।

रामचरित मानस में इस अग्नि के अतिरिक्त भी कई प्रकार की अग्नि और उसकी दाहकता, बिम्ब के रुप में दिखाई देती है, मन की अग्नि के रूप में, प्रकट नहीं होते हुए भी, या कह लीजिये कि दिखाई नहीं देते हुए भी है, अनेक स्थानों पर उपस्थित होती है।

इस श्रेणी में सबसे पहले ध्यान आकर्षित करता है कैकेयी के मन का दावानल, जो स्वयं के अस्तित्व को कलंक की अग्नि में आहुति दे कर राम को मर्यादा पुरुषोत्तम बनाने की इच्छा शक्ति की अग्नि से प्रज्जवलित होती है। यदि कैकेयी वचन में राम का वनवास नहीं मांगती, तब राम के वन

गमन की परिस्थिति ही नहीं आती और वह अन्य राजपुत्रों के समान एक साधारण राजपुत्र ही रह जाते जो इतिहास नहीं बना पाते अपितु इतिहास के पन्नों में कहीं खो गए होते।

इसी प्रकार की अग्नि दृष्टि में आती है जब वह कर्तव्य एवं सामाजिकता के आवरण में है जो विश्वामित्र के अनुरोध पर यज्ञ की रक्षा के लिए, उनके साथ राम एवं लक्ष्मण को भेजने से दशरथ को विवश सी करती दिखाई देती है।

अग्नि अपनी तीव्रतम दाहकता के साथ तब भी परिलक्षित होती है जब दशरथ कैकेयी को दिए गए वचनों को पूरा करने के लिए अपने हृदयांश राम को चौदह वर्षो के वनवास पर जाते देखते हैं और उनके अपने कुल की परिपाटी, कि 'प्राण जाये पर वचन नहिं जाई' की परम्परा के पालन की विवशता की कुंठा से प्रज्जवलित क्रोधाग्नि, उनके अपने ही प्राणों की आहुति भी ले लेती है।

दुबारा भी राम के रूप में एक सामाजिक चेतना की अग्नि प्रज्जवलित हुई थी जिसने अयोध्या के राजमहल से निकल कर, लंका तक के नामालूम से कंकर-कंकर को भी अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध करता पत्थर बना दिया था और सामान्य वनवासी एवं पशु पक्षी भी दिव्यास्त्रों के सम्मुख चट्टान बनने को तत्पर हो गए।

पारिवारिक सदभाव एवं रिश्तों के सामंजस्य की पावन अग्नि भी गुनगुनी गरमाहट दे जाती है जब राम के वनगमन पर, चाहें वो ऋषि के माँगने पर यज्ञ की सुरक्षा के लिए वन जाना हो अथवा कैकेयी के वचनों के परिणामस्वरूप का वन गमन हो, हर बार लक्ष्मण राम का अनुगमन करते हैं। इस श्रृंखला में भरत भी कहीं पीछे नहीं हैं। वो अयोध्या के राज़ सिंहासन के स्थान पर राम के हृदय के सिंहासन के आकांक्षी प्रतीत होते हैं, जब वह उनके प्रतिनिधि के रूप में नंदीग्राम से और शत्रुघ्न अयोध्या में रह कर राज्य की व्यवस्था को सुचारु रखते हैं।

इसी कड़ी में क्रोध और शर्मिंदगी की अग्नि प्रकट होती है राम के वनवास के कारण रूप में दोषी मानते हुए भरत के द्वारा कैकेयी के त्याग के रुप में।

अहंकार की अग्नि के प्रतीक रूप में रावण का चरित्र आता है। स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मानने का उसका अहंकार, पूरे कुल का नाश करवा देता है। इस कार्य में सहयोगी बनती है, रावण द्वारा अपने पति विद्युज्जिन्ह के वध का बदला लेने की लालसा की शूर्पणखा के हृदय में जलती प्रतिशोध की अग्नि।

जगत जननी सीता के रूप में प्रकट हुई माया की शक्ति की सात्विक अग्नि, पावन हवन की समिधा सी प्रकट हुई। लंका से उनको मुक्त कराने के लिए चले, एक प्रकार के जन अभियान में, स्वयं को सर्वथा निरीह, दुर्बल माननेवाले प्राणियों में आत्मचेतना की अलख जगा गयी थी।

अयोध्या के राजपरिवार की स्त्रियों की बात की जाए तो कौशल्या के हृदय में सब्र एव सहनशीलता का गुनगुना सा एहसास है तो सुमित्रा कर्तव्य पथ पर अडिग हो कर चलने की अलग ही तरह के दीपक की लौ सी जगमगाती हैं। माण्डवी और उर्मिला के हृदय में कर्तव्य एवं प्रतीक्षा की अग्नि दाहकता के स्थान पर गुनगुना सा एहसास देती है।

मानस में अग्नि सिर्फ़ अयोध्या के महल में ही सिमट कर नहीं रह गयी है, अपितु अयोध्या से लंका तक के वनों में निवास कर रहे ऋषियों के विवश आक्रोश की दाहकता के रुप में दावानल सी विस्तार पाती है। सच यह दावानल ही तो था जिसने अयोध्या के राजमहल से राम-लक्ष्मण रुपी चिंगारी को प्रखर बनने को प्रेरित कर के आसुरी प्रवृत्ति वाली लंका को नष्ट कर दिया।

मौसम एवं परिस्थितियों के अनुसार ही अग्नि अपना असर छोड़ती हुई कभी जलाती है तो कभी ठंड में ठिठुरती काया को गुनगुनी सी ऊष्मा प्रदान करती है। रामचरित मानस में, राम के सम्पर्क में आ कर अग्नि अपने सबसे पावन रूप ,में जीवन रूपी हवन में विकारों की समिधा को मुक्ति देती लगती है।

सब कुछ भस्म कर के, समूल नष्ट कर देने की क्षमता रखनेवाली, अग्नि को राम का आशीर्वाद मिल जाता है तब रामचरित मानस के विविध प्रसंगों में सर्दियों की धूप सी सकारात्मक लगती है और मन प्रभु कृपा की गुनगुनी धूप सेंकने लगता है।

जीवन का सच कहती अपनी ही पंक्तियों से प्रभु को नमन करती हूँ ...

जीवन जब जब हो कठिन, साँस लगे अभिशाप।
चरण शरण प्रभु की चलो, करो राम का जाप।।

रामायण की अल्प प्रचलित कहानियाँ: एक शाश्वत महाकाव्य के अनछुए पहलू

अलका अग्रवाल
तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद
(alkaagarwal.ag@gmail.com)

रामायण विश्व साहित्य के सबसे स्थायी और प्रभावशाली महाकाव्यों में से एक है। पारंपरिक रूप से भगवान राम की नैतिक पूर्णता, सीता के सतीत्व और अधर्म पर धर्म की विजय की कथा के रूप में पढ़ा जाने वाला यह महाकाव्य सहस्राब्दियों से दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशिया की आध्यात्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक चेतना को आकार देता रहा है। फिर भी, अपने प्रत्यक्ष धार्मिक और नैतिक आयामों से परे, रामायण में कई अनछुए विषय छिपे हैं जो मानव स्वभाव और ब्रह्मांडीय व्यवस्था की एक परिष्कृत समझ को प्रकट करते हैं। यह शोधपत्र इन अल्प चर्चित दृष्टिकोणों से रामायण का पुनर्मूल्यांकन करता है, और महाकाव्य की बहुलवादी आवाज़ों और समकालीन नैतिक एवं आध्यात्मिक विमर्श में इसकी निरंतर प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है।

1. परिचित आख्यान से परे परिचय

ऋषि वाल्मीकि द्वारा रचित और अनगिनत क्षेत्रीय संस्करणों के माध्यम से निरंतर जारी, रामायण धर्मशास्त्र, नैतिकता और कला के बीच की सीमाओं को पार करती है। यह एक पौराणिक इतिहास और मानवीय चेतना दोनों का दर्पण है। (गोल्डमैन एंड गोल्डमैन, 2017) **हालाँकि इसे भगवान राम के आदर्श आचरण और सीता के सतीत्व की कथा के रूप में लोकप्रिय रूप से याद किया जाता है, लेकिन इसमें दर्शन, मनोविज्ञान और अध्यात्म से जुड़े कई आयाम निहित हैं।**

वाल्मीकि के संस्कृत महाकाव्य से लेकर कंबन के तमिल इरामावतारम और तुलसीदास के रामचरितमानस तक, प्रत्येक पुनर्कथन आख्यान के नैतिक ब्रह्मांड को नया रूप देता है (रामानुजन, 1991) **। इन संस्करणों की विविधता दर्शाती है कि रामायण एक स्थिर ग्रंथ नहीं, बल्कि एक जीवंत नैतिक प्रवचन है।**

यह अध्ययन रामायण की दुनिया के कम प्रकाशित पहलुओं के माध्यम से रामायण की पुनः जांच करता है: महिलाओं की शांत शक्ति, नायकों की नैतिक दुविधाएं, विद्वानों का पतन, पवित्र स्थान की पारिस्थितिकी, तथा मानव और दैवीय साधनों **की अन्योन्याश्रयता।**

2. विस्तार: गौण पात्रों का नैतिक बल

यद्यपि राम, सीता और रावण महाकाव्य की कथा में प्रमुख भूमिका निभाते हैं, रामायण की नैतिक संरचना इसके गौण पात्रों द्वारा संचालित होती है—जो छोटे-छोटे किन्तु गहन कार्यों के माध्यम से धर्म का पालन करते हैं।

2.1 वाल्मीकि: मुक्ति और एक ऋषि का जन्म

डाकू रत्नाकर का ऋषि वाल्मीकि में रूपांतरण आत्म-जागरूकता के माध्यम से आध्यात्मिक रूपांतरण का प्रतीक है। पाप और उत्तरदायित्व की नारद की जिज्ञासा से जागृत, रत्नाकर की तपस्या पवित्र वाणी (श्लोक) के जन्म में परिणत होती है—जो रहस्योद्घाटन का काव्यात्मक अवतार है। **(**राधाकृष्णन, **1993)**

इस प्रकार, वाल्मीकि द्वारा रामायण की रचना कला और चिंतन की मुक्तिदायी शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। उनके माध्यम से, हिंसा काव्य बन जाती है और अपराधबोध ज्ञान बन जाता है। उनकी कहानी महाकाव्य के आध्यात्मिक संदेश को रेखांकित करती है: कि ज्ञान विरासत में नहीं मिलता, बल्कि आंतरिक शुद्धि के माध्यम से प्राप्त होता है।

2.2 सीता: शक्ति और आत्म-साक्षात्कार की प्रतिमूर्ति

सीता का पति भक्त पत्नी के आदर्श के रूप में चित्रण अक्सर उनकी स्वतंत्रता और नैतिक साहस को अस्पष्ट कर देता है। फिर भी, गहन अध्ययन से पता चलता है कि वे सत्य की एक आत्म-संयमी साधिका हैं, जो शक्ति का प्रतीक हैं—वह स्त्री शक्ति जो धर्म को बनाए रखती है। **(**किश्वर, **1989)**

सीता सिय रूप अनूप सुहाई।
धरम, नीति, नारी की नाई।।
वन बिपिन में राखी मरजादा।

शक्ति, सहिष्णुता की प्रतिपादा।।

राम के साथ वनवास जाने का उनका चुनाव अधीनता में नहीं, बल्कि स्वायत्तता में निहित एकजुटता की घोषणा है। बंदी अवस्था के दौरान, वे नैतिक वाक्पटुता के साथ रावण के प्रस्तावों को अस्वीकार करती हैं, जो दबाव में विवेक की दृढ़ता का प्रतीक है। अग्नि परीक्षा की मांग करके, वे न केवल अपनी पवित्रता की रक्षा करती हैं, बल्कि एक संशयी समाज के समक्ष अपनी नैतिक संप्रभुता का दावा भी करती हैं। **(सेन, 1992)**

अग्नि परीक्षां दी न डराई।
सत्य-सुधा मन भीतर छाई।।
शक्ति सियं अवतार अनूपा।
आत्म-साक्षि जग जाहिर रूपा।।

उत्तरकांड में, जब सीता एक और परीक्षा से गुजरने से इनकार करती हैं और पृथ्वी में समा जाती हैं, तो वे पितृसत्तात्मक न्याय से अपनी पहचान पुनः प्राप्त करती हैं। उनका अंतिम कार्य पीड़ित होने को उत्कृष्टता में बदल देता है—ब्रह्मांडीय माँ (पृथ्वी देवी) के प्रति एक सचेत वापसी।

इस प्रकार, सीता की कहानी सामाजिक मान्यता पर आध्यात्मिक अखंडता की विजय का प्रतिनिधित्व करती है, जो उन्हें आंतरिक स्वतंत्रता का एक स्थायी प्रतीक बनाती है।

2.3 रावण: विद्वान राजा और सद्गुणों का विरोधाभास

यद्यपि रावण को खलनायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, फिर भी वह दिशाभ्रमित ज्ञान की त्रासद भव्यता का प्रतीक है। वेदों पर उसकी निपुणता, शिवभक्ति और शासन-कुशलता, उसकी नैतिक अंधता से बिल्कुल विपरीत हैं **(रामानुजन, 1991)** । उसका पतन अज्ञानता का दंड नहीं, बल्कि अनियंत्रित अहंकार का परिणाम है।

रावन रूप विरोध बिचित्रा। ज्ञानी परंतु अहं अति चित्रा।।
सीखा जग को यही उपदेशा। विनय बिना न टिकै सुरेशा।।

कुछ जैन और बौद्ध संस्करणों में, रावण को महान और न्यायप्रिय के रूप में चित्रित किया गया है, जो दुर्गुणों के बजाय भाग्य से नष्ट हुआ है। यह पुनर्कल्पना भारतीय चिंतन में निहित नैतिक सापेक्षवाद को प्रकट करती है—जहाँ विरोधियों में भी आध्यात्मिक क्षमता होती है। **(कुमार, 2003)**

रावण की त्रासदी बौद्धिक उपलब्धि और नैतिक बोध के बीच के अंतर में निहित है। वह उदाहरण प्रस्तुत करता है कि कैसे शक्ति और ज्ञान, विनम्रता से नियंत्रित न होकर, विनाश के साधन बन जाते हैं। इस प्रकार, वह आत्म-जागरूकता से विमुख प्रतिभा के अहंकार के विरुद्ध एक चिरस्थायी चेतावनी के रूप में खड़ा है।

2.4 लक्ष्मण: कर्तव्य की मौन शक्ति

लक्ष्मण सेवा के प्रतीक हैं—निःस्वार्थ सेवा, जो भक्ति का सर्वोच्च रूप है। राम के प्रति उनकी अटूट निष्ठा, यहाँ तक कि व्यक्तिगत सुख-सुविधा और पारिवारिक जीवन की कीमत पर भी, कर्म योग के सिद्धांत को प्रतिबिम्बित करती है: बिना किसी फल की आसक्ति के किया गया कर्म **(राधाकृष्णन, 1993)** ।

बिनु सिय राम न जीवन रामा। रामहि सम प्रान प्रिय सिय नामा।।
प्राण तजेहुँ सेवक सुखदायी। राम बिनु रहत नहिं मन भाई।। *(अयोध्या कांड)*

यह चौपाई उनके पूर्ण समर्पण और कर्तव्यनिष्ठा का प्रमाण है।

राम के विपरीत, लक्ष्मण को दैवीय आदर्श नहीं माना जाता; उनका गुण पूर्णतः मानवीय है। उनका मौन कष्ट—चाहे वनवास में हो, सीता की कैद के दौरान हो, या बाद में उनके दूसरे निर्वासन में—उन लोगों के नैतिक भार का प्रतिनिधित्व करता है जो बिना किसी मान्यता के सेवा करते हैं।

आज्ञाकारिता और करुणा के बीच लक्ष्मण का आंतरिक संघर्ष, कर्तव्य और भावना के बीच संतुलन बनाने वाले प्रत्येक कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति के नैतिक संघर्ष के समान है। उनका संयम दर्शाता है कि धार्मिकता कभी-कभी वीरतापूर्ण कार्य में नहीं, बल्कि विनम्र सहनशीलता में निहित होती है।

2.5 उर्मिला: विस्मृत बलिदान

रामायण में सबसे कम चर्चित पात्रों में से एक हैं उर्मिला, सीता की बहन और लक्ष्मण की पत्नी। उनकी कहानी मौन में सामने आती है, फिर भी उनका बलिदान महाकाव्य में भक्ति के महानतम कृत्यों से प्रतिस्पर्धा करता है।

जब लक्ष्मण राम के साथ वनवास जाते हैं, तो उर्मिला अयोध्या में ही रहती है, परित्याग के कारण नहीं, बल्कि साझा कर्तव्य के कारण। कुछ परंपराओं में वर्णन है कि वह चौदह वर्षों तक लक्ष्मण के स्थान पर सोती रही ताकि वह राम की सेवा के लिए जागृत रह सकें—यह अदृश्य समर्थन का एक रूपक है। **(सेन, 1992)**

उर्मिला का त्याग गहन है: वह बिना किसी द्वेष के एकांत, बिना किसी शिकायत के गुमनामी को स्वीकार करती है। उनका धैर्य उस अप्रतिष्ठित स्त्री ऊर्जा का प्रतीक है जो दृश्यमान नायकों के पीछे धर्म को बनाए रखती है।

दार्शनिक रूप से, उर्मिला स्थिर शक्ति का प्रतिनिधित्व करती हैं—ब्रह्मांडीय व्यवस्था का मौन आधार। उनकी कहानी सिखाती है कि सभी बलिदान सार्वजनिक नहीं होते; कभी-कभी धर्म कर्म के बजाय शांत सहनशीलता के रूप में प्रकट होता है।

ऐसे युग में जहाँ बाह्य वीरता का उत्सव मनाया जाता है, उर्मिला की विस्मृत भक्ति अदृश्य गुणों के पुनर्मूल्यांकन को आमंत्रित करती है—शांति के माध्यम से व्यक्त प्रेम, मौन के माध्यम से सेवा।

2.6 शबरी का नैतिक बल

रामायण में शबरी का नैतिक बल उसकी शुद्ध भक्ति, विनम्रता और अटूट विश्वास में निहित है। अपनी निम्न मूलभूमि के बावजूद, वह भगवान राम के प्रति अपनी सच्ची सेवा और प्रेम के माध्यम से आध्यात्मिक महानता प्राप्त करती है। राम तक केवल मीठे बेर पहुँचाने के लिए बेर चखने का उसका कार्य निस्वार्थ भक्ति और सच्ची भक्ति के सार का प्रतीक है। शबरी का सरल हृदय और दृढ़ विश्वास सामाजिक बाधाओं को पार करता है, यह सिद्ध करता है कि धार्मिकता और ईश्वरीय कृपा प्रतिष्ठा से नहीं, बल्कि ईमानदारी से अर्जित की जाती है। उसका विश्वास उसके आश्रम को आध्यात्मिक प्रकाश के स्थान में बदल देता है, जो नैतिक शक्ति के सर्वोच्च रूप के रूप में भक्ति की शक्ति को मूर्त रूप प्रदान करता है।

2.7 निषाद राज गुहा

रामायण में, निषाद राज गुहा एक महत्वपूर्ण और दयालु भूमिका निभाते हैं। वे वनवासी निषाद जनजाति के मुखिया और भगवान राम के घनिष्ठ मित्र एवं भक्त थे। जब राम, सीता और लक्ष्मण को वनवास हुआ, तो गुहा ने श्रृंगवेरपुर में गंगा नदी के तट पर उनका गर्मजोशी से स्वागत किया।
उन्होंने उन्हें भोजन और आश्रय प्रदान किया, यहाँ तक कि वनवास में राम के साथ जाने की इच्छा भी व्यक्त की। गुहा ने गंगा पार करने के लिए नाव की व्यवस्था की और उनकी सुरक्षित यात्रा सुनिश्चित की। राम के प्रति उनका गहरा स्नेह, विनम्रता और भक्ति सामाजिक और जातिगत सीमाओं से परे सच्ची मित्रता और समानता का प्रतीक थी। गुहा के कार्यों ने निष्ठा, सेवा और शुद्ध हृदय भक्ति को उजागर किया, जो पूरे रामायण में वर्णित प्रमुख गुण हैं।

2.8 केवट

रामायण में, केवट (नाविक) एक विनम्र किन्तु अत्यंत समर्पित पात्र है जो भगवान राम के प्रति अपार श्रद्धा रखता है। जब राम, सीता और लक्ष्मण गंगा तट पर पहुँचे, तो केवट ही वह पात्र था जिसने उन्हें नदी पार कराई। हालाँकि, ऐसा करने से पहले, उसने राम के चरण धोए, क्योंकि उसे विश्वास था कि भगवान के चरणों का दिव्य स्पर्श एक पत्थर को भी स्त्री बना सकता है, जैसा कि अहिल्या के साथ हुआ था।
भक्तिभाव से, केवट ने कामना की कि राम के चरणों की धूल उसे भी पवित्र कर दे। उसका यह कार्य आस्था, विनम्रता और निस्वार्थ सेवा का प्रतीक है। गरीब होने के बावजूद, केवट ने कोई भी भुगतान लेने से इनकार कर दिया और कहा कि भगवान की सेवा करने का अवसर पाकर वह पहले ही "भुगतान" कर चुका है। उसका चरित्र रामायण में शुद्ध भक्ति के आदर्श को खूबसूरती से दर्शाता है।
रामायण में शबरी, निषादराज और केवट के प्रसंगों से पता चलता है कि राम जैसे महान आत्मा जाति और पंथ के आधार पर भेदभाव नहीं करते हैं, वे केवल सच्ची भावना और भक्ति के आधार पर आशीर्वाद देते हैं।

2.9 त्रिजटा स्त्री नैतिक अंतर्दृष्टि का प्रतीक

त्रिजटा की नैतिक शक्ति" त्रिजटा द्वारा सन्निहित नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति को संदर्भित करती है, जो रामायण में एक महत्वपूर्ण लेकिन अक्सर कम महत्व दी जाने वाली पात्र है। वह सुंदरकांड में सबसे प्रमुख रूप से दिखाई देती है, जहाँ वह लंका में सीता की कैद के दौरान उनकी रक्षा करने वाली एक राक्षसी के रूप में कार्य करती है। रावण के राक्षसी दल का हिस्सा होने के बावजूद, त्रिजटा सत्य, करुणा और नैतिक स्पष्टता की आवाज़ के रूप में उभरती है - उसका चरित्र अधर्म (बुराई या नैतिक अराजकता) के बीच भी धर्म की विजय का प्रतीक है।

वाल्मीकि की रामायण में, उसे एक भविष्यसूचक स्वप्न आता है जिसमें रावण के विनाश और राम की विजय का खुलासा होता है। वह इसकी सत्य व्याख्या करती है, और दूसरों को चेतावनी देती है कि सीता के सद्गुण और राम की धार्मिकता की जीत होगी।

अपनी राक्षसी उत्पत्ति के बावजूद, त्रिजटा सीता के साथ दया और सम्मान से पेश आती है। वह सीता को सांत्वना देती है, उन्हें आश्वस्त करती है कि उनके दुख जल्द ही समाप्त हो जाएँगे और अच्छाई की जीत होगी। त्रिजटा स्त्री नैतिक अंतर्दृष्टि का प्रतीक है—सहज, पोषण करने वाली और आध्यात्मिक रूप से स्पष्ट।

जहाँ सीता पवित्रता और दृढ़ता की प्रतीक हैं, वहीं त्रिजटा ज्ञान और विवेक की प्रतीक हैं। साथ मिलकर, ये दोनों महाकाव्य में आदर्श नारीत्व की दोहरी छवि बनाते हैं—पवित्रता और नैतिक शक्ति एक साथ काम करती हैं। त्रिजटा दैत्यों की दुनिया और दैवीय दुनिया के बीच एक नैतिक सेतु के रूप में खड़ी हैं।

त्रिजटा का नैतिक बल उनकी सत्यनिष्ठा, करुणा और अंतर्दृष्टि में निहित है। वह हमें याद दिलाती हैं कि नैतिकता किसी की जाति, भूमिका या परिवेश से नहीं, बल्कि नैतिक संघर्ष के सामने किसी के द्वारा चुने गए विकल्पों से परिभाषित होती है। अंधकार के हृदय में, त्रिजटा धर्म के एक शांत

लेकिन शक्तिशाली अवतार के रूप में चमकती हैं—एक नैतिक प्रकाश स्तंभ जो सीता और पाठक दोनों को सत्य और आशा की ओर मार्गदर्शन करता है।

2.10 जटायु और धर्म के प्रति समर्पण

रामायण में वीर गिद्ध जटायु अपने निस्वार्थ साहस और धर्म के प्रति समर्पण के माध्यम से गहन नैतिक बल का प्रतीक हैं। जब रावण सीता का अपहरण करता है, तो जटायु निडरता से उसका सामना करते हैं, यह जानते हुए भी कि उन्हें मृत्यु का सामना करना है, सद्गुणों की रक्षा करते हैं। उनका बलिदान भय और स्वार्थ पर धर्म की विजय का प्रतीक है। सत्य और न्याय के लिए अपने प्राणों की आहुति देकर, जटायु यह प्रदर्शित करते हैं कि नैतिक शक्ति विजय में नहीं, बल्कि सत्य के प्रति अटूट प्रतिबद्धता में निहित है। निष्ठा और कर्तव्य का उनका मरणासन्न कार्य उन्हें सद्गुणों के संरक्षक के रूप में पवित्र करता है - एक महान आत्मा जो निश्चित पराजय के बावजूद भी धर्म का पालन करती है।

2.11 मंदोदरी का नैतिक बल

रामायण में मंदोदरी का नैतिक बल रावण की रानी होने के बावजूद उनकी बुद्धिमत्ता, सदाचार और धर्म के प्रति दृढ़ निष्ठा में निहित है। वह नैतिक निष्ठा और तर्क की प्रतिमूर्ति हैं, अक्सर रावण को अपना अभिमान त्यागने और सीता को लौटाने की सलाह देती हैं, और उसे उसके कार्यों के विनाशकारी मार्ग से आगाह करती हैं। एक पत्नी के रूप में अपने कर्तव्यों से बंधी होने के बावजूद, मंदोदरी कभी भी अपने धर्म के प्रति समझौता नहीं करतीं, निष्ठा और नैतिक विवेक का संतुलन बनाए रखती हैं। रावण के पतन के बाद उसका दुःख केवल अपने पति के लिए नहीं, बल्कि उस नैतिक पतन के लिए है जिसके कारण उसका विनाश हुआ। अपनी बुद्धि और संयम के माध्यम से, मंदोदरी अराजकता और भ्रष्टाचार के बीच धर्म की शांत शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है।

2.12 विभीषण का नैतिक साहस

रामायण में विभीषण का नैतिक बल अधर्मियों के बीच रहते हुए भी धर्म के प्रति उनकी अटूट प्रतिबद्धता से उपजा है। रावण के भाई के रूप में, वे अपने ही परिजनों के अहंकार और अन्याय के विरुद्ध खड़े होते हैं और रावण से सीता को लौटाने और धर्म की रक्षा करने का आग्रह करते हैं। जब उनकी सलाह अस्वीकार कर दी जाती है, तो विभीषण पारिवारिक निष्ठा के स्थान पर सत्य को चुनते हैं और न्याय के लिए राम के साथ हो लेते हैं। यह कार्य अपार नैतिक साहस को दर्शाता है—नैतिक सिद्धांतों के लिए व्यक्तिगत संबंधों को त्यागने की शक्ति। विभीषण धर्म के सार्वभौमिक और निष्पक्ष आदर्श को मूर्त रूप देते हैं, यह दर्शाते हुए कि सच्चा सद्गुण सत्यनिष्ठा, विवेक और सही के लिए अकेले खड़े होने का साहस मांगता है।

ये सभी पात्र मिलकर दर्शाते हैं कि रामायण में नैतिक उत्कृष्टता केवल दैवीयता तक सीमित नहीं है। यह असाधारण विवेक के साथ कार्य करने वाले साधारण प्राणियों में भी पनपती है।

2.13 हनुमान: नश्वर और दिव्य के बीच सेतु

हनुमान सेवक और ऋषि, योद्धा और तपस्वी, दोनों रूपों में अद्वितीय स्थान रखते हैं। राम के प्रति उनकी भक्ति मानवीय प्रयास (पुरुषार्थ) और ईश्वरीय कृपा (कृपा) के सम्मिश्रण का प्रतीक है।

आध्यात्मिक रूप से, हनुमान अनुशासन द्वारा शुद्ध की गई भक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनकी शक्ति अहंकार से नहीं, बल्कि समर्पण से उत्पन्न होती है—आध्यात्मिक दक्षता का एक आदर्श जहाँ विनम्रता सबसे बड़ी शक्ति बन जाती है।

जब हनुमान समुद्र पार करते हैं, तो यह क्रिया केवल भौतिक नहीं, बल्कि प्रतीकात्मक होती है: मन (हनुमान) सीमित आत्मा (सीता) और दिव्य चेतना (राम) के बीच की खाई को पाटता है।

सुंदरकांड में, दूसरों के दुख के प्रति उनकी करुणा और लंका में उनका संयम एक उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता को दर्शाता है—जिसे आधुनिक नेतृत्व अध्ययन "सेवक नेतृत्व" (कुमार, 2003) कहेंगे, उसका एक प्रारंभिक प्रतिरूप।

इस प्रकार, हनुमान विश्वास, साहस और आत्म-संयम के माध्यम से मानव उत्कर्ष की संभावना के प्रतीक हैं—जो सीमित और अनंत के बीच एक जीवंत कड़ी है।

3. युद्ध और कूटनीति की नैतिकता

रामायण संघर्ष के लिए एक परिष्कृत नैतिक ढाँचे को आगे बढ़ाता है। युद्ध से पहले राम हर कूटनीतिक रास्ते का इस्तेमाल करते हैं: वे शांति प्रस्ताव के लिए अंगद को दूत बनाकर भेजते हैं और केवल सीता की गरिमा की बहाली की माँग करते हैं।

जब युद्ध अपरिहार्य हो जाता है, तो राम संयम से युद्ध करते हैं, आधुनिक "न्यायपूर्ण युद्ध" नैतिकता के सिद्धांतों का पालन करते हैं। वे निहत्थे रावण पर प्रहार करने से इनकार करते हैं और युद्ध के बाद शत्रुओं के साथ सम्मानजनक व्यवहार करने का आदेश देते हैं। (कुमार, 2003)

यह नैतिक संयम करुणा पर आधारित नेतृत्व को दर्शाता है, जहाँ शक्ति नैतिकता से प्रभावित होती है। इस प्रकार रामायण विजय को प्रभुत्व के रूप में नहीं, बल्कि नैतिक संतुलन की बहाली के रूप में परिभाषित करती है।

4. रामायण का पारिस्थितिकी और पवित्र भूगोल

रामायण एक पारिस्थितिक-आध्यात्मिक परिदृश्य में प्रकट होता है जहाँ नदियाँ, जंगल और पहाड़ सचेतन भागीदार हैं। प्रकृति जड़ दृश्य नहीं, बल्कि एक पवित्र उपस्थिति है।

लंका जाने से पहले राम का समुद्र से संवाद, गंगा के प्रति उनकी श्रद्धा और दंडक वन में उनका निवास, पारिस्थितिक सद्भाव की नैतिकता को प्रदर्शित करते हैं। **(जैन, 2011)** रामायण में पर्यावरण मानव की नैतिक स्थिति को दर्शाता है: जब धर्म प्रबल होता है, तो प्रकृति फलती-फूलती है; जब अधर्म का शासन होता है, तो वह पीछे हट जाती है।

यह विश्वदृष्टि पर्यावरणीय नैतिकता की आधुनिक अवधारणा का पूर्वाभास कराती है। यह ग्रंथ इस बात पर बल देता है कि मानवता की आध्यात्मिक प्रगति पारिस्थितिक संतुलन से अविभाज्य है—आज के समय में यह एक गहन प्रासंगिकता का पाठ है।

5. धर्म एक जीवंत सिद्धांत के रूप में

रामायण की धर्म की अवधारणा विधिवाद से परे है; यह संदर्भगत, गतिशील और गहन मानवीय है। राम की नैतिक दुविधाएँ—वनवास स्वीकार करना, युद्ध करना और सीता को निर्वासित करना—व्यक्तिगत नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच के तनाव को दर्शाती हैं। **(नंदी,1994)** कठोर नैतिक संहिताओं के विपरीत, महाकाव्य में धर्म परिस्थितिजन्य है, जो हठधर्मिता के बजाय विवेक की माँग करता है। इसकी परिवर्तनशीलता आधुनिक परिस्थितिजन्य नैतिकता के अनुरूप है, जहाँ नैतिक निर्णय करुणा और संदर्भ पर निर्भर करता है।

इस प्रकार महाकाव्य धर्म को एक स्थिर नियम से एक जीवंत संवाद में बदल देता है—स्वयं और समाज के बीच, विवेक और कर्तव्य के बीच।

6. रामायण मानव मानस का दर्पण है

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से, रामायण मन के परिदृश्य का चित्रण करती है। प्रत्येक पात्र मानव चेतना के एक पहलू का प्रतीक है:

- राम सिद्धांतों द्वारा संचालित उच्चतर आत्म-शासित सत्ता का प्रतिनिधित्व करते हैं,
- सीता, आत्मा की पवित्रता और अंतर्ज्ञान का,
- रावण, अहंकार और उसकी वासनाओं का,
- हनुमान, ईश्वरीय उद्देश्य के प्रति समर्पित अनुशासित मन का।

इस रूपक के माध्यम से, लंका का युद्ध इच्छा और ज्ञान के बीच एक आंतरिक युद्ध बन जाता है। इस प्रकार, रामायण आधुनिक गहन सिद्धांत से सदियों पहले एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान प्रस्तुत करती है—जागरूकता और आत्म-विजय के माध्यम से एकीकरण की ओर एक मार्ग । **(**राधाकृष्णन, 1993)

7. अंतरसांस्कृतिक रामायण: सार्वभौमिक धर्म और नैतिक बहुलता

रामायण का नैतिक और आध्यात्मिक संदेश भूगोल से परे है। दक्षिण पूर्व एशिया में, यह महाकाव्य सांस्कृतिक रूप से विशिष्ट होते हुए भी आध्यात्मिक रूप से गूंजता रहा है। थाई रामायण में, राम फ्रा राम बन जाते हैं, एक दिव्य राजा जिसकी करुणा प्रतिशोध पर भारी पड़ती है। इंडोनेशिया की काकाविन रामायण में, रावण की प्रेरणाओं को कम करके नैतिक दोष की बजाय ब्रह्मांडीय नियति पर ज़ोर दिया गया है। लाओ रामायण में, ध्यान भ्रातृत्व के कर्तव्य पर केंद्रित है, जिससे लक्ष्मण की भूमिका को और अधिक महत्व मिलता है। **(**कुमार, **2003)**

ये संस्करण दर्शाते हैं कि रामायण का सार—संतुलन, भक्ति और नैतिक अन्वेषण—विविध आध्यात्मिक संवेदनाओं के अनुकूल है। इसकी बहुलता, एकांतवादी व्याख्याओं को चुनौती देती है, और धर्म को सांप्रदायिक के बजाय सार्वभौमिक रूप में प्रकट करती है।

आर.के. नारायण के गद्य से लेकर आधुनिक नारीवादी पुनर्कथन तक, इस संवाद को जारी रखते हैं, तथा विश्व के नैतिक पाठ के रूप में महाकाव्य की जीवन्तता को सिद्ध करते हैं।

8. रामायण की निरंतर प्रासंगिकता

रामायण आधुनिक समाज के लिए स्थायी नैतिक प्रतिमान प्रस्तुत करता है। रामराज्य की इसकी परिकल्पना न्याय और सहानुभूति पर आधारित शासन का प्रतीक है। नेतृत्व सिद्धांत में, राम का आदर्श सत्यनिष्ठा और सेवा पर आधारित "मूल्य-आधारित नेतृत्व" के अनुरूप है। **(**कुमार, **2003)** सीता का आत्म-साक्षात्कार नैतिक स्वायत्तता पर समकालीन लैंगिक विमर्श के समान है; हनुमान की निष्ठा टीम वर्क और अनुशासन के सिद्धांतों को प्रतिबिम्बित करती है; और वाल्मीकि का मोक्ष चिंतन के माध्यम से आधुनिक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन की आशा करता है।

एक जीवंत ग्रंथ के रूप में, रामायण न केवल देवताओं और राजाओं की, बल्कि मानवीय स्थिति—उसकी दुविधाओं, आशाओं और नवीनीकरण की क्षमता—की भी बात करती है।

9. निष्कर्ष: अंतहीन संवाद

रामायण, अपनी अनछुई गहराइयों में, अच्छाई और बुराई के द्वंद्व से परे नैतिक संभावनाओं के एक विस्तृत स्पेक्ट्रम को प्रकट करता है। सीता का

विद्रोह, उर्मिला का मौन, हनुमान की भक्ति और रावण का अभिमान मिलकर एक नैतिक सिम्फनी का निर्माण करते हैं—प्रत्येक स्वर समग्रता के लिए आवश्यक है।

इन छिपी हुई परतों से जुड़कर, हम महाकाव्य के सार को पुनः खोजते हैं: कि धर्म अनुरूपता नहीं, बल्कि सचेत विवेक है; कि शक्ति अक्सर विनम्रता का वेश धारण करती है; कि मुक्ति सभी के लिए उपलब्ध है।

रामायण इसलिए कायम है क्योंकि यह सद्गुण की हमारी विकसित होती समझ को प्रतिबिंबित करती है। यह विद्वान और साधक, दार्शनिक और भक्त से एक साथ बात करती है। जब तक मानवता शक्ति से परे अर्थ, तर्क से परे करुणा और हठधर्मिता से परे सत्य की खोज करती रहेगी, तब तक रामायण अतीत की कहानी नहीं, बल्कि शाश्वत वर्तमान का एक जीवंत ग्रंथ बनी रहेगी।

10. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Goldman, R. P., & Goldman, S. J. (2017). *The Ramayana of Valmiki: An Epic of Ancient India* (Vol. 7). Princeton University Press.
2. Goldman, R. P., & Sutherland Goldman, S. J. (2005). *The Ramayana of Valmiki: Aranyakanda*. Princeton University Press.
3. Jain, P. (2011). *Dharma and Ecology of Hindu Communities: Sustenance and Sustainability*. Ashgate Publishing.
4. Kishwar, M. (1989). Yes to Sita, No to Ram: The Continuing Hold of Sita on Popular Imagination in India. *Manushi*, 61, 15–22.
5. Kumar, P. (2003). *The Ramayana Tradition in Asia*. Indira Gandhi National Centre for the Arts.
6. Nandy, A. (1994). *The Illegitimacy of Nationalism: Rabindranath Tagore and the Politics of Self*. Oxford University Press.
7. Radhakrishnan, S. (1993). *The Bhagavad Gita*. HarperCollins.
8. Ramanujan, A. K. (1991). Three Hundred Ramayanas: Five Examples and Three Thoughts on Translation. In P. Richman (Ed.), *Many Ramayanas: The Diversity of a Narrative Tradition in South Asia* (pp. 22–49). University of California Press.
9. Sen, N. D. (1992). *Women Writing in India: 600 B.C. to the Present*. Oxford University Press.

वाल्मीकि रामायण में इंजीनियरिंग

श्रीनिवास कुटुंबले
आशुतोष कुटुंबले
कंसल्टिंग इंजीनियरइंदौर-इंडिया
(sskutumbale@gmail.com)
(ashutosh.kutumbale@gmail.com)

कोरोना काल के दौरान वाल्मीकि रामायण पढ़ने का अवसर मिला। रामायण पढ़ते समय एक बात ध्यान में आई की रामकथा कहते हुए वाल्मीकिजी ने जो वर्णन लिखे है उसमे इंजीनियरिंग से सम्बंधित अनेक विषयों के वर्णन का समावेश है। पढ़ते हुए आश्चर्य हुआ आज के युग में वैज्ञानिक अपने तकनीकि ज्ञान के द्वारा जिन बातों को प्राप्त कर रहे है वह युगों हमारे ऋषि - मुनियों को था।

हमारे समाज में रामायण धार्मिक दृष्टिकोण से लगभग हर घर में पढ़ी जाती है उसे पढ़ते समय एक व्यापक दृष्टिकोण विकसित हो यह विचार मन में रखकर चिन्हित जानकारी आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ।

रामायण को कई भाषाओं में अलग-अलग समय पर कई महानुभावों द्वारा लिखा गया है। इस अध्ययन के लिए सभी रामायणों के मूल वाल्मीकि रामायण में वर्णित सिद्धांतों का उल्लेख किया गया है।

वाल्मीकि रामायण विभिन्न खंडों में विभाजित है

- बालकाण्ड (75 सर्ग)
- अयोध्या कांड (112 सर्ग)
- अरण्यकाण्ड (75 सर्ग)
- किष्किन्धा काण्ड (67 सर्ग)
- सुन्दरकाण्ड (68 सर्ग)
- युद्धकाण्ड (128 सर्ग)
- उत्तर काण्ड (111 सर्ग)

ऐसे सात काण्ड हैं। प्रत्येक काण्ड में वर्णित अनुसार इसका अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

वाल्मीकि रामायण में इंजीनियरिंग के अनेक विषयों का वर्णन किया गया है। इनमे मुख्यतः निम्नलिखित विषयों का समावेश है

- नगर नियोजन एवं भवन निर्माण
- भूगर्भशास्त्र Geology
- गंगा अवतरण
- हाईवे के निर्माण
- कंस्ट्रक्शन मैनेजमेंट, प्रीफैब निर्माण, इवेंट मैनेजमेंट और मनोरंजन
- L-1 POINT-वर्तमान विज्ञान का आधार
- टेंट नगरी की स्थापना
- GPS ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम ,वैश्विक स्थान निर्धारण प्रणाली
- सेतु बंधन
- ARTIFICIAL IMAGING
- AERONOTICAL ENGINEERING
- SPACE ENGINEERING

आगे दिए गए भागों में विभिन्न प्रसंगो के माध्यम से प्रत्येक विषय के बारे में जानकारी देने का प्रयास करूँगा।

यहाँ एक बात का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूँ जो भी विषय मेरे ध्यान में आए उन्हें मेरे ज्ञान और अनुभवों के आधार पर मैंने लिखा है। इसके अतिरिक्त भी और विषय होंगे जो उस विषय के विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में सामने लाया जा सकता है

इन सभी रामायणों में रचियताओं ने कालानुसार और स्थानानुसार परिवर्तन किए हैं , जबकि वाल्मीकि रामायण मूल है और जो श्रीराम जी के जीवनकाल में ही लिखा गया है इसलिए सर्वाधिक प्रामाणिक है।

इसी कारण से मेरे इस अध्ययन का सम्पूर्ण सन्दर्भ वाल्मीकि रामायण से ही लिया है। संलग्न आलेख लिखने के लिए सत्संगधारा का वेब प्रारूप, के साथ गीता प्रेस गोरखपुर का श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण , इ. श्री माधवराव चितले के प्रवचनोंपर आधारित वाल्मीकि रामायण तथा इ श्री मनीष दुबे द्वारा लिखित रामायण में इंजीनियरिंग का आधार लिया है।

भाग २ - नगर नियोजन एवं भवन निर्माण **-TOWN PLANNING & BUILDING CONSTRUCTION**

वाल्मीकि रामायण में नगर नियोजन Town Planning , तथा भवन निर्माण Building Construction का विस्तृत वर्णन है ।

बालकाण्ड तथा अयोध्याकांड में अयोध्या का वर्णन है, किष्किंधा कांड में किष्किंधा का वर्णन है और लंका का वर्णन सुन्दरकाण्ड तथा युद्धकाण्ड में दिया है। अयोध्या , किष्किंधा और लंका आदि के नगर नियोजन और भवन निर्माण की भव्यता के जो वर्णन प्राप्त होते हैं उनसे उस काल में नगर और भवन निर्माण के उत्कृष्ट ज्ञान होने का प्रमाण मिलता हैं।

कोशल सरयु नदी के तट पर स्थित एक बहुत बड़ा जिला है। वह प्रचुर धन-संपदा से युक्त, सुखी और समृद्ध है। उस जनपद में अयोध्या नामक एक नगर है, जो सभी लोगों में प्रसिद्ध है, इसका पूर्ण निर्माण और निर्माण स्वयं महाराज मनु ने कराया था।

यहाँ हमें विदित होता है कि अयोध्या एक मानव निर्मित शहर था। अब शहर बसाने का मतलब है कि उसमें टाउन प्लानिंग हो, उसमें हर तरह की सुख-सुविधाएं, आवासीय, व्यावसायिक और सरकारी इमारतें, सड़कें, राजमार्ग, राजमार्ग ये सभी सिविल इंजीनियरिंग के मुख्य आधार हैं।

राजा मनु, राजा इश्वाकु के पिता और राजा दशरथ के 61 पीढ़ियों के पूर्वज थे। वाल्मीकि की रामायण में उल्लेख है की राजा राम ने ११००० वर्षों तक शासन किया था। यह भी उल्लेख है कि राजा दशरथ की आयु साठ हजार वर्ष थी, अत: यह पता लगाना आवश्यक है कि उस समय की आयु क्या होगी या कालक्रम कैसा होगा। इस कालक्रम का अध्ययन किया जाना चाहिए। यदि इस भाग को छोड़ भी दिया जाए और एक पीढ़ी को वर्तमान समय की तरह 25 वर्ष का मान लिया जाए तो भी यह निश्चित है कि अयोध्या नगरी का निर्माण राजा दशरथ से 1525 वर्ष पूर्व हुआ था।

अयोध्या नगरी 12 योजन लम्बी और 3 योजन चौड़ी है और यह सरयु के तट पर स्थित थी। आज की लंबाई माप गणना के प्रयासों से पता चलता है कि विभिन्न स्रोतों के अनुसार एक योजन चार से तेरह किलोमीटर तक हो सकती है। यदि हम कम से कम चार किलोमीटर भी रखें तो भी अयोध्या की लंबाई 48 किलोमीटर है. और चौड़ाई 12 कि.मी. थी I यह शायद आज के मुंबई में चर्चगेट से भयंदर तक की दूरी के बराबर थी और चौड़ाई में पवई से वर्सोबा बीच तक की दूरी होगी। अयोध्या की बस्तियाँ बहुत घनी थी और कहीं पर भी खाली स्थान नहीं था I अयोध्या चौड़ी सड़कों वाला एक विशाल महानगर था। अयोध्या के निकट जनपदों (उपनगरों) में चौड़े और विभाजित राजमार्ग थे। आज हम एक विभाजित राजमार्ग देखते हैं। वैसे तो विभाजित सड़कों से यातायात व्यवस्था निश्चित रूप से सुचारु रूप से चलेगी अर्थात यही यातायात इंजीनियरिंग के तत्कालीन ज्ञान का प्रमाण हैं।

इन सड़कों को दोनों ओर विभिन्न प्रकार के वृक्षों से सजाया गया था। इन पेड़ों को नियमित रूप से पानी दिया जाता था। चूँकि इतने बड़े महानगर में आवागमन के लिए उचित सड़कों का होना आवश्यक है, इसलिए नगर नियोजन और सड़क इंजीनियरिंग का ज्ञान और आवश्यक उपकरण तो होंगे ही। इतनी चौड़ी सड़कें हैं तो बरसाती पानी की निकासी की व्यवस्था होना जरूरी है।

अयोध्या नगरी के अलग-अलग प्रवेश द्वार थे, उन्हें मेहराबों और तोरणद्वारों से सजाया गया था। कई अलग-अलग जिनसों / सामग्री के बाज़ार थे। जैसा कि हम आज कपड़ा बाजार, बर्तन बाजार, किराना बाजार, सराफा बाजार आदि देखते हैं। यन्त्र बाज़ार का भी उल्लेख यहाँ किया गया है। निःसंदेह उस समय अनेक प्रकार की मशीनें प्रयोग में थीं। कौन सी मशीनें थीं इसका कोई जिक्र नहीं है. बाजार में हथियार भी उपलब्ध थे. शस्त्र वह हथियार है जो शत्रु से आमने सामने के युद्ध में प्रयोग किया जाता है अर्थात तलवार, गदा, ढाल आदि। अस्त्र एक ऐसी चीज़ है जिसका उपयोग दुश्मन पर दूर से वार करने के लिए किया जाता था। धनुष और बाण को अस्त्र और अस्त्र के बीच का हथियार कहा जा सकता है। अयोध्यानगरी में सभी कलाओं के मूर्तिकार भी रहते थे, इसलिए उनकी भी एक अलग बस्ती थी ।

नाटक मंडलियाँ थीं, जिसका अर्थ है कि थिएटर और नृत्य विद्यालय भी थे। अयोध्या नगरी आम और साल के बगीचों से घिरी हुई थी । आज की टाउन प्लानिंग में शहर का बाहरी आवरण ग्रीन बेल्ट होना चाहिए, जिससे शहर का पर्यावरण अच्छा और स्वास्थ्यवर्धक हो। साल का पेड़ बहुमुखी है। साल के पत्तों, फूलों और फलों में कई औषधीय गुण होते हैं। इसके अलावा साल की लकड़ी भवन निर्माण में बहुत उपयोगी होती है। यह निश्चित है कि कई कलाओं के बीच लकड़ी का काम अत्यधिक विकसित होगा।

सुरक्षा कारणों से शहर के चारों तरफ खाइयाँ खुदी हुई थी और ये खाइयाँ इतनी चौड़ी और गहरी थीं कि इन्हें पार करना असंभव था।

अयोध्या की इमारतों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वे गगनचुंबी इमारतों और पहाड़ों की तरह ऊंची और भव्य थीं। इतनी ऊँची और भव्य इमारत में लिविंग रूम, डाइनिंग रूम, बेडरूम, बाथरूम आदि सभी तरह के कमरे जरूर होंगे। इतनी ऊँची और भव्य इमारतें बनाने के लिए नींव का मजबूत और टिकाऊ होना जरूरी है। आज हम देख रहे हैं कि श्री राम जन्मस्थान मंदिर का निर्माण चल रहा है और अयोध्या में बहुत गहराई तक मिट्टी है। चूँकि गहराई तक चट्टान उपलब्ध नहीं है, इसलिए मंदिर की नींव लगभग चालीस फीट नीचे ले जानी पड़ी और इसे उन्नत तकनीक के आधार पर बनाया गया है। इसका मतलब यह है कि रामायण काल में भी इतनी ऊँची और भव्य इमारतों को बनाने के लिए एक विशेष प्रकार की नींव बनाने की कला विकसित थी। इन इमारतों के अग्रभाग पर आवरण चढ़ाते समय इन्हें अनेक प्रकार के रत्नों एवं पत्थरों से सजाया गया था। यह देखा जा सकता है कि यह सब करने के लिए पूर्णतः विकसित इंजीनियरिंग और वास्तुकला का ज्ञान उपलब्ध था। वाल्मीकि रामायण में वर्णित अयोध्या कांड में अयोध्या की इमारतों की इंजीनियरिंग को और भी विस्तार से बताया गया है

अयोध्या की योजना एक चौसर के आकार की थी जिसके बीच में एक मुख्य केंद्र था और चारों तरफ फैली हुई भुजाएँ थीं। यदि हम वर्तमान समय में देखें तो मध्य भाग में शहरी केंद्र, शहर का केंद्र और उसके आसपास स्थित आवासीय क्षेत्र, ऐसी योजना के कारण सभी तरफ के नागरिकों के लिए केंद्र स्थान पर आना सुविधाजनक है। इस केंद्र में महल, सरकारी कार्यालय, मुख्य बाज़ार शामिल थे।

अयोध्या के इस वर्णन को पढ़कर ऐसा लगता है कि अयोध्या वैसी ही होगी जैसी आज मुंबई स्थित है।

ऐसा वर्णित है कि प्रत्येक भवन में अलग-अलग कार्यों के लिए अलग-अलग हॉल बनाए गए थे। दरबार आयोजित करने के लिए दरबार हॉल, राजा के परिवार के निवास के लिए राजभवन, धर्मग्रंथों के लिए पुस्तकालय, शस्त्रों के लिए शस्त्रागार, विभिन्न सामग्रियों को रखने के लिए भंडारगृह और लकड़ी का भंडार, धार्मिक कार्यों और यज्ञों के लिए अग्निशाला तथा नृत्य के लिए नृत्यशाला, यहाँ तक की कोपभवन का भी निर्माण कराया गया।

इमारतों को विभिन्न आकारों के अनुसार वर्गीकृत किया गया था, जिनमें आम आदमी का घर, अमीर आदमी का घर, प्रसाद (तीन मंजिला महल), हर्म्यगृह यानी राजभवन और विमान (सात मंजिला महल) शामिल थे।

राम के महल का वर्णन करते हुए महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं कि वह विशाल भवन सात मंजिल ऊँचा था। इमारतों की ऊंचाई इतनी अधिक थी कि ऐसा लगता था मानो वे आसमान छू रही हों। कैलाश पर्वत के समान श्वेत कान्ति से सुशोभित, इन्द्रभवन के समान देदीप्यमान एवं सुन्दर था। भवन के सामने देवी देवताओं की स्वर्ण प्रतिमाएँ स्थापित की गईं। दीवारें मोती और रत्नों से जड़ी हुई थीं और महल की दीवारों और खंभों पर सोने से विभिन्न जानवरों की मूर्तियाँ खुदी हुई थीं। सभी कलाकृतियाँ आकर्षक थीं. भवन का अग्रभाग सूर्य और चन्द्रमा के समान चमक रहा था। इमारत में हर जगह सोने और रत्नों की जालियाँ लगे हुए थीं। आजकल हम देखते हैं कि भवन की ऊँचाई और सुंदरता पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। इमारतों को विभिन्न प्रकार के प्लास्टर और ताज़ा पेंट से रंगा जाता है। राम का महल कुबेर के महल के समान सुंदर और इंद्र के महल के समान आकर्षक था। सर्ग 15 (30 से 48)

अयोध्या में निर्मित रामलला मंदिर एक भव्य, आकर्षक और सुन्दर निर्माण है, यह इमारत तीन मंजिल की है और इसकी ऊंचाई १६१ फ़ीट है। श्रीराम और राजा दशरथ की इमारत से इसकी तुलना करे जोकि सात मंजिला थी तो उसकी भव्यता का हमें अंदाज आएगा।

महलों के प्रांगण मोरों, हिरणों और सभी प्रकार के पक्षियों से भरे रहते थे। महल के बाहर के प्रांगण कितने विशाल थे इसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि जब दशरथ के मंत्री सुमंत्र राम को बुलाने आते थे तो वे । रथ में बैठकर ही तीन कोटों को पार करते है और राम तक पहुंचने के लिए कई दालानों (हॉलों) से गुजरते है।

सर्ग 15(5)

राजा दशरथ का महल कैलास शिखर के समान ऊँचा गगनचुम्बी भवन है। जो बादलों के समान श्वेत, रत्नों की जालों से सुशोभित थे। उस महल में क्रीड़ा भवन भी बने हुए थे, यहाँ वाल्मीकि ने प्रत्येक भवन के वर्णन में बहुवचन का प्रयोग किया है। इससे पता चलता है कि यह महलों का एक समूह था। इस महल का प्रांगण बहुत विशाल था। जिसे राम ने 3 कोट रथ से और दो कोट पैदल पार किये थे। सर्ग (17-20)

राजा दशरथ का महल और राम का महल एक दूसरे से बहुत दूर थे। इसलिए जब राजा दशरथ ने मंत्री सुमंत से राम को बुलाने के लिए कहा, तो वह रथ पर चढ़कर गए। सर्ग 5 (3-4)

राम के भवन में भी विशाल प्रांगण थे जहाँ तीन कोट रथ से और २ कोट पैदल चलकर तथा अनेक दालानों को पार करते हुए राम का निवास था ।

कैकई के महल के वर्णन में कहा गया है कि यह कैलास शिखर के समान उज्ज्वल एवं ऊँचा चन्द्रमा के समान कान्तिमान महल था। सर्ग (1, 12) कैकई के महल में समृद्ध अंतपुर था। इसमें हाथीदाँत, चांदी और सोने से बने महान सिंहासन थे, जो विभिन्न प्रकार के आभूषणों से सजाए गए थे। और वह भवन स्वर्ग के समान सुशोभित था। इमारत में तोते, मोर, मगरमच्छ और हंस आदि हैं। पक्षी उड़ रहे थे. सर्ग 10 (11 से 15 उस महल में कोपभवन था। सर्ग 10 (20,22) राम और कैकई के महल एक-दूसरे के इतने करीब थे कि कहा जाता है कि मंथरा कैकई के महल की छत से राम के महल की छत पर खड़े सेवकों से बातचीत करती थी। सर्ग 7(7)

उस समय नदी पर बाँध बनाने की तकनीक भी ज्ञात थी। इतना कि बांध शब्द हर आम आदमी की जुबान पर रहता था। जब मंथरा कैकई को अपनी कुटिल साजिश को अंजाम देने के लिए उकसा रही थी और कैकई अनिर्णय की स्थिति में थी, तो उसने कैकई से कहा, "कल्याणी, नदी का पानी बह जाने के पश्चात बांध नहीं बनाया जाता है। (यदि राम का अभिषेक हो गया तो मांगना व्यर्थ होगा), तो समय मत गवाओ, जल्दी करो, उठो और अपना ख्याल रखो। कोपभवन जाओ और राजा को अपनी स्थिति से परिचित कराओ।

सर्ग 9 (54)

सन्दर्भ:यह वर्णन बालकाण्ड सर्ग ५, ३२ तथा अयोध्या कांड सर्ग ५, ६, ७, ९, १५, १७ पर आधारित है

चित्र १ *अयोध्या नागरी का संभावित चित्र*

चित्र २ श्रीराम का महल

किष्किंधा नगर नियोजन तथा भवानोंका वर्णन

अब हम किष्किंधा नगर तथा वहां के भवनों के बारे में जानते है। किष्किंधा कांड के सर्ग तैतीस श्लोक संख्या १ से २६ दिया वर्णन इस प्रकार है:
वर्षा काल समाप्त होकर शरद ऋतु प्रारम्भ हो जाने के उपरांत भी सुग्रीव मधुपान और रतिक्रीड़ा में मदमस्त होकर सीताजी को खोजने का कार्य प्रारम्भ करने में दुर्लक्ष कर रहा था , अनेक सन्देश भेजने के उपरांत भी कोई प्रतिसाद नहीं दे रहा था तब लक्ष्मण अत्यंत क्रोधित होकर किष्किंधा पहुँचे। उन्हें क्रोधित देखकर जब अंगद ने नगर में प्रवेश करने की प्रार्थना की, तब शत्रु योद्धाओं को मारने वाले लक्ष्मण ने राम के आदेश पर सुंदर नगर किष्किंधा में प्रवेश किया ॥1॥ किष्किंधा के द्वार पर विशाल शरीर वाले शक्तिशाली वानर थे, जो लक्ष्मण को देखकर हाथ जोड़कर खड़े हो गये ॥2॥ श्रीमान लक्ष्मण ने द्वारों से प्रवेश किया और देखा कि किष्किंधापुरी एक बहुत बड़ी सुरम्य गुफा के रूप में बनी हुई है। वह दिव्य सौन्दर्य से सम्पन्न थी क्योंकि रत्नमय पुरी अनेक प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण थी। वहाँ के वन-उपवन फूलों से सजाये गये थे ॥4॥ अमीर लोगों की बड़ी हवेलियों के साथ-साथ महलों, मंदिरों और प्रासादों से पुरी बहुत समृद्ध दिखती थी। विभिन्न प्रकार के रत्न इसकी सुंदरता में चार चांद लगाते थे। यह सभी इच्छाओं को पूरा करने वाले फल देने वाले फूलों वाले पेड़ों से सुशोभित था। ॥5॥चंदन, अगरु और कमल की सुखद खुशबू आ रही थी। पुरी की लंबी और चौड़ी सड़कें मैश्य और मधु से भर जाती थीं ॥7॥

उस पुरी में विंध्याचल तथा मेरु में भी ऐसे ही ऊँचे महल बने हुए थे, जो कई मंजिल ऊँचे थे। लक्ष्मण को उस गुफा के पास निर्मल जल से भरी पहाड़ी नदियाँ दिखाई दीं ॥8॥ उन्होंने राजमार्ग पर अंगद का रमणीय भवन देखा। साथ ही, महामनस्वी वानर-मुखों की भी प्रबल उपस्थिति है- मैन्द, द्विविद, गवय, गवाक्ष, गज, शरभ, विद्युन्माली, सम्पाती, सूर्याक्ष, हनुमान, बीरबाहु, सुबाहु, महात्मा नल, कुमुद, सुषेण, सर, जाम्बवान दधिमुख, नील, सुपातल और सुनेत्र ने लक्ष्मण को दर्शन दिये। इसे सभी राजमार्गों पर बनाया गया था ॥9-12॥ वे सभी इमारतें सफेद बादलों की तरह जगमगा रही थी । उन्हें सुगंधित फूलों से सजाया गया था। वह अत्यंत धन-संपन्न थी और आभूषणों से सुसज्जित थी ॥13॥

वानरराज सुग्रीव का सुंदर भवन इंद्र सदन के समान सुंदर लग रहा था। किसी के लिए भी इसमें प्रवेश करना बेहद मुश्किल था। यह सफेद पहाड़ जैसी दीवारों से घिरा हुआ था ॥14॥ कैलास शिखर के समान श्वेत महल-शिखर के साथ-साथ समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाले फल राजभवन की शोभा बढ़ा रहे थे ॥15॥ इंद्र द्वारा दिए गए दिव्य फलों और फूलों से भरपूर सुरम्य वृक्ष थे, जो सबसे सुंदर नीले, बादल जैसे श्याम और शीतल छाया से भरे हुए थे ॥16॥ अनेक बलवान वानर हाथों में अस्त्र-शस्त्र लेकर उसकी रक्षा कर रहे थे। सुंदर महल दिव्य वस्तुओं से सुसज्जित था और इसके बाहरी मेहराब, छड़ें सोने से बनी थीं ॥17॥ महाबली सौमित्र लक्ष्मण ने सुग्रीव के उस रमणीय निवास में प्रवेश किया। ऐसा लगता है मानों सूर्यदेव स्वयं विशाल बादलों में प्रवेश कर गये हों। उस वक्त उन्हें किसी ने नहीं रोका. ॥18॥ धर्मात्मा लक्ष्मण ने वाहनों और विभिन्न आसनों से सजे भवन के सात मंदिरों को पार किया, और अधिकांश गुप्त और विशाल अंतःपुर को देखा ॥19॥ यहाँ-वहाँ चाँदी और सोने की बहुत- से आसन, और बहुत-सी बड़ी कुर्सियाँ भी थीं, और उन सब पर बहुमूल्य बिस्तर बिछे हुए थे। ये सभी पूरी तरह सुसज्जित दिखे. ॥20॥

सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण किष्किंधा कांड सर्ग तैतीस श्लोक संख्या १ से २६

लंका में भवनों का वर्णन

सुन्दर कांड सर्ग २ श्लोक १४ से ५६

सौ योजन समुद्र लांघकर, रस्ते में आई सभी बाधाओंको पार कर, हनुमान धीरे-धीरे अद्भुत सौंदर्य से ओतप्रोत लंकापुरी पहुंचे, जिसका पालन रावण ने किया था। लंका विभिन्न प्रकार के ऊर्ध्वाधर, कमल से भरे और चारों ओर खोदे गए खाइयों से भरी हुइ थी।

यह सोने के सुंदर महानगरों से घिरा हुआ था और पहाड़ों के रूप में ऊंचे घरों और शरद ऋतु के बादलों के रूप में सफेद से भरा हुआ था। ॥ 16.

इसमें बड़ी-बड़ी सफेद सड़कें थीं, जो चारों तरफ से घिरी हुई थीं। इसके अलावा, यह सैकड़ों अट्टालिकाओंसे से भरी हुइ थी। यह हर जगह झंडों और झंडों से सजी थी। ॥ 17. उसके बाहरी दरवाजे सोने के थे और उनकी दीवारें लता-वेली आदि के चित्रों से सजी थीं। इसे सुनहरे तोरणों से सजाया गया था। हनुमान ने दिन में जब इस प्रकार का लंका को देखा तो ऐसा लगा जैसे यह अमरावती हो। ॥ 18. कपिश्रेष्ठ हनुमान ने सुंदर सफेद रंग के शुभ घरों से भरे और आकाश में एक शहर की तरह पहाड़ की चोटी पर स्थित इस शानदार लंका का अवलोकन किया ॥ 19.

हनुमान ने देखा कि विश्वकर्मा द्वारा बनाई गई और राक्षसराज रावण द्वारा संरक्षित लंका आकाश में तैर रही है। ॥ 20. ॥ यह विश्वकर्मा द्वारा अपने मानसिक संकल्प के माध्यम से बनाई गई एक सुंदर महिला की तरह थी। किले और तट जिसका कटिप्रदेश हो , समुद्र की विशाल जलराशि जिसके वस्त्र हो, और शतघानी और शूल जिसके बाल हो, और जिनके विशाल अट्टालिका (महल) झुमके हो 21 1/2. ऐसी लंका देखकर कपि हनुमान उसके उत्तर द्वार पर गए और सोचने लगे। उत्तरी द्वार, जो कैलास शिखर जितना ऊंचा था, मानो कोई आकाश-ऊँचा था, और ऊँचे उत्कृष्ट घरों के माध्यम से, ऐसा लग रहा था जैसे उस पर आकाश का ही कब्जा हो गया हो। ॥22-23॥. जिस प्रकार नरक में भोगवती नगरी पर नागों का कब्जा है, उसी प्रकार लंकापुरी भयानक राक्षसों से घिरी हुई थी। हनुमंत के लिए यह स्पष्ट था कि उनका रचनात्मक शिल्प बेजोड़ था और इसे खूबसूरती से बनाया गया था। अतीत में, कुबेर वास्तव में वहाँ रहते थे। ॥ 24॥. हनुमान ने लंका के चारों ओर समुद्र की खाइयों, उसमें तंग बंदोबस्त और रावण जैसे भयंकर शत्रु को देखकर मन ही मन सोचा। ॥26॥.सबसे पहले मुझे यह पता लगाना चाहिए कि विदेह कुमारी सीताजी जीवित हैं या नहीं। उस जनकनन्दिनी को देखने के बाद ही मैं इस विषय से जुड़ी अगली बात के बारे में सोचूंगा। ॥31॥.

इस प्रकार सोचते हुए उस पर्वत की चोटी पर खड़े कपिश्रेष्ठ हनुमान श्री रामचन्द्र के अभ्युदय के लिए सीताजी को खोजने के लिए किए जाने वाले उपाय के बारे में सोचते रहे। ॥32॥. हनुमान ने सोचा कि मैं राक्षसों की इस नगरी में इस रूप में प्रवेश नहीं कर सकता क्योंकि कई क्रूर और शक्तिशाली राक्षस इसकी रक्षा कर रहे थे। ॥ 33.

मुझे केवल शक्तिशाली, बहुत वीर और शक्तिशाली राक्षसों की दृष्टि को याद करके जानकी जी की खोज करनी है (उन्हें खुद को दिखाई देने के बिना)। ॥ 34.

इसलिए मुझे रात में शहर में प्रवेश करना चाहिए और सीता जी की तलाश के इस महान समय कार्य को साबित करने के लिए एक ऐसे रूप में शरण लेनी चाहिए जो आंखों को दिखाई नहीं देता है। (कोई केवल अनुमान लगा सकता है कि कोई आया था) 35.

मेरा मानना है कि वायुदेव भी राक्षसों से छिपकर इस स्थान में प्रवेश नहीं कर सकते। क्योंकि यहाँ एक भी जगह नहीं है जिसे ये भयानक राक्षस नहीं जानते हैं। ॥ 44.

भले ही रावण की इस पुरी में जाना बहुत मुश्किल है, लेकिन मैं रात को शहर में प्रवेश करूंगा और सभी घरों में प्रवेश करूंगा और जानकी जी की खोज करूँगा। ॥ 47.

सूर्यास्त के बाद, मारुति ने रात में बहुत छोटा शरीर लिया। उन विचित्र रूपों को धारण करने वाले हनुमान बिल्ली के आकर के बन गए। ॥ 49.

प्रदोष काल में, शक्तिशाली हनुमान ने जल्दी से छलांग लगाकर सुरम्य पुरी में प्रवेश किया। शहर विशाल था और विभिन्न विशाल राजमार्गों से सुशोभित था। ॥ 50.

यह बड़े महलों की लंबी पंक्तियों द्वारा दूर-दूर तक फैला हुआ था। स्वर्ण स्तंभों और सोने जैसे जालियोंवाली खिड़कियां के साथ, यह गंधर्व शहर के समान सुंदर दिखता था। ॥ 51.

इस तरह हनुमान ने सात-सात, आठ मंजिला हवेली और स्फटिक मणियों के फर्श से भरे शहर को देखा। इसे वैदुर्य रत्नों से से भी सजाया गया था, जिससे उनका अद्भुत सौंदर्य दिखाई देता था। हवेली का सौंदर्यीकरण मोतियों के जाल से और बढ़ गया। इन सब कारणों से उन राक्षसों के घरों को खूबसूरती से सजाया गया था। ॥ 52-53.

इतना ही नहीं, राक्षसों के घरों के दरवाजों के पास जो सुनहरे अद्भुत तोरण थे, उन्होंने राक्षसों की उस लंका को चारों तरफ से सजाया हुआ था। ॥ 54.

हनुमान, जो इस तरह के एक अजीब आकार के साथ उस लंका को देखने के बाद सीता को देखने के लिए उत्सुक थे, दुखी थे और खुश भी थे। (क्योंकि वह जानकी को अपने मन में देखने के लिए उत्सुक थे) ॥55॥.

सात मंजिला सफेद हवेली की पंक्तियों ने शहर को सुशोभित किया था । वहां के घरों को कीमती सोने के जालियों और तोरणों से सजाया गया था जिन्हें जंबूनाद कहा जाता था। भयंकर शक्तिशाली निशाचर, पुरी की अच्छी तरह से रक्षा कर रहे थे। वह रावण की भुजाओं के साथ भी सुरक्षित थी। हनुमान ने लंकापुरी में प्रवेश किया, जिसके सफलता की ख्याति दूर-दूर तक फैली हुई थी। ॥56॥.

उस समय चन्द्र देवता, जो अनेक हजार किरणों के साथ सभी तारों के साथ उनके केन्द्र में विराजमान थे, हनुमान की सहायता करने के लिए अपने चन्द्रमा का प्रकाश सभी लोगों पर फैलाते हुए निकले। ॥57॥.

सर्ग तीन

वायु के पुत्र हनुमान बादलों के बराबर ऊंचे शिखर वाले पर्वत पर पराक्रमी, बुद्धिमान, कपिश्रेष्ठ, वायुपुत्र हनुमान सत्व गुण पर ठहरे थे। उन्होंने रात्रि में रावणपालित लंका में प्रवेश किया। शहर सुरम्य जंगलों और जलाशयों से सजाया गया था। ॥ 1-2.

वह शरद ऋतु के बादलों की तरह सफेद कानों वाले सुंदर घरों से सुशोभित थी। समुद्र की गर्जना की तरह, शहर में एक आवाज (एक गंभीर ध्वनि) थी। समुद्र की लहरों को छूने वाली हवा पुरी की सेवा कर रही थी। ॥ 3.

अलकापुरी की तरह, उसे एक शक्तिशाली सेना द्वारा संरक्षित किया जा रहा था। इसके मुख्य द्वार पर सुंदर हाथी झूल रहे थे। इसे अंदर से बाहर तक सफेद रंग के दरवाजों और तोपों से सजाया गया था॥ 4.

बड़े-बड़े सांप शहर की रक्षा के लिए आते-जाते रहते थे, जिससे यह शहर नागों से सुरक्षित एक खूबसूरत शहर की तरह नजर आता था। अमरावती शहर की तरह यहां भी जरूरत के हिसाब से विद्द्युल्लता के साथ बादल छाए हुए थे। यह ग्रहों और नक्षत्रों जैसे विद्युत के दीपक के प्रकाश से प्रकाशित था, और विशाल हवा की आवाज लगातार चालू थी। ॥ 5 1/2.

यह सुनहरे विशाल प्रकारों के साथ अमरावती की तरह परिवेष्टित किया गया था। वह झंडों से भरी हुई थी जो छोटी घंटियों से गूँजती थीं। ॥ 6 1/2.

जैसे ही वह पुरी पहुंचे, हनुमान, जो खुशी और उत्साह से भरे हुए थे, कूद गए और उसके तटपर चढ़कर बैठ गए। जब उन्होंने वहाँ चारों तरफ से लंकापुरी देखी तो मन ही मन आश्चर्य हुआ। ॥ 7 1/2.

सोने से बने दरवाजों से शहर को एक अनोखी सुंदरता दी गई थी। उसके प्रवेश द्वार से वैदूर्य रत्नों के लटकन बंधे हुए थे। यह हीरे, स्फटिक और मोती से ढका हुआ था। शहर कई गुना मंजिलों से भरा हुआ था। इसमें सोने के सुन्दर हाथियों से सुशोभित था। फाटकों के ऊपरी भाग चाँदी के बने थे, इसलिए वे साफ और सफेद दिखते थे। यह वैदुरयरत्न की सीढ़ियों से बना था और इसका मध्य भाग धूल रहित स्फटिक से बना था। यह सब सुरम्य सभा भवनों से से भरा था और सुंदर था। इसके अलावा, यह इतना ऊंचा था कि ऐसा लगा जैसे यह आसमान से टकरा रहा हो। ॥ 8-10.

यह स्थान क्रौंच और मोर से गुलजार था, और हंस पक्षी भी इसके द्वार पर था। विभिन्न वाद्ययंत्रों और आभूषणों की मधुर ध्वनि थी और चारों ओर से गूँज रही थी। ॥ 11.

त्रिकुटा के शीर्ष पर प्रतिष्ठित होने के कारण, ऐसा लग रहा था जैसे कुबेर के अलकानगरी की तरह दिखने वाली लंका आकाश में उड़ रही हो। ऐसी नगरी को देखकर कपि हनुमान बहुत प्रसन्न हुए। ॥ 12.

धनधान्य से समृद्ध राक्षसाधिपति रावण की लंका नगरी देखकर हनुमान विचार करने लगे। 13.

हाथ में सर्वसुविधायुक्त अस्त्र-शस्त्र सदैव तैयार रखने वाले रावण के सैनिक इस पुरी की रक्षा कर रहे हैं। इसलिए कोई और उसे जबरदस्ती अपने कब्जे में नहीं ले पाएगा। ॥ 14.

केवल कुमुद, अंगद, महाकपि सुषेण, मैन्द, द्विविद जैसे वीर तो बड़ी कठिनाई से इस नगर में प्रवेश कर लेंगे । लेकिन सूर्यपुत्र सुग्रीव, ऋक्षराज जाम्बवान और मेरे जैसे ही यहाँ टिक सकते है । ॥ 15-16.

इस प्रकार सोचकर और महाबाहु श्रीराम और लक्ष्मण के पराक्रम के बारे में सोचकर कपिश्रेष्ठ हनुमान बहुत प्रसन्न हुए। ॥ 17.

हनुमान ने राक्षस राजा रावण के उज्ज्वल शहर को देखा, जो महाग्रहों और दीपों के साथ अंधेरे से रहित था, जैसे कि यह एक युवा नारी थी, जो गोठों और घरों के कर्ण भूषण से संपन्न हुई थी, और तोपों के बुरुज उसके स्तनों जैसे प्रतीत हो रहे थे । ॥ 18-19.

सर्ग चार

चार कमरों का घर, जिसमें चार दरवाजे हैं, प्रत्येक दिशा में एक-एक, सर्वतोभद्रा कहलाता है। जिस घर में केवल तीन द्वार होते हैं और पश्चिम दिशा में कोई द्वार नहीं होता है, उसे नंदीवर्त कहा जाता है। जिस घर में दक्षिण दिशा के अलावा तीन दिशाओं में द्वार हैं, जिसे वर्धमान गृह कहा जाता है, वह धन लाने वाला है; और जिस घर में केवल पूर्वी तरफ दरवाजा नहीं होता है, उसे स्वस्तिक कहा जाता है। ऐसा घर पुत्र और धन दोनों का स्रोत है।

रक्षक सेना के लिए जो विशाल इमारत बनाई गई थी, उसके द्वार सोने से मढ़े हुए थे। उस स्थान को देखने के बाद, हनुमान ने राक्षसेन्द्र रावण के प्रख्यात घर को देखा, जो उत्कृष्ट स्वर्ण तोरणों से भरा है और त्रिकूट पर्वत की चोटी पर है। वे चारों तरफ से सफेद कमल से सजे खंभों से घिरे हुए थे। महाकापी हनुमान ने देखा कि उनके चारों ओर एक बहुत ऊँची दीवार थी और इसे उसी से ढक दिया गया था। भव्य भवन स्वर्ग रूपी दिव्य संगीत की ध्वनि से भर गया था। ॥ 24-26.

घोड़ों की गुनगुनाहट से उन्हें चारों ओर सुना जा सकता था, और सींगों की सरसराहट की आवाज भी सुनी जा सकती थी। वे विभिन्न वाहनों, विमानों, सुंदर हाथी घोड़ों और सफेद बादलों से सजे चार दांतों वाले हाथियों से सुशोभित थे। पशु-पक्षियों के संक्रमण के कारण महल के द्वार बहुत सुंदर लग रहे थे। ॥ 27-28.

हजारों शक्तिशाली निशाचर राक्षस राजा के महल की रखवाली कर रहे थे। उस गुप्त भुवन में भी कपिश्रेष्ठ हनुमान पहुंच गए। ॥ 29.

उस भीतरी तट के चारों ओर हेम और जम्बुनाड दो प्रकार के सोने की दीवार थी, । इसका ऊपरी भाग बहुत ही मूल्यवान मोतियों और हीरों से सुशोभित था और कृष्ण और अगरु चंदन द्वारा पूजा की जाती थी। हनुमान ने रावण के गर्भगृह में प्रवेश किया। ॥ 30.

छठा सर्ग

मन का रूप धारण करने वाले हनुमान बहुत जल्दी लंका की सात मंजिला हवेली में घूमने लगे। ॥ 1.

चलते-चलते वह राक्षस स्वामी रावण के महल में पहुँचा, जो सोने के कोट से घिरा हुआ था जो चारों तरफ से सूरज की तरह चमक रहा था। ॥ 2.

शेर द्वारा संरक्षित महान वन की तरह कई भयानक राक्षस रावण के उस महल की रक्षा कर रहे थे। भवन का निरीक्षण करते समय कपिकुंजर हनुमान को मन में प्रसन्नता का अनुभव होने लगा। ॥ 3.

महल चांदी के चित्रों, सोने की परत चढ़े दरवाजे, और अद्भुत तोरणों, सीढ़ियों और सुंदर द्वारों से भरा हुआ था। ॥ 4.

गजारूढ हुए हुवे माहुत और कभी न थकनेवाले शूर और अतिप्रवाहित गति रखने वाले अश्व भी मौजूद थे ॥ 5.

विभिन्न प्रकार के रथ, जो शेर और बाघ की खाल से ढकी घंटियों के साथ एक मधुर ध्वनि बनाते थे, और हाथी दांत, सोने और चांदी के चित्र से सुशोभित थे, हमेशा रावण के महल में आते और जाते थे। 6.

वह गृह असंख्य रत्नों से से व्याप्त तथा बहुमूल्य आसानों से भूषित थे। उनके चरों तरफ बड़ी बड़ी रथशालाएँ थी और अनेक महारथिओंके आवाजसे दुमदुमा रही थी महारथियोंका निवास भी वही पर था 7.

सभी तरफ से दर्शनीय और परम सुन्दर अनेक प्रकारके पशु पक्षियोंसे घिरा हुआ था । ॥ 8.

सीमाओं की रखवाली करने वाले राक्षस परिदृश्य की रक्षा कर रहे थे। इमारत पर चारों तरफ से सुंदर स्त्रियों से व्याप्त था ॥ 9.

वहां की खूबसूरत युवतियां हमेशा खुश रहती थीं। सुंदर आभूषणों की चकाचौंध से राक्षस राजा का महल समुद्र से उठती हुई लहरों की आवाज तरह से भरा हुआ था ॥ 10.

यह समुद्र की तरह गंभीर और समुद्र की तरह शोर था। राक्षसराज रावण का वह विशाल भुवन बड़े-बड़े रत्नों से सुशोभित था। ॥ 13.

यह देखकर कपिश्रेष्ठ हनुमान को लगा कि यह भुवन लंका का आभूषण है। तब हनुमान रावण के घर के चारों ओर घूमने लगे। ॥ 15.

इस तरह, वे राक्षसों के बगीचे में सभी स्थानों को देखते हुए, एक घर से दूसरे घर चले गए, और अटारी पर निडर होकर घूमने लगे। ॥ 16.

महान तेज और पराक्रमी नायक हनुमान वहाँ से कूदकर पहले प्रहस्थ के घर में उतरे और वहां से छलांग लगाकर महापार्श्व के महल में पहुंचे। ॥ 17.

उसके बाद महाकपी हनुमान कुंभकर्ण के भुवन के लिए उड़ान भरते हुए गए, जो बादल के समान दिखाई दिया और वहां से वे उड़कर विभीषण के घर पहुंचे। ॥ 18.

उसके बाद हनुमान क्रमशः महोदर, विरूपाक्ष, विद्युज्जिह्वा और विद्युन्माली के घर गए। ॥ 19.

और वह तेज महाकपि वापस कूद पड़े और बुद्धिमान कपि वज्रदंडस्त्र, शुक, सरन के घर गए । ॥ 20.

और वहां से बंदर युवक कपिश्रेष्ठ इंद्रजित के घर गया और जम्बुमालि के घर के साथ-साथ सुमाली के घर भी गए। ॥ 21.

और फिर सूर्यशत्रु रश्मिकेतु के घर पहुंचे। इसके बाद वह वज्रकाय के घर में घुस गए। ॥ 22.

और धीरे-धीरे धूम्राक्ष, सम्पाति, विद्युदरूप,भीम ,घन, विघन,शुकनाभ,चक्र,शठ,कपट,ह्रस्वकर्ण,दंष्ट्र,लोमश , युद्धोन्मत्त , मत्त, आदि राक्षसों के घरों में प्रवेश किया। फिर वे युधोनमत्ता, मत्त, ध्वजाग्रीव, विद्युज्जिह्व, द्विजिह्व, हस्तिमुख, कराल, पिशाच और शोणिताक्ष आदि के महलों में गए। इस तरह वह महान पवन पुत्र हनुमान उड़कर उस बहुमूल्य भवन में चला गया। वहां उन महान देवियों ने उन अमीर राक्षसों की समृद्धि देखी। ॥ 23-27.

उसके बाद, हनुमान ने ताकत और महिमा के साथ संपन्न होकर, उन सभी भुवनों को पार किया और राक्षसराज रावण के महल में वापस आ गए। ॥ 28.

राक्षस राजा रावण के उस महल में, उन्होंने जम्बुनद स्वर्ण के आभूषणों से सजी हजारों सेनाओं को देखा। उन्होंने देखा कि उनके अंग सोने के आभूषणों से ढके हुए थे और वे सुबह के सूरज की तरह उज्ज्वल लग रहे थे। ॥ 34-35.

राक्षसराज रावण के उस महलमे विविध प्रकार के शिबिका और विचित्र लतागृह, चित्रशाला , क्रीडा-भुवन, काष्ठमय क्रीडापर्वत, रमणीय विलासगृह के साथ ही दिन में उपयोग में आनेवाले विलास भुवन भी हनुमान ने देखे ॥ 36-37 1/2.

उन्होंने देखा कि महल एक मंदराचल जितना ऊँचा था, क्रीडा-मयूर से भरा हुआ था, झंडे से ढका हुआ था, अनन्त रत्नों का भंडार था, और सभी तरफ धन से भरा था। इसमें वीर पुण्यात्माओं ने धन की रक्षा के लिए उपयोगी कर्मंग का अनुष्ठान किया था और यह भूतनाथ (महेश्वर या कुबेर) का भुवन प्रतीत होता था। ॥ 38-39.

रत्नों की किरणों और रावण की कांति से घर किरणों से भरे सूर्य की तरह चमक रहा था। ॥ 40.

हनुमान ने देखा कि वहां की क्यारियां, आसन और साफ-सुथरे पात्र भी बहुत चमकीले और जम्बुनद सोने के बने हुए हैं। ॥ 41.

वहां की जमीन गीली थी क्योंकि उसमें शहद और आसव छिड़के गए थे। सुशोभित पात्रों से भरा विस्तृत महल कुबेर के भुवन की तरह सुरम्य लग रहा था। वह नूपुर की सरसराहट, हाथों कंगनों की खनक से गुनगुना रहा था। महल भी मृदंगम, तालियों की मधुर ध्वनि और अन्य वाद्ययंत्रों से भरा हुआ था जो गंभीर नाद करते थे। सैकड़ों अटारी थे। यह सैकड़ों रमणी (मादा) रत्नों से घिरा हुआ था। ॥ 42-43.

हनुमान ने विशाल भुवन में प्रवेश किया जहां उनकी छतें बहुत लंबी और चौड़ी थीं। ॥ 44.

नववा सर्ग

लंका के सर्वश्रेष्ठ घरों के बीच में पवन के पुत्र हनुमान ने एक अच्छा भुवन सुशोभित देखा। यह बहुत साफ और विस्तृत था। यह एक लंबाई और चौड़ाई वाली आधी योजना थी। राक्षस राजा रावण का वह विशाल भुवन कई महलों से घिरा हुआ था। ॥ 1-2.

विशलोचन विदेहानंदिनी सीता की खोज करते हुए शत्रुसूदन हनुमान उस घर में सर्वत्र घूमते रहे। ॥ 3.

जब हनुमान उन अच्छे घरों को देखते हुए घूमते रहे जिनमें राक्षस निवास करते थे, तो शानदार हनुमान को आखिरकार रावण का अपना निवास मिल गया। ॥ 4.

हालाँकि चार, तीन और दो दांतों वाले बहुत सारे हाथी थे, लेकिन घर में भीड़ नहीं थी, और हाथों में हथियारों से लैस कई राक्षस इसकी रक्षा कर रहे थे। ॥ 5.

रावण का महल उसकी राक्षसी पत्नियों और राजकुमारियों से भरा हुआ था जो उसकी वीरता से हार गई थीं। ॥ 6.

इस तरह स्त्री पुरषोसे भरा हुआ वह गृह नक्र मगरमच्छ तिमिंगल और अन्य तरह के मत्स्यों परिपूर्ण और वायु की ताज गति से व्याप्त महासागर की तरह दिखाई पड़ रहा था। ॥ 7.

लक्ष्मी, कुबेर, इंद्र और गरुड़ के स्थान पर रहने वाली लक्ष्मी ही रावण के घर में और सुरम्य रूप में सदा विराजमान रहती थीं। ॥ 8.

महाराज कुबेर, यम और वरुण के स्थानों में जो समृद्धि दिखाई देती थी, या उससे भी अधिक समृद्धि, वह राक्षसों के घर में देखी जाती थी। ॥ 9.

उस महल के बीच में एक और भवन (पुष्पक विमान) था (एक योजना लंबी और आधी योजना चौड़ी)। इसे खूबसूरती से तैयार किया गया था। इमारत कई मत्त गजराजोंसे से भरी हुई थी। पवन के पुत्र हनुमान ने चारों ओर देखा। ॥ 10.

सभी प्रकार के रत्नों से सुशोभित पुष्पक नामक दिव्य विमान विश्वकर्मा द्वारा स्वर्ग में ब्रह्मा के लिए बनाया गया था। इसे कुबेर ने ब्रह्मा (पितामह) से परम तपस्या करके प्राप्त किया था। ॥ 11.

अपनी वीरता से कुबेर पर विजय प्राप्त करने के बाद, राक्षस राजा रावण ने इसे हासिल किया था। ॥ 12.

यह सोने और चांदी के सुंदर स्तंभों से भरा था, भेड़िया की मूर्तियों से सजी थी, और इसलिए इमारत अद्भुत कांति से भरी हुई लग रही थी। ॥ 13.

इसमें कई गुप्त घर और मंगल भवन थीं, जो ऐसा लगता था कि उनकी ऊंचाई के कारण आकाश में एक रेखा खींची जानी चाहिए, और उन्होंने विमान को चारों तरफ से सजाया था। ॥ 14.

उसकी रोशनी आग और सूरज की तरह लग रही थी। विश्वकर्मा ने बड़ी कुशलता से इसे बनाया था। इसमें सोने की सीढ़ियाँ और बहुत महीन वेदियाँ थीं। ॥ 15.

इसमें सोने और स्फटिक कि खिड़कियां और इंद्रनील और महानील और अन्य महान रत्नों की वेदियां थीं। ॥ 16.

विमान विभिन्न प्रकार के पाउवो, शानदार रत्नों और निरुपमा मोती से बने फर्श से जगमगा रहा था। ॥ 17.

वे बाल सूर्य की तरह दिखते थे क्योंकि वे अरक्त वर्ण और स्वर्ण वर्ण के बहुत सुगंधित के साथ संयुक्त थे। ॥ 18.

महाकापि हनुमान उस सुंदर दिव्य पुष्पक विमान पर चढ़े, जो विभिन्न प्रकार के कुटगरों (अटलिका) से सुशोभित थे। इस प्रकार, जैसे ही हनुमान विमान में चढ़े, उन्होंने पेय, भोजन और भोजन की दिव्य गंध को सूंघना शुरू कर दिया जो हर जगह था। ऐसा लग रहा था कि यह एक सुगंधित हवा थी। ॥ 19 1/2.

जिस तरह एक भाई अपने दूसरे श्रेष्ठ भाई को (पुकारकर) बुलाता है, उस तरह वह सुगंध शक्तिशाली हनुमंत को यहां आने और रावण के स्थान पर आने के लिए पुकारता हुआ प्रतीत हो रहा था (क्योंकि उस दिव्य सुगंध के कारण, हनुमानत अनुमान लगा सकते थे कि रावण का शयनकक्ष यहीं कहीं होना चाहिए)। ॥ 20 1/2.

उसके बाद हनुमान उस तरफ आगे बढ़े और उन्हें एक बहुत चौड़ा बैठक कक्ष दिखाई दिया। यह बहुत सुंदर और सुखद था। जिस प्रकार एक सुन्दर पत्नी अपने पति को अधिक प्रिय होती है, उसी प्रकार दीवानखाना रावण को बहुत प्रिय था। ॥ 21 1/2.

हवेली में रत्न रत्नों से बने सीढ़ियाँ थीं और सोने की खिड़कियों से सजी थी। इसमें फर्श स्फटिक मोतियों से बना था और बीच में हाथी दांत से कई तरह की आकृतियां बनी थीं। हवेली में मोती, हीरे, पवाली, चांदी और सोने से कई तरह की आकृतियों को चिह्नित किया गया था। ॥ 22-23.

यह मोतियों और रत्नों से बने कई स्तंभों से सुशोभित था। खंभे सम, सीधे, बहुत ऊंचे और सभी तरफ से सजाए गए थे, जो हवेली को एक आभूषण की तरह सुशोभित कर रहे थे। ॥ 24.

अपने बहुत लंबे स्तंभनुमा पंखों वाली हवेली ऐसी लग रही थी मानो आसमान में उड़ रही हो। इसमें एक बहुत बड़ा कालीन भी था जिसमें पृथ्वी, जंगल और पहाड़ आदि जैसे संकेत थे। ॥ 25.

राष्ट्र और घर के चित्रों से सजी शाला, पृथ्वी के रूप में विशाल लग रही थी। वहाँ मत्त विहंगों के रंग थे और दिव्य सुगंध से सुगंधित होते थे। ॥ 26.

उस हवेली में बहुमूल्य बिस्तर लगे हुआ थे राक्षसराज रावण स्वयं उसमे निवास कर रहा था। अगुरु नमक धुप के कारण वहां कुछ धुन्दला दिखाई दे रहा था परन्तु वह हंस के समान श्वेत और निर्मल था। ॥ 27.

चित्र विचित्र पुष्पमालाओं के कारण वह हवेली चितकबरे रंग की प्रतीत हो रही थी, अथवा वशिष्ठ मुनि की शबला कामधेनु के समान दिख रही थी। वह अत्यन्य सुंदर सुशोभित और मन को आनंद देनेवाली दिखाई पद रही थी । ॥ 28.

वह दिव्य हवेली दुःख का नाश करने वाली और संपत्ति की जननी प्रतीत होती थी। हनुमंत ने यह देखा। उस रावणपालित हवेली ने हनुमान की आंखों को उस समय एक माँ की तरह और इसी तरह पांच विषयों जैसे शब्द, स्पर्श, आदि के साथ, पांच इंद्रियों को संतुष्ट किया। ॥ 29 1/2.

यह देखकर हनुमान ने विभिन्न तर्क देना शुरू कर दिया कि क्या यह स्वर्गीय है या देवलोक या इंद्रपुरी (अमरावती) या चाहे वह ब्रह्मलोक हो या परमसिद्धि। ॥ 30.

उस हवेली के जलते हुए सुवर्णमय दीपक एक समान दिख रहे थे। किसी अटल जुआड़ी से पराजित छोटे जुआड़ी की तरह अपने खोए हुए धन में चिंतामग्न परतीत हो रहे थे। ॥ 31.

दीपों की रोशनी, रावण की चमक और आभूषणों की आभा से उन्होंने हवेली को ऐसे देखा जैसे वह प्रज्वलित हो रही हो। ॥ 32.

सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड - सर्ग २ श्लोक १४ से ५६,सर्ग ३ श्लोक १ से १९, सर्ग ४ श्लोक १ से ३०, सर्ग ६ श्लोक १ से ५५, सर्ग ९ श्लोक १ से ३२ पर आधारित है।

भाग ३- रामायण में भूगर्भशास्त्र- Geology

*पौराणिक काल में भारत के ऋषि महर्षिओं को पृथ्वी का सम्पूर्ण ज्ञान था। भूगर्भशास्त्र Geology का विस्तृत वर्णन बालकाण्ड के सर्ग उनचालीस और चालीस में है।

प्रभु राम के पूर्वज थे राजा सगर जो श्रीराम से चौबीस पीढ़ी पूर्व में हुए थे। सगर के साठ हजार पुत्र राज्य संचालन तथा राज्य विस्तार में अपने पिता की सहायता करते थे। अपनी प्रसिद्धि और साम्राज्य को बढ़ाने के लिए राजा सगर ने अश्वमेघ यज्ञ करने का निर्णय लिया। यज्ञ की तैयारियां पूरी हो चुकी थीं, लेकिन यज्ञ शुरू होने से पहले ही इंद्र ने राक्षस का रूप धारण कर लिया और घोड़े को चुरा ले गए। यज्ञ पूर्ण करते समय इस घोड़े का मिलना बहुत जरूरी था। अत: सगर ने अपने साठ हजार पुत्रों से कहा कि यह महान यज्ञ पवित्र हृदय के धन्य महात्माओं द्वारा वैदिक मंत्रों द्वारा किया जा रहा है। अतः मुझे नहीं लगता कि राक्षस यहाँ तक पहुँच सकते हैं अर्थात् जिसने भी इस घोड़े को चुराया है वह देवकोटि का ही कोई मनुष्य होगा। तुम जाओ और समुद्र से घिरी हुई इस सम्पूर्ण भूमि पर घोड़े की खोज करो। विस्तृत पृथ्वी को एक-एक करके साझा करें। और उसके कोनों कोनों को देखो. जब तक घोड़ा नहीं मिल जाता तब तक मेरी आज्ञा से इस धरती को खोदते रहना। सगर ने उन्हें बताया कि घोड़ा उनकी समृद्धि का प्रतीक था। तब ये साठ हजार पुत्र उस घोड़े को ढूंढने निकल पड़े।

उस सर्ग का नाम पृथ्वीविविदारणम् है जिसका एक अन्य प्रतीकात्मक अर्थ भी है।

हम यह जानते है भारत इंडो एशियन प्लेट का हिस्सा है। जब अफ्रीकी प्लेट का एक हिस्सा टूटकर उत्तर की ओर बहता गया और यूरेशियन प्लेट से टकराया, तो भूमि ऊपर उठ गई और हिमालय बन गई। जैसे-जैसे यह प्लेट और खिसकती गई, विंध्य पर्वत उत्तर की ओर बढ़ते गए और दोनों पहाड़ों

के बीच की निचली भूमि ऊपर उठ गई। *(चित्र ३)* वह समुद्र से ऊपर उठकर ऊँचे पर्वत के रूप में परिवर्तित होते गए। आवास, कृषि की दृष्टि से इस क्षेत्र को बिना खोदे, बिना जुताई किए, बिना इसका खारापन दूर किए उपयोग में लाना संभव नहीं है। इस प्रकार खोदी गई भूमि की सीमा का अनुमान लगाने के लिए यदि हम देखे कि साठ हजार पुत्रों को सभी दिशाओं में भेजा गया , प्रत्येक पुत्र ने एक वर्गाकार योजना क्षेत्र की खुदाई की। ऐसा वर्णन है कि उन्होंने धरती खोदी और सीधे उत्तर-पूर्व में पहुँच गये। यदि एक योजन को चार किलोमीटर मान लिया जाए तो 16 वर्ग किमी. और साठ हजार पुत्रों ने मिलकर 9,60,000 वर्ग किमी. का क्षेत्र खोद दिया। यह हिमालय और विंध्याचल पर्वत के बीच पश्चिम से पूर्व तक फैला हुआ क्षेत्र है। भारत का वर्तमान क्षेत्रफल 32 लाख वर्ग किमी है। बेशक, लगभग एक-तिहाई भूमि की खुदाई की जा चुकी है। *(चित्र ४)*

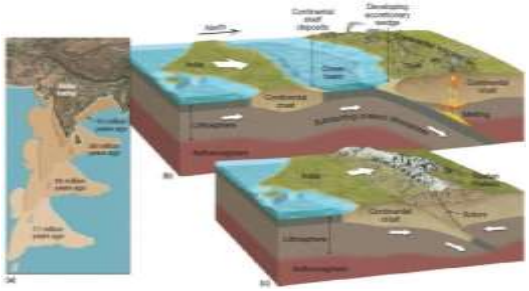

चित्र ३ आफ्रिकन प्लेट से टूटकर इंडो-अशियन प्लेटसे मिलना व हिमालयकी निर्मिती

चित्र ४ *सगर पूत्रोंद्वारा खोदा गया भूभाग*

यहां वाल्मिकी वर्णन करते हैं कि उन शक्तिशाली राजकुमारों की भुजाओं का स्पर्श वज्र के स्पर्श के समान कष्टकारी होता है। और वज्रों से और भयंकर नागरों से सब ओर से छेदी हुई वसुधा आर्त का गान होने लगा। वज्र के समान कील और काला हल जिसके खोदने से भयानक आवाज होती थी। यह विवरण आज खुदाई के लिए उपयोग किए जाने वाले जेसीबी, एस्कवेटर्स, रॉक ब्रेकर्स ,चट्टान तोड़ने वाले उपकरण आदि को संदर्भित करता है। जो कठोर से कठोर चट्टान को तोड़ देता है। और जब ऐसा हो रहा होता है तो एक भयानक ध्वनि उत्पन्न होती है। जब ऐसा हो रहा था, तो न केवल पृथ्वी प्रभावित हुई, बल्कि जीव-जंतु, नाग, दैत्य, दानव और अन्य जीव-जंतु भी गूँजने लगे। एक और बात यह है कि इतने बड़े काम को करने के लिए मशीनों का सहयोग आवश्यक है।

वहां उन्होंने एक पर्वत दैत्य देखा जिसका नाम विरुपाक्ष था। जिसने सारे भूतल को धारे हुए थे. जब वह महान राक्षस विश्राम के लिए अपना सिर इधर-उधर हिलाता था तो भूकंप आने लगते थे।

आधुनिक विज्ञान में भूविज्ञान में हम सीखते हैं कि संपूर्ण भूभाग टेक्टोनिक प्लेटों पर आधारित है। और जब ये प्लेटें हिलती हैं तो भूकंप आते हैं. यह वर्णन एकदम सटीक बैठता है. *(चित्र ५)*

चित्र ५ *टेकटोनिक प्लेटोंका एक दूसरे पर घर्षण होता है तो भूकंप होता है*

जब सागरपुत्र की खुदाई चल रही थी, तो सभी भयभीत देवता भगवान ब्रह्मा के पास गए और उनसे प्रार्थना की, जिस पर भगवान ब्रह्मा ने कहा कि पृथ्वी का यह खोदना शाश्वत है और यह जरूरी है । इसके पीछे तात्पर्य यह है कि ब्रह्मदेव ने कहा था कि समुद्र तल के कारण अनुपयोगी हो गई पृथ्वी को खोदने पर ही वह मनुष्यों के काम आएगी। (सर्ग 40-4...)

इसलिए सगर के पुत्रों ने धरती खोदी और रसातल में चले गए जहां उन्हें ऋषि कपिल दिखाई दिए और यज्ञ का घोड़ा वहीं पास था। सगर के पुत्रों को लगा कि इस ऋषि ने घोड़ा चुरा लिया है और वे क्रोध में आकर ऋषि कपिल पर आरोप लगाने लगे। इस रवैये के कारण, कपिल क्रोधित हो गए और उनके मुंह से गर्जना निकली और सगरपुत्र के सभी पुत्रों को जलाकर राख का ढेर बना दिया। यहाँ वाल्मीकिजी ने जो उपमा दी है , वर्तमान भूविज्ञान में हम जानते हैं कि पृथ्वी के गर्भ में गहराई में लावा है जिसका रंग लाल है और इसका तापमान इतना अधिक है कि लोहा भी तरल अवस्था में है। जो कोई भी 1500 डिग्री पर तरल लोहे के संपर्क में आएगा वह राख में बदल जाएगा। और सागरपुत्र के साथ भी यही हुआ. इससे पता चलता है कि हमारे ऋषियों (वैज्ञानिकों) को भूविज्ञान Geology का पूरा ज्ञान था ।

सन्दर्भ: यह वर्णन वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के सर्ग उनचालीस श्लोक संख्या ४ से ३९ तथा सर्ग चालीस श्लोक संख्या १ से १२ पर आधारित है ।

भाग ४ - गंगा अवतरण

अपने साठ हजार पुत्रों को गए हुए बहुत दीर्घकाल व्यतीत हुआ तो राजा सगर चिंतित हो उठे और उन्होंने अपने पोते अंशुमान को उन्हें ढूंढने के लिए भेजा। अपने चाचाओं को खोजते हुए जब अंशुमान उस राख के ढेर के पास पंहुचा तो वास्तविकता जान कर अत्यंत दुखी हुआ। परंतू उसे वहींपर यज्ञ का अश्व और गरुड़ दिखाई दिए। गरुड़ ने उसे दिलासा देते हुए कहाँ की चिंतित होने की बात नहीं है तुम्हारे साठ हजार चाचाओं का वध सम्पूर्ण जगत के कल्याण के लिए हुआ है। अत्यंत प्रभावशाली महर्षि कपिल ने उन्हें दग्ध किया है। अतः तुम्हारे चाचाओं को लौकिक जल से तिलांजलि देना उचित नहीं होगा। इन्हे जब लोकपावनी गंगा के जल से तिलांजलि दी जाएगी तब इन्हे मुक्ति मिलकर स्वर्ग में जाने के अधिकारी होंगे। अभी तो इस घोड़े को ले जाओ और अपने पितरों का यज्ञ करो। जब अंशुमान अश्व को लेकर लौटे तो सगर ने यज्ञ पूरा किया और गंगा को पृथ्वी पर लाने के बारे में बहुत सोचा लेकिन किसी नतीजे पर नहीं पहुंच सके। तीस हजार वर्ष तक राज्य करने के बाद वह स्वर्ग चला गया। उसके बाद अंशुमान राजा बना और कई वर्षों तक शासन किया। और फिर अपने पुत्र दिलीप को राज्य सौंपकर हिमालय की ओर प्रस्थान कर गये। वहां उन्होंने बत्तीस हजार वर्ष तक तपस्या की और शरीर त्याग कर स्वर्ग चले गये। राजा दिलीप गंगा को धरती पर लाने के बारे में सोचते रहे लेकिन कुछ नहीं कर सके और तीस हजार साल तक राज्य करने के बाद उनकी मृत्यु हो गई।

वाल्मीकि रामायण में दिए वर्णन के अनुसार यहां विचारणीय बात यह है कि राजा सगर ने तीस हजार वर्ष तक राज्य किया। अंशुमान ने बत्तीस हजार वर्ष तक तपस्या की। यदि राजा दिलीप ने तीस हजार वर्षों तक शासन किया, तो उस युग में मनुष्यों की जीवन प्रत्याशा क्या होगी? पूर्व में हमने देखा कि राजा दशरथ साठ हजार वर्ष के थे। ऐसे आंकड़े आते रहेंगे I

बाद में दिलीप के पुत्र भगीरथ राजा बने और उन्होंने काफी समय तक शासन किया। भगीरथ की कोई संतान नहीं थी लेकिन संतान प्राप्ति की इच्छा के बावजूद उन्होंने यज्ञ नहीं किया। उन्होंने प्रजा और राज्य की सुरक्षा मंत्रियों को सौंपकर गंगा को धरती पर लाने का प्रयास किया। वे हिमालय के गोकर्ण तीर्थ में जाकर तपस्या करने लगे। जब भागीरथ की तपस्या से ब्रह्मा प्रसन्न हुए तो भागीरथ ने उनसे कहा कि आपकी कृपा से मेरे सभी पूर्वजों को गंगाजल मिले और उन्हें स्वर्ग का लोक प्राप्त हो। ईश्वाकु वंश की परम्परा कभी नष्ट न हो और सारी पृथ्वी जल से भर जाये। इस पर ब्रह्मा जी ने कहा कि जब गंगा स्वर्ग से पृथ्वी पर आयेगी तो पृथ्वी उसके अवतरण के वेग को सहन नहीं कर पायेगी और भगवान शंकर के अतिरिक्त त्रिशूल से गंगा को धारण करने वाला कोई नहीं है, अतः भगवान शंकर कि प्रार्थना करें.

गंगा का मूल स्रोत गोकर्ण है। इस स्थान पर लंबे समय तक रहने का मतलब है तपस्या करना। इसका मतलब है भौगोलिक स्थिति का अध्ययन करना और गंगा को धरती पर लाने का रास्ता खोजना। हिमालय में रहते हुए हर जगह घूमते हुए उन्हें इसका एहसास हुआ

गंगा को लाना है लेकिन इतनी ऊंचाई से उसके प्रवाह को कौन रोके यह एक समस्या है, न केवल गंगा को ऊंचाई से लाना है और केवल बर्फीले क्षेत्र, ग्लेशियरों से ही नहीं लाना है, बल्कि जैसा कि ब्रह्मदेव ने कहा था, यह अत्यंत जटिल कार्य है । गंगा के इस विशाल प्रवाह को पृथ्वी समाहित नहीं कर पायेगी। इससे मिट्टी का कटाव होगा. क्षरण होगा. चार हजार मीटर की ऊंचाई से गोमुख इस पानी को जमीन से तीन सौ मीटर और मात्र सौ किलोमीटर की दूरी तक लाना है। *(चित्र-६)* अत: प्रवाह की समुचित वैज्ञानिक एवं वैज्ञानिक व्यवस्था के बिना हम गंगा के प्रवाह को धरती पर नहीं ला सकते। इसलिए उन्होंने शंकर की पूजा की। पृथ्वी पर मानव जीवन के देवता शंकर, जिनकी पत्नी पार्वती हैं, ऐसी सभी शंकर पार्वती कहानियाँ मार्गदर्शन करती हैं कि मानव जीवन कैसा होना चाहिए। उमापति, पशुपति, राजनमिद्यववित अर्थात वैनतेय ने सबसे पहले दिशा बताई। तब बम्हदेव और अब भगवान शंकर ने कहा कि ठीक है तुम मेरी पूजा करो। अब शब्दों के अलग-अलग अर्थ होते हैं. शाब्दिक रूप से, शाब्दिक रूप से, लाक्षणिक रूप से इस का अर्थ क्या है? शंकर ने कहा कि मैं आपकी मदद करता है लेकिन आपको जगह की और इस सतह की सतह संरचना को समझे बिना इस काम को नहीं छूना चाहिए। इसका मतलब है कि इंजीनियरिंग का मूल सिद्धांत किसी भी प्रोजेक्ट को शुरू करने से पहले पूरी साइट का ठीक से अध्ययन करने के बाद ही प्रोजेक्ट पर काम शुरू करना है ।

चित्र ६ *चार हजार मीटर उंचाइसे १०० कि मी की दुरी पर गंगाको समतल भूमि पर लाना*

भूमि और जल को हमेशा एक साथ समझना होगा। सागर साम्राज्य में, भूमि के क्षेत्र में वह भूमि शामिल थी जो समुद्र के तल तक आती थी। उसमे खेती करने की कोशिश की लेकिन पानी की कमी तथा जमीन में खारापन के कारण असफल रहा। समृद्धि तब बनती है जब जमीन और पानी के बीच सही संबंध स्थापित होता है। तो शंकर ने भगीरथ से कहा कि गंगा परमधुर धारा है। इसलिए गंगा को संभालना मुश्किल है, अगर उसे नीचे लाना है तो अलग तरीके से लाना होगा। आपको इसका ठीक से अध्ययन करना चाहिए और फिर जलग्रहण क्षेत्रों में जटारोह को या जिसे हम कहते हैं - नालियों का निर्माण, खाई खोदना। इन सभी जटाओं को एकत्रित करके गंगा की धरा के रूप में जोड़ना है ताकि वो उस स्थान पर छोटी-छोटी धाराएं कटाव न करें। भगवान शंकर द्वारा दिये गये इस आदेश को भागीरथ ने बड़े परिश्रम से क्रियान्वित किया। यानी बर्फ से ढकी चोटियाँ, ग्लेशियर। जिनमें कई कई छोटी-छोटी नालियाँ है। उन नालियों को जोड़कर एक को दूसरे से और दूसरे को तीसरे से जोड़ दिया जाए। अलग-अलग धाराओं की गति और ऊर्जा तथा उनके पुनः जुड़ने को बिन्दुसार कहते हैं। निःसंदेह बूंद-बूंद पानी एकत्रित करना होगा। इन बिन्दुओं के विलय से उनकी प्रथम मैदानी नदियों का निर्माण हुआ। पूर्व दिशा की ओर बहने वाली तीन ल्हादिनी, पावनी और नलिनी। पश्चिम की ओर बहने वाली तीन नदियाँ सुचक्षु, सीता और महानदी सिन्धु। बीच में बहती अलकनंदा का आज भी वही नाम है। भागीरथी वह नदी है जो इस अलकनंदा में मिलती है। और दोनों मिलकर आगे चलकर गंगा नदी के नाम से जानी जाती हैं।

भगीरथ ने ऐसी धाराएँ रचीं जिनसे कैसे गंगा पृथ्वी पर आई और उनकी महिमा कैसी हुई ? पृथ्वी पर आने के बाद गंगा के आसपास का सुंदर क्षेत्र किस प्रकार निर्मित हुआ, इसका बहुत सुंदर वर्णन वाल्मीकि ने किया है। जैसे कहीं तेज गति से बहती 'द्रुतंतर यति', कहीं घूमती हुई 'कुटिलं क्वचिदयातम'। गंगा अपना रूप बदलकर बहने लगी जहां 'विनातन क्वचित्' शांति से बहती है, 'अद्भुत क्वचित् यति' शनैः शनैः जहां वह आश्चर्यजनक धीमी गति से बहती है। आशा के साथ गंगा स्वर्ग से भूतल में उतरीं। उनकी महिमा का वर्णन करते हुए वाल्मीकि ने लिखा है भागीरथो हि राजर्शिर्दिव्यं स्यन्दनमस्थः राजर्षि भगीरथ दिव्य रथ पर आरूढ़ होकर आगे बढ़ रहे हैं। प्रियद्रे महाराजस्तम गंग पृष्ठोंवागट। और उसके पीछे गंगा बह रही है। धारा तब धीरे-धीरे उस पथ पर बहने लगी जो भगीरथ ने निर्धारित किया था जब तक कि वह सीधे समुद्र से नहीं मिल गई I

इसके बाद ब्रह्मा का अवतरण हुआ। उन्होंने भागीरथ से कहा कि तुमने जो कार्य किया है, वह इतना अद्भुत और अद्वितीय है कि अब से गंगा को अब तक जो नाम गंगा था, उसके स्थान पर भागीरथी के नाम से जाना जाएगा। हमने इसका ऋण बरकरार रखा है.' जेष्ठ शुद्ध दशमी, गंगा का जन्मदिन, जब हम गंगा दशहरा मनाते हैं, जिसमें भागीरथ की पूजा की जाती है।

भारतीय समाज में यह दृढ़ विश्वास है कि गंगा नदी राजा भगीरथ के प्रयासों से ही पृथ्वी पर आई, अर्थात गंगा एक मानव निर्मित नदी है। इसका मतलब यह है कि उस समय ऋषियों और इंजीनियरों को भूविज्ञान (Geology) और जल विज्ञान इंजीनियरिंग(Hydrological Engineering) का पूरा ज्ञान था।

वर्तमान समय में भी इस पर अध्ययन करने के काफी प्रयास किये गये हैं। ईसा पश्चात 1817 में ब्रिटिश भूविज्ञानी कैप्टन हर्बर्ट ने हिमालय के बर्फ से ढके पहाड़ों का सर्वेक्षण किया। उन्होंने मुख्यतः गंगा के ऊपरी भाग में तीन स्थानों का वर्णन किया। गंगोत्री के ऊपर धौली में भ्रमण के दौरान विशाल चट्टानों के जमा होने की बात लिखी है। जो उनके अनुसार अकेले गंगा जल के प्रवाह से नहीं बनी होगी। लेकिन उन्हें आकार दिया गया और ऐसा लगता है कि पानी को पत्थरों के बीच से गुजारने में किसी और का हाथ था। श्रीकांता और बंदरपुच्छ के बीच की गहरी खाई को देखकर कैप्टन हर्बर्ट कहते हैं कि यह कभी ठोस चट्टान रही होगी और इसे गंगा के पानी के बहाव के लिए रास्ता बनाने के लिए काटा गया होगा। गंगा नदी के सर्वेक्षण का सारांश देते हुए वे कहते हैं, 'गंगा के स्रोत का स्रोत न केवल प्रकृति का हाथ है, बल्कि मनुष्य का भी हाथ है।

भारत और मिस्र, दो देशों के सिंचाई महानिदेशक सर विलियम विल्किंसन ने अपनी पुस्तक में स्पष्ट रूप से कहा है कि :

1. प्राचीन भारतीय लेखकों ने भौतिक तथ्यों के बारे में आध्यात्मिक तरीके से लिखा
2. दक्षिण की प्रत्येक नहर, चाहे भागीरथ जितनी बड़ी हो या नहीं, मूल रूप से एक नहर के रूप में शुरू हुई।

3. इन नहरों की योजना बनाकर खुदाई की जाती है और नहरों के बीच आवश्यक दूरी पर दूरी बनाई जाती है।

अंततः सर विलियम विल्कॉन्स ने कहा है कि गंगा या भागीरथी नदी हमारे पूर्वजों द्वारा निर्मित एक नहर है। उन्होंने कहा कि गंगा को दुनिया की छत से भारत के मैदानों तक लाना भारत या मानव इतिहास में इंजीनियरिंग की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाएगी।

गंगा को इस प्रकार पृथ्वी पर लाने का कार्य भगवान श्री राम से चौदह पीढ़ी पहले राम के पूर्वज राजा भगीरथ ने किया था। *(चित्र ७, ८)*

चित्र ७ *गोमुख*

चित्र ८ *गंगाका प्रवाह*

सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के सर्ग इकतालीस श्लोक संख्या १ से २६ तथा सर्ग बय्यालीस श्लोक संख्या १ से २५ सर्ग त्रियालीस श्लोक संख्या १ से ४३ सर्ग चव्वालीस श्लोक संख्या १ से २३ पर आधारित है

भाग ५ - रामायण में हाईवे के निर्माण, - HIGHWAY CONSTRUCTION

सुमंत्र ने राम लक्ष्मण और सीता को वन में छोड़ दिया। राजा दशरथ के कष्ट बढ़ते गये। और क्योंकि यह असहनीय था, उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए। ननिहाल से भरत और शत्रुघ्न को अयोध्या बुलाया। जब भरत को वास्तविकता का पता चला तो वे क्रोधित हो गये। यह घोषणा की कि अयोध्या की राजगद्दी पर राम ही बैठेंगे। पिता के अंतिम संस्कार और श्राद्धकर्म के बाद भरत ने वन में जाकर राम, लक्ष्मण और सीता से मिलने और उन्हें वापस अयोध्या लाने का फैसला किया। सभी मंत्रियों और सैनिकों को वन में जाने की सूचना दी। यह जानने के बाद समस्त अयोध्यावासी साथ आने को तैयार हो गये। अगर इतनी बड़ी संख्या में लोगों को जंगल से होकर जाना है तो सड़कें और रास्ते उनके लिए उपयुक्त होने चाहिए I जब राम वन गए तो वहां बने रास्तों से होकर गए। यदि आप एक स्थान से दूसरे स्थान तक सड़क बनाना चाहते हैं तो दोनों स्थानों के बीच की दूरी, किस स्थान पर सड़क बनानी चाहिए, एलाइनमेंट, इसमें कौन सा शहर, गांव आता है। इस क्षेत्र का भूभाग कितना गहरा है ? इसमें कितनी नदियाँ और नाले आ रहे हैं। वहां किस प्रकार की मिट्टी है ? यदि यह नरम या दलदली है तो इसकी ताकत बढ़ानी होगी। पथरीला है तो पत्थर तोडने पड़ेंगे I प्रारंभिक अध्ययन के बाद विस्तृत अध्ययन करना होता है। इन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन नीचे दिया गया है।

भरत यहां अपने कर्मवीरों से कहते हैं कि सबसे पहले सूतकर्मी जिसका का मतलब है जो धागे की मदद से लेआउट करते है। ऐसे सूतकर्मी कामगारों को हमारी भाषा में सर्वेक्षक कहा जाता है। शुष्क भूमि का ज्ञान रखने वाले को आज की भाषा में भूवैज्ञानिक कहा जाता है। खनिक जो जमीन खोदते हैं या सुरंगें आदि बनाते हैं। यांत्रिक खनिकों को आज खनन इंजीनियर ,माइनिंग इंजीनियर जो आधुनिक मशीनरी से कम समय में बड़ी खुदाई करते हैं। सर्ग 80 (1 से 3)

इसके अतिरिक्त नदियों को पार करने के लिए तत्काल साधन उपलब्ध कराना, जैसे आज जब सेना अग्रिम पंक्ति पर आगे बढ़ रही हो, यदि नदी-नाले आते हों तो उन्हें पार करने के लिए तत्काल ब्रिज बना देते है। फिर नदी - धाराएं आने पर उन्हें पार करने के लिए मिनटों या घंटों में पुल बना दिया जाता है। यह विवरण उससे मेल खाता प्रतीत होता है I

पूरे काम के लिए राजमिस्त्री, बढ़ई, पेड़ काटने वाले, क्षेत्र के जानकार मूर्तिकार, सुरक्षाकर्मी, सुरक्षा गार्ड आदि के साथमें थे। यहां वाल्मिकी ने यंत्र का भी उल्लेख किया है। अयोध्या से प्रयागराज तक सीधी रेखा में दूरी लगभग 180 किमी है। आज के ज़माने में 200 कि.मी एक सड़क बनाने में 2 से 2.50 साल का समय लगता है. लेकिन रामायण में कितना समय लगा यद्यपि इसका उल्लेख नहीं है, फिर भी इस मार्ग को बनने में अधिक समय नहीं लगा यह निश्चित है।

सड़क बनाते समय रास्ते में आने वाले पेड़ों को काटना पड़ा, लेकिन बाद में हजारों पेड़ लगाए गए। सर्ग 80 (6, 7)

सड़क में नदियों पर पुल बनाये गये। जहां जमीन गहरी थी, वहां मिट्टी भरकर समतल कर दिया गया। मार्ग में पेयजल की सुविधा के लिए कुएँ खोदे गए, तालाब बनवाए गए, विशाल झीलें बनवाई गईं। आज भी हम चित्रकूट के दर्शन करने जाते है तो दर्शनीय स्थानोंमें एक स्थान है जहाँ के कुआँ को भरत कूप के नाम से जाना जाता है।

सड़क का एलाइनमेंट हो जाने और रास्ते की सभी बाधाएं दूर हो जाने के बाद बारी आती है सड़क की पहली परत की, जिसे बेस कोर्स कहा जाता है। इस परत को वियरिंग कोट या सरफेस कोट कहा जाता है। सड़क पर चलने वाले वाहनों के अधिक दबाव और घर्षण के कारण इस परत का बहुत मजबूत होना जरूरी है। आजकल इस कार्य के लिए डामर या कॉन्क्रीटका उपयोग किया जाता है। वाल्मिकी रामायण पढ़ते समय मुझे आश्चर्य हुआ कि उस काल में वियरिंग कोट के लिए कॉन्क्रीट का प्रयोग किया जाता था। सर्ग 80 के श्लोक 12 में उल्लेख है कि चूने, रेत और गिट्टी के मिश्रण का उपयोग किया गया और इस मिश्रण को "ससुधाकुट्टीमल:" कहा गया है । मैंने संस्कृत विद्वानों से इस पर चर्चा की और उन्होंने कहा कि सुधा का अर्थ है चूना और ससुधा का अर्थ है चूने को संशोधित करके एक ऐसा पदार्थ बनाना जो पेस्ट के लिए उपयोग किया जाता है। चूने को संशोधित करने के लिए उसमें रेत मिलाकर चूना मोर्टार तैयार किया जाता है। इस मसाले का उपयोग ईंटों को जोड़ने और पलस्तर करने के लिए किया जाता है। कुट्टिम का अर्थ है बजरी या गिट्टी (एग्रीगेट), चूना, रेत और गिट्टी का उपयोग करके मिश्रण तैयार किया जाता है। इसे चूना कॉन्क्रीट Lime Concrete कहा जाता है। बेशक उन्होंने चूने का कॉन्क्रीट बनाया। और उसे बिछाकर पक्का रास्ता बना दिया। आजकल हम चूने की जगह सीमेंट का प्रयोग करते हैं। आज, जब तक वाइब्रेटर हर जगह उपलब्ध नहीं थे, तब तक कॉन्क्रीट को बांस से खोसकर या लकड़ी से पीटकर ठोस बनाया जाता था। ठीक यही पद्धति रामायण काल में भी प्रचलित थी। सर्ग 80 (8 से 22) इतना ही नहीं उस पर पानी भी छिड़का गया I जिसे आज क्योरिंग कहा जाता है।

सड़क के दोनों ओर सजाये गये पेड़ लगाये गये थे। फूलों के पेड़ लगाए गए। सैनिकों और नागरिकों के लिए सड़क पर जगह-जगह विश्राम गृह और महल बनाकर सजाए गए। इस प्रकार भरत अपनी समस्त सेना अर्थात् हाथी घोड़े रथों सहित वहाँ उपस्थित थे। और समस्त अयोध्यावासियों की भारी भीड़ के साथ नवनिर्मित मार्ग पर राजमार्ग से चल पड़े। रास्ते में बने पुल पर नदी की पुलिया पार करके उन्होंने चित्रकुट की ओर अपनी यात्रा शुरू की।

सन्दर्भ: यह वर्णन तथा वाल्मीकि रामायण में आयोध्या कांड में दिए सर्ग उनासी श्लोक संख्या ७ से १७ तथा सर्ग अस्सी श्लोक संख्या १ से २२ पर आधारित है

भाग ६- कंस्ट्रक्शन मैनेजमेंट, प्रीफैब निर्माण, इवेंट मैनेजमेंट और मनोरंजनINFRASTRCTURE, PREFAB ENGINEERING,EVENT MANAGEMENT, ENTERTAINMENT

जंगल में जाने का मार्ग तैयार होने जाने पर भरत अपनी समस्त सेना अर्थात् हाथी घोड़े रथों सहित वहाँ उपस्थित थे। और समस्त अयोध्यावासियों के विशाल जनसमुदाय के साथ नवनिर्मित मार्ग पर राजमार्ग से निकल पड़े। रास्ते में बने पुल पर नदी की पुलिया पार करके उन्होंने चित्रकुट की ओर अपनी यात्रा शुरू की।

रास्ते में उन्हें भारद्वाज मुनि का आश्रम दिखाई दिया। भरत अपने सभी साथियों को वहीं छोड़कर कुछ चुनिंदा लोगों के साथ ऋषियों के दर्शन के लिए आश्रम में गए। जब भारद्वाज मुनि ने पहले जाँच की और निश्चित हो गया कि भरत के वन में आने का उद्देश्य क्या है, तो भारद्वाज मुनि ने उनका स्वागत किया और पूछा कि वह इतने कम लोगों के साथ क्यों आए हैं। बाकी सभी लोग कहाँ हैं? इस पर भरत ने कहा कि हमारी सेना और समस्त अयोध्यावासी मिलकर एक बहुत बड़ा समुदाय हैं। और उन्हें इसलिए नहीं लाया गया क्योंकि इससे आश्रम को परेशानी होती. इस पर ऋषि ने आदेश दिया कि यदि हम उनका सत्कार भी करना चाहते हैं तो हमें उन सभी को आमंत्रित करना चाहिए।

मुनि ने विश्वेकर्मा से इतने बड़े समुदाय के लिए एक रात ठहरने और भोजन की व्यवस्था करने की योजना बनाई I इंद्र के साथ-साथ यम, वरुण और कुबेर का भी आह्वान किया गया और कई अन्य देवी-देवताओं को चुनौती दी गई। निम्नलिखित विवरण एक तरह से बिल्कुल उसी से मेल खाता है जिसे आज हम कंस्ट्रक्शन मैनेजमेंट, प्री फैब कंस्ट्रक्शन कहते हैं। आज हमने कुछ ही घंटों में बीस मंजिला इमारत बनाने का विवरण पढ़ा। इसके अलावा, एक इवेंट मैनेजमेंट कंपनी की तरह, बहुत कम समय के कुछ घंटों में एक बड़े समुदाय की अच्छी सेवा की गई। इतने बड़े समुदाय के लिए आवास की व्यवस्था करने के लिए समतल भूमि की आवश्यकता होती है। अत: 20 x 20 किमी (5 योजन वर्ग) भूमि समतल की गई। इस पर अच्छी गुणवत्ता की घास बिछाई जाएगी। हम केवल अनुमान ही लगा सकते हैं कि इतने बड़े काम को कुछ घंटों में करने के लिए कितनी तकनीक और मशीनरी की आवश्यकता होगी।

सभी सैनिकों और नगरवासियों के रहने के लिए चार कमरों के घर तैयार किए गए थे। हाथियों और घोड़ों के लिए अस्तबल बनाए गए, जिनमें अनाज, घास, चारा आदि की व्यवस्था थी। शाही परिवार के लिए एक विशाल सात मंजिला, खूबसूरती से सजाया गया महल बनाया गया था। महल में शयन कक्ष, बैठक कक्ष, वाहन रखने के लिए अलग-अलग स्थान थे। महलों के द्वार सुन्दर और सजाये गये थे। भवन में अनेक प्रकार के रत्नों से मंडित एक दिव्य एवं सुन्दर राजसिंहासन था।

जल आपूर्ति के लिए सभी नदियों को बुलाया गया। सभी के लिए एक शानदार भोजन की व्यवस्था की गई जिसमें विभिन्न व्यंजन, पंचकवन्ना, फल और सोमरस (सुरा) शामिल थे। सबका मनोरंजन करने के लिए बीस हजार अप्सराएँ भी आई। उन्होंने अपने नृत्य से सभी को मंत्रमुग्ध कर दिया I भरपूर मात्रा में सूरा की भी व्यवस्था की गई थी कुंडों में पकाए गए हिरण, मोर और मुर्गियों के साफ मांस के ढेर लगाए गए जिसका सेवन करके अधिकांश सैनिक नशे में धुत्त है गए थे I सारी रात कितने प्रसन्न मन से, संतुष्ट मन से बिताई सभी ने भारद्वाज मुनि को विदा किया। और जहां राम, लक्ष्मण, सीता रहते थे। वे चित्रकुट पर्वत की ओर जाने लगे।

सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण में आयोध्या कांड में दिए सर्ग ईक्काणवे श्लोक संख्या २ से ८३ पर आधारित है

भाग ७ - रामायण काल में भी यद्न्य हेतु स्थापित हुई थी टेंट नगरी

आयोध्या के विशाल मंदिर में रामलला के प्राणप्रतिष्ठा का शुभ मुहूर्त पास आता जा रहा था और इस अवसर पर भव्य यद्न्य का आयोजन होना था। इस हेतु देश विदेश से आनेवाले साधु संत ब्राह्मण श्रद्धालु आदि के लिए विशाल टेंट नगरी बनाई जा रही थी। समाचार माध्यमों में इसका वर्णन लगातार प्रकाशित हो रहा था।

रामायण काल में भी राजा दशरथ द्वारा भव्य अश्वमेध यद्न्य किया गया था I

राजा दशरथ ने अश्वमेघ यज्ञ के समान विशाल यज्ञ करने का निश्चय किया। इस यज्ञ में देश भर से ऋषि, राजा, ब्राह्मण, नगरवासी सभी प्रकार के लोग आते हैं, उनके लिए एक नगर बनाना होता है। इस नगर में किन-किन वस्तुओं और सुविधाओं का समावेश होना चाहिए इसका पूरा विवरण तेरहवें सर्गत श्लोक संख्या 1 से 19 में दिया गया है।

इसमें यह भी बताया गया है कि शहर की योजना उचित होनी चाहिए और जो सामग्री ईंटें बनानी हैं। और वह भी हजारों की संख्या में, निर्माण के लिए मुख्य रूप से ईंटों का उपयोग किया जाता था। ईंटों को एक साथ जोड़ने के लिए एक बंधन सामग्री का उपयोग किया जाता है। यदि ईंटों का उपयोग अस्थायी उद्देश्यों के लिए किया जाता था, तो यह निश्चित है कि उनका उपयोग अयोध्या की गगनचुंबी इमारतों में किया गया था। यद्न्य हेतु बनाई गई सभी इमारतें हवादार और तूफान, बारिश और धूप से सुरक्षित बनाई गई थीं। सभी क्षेत्रों के लोगों के लिए तदनुसार इमारतें बनाई गईं। राजा के लिए एक महल बनवाया गया। ऋषियों, ब्राह्मणों, नगरवासियों के लिए उनकी आवश्यकता के अनुसार भवनों की व्यवस्था की जाती थी। सैनिकों के लिए बैरक या शयनगृह की व्यवस्था की गई। यह थी भोजन कक्ष की व्यवस्था। इन सबके निर्माण के लिए आवश्यक जनशक्ति में सभी प्रकार के कुशल कारीगर, कारीगर, बढ़ई, मिट्टी खोदने वाले शामिल थे। इन सभी श्रमिकों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया गया। उन्हें वेतन के रूप में अथवा सम्मान राशि के रूप में दी जाने वाली धनराशि देकर सम्मानित किया जाता था। इन सभी श्रमिकों के पास अपने बुजुर्ग रिश्तेदारों और बच्चों को रखने के लिए क्रेच की व्यवस्था थी।

आज के समय में हम देखते हैं कि किसी भी प्रोजेक्ट को सफल बनाने के लिए टीम लीडर पूरी टीम को प्रोजेक्ट के बारे में पूरी जानकारी देकर उनसे अपेक्षित कार्य का अंदाजा देता है। गुरु वशिष्ठ ने भी इस स्थान पर एक टीम लीडर के रूप में अच्छा काम करने के लिए सभी को प्रेरित और प्रतिबद्ध किया। उनके सभी सुख-सुविधा, आवास, भोजन, सम्मान तथा उनकी अपनी निजी वस्तुओं की व्यवस्था करके उन्हें संतुष्ट किया।

सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण में सर्ग तेरा में श्लोक 1 से 18 पर आधारित है

भाग ८ - L1 पॉइंट - वर्तमान विज्ञान का आधार रामायण

रामायण में पौराणिक काल में भारत के ऋषि महर्षिओं को मात्र पृथ्वी का ही नहीं अपनी तू सारे ब्रह्मांड का ज्ञान था I उसके अनेक उदाहरण हमारे पुराणों में मिलते हैं I वर्तमान परिपेक्ष में हम देखें तो अभी कुछ दिनों पूर्व भारत ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त करते हुए सूर्ययान को L1 पॉइंट पर स्थापित किया। विश्व में अभी तक मात्र तीन अन्यदेश ही इस मंजिल तक पहुंच पाए हैं।

जैसा कि हमें ज्ञात हुआ है कि L1 पॉइंट पर यह स्थान है जहां पर सूर्य और पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल एक समान हो जाता है।*(चित्र ९)*

वाल्मीकि रामायण के कथा है कि भगवान राम तेतीस पीढ़ी के पूर्वज त्रिशंकु, एक शक्तिशाली और पुण्य कार्य करने वाले राजा थे। वह अपने आप को महान मानने लगे थे और उनमें इच्छा जागृति की सशरीर स्वर्ग जाए। उन्होंने इसके लिए अनेक ऋषियों से संपर्क किया पर सभी ने कहा कि यह संभव नहीं है। इस पर त्रिशंकु ने सभी महर्षियों को आवाहन किया। महर्षि विश्वामित्र जो पहले एक क्षत्रिय राजा थे और उन्हें अपने बल का गर्व था परंतु महर्षि वशिष्ठ से सामना होने पर उनके ध्यान में आया कि राजा से ज्यादा बलशाली महर्षि होते हैं। अतः उन्होंने दीर्घ तप किया और उनमें आभास हुआ कि वह अब इस बल के पा चुके हैं, और उन्होंने त्रिशंकु का यह आव्हान स्वीकार किया।

पहले प्रयास में त्रिशंकु को कुछ ऊंचाइयों तक भेज सके पर सफल नहीं हुए और दूसरी बार भी सफलता नहीं मिली। मगर तीसरी बार उन्होंने अपनी पूरी शक्ति लगाकर त्रिशंकु को स्वर्ग लोक भेजने का प्रयास किया। इसी वक्त इंद्र ने भी अपनी शक्ति का प्रयोग करके उसे बीच में ही रोक दिया। एक तरफ विश्वामित्र की शक्ति और उसको रोक लगाती हुई इंद्र की शक्ति। त्रिशंकु न उधर जा पा रहा था न इधर आ पा रहा था और अधर में ही लटक गया। अर्थात यह L 1पॉइंट के समान स्थिति हुई जहाँ दोनों का बल एक समान हो जाता है।

(चित्र १0)

सन्दर्भ: यह वर्णन वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के सर्ग साठ श्लोक संख्या १ से ३३ में लिखे वर्णन पर आधारित है

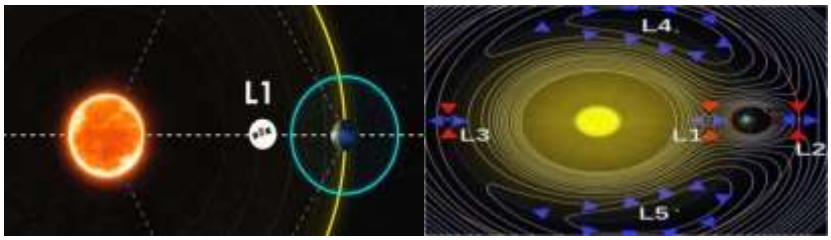

चित्र ९ *L 1 POINT*

चित्र १0 *राजा त्रिशंकू अधर में लटके हुए*

भाग ९ - GLOBAL POSITIONING SYSTEM वैश्विक स्थान निर्धारण प्रणाली:

जब सीता को खोजने के प्रयास किया जा रहे थे उस समय श्री राम लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान तथा सभी वानरगण किष्किंधा के पास स्थित माल्यवान पर्वत पर एकत्रित थे। सुग्रीव ने देश भर से सभी वानर युथ समुदाय को वहां एकत्रित होने की सूचना भेजी थी। उसे अनुसार करोड़ों की संख्या में वानरगण वहां आए थे। उन सभी को संपूर्ण तैयारी तथा भोजन सामग्री तथा आवश्यक औषधि लाने की सूचना दी गई थी। सीता को खोजने के लिए तीन मुख्य उद्देश्य रखे गए थे प्रथम सीता अभी जीवित है अथवा नहीं, उसका अपहरण करने वाला रावण कहां रहता है, तथा रावण ने उसे कहां रखा है तथा वहां तक कैसे पहुंचा जा सकता है।

इस संपूर्ण अभियान का नेतृत्व सुग्रीव को सोपा गया। सुग्रीव ने अपनी सेना के समूह बनाएं और चारों दिशाओं में भेजने की योजना बनाई। चारों दिशाओं में जाने वाले समूह को जिस तरह से दिशा निर्देश और मार्गदर्शन दिया उसे पढ़कर ऐसा लगता है जैसे GPS आधार पर वर्णन किया गया हो। आज हमें जब कोई भी यात्रा, प्रवास पर निकलना हो और उस स्थान से हम अनभिज्ञ हो तो हम GPS के माध्यम से संपूर्ण जानकारी प्राप्त करते हैं। जिसके द्वारा उस स्थान तक कैसे पहुंचना है रास्ते में कौन-कौन से स्थान आएंगे वहां की भौगोलिक स्थिति कैसी है तथा वहां के रहने वाले और कैसे हैं आदि।

चारों दिशाओं में जाने वाले समूह को सुग्रीव निर्देश देते हैं कि साथ में अपने खाने के लिए कंद साथ में लेकर आए क्योंकि प्रवास लंबा होगा और सभी स्थानों पर भोजन हेतु सामग्री मिले इसकी निश्चितता नहीं होगी। यह कंद मुख्य आहार का काम करते हैं तथा लंबे समय तक भूख को शांत रखते हैं।

पूर्व दिशा में निनाता नामक यूथपति के नेतृत्व में एक लाख वनरोंका दल भेजा. भगीरथी गंगा के तटोंपर , रमणीय शरयु , कौशिकी , कलिनन्दिनी , (नेपाल और भारत की सीमा) यमुना , शोणभद्र (सोन नदी), माही और पहाड़ों, जंगलोंसे सुशोभित कलमाहि (गंडक) के क्षेत्र में ब्रह्म माल विदेह , मालव काशी , कोसल , मगध देश, पुण्ड्र देश, पुण्ड्रा साम्राज्य (बांग्लादेश)और अंग (भागलपुर आदिस्थानों में भी खोजे, रेशम के कीड़ो की उत्पत्ति और चाँदी की खदानों का क्षेत्र (झारखण्ड) , समुद्र में प्रवेश करनेवाले पर्वोतोके

बीच तथा उनके भीतरी द्वीपों के विभिन्न नगरों मंदरांचल की खोज की , समुद्र को पार कर के सात राज्यों से सुशोभित यवद्वीप (जावा) स्वर्ण द्वीप (सुमात्रा) और सोने की खानों से सुशोभित रूप्यक द्वीप को भी खोजना चाहिए . इसे पार करने के पश्चात शिशिर पर्वत के उसका क्षेत्र (बोर्नियो, कालिमा नतान , बुधांग , तिमेर, फिलीपींस , न्युगयाना आदि) ***(चित्र ११**, १२, १३)*

चित्र ११ *वैश्विक स्थान निर्धारण प्रणाली GLOBAL POSITIONING SYSTEM- पूर्व दिशा -*

चित्र १२ *काशी, कौसल, मगध, पुंड्रदेश,अंगआदि क्षेत्र*

चित्र १३ *जावा,सुमात्रा,बोर्निओ,कलिममान,तिमिर,फिलिपिन्स,न्यू गुयाना आदि*

आगे जाकर लाल जल से भरे हुए लोहित नामक भयानक समुद्र के तट तथा शाल्मली द्वीप का प्रतिक कूटशाल्मलि का वृदा दिखाई देगा (विएतनाम) , उससे आगे घृत और दधि के समुद्र मिलते है और उसके आगे क्षीर समारा दिखाई देगा जिसकी आभा श्वेत बदलो के समान है (White Mountains &White Sea-Australia) वहाँ पहुँचने पर जिस समुद्र में लहरे उठ रही हो उसे देखकर ऐसा लगेगा जैसे मोतियों का हार पहन रखा हो (Pearl Beach Australia) तथा उसके *(चित्र १४, १५)*

मध्य में ऋषभ नामक ऊँचा पर्वत है जिसका रंग सफ़ेद है . उसके आगे स्वादिष्ट पानी से भरा हुआ समुद्र , वह समुद्र समस्त प्राणियों को भयभीत करनेवाला है जिसमे ब्रह्मर्षि ओर्व के क्रोध से प्रकट हुआ बड़वा मुख नामक तेज रहता है वह अग्नि का भोजन कहाँ जाता है . उस वाडवानल को देखकर समुद्र में रहने वाले असहाय प्राणियों की चीखें लगातार सुनाई देती है जो उसमे गिरने के भय से चिल्लाते है (Ring of Fire) *(चित्र १६)*

चित्र १४ श्वेत पर्वत, श्वेत सागर (White Mountains & White Sea ऑस्ट्रेलिया)

चित्र १५ *मोतिओं के हार वाला सागर (Pearl Beach, Australia)*

चित्र १६ *लोहित सागर, लाल नदी , कूटशाल्मलि द्वीप (वियतनाम) आदि*

उस समुद्र से तेरह योजन दूरी पर सुनहरे पथरोंसे सुशोभित कनक के सामान कांतिवाला ऊँचा पर्वत है (Golden Rock Pears Andes Mountain) उस पर्वत की चोटि पर महात्माओं की हस्तचिन्ह युक्त स्वर्णध्वजा लहरा रही है . झंडे में तीन शिखर है और निचले आधार पर वेदी बानी हुई है . त्रिशूल के आकार की यह ध्वजा पेस के पूर्वी तट पर स्थित इंडीज पर्वत पर नैसर्गिक रूप से बनी हुई है . जो लगभग ७०० फ़ीट ऊँची ५० फिट चौड़ी और छह फिट गहरी लकीरों से बनी है . इसे पारकस साइन Parcas Sign के नाम से जाना जाता है. पारकस अर्थात प्रकाश . इस तालध्वज को देवताओं ने पूर्व दिशा की सीमा बताने वाले चिन्ह के रूप में स्थापित किया है . *(चित्र १७)*

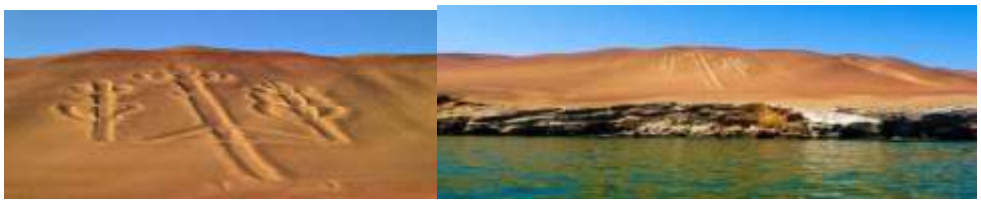

चित्र १७ *Golden Rock Peaks Andes Mountain Parcas Sign*

दक्षिण दिशा में अपने सबसे वरिष्ठ दल को भेजा चूँकि जटायूँ द्वारा ज्ञात हुआ था की रावण सीताजी को लेकर दक्षिण दिशा में गया है इस दल में अंगद प्रमुख थे उनके साथ , वरिष्ठ जाम्बुवन, नल , नील, हनुमान, सुषेण आदि प्रमुख थे . यद्यपि सभी लोग गंधमादन पर्वत पर बैठे थे पर दक्षिण दिशा को परिभाषित करते समय विंध्य पर्वत के दक्षिण के भूभाग को वर्णित किया है. नर्मदा नदी, गोदावरी , महानदी , कृष्णावेणी , महाभागा , वरदा नदियों के तट , मेकल, उत्कल के साथ साथ दशार्ण देश , अवन्तिपुरी , विदर्भ , महिष्ठाक, कलिंग, कौशिक, दंडकारण्य , आंध्र, पुण्ड्र , चोल अनेक धतुओंसे सुशोभित अयोमुख (मलय पर्वत) निर्मल जल कावेरी नदी का क्षेत्र

महर्षि अगस्त्य का आश्रम महानदी , ताम्रपर्णी , पांडियन राज्य (तंजावर) महेन्द्रगिरि का क्षेत्र , उसके आगे समुद्र के पार लंका द्वीप जहाँ राक्षस राज रावण का निवास है . उस द्वीप के आगे विशाल सागर है तथा पृथ्वी की अंतिम सीमा है जहाँ पर सूर्य , चन्द्रमा और अग्नि के समान पुण्यकर्म के तेजस्वी पुरुष निवास करते है . तथा उससे आगे भयानक पितृलोक है यह भूमि याम्राज्य की राजधानी है वहाँ नहीं जाना चाहिए. (दक्षिण ध्रुव)

चित्र १८ *दक्षिण दिशा*

चित्र १९ *नर्मदा, गोदावरी, महानदी का क्षेत्र, मेकल, उत्कल, विदर्भ, कलिंग, दण्डकरण्य, आन्ध्रः, चोल, मलयगिरि , कावेरी इत्यादि*

चित्र २० *लंका*

चित्र २१ *दक्षिणध्रुव,अंटार्टिक*

तारा के पिता और अपने बहनोई सुषेण के नेतृत्व में पश्चिम दिशा में वानरसेना को भेजा. सैराष्ट्र (सौराष्ट्र) बाल्हीक देश (बाल्टिक देश -एसलोनिआ) पश्चिम के रेगिस्तान (राजस्थान का मरुस्थल) को पार करते हुए सागर तट तक , मुखीपतत्न (मोरवी) जयपुरा, एंगलपूरी , सिंधु नदी और समुद्र का संगम पर स्थित सोमगिरि पर्वत आगे चलकर पारियात्र पर्वत तथा उसके निकट वज्र जाग्रोस पर्वत (ईरान, इराक, दक्षिण तुर्की) मनके के समान नीले रंग का वज्रगिरि , तथा उससे आगे चक्रवन पर्वत यहींपर विश्वकर्मा ने सहस्त्रार चक्र का निर्माण किया था . (अर्मेनियाका येरेवन गोलाका (पर्वत) यहींपर भगवान् विष्णुने पंचजन और हयग्रीव नमक राक्षसोंका वध किया था तथा पंचजन्य शंख और सुदर्शन चक्र लाये थे. आगे जाकर प्रागन्यज्योतिष नाम का सोने का शहर है वहां सोने का पर्वत है जिसका नाम मेघगिरी है . उसके आगे मेरु पर्वत है. (तन्जानिआ-किलिमंजारो) चित्र २२

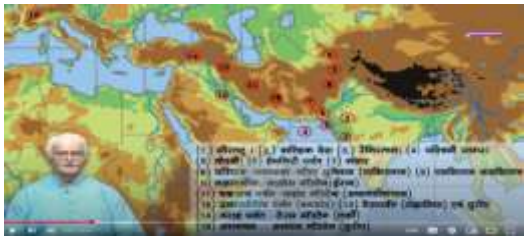

चित्र २२ *सौराष्ट्र, पश्चिम के रेगिस्तान (राजस्थान),मुखीपत्तान (मोरवी), सिंधु नदी, संगम स्थित सोमगिरि पर्वत, पारियात्र तथा वज्र जाग्रोस पर्वत (ईरान,इराक,तुर्की) चक्रवन पर्वत इत्यादि*

चित्र २३ *चक्रवान पर्वत (MOUNT YEREVAAN, ARMENIA)*

शतवली के नेतृत्व में उत्तर दिशा में वानर सेना भेजी . हिमालय से व्याप्त उत्तर दिशा में म्लेंचा, पुलिंदा, शूरसेन , प्रस्थल, भरत (इंद्रप्रस्थ और हस्तिनापुर का क्षेत्र) कुरु (कुरुक्षेत्र के आसपास दी भूमि) भद्र, कम्बोज, यवन एवं, शक की भूमि , लोधरा, पद्मका , देवदार के जंगलो का क्षेत्र , काल पर्वत, सुदर्शन पर्वत (हिमालय का भाग-दक्षिण पूर्व कश्मीर) उसके आगे कैलाश पर्वत जहाँ विश्वकर्मा द्वारा निर्मित कुबेर का भवन है, उसके आगे विशाल झील जिसमे बहुतायत से कमल खिलते है, उसके आगे क्रोंच पर्वत, तथा मानस शिखर (मनसा देवी) तथा मैनाक पर्वत (माउन्ट मैनाक) आगे जाकर वैखानस नामक सरोवर ,इससे आगे जाकर उत्तर दिग्व्रती समुद्र मिलता है.(North Sea) उस सागर के मध्य में सोमगिरि नामक एक अत्यंत ऊँचा स्वर्ण पर्वत है .वह देश सूर्यहीन होते हुए भी सोमगिरि के प्रकाश से सदैव प्रकाशित रहता है. (पोलरिस, बोलरिस, नार्थ पोल) वहां भगवान विष्णु ११ रुद्रो के रूप में भगवान शंकर और ब्रह्म ऋषियों से घिरे देवेश्वर ब्रह्मा निवास करते है.

चित्र२४ *उत्तरदिशा-म्लेंच्छ,पुलिंदा,भद्र, कम्बोज,यवन,लोधरा, सुदर्शन पर्वत इत्यादि*

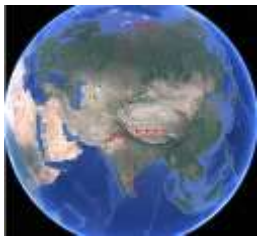

चित्र २५ *मानसरोवर, कैलाश पर्वत, उत्तरी ध्रुव*

आप लोग उत्तर कुरु के रास्ते सोमगिरि तक जाएँ उससे आगे आप नहीं जा पाओगे . क्योंकि इसके पार न तो सूर्य प्रकाश है और न ही किसी दूसरे देश की सीमा है . इसलिए मुझे अगली जमीन के बारे मै कुछ भी पता नहीं है .

सुग्रीव द्वारा सभी समूहोंको इतना विस्तृत वर्णन देते हुए देख श्रीराम आश्चर्य चकित हो गए और जब उन्होंने पूछा तो सुग्रीव ने बताया कि जब वाली मुझे मारने हेतु आया तब मै उसके भय से भागता रहा और उस दौरान मैंने यह क्षेत्र देखे है.

यहाँ एक बात का उल्लेख महत्वपूर्ण है कि चारों दिशाओ में जानेवाले वानर सेनाओंको यह निर्देश दिया था कि एक माह के अंदर सब को खोज करके वापस आना है। इतनी हजारो किलो मीटर कि यात्रा कर के एक माह में वापस आने के लिए यातायात के किन साधनों का उपयोग किया गया था इसका उल्लेख नहीं है जो एक अत्यंत महत्वपूर्ण खोज करने का विषय है।

वर्तमान में हमे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना होता है और मार्ग ज्ञात नहीं हो तो हम जीपीएस का उपयोग करते है। जो हमे निश्चित दिशा, मार्ग और वहां के भूभाग का वर्णन देता है। उपरोक्त सभी वर्णन ठीक उसी के सामान है।

सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण के **किष्किंधा कांड सर्ग ४० श्लोक १ से ७१**; **सर्ग ४१ श्लोक १ से ४९**; **सर्ग ४२ श्लोक १ से ५८**; **सर्ग ४३ श्लोक १ से ६२** पर आधारित है

भाग १० - सेतु बंधन

रामायण के महत्वपूर्ण प्रसंग जो सर्वाधिक जनोंको ज्ञात है उनमे से एक है सेतू निर्माण या सेतूबंधन. जब हनुमानजी ने लंका से वापस आकर जानकारी दी की सीताजी लंका में रावण के यहा कैद है. तब निर्णय हुआ की लंका से उन्हे मुक्त करवाया जाय. उस समय सभी महेंद्रगिरी पर बैठे हुए सामने फैले हुए विषाल सागर को देखकर चिंतित हो उठे थे की इस अथाह सागर को इतनी विशाल सेना कैसे पार कर पाएगी. ऐसा विचार विमर्श करने लगे. नावों द्वारा पार करना संभव नही था. आकाश मार्ग से जाने की क्षमता केवल हनुमान मे ही थी. रामजी के पास ऋषी विश्वामित्र द्वारा प्रदान किए गए अस्त्र थे जिनसे सागर को सुखाकर रास्ता बनाने का उपाय भी था. पर यह करने से लाखो समुद्री प्राणियो के जीवन का अंत हो जाएगा. अतः यह विकल्प भी रद्द किया गया. समुद्र पर सेतू कैसे बनाया जाय इसका ज्ञान भी नही था. अतः निर्णय हुआ की समूद्र देव को प्रार्थना की जाए की वह मार्ग दे. श्रीराम ने सागर की पुजा कर के प्रार्थना की, कि वह सेना को जाने के लिए मार्ग दे, प्रार्थना और पूजा निरंतर चल रही थी परंतु तीन दिन बीत जाने पर भी सागर ने मार्ग नही दिया तो श्रीराम ने अंतिम उपाय के रूप मे अपना धनुष उठाया और सागर को सुखाने के लिए तैयार हुए, *(चित्र-२६)* उनकी इस मंशा का ज्ञान होते ही सागर देव स्वयं प्रगट हुए और श्रीराम से ऐसा न करने की विनती की. क्योंकी ऐसा करने से समस्त समुदी जीव नष्ट हो जाएंगे. सागर ने यह भी कहाँ की वो अपना कर्तव्य और धर्म निभा रहे है और उनका धर्म ये उनके आसरे जी जीनेवाले सभी प्राणिमात्र की रक्षा करना , अतः उन्हें अपना कर्तव्य करने दे और समुद्र सूखने या विभाजित करने का विचार त्याग दे . आगे सागर ने कहाँ की मई आपको एक वैकल्पिक मार्ग बतलाता हूँ . सागर ने श्रीराम से कहां की उनकी सेना मे विश्वामित्र पुत्र, नल है उन्हे निर्माण कला का पूर्ण ज्ञान है तथा सेतु निर्माण का भी ज्ञान है जो उन्होने विश्वकर्मा से पाया है. अतः यह कार्य उन्हे सोपा जाए वह सेतू निर्माण कर देंगे इससे मुझे भी कोई परेशानी नही होगी और वन समुद्री प्राणियोंको भी हानी नही होगी. *(चित्र-२७)* इस पर नल ने श्रीराम से कहां की भगवन् मुझे सेतू निर्माण का पुरा ज्ञान है जो मेरे पिता ने मुझे दिया है. अतः मै सेतू निर्माण कर सकता हूँ परंतु मुझे श्राप होने के कारण अपनी यह विशेषता मै स्वयं होकर नही कह सकता था इस कारण मै मौन रहा. अतः श्रीराम ने नल से सेतू निर्माण का कार्य प्रारंभ करने को कहां और पुरी सेना को नल द्वारा बताए अनुसार कार्य करने का निर्देश दिया. वाल्मिकी द्वारा लिखित वर्णन के अनुसार सेतू की लंबाई 100 योजन तथा चैडाई 10 योजन थी. वर्तमान मे उपलब्ध सामग्री का अध्ययन करने पर यह ज्ञात हुआ की जिससे हम रामसेतू के नाम से जानते है उसकी लंबाई अलग अलग स्त्रोतो मे दिये अनुसार 48 कि.मी. है. अगर हम इसका अनुपात लेकर 48 कि.मी. मानते है तो 2.0 योजन बराबर 1 कि.मी. होता है. अतः राम के सेना द्वारा निर्मित सेतू 50 कि.मी. लंबा और 5 कि.मी. चौड़ा था. *(चित्र २८)*

चित्र-२६ *समुद्र सुखाने का प्रयास*

चित्र २७ समुद्रदेव द्वारा निवेदन

चित्र २८ *सेतु का स्थान*

- सेतू निर्माण का कार्य प्रारंभ करने के पूर्व नल ने सागर मे उथले स्थान खोजे और वह स्थान सेतू निर्माण के लिए चिन्हित किए. आज के समय मे जब भी इस तरह का कोई निर्माण किया जाता है तो सर्व प्रथम उसका अलाइनमेंट तय कर के सेंट्रल लाईन मार्किंग की जाती है. जिसके आधार पर ब्रीज का निर्माण होता है. नल ने सुत पकड कर सेतू की संपूर्ण लंबाई के पथ पर एक पंक्तियों मे वानरों को खडा किया तथा इसी पंक्ति के आधार पर सेतू निर्माण का निश्चय बताया. साथ ही सभी वानर सेना को वृक्ष, बेल, बांबु तथा शीलाखंड लाने के लिए भेजा. वाल्मिकी रामायण मे लिखित वर्णन के अनुसार वानर सेना साल, अश्वकर्ण, थव,बांबु,कुटज,अर्जुन, ताल, तिलक, तिनिश, बेल, सप्तकर्ण, कनेर,आम, अशोक आदि वृक्षों के द्वारा सागर की सतह पर आच्छादित कर रही थी. लाखो वानर पर्वतों से शीलखंड लाकर सागर की सतह पर फेक रहे थे. इतने विशाल वृक्ष और विशाल शीलाए लाने के लिए यंत्रो का उपयोग किया गया इसका भी उल्लेख है. युध्दकांड सर्ग 22 श्लोक संख्या 60 मे उल्लेख है. *(चित्र २९, ३०)*

पर्वताश्च समुत्पाग्रू यंत्रै परिवहत्तिच ॥

चित्र २९ *वानरगण वृक्ष, वेली लाते हुए*

चित्र ३० *वानरगण शिलांए लाते हुए*

अर्थात वह वानर गण हाथी के समान विशाल महाकाय शीलाए यंत्रो की सहायता से लाकर सागर मे फेक रहे थे. ऐसी विशाल शीलाए पर्वतो से तोडकर तथा सागर तक लाने के लिए किस तरह के यंत्रों का उपयोग कर रहे थे इसका वर्णन नही है. किंतु एक बात यहा स्थापित हो जाती है की उस काल मे भी यंत्र थे जा हाथी समान अर्थात दस से पंधरह टन भार की शीलाओं को ट्रांसपोर्ट करने मे सक्षम थे. यहा एक बात का उल्लेख करना जरूरी समझता हू की वाल्मिकी रामायण मे ऐसा उल्लेख नही है कि वह शीलांए समुद्र की सतह पर तैर रही थी. इससे एक बात संभावित लगती है कि विशाल वृक्षो को लता और बेलों से एक दुसरे को बांधकर एक सतह बनाई गई हो जिसे हम चटाई कह सकते है और इस तरह से निर्मित सतह पर उन पत्थरों को शीलाओंको जमाया गया होगा. सर्ग 22 के ष्लोक संख्या 64 और 65 मे वर्णन है

दण्डानन्ये प्रगृह्णन्ति विचिन्वन्ति तथा परे ।

वानरैः शतशस्तत्र रामस्याज्ञा पुरःसरैः॥६४ ॥

मेघाभैः पर्वताभैश्च तृणैः काष्ठैर्बबंधिरे।
पुष्पिताग्रैश्च तरुभिः सेतुं बध्नन्ति वानराः॥ ६५ ॥
यहा और एक बात का वर्णन है की एक बार सूत पकडे जाने पर वानरगण भिन्न भिन्न समुहों मे अलग-अलग स्थानोंपर सेतू बंधन का कार्य कर रहे थे. जैसे आजकल जब लंबा हायवे बनाना होता है तो अलाइनमेंट निश्चित होने के उपरांत अलग-अलग स्थानोंपर एकसाथ कार्य किया जाता है. ठीक उसी प्रकार यह सेतू का कार्य किया जा रहा था.

चित्र ३१ *सेतुमें वृक्ष और शिलाएं जमाई हुई*

चित्र ३२ *श्रीराम, लक्ष्मण वानरसेना के साथ सेतु पर से समुद्र पार करते हुए*

लाखों की संख्या मे कार्यरत वानरों ने उत्साह और उमंग के साथ पहले दिन चैदह योजन अर्थात लगभग 5.5 कि.मी.सेतू निर्माण किया. एक बार काम ने गती पकड ली तो दुसरे दिन बीस योजन अर्थात 8 कि.मी., तिसर दिन इक्कीस योजन अर्थात लगभग 8.50 कि.मी, चैथे दिन बावीस कि.मी. इस तरह यह सौ योजन 48 कि.मी.लंबा सेतू पांच दिन मे बनकर तैयार हो गया.
यहा अगर हम तुलनात्मक देखे तो अभी कुछ दिनो पूर्व उद्घाटन किया गया. सागर सेतू जो अटल सेतू के नाम से जाना जाता है. 21 कि.मी. लंबा है और बनाने मे पांच वर्षो का समय लगा.
एक और बात का उल्लेख करना उचित होगा की वाल्मीकि रामायण में गिलहरी का किस्सा भी नहीं है
सन्दर्भ : यह वर्णन वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड ,सर्ग २१ श्लोक १ से ३५, तथा सर्ग २२ श्लोक १ से ८९ पर आधारित है

भाग ११ - कृत्रिम छबि का निर्माण - ARTIFICIAL IMAGING

वर्त्तमान में Artificial Intelligence - AI के युग में हम देखते है की कंप्यूटर की सहायता से कृत्रिम छबि Artificial Image बनाई जाती है। अभी कुछ दिनों पूर्व माइक्रोसॉफ्ट और गूगल ने मानवीय कृति बनाकर स्टेज पर उससे भाषण करवाया था। सारा विश्व इससे आश्चर्यचकित हो गया था। अभी कुछ दिनों पूर्व भारत में भी एक न्यूज़ चैनल ने AI से निर्मित मॉडल से न्यूज़ रीडर का काम करवाया था। ***(चित्र ३३)***

रामायण में भी इस तरह के उदहारण है , जिन्हे मायावी के रूप में वर्णित किया गया है। शूर्पणखा का सुंदरी के रूप में आना , मारीच का हिरण के रूप में आना या रावण का ऋषि के रूप में आना। ये सभी उनकी मायावी शक्तिओं के कारण संभव हुआ था। किन्तु ये सही अर्थो में Artificial इमेज नहीं कहला सकते। इन सभी में वह व्यक्ति स्वयं उसमे शामिल था अतः इन्हे हम वेशान्तर कह सकते है।

जब युद्ध पुरे जोर में था और रावण की सेना परास्त हो रही थी तब रावणपुत्र इंद्रजीत /मेघनाथ ने सीताजी की छबि निर्माण की और उसे रथ में बिठाकर युद्ध भूमि में लेकर आया तथा श्रीराम की वानर सेना के सामने उसे तरह तरह की यातनाएं दी, और अंत में उसका शिरच्छेद कर दिया।

हनुमान सहित सभी वानरसेना दुखी हुए। श्रीराम जी को यह वार्ता मिली तो वह भी दुखी हुए थे। यह सही अर्थों में Artificial इमेज का प्रसंग है। अंत में विभीषण ने इस मायावी विद्या के बारे में बताया और सभी शांत हुए।

सन्दर्भ : यह वर्णन वालमीकि रामायण के युद्धकाण्ड में सर्ग इक्यासी श्लोक १ से ३४ में लिखित प्रसंग का वर्णन के अनुसार है।

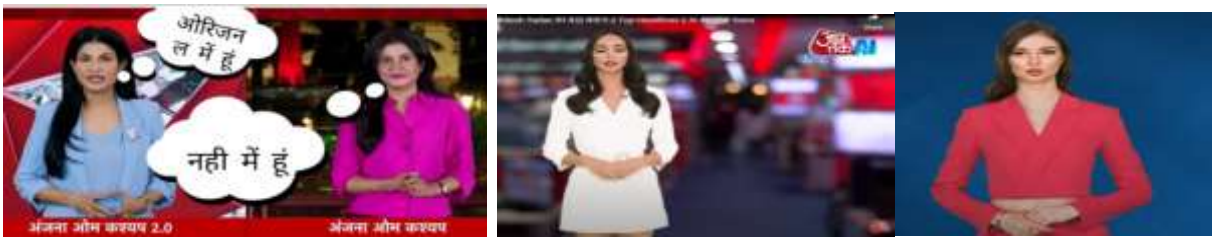

चित्र ३३ *न्यूज़ रीडर ओरिजिनल तथा AI निर्मित*

भाग १२ - वैमानिक इंजीनियरिंग -AERONAUTICAL ENGINEERING

वाल्मीकि रामायण में वैमानिक इंजीनियरिंग विषय में राक्षस राज रावण के पुष्पक विमान की जानकारी तो सर्वश्रुत है। इसके साथ-साथ हवाई इंजीनियरिंग का भी उल्लेख है। रावण के पास हवाई मार्ग से चलने वाला रथ भी था। जिसका उल्लेख आता है जब रावण सीताजी का हरण करने के लिए जाना चाह रहा था तब उसने अपने सहयोगी मारीच को कहाँ कि तुम हिरण का रूप लेकर आगे जाओ, मै अपना रथ लेकर वहां लेकर आऊंगा

रावण के रथ का वर्णन जटायु ने जब राम से मुलाकात हुई तब उनसे किया था। जटायु ने बताया कि रावण के रथ को गधों द्वारा खींचा जाता था वह स्वर्णमंडित था और रत्नोंसे सजा हुआ था, तथा उसमे सारथि भी था। यह उल्लेख भी है कि जटायु ने रावण का रथ तहस-नहस कर दिया था तब सीता जी को कोख में दबाकर हवाई मार्ग से आगे चल पड़ा। परंतु पम्पा सरोवर के ऊपर से गुजर रहा था तब वह पुनः रथ में था। निचे बैठे वानरों को देखकर सीताजी ने अपने आभूषण अपनी चुनरी के टुकड़े में बांधकर नीचे फेंक दिए, जो वानरराज सुग्रीव ने जब उनकी श्री राम लक्ष्मण से भेंट हुई तब दिखाए थे।

महावीर हनुमान जब समुद्र लांघकर लंका पहुंचे तब उन्होंने लंका में भ्रमण करते हुए पुष्पक विमान देखा उसके वर्णन में लिखा है कि वह अति विशाल और सुंदर विमान था। सुन्दर कांड के सर्ग ९ श्लोक २ में दिए वर्णन के अनुसार पुष्पक विमान लम्बाई में एक योजन और चौड़ाई में आधा योजन था। उसे सोने से और विभिन्न तरह के रत्नों से सजाया गया था। उसमें अनेक प्रकार के विशाल दालान थे तथा अपार क्षमता थी, वह तीव्र गति से चलने में सक्षम था। स्वयं विश्वकर्मा ने इसका निर्माण किया था उसकी संरचना और सुंदरता को मापना असंभव था।

रावण पुत्र मेघनाथ - इंद्रजीत के पास भी हवाई मार्ग से चलने वाला रथ था। जिसमें बैठकर उसने श्री राम और लक्ष्मण पर हमला किया और नाग पास में उनको बांध दिया था।

राम और लक्ष्मण बेसुध पड़े थे तब सीता का मनोबल तोड़ने के विचार से सीता से कहाँ की राम और लक्ष्मण की मृत्यु हो गई है और उनके मृत शरीर दिखाने के लिए राक्षसियों के साथ उसे पुष्पक विमान में बिठाकर युद्धभूमि में भेजा। दोनों को इस अवस्था में देखकर सीता अत्यन्य दुखी होकर विलाप करने लगी तब उनके साथ गई त्रिजटा ने कहाँ की ये दोनों मृत नहीं है क्योकिं पुष्पक विमान विधवा स्त्री का धारण नहीं करता है

रावण के वध के पश्चात श्रीराम लक्ष्मण सीता जी को शीघ्रतीशीघ्र अयोध्या पहुंचना था तब विभीषण ने पुष्पक विमान दिया था। श्रीराम जब जाने की तैयारी में थे तब विभीषण, सुग्रीव, अंगद, जाम्बुवंत, हनुमान आदि ने कहा कि वह लोग भी उनके साथ जाना चाहते हैं और अयोध्या के दर्शन करना चाहते हैं। श्रीराम ने कहा आप अवश्य चलिए पर साथ में अपने परिवार के लोगों को भी लेकर चलिए तो विभीषण उनके मंत्रीगण और लंका के प्रमुख सह परिवार विमान में सवार हुए। रास्ते में जाते हुए श्रीराम सीता जी को सभी प्रमुख स्थानों के बारे में बताते हुए जा रहे थे जब विमान समुद्री सेतु के ऊपर से जा रहा था तब श्रीराम ने कहा यह नल द्वारा बनाया गया सेतु है। अगला पड़ाव किष्किंधा में था वहां सभी वानरगण अपने परिवार के सदस्यों को लेकर उसमें चढ़े और विमान अयोध्या के ने निकल पड़ा। अयोध्या से थोड़े पहले श्रीराम ने विमान रोका और हनुमान को जानने के लिए भेजा कि भरत का क्या विचार है और अयोध्या में क्या स्थिति है। हनुमान ने जब आकर बताया कि राजा भरत उनकी अंतरमन से प्रतीक्षा कर रहे हैं उन्हें मिलने के लिए आतुर है तब श्री राम पुनः विमान में सवार में होकर अयोध्या पहुंचे

अयोध्या पहुंचने के पश्चात श्री राम ने उस विमान को उसके मूल स्वामी कुबेर के पास वापस भेज दिया

सन्दर्भ: यह वर्णन वाल्मीकि रामायण में अरण्यकाण्ड - सर्ग ४०,४९,५१, ५४ तथा युद्धकाण्ड - सर्ग - ४७,४८,१२१,१२२,१२३ के इस आशय से सम्बंधित श्लोक वर्णन के अनुसार है।

राम का वनवास: सुनियोजित अथवा ईर्ष्यानुभावित

हरि बाबू श्रीवास्तव
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली
(hbs.irde@gmail.com)

साधारणत: ऐसा माना जाता है कि श्री राम का बनवास मंथरा द्वारा प्रेरित कैकेयी का अपने पुत्र भारत को अयोध्या का राजा बनाने की इच्छा के कारण हुआ। ऐसा भी माना जाता है कि राजा दशरथ चक्रवर्ती सम्राट थे और पूरी पृथ्वी पर उनका राज्य था। संस्कृत साहित्य के अनुसार ये सत्य सीमित लगता है। पुराने ग्रंथों के अनुसार श्री राम का बनवास पूर्वनियोजित होना लगता है। इसी तरह राजा दशरथ के राज्य में उनका जंगलों पर पूर्ण आधिपत्य होना भी संहेदास्पद है । इस शोध पत्र में पुराने साहित्य द्वारा इन्हीं बिंदुओं पर विचार प्रस्तुत किए जाएँगे।

1. प्रस्तावना

भगवान श्री राम का चरित्र आज भी न केवल भारत व विश्व के कई अन्य देशों में चर्चा, पालन व शोध का विषय बना हुआ है। यूँ तो श्री राम के जीवन की घटनाओं का वर्णन संस्कृत भाषा के अतिरिक्त विश्व की अनेक भाषाओं में भी किया गया है, किंतु संस्कृत भाषा में उपलब्ध साहित्य, विशेषकर वाल्मिकीय रामायण, को ही उनका मूल स्रोत माना गया है। इस विषय में कोई विवाद नहीं है कि श्री राम मर्यादा पुरुषोत्तम थे व उनका यदि पूरा नहीं तो पृथ्वी के विस्तृत भूभाग पर आधिपत्य था। इसके तमाम उदाहरण भारत के अतिरिक्त पूर्व एशिया, पश्चिम एशिया, यूरोप, एवं दक्षिण अमेरिका आदि के पुरानी सभ्यताओं के देशों के साहित्य, लोक कथाओं व अभिनयों में मिलते हैं। एशिया के देशों जैसे जापान, थाईलैंड, म्यांमार, कम्बोडिया, मलेशिया, जावा, इंडोनेशिया, फ़िलिपींस, चीन, लाओस, मंगोलिया आदि में तो श्री राम लीलाओं का प्रदर्शन किया ही जाता है। इसी तरह, पश्चिम एशिया के देशों जैसे ईराक़, मिश्र, सीरिया, तुर्की व यूरोप के देशों जैसे कि इटली एवं रूस तथा दक्षिण अमेरिका के देशों पेरू, ग्वाटेमाला व माया सभ्यता आदि में पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं [1]। लेकिन यही बात उतनी ही प्रमाणिकता से श्री राम के पिता श्री दशरथ महाराज के लिए नहीं कही जा सकती। कारण, यद्यपि उन्हें चक्रबर्ती सम्राट की संज्ञा दी गई फिर भी उनके ही समय में लंकाधिपति रावण को विश्व-विजयी होना भी बताया गया। यहाँ तक कि भारत के ही कुछ आरण्यिक भू-भागों [जैसे कि ताड़का वन (आज के बिहार में बक्सर), दंडकारण्य (आज के छत्तीसगढ़, तेलंगाना, आँध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश आदि प्रदेशों के भाग)] में उनकी सत्ता की सार्वभौमिकता का अभाव लगता है। श्री राम के राज्य काल में ही इन सभी भू-भागों पर पूर्ण आधिपत्य पुन: हुआ, ऐसा होना लगता है। साथ ही अन्य स्थानों, जैसे कि मधुवन [2] (आज का मथुरा), गंधर्वदेश [3] (आज के पाकिस्तान का सिंध) आदि पर भी श्री राम के राज्य-काल में ही आधिपत्य स्थापित हुआ। श्री राम के पूर्वज महाराज रघु के दिग्विजय का वर्णन कालिदास ने अपने ग्रंथ 'रघुवंशम' में किया है। रघुवंशम के अनुसार, रघु ने वंग (बंगलादेश सहित बंगाल), उत्कल व कलिंग (उड़ीसा), प्रागज्योतिश (असम के साथ ही अन्य उत्तरपूर्वी राज्य), पाड्य व तमिलनाडु में कन्याकुमारी तक, अपरांत (क्रमश: कोंकण व महाराष्ट्र के तटीय क्षेत्र), पारसीकस व त्रिकूटस (ईरान व उसके आगे के क्षेत्र), हुण व कम्बोज (सम्भवत: चीन, मंगोलिया, ताजकिस्तान, उज़्बेकिस्तान वअफगानिस्तान आदि के क्षेत्र) पर विजय प्राप्त की थी [4]। स्पष्ट है कि श्री राम व श्री दशरथ के पूर्वजों का आधिपत्य काम से कम पृथ्वी के बड़े भाग पर तो था ही, जो शनै:-शनै: दशरथ महाराज के समय तक कम होता चला गया और श्री राम के समय उसको दुबारा स्थापित करने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी।

2. योजना व प्रशिक्षण

वैसे तो श्री राम को पूर्ण परमेश्वर का अवतार माना जाता है, और उसके अनुसार उनके लिए कुछ भी करना असम्भव नहीं था, तथापि उनकी यह नर लीला एवं मर्यादा पुरुषोत्तम की लीला थी। इसके अनुसार एक मनुष्य को जीवन में सफलता के लिए क्या उपाय करने चाहिए वह सभी कार्य उन्हें करने थे। अनेक स्थानों पर श्री राम के जन्म का कारण राक्षसी सत्ता की समाप्ति व धर्म-नीति की स्थापना बताया गया है:

हत्वा क्रूरं दुराधर्षं देवर्षीणां भयावहम् [5]

क्योंकि राक्षसी सत्ता सब ओर फैली हुई थी अत: विश्व विजय से ही राक्षसी सत्ता की समाप्ति सम्भव हो सकती थी। विश्व विजय के लिए राजा का धर्म-अर्थ-राजनीति-कूटनीति-न्याय आदि के साथ सैन्य संचालन, अस्त्र-शस्त्र में क्षमता व उनकी विपुलता एवं संगठन आदि की क्षमताओं में पारंगता आवश्यक है। साथ ही युद्ध के समय होने वाली परेशानियों व असावधानियों से भी सुरक्षा आवश्यक है। उस काल में राजकुमारों का गुरुकुल में जाकर शिक्षा ग्रहण करना प्रचलित था, लेकिन श्री राम का गुरुकुल वास अत्यंत कम रहा। गोस्वामी तुलसीदास के अनुसार

गुरुग्रह गए पढ़न रघराई। अल्पकाल विद्या सब आई।।

यह अल्प काल कितना था इसका कहीं वर्णन नहीं मिलता है, लेकिन यह कुछ दिनों या महीनों का ही प्रतीत होता है। गुरु वशिष्ठ के यहाँ तो उनको धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक व सैन्य सभी तरह की शिक्षाएँ लेनी थी। क्योंकि दशरथ जी अपने बच्चों से अधिक समय का वियोग नहीं चाहते थे इसलिए ऐसा सम्भवत: हुआ हो कि गुरु के आश्रम वे मात्र वेद पाठ - वेद की शिक्षा के लिए गए हों और बाक़ी सभी विषय राजग्रह में ही पढ़ाए गए हों। यदि ऐसा नहीं भी हो तो श्री राम और उनके भाइयों का पठन काल 6 अथवा 9 वर्ष से अधिक का नहीं होगा। ऐसा इसलिए कि लगभग 6 वर्ष की आयु से पाठन प्रारम्भ किया माना जाए तो 6-12 वर्षों के बीच (अधिकतर विद्वानों का मानना है कि 12 वर्ष की आयु में तो जनकपुर में उनका विवाहोत्सव था), अथवा 6-15 वर्षों के बीच (यदि वाल्मीकि जी के शब्द 'ऊनषोडस' का अर्थ 15 लगाया जाए) ही यह सम्भव है।

विश्व विजय के लिए अयोध्या के भावी राजा को पूर्णत: तैयार करना भारत के सभी मनीषियों के लिए आवश्यक रहा होगा और वे शायद श्री राम के तरुणावस्था तक आने की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। शायद इसीलिए श्री राम की तरुणावस्था आते ही विश्वामित्र जी का अयोध्या आना हुआ। यदि ताड़का व सुबाहु से युद्ध ही आख़िरी लक्ष्य होता तो वे दशरथ जी के सैन्य बल का सहारा लेते, न कि एक-दो बालकों का। उद्देश्य विश्व विजय का था, तभी राजा दशरथ के सबसे योग्य पुत्र व उनके सबसे उत्तम सहयोगी लक्ष्मण को ही विश्वामित्र जी लेकर गए और उनका अस्त्र-शत्र-युद्ध विद्या का प्रशिक्षण किया।

विश्वामित्र जी के पास उस समय के लगभग सभी प्रभावशाली अस्त्र-शस्त्र थे:

सर्वास्त्राणि कृशाश्वस्य पुत्रा: परमधार्मिका:। कौशिकाय पुरा दत्ता यदा राज्यं प्रशस्ति [6]।।

साथ ही मंत्र शक्तियाँ भी थीं। रास्ते में उन्होंने श्री राम को बला-अतिबला नामक मंत्र समूह की शिक्षा दी:

मंत्रग्रामं गृहाण त्वं बलामतिबलां तथा [6]

जिससे युद्ध के दौरान भूख-प्यास न लगे, थकान न हो, असावधानी न हो, इत्यादि। विश्वामित्र पहले राजर्षि और बाद में ब्रह्मर्षि होने के साथ साथ एक वैज्ञानिक भी प्रतीत होते हैं:

अपूर्वाणां च जनने शक्तो भूयश्च धर्मवित् [7]

बला-अतिबला का प्रशिक्षण तो अयोध्या से सिद्धाश्रम जाते हुए रास्ते में ही विश्वामित्र ने श्री राम को दिया। ऐसा वर्णन भी आता है कि आश्रम जाकर सभी अस्त्र-शस्त्र भी विश्वामित्र ने श्री राम को दे दिए:

ददाम्यस्त्राणि सर्वश: [8]

यदि यह पूर्व नियोजित न होता तो बला-अतिबला एवं सभी दिव्य अस्त्र-शस्त्र जिनमें दण्डचक्र, धर्मचक्र, कालचक्र , विष्णुचक्र, ऐंद्रचक्र, वज्रास्त्र, त्रिशूल, ब्रह्मशिर, ऐषीकास्त्र, ब्रह्मास्त्र, मोड़ और शिखरी नाम की गदाएँ , धर्मपाश, कालपाश, वरुणपाश, अशनि, पिनाक, नारायणास्त्र, आग्नेय-अस्त्र, शिखरास्त्र, वायव्यास्त्र, हयशिरा, और न जाने कितने प्रकार के अस्त्र-शस्त्र सम्मिलित हैं, देने की क्या आवश्यकता थी?

यहाँ दो प्रश्न उठते हैं:

अ) ये सब हथियार विश्वामित्र जी ने श्री राम को अयोध्या में ही क्यों नहीं दे दिए? और

ब) यदि सभी हथियार विश्वामित्र जी के पास थे, तो उन्होंने स्वयं ही विश्व विजय क्यों नहीं की?

साधारण उत्तर है कि आयुधों के प्रयोग की विधि जाने बिना आयुध होना व्यर्थ है व आयुधों के प्रयोग का प्रशिक्षण तो किसी ऐसे स्थान पर ही किया जा सकता है जहाँ खुला मैदान मिले और अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग विधि के अभ्यास से किसी की अनजाने में हानि न हो। विश्वामित्र जी आयुधों का स्वयं प्रयोग न कर सके क्योंकि वे ब्रह्मर्षि थे अत: वे क्रोध-हिंसा नहीं कर सकते थे, जबकि विजयार्थ अस्त्र-शस्त्र चलाने के लिए क्रोध व हिंसा आवश्यक है। पुन: आज कल भी अस्त्र-शस्त्र के शोधार्थी कोई और होते हैं, उन्हें बनाता कोई और है, और चलाता कोई और ही है।

इसी तरह वनवास के दौरान भी अनेक ऋषियों-मुनियों द्वारा श्री राम को अस्त्र-शस्त्र भेंट किए जाने के बारे में लिखा गया है:

तद्धनुस्तौ च तूणी च शरं खड्गं च मानद। जयाय प्रतिगृह्णीष्व वज्र वज्रधरो यथा।।)[9]

तथा

इति स्तुत्वा रमानाथमगस्त्यो मुनिसत्तम:। ददौ चापं महेन्द्रेण रामार्थे स्थापितं पूरा।।

अक्षय्यौ बाणतूरीणो खड्गो रत्नविभूषित:। जहि राघव भूभारभूतं राक्षसमण्डलम्।।)[10]

स्पष्ट है कि विश्व विजय के लिए अयोध्या में जितनी क्षमता-योग्यता प्राप्त की जा सकती थी, उससे कहीं अधिक की आवश्यकता थी और उसी के लिए बाल्यकाल से ही श्री राम का प्रशिक्षण और क्षमता वर्धन का कार्य भारत के मनीषियों द्वारा आरम्भ किया गया।

3. वनवास ही क्यों?

एक प्रश्न यह भी है कि सभी आयुध प्राप्त कर, उनके प्रयोग में पारंगता प्राप्त कर, क्या अयोध्या के राजा के रूप में ही श्री राम राक्षसों के विरुद्ध अभियान नहीं छेड़ सकते थे? मेरे विचार में यह बहुत जोख़िम भरा क़दम होता क्योंकि भारत के बड़े भूभाग पर राक्षसों का अधिकार था और वे सब

रावण के सूबेदारों के रूप में राज्य कर रहे थे:

ये ना रक्षन्ति विषयमस्वाधीनं नराधिपा: ....)[11]

व

खरश्च निहत: सङ्ख्ये दूषणस्त्रिशिरास्तथा। चतुर्दश सहस्राणि राक्षसानां महात्मनाम्।।[12]

यदि सभी राक्षस एक साथ मिल कर, एक जुट होकर, श्री राम के आक्रमण का सामना करते तो अयोध्या राज्य पर संकट आ सकता था। अत: राक्षसों के असंगठित समूहों से लोहा लेने की ही योजना बनाई गई होगी, ऐसा प्रतीत होता है। इसीलिए पूरी योजना को गुप्त रखा गया होगा। श्री राम एक एक कर पहले उत्तर पूर्व भारत (सिद्धाश्रम- बक्सर का भूभाग), अयोध्या के आस-पास के वन (श्रंगवेरपुर-चित्रकूट आदि), पुन: मध्य, मध्य-पश्चिम व मध्य-दक्षिण भारत (दण्डकारण्य) एवं दक्षिण भारत में राक्षसों व अराजकतत्वों का सफ़ाया कर अंत में राक्षसों के राजा रावण के साथ युद्ध करते हैं। साथ ही, जिन-जिन स्थानों से राक्षसों का सफ़ाया करते जाना है वहाँ अपने मित्रों को वहाँ का प्रशासन सौंप कर अयोध्या का आधिपत्य स्थापित करते जाते हैं।

दशरथ जी के समय में अयोध्या के पास के वन में भी अराजकता का माहौल लगता है। गोस्वामी तुलसीदास के अनुसार

यह हमारि अति बड़ सेवकाई। लेहिं न बासन बसन चोराई।।

हम जड़ जीव जीव गन घाती। कुटिल कुचाली कुमति कुजाती।।

पाप करत निसि बासर जाहीं। नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं।।[13]

स्पष्ट है कि निषाद राज गुह को संरक्षण दे कर अयोध्या के पास के वन में अराजकता समाप्त की। साथ ही उनमें कौशल का विकास किया:

'यत्र रामसखा वीरो गुहो ज्ञातिगणैर्वृत:। निवसत्यप्रमादेन देशं तं परिपालयन्।।)[14]

तथा उसी कारण से गुह राजकुमार भरत से लोहा लेने के लिए भी सोच सका:

नावां शतानां पञ्चानां कैवर्तानां शतं शतम्। संनद्धनां तथा यूनां तिष्ठन्त्वत्यभ्यचोदयत्।।)[15]

इसी क्रम में चित्रकूट से नागरिकों (ऋषियों-मुनियों) को परेशान करने वाले राक्षसों के गढ़ जनस्थान-दण्डकारण्य में प्रवेश किया, राक्षसों के साथ सहानुभूति-मित्रता रखने वाले राजा बाली को समाप्त कर अपने मित्र राजा सुग्रीव को स्थापित किया।

एक बात और ध्यान देने योग्य है कि वन जाते समय श्री राम-लक्ष्मण अस्त्र-शस्त्र लेकर ही गए। यदि तपस्वी के रूप में ही वन में रहना होता *(तापस रूप विशेष उदासी। चौदह वर्ष राम वनवासी।।)* तो वहाँ आयुध लेकर जाने का क्या औचित्य था? एक और ध्यान देने योग्य बात है कि जब रावण के साथ युद्ध चल रहा था तब सिवाय किष्किन्धा के अतिरिक्त भारत का कोई भी राजा सहायता के लिए नहीं आया। साथ ही सीता हरण के बाद जब गिद्धराज जटायु, यहाँ तक कि सुग्रीव व संपाति, ने तो बता ही दिया था कि सीता को लेकर रावण दक्षिण दिशा में गया है:

सीतामादाय वैदही प्रयातो दक्षिणामुख:[16]

तथा

क्रोशन्ती राम रामेति लक्ष्मणेति च विस्वरम्। स्फुरन्ती रावणस्याङ्के पन्नगेन्द्रवधूर्यथा।।[17]

एवं

एव मुक्तस्ततोऽहं तैस्सिद्धै: परमशोभनैः। स च मे रावणो राजा रक्षसां प्रतिवेदितः।।

हरन्दाशरथेर्भार्यां रामस्य जनकात्मजाम्। भ्रष्टाभरणकौशेयां शोकवेगपराजिताम्।।

रामलक्ष्मणयोर्नाम क्रोशन्तीं मुक्तमूर्धजाम्।[18]

तो फिर सीता की खोज के लिए वानरों को सभी चारों दिशाओं में भेजने की क्या आवश्यकता थी? इसका कारण सम्भवत: युद्ध के दौरान प्रयोग करने के लिए जड़ियाँ-बूटियाँ-औषधियाँ संग्रह करने व शायद अन्य राजाओं को सावधान करने के लिए किया गया होगा। इसका संकेत वाल्मीकि जी ने किष्किन्धाकाण्ड में दिया है:

य: कश्चित् सकृदश्नाति मासं भवति तर्पित:।।

तानि मूलानि दिव्यानि फलानि च फलाशना:। औषधानि च दिव्यानि जगृहुर्हरिपुंगवा:।।[19]

तथा सीता के अन्वेषण के लिए सभी दिशाओं में जाने वाले वानरों को मिलने वाले राज्यों के बारे में सुग्रीव के द्वारा जानकारी देने से समझ आता है कि वहाँ भी कुछ संदेश भेजा गया होगा। यद्यपि वानरों को जंगल, पहाड़ व गुफ़ाओं में जाने के निर्देश भी दिए गए एवं रामायण में सीधे-सीधे राज्यों को सावधान करने की बात नहीं कही गई है, लेकिन अन्य संदर्भों से ऐसा लगता है कि सभी वानर-प्रमुखों को अयोध्या के आधिपत्य वाले अन्य राज्यों को सतर्क करने व अपने-अपने राज्यों की सीमा सुदृढ़ करने का संदेश-निर्देश देने के लिए कहा गया होगा जबकि जंगल, पहाड़ व गुफ़ा में जाना दुश्मन को मात्र भ्रमित करने के लिए किया गया होगा। शायद यही कारण है कि युद्ध के समय कोई भी अन्य राजा श्री राम की सहायता के लिए

नहीं आया, वे तो अपने ही राज्यों की रक्षा कर रहे होंगे। दूसरा कारण भोजन-औषधि संग्रह भी रहा होगा जैसा कि कुछ-कुछ ऊपर इंगित किया गया है।

4. उपसंहार

इस लेख में मूलत: वाल्मिकीय रामायण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि श्री राम का वनवास पूर्व नियोजित था। सम्भवत: यह योजना कैकेई और श्री राम ने मिलकर ही बनाई थी। ऐसा इसलिए कि श्री राम ने कभी भी, यहाँ तक कि दूसरों के विनय-अनुनय पर भी, इस योजना के कार्यान्वयन से मुख नहीं मोड़ा। दण्डकारण्य में तो ऋषियों-मुनियों को सुरक्षा का बचन देने के समय तो जैसे पूरी योजना का खुलासा ही हो गया:

केवलेनात्मकार्येण प्रवेष्टव्यं मया वनं [20]

बाद में सीता के साथ वार्तालाप में तो श्री राम ने उस बचन को पूरा करने के लिए यदि सीता और लक्ष्मण को छोड़ना पड़े तो उसके लिए भी कहा दिया:

अप्यहं जीवितं जह्यां त्वां वा सीते सलक्ष्मणाम् [21]

सम्भवत: इस योजना निर्धारण में राजा दशरथ व गुरु वशिष्ठ भी सम्मिलित रहे होंगे, क्योंकि बिना राजा की अनुमति के यह सब नहीं किया जा सकता था और बिना गुरु के अनुमोदन के भी उस समय कोई विशेष प्रयोजन नहीं होता था।

प्रश्न उठता है कि ऐसा लिखा कहाँ है और यदि राजा दशरथ इस योजना में सम्मिलित थे तो फिर उनकी मृत्यु क्यों हुई? अध्यात्म रामायण के अनुसार वशिष्ठ जी ने चित्रकूट में भरत को बताया था कि राम बिना रावण वध के अयोध्या वापस नहीं जाएँगे:

रावणं हन्तुकामास्ते गामिष्यन्ति न संशय: [22]

अत: वशिष्ठ जी को इस योजना की कम से कम कुछ जानकारी तो थी ही।

इसी तरह दशरथ जी की मृत्यु का कारण शायद उनके परम प्रिय बेटे को उनके ही द्वारा जानते-बूझते जोखिम में डालने से उत्पन्न ग्लानि रही होगी। इसके अतिरिक्त, शायद उनके जीवन में पहली ही बार था कि उनके चारों बच्चे उनसे दूर हो गए थे।

इन सब बातों पर विचार करने से ऐसा लगता है कि श्री राम का वनवास एक पूर्व-नियोजित/सुनियोजित योजना थी। मंथरा के कहने पर कैकेयी के भड़कने जैसा कोई प्रयास अथवा राजमहल का कोई षडयंत्र नहीं था।

5. संदर्भ

1. https://lordrama.co.in/sri-rama-and-vedic-history-of-the-world.html
2. सर्ग 61-70, उत्तरकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
3. सर्ग 100-101, उत्तरकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
4. सर्ग 4, रघुवंशम
5. सर्ग 15, बालकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
6. सर्ग 21, बालकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
7. सर्ग 22, बालकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
8. सर्ग 27, बालकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
9. सर्ग 12, अरण्यकाण्ड , रामायण (वाल्मीक कृत)
10. सर्ग 4, अरण्यकाण्ड , अध्यात्म रामायण
11. सर्ग 33, अरण्यकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
12. सर्ग 5, अरण्यकाण्ड , अध्यात्म रामायण
13. अयोध्याकाण्ड, रामचरित मानस
14. सर्ग 83, अयोध्याकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
15. सर्ग 84, अयोध्याकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
16. सर्ग 68, अरण्यकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
17. सर्ग 6, किष्किंधाकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
18. सर्ग 59, किष्किंधाकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
19. सर्ग 37, 40-44, किष्किंधाकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)

20. सर्ग 6, अरण्यकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
21. सर्ग 10, अरण्यकाण्ड, रामायण (वाल्मीक कृत)
22. सर्ग 9, अयोध्याकाण्ड, अध्यात्म रामायण

The Golden Deer of the *Rāmāyaṇa:* Lessons in Finance, Governance, Psychology, and Decision-Making

Venkatesh R Vedanthi
(Venkatesh.vedanthi@gmail.com)

The Rāmāyaṇa's golden-deer episode offers a timeless case study in human decision failure—where perception eclipses reason, emotion overrides ethics, and illusion distorts governance. This paper re-interprets that episode through an interdisciplinary lens that integrates Sanskrit hermeneutics, behavioral finance, and ethical decision science. Using an interpretive-analytical method, the study correlates key verses from the Araṇya Kāṇḍa with modern concepts such as cognitive bias, bounded rationality, and governance breakdown. It argues that the deer's glittering deception mirrors speculative exuberance, emotional contagion, and role confusion in modern organizations. The paper creates a model for making moral choices that balances moral restraint with material desire by putting these dynamics into the Purushārtha schema, which is made up of Dharma, Artha, Kāma , and Mokṣa. The results show how old Indian wisdom foresaw behavioral economics and give a framework for governance that can protect financial systems and leadership styles from illusion.

Keywords: Māyā, Purushārtha, Behavioral Finance, Ethical Governance, *Rāmāyaṇa*, Decision Science, Cognitive Bias

1. Introduction

Among the several episodes of the *Vālmīki Rāmāyaṇa*, the golden deer (*Suvarṇa-mṛga-kathā*) is most symbolic. It represents the combination of perception, desire, and moral duty. This defines every decision environment, ancient or modern. The event transforms the peacefulness of the forest hermitage into the crucible of exile and loss, showing how a single error of judgment can unravel the harmony of a system. Across civilizations, thinkers have struggled with illusion and choice. Plato's theory of the Allegory of the Cave exposes humanity's captivity to appearances. Sun Tzu's Bing Fa teaches that deception is the essence of strategy. Today's digital economy amplifies illusion through data simulation and media persuasion. The *Rāmāyaṇa* presents these same dynamics in ethical form: the glitter of the golden deer tempts perception, desire manipulates conscience, and illusion leads to disaster.

आर्यपुत्र अभिरामो असौ मृगो हरति मे मनः | आनय एनम् महाबाहो क्रीडार्थम् नः भविष्यति || (*Āryaputra abhirāmo'sau mṛgo harati me manaḥ, Ānaya enaṃ mahābāho krīḍārthaṃ naḥ bhaviṣyati.*) (Meaning: O prince O long-armed one, that delightful deer is stealing my heart. Fetch him for me. This will be our playmate.*)* (*Vālmīki Rāmāyaṇa, Araṇya Kāṇḍa* 3-43-9)

The psychological realization that even the good are susceptible when emotion impairs judgment (*viveka*) is summed up in the verse. The present paper examines how this topic, interpreted through modern behavioral theory, explains patterns of greed, governance failure, and psychological manipulation that persist in contemporary institutions.

Research Question

What enduring decision-making principles does the golden-deer episode of the *Rāmāyaṇa* offer for modern finance, family, governance, and psychology?

Research Methodology

The study adopts a qualitative thematic approach. The study is done by analyzing Sanskrit verses with related literature through an interpretive framework that connects contemporary ethics with classical philosophy.

2. Literature Review

The *Vālmīki Rāmāyaṇa* explains the conflict between moral duty (*dharma*) and illusion (māyā). The Golden Deer (*Suvarṇa Mṛga*) episode in the *Āraṇya Kāṇḍa (Sargas* 42–44) clearly shows how sensory likings can end up in taking bad decisions. For example, *Sītā*'s attracted to the mystic deer. This led to poor decisions by both *Rāma* and *Lakṣmaṇa*. This episode serves as a warning on alertness, temperance, and ethical vulnerability.

The *Rāmāyaṇa* has been interpreted philosophically as a study in moral psychology. The *Advaita Vedānta* perspective (*YesVedanta*, Decoding *Rāma*yana's Symbolism in Advaita Vedanta) identifies *Rāma* as the Self (*Ātman*), *Sītā* as peace (*Śānti*), and the deer as sensory illusion. Jayaram V. (Symbolic Significance of the *Rāma*yana) and Sri Aurobindo view these conflicts as an internal struggle among desire, reason, and virtue. Dr. Nandini Mishra (Critical Review of Ancient Indian

Values) and the Purushartha Journal of Management, Ethics, and Spirituality emphasize that the following of *artha and kāma* without *dharma* can cause harm to both individual and social order within the *Puruṣārtha* framework (*dharma, artha, kāma, and mokṣa*).

These observations apply to contemporary finance management, governance and policy discussions. The finance regulators like the Reserve Bank of India and Securities and Exchange Board of India are issuing advisories and educating the people about deceptive, false high-return schemes. This is similar to the lesson of the Golden Deer. These episodes affirm that Rāmāyaṇa is a living framework for applied ethics. It demonstrates the continuity of ancient moral wisdom even in contemporary decision-making.

3. Character Analysis: Ethics and Governance

The *Golden Deer* (*Suvarṇa Mṛga*) episode in the *Āraṇya Kāṇḍa* of the *Vālmīki Rāmāyaṇa* (*Sargas* 38–45) captures a moment when human emotions, moral judgment, and destiny converge. Each principal character—*Rāma, Sītā, Lakṣmaṇa, Rāvaṇa, and Maareecha*—depicts one dimension of the *Purushārtha* framework: *Dharma* (righteousness), *Artha* (worldly pursuit), *Kāma* (desire), and *Mokṣa* (liberation through awareness). The characters together form a moral spectrum and illustrate how the imbalance of the *Purushārthas* is established through action

3.1 Rāma — Personification of Dharma (Righteous Duty)

Rāma's character exemplifies *Dharma*—principled action, even amid emotional turmoil. *Rāma* is an example of the perfect balance of judgment and virtue. When *Sītā* expresses her fascination, *Rāma* responds with kindness:

पश्य लक्ष्मण वैदेहीं मृगत्वचि गतस्पृहाम्। त्वचा प्रधानया ह्येष मृगोऽद्य न भविष्यति। (*Paśya Lakṣmaṇa Vaidehīṃ mṛgatvaci gata-spṛhām, Tvacā pradhānayā hy eṣa mṛgo 'dya na bhaviṣyati.*) (Meaning : (See, how Vaidehi ardently longs for the skin of this deer I will not let the animal live, O *Lakṣmaṇa*) (*Āraṇya Kāṇḍa* 3.43.47)

Here, *Dharma* momentarily yields to *Kāma* (affectionate desire), symbolizing the ethical dilemma of a leader torn between emotional responsiveness and rational duty. As Justice M. *Rāma Jois* observes, *Dharma* is the "foundation of righteous governance," ensuring harmony between compassion and prudence (*Dharma: The Global Ethic*,). *Rāma's brief deviation highlights that even the most virtuous leaders must continually balance empathy with discernment.*

3.2 *Sītā* — Representation of *Kāma* (Desire and Emotional Idealism)

Sītā's desire for the golden deer shows how naturally people are drawn to beautiful things and emotional curiosity. The following text describes the above:

अहो रूपमहो लक्ष्मीस्स्वरसम्पच्च शोभना। मृगोऽद्भुतो विचित्राङ्गो हृदयं हरतीव मे। (*Aho rūpam aho lakṣmīḥ svara-sampac ca śobhanā, Mṛgo 'dbhuto vicitrāṅgo hṛdayaṃ haratīva me) (Meaning :* Oh what a beauty, Oh what rich call what delightful, wonderful, graceful limbs This deer captivates my heart.) (*Āraṇya Kāṇḍa* 3.43.14)

Sītā personifies *Kāma,* not in its sensual form but as an emotional need for harmony, beauty, and affection. Even in the *Bhagavad Gītā* (2.62) warns,

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते । सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते (*Dhyāyato viṣayān puṃsaḥ saṅgas teṣūpajāyate, Saṅgāt sañjāyate kāmaḥ kāmāt krodho 'bhijāyate*.) (Meaning: While contemplating the objects of the senses, a person develops attachment for them, and from such attachment lust develops, and from lust anger arises.)

Her innocent desire sparks illusion (Māyā), which causes pain and isolation. Sītā thus serves as an eternal reminder that unchecked desire, devoid of Dharma's scrutiny, can obscure reason and jeopardize harmony.

3.3 Lakṣmaṇa — Symbol of *Nīti* and *Sevā* (Ethical Obedience and Duty)

Lakṣmaṇa exemplifies steadfast service (*sevā*) and discipline (*nīti*), guided by loyalty and respect. But he faces a huge moral problem when *Sītā*, scared by *Rāma*'s cries, accuses him of negligence. The text records:

सौमित्रे मित्ररूपेण भ्रातुस्त्वमसि शत्रुवत्। यस्त्वमस्यामवस्थायां भ्रातरं नाभिपत्स्यसे। (Saumitre mitrarūpeṇa bhrātus tvam asi śatruvat, Yas tvam asyām avasthāyāṃ bhrātaraṃ nābhipatsyase.) (Meaning: Since you, O son of *Sumitra*, are not reaching out to your brother in this situation, you are an enemy to your brother in the guise of a friend) (*Āraṇya Kāṇḍa* 3.45.5)

इच्छसि त्वं विनश्यन्तं रामं लक्ष्मण मत्कृते। लोभात्त्वं मत्कृते नूनं नानुगच्छसि राघवम्। (*Icchasi tvaṃ vinaśyantaṃ Rāmaṃ Lakṣmaṇa mat-kṛte, Lobhāt tvaṃ mat-kṛte nūnaṃ nānugacchasi Rāghavam*) (Meaning: It is with the intention of possessing me that you wish *Rāma*'s death. You do not rush to him certainly because of greed for me.) (Āraṇya Kāṇḍa 3.45.6)

Lakṣmaṇa's moral struggle shows the conflict between the need to obey the orders and being compassionate at the same time. He represents Dharma in its executory form—obedience aligned with conscience. His brief departure from Sītā's guard symbolizes how emotional coercion can disturb even the most disciplined ethical frameworks.

3.4 Rāvaṇa — Misuse of Artha (Power and Strategic Intellect)

Rāvaṇa personifies *Artha*—material ambition and intellect—corrupted by ego and desire. His manipulation of *Maareecha* to deceive *Sītā* and *Rāma* demonstrates the degeneration of *Artha* when divorced from *Dharma*. He instructs *Maareecha*:

सौवर्णस्त्वं मृगो भूत्वा चित्रो रजतबिन्दुभिः।आश्रमे तस्य रामस्य सीतायाः प्रमुखे चर। प्रलोभयित्वा वैदेहीं यथेष्टं गन्तुमर्हसि।। (Sauvarṇas tvaṃ mṛgo bhūtvā citro rajata-bindubhiḥ, Āśrame tasya *Rāma*sya *Sītā*yāḥ pramukhe cara, Pralobhayitvā Vaidehīṃ yatheṣṭaṃ gantum arhasi.) (Meaning: Transform yourself into a wonderful golden deer with silver spots and move about in front of *Sītā* at the hermitage of *Rāma*. After fascinating her, you may go whereever you desire.)
(Āraṇya Kāṇḍa 3.40.18)

In the Arthaśāstra, Kautilya cautions that "power without righteousness destroys both ruler and kingdom." Rāvaṇa's downfall validates this saying—he embodies Artha pursued without Dharma, a warning that unprincipled strategy leads inevitably to ruin.

3.5 Maareecha — Manifestation of Māyā (Illusion and Moral Fear)

Maareecha, compelled by fear of *Rāvaṇa*, transforms into the golden deer despite knowing the doom it will bring. His words foretell his fate:

आनयिष्यसि चेत्सीतामाश्रमात्सहितो मया। नैवत्वमसि नाहं च नैव लङ्का न राक्षसाः।। (Ānayiṣyasi cet Sītām āśramāt sahito mayā, Naiva tvam asi nāhaṃ ca naiva Laṅkā na Rākṣasāḥ) (Meaning: "If you bring Sītā from the hermitage with my assistance, know that none of us will survive you nor I, nor Lanka, nor the demons.") (Āraṇya Kāṇḍa 3.41.19) Maareecha symbolizes Māyā—deception, fear, and moral surrender under authority. Though he perceives truth, he acts against it, illustrating moral disengagement. His act is the loss of inner Dharma for survival. In the Purushārtha schema, he stands at the threshold where illusion eclipses wisdom, and compulsion replaces conscience.

4. Thematic Applications: From Golden Deer Narrative to Universal Lessons

When viewed through the *Purushārtha* lens, the ethical tensions between *Dharma*, *Artha*, and *Kāma* illuminate real-world phenomena in economics, psychology, family relations, and governance.

4.1 Finance — The Mirage of Illusory Wealth

In financial behavior, the glittering golden deer mirrors the *illusion of speculative gain*. Just as *Sītā*'s fascination blinds her to danger, investors often succumb to the *"shiny-object bias"*—chasing high-return illusions without risk analysis. The behavioral economics studies (e.g., Kahneman & Tversky's *Prospect Theory)* describe how *emotional reward outweighs rational assessment.*

Rāvaṇa's use of deception (*māyā-mṛga*) parallels corporate frauds that fabricate value; *Maareecha*'s complicity resembles intermediaries who knowingly enable false accounting or false/fraudulent offers. The episode thus embodies what the *Arthaśāstra* cautions against: *"Wealth divorced from righteousness destroys both the ruler and the realm"*.
Ethical finance, therefore, requires Dharma-aligned prudence—valuing transparency over attraction.

4.2 Psychology — Cognitive Bias and Emotional Illusion

From a psychological lens, the *Golden Deer* dramatizes *affective bias*—emotion overriding logic. *Sītā*'s desire, *Rāma*'s empathy, and *Lakṣmaṇa*'s guilt form a chain of *cognitive distortion* that modern psychology terms *decision fatigue* and *moral dissonance*. *Maareecha*'s transformation embodies *moral disengagement*—acting against conscience to reduce inner conflict. Albert Bandura's on *Moral Disengagement* notes that individuals justify unethical acts by diffusing responsibility—precisely *Maareecha*'s stance.

Thus, the golden deer offers an early behavioral model: illusion arises when emotional stimulus overpowers reflective awareness.

4.3 Family — Emotional Coercion and Communication Ethics

This episode shows how, within a family, communication breakdown and emotional manipulation occur. *Sītā*'s suspicion of *Lakṣmaṇa*'s motives was prompted by fear and isolation. This shows how trust can collapse under stress. Family-systems theory (Bowen, 1978) emphasizes that unregulated emotion within close relationships leads to reactive decisions. *Lakṣmaṇa*'s obedience despite moral doubt portrays the tension between duty (*seva*) and self-assertion.

In Purushārtha terms, the family must balance Kāma (affection) with Dharma (mutual respect). The lesson remains clear: harmony survives only where emotion is communicated through ethical clarity, not suspicion.

4.4 Governance — Ethics, Illusion, and Power

Governance represents the sphere of this moral sequence. *Rāma*'s empathy, *Rāvaṇa*'s manipulation, and *Maareecha*'s fear together reveal how *systems decay when power, morality, and fear coexist without accountability.*

The Second Administrative Reforms Commission (2007), in its Fourth Report on Ethics in Governance, warns that ethical decline begins when personal emotion. Further, discretionary power overrides institutional discipline and accountability. The Commission emphasizes that legislation and procedural rules alone cannot create integrity. Ethics must be internalized as a cultural value within governance. It advocates promoting a sustained "culture of integrity" through comprehensive institutional mechanisms. Some of the mechanisms suggested are strengthening vigilance and disciplinary frameworks, ensuring timely investigation of violations, and enforcing sanctions without delay. By combining ethical parameters with a

suitable enforcement process, administrative systems can restore public trust and prevent the moral decay that results when emotion, bias, or personal gain supplants duty.

Just as illusion deceived righteous *Rāma*, misinformation and populist spectacle distort modern governance. The remedy, both ancient and modern, lies in *Dharma-yukta Artha*—policy grounded in ethical truth rather than expedient desire. *Kautilya*'s principle that "the root of wealth is righteousness" thus aligns with Justice *Rāma* Jois's assertion in *Dharma: The Global Ethic* that *Dharma* alone sustains moral order in public life.

4.5 The *Purushārtha* Equilibrium: Conceptual and Practical Framework

- **Analysis of Concepts**

In Indian philosophy, the Purushārtha framework, which is made up of *Dharma, Artha, Kāma* , and *Mokṣa*, is the moral framework for both individual and social order. Every objective in life operates as a moral subsystem, interconnected with the others. *Dharma* (righteousness) controls behavior, *Artha* (material prosperity) keeps things stable, *Kāma* (emotional fulfillment) keeps people motivated, and *Mokṣa* (liberation or reflective knowledge) provides ultimate balance.

In a perfect balance, *Dharma* controls both *Artha* and *Kāma* , and *Mokṣa* serves as a moral compass, making sure that actions and desires are good for both the individual and the society. This model does not support either ascetic retreat or material excess. Instead, it supports a dynamic ethical balance:

- Dharma without Artha leads to moral idealism without capability,
- Artha without Dharma degenerates into greed,
- Kāma without discipline becomes indulgence, and
- Mokṣa without engagement lapses into detachment devoid of responsibility.

Purushārtha equilibrium, then, is a process of constant moral calibration that harmonizes human aim with universal order (ṛta) rather than a static condition. In various domains, the state, business, family, and individual all serve as manifestations of this equilibrium**.**

- **Practical Interpretation**

The Purushārtha principle is translated into a multifaceted governance model that incorporates ethics, performance, emotion, and purpose in modern life.

Finance: *Dharma* corresponds to ethical regulation and transparency. *Artha* to profitability and efficiency. *Kāma* to consumer satisfaction and aspiration. *Mokṣa* to sustainability and long-term societal value. A balanced financial system thus ensures profit guided by purpose.

Psychology: *Dharma* becomes conscience. *Artha* becomes cognitive control. *Kāma* is emotional vitality. *Mokṣa* is self-awareness. When emotion and reason work in tandem rather than against one another, it will result in psychological.

Family and Society: *Dharma* is mutual trust. *Artha* is shared responsibility. *Kāma* is affection. *Mokṣa* is harmony. The main reasons for the breakdown of the relationship are the collapse of trust (*Dharma*) or excessive importance on material status (*Artha*).

Governance and Leadership: *Dharma* ensures integrity. *Artha* drives capability. *Kāma* gives rise to social motivation. and *Mokṣa* ensures vision. Institutions sustain when they embed moral accountability into their structures—balancing ambition with restraint.

The *Purushārtha* framework integrates moral, material, emotional, and spiritual dimensions into a single range of ethical balance. Table 1 outlines how each *Purushārtha—Dharma*, *Artha*, *Kāma*, and *Mokṣa* translates into areas such as today's finance, psychology, family, and governance. Collectively, they demonstrate how equilibrium (*Samatā*) can be achieved between righteousness, prosperity, desire, and introspection, which forms the basis of moral leadership and long-term decision-making. This applies to both individual and institutional life.

Table 1 The *Purushārtha* Equilibrium Across Modern Systems - *Mapping the four classical aims of life (Dharma, Artha, Kāma , Mokṣa) to ethical, cognitive, relational, and institutional dimensions of modern society*

Purushārtha Principle	Finance	Psychology	Family	Governance
Dharma (Righteousness)	Ethical compliance, transparency, fair practice	Moral conscience, cognitive balance	Mutual trust and fairness	Integrity, rule of law, accountability
Artha (Wealth/Capability)	Economic growth, resource optimization	Cognitive discipline, self-control	Shared responsibility	Administrative competence, institutional efficiency
Kāma (Desire/Emotion)	Market aspiration, innovation, motivation	Emotional vitality, creative impulse	Affection, empathy	Public welfare motivation, social inclusion
Mokṣa (Liberation/Reflection)	Sustainable finance, long-term value creation	Self-awareness, detachment from bias	Harmony, forgiveness	Visionary leadership, detachment from personal gain

While Table 1 presents the Purushārthas in their applied form across modern systems, their deeper significance lies in the dynamic balance that sustains them. *Figure 1* illustrates this moral and functional equilibrium, showing how *Dharma*, *Artha*, *Kāma*, and *Mokṣa* interact as a self-correcting ethical framework governing both personal conduct and institutional integrity.

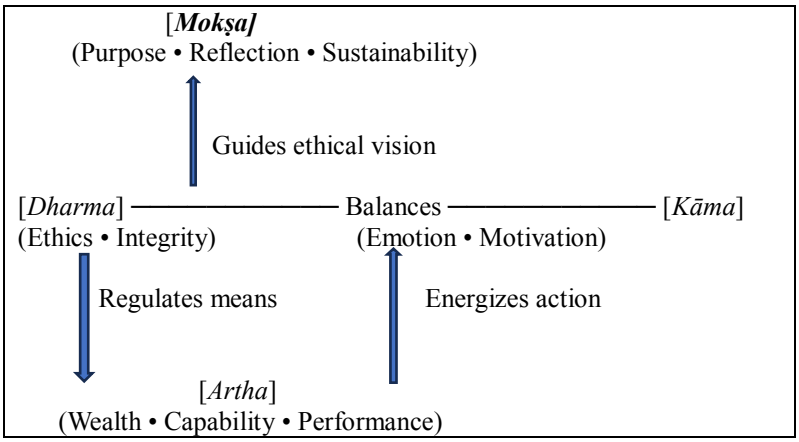

Figure 1 The *Purushārtha* Equilibrium Framework - *A conceptual model depicting the dynamic interrelationship of Dharma, Artha, Kāma, and Mokṣa as the moral architecture of balance in personal and institutional life - The* ***center point*** *of intersection represents* ***Samatā (Equilibrium)*** *— the state of balanced consciousness and systemic harmony. (See also Table 1)*

The equilibrium depicted in Figure 1 shows that it is more than philosophical harmony. It represents a living ethical framework for decision-making. When *Dharma* governs *Artha* and *Kāma*, and *Mokṣa* balances both of them through reflective wisdom, actions align with long-term welfare rather than transient gain. This cyclical balance forms the moral core of resilience in personal life, institutions, and governance systems. The subsequent sections apply this equilibrium to contemporary domains—finance, psychology, family, and leadership—demonstrating how deviation from any one principle, as in the Golden Deer episode, disturbs the entire ethical order and invites illusion (*māyā*).

5. Contemporary Reinterpretation: Ethical Standards for the Modern World

This section links each character from the *Rāmāyaṇa* to a contemporary standard, reinterpreting the Golden Deer event in the context of modern ethics. This part serves as a conceptual map, converting traditional ethical tales into frameworks pertinent to the issues facing society, leadership, the economy, and technology today.

5.1 From Golden Deer Narrative to Ethical Prototype

The Golden Deer episode shows how ethical failure propagates through roles—leader, follower, family member, manipulator, and accomplice. In modern terms, these roles persist in every organization, government, or personal decision.
Thus, each character turns into an ethical prototype that represents one aspect of the Purushārtha imbalance, which is the moral collapse caused by an overemphasis or neglect of Dharma, Artha, or Kāma .

5.2 The Modern Mirror: Ethical Resonance

1. Rāma — The Ethical Leader's Paradox

Rāma's compassion-driven decision reflects the modern leader's dilemma: to appear humane without compromising prudence. In business or public policy, this is the tension between *emotional intelligence* and *rational governance*. As Justice *Rāma Jois* notes in *Dharma: The Global Ethic that* leadership grounded in *Dharma* must temper empathy with foresight.

2. Sītā — The Emotional Consumer

Sītā's attraction to the golden deer mirrors the psychology of modern markets and relationships—where aesthetics, marketing, and digital glamour often obscure substance. Kahneman's *Prospect Theory* describes this as *overvaluation of perceived reward*, leading to riskier decisions. The deer is the timeless symbol of *consumer illusion*.

3. Lakṣmaṇa — The Ethical Subordinate

In workplaces and governments, professionals often face *Lakṣmaṇa*'s dilemma: uphold instruction or question unethical command. Ethical governance demands what Bidyut Chakrabarty calls *"moral discretion in bureaucratic conduct." Lakṣmaṇa* thus represents the tension between loyalty and moral courage.

4. Rāvaṇa — The Strategic Manipulator

Rāvaṇa's intellect, brilliance, and charisma parallel the modern *ethical anarchist*—the corporate fraud architect or populist demagogue. Kautilya's *Arthaśāstra* warns that a strategy untampered by righteousness (*Dharma*) leads to destruction. *Rāvaṇa* is not ignorance incarnate but intelligence corrupted by ego—an archetype recurrent in corporate scandals and authoritarian regimes.

5. Maareecha — The Complicit Technologist

Maareecha's illusion echoes the modern realm of *Artificial Intelligence deception, deepfakes, and digital manipulation.* The one who builds an illusion for others becomes a victim of it. Bandura's *Moral Disengagement* theory parallels *Maareecha*'s rationalization—obedience to immoral command as self-preservation. He embodies the ethical dangers of technology without conscience.

5.3 Synthesis: *Dharma* as the Corrective Lens

Through these prototypes**,** the Golden Deer transforms into living ethics. Every character illustrates how contemporary society continues to veer between the Purushārtha objectives of pursuing pleasure (*Kāma*), rich (*Artha*), and significance (*Dharma*), frequently losing equilibrium

The episode's warning is timeless: illusion will thrive when emotional, intellectual, and moral dimensions fall out of balance.

- When *Kāma* outpaces *Dharma*, desire breeds deception.
- When Artha excludes *Dharma*, innovation becomes exploitation.
- When Sevā lacks awareness, obedience becomes complicity.

6. Application to Finance: The Golden Deer as a Parable of Economic Illusion

The *Golden Deer* episode illustrates how emotional desire for glittering reward erodes ethical restraint—precisely the dynamic that underlies most financial crises. When *Kāma* (desire) and *Artha* (gain) overpower *Dharma* (prudence and integrity), economies fall prey to illusion (*Māyā*).

6.1 The Allure of Speculative Wealth

Sītā's fascination with the radiant deer mirrors the human tendency to pursue *appearance over substance*. Behavioral economists Daniel Kahneman and Amos Tversky showed in their Nobel-cited *Prospect Theory* that people overweight potential gains relative to actual probability

In markets, this bias fuels bubbles: investors chase "golden" assets whose shimmer conceals risk. Similarly, corporates fix unattainable sales growth targets, financial targets.

Like *Sītā*'s longing, speculative exuberance often begins innocently—as curiosity—but ends in captivity to illusion.

As the Manusmṛti (8.15) states

तस्माद् धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्॥ (Tasmād dharmo na hantavyo mā no dharmo hato 'vadhīt.) (Meaning: Dharma, when destroyed, destroys; when protected, protects. Therefore, *Dharma* must never be violated, or it will, in turn, destroy us".)

Thus, the Golden Deer stands as a perpetual mirror—reminding that progress without ethics is illusion, and illusion without reflection leads to downfall.

6.2 Leadership Responsibility and Ethical Governance of Wealth

Rāma's decision to pursue the deer despite suspicion evokes the behavior of executives or policymakers drawn into unverified ventures. Justice M. *Rāma* Jois defines *Dharma in his book Dharma: The Global Ethic* as "the moral foundation that sustains wealth and power.

When compassion or optimism overrides due diligence, the result resembles ethical negligence. Financial ethics frameworks such as the OECD Principles of Corporate Governance (2023) emphasize exactly this equilibrium: transparency, accountability, and moral oversight. Thus, *Rāma*'s momentary lapse parallels governance failures were empathy or haste eclipses scrutiny.

6.3 *Rāvaṇa* and the Mechanism of Financial Deception

Rāvaṇa's orchestration of illusion through *Maareecha* exemplifies *strategic fraud*—intelligence weaponized against trust. In *Kautilya's Arthaśāstra*, wealth without righteousness is deemed self-destructive.

Modern analogues appear in accounting scandals and market manipulation, where data (the "deer") is beautified to entice stakeholders. As the *Second Administrative Reforms Commission* (2007) observes in *Ethics in Governance*, systemic corruption emerges when public purpose is replaced by personal or institutional gain, eroding moral restraint and transparency. This mirrors *Rāvaṇa*'s flaw: the subordination of ethical purpose (*Dharma*) to ambition (*Artha*), demonstrating that deception—whether in myth or markets—inevitably leads to collapse.

6.4 *Maareecha* and the Ethics of Complicity

Maareecha, though aware of his fate, embodies the auditor or intermediary or official in an organization who executes unethical orders out of fear or survival instinct.

Albert Bandura's open essay on *Moral Disengagement* describes this precisely: individuals neutralize guilt by displacing responsibility. In finance, this translates to silent compliance—approving misstatements, manipulating algorithms, or turning a blind eye to risk.

6.5 Summing up

The ethical fall of the forest—*Sītā*'s desire, *Rāma*'s risk, *Rāvaṇa*'s deceit, and *Maareecha*'s fear—replays in every economic collapse. The story anticipates what modern economists call **moral hazard**: risk-taking under illusion of immunity. Its remedy is ancient yet urgent—*Dharma-based finance*: transparency, restraint, and truth as the foundation of prosperity.

The Manusmṛti advises:

धर्मेणैव धनं रक्षेद् धर्मं रक्षति रक्षितः। धर्मेणैव हि जीवेत् धर्मो हि सुखसाधनम्॥ (*Dharmeṇaiva dhanaṃ rakṣed dharmaṃ rakṣati*

rakṣitaḥ,Dharmeṇaiva hi jīvet dharmo hi sukha-sādhanam) (Meaning: "One should protect wealth through righteousness, and life too through righteousness.") (*Manusmṛti* 8.15)

This verse reminds us that *artha* (wealth) cannot be separated from *dharma* — the moral frame that guarantees the sustainability of family prosperity.

7. Application to Psychology: Cognitive Illusion and Emotional Dissonance

The Golden Deer episode in the *Āraṇya Kāṇḍa* can serve as a study in human cognition and affective behavior. It mirrors how perception, emotion, and reasoning interplay in decision-making. This is a pattern that modern psychology describes as cognitive bias and moral dissonance.

Through the lens of *Purushārtha,* the episode becomes a symbolic model of how imbalance between desire (*Kāma*), intellect (*Artha*), and conscience (*Dharma*) creates inner turmoil.

7.1 Sītā and the Psychology of Desire

Sītā's fascination with the radiant deer is the first spark of illusion. Her attraction to external beauty exemplifies what psychology terms *attentional bias* — the tendency to prioritize emotionally appealing stimuli over rational assessment. As described by Kahneman and Tversky in *Prospect Theory*, such bias leads individuals to overestimate the pleasure of potential gains while underestimating associated risks.

रूपमहो लक्ष्मीस्स्वरसम्पच्च शोभना। मृगोऽद्भुतो विचित्राङ्गो हृदयं हरतीव मे (*Aho rūpam aho lakṣmīḥ svara-sampac ca śobhanā, Mṛgo 'dbhuto vicitrāṅgo hṛdayaṃ haratīva me*) (Meaning: Oh what a beauty, Oh what rich call what delightful, wonderful, graceful limbs. This deer captivates my heart.) (*Āraṇya Kāṇḍa* 3.43.14)

This verse depicts the aesthetic trigger as a vivid metaphor for cognitive fascination. Modern psychology equates this to *novelty-seeking behavior*, driven by dopamine responses to attractive uncertainty.

Sītā's desire is not greed; it is curiosity untampered by awareness — a subtle form of emotional illusion.

7.2 Rāma and Emotional Reasoning

Rāma's decision to fulfill *Sītā*'s wish despite intuition symbolizes affective reasoning — when emotional empathy overrides analytical judgment. According to Antonio Damasio's Somatic Marker Hypothesis (public overview: Frontiers in Psychology), decision-making often depends on emotional memory. *Rāma*'s compassion acts as his emotional marker, driving him toward an ethically kind but strategically unsafe choice.

In *Purushārtha* psychology, this scenario represents the supremacy of *Kāma* (relationship-driven emotion) over *Dharma* (cognitive restraint). It shows that even noble intentions can cloud rational vigilance when emotion is unmoderated.

7.3 Lakṣmaṇa and Cognitive Dissonance

Lakṣmaṇa experiences moral dissonance—a conflict between loyalty and reason. His obedience to *Sītā*'s demand, despite knowing the danger, mirrors Leon Festinger's concept of *Cognitive Dissonance*. Festinger noted that individuals resolve internal tension by changing their behavior to align with external pressure. Thus, *Lakṣmaṇa* gives in, balancing inner guilt by giving in to emotional pressure.

व्यसनं ते प्रियं मन्ये स्नेहो भ्रातरिनास्तिते। तेन तिष्ठसि विश्रब्धंतमपश्यन्महाद्युतिम्। (*Vyasanaṃ te priyaṃ manye sneho bhrātari nāsti te,Tena tiṣṭhasi viśrabdhaṃ tam apaśyan mahā-dyutim.)* (Meaning: I think *Rāma*'s adversity is welcome to you. You do not have any love towards your brother. It is for this that you stand unconcerned instead of proceeding to help your brilliant brother) (*Āraṇya Kāṇḍa* 3.45.7)

His issue exemplifies job or household stress: a choice between ethical principles and relational harmony. From a psychological point of view, this is the burden of conscience under emotional pressure, which is a battle.

7.4 *Rāvaṇa* and the Psychology of Power and Deception

Rāvaṇa's cunning reflects *Machiavellian intelligence*, where cognitive ability is used to manipulate others for self-interest. In psychology, this is described as *"Dark Triad"* behavior — a triad of narcissism, Machiavellianism, and psychopathy. *Rāvaṇa*'s intellect, unrestrained by empathy, represents high cognitive control combined with moral disengagement.

सौवर्णस्त्वं मृगो भूत्वा चित्रो रजतबिन्दुभिः। आश्रमे तस्य रामस्य सीतायाः प्रमुखे चर। प्रलोभयित्वा वैदेहीं यथेष्टं गन्तुमर्हसि॥ (*Sauvarṇas tvaṃ mṛgo bhūtvā citro rajata-bindubhiḥ, Āśrame tasya Rāmasya Sītāyāḥ pramukhe cara, Pralobhayitvā Vaidehīṃ yatheṣṭaṃ gantum arhasi*.) (Meaning: Transform yourself into a wonderful golden deer with silver spots and move about in front of *Sītā* at the hermitage of *Rāma*. After fascinating her, you may go wherever you desire.)
(Āraṇya Kāṇḍa 3.40.18*,)*

Here, his manipulation of *Maareecha* shows *instrumental rationality*—intelligence serving selfish ends. In the *Purushārtha* framework, *Rāvaṇa* represents *Artha* without *Dharma* — intellect without conscience.

7.5 Maareecha and Moral Disengagement

Maareecha's behavior epitomizes *moral disengagement*—acting against one's values under coercion. Albert Bandura explained that individuals justify unethical actions through displacement of responsibility.

Rāvaṇa tells to *Maareecha* that

आसाद्य तं जीवितसंशयस्ते मृत्युर्ध्रुवो ह्यद्य मया विरुध्य। एतद्यथावत्प्रतिगृह्य बुद्ध्या यदत्र पथ्यं कुरु तत्तथा त्वम्॥ (*Āsādya taṃ jīvita-saṃśayas te mṛtyur dhruvo hy adya mayā virudhya, Etad yathāvat pratigṛhya buddhyā yad atra pathyaṃ kuru tat tathā tvam*.) (Meaning: Your survival is doubtful after facing *Rāma* in combat. But your death is certain if you oppose me now. Think carefully and do whatever is desirable for you in the present circumstances.) *(Āraṇya Kāṇḍa* 3.40.27)

This shows full cognitive awareness of moral violation, yet behavioral compliance under fear. He symbolizes the *neuroscience of obedience*, explored in Stanley Milgram's experiments, proving that social pressure often overrides moral resistance.

7.6 Summing up

The *Golden Deer* becomes a psychological allegory of *human cognition under emotional pressure*. Every character reflects a mental process:

- Sītā's desire — attention bias,
- Rāma's empathy — emotional reasoning,
- Lakṣmaṇa's conflict — dissonance,
- Rāvaṇa's deceit — manipulative cognition,
- Maareecha's compliance — moral disengagement.

Together, they form a complete behavioral system — the ancient Indian model of *Māyā*—which modern psychology now interprets through neuroscience and decision theory. As the *Bhagavad Gītā* (3.39) cautions:

आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा । कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च ॥ *(āvṛtaṁ jñānam etenajñānino nitya vairiṇākāma rūpeṇa kaunteya duṣpūreṇānalena ca)(Meaning:* Thus, the wise living entity's pure consciousness becomes covered by his eternal enemy in the form of lust, which is never satisfied and which burns like fire.)

8. Application to Family Ethics: Trust, Emotion, and *Dharma* in Relationships

The Golden Deer episode shows how love (*Kāma*), loyalty (*Sevā*), and moral discipline (*Dharma*) interact. It further shows how miscommunication or emotional coercion can fracture even the most sacred relationships. This episode becomes an analogy for family decision-making under emotional stress when viewed via the Purushārtha viewpoint.

8.1 *Sītā*'s Yearning and the Aesthetic Impulse in Family Life

Sītā's desire to possess the golden deer reflects a spouse's emotional and aesthetic instinct, a longing to share beauty with the loved one. In family psychology, such desire symbolizes *emotional intimacy and novelty seeking*, which are healthy when guided by communication. However, when emotional needs are unspoken or misunderstood, they can appear as impulsive wishes.

As *Bowen's Family Systems Theory* explains, families under stress tend to *"triangulate emotion"*—one member's anxiety is projected onto another. *Sītā*'s desire thus activates a cycle of emotional transfer, revealing that even affection requires self-awareness and restraint.

8.2 *Rāma*'s Response: Compassion as a Family Value

Rāma's immediate willingness to fulfill *Sītā*'s wish represents the tenderness of the ideal husband. In family ethics, this is a virtue: empathy toward the partner's emotional world. Yet, as *Justice M. Rāma Jois* reminds in *Dharma: The Global Ethic that Dharma* requires emotion to be harmonized with judgment. *Rāma*'s act shows how excessive empathy, unmediated by prudence, may lead to unintended suffering — the "ethical paradox of love."

In modern family counseling, this is akin to *emotional enmeshment*, where over-identification with the partner's feelings clouds objective reasoning. Healthy compassion, therefore, requires *detached empathy* — love with awareness.

8.3 *Lakṣmaṇa* and the Ethics of Communication

The dispute between *Lakṣmaṇa* and *Sītā* illustrates how a communication breakdown may erode confidence. When *Rāma* cries out, *Sītā*'s fear manifests as suspicion; her hurting words pierce *Lakṣmaṇa*'s integrity. Her accusation that *Lakṣmaṇa* harbors ulterior motives reflects what family therapists call *projectio*n: assigning one's own insecurity to another.

Bowen's theory explains that under threat, "family members react with emotional intensity rather than rational dialogue. *Lakṣmaṇa*'s silence and eventual departure illustrate the tragedy of *emotional coercion* — when moral duty collapses under mistrust.

In the Purushārtha view, Sītā's Kāma (emotional need) overwhelms Lakṣmaṇa's Dharma (duty), resulting in dissonance.

8.4 The Unseen Shadow: *Rāvaṇa* and *Maareecha* as External Influences

Rāvaṇa and *Maareecha*, though outsiders, represent toxic external influences that harm family harmony. *Rāvaṇa*'s illusion (Māyā) mirrors societal distractions, material temptation, ego, or manipulative advice that lure individuals away from inner balance.

Maareecha's compliance shows how fear-based decisions—made to preserve peace—can invite greater harm. In

psychological terms, this dynamic aligns with the Systems Stress Model. According to which families are most vulnerable to external manipulation when internal communication is weak.
Thus, the Golden Deer is not just an external illusion but a reflection of the family's internal disharmony.

8.5 Summing up

The Golden Deer is a psychological case study in family ethics. It teaches that:

- Emotional desires (*Kāma*) must be strengthened by clarity (*Dharma*).
- Obedience (Sevā) must be strengthened through dialogue and empathy.
- Fear and suspicion must yield to trust and communication.

As an old Sanskrit is saying
संवादात् बन्धनं नित्यं संवादाच्च विमोक्षणम्। (*Saṃvādāt bandhanaṃ nityaṃ saṃvādāc ca vimokṣaṇam*.) (Meaning: "From dialogue comes bondage, and through dialogue comes liberation.")
Thus, the health of a family, ancient or modern, depends not on hierarchy or emotion alone, but on ethical communication rooted in Dharma.

9. Application to Governance & Leadership: *Dharma*-Aligned Statecraft

The Golden Deer episode looks like a compact manual on governance failure and recovery. It teaches the effect of compassion without prudence (*Rāma*), undertaking the orders under emotional coercion (*Lakṣmaṇa)*. It also teaches about strategic manipulation (*Rāvaṇa*), and forced cooperation (*Maareecha*).
Through the *Puruṣārtha* lens, it shows how *Dharma* must restrain Artha and *Kāma* to ensure public power stays legitimate and humane.

9.1 The Leader's Dilemma: Balancing Empathy and Prudence (*Rāma*)

Rāma's actions in the Golden Deer episode highlight the moral dilemma that faces leaders who have to balance empathy with strategic planning. When *Sītā* expresses her fascination for the radiant deer, *Rāma* responds with tender convenience.
Rāma's decision to act out of empathy rather than caution—a choice that temporarily subordinates *Dharma* (principled judgment) to *Kāma* (emotional affection). Justice M. *Rāma* Jois, in *Dharma*: The Global Ethic, observes that true leadership requires the harmonization of moral sensitivity with discernment, since "*Dharma* sustains the welfare of all when guided by reason and restraint."

From a governance perspective, *Rāma*'s decision parallels leadership behavior where compassion becomes a source of ethical risk, for instance, approving unverified initiatives under emotional or populist appeal.
In modern administrative systems, this is mitigated by procedural safeguards like dual review, ex-ante risk assessment, and decision transparency, which ensure that humane leadership does not lapse into impulsivity.

Governance Principle

Empathy is very important to ethical leadership, but it must operate within the discipline's rules and regulations. Compassion, without prudence, endangers both justice and sustainability.

9.2 The Compliance Paradox: When Duty Conflicts with Conscience (*Lakṣmaṇa*)

Lakṣmaṇa's ethical conflict is one of the emotionally charged moments in the Golden Deer episode. He, as a loyal guardian, is torn between his command to protect *Sītā* and her urgent plea to go and rescue *Rāma* after hearing *Rāma*'s cry. The Vālmīki Rāmāyaṇa tells this fight in a way that is very true to life:

Sītā's words are not malicious, but they spring from fear — an emotion that clouds trust and inverts moral logic. *Lakṣmaṇa*'s obedience, born from love and respect, becomes an act of tragic vulnerability: he abandons *Dharma-sthiti* (the moral stance) to appease emotional authority.

In ethical governance terms, *Lakṣmaṇa* represents the archetype of the conscientious subordinate caught between *Niti* (institutional rule) and *Sevā* (personal loyalty). His crisis anticipates what modern public administration calls the compliance paradox — the moral tension between following orders and preserving ethical independence.

The OECD Principles of Corporate Governance (2023) note that integrity within organizations depends on "empowering individuals to report irregularities without fear of retaliation." Similarly, Max Weber's "ethic of responsibility" demands that public servants act with foresight and accountability, not mere submission to hierarchy.

In the *Purushārtha* framework, *Lakṣmaṇa*'s struggle reveals the imbalance between *Dharma* and *Sevā*: loyalty is virtuous only when aligned with righteousness. Systems that punish ethical hesitation or dissent risk producing "obedient errors"—actions correct by form but wrong in consequence.

Thus, the lesson of *Lakṣmaṇa* is a call to institutionalize courage within governance. Ethical obedience must include the freedom to question. True loyalty to leadership lies not in uncritical compliance, but in safeguarding the moral intent of the command itself.

Governance Principle
Duty without discernment degenerates into servility. A righteous system supports those who obey truth before authority.

9.3 Strategic Manipulation and the Corruption of Intellect (Rāvaṇa)

Rāvaṇa embodies the corruption of intellect (Buddhi-bhramśa)—strategic brilliance detached from moral purpose. Instructing *Maareecha* to deceive *Sītā*, he articulates the psychology of manipulation. This instruction transforms intellect into deception—an abuse of cognitive excellence for immoral ends.
By following Artha without *Dharma*, *Rāvaṇa* is a perfect example of how government breaks down when ethically sound strategic intelligence turns into corruption.
In the present-day context, this shows up as corporate fraud, propaganda, and data manipulation—situations where institutional brilliance serves personal ego over public benefit.

Governance Principle: Strategy without ethics is self-destructive. Power must be informed by moral clarity, else intellect becomes an instrument of illusion.

9.4 Coerced Complicity and the Ethics of Administrative Courage (*Maareecha*)

Maareecha's predicament—obedience under fear—is an archetype of *moral disengagement* in governance., he confesses:
Despite foreknowledge and knowing the fatal consequence of his act, *Maareecha* complies—sacrificing conscience to survival instinct.

Albert Bandura's theory of *Moral Disengagement* explains such behavior as *the psychological mechanism by which individuals rationalize unethical acts under authority or fear.* In public institutions, this mirrors silent complicity—where civil servants, auditors, or subordinates obey unethical commands to preserve position or security.

Max Weber, in *Politics as a Vocation*, contrasts this with the "ethic of responsibility"—the courage to act according to foresight, even at personal cost. A *Dharma*-oriented governance model, therefore, demands *institutionalized courage*—legal protection for refusal, duty to report coercion, and valorization of ethical dissent.
Governance Principle: True administrative integrity lies not in obedience, but in the moral strength to resist wrongful

9.5 Integrated Model: Purushārtha for Public Ethics

- **Dharma** → Constitutional morality, legality, transparency
- **Artha** → Capability, resources, strategy—bounded by Dharma
- **Kāma** → Public welfare aspirations—tempered by evidence
- **Mokṣa** → Institutional learning & detachment from optics; audit-ability

When any single aim dominates—ambition without *Dharma* (*Rāvaṇa*), empathy without prudence (*Rāma*), obedience without conscience (*Lakṣmaṇa*)—*Māyā* enters the system and legitimacy erodes.

9.6 Summing up

The Golden Deer episode is a governance parable: illusion thrives where institutions reward optics over truth. The remedy is to adopt and follow *Dharma*-aligned design—clear duties, transparent data, independent oversight, and protections for principled dissent. Otherwise, the Golden Deer episode teaches a lesson through *Rāvaṇa*'s fall: power without righteousness is self-defeating.

10. Conclusion: From Illusion to Insight — The Golden Deer as a Mirror of Human Conduct

The Golden Deer (Suvarṇa Mṛga) episode in the Vālmīki Rāmāyaṇa stands as a timeless moral story of human governance, psychology, and decision-making. When analyzed through the Purushārtha framework, each character tells the truth about ethical balance and human weakness.

Rāma's kindness shows that even the most moral leaders can fail when humanity takes precedence over caution. *Lakṣmaṇa*'s problem is the moral conflict between obedience and conscience, and *Sītā*'s longing is the global pull of aesthetic desire and emotional illusion. When *Rāvaṇa*'s intelligence is separated from morality, it turns strategic brilliance into moral decay. And *Maareecha*'s forced cooperation shows how much it costs to follow orders out of fear. Together, they represent a complete ecosystem of governance and psychology—showing how illusion (Māyā) arises whenever one Purushārtha eclipses the rest.

The episode's moral architecture aligns seamlessly with classical Indian political thought. Kauṭilya's Arthaśāstra warns,

"अर्थस्य मूलं धर्मः। धर्मस्य मूलं अर्थः।"(*Arthasya mūlaṃ Dharmaḥ, Dharmasya mūlaṃ Arthaḥ*) (Meaning: Righteousness is the root of wealth, and wealth sustains righteousness.) — (*Arthaśāstra*, I.7.7)

Justice M. *Rāma* Jois echoes the same principle in modern governance that wealth and power succeed only when guided by moral legitimacy. When compassion replaces caution, when obedience suppresses integrity, or when intellect outpaces ethics, institutions mirror the forest of illusion in which the golden deer runs—beautiful but deceptive.
Across finance, psychology, family, and governance, this episode reveals a unifying pattern: illusion arises whenever desire or ambition operates without the corrective discipline of *Dharma*. Speculative greed in finance, emotional bias in relationships,

cognitive dissonance in psychology, and ethical blindness in administration—all follow the same typical cycle of Māyā, attachment, and collapse.

The resolution lies not in denial but in equilibrium. By ensuring *Purushārtha* harmony, *Dharma* regulates Artha and *Kāma* , and *Mokṣa* emerges as reflective awareness.

As the *Bhagavad Gītā* (3.35) reminds,

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ (*śreyān sva-dharmo viguṇaḥ para-dharmāt sv-anuṣṭhitāt sva-dharme nidhanaṁ śreyaḥ para-dharmo bhayāvahaḥ) (Meaning: It is far better to discharge one's prescribed duties, even though faultily, than another's duties perfectly. Destruction in the course of performing one's own duty is better than engaging in another's duties, for to follow another's path is dangerous)*

In this spirit, the Golden Deer becomes more than a tale of loss. It becomes a civilizational guide for ethical regeneration. It teaches that governance, leadership, and personal conduct must guard against illusion. When *Dharma* anchors desire and intellect, illusion dissolves into insight, and even the golden deer transforms from a snare into a symbol of enlightenment. Thus, the ethical wisdom of the *Rāmāyaṇa r*emains a practical compass for contemporary systems

11. References

Primary Sanskrit and Classical Sources

1. Kauṭilya. (1915). *the Arthaśāstra of Kauṭilya* (R. Shama Sastry, Trans.). Mysore Government Press. (https://archive.org/details/ArthashastraRShamasastry1915/page/n37/mode/2up)
2. Manu. (n.d.). *The Laws of Manu (Manu Smrti)*. *Sacred Texts Archive.* https://www.sacred-texts.com/hin/manu.htm
3. Vālmīki. (n.d.). *Vālmīki Rāmāyaṇa* (Āraṇya Kāṇḍa, Sargas 38–45). *Indian Institute of Technology Kanpur Digital Corpus.* (https://www.valmiki.iitk.ac.in)

Philosophical and Religious Texts

4. *Bhagavad Gītā.* (n.d.). *Gītā Supersite Digital Edition.* Indian Institute of Technology Kanpur. (https://www.gitasupersite.iitk.ac.in)
5. Justice Jois, M. R. (1997). *Dharma: The Global Ethic.* Mumbai: Bharatiya Vidya Bhavan. (https://lakshminarayanlenasia.com/articles/DHARMA_Ram_Jois.pdf)
6. Yes Vedanthi (2025). *Decoding Rāmayana's Symbolism in Advaita Vedanta.* (https://www.yesvedanta.com/decoding-ramayanas-symbolism-in-advaita-vedanta)
7. Jayaram V. (2023). *Symbolic significance of the Rāmāyaṇa*. *Hinduwebsite.com* (https://www.hinduwebsite.com/symbolism/ramayana.asp?)
8. 8. Aurobindo, S. (2022). *Sri Aurobindo's interpretation of Indian culture: The Rāmāyaṇa.* Renaissance – Sri Aurobindo Society. (https://renaissance.aurosociety.org/sri-aurobindos-interpretation-of-indian-culture-the-ramayana-4)
9. Purushartha Journal of Management, Ethics and Spirituality (SMS Varanasi). (2017). *Relevance of Purusharthas in understanding values and ethics. (*https://journals.smsvaranasi.com/index.php/purushartha/article/download/76/75/?)
10. Mishra, N. (2019). *Critical review of ancient Indian values: Puruṣārthas*. Purushartha – A Journal of Management, Ethics & Spirituality, 12(1), 95-100. Retrieved from (https://anubooks.com/uploads/session_pdf/171050498312.%20Dr.%20Nandini%20Mishra%2095-100.pdf)

Ethics, Governance, and Political Theory

11. Bandura, A. (2011). *Moral disengagement: Wiley. online library:* (https://doi.org/10.1002/9780470672532.wbepp165)
12. Second Administrative Reforms Commission. (2007). *Ethics in Governance: Fourth Report.* Government of India, Department of Administrative Reforms and Public Grievances. Retrieved from (https://www.darpg.gov.in/sites/default/files/ethics4.pdf)
13. Max Weber. (1946). *Politics as a vocation.* In H. H. Gerth & C. W. Mills (Eds.), *From Max Weber: Essays in Sociology* . Oxford University Press (https://dn790009.ca.archive.org/0/items/weber_max_1864_1920_politics_as_a_vocation/weber_max_1864_1920_politics_as_a_vocation.pdf)
14. Organisation for Economic Co-operation and Development (OECD). (2023). *OECD Principles of Corporate Governance.* Paris: OECD Publishing. (https://www.oecd.org/en/publications/g20-oecd-principles-of-corporate-governance-2023_ed750b30-en/full-report.html)

Psychology and Behavioral Science

15. Festinger, L. (1957). *A theory of cognitive dissonance. Stanford University Press.* (https://ia601609.us.archive.org/8/items/FestingerLeonATheoryOfCognitiveDissonance1968StanfordUniversityPress/Festinger%2C%20Leon%20-%20A%20theory%20of%20cognitive%20dissonance%20%281968%2C%20Stanford%20University%20Press%29.pdf)
16. Kahneman, D., & Tversky, A. (1979). *Prospect theory: An analysis of decision under risk. Econometrica*, 47(2), 263–292. (Summary available at https://www.britannica.com/topic/prospect-theory)

17. Milgram, S. (1963). *Behavioral study of obedience. Journal of Abnormal and Social Psychology*, 67(4), 371–378. (Summary available at https://www.simplypsychology.org/milgram.html)

General Reference Collections and Cross-Verification Tools

18. WisdomLib. (n.d.). *Digital Sanskrit Text Archive.* https://www.wisdomlib.org Sacred Texts Archive. (n.d.). *Digital Hindu Texts Library.* (https://www.sacred-texts.com)

Behavioral Economics and Decision Science

19. Kahneman, D. (2011). *Thinking, fast and slow.* New York: Farrar, Straus and Giroux. (https://dn790002.ca.archive.org/0/items/DanielKahnemanThinkingFastAndSlow/Daniel%20Kahneman-Thinking%2C%20Fast%20and%20Slow%20%20.pdf)
20. Bowen, M. (1978). *Family therapy in clinical practice.* New York: Jason Aronson (https://archive.org/details/familytherapyinc00bowe)

Maharishi Valmiki's *Ramayana* and Sant Tulsidas's *Ramacharitamanas*— *A* Comparative Look

Suman K Sharma
(s2m2nr@gmail.com)

A comparison between Maharishi Valmiki's Ramayana and Sant Tulsidas's Ramacharitamanas reflects two spiritual and literary visions of the same divine saga. Valmiki presents Rama as a man imbued with divinity—an ideal ruler who suffers, struggles, and triumphs within human bounds. Tulsidas, in contrast, glorifies Rama as the Supreme Being performing divine play (lila), beyond mortal frailty. Their differing portrayals of Kaikeyi's anger, Sita's trials, and Rama's kingship reveal distinct worldviews—Valmiki's pragmatic realism versus Tulsidas's devotional mysticism. Together, they embody the evolution of Ramakatha from heroic history to spiritual allegory, affirming the eternal relevance of dharma and human endurance.

1. Introduction

Both the Ramayana and Ramacharitamanas are epics singing Shri Rama's glory, yet they are distinct from each other in their language, timeline, and characterization. Maharishi Valmiki wrote the Ramayana in classical Sanskrit, the domain of the learned. Sant Tulsidas, on the other hand, was divinely inspired to use a vernacular, Awadhi, to make his work accessible even to the common folks.

Ramayana is age-old; in fact, it is the oldest epic in world literature[i]. Scholars differ on how old the text really is. Their guesses vary from 2700 years to 1600 years. Janakinath Sharma avers that Rishi Vedvyas was inspired by this very epic to author works such as Mahabharata.[ii] In comparison, Ramacharitamanas was written in the 16th century CE per Tulsidas's own affirmation (see below).

Yet, the most significant dissimilarity between the two sanctified works lies in the approach their venerable authors adopt towards Shri Rama. Valmiki signals in the very opening of the Ramayana that he is going to speak about Shri Ramachandra, **the man** who is "…like Vishnu Bhagwan in strength. His aspect is as charming as that of the moon. In anger, He is fierce like *Kalagni* ('the cosmic fire of dissolution'); in forbearance, He is like Earth; in renunciation, a Kuber; and in verity, (he is) equal to a second Dharmaraja."[iii] It would be illustrative also to go to Canto 15 of *Balkand* (verses 7-29), where the *Adikavi* expounds the circumstances in which Bhagwan Vishnu agreed to appear as a man "…to annihilate the ferocious Ravana and dwell in the mortal world for eleven thousand years to foster this earth." Consequently, Bhagwan Vishnu appears in the world as "Raja Dashrath's son" (see *Balkand*, 17.1). Valmiki leaves the readers in no doubt that once Bhagwan Vishnu descended on Earth in the human form of Shri Rama, He lived among the mortals bound by all their constraints and limitations. When it was the time for Him to depart, "*Vivesh Vaishnvam tejah sasharirah sahanujah"*—(He) entered **bodily** into the Vaishnava radiance along with his younger brothers[iv].

Tulsidas in Ramacharitamanas has a different take on Shri Rama's moment of birth. *Bhaye pragat Kripala Deendyala*…"—(then) appeared the Compassionate to the Poor and Needy. At that moment, Bhagwan Vishnu was resplendent in His divine form, carrying weapons in His four arms. Mother Kaushalya was elated to behold Him before her. Yet, she prayed that He leave His celestial form and begin to act like a human baby. Bhagwan obliged Mother Kaushalya readily. Taking the form of a baby, He started to cry (see 1.191.1-4*)*. As to Shri Rama's departure from Earth, Tulsidas remains mute. Shri Rama of Ramacharitamanas is beyond mortality.

Valmiki presents Shri Rama as the deity Vishnu, who descends to Earth as a man, while Tulsidas sees Him as Bhagwan Vishnu who agreed to perform the role of *Maryada Purushottama* – an epitome of human propriety, though still retaining His divineness.

2. The Writing of the Two Epics

In writing his magnum opus, Maharishi Valmiki was inspired by a very mundane incident—his sharp reaction to the killing of a bird that was mating with its partner. Even his angry words made perfect poetry! That was a moment of epiphany for the *Adikavi* (see Ramayana/1.2.12-20).

Sant Tulsidas, however, began to write Ramacharitamanas on the auspicious occasion of the Ramanavami (Lord Rama's birth anniversary) of Samvat 1631 (corresponding to the year 1574 CE). "He had been experiencing for some time past a series of divine stimulations to dedicate himself to the sacred task. Hanuman inspired him to move to Ayodhya in 1571. At Prayagraj, the Ramayan-age rishis, Bharadwaj and Yagvalkya, manifested themselves before him under the shade of a banyan tree. Then, at the Prehlad Ghat of Kashi, he began to compose verses in Sanskrit. But as many verses as he wrote during the

day, those many verses disappeared at night…. On the eighth day, Tulsidas had a dream. Bhagwan Shankar commanded him to write poetry in his own language."[v] And so, he did!

Maharishi Valmiki's poetic work is purported to be read as Shri Rama's sojourn in this world as a manifestation of Bhagwan Vishnu. Sant Tulsidas in his Rama-Charita-Manas, wanted to give his readers much more to ponder about his idol, as evinced his title—

- The Oxford Hindi-English Dictionary defines 'Rama' as "…Ramachandra (the seventh avatar of Visnu)…the supreme spirit (esp. used by Ramaite Vaisnavas); God…."
- 'Charita' of the title signifies "…behaviour, practice; acts, deeds…narrative of a person's life; a biography…disposition of mind; character…"
- The third part of the title-word 'manas' signifies "…having to do with the mind or spirit…"

So, put together, 'Ramacharitamanas' could mean a literary work that deals with the acts and deeds of the Supreme Being, Parmatma.

3. Themes, Plots and Sub-plots

Valmiki's Ramayana is the *itihas*—"heroic history"—of an avatar who appeared in the mortal world as a man to rid the earth of Ravana and his rakshasas; Tulsidas's Ramacharitamanas is also a scripture about God's manifestation on earth intended to eliminate evil as exemplified by Ravana and to demonstrate God's deeds in the mortal world. If any human frailty is perceived in *his* Lord Rama, Tulsidas, the prime Rama-*bhakta* that he is, lays the blame on the limitations of the form that God, that is, Bhagwan Vishnu, had assumed, or simply His *lila.*

The elements of the main plot, as well as the protagonists in the seven-part Ramayana, are well-known: Rama, the ideal son, goes into exile to honor his father's word; Sita, his loving wife, willingly foregoes the palatial luxuries and security to be with him; Kaikeyi, Raja Dashrath's pretty and audacious queen, would stop at nothing to have her way; Ravana, the mighty king of Lanka, pays with his life for his grave sin of Sita's abduction; and Rama also commits the incongruously harsh deed of abandoning the virtuous Sita and eventually humiliating her in public, which brings the epic to a calamitous end.

While Tulsidas generally follows Valmiki's text in his retelling, it is in the subplots that he deviates from the original storyline. Take the point of 'conflict,' for instance. Why did Queen Kaikeyi, who adored Rama as her own son and would have been happy to see him anointed as Raja Dashrath's heir, change her stance abruptly and insist on sending the prince to exile?

Going by the Valmiki Ramayana, Raja Dashrath was bound by his pre-wedding pledge that he had made to Kaikeyi's father, the Raja of Kaikey, to declare the princess' son as his heir (2.107.3). The two boons of which Rani Kaikeyi reminded him in her rage were only a reiteration of her right to secure for her son, Bharat, an unchallenged reign over Ayodhya. Tulsidas, however, eschews any mention of this pledge Dashrath had made to Kaikeyi's father. Painting Kaikeyi in a more glaring shade of an angry vamp could be the poet's intent to make the plot stronger and more plausible. If the elderly Dashrath failed to fulfill the promises that he had made to Kaikeyi and her father, Shri Rama, as the conscientious son, felt it was *his* bounden duty to honor his father's pledges.

Valmiki and Tulsidas also differ widely on how Rama treats Sita when she is set free on his conquest of Lanka. In Valmiki's Ramayana, Raja Rama the Victor commands that she alight from the ceremonial palanquin and walk up to him on foot in the full glare of the Vanar Army. Bare of all her esteem and glory, she stands before him in the mixed feelings of 'astonishment, joy, and love'.[vi] But Rama berates her sharply. On hearing the exceedingly harsh words from her long-separated consort, Sita is 'hurt like a vine demolished by an elephant's trunk' and begins to cry inconsolably. Telling Shri Rama bitterly that he has forgotten all her devotion, piety, and modesty, she jumps into the pyre prepared by Lakshmana (at her bidding!) to immolate herself. From out of the raging fire, *Agnideva*, the fire-god, himself brings her back to Shri Rama, testifying to him that the Princess of Mithila is absolutely sinless. The god even commands Shri Ram to accept Sita and not to utter a harsh word to her (see *Yuddh Kand*, Cantos 115-118). Going by the Ramayana again, Raja Rama treats Queen Sita harshly even after she has come out unsullied from her trial by fire. Mindless of Sita's pregnancy, he abandons her, causing her to find refuge in Valmiki's ashrama. There she gives birth to Kush and Luv. But her woes do not end there. As the twins grow up, the *Adikavi* brings them singing before the monarch of his own story. Raja Rama recognizes them, only to command their mother, Sita, to present herself before his durbar to publicly avow that she had always been faithful to him. She does as she is told and then subsumes herself into the Earth forever.

Sant Tulsidas, however, takes a different view on Shri Rama's apparently harsh decision to prompt Sita to go through her trial by fire. Was He not the *Maryada Purushottam*? According to Tulsidas then, the Sita who underwent all that misery (because of Shri Rama's seemingly inexplicable behavior in Lanka) was only her *maya*—a walking-talking image of hers. The real Sita, at Rama's asking, had gone to abide temporarily with *Agnideva,* the God of Fire—

"Sunhu priya vrat ruchir susila/Men kachhu karab lalit narlila//
Tumh pavak mahun karhun nivasa/Jau lagi karaun nisachar nasa//"

Oh, my dearest! O noble lady who abides by the code of husband-devotion! I will now perform some interesting human acts. Therefore, until I engage myself in destroying the rakshasas, you may abide in Fire.

- Ramacharitamanas, Aranya Kand, 23.1

According to Ramacharitamanas, then, Sita's purported trial by fire in Lanka was meant only to felicitate her reunion with Shri Rama. But, if that was so, what of Raja Rama's eventual abandonment of the genuine Sita and her further debasement, demanding that she take an oath in the presence of their sons and the general public as to her fidelity to him? At the end of the day, when we acknowledge Shri Rama as Bhagwan Vishnu's manifestation in flesh and blood, the matter rests there. Sant Tulsidas has aptly said, "*Hari anant Hari katha ananta!"*

4. The Universes of Ramayan and Ramcharitmanas

Valmiki, in comparison to Tulsidas, seems to be more connected with the world around him. He evinces extensive knowledge of the geopolitics of his times. Cantos 40 to 43 of the *Kishkindhakand* detail Raja Sugriv sending huge armies of Vanars in search of Sita under the command of his ablest generals—to the east goes Vanar Vinat's army; in the same way, Shatbali leads his contingent northwards, and Sushen, Bali's father-in-law, heads westwards. Conscious of a greater possibility of Sita being found in the south, Sugriv sends off the major part of his legions in that direction under the overall command of Prince Angad, assisted by such stalwarts as Hanuman, Neel, and Jambvan. To each of his forces, the raja gives specific directions, providing them with knowledge of what rivers they would have to wade through, which mountains to climb, what to expect, and what to avoid. To his westward-bound Vanar Army, for instance, he cautions them to be particularly careful of not breaking any laws of the Gandharas because those people could be ferocious. Pathans, then as now, were not an easy people to be trifled with.

The *Adikavi* was equally well versed in statecraft, and so is Shri Rama of his Ramayana. The Prince of Ayodhya here comes off as an astute statesman, who does not forget his regal responsibilities even while in exile at the Dandkaranya. Having persuaded Bharat to assume the charge of a headless Ayodhya, he goes on to counsel his sibling on the nitty-gritty of governance, such as the raja's conduct, the qualities of his ministers, employment in royal service, defense of the realm, economy, maintenance of secrecy of the state, spy network, taxation and penal systems, law and order, and so forth. Always careful not to tread on anyone's toes, Rama does it in a conversational manner lest Bharat should mind being hectored (see Valmiki's Ramayan/*Ayodhya Kand*/Canto 100).

In comparison, Lord Ram of Ramcharitmanas appears as a mild, trusting, and otherworldly person—a veritable ascetic. His advice to Bharat is that "the responsibility of the land, treasury, kinship, and family, et cetera, lies at the dust of Guru-ji's (that is, Muni Vashisht's) feet…."[vii]

5. Structure and Style of the Epics

Both the Valmiki Ramayana and the Ramacharitamanas come in seven *kands,* or books. The names of the first five and the seventh books of the two epics are the same—*Balkand, Ayodhyakand, Aranyakand, Kishkindhakand, Sunderkand,* and *Uttarkand.* However, the sixth book in Ramayana is named *'Yuddhkand,'* while in the Ramcharitmanas, it is titled *'Lankakand.'* The seven *kands* have as many as 636 *sargs* or cantos, comprising 24000 shlokas in *Anushtub* meter. Traditionally, the recitation of a *sarg* has to be completed the same day.

Both the epics have been written to be sung to the accompaniment of musical instruments. Valmiki advises the twins Kush and Luv before they go to sing the Ramayana before Raja Ram to the accompaniment of vina[viii]. Tulsidas' Ramcharitmanas too lends itself eminently to such music, as evidenced by its recitation on ceremonious occasions in the Sanatani households of North India.

As for poetics, if Valmiki is confident of the perfection of his shloka that prompted him to write the epic (see Ramayana, Balkand, Canto 2), Tulsidas has this to say about his work:

"Aakhar arath alankrit nana/chhand prabangh anek bidhana/
Bhaav bhed ras bhed apara/Kabit dosh gun bibidh prakara//
Kabit bibek ek nhin more/Satya kahaun likhi kagad kore/"

- Syllables (forming words), meanings variously embellished, limitless ways of versification of a long narrative poem, and the different kinds of merits and demerits (of a literary composition, but) I don't have knowledge of even one of such matters of poetics. I tell the truth and give it in writing on a plain paper (by way of a solemn oath).

(Ramacharitamanas/1.8.5-6).

Is it the humility of one of the greatest poets that the Hindi belt has ever produced, or his apophasis? Depends on how one looks at it.

Another interesting point to note is Tulsidas' studied restraint in describing the beauty of women characters. Of the eight rasas of Bharat Muni's *Natyashastra,* he fights shy of the *Shringar-rasa*. Princess Sita, bedecked as a bride, is brought to the venue where she has to choose her future husband from the land's innumerable princes and ruling monarchs. Tulsidas has this to say about her beauty:

Siy barni-a te-i upma de-i/Kukabi kaha-I ajasu ko le-i/
Jaun pat-tari-a tiy sm siya/Jag asi jubati k-han kamniya//

To describe Sita with comparisons of herself, what poet would (like) to be called a bad poet? If Sita were to be compared with any other woman, then where is another woman as beautiful as she is in the world?

- Ibid/246(ii)

But the Adi-kavi Balmiki, like his contemporaries and in contrast to Tulsidas of medieval India, feels no such compunctions to delineate the body beautiful, even in the most sombre of situations. One instance is when, on Sita's disappearance from the *parnkuti*, a broken-hearted Ram recalls her charming form (Balmiki Ramayan/Aranyakand/Canto 62(iv) and Canto 63(viii)). Another is when, threatened by Ravan's horrid rakshasis, Sita breaks into tears and drenches her bosom (ibid/Canto 65 (vii)).

6. Man-God or God-Man

Ramayana's qualities of spontaneity and contemporaneity arise out of Valmiki's intent to present himself as on speaking terms with Ram. The poet himself appears as an important character in the Uttarkand and Balkand as well. Tulsidas, in comparison, remains an ardent devotee of Lord Ram throughout Ramcharitmanas—adoring, yet distant, as someone who could not fathom his idol.

James George Frazer, a Western thinker, gives us a clue as to the difference between Valmiki's Raja Ram and Tulsidas' Bhagwan Ram—

"The notion of man-god, or of a human being endowed with divine power or supernatural powers, belongs essentially to that earlier period of religious history in which gods and men are still viewed as beings of much the same order, and before they are divided by the impassable gulf, which, to later thought, opens out between them. Strange, therefore, it may seem to us, the idea of a god incarnate in human form, but it has nothing very startling for early man, who sees in a man-god or a god-man only a higher degree of the same supernatural powers which he himself arrogates in perfect faith to himself."
The Golden Bough, 111

7. Conclusion

Ramayana is reputed to be one of the key literary creations of ancient India. Ramacharitamanas is its retelling, and a vastly varying retelling at that. Tulsidas does pay his debt to *"kavishwar"* Valmiki in sholka 4 of the invocation to Balkand. Then, he hastens in shloka 7 to add that apart from what is described in the Ramayana, he borrowed from *"nanapurannigmagam sammatm yd..."* diverse Puranas, the Vedas, the tantra that agrees with the scriptures, and elsewhere as well. That had to be. The two epics were written in different milieus. In Ramayana we observe a down-to-earth approach in Shri Ram's characterization. In Ramacharitamanas, on the other hand, an epic of the Bhakti Movement, Shri Rama stays as Bhagwan all through his trials and triumphs.

Be that as it may, *Ramkatha* is a timeless tale that gives everyone something or other beyond the mundane to cherish and look up to. To the devout, it brings the glory of God on Earth; and to the worldly, it teaches what it takes to live up to one's commitment—be it Sita's unflinching fidelity to her husband, Shri Rama's filial piety to honor his father's word, Bharata's fraternal obligation to maintain the status quo with an older sibling, or even the villainous Ravana's firm resolve not to go against captive Sita's will. Maharishi Valmiki in his Ramayana and Sant Tulsidas in his Ramacharitamanas have narrated the *Ramkatha* in their own ways, yet they have distorted neither its inherent charm nor its profundity.

And to me, the *Ramkatha* leaves a special message, the message of the human condition. One may be as high as Raja Ram himself—an incarnation of Lord Vishnu—yet one is not exempt from human destiny. With unwavering adherence to moral values and fortitude, we all have to face adversity at one or the other point of our lives.

---

[i] valmiki.iitk.ac.in.introduction

[ii] The Valmiki Ramayana, p.3 (Gita Press, Gorakhpur)

[iii] Ibid, 1.1.1-18

[iv] Ibid, 7.110.12

[v] pp. 16-17, Ramacharitamanas, 18th ed., Gita Press, Gorakhpur

[vi] Ramayana, 6.114.29-35

[vii] Ibid, 2, 314(4).

[viii] Ramayana, 7.93.11&14-16

Hanumana: The Icon of Selfless Service and Commitment

Ravindra Nath Misra
Physical Research Laboratory, Ahmedabad, India
(rn07_misra@yahoo.com)

The Ramayana revolves around the saga of legendary Rama. The entry of Hanumana takes place in the second half of the epic. The whole epic has a profound impact of the actions of Hanumana , wherein he has showed us a high order of commitment, and selfless devotion to the assigned responsibilities. The same came up to be an example for the generations to come. An attempt has been made here, to throw some light on the life of legendary Hanumana, especially keeping the anthropological considerations in mind.

1. Introduction

The story of Ramayana is well documented in the form of two epics, namely the Ramayana by Valmiki, written in Sanskrit, and Ramacharita Manas by Goswami Tulasidas in Hindi. Apart from these two famous literary works, there are quite a few versions of the story line in different languages as well. The story depicts various episodes in the life of Rama, the eldest son of king Dasharatha of Ayodhya. The second half of the epic, pertaining to the events faced by Rama, towards the fag end of his exile, has a major twist in the events. The entry of Hanumana, in the life of Rama, has given a new dimension to the epic. Hanumana had reportedly, met Rama and Laxmana , near the mountains of Rishyamook, at Kishkindha, near the present day Hampi, in Karnataka. Thereafter the events took a turn to fast mode, and Hanumana became the key person of the epic. Hanumana was a member of the human tribe, who lived in the forests and caves. These people, therefore, got addressed as Vaanara, meaning the humans living in the jungle. This may be compared to the word Vaanaprastha, which means spending later part of one's life, in a forest. It needs to be understood, that Hanumana and his clan, is quite often clubbed with monkeys and apes, which appears to fundamentally wrong. It would be worthwhile to look into the lifestyle of Hanumana and members of his family, along with the then environment. This would be apart from his expedition to Lanka and other roles in the war.

2. Family of Hanumana

It is said that Hanumana was son of Kesari and his mother's name was Anjani. It is commonly understood that Hanumana is also addressed as pawanputra or son of wind. Hanumana is also sometimes called as sankar suvana. Before drawing any conclusions, we have to keep in mind that we are talking about events which unfolded around 10,000 years before present. The human society was very different at that point of time. Homo sapiens had arrived on the scene long ago and the older inhabitants would have been, possibly Homo erectus. It has been postulated that various humans mixed with each other to maintain the population. The absolute numbers of Homo erectus could have been on the decline, more or less, close to extinction. They might have been facing fertility issues and therefore having male partners from the Homo sapiens as well as others, was possibly envisaged. That is how the term sankara suvana might have been coined. Other terms were used as well to hide the identity of the biological father. These steps were essential to help human race survive the extinction. The word Sankara, has been used in Sanskrit language for a person of mixed parentage, as mentioned in various puranas. Therefore, Hanumana could have been the offspring of parents belonging to two different groups. The child had been named as Hanumana for characteristic double chin. Therefore, Kesari might have been, foster father of the legendary Hanumana. An entire group of persons, collectively called Hanumana, would have been bestowed with very high level of intelligence with well-built body. Possibly they were not in a position to reproduce on account of some biological reasons.

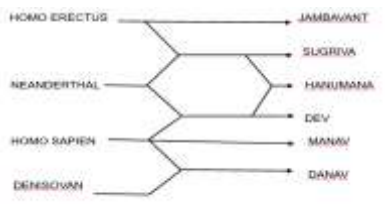

Fig 1. Conceptual Tree Diagram of Lineage of Humans in Ramayana Era

Human mixing of this kind could have continued for millennia. That means that one could see Hanumana over different time frames. The Hanumana of Ramayana fame, however, had been unique to his era. That explains the presence of Hanumana in the childhood of Rama. Some people say Tulasidas had also seen Hanumana, who could have been some other

member of Hanumana clan. A conceptual tree diagram of the lineage of the human population, living in the Indian peninsula, during the Ramayana era, has been given in Fig.1. The details therein are broadly based upon descriptions in Ramayana and Ramacharita Manas .

It would be worthwhile to note that, the tail often imagined to be part of anatomy of Hanumana, might not have existed at all. They could have used a rope normally tied around their waist, for use during the activities in the forest. The word Mekhala, or a waist band, could be the more appropriate description for this attachment.

3. The Population in Indian Peninsula and Hanumana Clan

It has been reported that the some of the tribes from central India moved northward to the present day eastern Uttar Pradesh (UP) and Bihar. The movement occurred over millennia and would have been the result of warming of Earth, which rendered the northern plains more comfortable. It may also be argued, that quite a few members of clan of Hanumana, moved northward, after permanent shift of Hanumana to the palace of Ayodhya. The members of the tribe had been living in the deep forests as well as caves, and therefore, well adapted to the forest environment. The newly arrived population also preferred to settle in the forests of the new areas, and utilized their skills related to forest produce. They resorted to exchange of forest produce to population in the nearby towns, for livelihood.

The people settled in the forests of east UP, were called as Vanamanus or forest man in the local parlance. This term comes closest to the Vaanara as referred to in the Ramayana. The migrants took profession of making dinner plated from large leafs collected from forests around them. About a century ago, they took the profession of palanquin bearers, as the traditional palanquin bearers, known as Mahara or Kahar, had started abandoning this job. Travel by palanquin had already started to dwindle, with the rise in usage of mechanized transport. The Vanamanus of east UP, slowly got assimilated with the local population.

It appears that some of the groups which went to Bihar, mastered the skills related to the eradication of rat population, infesting the agricultural lands. They developed expertise in rat hunting, thereby getting addressed as Musahar, a title derived from the word Moos, meaning a rat in local language. This population group has become native and is thriving in Bihar. However, the word rat hunter evokes the concept of violence to animals, and thus abhorred. Little we realist that Rama was invited by Vishwamitra to his place, north Bihar of today, to hunt wild animals, who destroyed crops.

4. Hanumana: Episodes in Life

It is said that Hanumana felt very hungry after his own birth. He asked his mother Anjani for something to eat, but she rebuked him and showed him the Sun to eat. Hanumana swallowed the Sun and there was darkness everywhere. This episode points towards occurrence of a Solar eclipse at the time of birth of Hanumana. It is worth noting that the periodicity of occurrence of Solar eclipse at any place or region on Earth, is about every eighteen years. It has been described by Valmiki as the Aditya Hridaya Stotra, wherein Sage Agastya asks Rama to pray for the Sun God, so that it reappears. This indicates about occurrence of another solar eclipse, during the war between Rama and Ravana. Since Lanka and Kishkindha are at, more or less, the same longitude, occurrence of another solar eclipse should take place18 years after birth of Hanumana.. At the age of 18 years of age, Hanumana was grown enough to take part in a war.

Temperature of the surroundings during the Ramayana period could have been six degrees lower than today. This implies that even small hills could have had snow on the top. Thus the word Himalaya might have been used as a general term for any snowcapped peak. Hanumana, therefore, may have collected sanjeevani from any nearby, snow covered peak. Sea surface also could have been lower by about 10 metres as compared to the present. This means that there could have been a chain of small islands, in shallow sea bed, between Lanka and India, which facilitated filling by tree branches and stones to create a bund. Hanumana went on the espionage trip to Lanka, fathoming the sea infested with man-eating sea creatures. The name Surasa, probably refers to a large animal, dragon like creature or reptile. Hanumana could come out of clutches and jaws of a large animal of the sea and proceed further undeterred. He also might have traveled on foot during part of the journey. There might have been canals all around the fort at Lanka, which were linked to the sea.

5. Conclusion

Hanumana had been a general term used for a group of persons, bearing a double chin or typical chin. They were possibly offspring of mixed human parentage, and accordingly, need to be treated as a human being. The terms like monkey God or ape for the legendary Hanumana, is therefore, inappropriate. Hanumana has nothing to do with monkeys and apes for that matter. Hanumana of Ramayana era had been an intelligent, soft spoken and strong personality worthy of admiration. He is considered as an example of commitment and devotion. The descendants of Sugriva, most likely migrated northward during the Ramayana period, and even afterwards. Present day Vanamanus and Musahar, could be the descendants of the same people.

6. References

1. Misra , R.N. (2023) Ancient humans of Indian Sub-continent, Indian Journal of Anthropological Research, Vol 2, No. 2 , September 2023, pp 99-108

2. Homo erectus lived recently enough that it may have met Denisovans, (2019), New Scientist , December18 https://www.newscientist.com/article/2228015-homo-erectus-lived-recently-enough-that-it-may-have-met-denisovans/#ixzz6W11K5Ka8
3. Misra , R.N. (2021), Humans and Events in Ancient India, Indian Journal of History and Archaeology, 2(5), 31-42.
4. Yong, E. (2011) .Our Hybrid Origins,New Scientist, (2823), 35-38., www.newscientist.com/article/mg21128231-50-patchwork-people-our-hybrid-origins/
5. Chaubey, G., Kadian,A.,Bala,S.,and Raghavendra Rao , V.(2015),Genetic Affinity of the Bhil, Kol and Gond Mentioned in Epic Ramayana, PLOSONE , https://www,doi.org/10.1371/journal.pone.0127655
6. Misra , R.N. (2024) , Hindu and Brahmin , Skylines of Anthropology, Vol.4 No. 2 2024, pp 107-112
7. Dr. Rangan Ramakrishnan , " The Ramayana of Valmiki" (Book)

चंचल मन का सदुपयोग: रामचरितमानस के अभिमत का अनुसंधान

आशुतोष कुमार
(ashutoshkumar1969@gmail.com)

मानव जीवन का मूल केंद्र मन है - वही सोचता, अनुभव करता, निर्णय लेता और साधना की दिशा निर्धारित करता है। रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास ने मन को न केवल धर्म और अध्यात्म की दृष्टि से समझाया है, बल्कि उसके नियंत्रण (मनोनिग्रह) और सदुपयोग की व्यावहारिक प्रक्रिया भी दी है। उन्होंने मन को न तो पूर्णतः शत्रु माना, न ही केवल वश में करने योग्य दमनशील तत्व; बल्कि उसे ईश्वर-प्राप्ति का उपकरण बताया। रामकथा में श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और हनुमान जैसे पात्रों के माध्यम से मन की विविध अवस्थाओं का चित्रण हुआ है — संयमित, प्रेरित, भक्ति-परक और चंचल मन का परिवर्तन। तुलसीदास जी के अनुसार चंचल मन यदि इंद्रिय-सुख की ओर प्रवाहित हो तो बंधन बन जाता है, और यदि भगवान की ओर प्रवाहित हो तो मुक्ति का साधन। इस शोध निबंध में तुलसीदास के मानस-दर्शन से मनोनिग्रह की अवधारणा का अध्ययन किया गया है। उद्देश्य है यह दिखाना कि रामचरितमानस न केवल भक्ति का ग्रंथ है, बल्कि यह मानसिक अनुशासन और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य का भी अद्भुत मार्गदर्शक है।

1. प्रस्तावना

भारतीय दर्शन में मन को ब्रह्माण्ड और जीव के मध्य स्थित सेतु कहा गया है। *कठोपनिषद्* कहता है — "मनः प्रबुद्धं न प्रमाद्यते।" अर्थात जाग्रत मन ही मनुष्य को जीवन में दिशा देता है। इसी परंपरा में तुलसीदास का *रामचरितमानस* मन की शक्ति और उसकी साधना का सबसे सहज, लोकगम्य एवं भक्तिपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है। मानस में मन कोई दार्शनिक अवधारणा मात्र नहीं, बल्कि जीवन का व्यवहारिक साधन है। तुलसीदास इसे *दुर्बल नहीं, बल्कि समर्थ साधन* के रूप में चित्रित करते हैं। "मन के जीते जीत है, मन के हारे हार।" यह पंक्ति बताती है कि संपूर्ण संघर्ष — चाहे लौकिक हो या आध्यात्मिक — मन की विजय या पराजय पर निर्भर है। सुंदरकांड के अंतिम छंद में तुलसीदास जी कहते हैं —

"सुख भवन संशय शमन, दमन विषाद रघुपति गुन गाना।
तजि सकत आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।।"

फिर उत्तरकांड के दोहा संख्या 130 *के पहले, छंद में कहते हैं*

"पाई न केहिं गति पतित पावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना।।"

यहाँ तुलसी मन को "सठ य *शठ*" कहकर संबोधित करते हैं - क्योंकि वह विषयों में दौड़ता है, संशय करता है और विषाद में डूबता है। *मन को शठ कहने का भाव यह है कि बार-बार उद्देश करने पर भी यह अपनी मूढ़ता नहीं छोड़ता है।* किन्तु वही मन जब रघुपति (राम) के गुणों का गान करता है, तब वही सुख का भवन, संशय का शमन और विषाद का दमन बन जाता है इसका तात्पर्य यह है कि मन का दमन नहीं, बल्कि दिशा-परिवर्तन ही उपाय है , यहाँ 'सठ मन' को आदेश है कि वह अपनी ऊर्जा - जो सामान्यतः ममता, राग-द्वेष और संशय में व्यर्थ जाती है — उसे श्रीराम के गुणगान में लगाकर 'सुख भवन' अर्थात आनंद का स्रोत बनाए। तुलसीदास जी कहते हैं - रे मुर्ख मन! सुनो, पतितों को भी पावन करने वाले श्री राम को भजकर किसने परम गति नहीं पाई। रामचरितमानस में तुलसीदास मन के परिष्कार की प्रक्रिया को *भक्ति, नाम-स्मरण और संत-संग* के रूप में प्रस्तुत करते हैं। वे कहते हैं -

"जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि असि नारि।
महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि।।"

(अरण्य कांड, दोहा 36 दूसरा अर्धाली)

अरे महादुर्बुद्धि मन! तू ऐसे प्रभु को भूलकर सुख चाहता है? इससे पहले तुलसीदास जी कहते हैं **कि "नर बिबिध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू। बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू।।" अर्थात** अनेक प्रकार के कर्म, अधर्म और बहुत से मत- ये सब शोकप्रद हैं; हे मनुष्यो! इनका त्याग कर दो और विश्वास करके श्री राम जी के चरणों में प्रेम करो। अत: हे मन! ध्यान से सुन — भगवान का भजन सबसे महान है, परन्तु जब तक मन नहीं जुड़ता, तब तक केवल नाम जप या कर्मकाण्ड से कुछ नहीं होता। जो मन और शरीर दोनों से ईश्वर की आराधना करता है,

वही सच्चे धर्म का रस अनुभव करता है। यहाँ मन को साधना का *आधार* बताया गया है — बिना मन के भगवान का स्मरण भी असंभव है। इसलिए, मन को भगवद्भक्ति में लगाना ही उसका सर्वोत्तम उपयोग है।

इस शोध का उद्देश्य यह है कि तुलसीदास जी के द्वारा रचित *रामचरितमानस* में मन की भूमिका और उसके नियंत्रण (मनोनिग्रह) के उपायों का अध्ययन कर यह समझा जाए कि "चंचल मन" का कैसे सदुपयोग किया जा सकता है। साथ ही पतंजलि योगसूत्र के चित्तवृत्ति-निरोध सिद्धांत से तुलसीदास की भक्ति-पद्धति की तुलना कर यह देखा जाए कि भारतीय चिंतन में *मानसिक अनुशासन और आंतरिक शांति* का वास्तविक मार्ग कौन-सा है।

'मन' का वैदिक और मानस परिप्रेक्ष्य

भारतीय दर्शन में *मन* को *अन्तःकरण चतुष्टय* (मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त) का एक प्रमुख अंग माना गया है। उपनिषदों ने तथा भगवान श्री कृष्ण ने भगवद्गीता में, मन को *इंद्रियों का राजा* कहा है। **"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।"** अर्थात मन ही मनुष्य के बंधन और मोक्ष का कारण है इसी वैदिक परंपरा में गोस्वामी तुलसीदास ने *रामचरितमानस* में मन की भूमिका को अत्यंत सूक्ष्म और व्यवहारिक रूप से प्रस्तुत किया है। तुलसीदास के अनुसार मन केवल विचार करने वाला अंग नहीं, बल्कि *जीव की सम्पूर्ण गतिविधियों का केंद्र* है — सोच, भावना, प्रेरणा और संकल्प का आधार। तुलसीदास के अनुसार मन की दो अवस्थाएँ होती हैं —

1. **मलिन या अशांत मन**, जो विषयों में आसक्त होकर दुख का कारण बनता है।
2. **शुद्ध या नियंत्रित मन**, जो भगवान की स्मृति में स्थिर होकर आनंद का कारण बनता है।

मन जब भगवद्-स्मरण में लग जाता है, तो वही मुक्ति का साधन बन जाता है, यहाँ तुलसीदास एक गूढ़ सत्य बताते हैं कि भक्ति या नाम-स्मरण केवल मन के माध्यम से ही संभव है। अर्थात्, मन का दमन नहीं, *मन का रूपांतरण* ही तुलसीदास का लक्ष्य है।

1. मन का दार्शनिक स्वरूप — तुलसीदास जी की दृष्टि में

तुलसीदास जी, मन को केवल मनोवैज्ञानिक अंग नहीं मानते, बल्कि *दैवी चेतना का उपकरण* कहते हैं। वे मन को ईश्वर के साथ जोड़ने का माध्यम मानते हैं। जब मन निःस्वार्थ, निर्मल और निःकाम हो जाता है, तब वह सहज ही ईश्वर के नाम से जुड़ जाता है। तुलसीदास के लिए 'नाम' और 'मन' एक-दूसरे के पूरक हैं। जहाँ पतंजलि का योग मन को रोकने का प्रयास करते हैं **"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।"**, वहाँ तुलसीदास जी मन को *प्रेम में प्रवाहित* करते हैं।

2. मन और ममता का संबंध

तुलसीदास जी के अनुसार मन का सबसे बड़ा बंधन *ममता* है। वे कहते हैं —

"ममता तरुन तमी अंधियारी, राग द्वेष उलूक सुखकारी।"

"तब लगि बसत जीव मन माहि, जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहि॥"

(सुंदरकांड दोहा संख्या 46.2)

यहाँ ममता को 'तरुण अंधियारी' कहा गया है — अर्थात् यह अज्ञान का नवयुवक अंधकार है। जब तक मन में यह अंधकार है, तब तक राग-द्वेष नामक उल्लू उसमें सुख पाते हैं। जब ईश्वर का प्रकाश (प्रभु प्रताप रूपी सूर्य) उदित होता है, तब यह अंधकार स्वतः नष्ट हो जाता है। तुलसीदास जी का यह दृष्टिकोण अत्यंत मनोवैज्ञानिक है - वे कहते हैं कि मन को दबाने की नहीं, उसे *प्रकाशित करने की आवश्यकता* है। ज्ञान और भक्ति का प्रकाश जब मन में आता है, तब उसकी सारी विकृतियाँ स्वयं दूर हो जाती हैं।

3. मन, बुद्धि और सत्संग का सामंजस्य

तुलसीदास जी के अनुसार मन को शुद्ध करने का सर्वोत्तम उपाय *संत-संग* और *नाम-स्मरण* है। तुलसीदास जी ने, अयोध्या कांड में जनक जी के मुख से कहलवाया है - *"मन तहँ जहँ रघुबर बैदेही। बिनु मन तन दुख सुख सुधि केही॥"* ***मन तो वहाँ है जहाँ रघुबीर-वैदेही श्री सीताराम जी हैं, बिना मन के शरीर के दुःख-सुख की ख़बर किसको है। अगर मन सीताराम में लगा हो तो मन स्थिर हो जाता है।*** *तुलसीदास जी ने मन को साधने का मार्ग बताया गया है — सत्संग और नामस्मरण*। संत के हृदय में जब मन स्थिर होता है, तब वह स्वयं ईश्वर का निवास बन जाता है। यह स्थिति पतंजलि योग के *समाधि* अवस्था के समान है, परंतु भक्ति के माध्यम से सहज प्राप्त होती है।

4. तुलसीदास जी का मानस-दर्शन

तुलसीदास जी के मानस-दर्शन का मूल तत्व है — *मन ही ईश्वर का द्वार है।* रामचरितमानस केवल कथा नहीं, बल्कि मन की यात्रा का मार्गदर्शन है। चंचल मन जब भक्ति में प्रवाहित होता है, तो वह मुक्ति का साधन बनता है। तुलसीदास जी का सारा दर्शन एक वाक्य में समाहित है —

तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान।

पाप-पुण्य द्वै बीज हैं, बवै सो लवै निदान॥

(वैराग्य संदीपनी दोहा 5)

अर्थात यह शरीर खेत है; मन, वचन और कर्म उसके किसान हैं। पाप और पुण्य दो प्रकार के बीज हैं। जो बोया जाएगा, वही अंत में काटा जाएगा (अर्थात् जैसा कर्म किया जाएगा, वैसा ही फल प्राप्त होगा)। जो व्यक्ति अपने मन को बस में लेता है, वह संसार में जो चाहे सिद्ध कर सकता है।

5. तुलसीदास जी का संदेश : चंचलता का दमन नहीं, दिशा

तुलसीदास जी का दृष्टिकोण *संतुलित मनोविज्ञान* प्रस्तुत करता है। वे कहते हैं कि मन को दबाने से वह शांत नहीं होता, बल्कि *प्रेम और विश्वास की दिशा* देने से उसकी ऊर्जा उपयोगी बन जाती है। उनके शब्द हैं —

"सुख भवन संशय शमन, दमन विषाद रघुपति गुन गाना।"

यह पंक्ति बताती है कि जब मन श्रीराम के गुणों का गान करता है — अर्थात् उच्च और शुद्ध विचारों में रम जाता है — तब वह अपने आप सुख का भवन और संशय का शमन बन जाता है। आधुनिक मनोविज्ञान भी यही कहता है कि *सकारात्मक प्रवृत्तियों का संवर्धन* (*positive redirection of energy)* ही मानसिक स्थिरता का मूल है। इस प्रकार, तुलसीदास जी के 'भक्ति-साधन' आज के *mind training* और *emotional management* का उत्कृष्ट उदाहरण हैं और आत्म-विकास का मार्ग माना गया है। तुलसीदासजी स्वयं मन, वचन और कर्म से उनकी वंदना करते हैं - जिसके मन से तृष्णा और चाह तिल-तिल करके उठ गई है (अर्थात् जरा भी नहीं रही) ।

जाके मन ते उठि गई, तिल-तिल तृषा चाहि।
मनसा वाचा कर्मणा, तुलसी बंदत ताहि॥

(वैराग्य संदीपनी दोहा 26)

5.1 श्रीराम: शुद्धचित्त नेतृत्व और मनोनिग्रह का आदर्श

श्रीराम जी का जीवन स्वयं *नियंत्रित मन* का उदाहरण है। वे न केवल एक आदर्श राजा थे, बल्कि *अविचल मन वाले योगी* भी थे। उनके निर्णय, उनके आचरण और उनकी प्रतिक्रियाएँ हर स्थिति में *विवेक और संयम* पर आधारित हैं। जब उन्हें राजगद्दी मिलने से ठीक पहले वनवास का आदेश मिला, तो यह घटना सामान्य व्यक्ति के लिए मनोवैज्ञानिक रूप से अत्यंत आघातकारी थी। परंतु श्रीराम ने उस क्षण भी मन को स्थिर रखा।

"प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।"

(अयोध्याकाण्ड मंगलाचरण श्लोक 2)

श्रीराम जी को ना तो राज्याभिषेक की बात सुनकर ना तो प्रसन्नता प्राप्त हुई ना ही वनवास मिलने पर दुख प्राप्त हुआ, वे राज्याभिषेक के प्रति अनासक्त थे। अनासक्ति से, मन संतुलन प्राप्त करता है *(समत्वं योग उच्यते)*, सफलता और असफलता दोनों में शांत रहता है। यह मन का उच्चतम नियंत्रण है — जहाँ परिस्थितियाँ नहीं, बल्कि *आंतरिक शांति* निर्णय लेती है। श्रीराम का मन न तो क्रोध में डगमगाता है, न मोह में बहता है। वह सदैव *धर्म के केंद्र* में स्थिर रहता है। यही कारण है कि तुलसीदास जी उन्हें *"धीर, गंभीर, शील, सनेही"* कहते हैं। **श्रीराम का नेतृत्व मन के नियंत्रण पर आधारित था।** उन्होंने रावण जैसे महान शत्रु से भी युद्ध किया, परंतु मन में द्वेष नहीं आने दिया। राम का यह व्यवहार *धर्मसम्मत मनोनिग्रह* का आदर्श है, जहाँ निर्णय भावनाओं से नहीं, धर्म और विवेक से संचालित होते हैं।

5.2 लक्ष्मण जी: संयमित क्रोध और निष्ठा का मनोवैज्ञानिक आदर्श

लक्ष्मण जी मन-वचन-कर्म से राम- चरणानुरागी हैं। संसार में जितने भी नाते–स्नेह–सम्बन्ध हैं वे सभी रामसे हैं, लक्ष्मण जी को ऐसा दृढ़ विश्वास है। लेकिन उनका मन अत्यंत तीव्र, प्रतिक्रियाशील और चपल था, वे तुरंत प्रतिक्रिया देने वाले व्यक्ति हैं, जब कैकेयी ने श्रीराम को वन भेजने का आदेश दिया, तो लक्ष्मण जी का मन विद्रोह कर उठता है। लक्ष्मण जी के स्वभाव में एक बहुत बड़ी कमी है- वे किसी भी कामकाज बिना सोचे-समझे बहुत जल्दी कर डालते हैं। उनमें थोड़ा अधिक अभिमानशीलता और उग्र निन्दकत्व दृष्टिगोचर होता है। तभी तो वे कहते हैं — *"सहसा करि पाछें पछिताहीं। कबहुँ बेद बुध के बुध नाहीं॥"* अर्थात् वे लक्ष्मण जी थोड़े गर्वशील रहते हैं। प्रायः वह सीमा से अधिक क्रोध जाता है और बहुत बल–चपल–से भरे प्रतीत होते हैं।

इसी तरह धनुष भंग के बाद जब परशुराम जी जनक की सभा में आते हैं और धनुष भंग के बारे में प्रश्न करते हैं तो लक्ष्मण जी बड़ी ही ढिढाई के साथ उन्हें उत्तर देते हैं, दोनों का क्रोध अपनी पराकाष्ठा पर जा पहुँचता है। परंतु जब श्रीराम जी ने उन्हें संयम का उपदेश देते हैं, उनका मन तुरंत शांत हो जाता है। राम जी की छाया में यह चंचलता *अनुशासित ऊर्जा* में बदल जाती है। यहाँ तुलसीदास जी एक गूढ़ मनोविज्ञान प्रस्तुत करते हैं , क्रोध भी मन की एक ऊर्जा है, जिसे यदि धर्म के अनुशासन में रखा जाए, तो वही *कर्तव्य-शक्ति* बन जाता है। वनवास के दौरान लक्ष्मण जी ने अपने क्रोध और वीरता दोनों को *संयमित भक्ति* में रूपांतरित किया। उनका मन *क्रियाशील* था, परंतु पूर्णतः *राम-केंद्रित*। यही चंचल मन का सदुपयोग है — जब तीव्रता *विनाश नहीं, सेवा* में प्रयुक्त होती है

लक्ष्मण जी का चरित्र *संयम और निष्ठा* का प्रतीक है। वनमें भी राम-सीताजी के उसी प्रकार सेवा करते हैं जिस प्रकार अयोध्या में करते थे। जब सीता जी का अपहरण हो जाता है तब सीता-रामके इस निःसंग रूप से विह्वल-मन होकर शोकमग्न रामको वही लक्ष्मण सलाह देकर सांत्वना देते हैं।

5.3 भरत जी: वैराग्य और आत्मसंयम का मनोवैज्ञानिक प्रतीक

भरत जी का मन *चंचलता से वैराग्य की यात्रा* का प्रतिनिधित्व करता है। उनके भीतर राजसत्ता का आकर्षण स्वाभाविक था, परंतु जैसे ही उन्हें ज्ञात हुआ कि श्रीराम वन गए हैं, उनका मन तत्काल *वैराग्य और विनम्रता* में परिवर्तित हो गया। ***"मोहि समान को पाप निवासू। जेहि लगि सीय राम बनबासू।।"***

भरत जी के संवाद में तुलसीदास जी ने मन की अद्भुत स्थिरता का चित्रण किया है, भरत जी कहते हैं कि राजसुख उन्हें प्रिय नहीं, बल्कि भाई राम का प्रेम ही सर्वोच्च है। यह *मनोनिग्रह* का गूढ़ रूप है , जहाँ व्यक्ति अपनी इच्छाओं को दमन नहीं करता, बल्कि *प्रेम और कर्तव्य के माध्यम से रूपांतरित* कर देता है। भरत का मन संयमित और निस्वार्थ है। भरत ने अपने मन को इस प्रकार संयमित किया कि उन्होंने न केवल राजगद्दी ठुकराई, बल्कि श्रीराम की खड़ाऊँ को सिंहासन पर रखकर स्वयं को केवल *प्रतिनिधि* बनाया। उनका मन 'सेवक' बन गया, *सत्ता से विरक्त, पर सेवा में समर्पित।* भरत के जीवन से तुलसीदास यह शिक्षा देते हैं कि चंचल मन का सर्वोत्तम उपयोग *त्याग और सेवा के संतुलन* में है।

5.4 सीता जी: धैर्य और श्रद्धा की मानसिक स्थिरता

सीता जी का मन *श्रद्धा और धैर्य* का प्रतीक है। लंका में कैद रहने के दौरान उनका मन कभी भयभीत नहीं होता। तुलसीदास जी लिखते हैं- **"निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन।"** उनका मन रावण के भय या निराशा में नहीं बहता, बल्कि भगवान की स्मृति में स्थिर रहता है। यह *धर्मसम्मत मनोनिग्रह* का स्त्री रूप है, जहाँ भक्ति, धैर्य और प्रेम एकाकार हैं। सीता जी के माध्यम से तुलसीदास जी यह दिखाते हैं कि चंचलता केवल पुरुष-मन का गुण नहीं, बल्कि स्त्रियों के भीतर भी दृढ़ स्थिरता और आत्मबल विद्यमान है।

5.5 हनुमान जी: चंचल मन से अचल भक्ति तक

हनुमान जी का चरित्र रामचरितमानस में *चंचल मन के सकारात्मक रूपांतरण* का सबसे उत्कृष्ट उदाहरण है। उनका मन अत्यंत ऊर्जावान, तेजस्वी और गति-संपन्न है - परंतु वह पूरी तरह *राम में निमग्न* है। हनुमान जी का मन, जो सामान्यतः क्रोध में उग्र हो सकता था, प्रभुचिंतन के कारण संयमित हो गया। हनुमान जी की मानसिक शक्ति का रहस्य यह है कि उन्होंने मन को भटकने नहीं दिया, बल्कि उसे एक लक्ष्य - *रामकाज* - में केंद्रित कर दिया।

"राम काज कीन्हें बिनु मोहि कहाँ विश्राम।"

(सुन्दरकाण्ड दोहा 1 पहला अर्धाली*)*

हनुमान जी का यह वाक्य बताता है कि जब मन को ईश्वर के कार्य में लगा दिया जाता है, तो वह *निष्क्रिय नहीं, परन्तु अनुशासित सक्रियता* प्राप्त करता है। यह आधुनिक *transformational leadership* और *self-regulation* की अवधारणा से मिलता-जुलता है। जहाँ व्यक्ति अपने कार्य में 'अहं' नहीं, बल्कि 'कर्तव्य' देखता है। **"राम काज करिबे को आतुर।"** उनका मन एकाग्र, समर्पित और प्रेरित था। जब वे लंका में सीता की खोज कर रहे थे, तब उन्होंने कठिन परिस्थितियों में भी मन को डगमगाने नहीं दिया। जब सीता माता ने उन्हें प्रश्न किया कि "तुम कौन हो?", हनुमान ने उत्तर दिया —

"राम दूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथ करुनानिधान की।।"

यहाँ उनका मन पूर्ण *अहंकारशून्य* है — यह मनोविज्ञान का चरम उदाहरण है कि सेवा में समर्पित मन *स्वत्व* का त्याग कर देता है। हनुमान का मन *प्रेरित चंचलता* का प्रतीक है , जहाँ गति है, पर व्यर्थता नहीं; उत्साह है, पर अहंकार नहीं; कर्म है, पर फल की आकांक्षा नहीं। हनुमान चंचलता के प्रतीक हैं — किंतु यह चंचलता *विनाशकारी नहीं, रचनात्मक* है। उनकी गतिशीलता पूरी तरह श्रीराम के आदेश के अधीन है।

5.6 विभीषण जी – मनोनिग्रह और साधकत्व का आदर्श

विभीषण जी रामचरितमानस में उस साधक का प्रतीक हैं जिसने राक्षसी कुल में जन्म लेकर भी अपने मन को सत्पथ पर स्थिर रखा। उनके चारों ओर अधर्म, अहंकार और भोग की अंधी लहर थी, किन्तु विभीषण जी का मन विवेकमय और संयमित बना रहा। जब वे कहते हैं — *"सुनहु पवनसुत रहनि हमारी, जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी",* तो वे अपने जीवन का रहस्य खोलते हैं। जैसे दाँतों के बीच रहते हुए भी जीभ को संयम से रहना पड़ता है, वैसे ही वे राक्षसों के बीच रहते हुए भी अपने मन को धर्मनिष्ठ बनाए रखते हैं। यह मनोनिग्रह की चरम अवस्था है — जब बाह्य परिस्थितियाँ प्रतिकूल हों, फिर भी भीतर की चेतना विचलित न हो।

उनका हृदय राम-भक्ति में एकाग्र था — *"ते पद आज बिलोकिहऊ इन्ह नयनन्हि अब जाइ"* — यह केवल भक्ति नहीं, मन का परम लक्ष्य है। विभीषण का मन 'राम' में विश्राम चाहता था — *"तब लगि कुशल न जीव कहुं, सपनेहुं मन विश्राम"*। जब तक मन ईश्वर में स्थिर न हो, तब तक न सुख है, न शांति। विभीषण जी ने वासनाओं और आसक्तियों से मुक्त होकर अपने अंतःकरण को रामनाम में एकाग्र किया, यही उनका मनोनिग्रह है। उन्होंने सिद्ध किया कि सच्चा संयम बाह्य त्याग से नहीं, बल्कि भीतर के नियंत्रण से उपजता है। इस प्रकार विभीषण मन की विजय के उस आदर्श रूप का प्रतिपादन करते हैं जो पतंजलि योगसूत्र के "चित्तवृत्ति निरोधः" सिद्धांत का मूर्त रूप है।

6. मन के कार्य

मनुष्य शरीर में मन ही है जहां सारी भावनाएं उत्पन्न होती हैं। सुन्दरकाण्ड में विभिन्न स्थानो पर मन के कार्यों को उधृत किया गया है, उदाहरण के लिए

- मन में विचार किया जाता है- *पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।, सीता मन बिचार कर नाना।, कपि मन कीन्ह बिचार।, एहि बिधि मन बिचार कर राजा।, देखेउँ करि बिचार मन माहीं।*
- मन में तर्क किया जाता है- मन महुँ तरक करै कपि लागा।
- मन में ही सुख- दुःख के भाव उत्पन्न होते हैं- जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं।
- मन में विश्वास होता है- सीता मन भरोस तब भयऊ।
- मन में आश्चर्य होता है- फिरि बैंठीं मन बिसमय भयऊ।
- मन में संतोष होता हैं- मन संतोष सुनत कपि बानी।
- मन को प्रसन्नता होती है- सुनत कृपानिधि मन अति भाए।, यह मत लछिमन के मन भावा।
- मन में इच्छाएँ उत्पन्न होती हैं- करत मनोरथ बहु मन माहीं।
- मन को एकाग्र किया जा सकता है- सावधान मन करि पुनि संकर।
- मन में धैर्य धारण किया जा सकता है- मन धरि धीर कही मृदु बाता।

7. धर्मसम्मत मनोनिग्रह : तुलसीदास जी की दृष्टि से विश्लेषण

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि तुलसीदास जी के अनुसार मन का नियंत्रण किसी दमनात्मक प्रक्रिया से नहीं होता, बल्कि *धर्म-संवेदना, प्रेम और समर्पण* के माध्यम से होता है। श्रीराम जी, लक्ष्मण जी, भरत जी, सीता जी, और हनुमान जी ने किस तरह मन को नियंत्रित किया, ये दर्शाने की कोशिश की गई है

- **श्रीराम जी** – विवेक और नीति से मन का संयम।
- **लक्ष्मण जी** – क्रोध की ऊर्जा का धर्म में उपयोग।
- **भरत जी** – वैराग्य और त्याग से मन का रूपांतरण।
- **सीता जी** – श्रद्धा और धैर्य से मानसिक स्थिरता।
- **हनुमान जी** – चपलता को सेवा में परिवर्तित करना।
- **विभीषण जी** – संयमित जीवन और राम-भक्ति में एकाग्रता।

इन सबके माध्यम से तुलसीदास जी यह संदेश देते हैं कि चंचल मन का *सदुपयोग तभी संभव है जब वह आत्मकेंद्रित न होकर ईश्वर-केंद्रित* हो। तुलसीदास जी के मानस-दर्शन का एक मौलिक विचार यह है कि चंचलता स्वयं में दोष नहीं है। यह एक प्राकृतिक शक्ति है, जो यदि भोग की ओर मुड़ जाए तो बंधन बनती है, और यदि भक्ति की ओर मुड़ जाए तो मुक्ति बनती है।

"ममता तरुन तमी अंधियारी, राग द्वेष उलूक सुखकारी।"

"तब लगि बसत जीव मन माहि, जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहि।"

यह दर्शाता है कि मन का परिष्कार प्रकाश से होता है, दमन से नहीं। ईश्वर का स्मरण, नाम और भक्ति उस प्रकाश के समान हैं जो अंधकार को स्वतः मिटा देता है।

2. निष्कर्ष और आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

मन का नियंत्रण केवल आध्यात्मिक विषय नहीं है; यह *जीवन प्रबंधन का केंद्रबिंदु* है। तुलसीदास जी और महर्षि पतंजलि दोनों ने जिस मनोनिग्रह की चर्चा की, वह आज के युग में भी उतना ही प्रासंगिक है जितना त्रेतायुग या द्वापर में था। आज का मनुष्य विज्ञान, प्रौद्योगिकी, और भौतिक सुख-सुविधाओं में तो उन्नत हुआ है, परंतु उसका मन *अधिक चंचल, अस्थिर और तनावग्रस्त* हो गया है। "रामचरितमानस" में तुलसीदास जी ने इस चंचल मन के लिए जो भक्ति-आधारित साधन दिए, वे आधुनिक मानसिक स्वास्थ्य और प्रबंधन के दृष्टिकोण से भी अत्यंत उपयोगी हैं।

आज का समाज *सूचना के भार, आकांक्षाओं की अति, और आत्मकेंद्रित जीवनशैली* से ग्रस्त है। लोग बाह्य नियंत्रण में सफल हैं, पर आंतरिक नियंत्रण (self-control) में असफल। इसीलिए चिंता, अवसाद, और अस्थिरता बढ़ रही है। तुलसीदास जी के उपाय **नामस्मरण (जप)**, **कथा श्रवण (ध्यान)**, **संत संग (सामाजिक सहयोग)**, *और* **सेवा (करुणा का अभ्यास) -** ये सभी आधुनिक *Mental Wellness Practices* से मेल खाते हैं। आज के मनुष्य को यही सीखने की आवश्यकता है कि *मन को दबाना नहीं, दिशा देना* ही सच्चा नियंत्रण है। "मन *को* नियंत्रित किया जा सकता है,अपने भीतर के प्रभु से जोड़कर।" यह भारतीय चिंतन का अनूठा सूत्र है। यही कारण है कि *रामचरितमानस* आज भी मानसिक स्वास्थ्य, जीवन प्रबंधन और नेतृत्व के मार्गदर्शक हैं।

3. संदर्भ सूची

1. गोस्वामी तुलसीदास - *श्रीरामचरितमानस*, गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. तुलसीदास कृत *वैराग्य संदीपनी*, गीता प्रेस, गोरखपुर
3. Mastering the Mind, The Sanatan Way to Success- Dr. Ashutosh Kumar; Published by HSRA Publications, BangloreISBN: 978-93-6850-915-8

From Brahmacharya to Birth: Hanuman, Makardhwaja and the Ethics of Resource Regeneration in Sustainable Development

Sayali Kare
MIT-ADT University, Pune.
(sayalikare35@gmail.com)

This paper explores the lesser known narrative of Makardhwaja's birth from Hanuman's sweat as an allegory of ecological regeneration and ethical restraint. Hanuman's brahmacharya signifies disciplined energy management, while Makardhwaja's oceanic origin reflects circularity within natural systems. Through Sanskrit lexical analysis and sustainability mapping aligned with the UN SDGs, the study reinterprets mythological symbolism as a framework for responsible consumption and ecological ethics. By bridging ancient wisdom with contemporary environmental philosophy, it positions mythology as a transformative model for sustainable human development.

1. Introduction

In mythology, Lord Hanuman is notable for his celibacy, strength and devotion, while Makardhwaja receives very little attention in scholarly circles. A profound feeling of ecological circularity is captured in the tale of Makardhwaja's birth, when Hanuman's perspiration ended up in a Makara's mouth. Hanuman's dedication to brahmacharya embodies the ideals of sustainable resource use and goes beyond simple self-discipline. Makardhwaja's arrival illustrates the interdependence of all elements in an ecosystem and natural regeneration. This research offers new perspectives and practical implications by analyzing these mythical tales under the prism of contemporary sustainability.

2. Objectives

1. Analyze Hanuman's brahmacharya as a model of ethical and resource-conscious behavior.
2. Interpret Makardhwaja's birth as a paradigm of ecological regeneration and circularity.
3. Link these insights to modern sustainability principles and SDGs.
4. Highlight the originality of this study in the context of mythology-informed sustainability research.

3. Methodology

- Textual Analysis: Ramcharitmanas (Sundar Kāṇḍa), Ananda Ramayana (Uttara Kanda), and regional folk Ramayana adaptations mentioning Makardhwaja.
- Lexical Analysis: Key Sanskrit terms: brahmacharya, dharma, makara, jala, dhwaj.
- Sources: Monier-Williams (1899), Apte (1965)
- Philosophical Interpretation: Ethical and ecological principles within Indian Knowledge Systems.
- Sustainability Mapping: Alignment with UN SDGs 12, 14, 15 to interpret mythological symbolism in a modern ecological context.

4. Hanuman's Brahmacharya - Ethical and Sustainable Restraint

ब्रह्मचर्यम् परिभाषा :

"ब्रह्मचर्यशब्देन इन्द्रियसंयमसौमनस्यप्रभृतयो ब्रह्मज्ञानानुगुणा गृह्यन्ते ।" (Char. Samh. 11.35, chakra)

brahmacaryaśabdena indriyasaṁyamasaumanasyaprabhṛtayo brahmajñānānuguṇā gṛhyante|
Meaning: By the word Brahmacharya, control over all organs (indriyas) and satisfaction or piece of mindlike tendencies which are favorable for attaining brahmajnana are understood.

"ब्रह्मचर्यं स्त्रीसेवानिवृत्तिः।" (Dalhana commentary on Sush. Samh. 20.6)

brahmacaryaṁ strīsevānivṛttiḥ|
Meaning: Brahmacharya means sexual abstinence.
Hanuman's celibacy is illustrated in the Sundar Kāṇḍa of Tulsidas's Ramcharitmans:

"मातु मोहि दीख नहिं कछु नारी। जानिअ सत्य कहउँ बर नारी॥मन वचन कर्म मोहिं जो कछु भाए। सो सब कहउँ रघुपति के पाए॥"

Meaning: Mother, I did not see any woman with lustful eyes. I am speaking the truth, know it well. What has pleased me, in thought, word, and deed, I am telling all that at the feet of Lord Raghupati.

This passage is a testament to Hanuman's complete control of his senses and mind. His focus remains entirely on his duties for Rama and he is untroubled by the temptations/distractions around him.

Celibacy represents redirection of energy toward dharma, demonstrating sustainable restraint.
Supporting passages:
Ramcharitmanas, Introductory Doha:

बुद्धिहीन तनु जानिके सुमिरौं पवन-कुमार।बल बुधि बिद्या देहु मोहिं हरहु कलेस बिकार॥
Meaning: Knowing my body to be devoid of intelligence, I remember Hanuman, the son of the wind. Please bestow on me strength, intelligence and knowledge. Remove my sorrows and shortcomings.

Hanuman Chalisa, Verse 15:
विद्यावान गुनी अति चातुर। राम काज करिबे को आतुर॥
Meaning: You are the knower of all knowledge, full of virtues, very clever, and always eager to perform the Lord's tasks.
These verses emphasize Hanuman's wisdom, virtue and dedicated service, all of which are fruits of his disciplined and celibate life. Qualities aligned with sustainable ethical behavior.

5. Makardhwaja: Life from Waste and Regeneration

Story of Makardhwaja from Anand Ramayan's Sārakāṇḍ
When Hanuman arrived at Patala Loka to rescue Prabhu Ram Chandra and Lakshman, he discovered Makardhwaja guarding the entrance. Hanuman was halted by him and he was challenged to a wrestling match. Hanuman would be permitted entry and states that he can only do so after coming out on top in the combat. Though he deems him a formidable foe, Hanuman concurs. Although Hanuman is astonished by his strength, Makardhwaja is defeated after a fierce battle. Hanuman asks him his name after the combat and wants to know about his parents because they have a child with such strength. Makardhwaja declared himself to be Hanuman's son!

Since Hanuman was a celibate and had never fathered a kid, he was confused. Makardhwaja explained, Hanuman dipped himself in the water, after using his tail to burn the city of Lanka. Just then, a drop of his sweat fell into the water and the fish-like reptile - Makar, swallowed it. Later, Mahiravan received him after discovering him in the animal's stomach. He was given the name Makardhwaja from his immense strength and the fact that he was discovered within a reptile fish's stomach.

This tale brings to light the topic of supra-normal births, which is both a topic in and of itself and a common element in mythology studies. (Makardhwaja and Hanuman).

Makardhwaja's birth from a drop of Hanuman's sweat swallowed by a *makara* symbolizes circularity:

Sweat > Water > Makara > Life. This represents **regeneration without depletion,** a key principle of the circular economy and ecological interdependence.

6. Lexical & Sustainability Mapping

Mythological Element	Sanskrit Lexeme	Source / Lexicon	Modern SDG / Sustainability Principle	Explanation
Hanuman's Brahmacharya	ब्रह्मचर्य	*Monier-Williams, 1899*	SDG 12: Responsible consumption, ethical energy use	Celibacy = disciplined energy, conscious restraint
Ethical Duty	धर्म	*Monier-Williams, 1899*	Social & ecological responsibility	Alignment of thought, speech, action with dharma = sustainability in action
Makardhwaja's Birth	जल, मकर, ध्वज	*Apte, 1965*	SDG 14 & 15: Circularity, ecosystem interdependence, regeneration	Sweat → water → Makara → new life: allegory of circular economy
Life from Waste	(sweat → life)	Folk narrative sources	Circular economy, zero-waste philosophy	Resource transformation without depletion
Guardianship	ध्वज	*Apte, 1965*	Stewardship, sustainable resource management	Makardhwaja as protector = ethical stewardship

7. Ethical and Ecological Interpretation

Hanuman → Controlled potential and ethical restraint (brahmacharya/celibacy).
Makardhwaja → Manifested creativity and regenerative capacity.
Mythology provides a framework for sustainable, circular and ethical practices.

8. Originality Statement

While previous research highlights Hanuman's devotion and Makardhwaja's folklore, this study uniquely interprets these narratives through the lens of sustainable development and ecological ethics, offering an original contribution to mythology-informed sustainability research.

9. Conclusion

The remarkable birth of Makardhwaja and the lifelong chastity of Hanuman are powerful tales of sustainable growth. The UN's Sustainable Development Goals, local folktales, and Sanskrit scriptures are all examined in this paper. It seeks to provide workable answers to today's sustainability problems by fusing traditional wisdom with contemporary ecological viewpoints. Makardhwaja's origins represent creative rebirth. The careful management of moral, material and natural resources is emphasized by Hanuman's dedication to celibacy. When taken as a whole, these two stories teach us to take care of the environment by maintaining integrity, encouraging sustainability and favoring circular thinking over linear advancement.

10. References

1. Tulsidas, Ramcharitmanas, Hanuman Chalisa, Gita Press, 1999
2. Commentary by Chakrapani on Charaka Samhita (Sutrasthanam Adhyaya 11 Sutra 35)
3. Articles : Makardhwaja and Hanuman, Bramhacharya
4. Anand Ramayan
5. Monier-Williams, M. (1899). A Sanskrit-English Dictionary, Oxford University Press.
6. Apte, V. S. (1965). The Practical Sanskrit-English Dictionary.
7. Commentary by Dalhana on Sushruta Samhita (Sutrasthanam Adhyaya 20 Sutra 6)

रामायण और सतत विकास

राकेश कुमार चौबे
rkeshanju1988@gmail.com

*रामायण और सतत विकास विषय में रामायण अर्थात राम की श्रीराम बनने की यात्रा या अयन की कहानी जो आतंक और विध्वंसक विकास को सत्य और शांति के साथ सतत विकास में बदलने की यात्रा है| जिसने आने वाले पीढ़ी को "**धर्म एव हतोहन्ति धर्मो रक्षति रक्षत:"** अर्थात धर्म का जो नाश करता है , धर्म स्वयं उसका नाश कर देता है| तो धर्म क्या है? सत्य, अनुशासन और शान्ति के साथ इस प्रकार की व्यवस्था जिसमें कर्म के आधार पर आर्थिक, सामाजिक उन्नति जिसमें प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर विकास और यही सतत विकास **Sustainable Development की परिभाषा UNO** ने कही है, उसके 17 पॉइंटेड चार्टर में जो बात कही है, वही रामराज्य की अवधारणा है, जिसे हम अपनी रिसर्च में समझेंगे| रामायण का धर्म **"सत्यमेव जयते"** के साथ **"वसुधैब कुटुम्बकं"** की बात करता है, जहाँ स्वायत्तशासन कई समितियों जिनसे **गण-** ट्रेड यूनियन, **नैगम-** व्यापार संघ, **पौर-** नगर व्यवस्था, आज भी देखने को मिलती है, के माध्यम से समाज की नीचे की सीढ़ियों पर बैठे लोगों के साथ राज्य का विकास करना जो आने वाली पीढ़ियों को भी सुख-सुविधा पूर्ण जीवन दें, यही अवधारणा सतत विकास की भी है| आज एक फिल्म बहुत चर्चा में है **"कान्तारा 2"** जहाँ विकसित और पिछड़ी (नेचुरल लाइफ) सभ्यता के बीच की लड़ाई है| यहाँ एक सुपर पॉवर का उल्लेख किया है, जो धर्म आधारित मानव की सहायता करता है यही तो **अवतार वाद की परिकल्पना** है| **राम और रावण के युद्ध को विध्वंसक विकास और उसका एक सभ्य, सुसंकृत मानवीय सोच के साथ युद्ध कह सकते हैं**| जिसमें मानवतावाद जीतता है, यही धर्म युद्ध या धर्म आधारित विकास है, जिसकी पूरी दुनिया चाह रखती है | आगे हम इन सब बिन्दुओं के साथ दुनिया की तीन विचारधारा श्रीराम के साथ दुनिया के विचारकों जैसे कंफ्युसियश का विकासवाद (चीन) और महात्मा गांधी का विकासवाद (भारत) के संदर्भ में भी पर चर्चा करेंगे |*

शब्दों की व्याख्या –

रामायण –

"रामायण" केवल एक कथा नहीं, बल्कि धर्म, नीति, आदर्श और मानवता का विश्वकोश है।

इसे कई **रामायणों में विद्वानों** ने अपने-अपने दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है ।

वाल्मीकि रामायण (बालकाण्ड 1.1.2)

कोऽन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्|

धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः॥ 1.1.2

वाल्मीकि जी नारद से पूछते हैं — इस संसार में कौन ऐसा पुरुष है जो गुणवान, पराक्रमी, धर्म को जानने वाला, कृतज्ञ, सत्यप्रिय और दृढ़व्रती है? क्योंकि वे उस समय के महामानव की कथा लिखना चाहते थे, जो उन्होंने लिखी भी, इसे हम वाल्मीकि रामायण कहते हैं|

नारदजी ने इसका उत्तर दिया — **इक्ष्वाकू वंश के श्रीराम**।

राम कौन —"मर्यादा पुरुषोत्तम"

तुलसीदास रामचरितमानस (बालकाण्ड)1/8/2 और 1/33/6

सीय राम में सब जग जानी, करउँ प्रणाम जोरि जुग पानी|

नाना भांति राम अवतार|

रामायन सत कोटि अपारा|

यह संसार जिसमें **चार योनियों में जलचर, जीव, पृथ्वी और आकाश** इन सब से भरे हुए सारे जगत का स्वरूप श्रीसीताराम मय है और श्रीराम कथा की बात करें तो वे अपार है और उनकी कथा भी अनंत हैं|

रामायण में विकास क्या सृष्टी का उद्भव भी है और अंत भी|

रामायण में विकास का आधार कर्तव्य और त्याग है- श्रीराम धर्म के कारण राज्य और अपने परिवार को त्याग देते हैं, क्योंकि पिताजी की आज्ञा उनके लिए सर्वोपरि थी और पिताजी के लिए उनका अपना वचन-

रघुकुल रीति सदा चली आई, प्रान जाहूँ बरु वचनु न जाई || 2/28/4

जो मनुष्य धर्म को देखकर प्रिय वस्तु का त्याग करता है, वही वास्तव में धर्मात्मा है। या यूँ कहें विकास के लिए पहले त्याग आवश्यक है| जो त्याग(राज्य, सुख, ऐश्वर्य) कर सके वही अपने राज्य का सतत विकास कर सकता है| राज्य की विशेषता तुलसीदास जी अयोध्याकाण्ड बताते हैं -

भट जम नियम सैल रजधानी, सांति सुमति सूचि सुन्दर रानी|

सकल अंग संपन्न सुराऊ, राम चरण आश्रित चित चाऊ| 2/235/7-8

किसी भी संपन्न राज्य के सात अंगों के बारे में तुलसीदास जी ने बताया है जिसमें **स्वामी(राजा), अमात्य, सरहद, कोष, राष्ट्र, दुर्ग और सेना** ये ही सतत विकास के आधार स्तम्भ हैं| जिसका उल्लेख मनु स्मृति में भी ९/२९४ में किया है |

शासन और न्याय जो सतत विकास के लिए आवश्यक हैं|

यही रामराज्य का आधार — न्याय, सेवा और समानता। यही लक्ष्य UNO ने भी बताया है|

दैहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज नहिं काहुहि ब्यापा|

सब नर करहिं परस्पर प्रीती, चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती| तुलसीदास 7/21/1-2

रामराज्य में सबको सुख मिला, न कोई दुख, न भय, न रोग। मर्यादा में रहकर अपने अपने स्वधर्म का पालन करते थे| **यह आदर्श शासन का चित्र है** — विकसित राष्ट्र के नागरिक सरकार और राजा / नेता से चाहते हैं उसके राज्य में **Good Governance सुशासन हो** और वाल्मीकि रामायण में सर्ग १०० में इसके सारे सूत्र मिलते हैं, जिनकी मांग सामान्यत: पूरे विश्व में समय समय पर होती रहती है|

सारांश

पक्ष	अर्थ	श्लोक/चौपाई
नैतिक पक्ष	धर्म, मर्यादा, सत्य	"रामो विग्रहवान् धर्मः"
सामाजिक पक्ष	न्याय, समानता, लोकहि	"राम राज बैठे त्रैलोका, हरषित भए गए सब सोका
आध्यात्मिक पक्ष	आत्मा में स्थित ईश्वर	"सिय राममय सब जग जानी..."
सुशासन व्यवस्थ	न्याय, सुख, शांति,	मुखिया मुख सो चाहिए.. सुशासन

सतत विकास

सतत विकास का अर्थ है वह विकास जिसमें आर्थिक विकास , सामजिक विकास और पर्यावरण के संरक्षण के साथ आने वाली पीढ़ियों को इसका लाभ मिले परन्तु आज विकास सीमित हो रहा है, जो व्यक्तिगत है इसे सार्वभौमिक बनाने के लिए UNO द्वारा कुछ लक्ष्य बनाए हैं जो निम्न हैं -

संयुक्त राष्ट्र (UN) द्वारा निर्धारित **सतत विकास के लक्ष्य**

— Sustainable Development Goals (SDGs) — वर्ष **2015** में घोषित किए गए थे, जिन्हें **2030 तक प्राप्त करने** का लक्ष्य रखा गया है। इनकी कुल संख्या **17** है।

संयुक्त राष्ट्र के 17 सतत विकास लक्ष्य (UN SDGs – 2030)

क्रमांक	लक्ष्य (हिंदी में)	Goal (in English)
1.	**गरीबी का अंत**	No Poverty
2.	**भुखमरी का अंत**	Zero Hunger

क्रमांक	लक्ष्य (हिंदी में)	Goal (in English)
3.	**अच्छा स्वास्थ्य और कल्याण**	Good Health and Well-being
4.	**गुणवत्तापूर्ण शिक्षा**	Quality Education
5.	**लैंगिक समानता**	Gender Equality
6.	**स्वच्छ जल और स्वच्छता**	Clean Water and Sanitation
7.	**सस्ती और स्वच्छ ऊर्जा**	Affordable and Clean Energy
8.	**सम्मानजनक कार्य और आर्थिक वृद्धि**	Decent Work and Economic Growth
9.	**उद्योग, नवाचार और अवसंरचना**	Industry, Innovation and Infrastructure
10.	**असमानताओं में कमी**	Reduced Inequalities
11.	**टिकाऊ शहर और समुदाय**	Sustainable Cities and Communities
12.	**जिम्मेदार खपत और उत्पादन**	Responsible Consumption and Production
13.	**जलवायु कार्रवाई (Climate Action)**	Climate Action
14.	**जल के नीचे जीवन**	Life Below Water
15.	**स्थल पर जीवन (पृथ्वी पर पारिस्थितिकी का संरक्षण)**	Life on Land
16.	**शांति, न्याय और सशक्त संस्थाएँ**	Peace, Justice and Strong Institutions
17.	**लक्ष्यों के लिए साझेदारी**	Partnerships for the Goals

रामायण में जो रामराज्य जो है, वही Sustainable Development का स्वरूप है, जिसे आज भी भारत ही नहीं दुनिया अपने अपने देश में स्थापित करने की कल्पना कर रही है| विकास के तीन आधार दुनिया मानती है, उसमें रामराज्य, चीन में कन्फ्युशियस का विकास वाद और महात्मा गांधी ग्राम स्वराज्य| जब भी विकास ने अपना स्वरूप मानवता और प्रकृति के विरुद्ध किया है, महामानव ने जन्म लिया है| उदहारण के लिए **राजा बली(ब्राह्मण अवतार), रावण(श्रीराम अवतार) और कंस(श्री कृष्ण अवतार)** तीनों के शासन में समृद्धि अर्थात विकास तो चरम पर था, परन्तु उसमें आम आदमी सुखी नहीं था| वह विकास धर्म विरुद्ध था| **रामायण और गीता कहती हैं "जब जब होई धरम कै हानि, बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी" और "तब तब प्रभु धरि बिबिध शरीरा" और गीता यदा यदा हि धर्मस्य.....** राजा दशरथ की अयोध्या संम्पन्न तो थी परन्तु जो हमने ऊपर लिखे राज्य के सात गुण धर्म उनमें **"सरहद"** सुरक्षित नहीं थी, सीमावर्ती क्षेत्र असुरक्षित, भय और आतंक में जी रहे थे, जिसका प्रभाव पूरे राज्य पर देखने को मिल रहा था, इसलिए श्रीराम ने 14 वर्ष में सीमावर्ती क्षेत्र को आत्मविश्वास और सुरक्षा प्रदान की उसके बाद रामराज्य की स्थापना की थी| अब देखते हैं UNO के लक्ष्य और रामराज्य में क्या समानताएं थीं-

शोध आलेख

गरीब, भुखमरी का अंत और अच्छा स्वास्थ्य (No Poverty – Zero Hunger and Good Health)SDG 1,2,3 — ये संयुक्त राष्ट्र के

पहले तीन सतत विकास लक्ष्य हैं, जिनका आपस में सीधा सम्बन्ध है| परन्तु आज वास्तव में लोग गरीब हैं, भुखमरी से ग्रस्त हैं, शायद नही!! क्योंकि इसका सम्बन्ध मानसिकता है, इसलिए तो आज जो कार वाला है वह मोटर साइकिल वाले को और मोटर साइकिल वाला साइकिल वाले को गरीब कहता है| जो पिज़्ज़ा-बर्गर खाता है, वह दाल रोटी खाने वाले को भुखमरा कहता है उसका कारण है, समाज में एक दूसरे के प्रति आदर और प्रेम का भाव न होना| रामायण के उत्तरकाण्ड का सन्देश "**सब नर करहिं परस्पर प्रीती, चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती|" का अभाव है** |

रामायण में वर्णित **रामराज्य**, इन लक्ष्यों का एक आदर्श सांस्कृतिक रूप प्रस्तुत करता है।

रामराज्य में आर्थिक समता — "गरीबी का अंत

रामो राज्यमुपासीत धर्मेण पृथिवीपते।

स्वधर्मेण च लोकानां हितं चकार सर्वदा॥

न हि तस्मिन् नरः कश्चित् आसीद् यो न सुखी भवेत्॥ (100.1–3) व. रा.

श्रीराम ने धर्मपूर्वक राज्य किया और सदा लोकहित में कार्य किया। उनके राज्य में कोई भी व्यक्ति दुःखी या अभावग्रस्त नहीं था।

यह "**No Poverty**" का जीवंत उदाहरण है|

जहाँ शासन की नीति धर्म और न्याय पर आधारित थी, वहां हर व्यक्ति का जीवन सम्मानपूर्ण और सुरक्षित होता है|

राम राज बैठें त्रैलोका, हर्षित भए गए सब सोका|

बयरु न कर काहू सन कोई, राम प्रताप बिषमता खोई|| 7/20/7-8 मानस

श्रीराम के राजा बनते ही दुःख चले गए, किसी का किसी से कोई बैर नहीं रहा, आतंरिक मतभेद ख़त्म हो गए| जहाँ तक की पशु पक्षी जीव जंतु सभी आपस में बैर भुलाकर साथ रहते हैं| खेत-खलिहान, बाग़-बगीचे सभी पर विशेष ध्यान दिया जाता था, जिससे सभी को पर्याप्त भोजन और स्वच्छ वातावरण मिल सके| यही "**सतत विकास का आदर्श समाज**" है| जहाँ पर्यावरण, अर्थव्यवस्था और समाज — तीनों में संतुलन है।

कूजहिं खग मृग नाना बृंदा, अभय चरहि बन करहिं अनंदा 7/23/3 मानस

साराशं

रामराज्य केवल एक धार्मिक कल्पना नहीं, वह जीवन जीने का एक ढंग है जिसमें सर्वांगीण विकास होता है| **जहाँ धर्म शासन करे, वहाँ भूख और अभाव मिट जाते हैं।**

संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य SDG4- "समावेशी और गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा" (Quality Education for All) और रामायण|

आज हर माता-पिता का सपना होता है, कि वे IIT से अपने बच्चे को BE कराये, क्योंकि यहाँ QUALITY EDUCATION है|

रामायण, विशेष रूप से वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस, की शिक्षा सिर्फ ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि चरित्र, मर्यादा और आत्मज्ञान के साथ प्रायोगिक ज्ञान पर भी प्रकाश डालती है|

शिक्षा का उद्देश्य — सैद्धांतिक ज्ञान ही नहीं, व्यवहारिक ज्ञान भी आवश्यक है –

रामायण में श्रीराम की प्रारंभिक शिक्षा गुरु वशिष्ठ जी दी और बाद में श्रीराम को **विश्वामित्र जी** जब मांग कर ले जाते हैं, वह कथा हम सबको मालूम है| श्रीराम को भी परीक्षा देनी पड़ी थी, और उसमें वे अपने जीवन का **पहला वध (हत्या)करते है** और वह भी एक स्त्री का, इसके बाद भी हम सब उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम मानते हैं| अर्थात शिक्षा का अर्थ यही है, पढ़ाया तो गया है स्त्री का मान सम्मान करो जो **शाश्वत** भी है, परन्तु कौन स्त्री ?? कैसी स्त्री?? यह विश्वामित्रजी अपने व्यवहारिक ज्ञान में सिखाते है, जो आगे जाकर **अहल्या और शबरी प्रकरण** में सिद्ध भी होता है| यदि भारत में यही सतत विकास लाना है तो सिर्फ 2 कमरों में कॉलेज खोलकर प्रश्नों के उत्तर से परीक्षा पास करने से नहीं आयेगा| इसीलिए सनातन धर्म में कहा गया है-

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।

प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्मः सनातनः॥मनुस्मृति अध्याय 4 श्लोक 138

शिक्षा केवल विद्या नहीं, बल्कि सद्व्यवहार और संयम का प्रशिक्षण है।

रामायण में नैतिक शिक्षा (Moral Education) को सर्वोच्च स्थान दिया गया है, जिसकी कमी वर्त्तमान शिक्षा पद्धति में देखने को मिलती है| इसीलिए सरकार ने **NEP 2020** घोषित की है, जिसमें भारतीय ज्ञान परम्परा को स्थान दिया गया है क्योंकि सतत विकास के लिए नैतिक शिक्षा का भी स्थान होना आवश्यक है|

२. गुरु–शिष्य परंपरा — यह शिक्षा का मूल आधार है जिसे बाबा तुलसी ने अपने महाकाव्य के प्रारंभ और अंत दोनों जगह लिखा है|

यदि चहुँमुखी विकास करना है तो गुरु-शिष्य परंपरा अर्थात **गुरु के मानक और शिष्य की रूचि** दोनों का विशेष ध्यान देना होगा|

विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा रामं सत्यपराक्रमम्।

उवाच वचनं धीमान् धर्मार्थसहितं हितम्॥(वाल्मीकि रामायण)

गुरु गृह गए पढ़न रघुराई। अल्पकाल बिद्या सब आई॥ मानस 1/204/2

गुरु (शिक्षक), शिष्य को **जीवन की दिशा और दृष्टि** दोनों देता है।

राम ने गुरु के प्रति आज्ञाकारिता और श्रद्धा दिखाकर आदर्श विद्यार्थी के रूप में अपने को प्रस्तुत किया और अपने गुरु से उच्चतम ज्ञान प्राप्त किया था| जिसे शिक्षा से जोड़कर बच्चों में आदर्श शिष्य के गुण लाना चाहिए | यही सतत विकास की अवधारणा है|

चरित्र और मर्यादा — शिक्षा की आत्मा

सच्ची शिक्षा वही है जो **कर्तव्य और आस्था** को जोड़ती है।

राम का जीवन **"शिक्षा का व्यवहारिक रूप"** है, ज्ञान का उपयोग समाज और धर्म के हित में किया जैसे **रावण को भी उन्होंने विद्वान माना** और लक्षमणजी से उससे शिक्षा लेने का कहा था|

समावेशी शिक्षा — सबके लिए ज्ञान, रामायण में तो पशु पक्षी के माध्यम से भी ज्ञान का संचार किया है, श्रीरामचरित मानस का उत्तरकाण्ड इसका सशक्त प्रमाण है, **काकभुशुंडजी – गरुड़ प्रसंग**|

रामायण में शिक्षा को ज्ञान + प्रेम + नीति का संयोजन माना गया है यही **"Quality Education"** का **भारतीय रूप है और सतत विकास की चाबी है**|

सारांश-

"रामायण में शिक्षा केवल बुद्धि की नहीं, बल्कि हृदय की जागृति है" जो सतत विकास का मूलमंत्र है|

रामायण हमें सिखाती है कि —

- शिक्षा **चरित्र निर्माण** का साधन है,
- शिक्षा **समाज में समानता और सद्भावना** का स्रोत है,
- और शिक्षा का लक्ष्य **आत्म-साक्षात्कार** है।

संयुक्त राष्ट्र के **सतत विकास लक्ष्य SDG-5-** "**लैंगिक समानता (Gender Equality)**" और रामायण

स्त्री और पुरुष को समान अधिकार, अवसर और सम्मान मिलें यह रामायण और सतत विकास की अवधारणा है |

सभी रामायण, विशेष रूप से वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस,

इस समानता को केवल अधिकार के रूप में नहीं, बल्कि **अनिवार्यता (Inevitability/Necessity)** के रूप में प्रस्तुत करती है| स्त्री और पुरुष दोनों ही समाज और धर्म के दो समान स्तंभ हैं। सनातन साहित्य में **अर्धनारीश्वर** स्वरूप इसी का रूप है|

पुरुष और स्त्री के कर्म और धर्म -

सीताजी — समान भागीदारी और आत्मनिर्णय का प्रतीक हैं|

भर्तुभाग्यं तु नार्येका प्राप्नोति पुरुषभर्भ| वाल्मीकि 2/27.5

तुम बिनु रघुकुल कुमुद बिधु, सुरपुर नरक सामान| मानस 2/64/ दो

वनवास के समय सीता कहती हैं — मैं कारण नहीं जानती, पर यह मेरा धर्म है, कि केवल पत्नी ही पति के भाग्य का अनुसरण करती है, उसका स्वर्ग नरक सब कुछ उसके पति ही हैं, इसलिए जहाँ श्रीराम जाएँ, मैं भी वहाँ चलूँ|

यह महिला स्वायत्तता (autonomy) का उदाहरण है।

शिक्षा और ज्ञान में समान अवसर

धीरज धर्म मित्र अरु नारी, आपद काल परखिअहि चारी| मानस अरण्यकाण्ड 3/5/7

यहाँ अनसूयाजी, सीताजी को ज्ञान और नीति का उपदेश देती हैं। यह दिखाता है कि रामायण के युग में नारी शिक्षित और विचारशील तो थी, साथ में ज्ञान की दात्री भी थी,केवल अनुयायी नहीं।

भक्ति और कर्म में समानता — शबरी का उदाहरण रामचरितमानस (अरण्यकाण्ड)

शबरी कहती है – अधम ते अधम अधम अति नारी .....

श्रीराम कहते हैं – मानऊँ एक भगति कर नाता ..... और नवधा भगति कहऊँ तोहि पाहिं| की बात रामायण करती है| **भीलनी, तपस्विनी, शबरी** ने अपने प्रेम और भक्ति से भगवान राम को प्रसन्न किया और भक्ति की शिक्षा प्राप्त की थी| **यहाँ शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाति, लिंग, कुल, धर्म, बल,चातुर्य कोई बाधा नहीं है।** यह "**Equal Opportunity**" का और **Gender Respect** का गहन संदेश है|

सारांश-

"रामायण में स्त्री केवल आदर्श की मूर्ति नहीं, बल्कि समान शक्ति, ज्ञान और निर्णय की भागीदार है।"

निष्कर्ष

स्त्री और पुरुष विरोधी नहीं, सहयोगी हैं।

"जहाँ सीता का सम्मान होता है, वहीं रामराज्य स्थापित होता है।"

संयुक्त राष्ट्र का सतत विकास लक्ष्य SDG-6 है—**"सभी के लिए स्वच्छ जल और स्वच्छता" (Clean Water and Sanitation for All) और रामायण**

यह लक्ष्य जल संरक्षण, स्वच्छता, और पर्यावरणीय संतुलन पर केंद्रित है और **रामायण** में इन मूल्यों का गहरा सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और व्यावहारिक रूप दिखाई देता है।

रामायण केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि **पर्यावरण–संवेदनशील जीवनशैली** का भी आदर्श प्रस्तुत करती है।

जल अर्थात नदियों का सम्मान — रामायण में जल जीवन और पवित्रता का प्रतीक माना गया था, वनवास के समय श्रीराम और माता सीता द्वारा गंगा नदी की पूजा और सकुशल वापसी पर पुन: पूजा अर्चना इसका श्रेष्ठ उदाहरण है|

सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी, मातु मनोरथ पुरउब मोरी| 2/103/2 इसी प्रकार के विचार वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड के 52 वे सर्ग के 89 श्लोक में भी हैं|

आश्रम और वन — स्वच्छता व परिस्थिति का संतुलन

वाल्मीकिजी द्वारा श्रीराम को चित्रकूट में कहाँ कहाँ रहना चाहिए का विस्तार से वर्णन मानस के अयोध्या काण्ड में किया है, जो स्वच्छता और प्राकृतिक संतुलन का आदर्श सन्देश है| सभ्यता का विकास किस आधार पर होना चाहिए, यह सन्देश यहाँ मिलता है|

निदरहिं सरित सिन्धु सर भारी, रूप बिंदु जल होहिं सुखारी .....

बिबुध बिपिन जहँ लगि जग माहीं, देखि रामबनु सकल सिहाहीं|

सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या, मेकलसुता गोदावरि धन्या ||

श्रीराम के निवास स्थान की पवित्रता और सुन्दरता देखकर देवता, देवनदी, हिमालय जैसे पवित्र स्थान भी लज्जित हैं अर्थात **श्रीराम का निवास चित्रकूट** प्राकृतिक और पर्यावरणीय संतुलन का अनुकरणीय उदाहरण है| यह "Clean Living Environment" का आदर्श है|

यही पर्यावरणीय दृष्टि से Sustainable Ecosystem का संकेत है।

स्वच्छ जल, वृक्ष और भूमि — ये तीनों मिलकर जीवन का आधार बनाते हैं।

वाल्मीकि रामायण अयोध्या कांड सर्ग १०० के श्लोक ४३ से ४७ के बीचमें **"शुचिता"** यानी व्यक्तिगत स्वच्छता (Personal Hygiene) और **पर्यावरणीय स्वच्छता** दोनों का महत्व बताया गया है।

यह "Clean Water = Healthy Life" का मूल विचार है।

रामराज्य — स्वच्छ और संतुलित पर्यावरण का आदर्श

रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड दोहा 21 से 25 तक रामराज्य का वर्णन किया है, जिसमें विकास के साथ सामजिक और पर्यावरण संतुलन के लिए आदर्श स्थिति है, जिसके लिए श्रीराम का वनवास के दौरान अपने चित्रकूट निवास जो सबसे अधिक अवधि का था, उस समय आदर्श ग्राम, पर्यावरण, रहन-सहन का स्वरूप प्रस्तुत किया जिसका विस्तार उनके पूरे साम्राज्य में हो गया था, ठीक उसी प्रकार जैसे केंद्र सरकार का "स्वच्छ भारत" का सन्देश, आज गाँव गाँव शहर शहर ने पहुँचने के साथ उन्होंने उसे अपना भी लिया है| रामराज्य में भी जल-संतुलन और स्वच्छता के लिए पर्यावरणीय स्वच्छता और संसाधन-संरक्षण का दिया जो पूरे राज्य ने अपनाया था और यही सतत जल प्रबंधन (Sustainable Water Management) का भी स्वरूप है।

सारांश-

"रामायण में जल केवल प्राकृतिक तत्व नहीं, जीवन, धर्म और स्वच्छता का आधार है।"

रामायण का संदेश है —

- **जल की रक्षा = जीवन की रक्षा**
- **स्वच्छता = आरोग्य और आस्था का संगम**
- **रामराज्य = जल, वन, भूमि और मानव का संतुलित जीवन**

निष्कर्ष

"जहाँ जल की शुचिता और पर्यावरण की पवित्रता है, वही रामराज्य और सतत विकास है ।"

संयुक्त राष्ट्र का **सतत विकास लक्ष्य SDG-7** है—**"सस्ती, भरोसेमंद, स्थायी और स्वच्छ ऊर्जा"Affordable and Clean Energy) और रामायण**

रामायण में प्रत्यक्ष "विद्युत ऊर्जा" का उल्लेख नहीं है, लेकिन ऊर्जा का सांस्कृतिक, नैतिक और प्राकृतिक रूप मौजूद है। सनातन साहित्य के मूल ग्रन्थ **वेदों में भी देवों के रूप में ऊर्जा** का ही सम्मान किया गया है, वहां जल, पृथ्वी, अग्नि, सूर्य आदि को देवता माना गया है| रामायण के संदर्भ में इसे तीन मुख्य रूपों में देखा जा सकता है|

प्राकृतिक ऊर्जा का उपयोग — अग्नि और जल ऊर्जा का स्रोत उन्हें प्राकृतिक और स्वच्छ होना चाहिए — अग्नि, जल, और सूर्य की ऊर्जा का आवश्यकता के अनुसार उपयोग के साथ उनकी शुचिता पर ध्यान देना चाहिए|

श्रीराम ने वनवास में सुलभ ऊर्जा और जीवनशैली का संतुलन बनाया और उसके बारे में लोगों को भी शिक्षित किया| यह **सुलभ ऊर्जा (Affordable Energy)** का उदाहरण है|

ऊर्जा का प्रयोग उसे बिना नुकसान और अत्यधिक खर्च के किया जाना चाहिए यह राम, सीता और लक्ष्मण ने अपने दैनिक जीवन में **सौर ऊर्जा, जल और लकड़ी** से जीवन यापन करके सिखाया। आज ग्रीन एनर्जी, गैस और सूर्य के प्रकाश को वैकल्पिक ऊर्जा के रूप में उपयोग किया जा रहा है जिसका सन्देश रामायण में भी मिलता है| ऊर्जा सुलभ हो, सुरक्षित हो, और प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त हो।

युद्ध और प्रकृति का संतुलित प्रयोग

वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड में श्रीराम अस्त्र–शस्त्र प्रयोग पर नियंत्रण रखते हैं| संजीवनी जैसी औषधि का उपयोग करके उसे यथास्थान वापिस पहुंचाते हैं, जबकि आज हम **अंतरिक्ष, हिमालय** जैसी जगहों पर फैले कचरे से परेशान हैं|

ततो हरिर्गन्ध वहात्म जस्त

तमो षधी शैल मुद्ग्रवेग: ....2/6/74/77 व. रा.

SDG-7 के अनुसार **ऊर्जा का सुरक्षित, न्यायसंगत और स्वच्छ उपयोग आवश्यक है**, जो रामयण का भी सन्देश है।

सारांश -

"रामायण में ऊर्जा केवल शक्ति नहीं, जीवन और धर्म का आधार है।"

संयुक्त राष्ट्र का **सतत विकास लक्ष्य SDG-8** है- **"सम्मानजनक कार्य और आर्थिक वृद्धि (Decent Work and Economic Growth)" और रामायण**

रामायण में यह लक्ष्य **व्यक्तिगत धर्म, सामूहिक कर्तव्य, और आर्थिक न्याय** के माध्यम से व्यक्त होता है। रामराज्य में प्रत्येक व्यक्ति को **सम्मानजनक कार्य और उचित जीवनयापन** का अधिकार प्राप्त था।

कार्य का धर्म — सभी को अपना कर्तव्य निभाना चाहिए, कृषि और कृषि से सम्बंधित व्यवसाय पर विशेष ध्यान दिया जाता था क्योंकि उस समय का मुख्य व्यवसाय कृषि ही था|

कच्चित ते दयिता: सर्वे कृषी गोरक्ष जीविन:|

वार्तायं संश्रीतस्तात लोकोयं सुखमेधते ||2.100.47)

व्यक्ति अपने कर्म में संलग्न रहकर ही सुखी एवं उन्नतिशील हो सकता है| यही **सम्मानजनक कार्य (Decent Work)** का आधार है — रामायण में **कार्य = धर्म + सेवा + समाज कल्याण** का रूप है।

आर्थिक सुरक्षा और न्याय

व्यसने धनाड्स्य दुर्बलस्य च राघव|

अर्थ विरागा: पश्यन्ति तवामात्या बहुश्रुता|| व.रा. 2/100/58

रामायण कहती है गरीब और धनी के बीच के विवाद को न्यायालय, न्यायोचित निर्णय करते हों, धन के कारण न्याय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए| आज भी हम इस बात से परेशान हैं की गरीबों को न्याय उचित और समय पर नहीं मिलता है|

आर्थिक वृद्धि का लक्ष्य केवल संपत्ति में नहीं, बल्कि सबके जीवन स्तर में सुधार है।

कच्चिदर्थेन वा धर्ममर्थ धर्मेण वा पुन: 2/100/62

धर्म के द्वारा अर्थ को और अर्थ के द्वारा धर्म को हानि नहीं होना चाहिए|

यह दिखाता है कि **आर्थिक वृद्धि (Economic Growth)** केवल उत्पादन नहीं, बल्कि **सामाजिक कल्याण और नैतिक शासन** के साथ संतुलित हो, यह रामायण से हम सीख सकते हैं|

४. श्रम और सम्मान — केवट प्रसंग

केवट प्रसंग इसका एक सशक्त उदहारण है श्रीराम उसके उद्धोग में व्यवधान नहीं बनाते बल्की उसे पारिश्रमिक भी देने का प्रयास करते हैं|

सोई करु जेहिं तव नाव न जाई..... मानस 2/101/1

प्रभुहि सकुच एहिं नहिं कछु दीन्हा .....मानस 2/102/2

हर व्यक्ति को सम्मानजनक कार्य और उसके अनुसार जीवन यापन मिले और उसका शोषण नहीं हो यह सतत विकास का लक्ष्य है, जो रामायण से सीखा जा सकता है|

सारांश-

"रामायण में कार्य और आर्थिक वृद्धि केवल धन का लक्ष्य नहीं, बल्कि धर्म, न्याय और समाज कल्याण का माध्यम है।"

रामराज्य में —

- प्रत्येक व्यक्ति का श्रम सम्मानजनक था,
- आर्थिक वृद्धि का लाभ सभी को मिलता था,
- और समृद्धि/लाभ समाज के सभी वर्गों में समान रूप से वितरित होता था।

संयुक्त राष्ट्र का **सतत विकास लक्ष्य SDG-9** है —**"उद्योग, नवाचार और अवसंरचना (Industry, Innovation and Infrastructure)" और रामायण**

रामायण में यह लक्ष्य विशेष रूप से **युद्ध और समुद्र सेतु निर्माण** में प्रकट होता है, जो **उद्योग**, **नवाचार** और **अवसंरचना** का आदर्श उदाहरण है| जहाँ **वानर सेना, भालू और अन्य जीव** मिलकर स्थानीय संशाधन, तकनीक, योजना और श्रम का सर्वोत्तम उपयोग करते हैं।

१. **समुद्र सेतु —**

बाँधा सेतु नील नल नागर, राम कृपा जसु भयऊ उजागर 6/3/7

यह **अवसंरचना (Infrastructure)** का अद्भुत उदाहरण है —

जहाँ प्राकृतिक संसाधनों और मनुष्य/वन्यजीवों की सामूहिक शक्ति को **समय प्रबंधन और स्थानीय संसाधन से कुशलता से निर्माण** में उपयोग किया गया था।

२. **नवाचार — असंभव को संभव बनाना**

दशयोजन विस्तीर्ण शत्योजन मायतम|

ददृशुर्देव गन्धर्वा नलसेतुं सुदुष्करम || व.रा. 6/22/76

वानर और भालू ने पत्थर उठाकर, अपनी शक्ति और चतुराई से समुद्र पर 100 योजन लंबा और 10 योजन चौड़ा **पुल पांच दिन में बनाकर नवाचार** किया, जो बहुत कठिन कार्य था, जो आज भी खोज का विषय बना हुआ है|

रावण जो सभी प्रकार से सक्षम था, वह भी आश्चर्य चकित हो गया था, और बोलता है - **बाध्यो बननिधि नीरनिधि, जलधि सिन्धु बारीस |सत्य तोयनिधि कंपति, उदधि पयोधि नदीस || समुद्र को बाँध लिया!१०** समुद्र के पर्यायवाची सुन्दरकाण्ड/5/दोहा

यह दर्शाता है कि **सृजनात्मक नवाचार (Innovation)** और **समान विचार वाले समूह की योजना** किसी भी बाधा को पार कर सकती है। यह **"Innovation for Development"** का सटीक उदाहरण है।

सारांश-

"रामायण में उद्योग, नवाचार और अवसंरचना केवल भौतिक नहीं, बल्कि सामूहिक बुद्धि, योजना और नैतिकता का संगम है।"

रामायण सिखाती है कि —

- **सशक्त टीमवर्क और संगठन** से बड़े कार्य संभव हैं।
- **संसाधनों का बुद्धिमतता पूर्ण उपयोग,** सतत विकास को सुनिश्चित करता है।
- **नवाचार और तकनीक** का उपयोग समाज और पर्यावरण कल्याण के लिए होना चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र का **सतत विकास लक्ष्य 10 (SDG-10)** है —**"असमानता में कमी (Reduced Inequalities)" और रामायण**

रामायण में यह लक्ष्य **समाज में न्याय, समान अवसर और सबको समान सम्मान** के माध्यम से व्यक्त होता है। रामराज्य को आदर्श इसलिए माना जाता है क्योंकि इसमें **जाति, वर्ग, धन या शक्ति के आधार पर किसी के साथ अन्याय नहीं किया गया।**

सभी के लिए समान अवसर और न्याय

दंड जतिन्ह कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज|

जीतहु मनहि सुनिअ अस, रामचंद्र कें राज || मानस 7/22/दोहा

अपराध थे ही नहीं, इसलिए **"दंड"** तो संतों के पास थे राजा के पास नहीं|

बाली को दंड और उसके बेटे अंगद को सेनानायक बनाना, सुगीव और विभीषण को राज्य, समान अवसर और न्याय के उदहारण है| जहाँ अपराध और भेद-भाव नहीं हो वहां न्याय और अवसर सभी को समान मिलते हैं|

जाति और सामाजिक भेदभाव का अंत

सब नर करहि परस्पर प्रीती, चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीति| मानस 7/21/2

रामराज्य में सभी लोग — चाहे **राजा, वानर, भालू, या आमजन** सभी समान नियमों और न्याय के अधीन थे और उनमें आपस में प्रेम था|

गरीब और वंचितों का संरक्षण

नहि दरिद्र कोउ दुखी न दीना, नहि कोउ अबुध न लच्छन हीना| मानस 7/21/6

रामराज्य में गरीबी और अभाव से जनता को दूर किया था। सामाजिक सुरक्षा और आर्थिक न्याय के माध्यम से असमानता कम की गई थी ।

सारांश-

"रामायण में असमानता में कमी = न्याय, समान अवसर और योगदान के आधार पर सम्मान"

रामराज्य में —

- कोई जाति, वर्ग या धन के आधार पर वंचित नहीं था,
- प्रत्येक व्यक्ति का श्रम और योगदान मूल्यवान था,
- और गरीब व वंचितों को संरक्षण और समान अवसर दिया गया।

संयुक्त राष्ट्र का **सतत विकास लक्ष्य SDG-11** है —**"टिकाऊ शहर और समुदाय (Sustainable Cities and Communities)" और रामायण**

रामायण में आदर्श और टिकाऊ शहर के कई उदहारण है जैसे **अयोध्या नगर, लंका नगरी, जनकपुर और चित्रकूट** के संदर्भ में देखने को मिलता है।

रामायण में शहर और समुदाय केवल भौतिक संरचना नहीं थे, बल्कि **सामाजिक, आर्थिक और नैतिक संतुलन** के साथ टिकाऊ और समृद्ध बने थे।

अयोध्या — सुरक्षित और आदर्श टिकाऊ शहर

वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सर्ग 5 में अयोध्यानगर का विस्तार से वर्णन मिलता है|

कोशलो नाम मुदित: स्फीतो जनपदो महान| श्लोक 5

लंका का वर्णन युद्धकाण्ड सर्ग 3 हनुमान द्वारा श्रीराम को लंका के बारे में विस्तार से बताना लंका की वैभवता बताती है|

सौवर्णस्तु महान्स्तास्या: प्राकारो दुष्प्रधर्षण: श्लोक 14

चित्रकूट में श्रीराम की पर्णकुटी – व. रा.अरण्यकाण्ड सर्ग 1

शरण्यं सर्वभूतानां सुसम्मृष्टजीरं सदा |

मृगैर्बभिराकीर्णं पक्षिसंधै: समावृतम || श्लोक 3

सीताजी द्वारा चित्रकूट में अपनी कुटी में रोज झाड़ा-बुहारी होती थी, अत: रामायण काल के नगर और ग्राम सुव्यवस्थित और स्वच्छ थे। नगर में हर व्यक्ति के लिए निवास, बाजार, जल और सुरक्षा सुनिश्चित थे।

यह दिखाता है कि **शहर का टिकाऊ होना केवल भवनों से नहीं, बल्कि व्यवस्था, स्वच्छता और सुरक्षा से होता है।**

सामाजिक न्याय और समुदाय का समावेश- स्थानीय लोगों की भागीदारी और उसने अच्छे जीवन स्तर के प्रयास चित्रकूट प्रवास के समय रामायण में मिलते हैं| यदि हम **श्री नरेंद्र कोहली की "राम कथा" पढ़ें इस दृष्टी से उन्होंने लिखा है|**

पर्यावरणीय संतुलन और स्वच्छता

टिकाऊ शहर = पर्यावरणीय संतुलन + प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण। स्थानीय संशाधनों से कुटीरों का निर्माण और जल, ऊर्जा का स्थानीय स्तर पर विवेक पूर्ण उपयोग रामायण में देखने को मिलता है|

SDG-11 के अनुसार, सुरक्षित और टिकाऊ शहर वही है जहाँ सभी लोग सुरक्षित, समान और सहभागिता से जुड़े हों। जिसका उदाहरण अयोध्या है|

सारांश-

"रामायण काल में टिकाऊ शहर और समुदाय = सुव्यवस्थित नगर + सामाजिक समावेश + पर्यावरणीय संतुलन + सुरक्षा और न्याय"

रामराज्य में —

- शहर संरचना सुव्यवस्थित थी,
- समुदाय सभी वर्गों का सम्मिलित और सहयोगी था,
- प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण सुनिश्चित था,
- और कानून और नीति से सभी सुरक्षित थे।

"जहाँ नगर सुव्यवस्थित और सभी नागरिक सुरक्षित हों, वही टिकाऊ शहर है।"

संयुक्त राष्ट्र का **सतत विकास लक्ष्य SDG-12** है —**"जिम्मेदार खपत और उत्पादन (Responsible Consumption and Production)" और रामायण**

रामायण में इसका आदर्श **संतुलित जीवन, संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और धर्म आधारित उत्पादन** के माध्यम से देखा जा सकता है। उपलब्ध साहित्य से उस समय कृषि और कृषि से सम्बंधित उत्पाद का उत्पादन और खपत थी, इसलिए वही यहाँ देखने को मिलता है| आज भी भारत में कृषी उत्पाद का महत्त्व कम नहीं है| **भारत और अमेरिका के टेरिफ विवादों का मुख्य कारण कृषि उत्पाद ही तो हैं|** रामायण में केवल भौतिक उत्पादों पर ध्यान नहीं देती, बल्कि इसमें **मानव जीवन, श्रम और पर्यावरण के संतुलन** पर जोर दिया गया है। **नरेंद्र कोहली जी की राम कथा** में इस विषय पर कुछ चर्चा मिलती है "**संघर्ष की ओर"** में वे कहते हैं, **लक्षमण जी और सीताजी** द्वारा वहां के स्थानीय लोगों को शिक्षा और युद्ध कला सिखाते थे जिससे वे आत्मनिर्भर और सुरक्षित जीवन जी सकें| चित्रकूट के आस-पास **कोयले और लाइम स्टोन** की खदाने बहुतायत में थीं और वहाँ राक्षसों का सामराज्य था, जो आम नागरिकों का शोषण करते थे उनसे मुक्ति का काम रामायण काल में हुआ था| इससे निर्णय पर पहुंचा जा सकता है कि रामायण काल में आदर्श जीवन यापन की व्यवस्था थी जिसमें उपभोग की मनाई नहीं थी परन्तु दुरूपयोग का कहीं जिक्र नहीं मिलता|

संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग

वन में रहने वाले लोग प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल और जंगल का विवेकपूर्ण उपयोग करते थे।

वे केवल आवश्यकतानुसार ही संसाधनों का उपभोग करते थे, जिससे **खपत को नियंत्रित करना और पर्यावरण का संरक्षण करना संभव होता था|**

उत्पादन का नैतिक और संतुलित दृष्टिकोण

यह बताता है कि **उत्पादन का उद्देश्य समाज कल्याण और आवश्यकता आधारित होना चाहिए। "सब नर करहिं परस्पर प्रीती"** अर्थात जिसके पास उपयोग से बचता था वह दूसरों को दे देता था, जिसे उस वस्तु की आवश्यकता हो फिर वह भोजन, अनाज आदि कुछ भी हो|

अस्त्र-शस्त्र का उल्लेख युद्ध में मिलता है इसका अर्थ हुआ उस समय इनका भी उत्पादन होता होगा परन्तु उनके निर्माण का वर्णन नहीं मिलता उसका कारण गोपनीयता हो सकता है| गलत व्यक्ति या देश को कोई घातक अस्त्र-शस्त्र को बनाने की विधि मिल जाए तो वह उसका दुरुपयोग कर सकता है, आज **पकिस्तान इसका उदाहरण है**, जो परमाणु बम की धमकी कभी भी, किसी को भी देता रहता है, शायद यही कारण होगा, जिसके कारण अस्त्र-शस्त्र के निर्माण का उल्लेख ग्रंथों में नहीं मिलता है|

भोजन और दैनिक खपत में संतुलन-

"सब नर करहिं परस्पर प्रीती" अर्थात जिसके पास उपयोग से बचता था वह उन्हें दूसरों को दे देता था जिसे वह वस्तु उपयोगी हो, फिर वह भोजन, अनाज आदि कुछ भी हो|

यह SDG-12 का संदेश है —

Responsible Consumption = आवश्यकता के अनुसार खपत और संसाधनों की रक्षा जो रामायण काल में भी देखने को मिलती है|

सारांश-

"रामायण में जिम्मेदार खपत और उत्पादन = आवश्यकता अनुसार संसाधन का प्रयोग + नैतिक और न्यायपूर्ण उत्पादन + पर्यावरणीय संतुलन।"

रामायण सिखाती है कि —

- खपत केवल आवश्यकता अनुसार हो,
- उत्पादन का उद्देश्य समाज और सब का कल्याण हो,
- संसाधनों का न्यायसंगत और सतत उपयोग हो।

"जहाँ खपत और उत्पादन विवेकपूर्ण और संतुलित हों, वहीं सतत विकास संभव है।"

संयुक्त राष्ट्र का सतत विकास लक्ष्य SDG-13) है —"जलवायु कार्रवाई (Climate Action)" और रामायण

रामायण में जलवायु और पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी का संदेश कई स्थानों पर मिलता है। यह केवल प्राकृतिक आपदाओं के संदर्भ में नहीं, बल्कि वन, जल स्रोत, जंगल और जीव-जंतुओं के संतुलन के माध्यम से प्रदर्शित होता है।

रामायण हमें यह सिखाती है कि मानव और प्रकृति का संतुलन समाज की स्थिरता और विकास का आधार है|

वन और जीव-जंतु का संरक्षण

वाल्मीकि रामायण अरण्यकाण्ड सर्ग ९ में सीताजी निरपराध प्राणियों को न मारने और **अहिंसा धर्म** का पालन करने के लिए **श्रीराम** से अनुरोध करती है|

प्राकृतिक आपदाओं और जलवायु का ज्ञान

रामायण काल में प्रकृति का संतुलन बना हुआ था, जिससे ऋतुएं अपने चक्र के अनुसार परिवर्तित होती थी

बरषा बिगत सरद ऋतू आई, लछिमन देखहु परम सुहाई | मानस 4/16/1

यह दिखाता है कि प्राकृतिक संतुलन बनाए रखना मानव और समाज के लिए अत्यंत आवश्यक है, जिसका रामायण काल में कठोरता से पालन होता था|

यह दिखाता है कि जलवायु परिवर्तन से बचाव के लिए सतत और विवेकपूर्ण जीवनशैली आवश्यक है।

सारांश-

"रामायण में जलवायु कार्रवाई = पर्यावरण का संरक्षण + संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग + प्राकृतिक संतुलन बनाए रखना।"

रामायण सिखाती है कि —

- प्राकृतिक संसाधनों का सम्मान आवश्यक है,
- मानव गतिविधि केवल तभी टिकाऊ है जब जलवायु और पर्यावरण संतुलित हों,
- और संतुलित जीवन ही समाज की स्थिरता और विकास की नींव है।

"जहाँ वन, जल और जीव सुरक्षित हों, वहीं जलवायु संतुलित और समाज टिकाऊ है।"

संयुक्त राष्ट्र का सतत विकास लक्ष्य SDG-14 — जल के नीचे जीवन (Life Below Water)और पृथ्वी पर जीवन (Life on Land) और रामायण

रामायण में यह संदेश वन, नदियों, समुद्र और जीव-जंतु के संतुलन के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप में मिलता है। रामायण यह सिखाती है कि मनुष्य का जीवन और धर्म तभी टिकाऊ है जब जल और पृथ्वी दोनों पर जीवन सुरक्षित और संरक्षित हो।

रामायण में सीताराम के स्वरूप को ही कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है –

सिय राम में सब जग जानी, करउँ प्रणाम जोरि जुग पानी|

यह संसार जिसमें **4 योनी, जलचर, जीव, पृथ्वी और आकाश** के जीव से से भरे हुए सारे जगत को ही श्रीसीताराम मय माना है, अर्थात उनकी रक्षा, सुरक्षा किस प्रकार होती होगी उसका अनुमान लगाना आसान है|

जल के नीचे जीवन — समुद्र और नदियों जीवों का संरक्षण

मानस के सुन्दरकाण्ड में श्रीराम विभीषण की सलाह मानते हैं और सागर को सुखाने की जगह उससे विनय करके रास्ता मांगते हैं जिससे समुद्र के जीव-जंतु सुरक्षित रहें|

कह लंकेस सुनहु रघुनायक, कोटि सिन्धु सोषक तव सायक|5//50/

यह SDG-14 का मूल संदेश है —

जल जीव-जंतु और समुद्री परिस्थितिकी का सम्मान करना और उनका संरक्षण करना चाहिए जिसका उदहारण रामायण में कई जगह मिलता है ।

पृथ्वी पर जीवन — वन और जीव-जंतु का संतुलन

श्रीराम सीताजी की खोज के समय वृक्ष, लता और वन्यजीवों से सम्मान से बात करते हैं, स्वयं कष्ट में हैं परन्तु उनको नुकसन नही पहुंचाते| अरण्यकाण्ड में इसके कई उदहारण मिलते हैं, यहीं **जटायु** का एक सशक्त उदहारण है, जिसे वह **पितृ तुल्य** सम्मान देते हैं |

पूछत चले लता तरु पाँती| 3/30/8

हे खग मृग हे मधुकर श्रेणी, तुम्ह देखी सीता मृगनैनी |3/30/9

तेहि की क्रिया जथोचित, निज कर कीन्ही राम 3/32/दोहा जटायु को पूर्ण सम्मान दिया |

यह SDG-15 का संदेश है —

जंगल और भूमि के सभी जीवों की रक्षा करना और जैव विविधता बनाए रखना यह सन्देश सतत विकास का लक्ष्य है जो रामायण में भी कई प्रसंगों में हमें देखने को मिलता है|

सारांश-

"रामायण में जल और भूमि दोनों पर जीवन = सतत पारिस्थितिकी, संतुलित संसाधन और सभी प्राणियों का सम्मान।"

रामायण सिखाती है कि —

- समुद्र और नदियों के जीव सुरक्षित रहें,
- जंगल, वन्यजन और भूमि का जीवन संरक्षित रहे,
- और मानव जीवन तभी टिकाऊ होगा जब जल और पृथ्वी दोनों पर जीवन सम्मानित और संतुलित रहे।

"जहाँ जल के नीचे और पृथ्वी पर जीवन सुरक्षित है, वहीं वास्तविक सतत विकास और रामराज्य संभव है।

संयुक्त राष्ट्र का सतत विकास लक्ष्य SDG-16 "शांति, न्याय और सशक्त संस्थाएँ (Peace, Justice and Strong Institutions)" है और रामायण

रामायण में यह लक्ष्य रामराज्य के आदर्श राज्यव्यवस्था में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। रामायण सिखाती है कि सच्चा शासन तभी संभव है जब न्याय, शांति और मजबूत संस्थाएँ हों।

न्याय और नीति का पालन

बाली का वध — न्याय और नैतिक शासन का उदाहरण

बाली ने जब अपने को मारने का कारण पूछा तो श्रीराम ने न्याय पूर्ण राज्य अयोध्या और राजा भरतजी का प्रतिनिधी अपने को बताया और अयोध्या के नियम को किष्किन्धा में न माने जाना, वध का कारण बताया |

राम ने बाली का वध इसलिए किया, ताकि रावण जैसी अन्यायपूर्ण शक्तियाँ नियंत्रित हो सकें। बाली अत्यंत शक्तिशाली था और अपनी शक्ति से अन्य वानरों और जन समुदाय को परेशान करता था। राम ने उसे नीति और न्याय के अनुसार, वन्य जीवन और समाज के हित के लिए पराजित किया।

हनुमान और सुग्रीव की जगह **अंगद को नेतृत्व देना** और **सशक्त संस्था** का निर्माण और अंगद को शांतिदूत बनाकर **संगठनात्मक शक्ति** को दृण करने के उदाहरण हैं|

यह प्रसंग SDG-16 में लक्ष्य और रामायण –

सशक्त संस्थाएँ = नेतृत्व और जिम्मेदारी का सही वितरण- अंगद को युवराज और अपनी सेना का सेनापति बनाना|
न्यायपूर्ण और पारदर्शी शासन के बिना शांति और विकास संभव नहीं- सुग्रीव का साथ दिया और बाली का वध किया|
शांति और समाज का सामूहिक संतुलन- राम का अंगद को लंका भेजना, युद्ध से इतर शान्ति का संदेश देने का प्रयास किया था।
सशक्त संस्थाएँ और प्रशासन- सुग्रीव और विभीषण को उनके राज्य वापिस कर दिए साथ में उनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी भी लेना इसका उदाहरण रामायण में मिलता है|
कर्तव्य और नैतिक शासन – सुग्रीव का साथ दिया, बाली जो उनका दुश्मन बना, उसी के पुत्र को सेनाध्यक्ष और शान्ति दूत बनाकर भेजना नैतिकता का आदर्श प्रस्तुत किया|

सारांश-

"रामायण में शांति, न्याय और सशक्त संस्थाएँ = नैतिक शासन + न्यायपूर्ण नियम + नागरिकों का सुरक्षित और सम्मानित जीवन।"

रामायण सिखाती है -

- न्याय और नीति सर्वोपरि थी,
- हर व्यक्ति सुरक्षित और सम्मानित था,
- संस्थाएँ निष्पक्ष और पारदर्शी थीं,
- और समाज का संतुलन कायम था।

"जहाँ न्याय, शांति और सशक्त संस्थाएँ हों, वहीं सतत विकास और रामराज्य संभव है।"

संयुक्त राष्ट्र का सतत विकास लक्ष्य SDG-17 और "लक्ष्यों के लिए साझेदारी (Partnerships for the Goals)" और रामायण

रामायण में सुग्रीव और विभीषण लक्ष्य साझेदारी, सहयोग और रणनीतिक गठबंधनों के माध्यम से स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

सुग्रीव के साथ साझेदारी — सामूहिक शक्ति और सहयोग

- राम ने रणनीति और नेतृत्व प्रदान किया,
- सुग्रीव ने वानर सेना और भूगोल का ज्ञान।

साझेदारी = संसाधनों, ज्ञान और शक्ति का संयोजन, जिससे बड़े लक्ष्यों की प्राप्ति संभव होती है।

विभीषण के साथ साझेदारी — नैतिक और रणनीतिक सहयोग

विभीषण ने अपने भाई रावण का विरोध करते हुए, श्रीराम के पास आता है और रामजी उसे स्वीकारते हैं। यह आज की अंतरराष्ट्रीय विदेश नीति को प्रतिपादित करता है| दुश्मन का दुश्मन हमारा दोस्त हो सकता है|

- साझेदारी केवल शक्ति नहीं, बल्कि ज्ञान और नैतिकता का संगम भी होना चाहिए।
- लक्ष्य की प्राप्ति में सभी हितधारकों का सहयोग महत्वपूर्ण है।

साझेदारी से प्राप्त लक्ष्य

- लंका विजय — राम, सुग्रीव और विभीषण की साझा रणनीति ने लक्ष्य हासिल किया।
- सामाजिक और नैतिक संतुलन — अंगद को समुचित सम्मान देकर किष्किन्धा में सम्मान और विभीषण की भागीदारी से न्याय और धर्म का पालन हुआ।
- सतत सहयोग —सुग्रीव और विभीषण को लंका का राजा बनाकर उसे अयोध्या का समर्थन दिलाना|

सारांश-

"रामायण में लक्ष्यों के लिए साझेदारी = शक्ति, संसाधन और नैतिकता का सामूहिक योगदान।"

राम, सुग्रीव और विभीषण का प्रसंग हमें यह सिखाता है कि —

- सहयोग से ही बड़े लक्ष्य पूरे होते हैं।
- साझेदारी में सशक्त नेतृत्व, नैतिक दृष्टिकोण और भरोसा जरूरी है।
- सही साझेदारी समाज और न्याय के लिए स्थायी परिणाम देती है।

शोध का निष्कर्ष :

रामराज्य के प्रत्यक्ष दर्शी नहीं हैं परन्तु चीन के कन्फ्युशियस और भारत के महात्मा गांधी को और उनके दर्शन को हमने देखा, सुना और पढ़ा है बल्कि आज भी उन्हीं के सिद्धांतों पर दुनिया चल रही है तो उनकी थोड़ी सी बात करते हैं, की वे रामायण के कितने करीब है|

रामायण, कन्फ्यूशियस और गांधी — सतत विकास का त्रिवेणी दर्शन

रामायण और संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्य दोनों का उद्देश्य समान है: **मानवता का कल्याण और पृथ्वी का संरक्षण।** इसी बिंदु पर जब हम पूर्व और आधुनिक विचारकों को साथ रखते हैं, तो हमें एक सार्वभौमिक सतत विकास का दर्शन देते हैं। **श्रीराम, कन्फ्यूशियस और महात्मा गांधी के विकास को देखते हैं -**

श्रीराम — मर्यादा के माध्यम से सतत्त विकास का आदर्श, जिसकी विस्तार से चर्चा ऊपर कर चुके हैं| श्रीराम ने **"मर्यादा पुरुषोत्तम"** बनकर यह सिखाया कि **मर्यादा ही सतत विकास का आधार** है।

कन्फ्यूशियस — धर्म या औचित्य (justification, propriety, Righteousness)के माध्यम से सामाजिक सामंजस्य

चीन के दार्शनिक कन्फ्यूशियस ने कहा था —

"If there is righteousness in the heart, there will be order in the nation."

(यदि हृदय में धर्म है, तो समाज और राष्ट्र में व्यवस्था होगी।)

उनकी शिक्षाओं में "ली" (मर्यादा), "ई" (औचित्य/धर्म) और "रेन" (मानवता) — ये तीन सिद्धांत समाज को स्थायी बनाने की नींव हैं। यह रामायण और सतत विकास की "धर्म, नीति और मर्यादा" की अवधारणा से अत्यंत मेल खाता है। तीनों ही यह कहते हैं कि **व्यक्ति का नैतिक आचरण ही समाज के स्थायित्व का आधार** है।

महात्मा गांधी — ग्राम स्वराज्य और आत्मनिर्भरता का मार्ग

महात्मा गांधी ने रामराज्य की कल्पना को आधुनिक युग में पुनर्जीवित किया था।

"मेरे स्वराज्य की परिकल्पना रामराज्य से भिन्न नहीं है।"

गांधीजी के **"ग्राम स्वराज्य"** का अर्थ था —

- आत्मनिर्भर गाँव,
- स्थानीय उत्पादन और रोजगार,

- सामाजिक समानता,
- पर्यावरणीय संतुलन,
- और नैतिक शासन।

यह वही सिद्धांत है जो श्रीराम समुद्र सेतु निर्माण के समय वानर-भालू सेना के सहयोग से, स्थानीय संसाधनों पर आधारित विकास में अपनाया था।
इस प्रकार, श्रीराम ने **मर्यादा को महिमावंत**, कन्फ्यूशियस ने **औचित्य/धर्म को सार्थक**, और गांधीजी ने **ग्राम स्वराज्य को जीवन्त** बनाया।
तीनों ने यह सिद्ध किया कि **सतत विकास केवल आर्थिक नहीं, बल्कि नैतिक और सांस्कृतिक संतुलन की प्रक्रिया** है।

समग्र दृष्टि

"विकास तभी स्थायी है, जब वह नैतिक, न्यायपूर्ण, आत्मनिर्भर और समरस हो।"

रामायण का **"सर्वे भवन्तु सुखिनः",**

कन्फ्यूशियस का **"Ren and Yi",**

और गांधी का **"सर्वोदय और ग्राम स्वराज्य",**

ये तीनों मिलकर UNO के Sustainable Development Goals (SDGs) का **नैतिक-दार्शनिक आधार** प्रस्तुत करते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि आधुनिक विश्व यदि इन तीनों शिक्षाओं को अपनाए तो वह न केवल आर्थिक प्रगति करेगा, बल्कि **नैतिक, सामाजिक और पर्यावरणीय संतुलन** को भी प्राप्त करेगा।

यही सच्चा सतत विकास है, और यही रामायण की शाश्वत प्रेरणा।

संदर्भित ग्रन्थ –

वाल्मीकि रामायण – ऋषी वाल्मीकि जी
श्रीराम चरित मानस- तुलसीदास जी
रामायण-मानवता का महाकाव्य श्री गुनवंत शाह
राम कथा -श्री नरेंद्र कोहली जी
मानस पीयुष – गीता प्रेस गोरखपुर
गूगल से सहयोग लिया | UNO की जानकारी
धन्यवाद

भगवान श्रीराम का अयोध्यावासियों को सार्वजानिक उद्बोधन

कैलाश चन्द्र शर्मा
(sharmakailash1958@gmail.com)

इस प्रपत्र का प्रसंग श्रीगोस्वामीतुलसीदासजी कृत श्रीरामचरितमानस के उत्तरकांड से लिया गया है. भगवान श्रीराम का श्रीलंका पर विजय के बाद अयोध्या में राज्याभिषेक हो गया है. वे राजाराम की भूमिका में हैं. एक बार राजाराम अयोध्यावासियों को बुलाते हैं और सार्वजनिक संबोधन के माध्यम से उपदेश देते हैं. भगवान ने मनुष्य जीवन को दुर्लभ कहा है और इसको ईश्वर की अहेतुकी कृपा का फल बताया है. मनुष्य जीवन की सार्थकता भक्ति में है जिसके लिए सरल स्वभाव का होना और मनकी कुटिलता का त्याग आवश्यक है. भगवान श्रीराम की ओर से यह दिव्य सन्देश हम सब के लिए है. हम सब को उनके अनुशासन में रहकर भक्ति के द्वारा परमानन्द और मोक्ष की प्राप्ति कर लेनी है.

1. भूमिका

इस प्रपत्र का विषयप्रसंग श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड से लिया गया है. भगवान श्रीराम श्रीलंका पर विजय पाप्त कर के अयोध्या आ गए हैं और उनका राज्याभिषेक हो गया है. एक बार श्री राम भगवान अयोध्यावासियों को संबोधित करते हैं और संदेश देतें हैं. यह संदेश मानव मात्र के लिए उपयोगी है. इसमें भगवान श्रीराम मनुष्य जीवन की विशेषता बताते हैं और उसके सदुपयोग और दुरुपयोग के बारे में आगाह करते हैं. भगवान ने भक्ति को उत्तम बताया है और जीवन का असली सदुपयोग बताया है. भगवान के सन्देश की मुख्य बातें यहाँ पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है.

2. मनुष्य शरीर का महत्व

जैसा कि ऊपर कहा गया, यह प्रसंग श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड का है जहाँ पर एक बार श्रीराम भगवान अयोध्यावासियों को बुलाकर संबोधित करते हुये कहते हैं: **"बड़े भाग मानुष तन पावा सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्ही गावा" उत्तरकाण्ड 42/4**. श्रीरामभगवान अयोध्यावासियों को मनुष्य योनि की महिमा के बारे में कहते हैं कि **"साधन धाम मोच्छ कर द्वारा" उत्तरकाण्ड 42/4.** अर्थात मनुष्य योनि साधन सम्पन्न है और मोक्ष का द्वार है. कहने का तात्पर्य है कि मनुष्य योनि दुर्लभ है और इसमें वह सब कुछ योग्यता है जिससे मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है.

आगे भगवान कहते हैं कि **"कबहुँक करि करुना नर देही. देत ईस बिन हेतु सनेही" उत्तरकाण्ड 43/3**. ईश्वर की अहेतुकी कृपा से मनुष्य शरीर मिलता है. अर्थात मनुष्य योनि कर्मों के आधार पर नहीं मिलती है बल्कि ईश्वर की अकारण कृपा से मिलती है. आगे भगवान मनुष्य शरीर को पानी के जहाज की उपमा देते हैं जिससे यह भव समुद्र पार किया जा सकता है.

"नर तनु भव बारिधि कहुं बेरो सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो
करनधार सद्गुरु दृढ़ नावा दुर्लभ साज सुलभ करि पावा" उत्तरकाण्ड 43/4.

अर्थात यह मनुष्य शरीर, संसार रूपी समुद्र को पार करने के लिए जहाज जैसा है और ईश्वर की कृपा रूपी सहयोगी पवन है तथा गुरु इस मजबूत जहाज का खेवनहार (कर्णधार या नाविक) है. यह सब दुर्लभ व्यवस्था है जो सहज ही प्राप्त हो गई है. अतः इस दुर्लभ अवसर का सदुपयोग कर लेना ही मनुष्य जीवन की सार्थकता है.

3. मनुष्य शरीर का उपयोग: क्या करना है?

श्रीभगवान मनुष्य जीवन के सदुपयोग के लिए उनके अनुशासन को मानने की बात कहते हैं**.**

"सोइ सेवक प्रियतम मम सोई. मम अनुसाशन माने जोई" उत्तरकांड 42/3.

जो अनुशासन का मार्ग श्रीभगवान ने बताया है वह भक्ति है.

"सुलभ सुखद मारग यह भाई भगति मोरि पुरान श्रुति गाई" उत्तरकाण्ड 44/1.

श्रीभगवान ने भक्ति को सुलभ और सुखद बताया है जिसकी गाथा वेद और पुराण गाते हैं.

"भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी बिनु सत्संग न पावहीं प्रानी" उत्तरकाण्ड 44/3.

भक्ति स्वतंत्र है अर्थात किसी पर आधारित नहीं है और सब सुखों की खान है. हर व्यक्ति को भक्ति करने की स्वतंत्रता प्राप्त है क्योंकि भक्ति स्वतंत्र है. किन्तु बिना सत्संग के इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता है.

साथ ही श्री भगवान ने एक गुप्त बात बताई है कि श्री शंकर भगवान के भजन के बिना श्रीराम की भक्ति अप्राप्त है. **"संकर भजन बिना नर भगति न पावई मोरि" उत्तरकाण्ड 45.** भगवान शिव के भजन का अर्थ है विकार रहित होना क्योकि भगवान शिव संहार के देवता हैं. अर्थात जब हम विकार रहित हो जाते हैं तो हम श्रीराम भगवान की भक्ति के योग्य हो जाते हैं.

श्रीभगवान बताते हैं कि भक्ति में जो कर्म और भाव समाहित हैं वे इस प्रकार हैं: सरल स्वभाव का होना, मन की कुटिलता का त्याग, किसी से बैर न करना, आशा न करना, अभय, यथालाभ में संतोष, नामजप में रति, और ममता, मद और मोह का त्याग. इस अनुसाशन में श्रीभगवान ने गुरु व द्विज की महत्ता एवं सेवा और सत्संग की अनिवार्यता बताई है.

"पुन्य एक जग महुं नहिं दूजा मन क्रम वचन विप्र पद पूजा" उत्तरकाण्ड 44/4

"सरल सुभाव न मन कुटिलाई जथा लाभ संतोष सदाई" उत्तरकाण्ड 45/1.

"बैर न बिग्रह आस न त्रासा सुखमय ताहि सदा सब आसा" उत्तरकाण्ड 45/3.

अतः मुख्यतः स्वभाव की सरलता होना, मन की कुटिलता का त्याग और यथा लाभ में संतोष, भक्ति के प्रमुख लक्षण हैं.

"मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह
ता कर सुख सोई जानइ परानंद संदोह" उत्तरकाण्ड 46.

आगे भगवान भक्ति की और स्पष्ट एवं सरल व्याख्या करते हैं कि उनके गुणों का गान और नाम जप करना तथा ममता, मद और मोह की निवृत्ति, असली भक्ति का मार्ग है, जिसमें परमानन्द की प्राप्ति हो जाती है. अर्थात जो भक्ति करता है वह परमानन्द का अनुभव जान लेता है.

4. मनुष्य शरीर का दुरुपयोग: क्या नहीं करना है?

भगवान यह भी बताते हैं कि मनुष्य शरीर पाकर क्या नहीं करना है.

"नर तनु पाइ विषय मन देही. पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं." उत्तरकाण्ड 43/1

यदि मानव शरीर पाकर विषय सुख में मन लगाया तो, यह ऐसे ही है जैसे कि अमृत को उलटकर विष को ग्रहण कर लिया. अर्थात केवल विषयों में मन लगाकर जीना, मनुष्य शरीर का दुरुपयोग है. अतः श्रीभगवान हमको मनुष्य जीवन के दुरुपयोग के प्रति सावधान करते हैं.

5. कर्मकी स्वतंत्रता

श्रीभगवान राम ने संदेश दिया और सुनने के लिए भी कहा लेकिन करने की स्वतंत्रता दी.

"सुनहु करहु जो तुम्हहि सोहाई". उत्तरकांड 42/2.

इसी प्रकार श्रीभगवान कृष्ण ने अर्जुन को भी सन्देश दिया है श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय में:

"इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया
विम्रश्येतद्शेशेण यथेच्छसि तथा कुरु" अध्याय" 18/63 (श्रीमद्भगवद्गीता)

श्रीभगवान की विनम्रता अद्वितीय है. सब कुछ कहने समझाने के बाद भी करने की स्वतंत्रता मनुष्य को देते हैं, चाहे रामावतार हो या कृष्णावतार. अतः मानव को अवसर मिलता है कि वह प्रेय मार्ग चुनता है कि श्रेय मार्ग. प्रेय मार्ग विषयों के माध्यम से संसार की ओर ले जाता है और श्रेय मार्ग भक्ति की ओर अर्थात ईश्वर की ओर ले जाता है. संसार के मार्ग से बार बार जन्म और मृत्यु का चक्कर लगता रहता है और भक्ति के मार्ग से मुक्ति और परमानन्द की प्राप्ति होती है.

6. सारसंक्षेप

इस प्रपत्र में भगवान श्रीराम के सार्वजनिक उद्बोधन, जो उन्होंने राज्याभिषेक के बाद अयोध्यावासियों को दिया, की संक्षिप्त व्याख्या करने का प्रयास किया गया है. यह उपदेश सार्वभोमिक महत्व का है और इसका मुख्य सन्देश मानव जीवन की दुर्लभता है और साथ ही इसके सदुपयोग के लिए श्रीभगवान राम का वचन भी है कि उनकी भक्ति करो और परमानन्द की प्राप्ति करो. उनकी भक्ति सबको सुलभ और सुखद है. उनकी भक्ति के लिए उनके अनुशासन को मानते हुए अपने विकारों को समाप्त करना है और परमानन्द को प्राप्त हो जाना है.

7. सन्दर्भ साहित्य

श्रीरामचरित मानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2017

श्रीमद्भगवद्गीता **(मोटे अक्षरवाली), गीता प्रेस, गोरखपुर, 2019**

The Ecology of Mind in the *Ramayana*: Mental Wellbeing and Sustainable Living (SDG 3)

Tulsee Giri Goswami
(goswamitulseegiri@gmail.com)

This paper explores how the Ramayana offers a rich framework for understanding and cultivating mental wellbeing, in ways that align with the United Nations Sustainable Development Goal 3 (Good Health and Well-Being). It argues that the epic portrays an "ecology of mind" — where psychological health, moral values, environmental harmony, and social relationships are deeply interwoven. Drawing on key events and characters in the Ramayana, the paper demonstrates how inner qualities such as emotional regulation, resilience, compassion, detachment, purpose, and ethical decision-making contribute not only to individual mental health but also to sustainable modes of living. The paper further examines how Ramayana-based counseling techniques (recently developed) and the lived examples of Rama, Sita, Hanuman, and others can inform modern mental health interventions and promote sustainable behaviors. The conclusion suggests a model for integrating these insights into education, mental healthcare, and policy, thereby bridging ancient wisdom and modern needs.

Keywords: Ramayana; Mental Wellbeing; SDG 3; Ecology of Mind; Sustainable Living; Indian Psychology; Resilience; Emotional Regulation

1. Introduction

In recent decades, there has been growing recognition that wellbeing is not only a matter of physical health but of psychological, emotional, and ethical dimensions. Simultaneously, sustainable development discourses have increasingly emphasized that environmental sustainability must go hand in hand with social and individual wellbeing. The United Nations SDG 3 calls for ensuring healthy lives and promoting well-being for all at all ages. Yet, in practice, modern life is marked by stress, alienation, overconsumption, mental health disorders, and a disconnect with nature and deeper values.

The *Ramayana*, one of the foundational epics of South Asia, offers a paradigm that can help redress this imbalance. Beyond its narrative of exile, adventure, conflict, and triumph, the *Ramayana* weaves together images of inner struggle, moral choice, relational harmony, and ecological respect. This paper proposes that the *Ramayana* can be read as a text of mental ecology — in which the inner mind (its states, choices, emotional flow) mirrors and interacts with the outer world (nature, society, moral order).

The aim of this paper is twofold:

1. To analyze key dimensions of mental wellbeing implicit in the *Ramayana*, situating these in relation to modern psychological concepts;
2. To propose how these dimensions can be mobilized in contemporary settings (education, counseling, sustainable living) to promote SDG 3 and related sustainable development goals.

Conceptual Framework: Ecology of Mind

The term *"ecology of mind"* (popularized in Western thought by Gregory Bateson, among others) refers to the interdependence of mental, social, and environmental systems. In this view, mental health is not just the absence of illness but the presence of harmony — internally (thoughts, emotions, values), relationally (family, community), and ecologically (our relation with nature and moral order).

In Indian thought, especially as represented in epics like the *Ramayana*, similar interconnections are foundational. The forest (*vana*) is not simply a backdrop for Rama's adventures; it is symbolic of a simpler, more harmonious mode of being. Mind (manas, chitta), emotion (bhava), detachment (vairagya), compassion (karuṇā), duty/dharma — all these are in constant interplay. Psychological disturbances like egoism, attachment, violence, jealousy are often mirrored in breakdowns of social order or environmental imbalance (e.g., ruinous battles, destruction, exile disruption).

The Rāmāyaṇa contains repeated exemplars of what modern psychology recognizes as adaptive mental processes: emotion regulation, purpose-driven action, relational support, resilience, and nature-based restoration.

Thus, in what follows, we draw on certain episodes and characters of the *Ramayana* to determine how the ecology of mind is depicted, and how that suggests paths for mental wellbeing and sustainable living.

Key Psychological Dimensions in the Ramayana

1. **Equanimity and Acceptance** — *Rāma's Composure on Receiving Kaikeyī's Demand*

When confronted with Kaikeyī's demand that his coronation be rescinded, Rāma's response is composed and decisive. His behaviour provides a model of acceptance without passivity: abiding by duty (dharma) while preserving moral agency. Valmīki's depiction is explicit:

एवमस्तु गमिष्यामि वनं वस्तुमहं त्वितः ।
जटाजिनधरो राज्ञः प्रतिज्ञामनुपालयन् ॥2.19.2॥

"Be it so. I shall go from here to the forest and live there with matted hair and deerskin, to keep the king's promise." (Vālmīki, Ayodhyā-kāṇḍa 2.19.2)

This stanza situates Rāma's disposition: duty (kartavya) and acceptance do not negate inner feeling (Valmīki elsewhere records Rama's private grief), but they channel emotional energy toward ethical action. Contemporary psychotherapy frames such re-appraisal and values-directed behaviour as central to resilience.

नाहमर्थपरो देवी लोकमावस्तुमुत्सहे ।
विद्धिमामृषिभिस्तुल्यं केवलं धर्ममास्थितम् ॥2.19.20॥

"O Devi, I am not attached to wealth or worldly life; know me as one established in dharma, like the sages." (Vālmīki, Ayodhyā-kāṇḍa 2.19.20)

This line famously expresses Rāma's perspective on material detachment. Importantly, Valmīki presents detachment not as apathy but as a morally motivated orientation: Rāma aligns himself with the life-of-the-sages (ṛṣi) insofar as his actions respond to ethical commitments. Modern constructs — especially Acceptance and Commitment Therapy (ACT) — resonate with this form of valued living wherein behaviour is guided by chosen values even amid distress.

चतुर्दश हि वर्षाणि वत्स्यामि विजने वने ।
मधुमूलफलैर्जीवन्हित्वा मुनिवदामिषम् ॥2.20.29॥

"For fourteen years I will dwell in the solitary forest, living like a sage, abstaining from meat, surviving on honey, roots and fruits." (Vālmīki, Ayodhyā-kāṇḍa 2.20.29)

This stanza frames the forest-life (vanavāsa) as a deliberate reduction of consumption and a return to minimal needs. The text's ethical minimalism is relevant to contemporary discussions on sustainable consumption (SDG 12). From a wellbeing perspective, nature-immersion and voluntary simplicity have measurable benefits for mental health (reduced rumination, lower physiological stress), aligning the epic's prescriptions with modern environmental psychology.

2. Resilience, Meaning, and Moral Agency — Sītā and Hanumān

Sītā's endurance in the Aśoka-vatika, her moral clarity under duress, and her refusal to capitulate to indignity exemplify an inner agency that refuses both despair and nihilism. Valmīki repeatedly shows Sītā engaged in dialogue with herself, the natural world, and with guest characters (Hanumān, Trijāta) in ways that reconstruct meaning amid suffering. Hanumān's role in the Sundara-kāṇḍa is illustrative of integrative, embodied action. His focused attention, self-effacing devotion, and practical problem-solving are archetypal models for purpose-directed action and agency. Psychological models of self-efficacy and behavioural activation find analogues in Hanumān's tasks: clear goal, graduated action, perseverant effort.

3. Detachment and Reflective Awareness — Rāma's Dialogue with Lakṣmaṇa

When Lakṣmaṇa expresses anger at Daśaratha's injustice, Rāma responds with a philosophy of reflective detachment — acting without attachment to outcomes, maintaining inner balance and dharma.

न मेऽभिलाषो राज्यस्य न मेऽभिलाषो सुखस्य वा।
धर्ममेवोपसेविष्ये ह्यधर्मो हि महाक्षयः॥ (**Ayodhyā Kāṇḍa 2.21.15)**

"I have no desire for kingship, nor even for pleasure; I shall serve only dharma, for adharma leads to great destruction."

This verse encapsulates *vairāgya* (detachment) and *viveka* (discernment) — two pillars of reflective equilibrium in Indian psychology. Detachment here is not withdrawal but **regulated desire** and **ethical clarity**. In sustainability discourse, this aligns with *consumption restraint* and *mindful moderation*, reflecting ecological ethics within mental self-regulation.

4. Reflection and Ethical Decision-Making — The Forest Council

Before crossing into exile, Rāma consults with Sītā and Lakṣmaṇa. The decision is reflective and dialogical, balancing personal duty, family, and environmental sensibility.

यत्तु मे हृदयं वृत्तं तदिदानीं निवेद्यते।
वनवासस्य समये मनो मे नातिविह्वलम्॥ **(Ayodhyā Kāṇḍa 2.40.7)**

"Now I disclose what is in my heart; though we must dwell in the forest, my mind is not agitated."
Rāma's deliberative tone models **ethical mindfulness** — reasoned reflection before action. His equipoise anticipates the *Bhagavad-Gītā*'s notion of *sthita-prajña* (steady wisdom). Psychologically, this is **metacognition** — awareness of one's mental states during decision-making, vital in counselling and emotional regulation.

5. Social Support, Community, and Relationships — *Bharata's Return and Brotherhood*
Bharata's refusal of the throne after Daśaratha's death represents social connectedness, integrity, and moral anchoring through community ties.

नाहं राज्यं न चाहं स्त्रीं न मे राज्ये स्पृहा क्वचित्।
भवत्वयं जनः सर्वो राममेवाभिपूज्यताम्॥ **(Ayodhyā Kāṇḍa 100.24)**

"Neither the kingdom nor women tempt me; let all the people honour Rāma alone."
"भरत बिहायहु कपट अघोरी। भइ परताप राम के तोरी॥" **(Ayodhyākāṇḍa, Doha 241)**
"Bharata cast aside all deceit and darkness — transformed by Rāma's radiant virtue."

Bharata's action demonstrates *seva bhāva* (selfless service) and *sangha-sārthakatā* (meaning through belonging). In psychological terms, this corresponds to **social support** and **collective moral identity**, both essential for wellbeing (SDG 3) and for sustainable communities.

6. Nature, Simplicity, and Forest Life — The Ecology of the Vana
The forest (*vana*) in the Rāmāyaṇa is a living moral space — an environment of austerity, learning, and ecological symbiosis. Rāma, Sītā, and Lakṣmaṇa's forest life models **voluntary simplicity** and **minimalist consumption**.

फलमूलाशनं नित्यं जटाचीरधरं तथा।
वने वसन्तमायान्ति दृष्ट्वा लोकाः सुखं लभेत॥ **(Ayodhyā Kāṇḍa 2.54.1)**

"Seeing them in the forest, living simply on fruits and roots, clothed in bark and matted hair, people felt a serene joy."
The aesthetic of forest life (*vanavāsa*) conveys not deprivation but sufficiency. The narrative evokes *santosha* (contentment) and *aparigraha* (non-hoarding). Both are foundational in Yogic and Buddhist psychology as well as sustainability ethics.
Empirical studies (e.g., Kaplan & Kaplan's "Attention Restoration Theory") corroborate that **exposure to nature** restores cognitive and emotional balance — a "biophilic wellbeing loop" that the Rāmāyaṇa intuited centuries ago.

7. Minimalism and the Austerity of Desire — Rāma and Sītā in the Hermitage
काष्ठं समादाय महानिलेन प्रसन्नचेताः सह सीतया च।
पर्णानि चादाय चकार शय्यां शुचिं स्नेहसंपन्नया॥ **(Araṇyakāṇḍa 3.11.23)**
"Gathering wood and leaves with serene mind, along with Sītā, he prepared a clean and loving bed of leaves."
"सुख मानहुँ परलोक सरीखा। सीत राम वन जीवन रीखा॥" **(Aranyakāṇḍa, Doha 12)**

"They found the forest life as blissful as heaven; for Sītā and Rāma, simplicity was sacred order."
This imagery of shared labour, care, and simple living demonstrates *saha-ādhāra* — mutual support through minimalism. It emphasizes **interpersonal attunement**, **mindful labour**, and **contentment**. Such simplicity is the psychological antidote to consumerist anxiety, aligning directly with sustainability goals.

8. The Forest as Therapeutic Ecology — *Hermits and the Healing of Mind*

तपोवनानि रम्याणि पश्यन्ति मुनिपुङ्गवाः।
वायुवेगैः प्रसन्नानि हृष्टा मृगपक्षिणः॥ **(Araṇyakāṇḍa 3.5.6)**

"The great sages gaze upon the delightful hermitages — refreshed by gentle winds, where beasts and birds rejoice."

Here the forest (*tapo-vana*) becomes a restorative ecology — where natural harmony mirrors inner balance. In modern psychological idioms, this represents **eco-therapy** or **nature-assisted wellbeing**. The Rāmāyaṇa thus integrates spiritual austerity with ecological mindfulness, modelling an ancient "green psychology."

2. Integrative Reflection

Together, these passages present an **ecological psychology** grounded in the epic's inner ethics. Detachment fosters clarity; reflection ensures moral action; community sustains purpose; and nature provides restoration. The combined outcome is *samatva* (equanimity) — a sustainable mental ecology.

These suggest that mental sustainability involves awareness of nature, limiting one's wants, leading a life aligned with ecological rhythms. This has direct relevance to sustainable living and consumption (SDG 12) as well as mental health.

Empirical Application: Ramayana-based Counseling & Mental Health Interventions

Recent scholarship has begun to operationalize these insights.

- A 2024 study, *"Development of a Ramayana-based Counseling Module for Persons with Common Mental Health Disorders"*, extracted over **432 counseling techniques** from narratives, anecdotes, and concepts across the seven *Kandas* of the *Ramayana*. Many of these are kinds of dialogues, reflective or morally framed narratives, episodes of suffering and moral courage that can be used therapeutically.
- The study also identified **89 techniques** specifically in distressful situations, suggesting characters often provide models for coping with grief, fear, conflict, moral dilemmas.

This indicates not only that the *Ramayana* has resources for mental health, but that these can be formalized as intervention tools: storytelling, narrative therapy, use of myth, moral exemplars, reflective discussion.

Comparison with Modern Psychological Constructs

We can map the *Ramayana's* psychological dimensions onto modern constructs:

Ramayana Dimension	Modern Psychological Concept / Theory	Implications for SDG 3 / Wellbeing
Emotional regulation (Rama's equanimity)	Mindfulness, emotion regulation; stress resilience	Reduced anxiety, depression; better coping
Moral agency & values (Sita, Rama, Hanuman)	Self-determination theory (autonomy, relatedness, competence)	Sense of purpose, psychological flourishing
Detachment, reflection	Cognitive reappraisal; mindfulness; wisdom psychology	Reduced rumination, attachment to negative patterns
Social relationships and support	Attachment theory; social support; community psychology	Lower loneliness; higher life satisfaction
Nature connectedness & simplicity	Ecopsychology; environmental psychology	Mental health benefits + sustainable behavior

Proposals for Integrating *Ramayana Ecology of Mind* into Practice

Based on the above, the following are suggestions for integrating these insights into modern life:

1. Education & Curriculum

Pedagogy*:* Educational modules can use short episodes (Ayodhyā 2.19; Aranya; Sundara) in social-emotional learning to teach reflection, conflict analysis, and values-based decision making. Classroom activities include guided role-plays (Rāma's exile decision; Sītā's moral choices), reflective journaling, and nature-based projects such as school tree planting linked to narrative projects.

2. Counseling & Mental Health Services

Clinical Practice: The Rāmāyaṇa-based counselling module (Kurhade et al., 2024) provides a template for culturally consonant interventions. A prototypical 8-session structure is described in the appendix: opening grounding (breath/body), narrative reflection on a selected episode, cognitive re-framing using epic metaphors, values mapping (dharma mapping), and behavioural activation (nature walks / service tasks). Emphasis is placed on non-didactic, client-centred adaptation: narrative use must be invitational rather than prescriptive.

3. Community and Relational Practices

Policy and Community: Cultural narratives can be ethically mobilised in public health and sustainability campaigns — for instance, connecting forest restoration initiatives to stories of vanavāsa and rāma's respect for forests. Such framing leverages cultural resonance to nudge sustainable behaviours while coupling them with mental health benefits (community connectedness, ritual, and shared purpose).

4. Sustainable Lifestyles and Policy

Encouraging simplicity and mindful consumption: use *Ramayana*'s lessons about detachment to counter consumerism.

Environmental policy can invoke cultural narratives (like the forest exile, respect for animals) to promote conservation, biodiversity, afforestation, sustainable resource use.

3. Challenges, Critiques, and Limitations

- **Historical & Cultural Context**: The *Ramayana* was composed in particular social, cultural, literary contexts. Some values or practices may not translate cleanly to modern secular, pluralist settings.
- **Interpretive Plurality**: There are many versions of *Ramayana* (Valmiki, Tulsidas, regional variants). Their emphases differ; some might foreground more devotional or metaphysical elements. Choosing versions and interpretations carefully matters.
- **Potential for Misuse**: Moral exemplars can be idealized in a way that may lead to unrealistic expectations, guilt, or suppression of legitimate emotions. Counseling applications need sensitivity and adaptation.
- **Empirical Validation**: The Ramayana-based interventions show promise, but rigorous empirical testing (controlled trials, outcome measures) remains limited. More research is needed to establish efficacy, boundaries, and culturally sensitive practices.

Model: "Rama Ecology of Mind" Framework
Drawing together these insights, we propose a working model that can be used in academic, therapeutic, educational, or community settings.

Components
1. **Awareness (Sati / Smṛti):** Self-awareness of thoughts, emotions, values.
2. **Balance (Sama / Equanimity):** Cultivation of emotional regulation, detachment, moderation.
3. **Purpose & Moral Agency:** Clarity on values, acting according to dharma or ethical purpose.
4. **Relational Support & Compassion:** Cultivating empathy, connection, community.
5. **Nature & Simplicity:** Engaging with nature, limiting excess, respecting environment.

Pathways

These components interact: awareness enables balance; moral agency shaped by purpose; relational support buttresses resilience; nature and simplicity reinforce detachment and ecological consciousness. This model can inform curricula, therapeutic modules, public policy, and individual practice.

4. Conclusion

Mental wellbeing is essential for sustainable development. The *Ramayana* offers a profound wisdom heritage for understanding how inner health (mind, emotions, values) and outer health (society, nature, environment) are inextricably linked. Through its portrayal of emotional regulation, moral courage, detachment, relational support, and nature-aligned living, the *Ramayana* articulates an ecology of mind that is both ancient and urgently relevant.

To realize SDG 3 ("Good Health and Well-Being") in today's world, we need more than technology and medicine — we need sustainable minds. Integrating lessons from the *Ramayana* into education, counseling, community practices, and policy can help cultivate individuals and societies resilient, compassionate, and ecologically attuned.

Further research is needed to test intervention designs, measure outcomes, and adapt practices cross-culturally. But the path is promising: ancient epic meets modern need.

5. References

1. Kurhade, C. S., Jagannathan, A., Varambally, S., Shivana, S., Sudhir, P., & Gangadhar, B. N. (2024). *Development of a Ramayana-based Counseling Module for Persons with Common Mental Health Disorders*. [Journal], [Volume (Issue)], [Pages]. SAGE Journals
2. Meena, J. K. (2025). Environmental Thought in the Vedas, Ramayana, and Mahabharata: A Review-Based Perspective. *Research HUB International Multidisciplinary Research Journal*, 12(1), 175–179. rhimrj.co.in
3. Suriya, L. (2024). Ecological Enlightenment: Insights from the Ramayana, Mahabharata, and Bhagavad Gita. *ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts*, 5(1). Granthaalayah Publication
4. Yadav, A. K., Chaudhary, A., Singh, N. K., & Shukla, M. (2023). Psychological Aspects of Ancient Indian Religious Texts. *International Journal of Indian Psychology*. IJIP
5. "Ramayana and Psychology: Exploring the Psychological Dimensions of Ramayana". (2018). *Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education*, 15(9), 445–448. Ignited Minds
6. Patel, P., & Chauhan, D. (2025). Exploring Human Values in the Epic Ramayana. *Journal of General Education and Humanities*, 4(2), 299–308. journal-gehu.com

Revisiting the Ramayana: Ancient Wisdom for Modern Sustainability

Rajesh Kumar Mishra
(Rmishra11@gmail.com)

The Ramayana*, one of India's most revered ancient scriptures, offers enduring guidance on living in harmony with nature, society, and the self. This paper revisits the* Ramayana*, reinterpreting its teachings through the lens of modern sustainability to reveal its enduring emphasis on balance, compassion, and moral responsibility. A three-dimensional analytical framework—encompassing environmental, social, and moral-spiritual sustainability—is developed to bridge ancient wisdom with contemporary sustainability discourse. Validated through a real-world case study, the framework underscores that the* Ramayana *transcends its spiritual context, offering a profound ethical foundation for sustainable development, ecological harmony, and compassionate governance in the modern world.*

1. Introduction

In recent years, sustainability has transcended its status as a mere environmental catchphrase to emerge as a collective vision for humanity's survival and flourishing. Governments, institutions, and individuals alike are awakening to the reality that our well-being depends on living wisely within the planet's ecological boundaries. The call for sustainable living is no longer optional—it is a moral and practical imperative that defines our shared future.

While global sustainability efforts gather momentum, the conversation remains dominated by technological innovation and policy reform. Rarely do we pause to consider that the roots of the crisis lie not merely in our systems but in ourselves. True sustainability demands more than scientific breakthroughs; it requires a transformation of values, a renewal of empathy, and a rediscovery of our kinship with the natural world. What is frequently overlooked is that sustainability, at its core, is not only an external challenge but an inner journey. It calls for a quiet revolution of consciousness—a reorientation of our perceptions of progress and our relationship with the living world. This subtler dimension of sustainability, grounded in ethics and awakened consciousness, has been part of India's living wisdom for millennia. The Ramayana shines at the heart of this heritage—not merely as a scripture of divine virtue, but as a profound meditation on balance, duty (dharma), and the rhythm of life in harmony with nature. Its verses continue to whisper the truth that sustainability begins not in policy, but in the purity of intention and the discipline of righteous living.

The Ramayana transcends the boundaries of religion and scripture, standing as a moral and ecological treatise on the art of right living. It envisions a world where reverence for nature, empathy for all beings, and ethical self-restraint form the very foundation of collective harmony. Rather than offering rigid commandments, it teaches through lived experience—revealing that balance with nature, compassion in conduct, and integrity in purpose sustain both the individual and the cosmos. In an age shadowed by climate anxiety and moral dissonance, the Ramayana offers not a retreat into nostalgia but a path forward—guidance for rebuilding a more conscious, compassionate, and ecologically balanced world. When revisited through the lens of sustainability, it emerges as far more than a spiritual text; it becomes a living philosophy that invites humanity to renew its bond with the Earth and rediscover the sacred rhythm that binds all life together.

2. Contemporary Relevance of the Ramayana

As the world confronts the harsh realities of climate change and its sweeping impact on every aspect of life, the call for sustainability awareness has never been more urgent—it now stands as a cornerstone of modern learning and human responsibility. The United Nations, through its Education for Sustainable Development (ESD) initiative, urges educators to nurture individuals who not only grasp the planet's ecological limits but also embody social equity and moral responsibility in their actions. Sustainability education cannot be confined to scientific understanding or prescribed behaviours alone; it must inspire a heartfelt recognition of our interdependence with Mother Earth and the universe at large. It must move the human heart, awakening empathy, integrity, and a profound sense of shared belonging with the world. Such inner transformation is often most effectively nurtured through cultural narratives and spiritual traditions that speak directly to our conscience and guide our actions. In this regard, the Ramayana holds extraordinary relevance. Its enduring values of self-restraint, compassion, truth, and reverence for nature align seamlessly with the very principles of sustainability, offering practitioners and educators a deeply human framework for nurturing both ethical and ecological awareness.

In the Ramayana, the natural world is not a background setting but a living, sacred presence. Forests, rivers, mountains, and animals are portrayed as integral parts of the human journey. The 'Vanavasa' - the period of exile endured by Shri Rama, Sita, and Lakshmana - is not only a testament to their sacrifice and resilience but also a profound example of living in close communion with nature, highlighting respect, harmony, and mindfulness in every interaction with the forest and its

inhabitants. Their life in the wilderness exemplifies simplicity, balance, and coexistence — virtues that modern sustainable living strives to reclaim. Rama's reverence for the forest deities, his heartfelt gratitude toward the river Ganga, and his respect for every living being reveal a profound ecological consciousness, one that resonates deeply with the principles of contemporary environmental ethics. The Ramayana thus invites us to see nature not as a resource to be exploited, but as a relationship to be honoured.

At the heart of the Ramayana lies the concept of dharma—the principle of righteous living. Dharma is not a rigid rule; it is a living philosophy that calls for harmony between one's duties, society, and the natural order. In sustainability terms, dharma can be understood as the moral compass that guides human actions toward balance and well-being. When Rama chooses exile over the throne, when Sita embraces simplicity over luxury, or when Hanuman displays humility despite his strength - these are not merely acts of devotion, but expressions of inner balance and ethical clarity. Each of these moments embodies sustainability in its truest sense: the ability to make choices that sustain harmony rather than disrupt it.

Nevertheless, despite its richness, the Ramayana is seldom explored as a source of knowledge on sustainability. Much of modern environmental thought in India has been influenced by Western paradigms of conservation and technology, leaving traditional narratives under-examined in formal education. By revisiting the Ramayana, we open a pathway to integrate Indigenous wisdom into the broader sustainability discourse. Such integration not only makes learning culturally relevant but also strengthens emotional and ethical engagement with environmental issues. When one sees sustainability reflected in Lord Rama's life and in His pastimes as depicted in the Ramayana, it becomes a lived value rather than an abstract concept.

Moreover, the Ramayana offers insights not just into ecological balance, but also into social and ethical sustainability. The Ramayana continually emphasises relationships based on respect, justice, and compassion—whether between rulers and citizens, humans and nature, or communities and individuals. Lord Rama's rule, often described as "Rama Rajya," represents an ideal of governance rooted in fairness, collective welfare, and ecological harmony. While the modern world struggles to reconcile economic development with environmental protection, the Ramayana offers an enduring model of leadership guided by moral responsibility and empathy. In this way, the Ramayana addresses the full spectrum of sustainability—environmental, social, and spiritual.

From an educational perspective, incorporating the Ramayana into discussions on sustainability can help bridge the gap between traditional learning and contemporary global goals. Storytelling, reflection, and value-based dialogues inspired by the Ramayana can foster a sense of purpose and belonging among its learners. Students can explore sustainability not only through scientific inquiry but also through moral imagination—by reflecting on what it means to live harmoniously, to respect life, and to act responsibly. This integrative approach aligns with the broader vision of holistic education, where intellectual understanding and moral development go hand in hand.

The relevance of revisiting the Ramayana today lies in its capacity to reawaken a sense of sacred relationship with the Earth and the environment. Amid climate change, growing consumerism, and social fragmentation, the Ramayana reminds us that sustainability is not just about survival but about living meaningfully. It invites us to restore balance within ourselves, within society, and with nature. By looking back at this ancient text, we are not retreating into the past but recovering the moral and spiritual intelligence that the future desperately needs.

Therefore, this paper aims to explore the Ramayana as a repository of sustainability values and to discuss how these insights can enrich modern education and public consciousness. It seeks to:

- Identify the ecological, ethical, and social dimensions of sustainability reflected in the Ramayana.
- Interpret these dimensions in the context of contemporary environmental and moral challenges; and
- Propose pedagogical approaches for integrating these values into sustainability efforts and awareness.

In doing so, the paper aims to demonstrate that the Ramayana is not only a work of literature or devotion but also a timeless guide to sustainable living—one that speaks to the human spirit as much as to the intellect. Revisiting the Ramayana is, therefore, an act of rediscovery: a way of reconnecting with the ancient wisdom that once held the threads of life, nature, and dharma (duty) together, and can still illuminate our collective journey toward a sustainable future.

3. The Concept of Sustainability in the Ramayana

The concept of sustainability has often been discussed within the frameworks of science, policy, and economics, but its moral and cultural roots are equally significant. Sustainable living is not a modern invention—it has deep roots in the world's ancient civilisations. Scholars such as Capra (2004) and Shiva (2015) argue that sustainability arises from a worldview that recognises interdependence between humans and nature, rather than separation. In traditional Indian thought, this interdependence is expressed through the idea of "Vasudhaiva Kutumbakam", which means that 'the world is one family.' This holistic perspective aligns closely with contemporary sustainability paradigms that emphasise balance, inclusivity, and shared responsibility.

India's spiritual and literary heritage abounds with ecological wisdom. Classical texts such as the Vedas, Upanishads, and the Bhagavad Gita advocate moderation, compassion, and reverence for nature. Nature is seen as sacred, and human beings are its caretakers rather than conquerors. The Ramayana extends this philosophy through its narratives of moral duty (dharma) and harmonious coexistence. The Ramayana presents nature as a living presence infused with divinity. The forests, rivers, and mountains are not inert backdrops but active participants in the characters' moral and emotional journeys. During Rama's Vanavasa (forest exile), the forest becomes both a sanctuary and a moral testing ground. The narrative portrays an ethic of restraint, humility, and gratitude toward the natural world—values central to environmental sustainability. For

example, Shri Rama's reverence for the Ganga before crossing the river illustrates a sense of sacred reciprocity, acknowledging nature's generosity with humility. Similarly, Mata Sita's close connection with the earth reflects fertility, resilience, and nurturing—the very principles that underpin ecological sustainability.

Thus, the Ramayana's portrayal of nature resonates with contemporary environmental thought, particularly the concept of deep ecology, which holds that all forms of life are inherently valuable. This connection between spiritual reverence and ecological sensitivity makes the Ramayana a helpful text for rethinking sustainability beyond the utilitarian logic of resource management. Unlike modern ecological ethics that often rely on legal or institutional enforcement, eco-dharma emerges from personal awareness and inner discipline. This spiritual foundation provides a more enduring motivation for sustainable behaviour.

According to UNESCO (2020), sustainability encompasses more than environmental preservation — it calls for social equity, cultural awareness, and ethical governance to ensure long-term well-being for both people and the planet. The Ramayana addresses these dimensions through its vision of Rama Rajya—a just and compassionate society guided by moral responsibility. Rama's leadership reflects the principle that governance must serve collective well-being rather than personal ambition.

In this sense, Rama Rajya represents an early model of social sustainability. It emphasises fairness, empathy, and accountability—values that contemporary governance systems often struggle to uphold. As Narayanan (2001) observes, the Ramayana's ethical framework promotes harmony, justice, and ecological responsibility—values that remain vital for addressing social inequality and environmental crises in the modern world. The relationships depicted in the Ramayana—between rulers and citizens, humans and non-humans, and individuals and communities—are grounded in mutual respect and responsibility. These interconnections embody what Sterling (2010) describes as a holistic understanding of sustainability: one that recognises the interdependence of all life forms and upholds balance and collective well-being as the essence of harmony. Sita's compassion for all living beings, Hanuman's humility despite power, and Rama's sense of justice exemplify values of moderation, empathy, and service that sustain both human and ecological balance.

The Ramayana provides a rich narrative foundation for sustainability education. Its stories appeal to emotion and imagination, making complex moral and ecological principles accessible to learners. Narayanan (2001) highlights that teaching traditional Hindu narratives, such as the Ramayana, can nurture ethical and ecological awareness as students reflect on the moral and environmental dimensions of the characters' actions. For instance, discussions around the Vanavasa episode can lead to reflections on minimalism, resource ethics, and respect for biodiversity.

Storytelling, reflective dialogue, and experiential learning - all central to the Ramayana's narrative style - resonate strongly with the transformative approaches promoted by Education for Sustainable Development (ESD). These methods enable learners to internalise sustainability, not merely as an external obligation, but as an intensely lived way of engaging with the world. In the Indian context, integrating such Indigenous wisdom into education helps bridge the gap between cultural identity and global challenges. Through this approach, the Ramayana becomes not merely an ancient story but a living pedagogical tool for building a sustainable mindset among students.

4. Contemporary Perspectives on Sustainability and Existing Gaps

Modern sustainability discourse often treats the ecological and ethical dimensions as separate, emphasising primarily external systems—technological, economic, or political. In contrast, the Ramayana presents an integrated perspective, grounding sustainability in moral and spiritual consciousness. It illustrates that genuine harmony emerges from the alignment of thought, action, and environment, highlighting that sustainable living is as much an inner practice of virtue and responsibility as it is an outward engagement with the world.

Capra (2002) observes that sustainable systems - whether ecological or social- depend on interconnection and feedback. The mirror of this insight can be seen in the Ramayana, which portrays cosmic order in which every being and action is part of a larger web of balance. Disruptions in moral conduct are shown to lead to environmental and social imbalance, much like today's ecological crises that stem from greed and excess.

By revisiting the Ramayana, modern scholars can rediscover frameworks that link environmental ethics with emotional and spiritual intelligence. This connection is crucial because sustainability challenges cannot be solved solely by science or policy; they require a transformation of human consciousness. Ramayana provides a transformative framework for sustainability, integrating moral and ecological guidance (Narayanan, 2001; Sterling, 2010). They illustrate that cultivating ethical awareness and ecological responsibility are mutually reinforcing disciplines.

Although there is growing interest in the intersection of traditional wisdom and sustainability, systematic studies that explore the Ramayana specifically through this lens remain limited. Much of the existing scholarship on the Ramayana has concentrated on its literary, religious, and socio-political dimensions (Lutgendorf, 2017; Goldman, 1984). In contrast, few studies have explored its ecological and educational relevance (Narayanan, 2001; Prime, 1992), though contemporary education for sustainable development frameworks (Tilbury, 2011) closely resonate with its underlying values. Such a gap presents a valuable opportunity to contribute to interdisciplinary scholarship by connecting the moral philosophy of the Ramayana with contemporary sustainability education. Revisiting Ramayana allows us to extract pedagogical models that are both culturally rooted and globally relevant. The present study, therefore, builds on the emerging discourse of eco-dharma and value-based education, positioning the Ramayana as a bridge between ancient wisdom and modern sustainability paradigms.

5. Methodological Approach

This study adopts a qualitative, interpretive approach to examine the sustainability values embedded in the Ramayana and their relevance to contemporary education. Rather than viewing the text solely as a devotional or religious scripture, the research treats it as a living philosophical document encompassing ecological, social, and moral dimensions of human life. The aim is to interpret how the Ramayana's narratives, symbols, and ethical principles can inform modern conceptions of sustainability and guide pedagogical practices that cultivate both ecological awareness and moral responsibility.

5.1 Research Design: The study employs textual analysis as its central methodological framework. Textual analysis allows for a close, reflective reading of primary texts to uncover underlying meanings, ethical patterns, and thematic continuities. In this case, the analysis focuses on key episodes and dialogues in the Valmiki Ramayana and Tulsidas's Ramcharitmanas that illustrate principles of harmony, restraint, compassion, and social justice. These themes are then interpreted in the light of contemporary sustainability concepts such as ecological balance, ethical leadership, and value-based education.

The approach is hermeneutic, meaning it seeks to understand the text within its cultural and philosophical context while drawing out meanings relevant to the present. Hermeneutics allows the researcher to move between the ancient worldview of the Ramayana and modern sustainability discourse, creating a dialogue between tradition and contemporary thought.

5.2 Sources of Data: The study relies on both primary and secondary sources: Primary Texts: The main sources are the Valmiki Ramayana (2022) and its translation (Goldman, 1984–2019) and the Ramcharitmanas (2022) by Goswami Tulsidas. Selected passages were examined for their philosophical and ecological insights, particularly those depicting human-nature relationships, ethical governance, and the moral struggles of key characters.

Secondary Sources, including various scholarly papers and commentaries, journal articles, and books that interpret the Ramayana's ethical and ecological significance, were reviewed. In addition, policy documents such as UNESCO's Education for Sustainable Development (ESD) Roadmap (2020) were consulted to align the study with current sustainability frameworks.

5.3 Development of Three-dimensional Analytical Framework: To bridge the ancient text with modern sustainability discourse, a three-dimensional analytical framework was developed. This framework draws on the triple pillars of sustainability—environmental, social, and moral-spiritual.

- **Environmental Dimension:** Analysis of nature-related episodes such as Rama's Vanavasa (forest exile), his reverence for rivers and trees, and Sita's symbolic link with the Earth. These were interpreted through concepts of ecological ethics and environmental stewardship.
- **Social Dimension:** Examination of the Ramayana's treatment of justice, compassion, and community welfare, particularly in the context of Rama Rajya and interspecies relationships (e.g., alliances with Hanuman and Jatayu). These narratives were compared with modern understandings of social equity and participatory governance.
- **Moral-Spiritual Dimension:** Exploration of the Ramayana's emphasis on dharma (righteous duty), self-restraint, and compassion as ethical foundations for sustainability. The focus was on understanding how these inner values contribute to outward harmony with nature/environment and society.

Each passage or theme was interpreted through this threefold lens, enabling a holistic reading that connects inner virtue with external balance—a key idea shared by both ancient and modern sustainability thought.

To demonstrate the practical applicability of the developed three-dimensional analytical framework, a real-life case study of a renowned institution was conducted. The study illustrates how lapses in ethical leadership—particularly favouritism at the top—can trigger governance failures, undermine organisational culture, and ultimately compromise the institution's long-term sustainability and equilibrium. It underscores that, without a steadfast commitment to ethical principles, even highly prestigious organisations risk losing internal balance, stakeholder trust, and the capacity to operate responsibly and sustainably over time.

5.4 Pedagogical Mapping: To make the findings educationally meaningful, a pedagogical mapping process was undertaken. This involved aligning identified sustainability values from the Ramayana with contemporary educational goals and teaching methods promoted under the Education for Sustainable Development (ESD) framework (UNESCO, 2020). For example:

- The concept of Vanavasa aligns with experiential learning and outdoor environmental education.
- The ethical dilemmas faced by Rama and Sita can be used in classroom discussions on moral decision-making and responsible citizenship.
- Stories of compassion, service, and humility offer frameworks for reflective practice and emotional learning.

This mapping aims to demonstrate that the Ramayana can serve as a pedagogical tool, fostering sustainability consciousness through storytelling, ethical inquiry, and cultural connection.

5.5 Validity and Limitations: Given that this is a qualitative interpretive study, validity rests on depth of analysis, consistency of interpretation, and cultural sensitivity. A validation exercise has been undertaken throughout to ensure

interpretations are cross-checked against established scholarly commentaries, aligning with traditional meanings while maintaining contemporary relevance.

However, the study acknowledges certain limitations. The Ramayana exists in numerous regional versions and interpretations across Asia, each with distinct cultural nuances. This research primarily focuses on the Valmiki and Tulsidas traditions in the Indian context. Future studies could extend the inquiry to Southeast Asian versions of the Ramayana, offering comparative insights into cross-cultural perspectives on sustainability.

5.6 Ethical Considerations: As the Ramayana is a sacred text for millions, the study approaches it with deep respect and cultural sensitivity. Interpretations are guided by the intent to understand and honour its teachings rather than impose modern constructs upon them. Interpretations are framed within ethical academic standards of respect for cultural heritage.

At its core, this methodological framework seeks to illuminate how the Ramayana embodies principles of sustainability that transcend time, culture, and context. Through a combination of textual interpretation, thematic analysis, case study examination, and pedagogical reflection, the study bridges the timeless moral wisdom of Ramayana with contemporary sustainability practice. In doing so, it reframes sustainability not merely as a technical or ecological challenge, but as a profoundly moral and spiritual endeavour—one in which the Ramayana continues to provide enduring guidance, offering insights that remain relevant to today's ethical and environmental dilemmas.

6. Case Study and Validation of the Analytical Framework

To demonstrate the practical validation of the proposed three-dimensional analytical framework, a real-life case study of a prestigious unit belonging to one of the world's most respected spiritual organisations was undertaken. The institution, founded with a noble vision by one of the organisation's senior-most leaders, was conceived as a world-class centre of spiritual learning and service. Through his relentless efforts, the founder attracted generous contributions from major donors, culminating in the grand inauguration of the institution—an event that drew widespread attention and admiration for its scale and purpose.

However, despite the institution's promising beginnings and the founder's lifelong record of integrity, the organisation has gradually slipped into governance and financial distress. Seeking to understand the root causes behind this decline, an in-depth inquiry was undertaken, guided by the ethical, social, and sustainability dimensions of the proposed framework. The following key observations emerged:

- **Nepotistic Appointments**: The institution's head appointed two of his close relatives to critical leadership positions. One was given charge of the institution's high-profile restaurant, while the other was placed in a key department.
- **Financial Misconduct:** Subsequent internal reviews revealed that both individuals were engaged in corrupt economic practices. Reports from subordinates indicated that inflated bills were routinely submitted for departmental expenses. In the restaurant's case, only about 30% of the daily income was being officially recorded, while the remaining earnings were allegedly misappropriated.
- **Culture of Fear and Silence:** The misconduct of these individuals became an open secret within the institution. However, staff members hesitated to raise concerns out of fear of retaliation from the institution's head, creating a culture of silence and moral compromise.
- **Failure of Ethical Leadership:** On multiple occasions, these individuals were found verbally abusing and intimidating staff members, sometimes using language wholly inappropriate for any workplace, let alone a spiritual organisation. Despite irrefutable evidence, including audio and video recordings, the institution's head took no disciplinary action, signalling tacit approval of such behaviour.
- **Suppression of Integrity:** A senior, widely respected member of the organisation, known for his foundational contributions, attempted to report the financial irregularities. Instead of being heard, he was abruptly dismissed from the institution. This incident deeply demoralised many senior members and eroded their faith in the leadership's fairness.
- **Institutional Contagion:** Witnessing the protection enjoyed by corrupt members, others across departments began engaging in similar practices, prioritising personal gain over collective welfare. Compliance with institutional procedures and even formal decisions recorded in meeting minutes began to decline sharply.
- **Erosion of Ethical and Financial Sustainability:** As ethical deterioration spread, financial irregularities multiplied. The institution, once admired for its discipline and integrity, began to accumulate debt. The overall organisational climate deteriorated, threatening not only operational efficiency but also the institution's sustainability and reputation.

6.1 Application of the Three-Dimensional Analytical Framework: When the above real-life case is analysed using the developed three-dimensional analytical framework for sustainability (as outlined in Section 5.3), a deeper understanding of the institutional decline emerges. Since the phenomenon has already manifested and is operational, the developed framework can be applied in reverse—tracing the breakdown of sustainability from its moral and spiritual core outward to the social and environmental dimensions.

- **Moral–Spiritual Dimension:** The Ramayana places paramount emphasis on dharma (righteous conduct), self-restraint, and compassion — virtues that form the moral foundation for any sustainable system. In the case under consideration, the head of the institution appears to have strayed from these core principles. His open favouritism toward close relatives,

despite their involvement in serious financial and ethical misconduct, reflects an apparent deviation from dharma. This moral failure eroded not only the institution's spiritual integrity but also the collective faith that once bound the community together. In essence, when the moral centre collapses, the entire spiritual ecosystem begins to lose its equilibrium.

- **Social Dimension:** From the social perspective, the selective application of justice and tolerance for wrongdoing profoundly damaged the institution's internal harmony. The community's trust in the leader — once regarded as a spiritual exemplar — was shaken. As the sense of fairness and transparency weakened, morale among the members declined sharply. Those who had dedicated years of sincere service felt alienated and disillusioned, resulting in widespread disengagement and resentment. This deterioration in social cohesion demonstrates how the violation of ethical norms at the top can quickly cascade through the institutional hierarchy, corroding collective purpose and collaboration.
- **Environmental (Institutional Ecosystem) Dimension**: The Ramayana teaches that internal virtue sustains external order — when inner values decay, outward disorder inevitably follows. In this case, the erosion of ethical discipline and moral restraint led to visible disharmony within the institutional environment. The growing corruption, indiscipline, and disregard for governance norms disrupted the organisation's functional balance. This internal disarray soon manifested as financial instability and operational decline, threatening the institution's and its affiliated community's very sustainability. Thus, the environmental or institutional ecosystem mirrored the moral disintegration within.

The analysis of this case through the three-dimensional lens clearly demonstrates that sustainability extends far beyond financial health or administrative efficiency. It is deeply rooted in moral consciousness, social justice, and ethical governance. The erosion of these foundational pillars in the case study underscores a universal truth: when ethical integrity falters at the leadership level, the entire system begins to unravel from within. Such moral lapses not only undermine the institution's credibility but also deplete its spiritual vitality, ultimately jeopardising its long-term sustainability and resilience.

7. Revisiting the Ramayana: An In-Depth Analytical Reaffirmation

7.1 The Analytical Lens: The Ramayana is far more than an ancient Indian scripture—it is a living text that encodes the moral, ecological, and cultural wisdom of an entire civilisation. Its worldview rests upon the principle of dharma, the cosmic and ethical order that sustains life. Through poetic storytelling, the Ramayana conveys a holistic vision of sustainability, where ethical human conduct, social harmony, and the natural world are intricately connected, reflecting a deep sense of sacred reciprocity.

The environmental and moral crises of our time reflect age-old human struggles between greed and restraint, arrogance and humility—conflicts that the Ramayana explores with remarkable depth and sensitivity. Revisiting this timeless epic through analytical lenses enables us to rediscover it as a living guide to balance and harmony, one that continues to offer profound insights for today's search for a sustainable and meaningful way of life.

This section interprets the Ramayana's teachings through a three-dimensional analytical framework encompassing environmental, social, and moral-spiritual sustainability. It further situates these insights within contemporary paradigms such as the Sustainable Development Goals (United Nations, 2015) and Education for Sustainable Development (UNESCO, 2020).

7.1.2 Environmental Sustainability: Living in Harmony with Nature: The Ramayana's ecological consciousness is revealed most clearly in the Aranya Kanda, where nature is portrayed as both teacher and companion. Rama's exile into the forest (Vanavasa) is not a fall from grace but a movement toward greater harmony with creation.

Rama's reverence toward rivers and trees reflects an ecological ethic of gratitude and restraint. Before crossing the sacred Ganga, he bows in prayer and seeks permission, symbolising the principle that nature must be approached with humility rather than domination. This ritual act anticipates today's environmental ethos of respecting natural boundaries and recognising the rights of rivers—a theme echoed in India's modern legal recognition of rivers as living entities.

Likewise, when Rama encounters the dying vulture Jatayu, he honours him as a noble being and performs his funeral rites—a profound act of ecological kinship. Jatayu's defence of Mata Sita against Ravana is not merely a chivalric act—it reflects what Dwivedi (1993) describes as the moral participation of all living beings in upholding dharma and resisting adharma, affirming the Hindu view of ecological and ethical interdependence.

Forests in the Ramayana are not wilderness to be conquered but sanctuaries of wisdom. The hermitages of sages such as Atri and Agastya exemplify a lifestyle of simplicity and ecological balance—characterised by minimal resource use, natural regeneration, and peaceful coexistence with all living beings. Their way of living mirrors the spirit of modern ecological principles like 'reduce, reuse, and recycle,' though grounded in a profound spiritual discipline rather than material efficiency (Chapple, 2000). In today's context, such passages of the Ramayana encourage educators to weave eco-literacy and ethical imagination into environmental studies, nurturing empathy for nature as a living partner rather than a passive resource (UNESCO, 2020).

7.1.3 Social Sustainability: Justice, Equity, and Collective Harmony: Social sustainability in the Ramayana is embodied in Rama Rajya—the vision of a just, compassionate, and inclusive society. The essence of Rama Rajya lies not in political control but in dharma-based governance that ensures the welfare of all beings.

The Ramayana states that during Lord Rama's reign, there was no sickness, no premature death, and no sorrow among the people. All lived in harmony and righteousness. Such an ideal mirrors the Sustainable Development Goals' vision of social equity, collective well-being, and lasting peace (United Nations, 2015). Rama's model of leadership—anchored in ethical judgment, empathy, and accountability—offers timeless lessons in sustainable governance (Sharma, 2016).

Even when confronted with personal anguish, such as his separation from Sita, Rama places public duty above emotional attachment. This act of moral restraint reflects the principle of intergenerational responsibility, which prioritises the collective welfare of society over individual desires. The downfall of Ravana, on the other hand, represents the collapse of unsustainable governance. His kingdom, though materially prosperous, is spiritually bankrupt—its greed and exploitation leading to destruction. The contrast between Rama Rajya and Ravana Rajya symbolises the moral difference between sustainability and unsustainability—between governance guided by balance and that driven by excess.

Moreover, the *Ramayana* embodies inclusivity and collaboration that transcend social and cultural boundaries. Alliances with the Vanaras and Ravana's brother Vibhishana illustrate cross-species and cross-cultural cooperation, while Rama's friendship with Hanuman exemplifies mutual respect and equality across realms. These narratives offer valuable lessons for modern civic education, encouraging empathy, appreciation for diversity, and cooperative problem-solving—fundamental principles of social sustainability (UNESCO, 2020).

7.1.4 Moral and Spiritual Sustainability: Dharma as the Inner Compass: At its heart, the Ramayana teaches that sustainability begins not in external systems but in inner transformation. The concept of dharma operates as a moral compass, aligning human action with cosmic balance.

On many occasions, the Ramayana explicitly connects dharma with ecological and cosmic stability—an ancient articulation of sustainability as moral responsibility. Rama's life exemplifies dharma through truthfulness, self-restraint, and compassion. His exile represents the acceptance of personal loss for collective good—a principle mirrored in the modern ethic of sustainable sacrifice. Sita, as Bhumija (daughter of the Earth), personifies resilience and ecological consciousness. Her return to Earth at the end of the Ramayana symbolises nature's cyclical renewal and the moral consequences of human action.

Sita's plea illustrates that moral integrity and compassion are foundational for living in harmony with nature. This resonates with broader eco-theological perspectives, which suggest that spiritual disconnection often underlies ecological degradation (Berry, 1999). In contemporary education, such narratives from the Ramayana provide a rich resource for value-based sustainability learning, fostering not only awareness but also ethical reflection, mindfulness, and ecological empathy. By engaging students in reflective dialogues on the ethical dilemmas faced by the Ramayana's characters, educators can encourage the internalisation of sustainable attitudes and behaviours, bridging ancient wisdom with modern environmental consciousness.

7.2 Integrating Ramayana Ethics into Modern Education: Integrating the Ramayana into sustainability curricula can enrich both moral and environmental education. Its narratives can be used to teach ethical leadership, social justice, and ecological care through story-based learning. For instance:

- The Vanavasa episode can inspire experiential outdoor education focused on simplicity and ecological connection.
- Rama's adherence to dharma under adversity can stimulate classroom discussions on moral decision-making.
- Sita's identification with the Earth can be explored in environmental ethics courses as a metaphor for planetary stewardship.

Such storytelling promotes transformative education, where learners move beyond memorising sustainability facts to embodying them as values (UNESCO, 2020).

7.3 Relevance to Contemporary Sustainability Discourse: Modern sustainability frameworks often focus on scientific and policy solutions. Nevertheless, as the Ramayana reminds us, sustainability is also an ethical and spiritual practice. Environmental degradation arises not only from technological misuse but also from moral imbalance—manifested in greed, ego, and ignorance—aligning with Berry's (1999) argument that spiritual disconnection underlies ecological crises.

The Ramayana offers enduring guidance through the cultivation of humility, moderation, and interconnectedness. Rama's life of balance resonates with SDG 12 (Responsible Consumption and Production), while the vision of Rama Rajya exemplifies SDG 16 (Peace, Justice, and Strong Institutions) (United Nations, 2015). These parallels highlight that ancient wisdom and modern sustainability share a common essence: respect for all life, equity among beings, and harmony between the external environment and inner consciousness.

7.4 Reflections on the Analytical Findings: The outcomes of this section's in-depth analyses reaffirm that the Ramayana articulates a holistic ethic of sustainability that seamlessly connects environmental, social, and spiritual well-being. Environmental stewardship is reflected in the reverence for forests, rivers, and all forms of life. Social sustainability finds its living expression in the compassionate governance of Rama Rajya, where justice, equity, and the welfare of all form the foundation of societal harmony. Moral and spiritual sustainability, in turn, emerges from steadfast adherence to dharma, the practice of self-restraint, and the cultivation of universal compassion. Integrating these timeless teachings into contemporary education can cultivate a deeper, consciousness-based approach to sustainability—one that goes beyond mere compliance to inspire ethical and mindful action.

8. Conclusion

The Ramayana continues to resonate across generations because its wisdom transcends time. Beneath its poetic grandeur lies a vision of life guided by balance, restraint, and compassion—the very principles that modern sustainability seeks to uphold. The Ramayana illustrates that ecological harmony, social justice, and moral integrity are not separate domains but interconnected threads of the same cosmic fabric. Rama's dharma extends beyond personal duty to embrace universal well-being, embodying a profound ethic: that human actions should sustain and nurture life rather than exploit it.

The analyses using the developed three-dimensional analytical framework of sustainability reveal that the Ramayana embodies all these three interwoven dimensions of sustainability:

Environmental Sustainability – expressed through reverence for forests, rivers, and all forms of life. Rama's interactions with nature exemplify ecological humility, reciprocity, and responsible stewardship.

Social Sustainability – realised through Rama Rajya, where governance is guided by justice, inclusivity, and compassion for all beings.

Moral-Spiritual Sustainability – anchored in dharma, emphasising self-restraint, empathy, and moral awareness as the inner foundation for external harmony.

Together, these dimensions constitute a comprehensive ethical framework. In today's fragmented world, where sustainability is often reduced to technological solutions or policy measures, the Ramayana reminds us that lasting balance must begin in consciousness. Environmental crises, therefore, are not merely scientific or technical failures; they reflect a more profound disconnection from nature, community, and self.

The Ramayana also resonates deeply with the United Nations' Sustainable Development Goals (SDGs). For example:

SDG 12: Responsible Consumption and Production align with Rama's practice of moderation and simplicity.

SDG 16: Peace, Justice, and Strong Institutions reflects the ethical governance of Rama Rajya.

SDG 15: Life on Land is exemplified by the reverence for forests and animals portrayed in the Aranya Kanda.

By revisiting the Ramayana, we see that sustainability is not a contemporary invention, but a rediscovery of timeless wisdom encoded in humanity's moral and cultural memory, bridging the ancient and the modern.

At its core, the Ramayana calls for a return to balance—both within oneself and with the world at large. Its timeless wisdom reminds us that technological advancement without ethical grounding can lead to ruin, much like the downfall of Ravana's Lanka. True progress, therefore, emerges when human ambition is guided by moral clarity, tempered by ecological humility, and anchored in a deep respect for life.

By reinterpreting the Ramayana not as a relic of the past but as a living guide for contemporary challenges, we uncover a timeless truth: true sustainability springs not from policies or technologies, but from the cultivation of consciousness. In this light, the Ramayana stands as an enduring teacher—urging humanity to tread lightly on the earth, to act with empathy and integrity, and to recognise that caring for the planet is not merely a responsibility, but a sacred duty woven into the very fabric of life.

9. Recommendations

The actual relevance of the Ramayana today lies in how its values can be reinterpreted and reapplied through education, public consciousness, and policy frameworks. The following recommendations propose ways to integrate this wisdom meaningfully, without religious dogma, into sustainability education and practice.

- **Integrating Ramayana-Based Values into Education for Sustainable Development (ESD):** The Ramayana offers a robust narrative framework for teaching sustainability. Educators can design interdisciplinary modules linking literature, ethics, and environmental science through their stories. Its examples can be as follows:

Ecological Learning: The Vanavasa episodes can be used in environmental studies to discuss forest conservation, resource ethics, and the emotional connection between humans and nature.

Ethical Leadership: Rama's conduct and decision-making processes can be explored in civic and management studies as case studies in moral leadership and responsible governance.

Compassion in Practice: Sita's ecological symbolism and Hanuman's selfless service can inspire reflection activities and student projects on empathy-driven sustainability action.

Through such integration, learners can connect values and action—the core goal of UNESCO's ESD framework (UNESCO, 2020). Story-based pedagogy also supports transformative learning, enabling students to internalise sustainability as lived ethics rather than abstract knowledge.

- **Promoting Value-Based Environmental Education:** Modern environmental education often focuses on statistics, laws, and climate science, but lacks the emotional and ethical grounding that drives real behavioural change. The Ramayana can fill this gap by reintroducing reverence for nature as an educational principle. Activities such as storytelling sessions, reflective journaling on ecological empathy, and community tree-planting linked with Ramayana verses (e.g., Rama's prayers to rivers) can strengthen students' spiritual connection with the environment. This approach bridges science with culture, creating a holistic sustainability consciousness.
- **Leadership and Governance Training Based on Rama Rajya Principles:** The governance ideals of Rama Rajya - accountability, compassion, equity, and moral restraint - can inform contemporary leadership training, especially in public administration, corporate ethics, and community management. Workshops and training programs can draw parallels between Rama Rajya and good governance models that prioritise collective welfare over personal gain. Such an

approach can enrich ethics education by connecting global policy frameworks (like SDG 16) with Indigenous moral heritage.

- **Encouraging Research and Comparative Studies:** Universities and research institutions can promote interdisciplinary projects exploring ancient Indian texts and sustainability, comparing the Ramayana with other world epics such as the Odyssey, Popol Vuh, or Epic of Gilgamesh to trace universal ecological wisdom traditions. Such comparative inquiries can expand the global conversation on sustainability beyond Western frameworks, demonstrating that traditional knowledge systems offer rich ethical resources for planetary well-being.
- **Policy Inclusion and Cultural Awareness:** At the policy level, cultural narratives like the Ramayana can complement national sustainability strategies by reinforcing ethical and spiritual motivation. Awareness campaigns, public exhibitions, and community programs themed around "Ramayana and Ecology" can promote cultural pride while inspiring behavioural change. Environmental policy documents could also include references to traditional ecological wisdom—such as forest ethics from the Aranya Kanda—to demonstrate continuity between heritage and modern conservation efforts.

10. References

1. Berry, T. (1999). The Great Work: Our Way into the Future. New York, NY: Harmony/Bell Tower.
2. Capra, F. (2004). The Hidden Connections: A Science for Sustainable Living. Anchor Books.
3. Chapple, C. K. (2000). Hinduism and Ecology: The Intersection of Earth, Sky, and Water. Harvard University Press.
4. Dwivedi, O. P. (1993). Human Responsibility and the Environment: A Hindu Perspective. Journal of Hindu-Christian Studies, 6 (1), 19–26.
5. Goldman, R. P. (Trans.). (1984–2019). The Ramayana of Valmiki: An epic of ancient India (Vols. 1–7). Princeton University Press.
6. Lutgendorf, P. (2017). Hanuman's Tale: The Messages of a Divine Monkey, Oxford University Press.
7. Narayanan, V. (2001). Water, wood, and wisdom: Ecological perspectives from the Hindu traditions. Daedalus, 130(4), 179–206
8. Prime, R. (1994). Hinduism and Ecology: Seeds of Truth. London, M.B. Publishers
9. Sharma, R. (2016). Leadership Lessons from the Ramayana. Indian Journal of Management and Spirituality, 4(2), 45–56.
10. Shiva, V. (2015). Earth Democracy: Justice, Sustainability, and Peace. North Atlantic Books.
11. Sterling, S. (2010). Learning for resilience, or the resilient learner? Towards a necessary reconciliation in a paradigm of sustainable education. Environmental Education Research, 16(5–6), 511–528. https://doi.org/10.1080/13504622.2010.505427
12. Tilbury, D. (2011). Education for Sustainable Development: An Expert Review of Processes and Learning. UNESCO.
13. Tulsidas, Goswami (2022), Shri Ramcharitmanas, (Commentary: Hanuman Prasad Poddar), Gita Press.
14. United Nations. (2015). Transforming our world: The 2030 agenda for sustainable development. United Nations. https://sdgs.un.org/2030agenda
15. UNESCO. (2020). Education for Sustainable Development: A roadmap. Paris: United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation. https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000374802
16. Valmiki, Maharshi (2022), Shrimad Valmikiya Ramayan (Part 1 & 2), Gita Press, Gorakhpur

रामचरितमानस में करुण रस

अम्बे कुमारी
मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार
(kumarianbe@gmail.com)

रामचरितमानस मानवता का महाकाव्य है। इसके नायक राम जीवन के हरेक प्रसंगों हेतु प्रासंगिक हैं। राम की यात्रा नर से नारायण की यात्रा है। यह इस मृत्युलोक में भी स्वर्ग उतार लाने की महायात्रा है। घोर कष्टों में भी अपार धैर्य का संगम है। राम के जीवन का हरेक पहलू हमें अपना लगने लगता है, क्योंकि राम के जीवन में जितने दुःख हैं वह दुःख इस धरती का प्रत्येक प्राणी पाता है परन्तु फिर भी राम अपने जीवन में संतुलन कायम रखते हैं और मर्यादा के चरम शिखर पर आरूढ़ होते हैं। इसी मर्यादा की महायात्रा है -- राम का चरित्र ,राम का जीवन।

1. प्रस्तावना

रामचरितमानस मानव जीवन के हरेक पहलुओं का गान करनेवाला अद्भुत महाकाव्य है। इसके नायक राम हैं जो अपने शक्ति , शील एवं सौंदर्य के कारण जन - जन के हृदय में व्याप्त हैं। राम का सम्पूर्ण जीवन अथाह कष्टों और अपूर्व धैर्य से भरा पड़ा है। जिस कारण रामचरितमानस में हमें करुणा का महान सागर लहराते दिखता है। एक राजकुमार होकर भी राम का चौदह वर्षों तक जंगल के कष्टों को झेलना हमारे मन को झकझोर जाता है एवं हमारे हृदय को करुणा से आप्लावित कर जाता है। राम का जीवन केवल कष्ट हीं नहीं अपितु कष्टों में भी संतुलन कैसे साधा जाये , यह सीख दे जाता है। राम से मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम बनने की महायात्रा में राम को असाधारण विपत्तियाँ झेलनी पड़ती हैं जिनके कारण राम का जीवन करुणा के महासागर में गोते लगाने लगता है। प्रेम और करुणा के विस्तार की महागाथा है -- राम का जीवन।

2. विस्तार

राम का जन्म मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में इस धरा पर हुआ। उन्होंने अपने जीवन में अथाह विपत्तियाँ झेलीं पर रंचमात्र भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने अपने जीवन से सिखलाया मनुष्य को कष्टों से विचलित नहीं होना चाहिए। राम एक राजकुमार थे , राजसी वैभव में पले - बढ़े थे परन्तु किशोरावस्था पार करते हीं उन्होंने फिर कभी खुले मन से राजसी वैभव का सुख नहीं भोगा। रामचरितमानस में करुणा की धारा राम वनगमन के साथ हीं प्रवाहित होने लगती है। सर्वप्रथम राजा दशरथ राम वनगमन पर व्यथित हो उठते हैं। वे विक्षिप्त - से हो उठते हैं ---

" राम राम रट विकल भुआलू। जनु बिनु पंख विहंग बेहालू।
हृदय मनाव भोर जनु होइ। रामहि जाइ कहै जनि कोई। "[1]

फिर माता कौशल्या की भी वहीं दशा होती है। वे अपने पुत्र के अचानक वन जाने के समाचार को सह नहीं पातीं। उनका मन व्याकुल हो जाता है --

" कही न जाइ कछु हृदय विषादू। मनहुँ मृगी सुनी केहरि नादू।
नयन सजल तन थर - थर काँपी। मजाहिं खाइ मीन जनु मापी। "[2]

राम के वन जाने की बात सुनकर सीता भी बहुत व्याकुल हो जाती हैं , और बिलख कर कहतीं हैं--

" चलन चहत वन जीवननाथु। केहि सुकृति सन होइहिं साथु।
की तनु प्राण की केवल प्राणा। विधि करतबु कछु जाई न जाना। "[3]

अंततः राम सबको अचेत कर चल देते हैं। सर्वत्र वियोग का भयावह बवंडर उठता है –

"राम चलत अति भयउ विषादू। सुनि न जाइ पुर आरत नादु।
कुसुगन लंक अबध अति सोकू। हरष विषाद बिबस सुरलोकु। "[4]

राम वियोग में अयोध्या अति भयंकर प्रतीत होती है। करुणा का चरम ज्वार उफनाता दिखाई पड़ता है। राम वियोग का दुःख प्रजाजनों के लिए असहनीय हो जाता है। यह वह स्थिति हो जाती है जिसका वर्णन करना संभव नहीं है ---

" लागति अवध भयावनि भारी। मनहुँ कालराति अंधियारी
घोर जन्तु सम पुर नर - नारी। डरपहि एकहिं एक निहारि।
घर मसान परिजनु जनु भुता। सुत हित मीत मनहुँ जमदूता।"[5]

राम के वियोग में सब चित्र जैसे जहाँ - तहाँ खड़े हैं इससे अधिक कारुणिक अवस्था और क्या हो सकती है --

"राम वियोग विकल सब ठाढ़े। जहँ तहँ मनहुँ चित्र लिखि काढ़े। "[6]

राम के वियोग में पशु भी दुखी हैं। राम के रथ के घोड़े खाना - पीना छोड़ देते हैं। यह भी एक कारुणिक प्रसंग है --

" नहिं तृण चरहिं न पियहिं जलु मोचहिं लोचन बारि।
व्याकुल भए निषाद सब रघुबर बाजी निहारी। "[7]

फिर राम वियोग में तड़पकर दशरथ जी के शरीर छोड़ने पर करुणा की असीम गंगा प्रवाहित होने लगती है जो पाठकों को सहज हीं आंसुओं से सराबोर कर जाती है --

"हा रघुनन्दन प्राण पिरीते। तुम्ह बिनु जियत बहुत दिन बीते।
हा जानकी लखन हा रघुबर। हा पितु हित चित चातक जलधर।
राम राम कहि राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबीर विरह राउ गयउ सुरधाम। "[8]

राम - सीता के जीवन में एक और कारुणिक पल तब आता है जब सीता का हरण होता है। उस समय सीता की अवस्था शब्दों में कहने लायक नहीं रह जाती। सीता असीम वियोग में तड़पती हुई क्रंदन करने लगतीं हैं ---

" हा जग एक वीर रघुराया। केहि अपराध बिसारेहु दाया।
आरति हरन सरन सुखदायक। हा रघुकुल सरोज दिननायक।
हा लछिमन तुम्हार नहिं दोषा। सो फल पायउँ कीन्हेउँ रोषा।
विविध विलाप करती वैदेही। भूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही। "[9]

सीता वियोग के ये पल अत्यंत कारुणिक है जो पाठकों के मन को रुला जाता है। फिर जब जटायु सीता की रक्षा में रावण के हाथों मरण को प्राप्त होता है तो वह पल और अधिक कारुणिक हो उठता है क्योंकि एक ओर सीता - हरण और दूसरी ओर जटायु मरण। दोनों मिलकर करुणा की गंगा बहा देते हैं। जटायु राम से कहता है --

" लै दच्छिन दिशि गयउ गोसाई। विलपति अति कुररी की नाइ। "[10]

सीता और जटायु का दुःख राम के दुःख के साथ मिलकर और गहरा हो जाता है। राम वनों में वृक्षों - लताओं से सीता का पता पूछते चलते हैं। वे लक्ष्मण के सामने हीं बिफर उठते हैं। वे सीता वियोग में अत्यंत शोक - मग्न हो जाते हैं ---

" हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखि सीता मृगनैनी। "[11]

रामचरितमानस में करुणा की असीम गंगा बहाने वाला एक और मार्मिक पल आता है जब लक्ष्मण को शक्तिबाण लगता है। यह राम के जीवन का एक और करुण प्रसंग है इस अवसर पर करुणा का तूफान आ जाता है। शायद हीं कोई पाठक हो जो इस प्रसंग पर आकर विचलित न हो उठता हो और जिसकी पलकें आंसुओं से न भींग उठती हों। इस मार्मिक स्थल का भी विश्लेषण व्याख्या से परे है " गोस्वामी तुलसीदास ने सीता के वियोग में राम की छटपटाहट को जहाँ विलाप कहा है वहीं लक्ष्मण की मूर्छा पर उत्पन्न प्रतिक्रिया को प्रलाप की संज्ञा दी है।"[12]

यहां राम ने अनेक ऐसी बातें कही हैं जो प्रलाप की अवस्था में हीं कहा जा सकता है। राम असीम दुःख में कहते हैं --

" जौं जनतेउँ वन बंधु बिछोहू। पिता वचन मनतेउँ नहीं ओहु। "[13]

जबकि राम अनन्य पितृभक्त थे। फिर राम लक्ष्मण को सहोदर भाई कहते हैं जबकि वे सहोदर नहीं थे --

" अस विचार जिय जागहु ताता। मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता।"[14]

फिर राम लक्ष्मण को अपनी माता का एक हीं पुत्र कहा है जबकि उनके एक भाई शत्रुघ्न भी थे --

" निज जननी के एक कुमार। तासु तात तुम्ह प्राण अधारा। "[15]

वस्तुतः राम के लिए यह आघात इतना अप्रत्याशित था की वे विक्षिप्त हो उठते हैं और इसी अवस्था में उन्होंने ये सब बातें कहीं हैं। " राम ने पहले सीता को खोया और फिर लक्ष्मण को, अतः इस व्यथा की चोट की गहराई की कल्पना की जा सकती है। "[16]

यदि राम द्वारा ऐसा न कहा जाता तो इस गहरे दुख की स्वाभाविकता प्रकट न होती। वे लक्ष्मण को गोद में लेकर उन्हें जगाते हैं --

" सकू न दुखित देखि मोहि काउ। बंधु सदा तव मृदुल सुभाउ।
मम हित लागी तजेउ पितु माता। सहेउ विपिन हिम आतप बता।
सो अनुराग कहाँ अब भाई। उठऊ न सुनि मम वच विकलाई। "[17]

राम लक्ष्मण के बिना अपने जीवन को धिक्कारने लगते हैं। वे लक्ष्मण के बिना जीना नहीं चाहते--

" जथा पंख बिनु खग अति दीना। मनि बिनु फनि करिवर कर हीना।
अस मम जीवन बंधु बिनु तोहि। जौं जड़ देव जिआवै मोहि।"[18]

इस प्रकार राम का दुखों से भरा हुआ जीवन आगे बढ़ता जाता है और दुःख में भी संतुलन कैसे बनाएं इसकी शिक्षा देते चलता है।

केवल राम के सम्बन्ध में हीं नहीं अपितु रावण के पक्ष में भी कई करुण भाव का प्रसंग मिलता है। रावण कुम्भकरण की मृत्यु पर उठता है ---

बहु विलाप दसकंधर करइ। बंधु सीस पुनि पुनि उर धरई
रोवहिं नारी हृदय हती पानी। तासु तेज बल बिपुल बखानी।" [19]

इसी तरह रावण के लिए दूसरा तीव्र आघात उसके प्रिय पुत्र मेघनाद की मृत्यु है। रावण मेघनाद की मृत्यु सुनकर मूर्छित हो उठता है --

" सुत वध सुना दसानन जबहिं। मुरुछित भयउ परेउ महि तबहिं। " [20]

मंदोदरी की भी अवस्था अत्यंत कारुणिक हो उठती है। समूची नगरी रावण को कोसने लगती है---

" मंदोदरी रुदन कर भारी। उर ताड़न बहु भांति पुकारि
नगर लोग सब व्याकुल सोचा। सकल कहहिं दसकंधर पोचा "[21]

फिर रावण की मृत्यु पर भी करुणा का एक तूफान आता है। जब त्रिलोक विजयी रावण मरता है तो मंदोदरी सहित उसके सभी नगर वासी भी दुखी हो जाते हैं. मदोदरी बहु भांति विलाप करने लगती है --

" पति सिर देखत मंदोदरी। मुरुछित धरनी खसि पारी।
जुवती वृन्द रोवत उठी धाई। तेहिं उठाई रावण पहिं आई।
पति गति देखि ते करहिं पुकारा। छूटे कच नहिं बपुष सँभारा।
उर ताड़न करहिं विधि नाना। रोवत कहहिं प्रताप बखाना। " [22]

इसतरह रामचरितमानस के सम्पूर्ण घटनाओं का अवलोकन करने पर हम पाते हैं कि इसमें त्याग और वीरता की कड़ी चट्टान के नीचे करुणा की एक विशाल धारा प्रवाहित हो रही है।

3. निष्कर्ष

रामचरितमानस के प्रत्येक पात्र का जीवन अत्यंत संघर्षों से भरा पड़ा है जिसके कारण इसमें करुणा की धारा लगातार प्रवाहित होते दिखाई पड़ती है। करुणा भाव की यह कोमलता हीं रामचरितमानस के सौंदर्य को सौ गुना बढ़ा देती है तथा इसके सभी पात्रों को मानवोचित गरिमा दिलाती है। भाई को शक्तिबाण लगने पर राम जैसे स्थितप्रज्ञ भी तड़प उठते हैं। वस्तुतः करुणा हीं वह कोमल भाव है जो मनुष्य को मानवोचित गरिमा प्रदान करती है।रामचरितमानस में इसका सम्यक निर्वहन हुआ है तथा करुणा भाव की अजस्र धारा जगह - जगह प्रवाहित होने के कारण यह महाकाव्य पाठकों के हृदय को बरबस अपनी ओर खींच लेता है।

4. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. तुलसीदास , गोस्वामी (टीकाकार -- हनुमान प्रसाद पोद्दार), रामचरितमानस , प्रकाशन -- गीताप्रेस गोरखपुर , संस्करण -- संवत 2069, पृ० 374
2. वहीं , पृ० 388
3. वहीं , पृ० 392
4. वहीं , पृ० 409
5. वहीं , पृ० 409
6. वहीं , पृ ० 412
7. वहीं , पृ० 462
8. वहीं , पृ० 472- 473
9. वहीं, पृ० 658
10. वहीं , पृ० 665
11. वहीं, पृ० 661
12. शास्त्री आचार्य जानकीवललभ , मानस - चिंतन , प्रकाशन -- हिन्दी साहित्य सम्मलेन, संस्करण -- 1978 , पृ० 157
13. तुलसीदास , गोस्वामी (टीकाकार -- हनुमान प्रसाद पोद्दार), रामचरितमानस , प्रकाशन -- गीताप्रेस गोरखपुर , संस्करण -- संवत 2069, पृ० 830

14. वहीं, पृ० 830
15. वहीं, पृ० 830
16. शास्त्री आचार्य जानकीवललभ , मानस - चिंतन , प्रकाशन -- हिन्दी साहित्य सम्मलेन, संस्करण -- 1978 , पृ०157
17. तुलसीदास , गोस्वामी (टीकाकार -- हनुमान प्रसाद पोद्दार), रामचरितमानस , प्रकाशन -- गीताप्रेस गोरखपुर , संस्करण -- संवत 2069 , पृ० 830
18. वहीं, पृ० 831
19. वहीं, पृ० 841
20. वहीं , पृ० 847
21. वहीं ,पृ० 847
22. वहीं , पृ० 884

Rama and Ramayana are Eternal

Ujjwal Sardar
Desha Bandhu Mahavidyalya, Chittaranjan
(ujjwal@dbmcrj.ac.in)

How many nations built their nests on the surface of the vast earth, composed the monuments of civilization; Again, how many nations and civilizations have been lost in the abyss of human oblivion in the speed of time. Even today, in this game of brokenness, a nation, a civilization survives unchanged in this changing world with the help of timeless vitality. This death-conquering race and civilization is the Indian civilization. The question of whether Indian civilization has possessed such a vitality which has overcome all odds and has remained undiminished from the dawn of civilization to the present day is as natural as it may be, so the answer can be given very simply. First of all, it is necessary to know that the experience of the civilization of any nation is its literature, philosophy, history. Therefore, the stability and existence of nations and civilizations depend on the integrity of these experiences. Indians are fortunate to have eternal literature like the Vedas, eternal philosophies like the Upanishads and epoch-spanning histories like the Ramayana and the Mahabharata. The decline of the civilization of the nation and civilization which experienced the Vedas, Upanishads, Puranas, Dharmashastras, Ramayana, Mahabharata is a matter of regret. Mentioning regret comes to the question - how degradation? Why this degradation? The decline is essentially cultural. We are forgetting our literature, disrespecting our philosophy, denying ourselves. Ramayana is about Ramayana

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।

तावत् रामायणी कथा लोकेषु प्रचरिस्यति। Ramayana 1.2.35

That is, as long as there are rivers and mountains in the world, Ramayana will be spread among the people. -That Ramayana has also been put under doubt today. Although the adage may not be wrong, we have to admit that as a result of twenty long years of foreign oppression, we have had a competitive attempt to deny our history.

Keywords: *Ramayana, Mahabharata, Eternal, Religion, Philosophy, Culture*.

1. Introduction

For several years the theme of discussion among a group of learned (burnt) Indians has been - 'Ramayana is not history' and 'what we know about the identity of Rama, Lakshmana and Sita, the prominent characters of Ramayana, is also wrong'. Even the most common Indian will be heartbroken to hear such fiery decisions of these scholars. But everyone will tolerate the burning in silence - if you think about it, you have to assume that the tragedy of those *Mahamatis* has happened.

Ignorance of the signs of history is the main cause of the misconception that Ramayana is not history. Now there is a tendency to separate religion from politics, from lifestyle; Meanwhile, in Ramayana, religion, economy, politics - all are united. A group of ignorant Vedanta followers declared that the Ramayana could be a poem 'not history'. Unfortunately, they know history as history. But just as our 'religion' is not synonymous with the 'religion' of the West, so our 'history' is not synonymous with their 'history'. Our history consists of sequential and factual accounts of past great men with teachings on Dharma, Artha, Kama and Moksha:

धर्मार्थकाममोक्षानामुपदेश समन्वितम् ।

पूर्वबृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते ।।

Elsewhere it is said that history is the comprehensive interpretation by saints of the character of gods and sages, along with the rituals and religions of the past, along with the guidance of future religions. These signs are fully present in our Ramayana and Mahabharata. Therefore, despite the hundred attempts of foreign ideologues, the two epics of our national history can never be reduced to non-historical books.

However, it should be noted that since the Vedic period, the book which has received the status of the national book of a developed nation, has been translated into various dialects throughout India and has been appreciated by almost all people.

2. Discussion

If the Ramayana was only a book like the Prakrit's, then the view of the historicists could somehow be accepted. But they, who accept the 'Mahabharata' as history, mention the Rama katha several times with reverence in the Mahabharata. So, a historian will never place any unhistorical facts or theory in his history - this is the normal practice in addition, the Buddhist philosopher poet Ashwaghosa, who is giving prominence to the Ramayana, has also referred to Valmiki's Ramayana with respect. Not a single one of the prominent geniuses who appeared in the Gupta era like Kalidasa and enriched literature,

philosophy and culture could consider Ramayana Mahabharata as a mere entertainment material. Instead, they developed their poetic talent by adopting those two Indian spirits.

Also, *Megasthenes, Hiuen Tsang, Fa-Hien,* etc., are many tourists and learned philosophers who came to India and visited these two Indian resources; But none of them have ever expressed strange views and shown any kind of disrespect like the recent anti-national Indians.

First, the foreign critic Dr. Weber said that *'Ramayana is a Rupakam from beginning to end'*. Dr. Jacoby mentioned that the events of Ramayana were written in imitation or imitation of some events. Without judging the logic or substance of their sayings, some Indians raised their hands and expressed strong loyalty to the sages. And immediately the historicity of Ramayana was destroyed! Even today in India's bosom. Kallolini Sarasu is flowing, Ayodhya Nagari, Kishida Parbat are still there, how much doubt, how much difficulty the Indian novices have in accepting the historical background of Ramayana!

Mahabharata, Panini, Ashwa ghosa's *Buddhacarita*, Bhasa's *Pratimanatakam*, *Abhisheknatakam*, Kalidasa's *Raghuvansam,* Gautama *Dharmashastra*, Krittivasa's *Saptakanda Ramayana*,

Bhanubhakta's Ramayana, Kamba Ramayana, Tulsidas' Ramacharitmanas. Moreover, the main characters of the Ramayana-whose ideals still influence and inspire the Indian public mind. Therefore, if the events and characters of Ramayana are not accepted as historical, then the existence and cultural consciousness of India and Indians must also be denied.

Another context is determining the exact identity and mutual relationship of Rama, Lakshmana, Sita and other main characters of Ramayana. In this context, it should be mentioned first that all the three characters are great ideals for the masses of India. Ramachandra's sacrifice, tolerance, patriotism, conjugal love. Sita's endurance and addiction. Loyalty to Lakshmana is carefully preserved as an exemplary ideal in the Indian public. There the evil handshake to stigmatize comes only from alien ignorance.

Recently, the farce of brutally sacrificing the public opinion of India in various ways, the education or knowledge limit of those who are playing the role of the killer. Even two lines of Weber's work will not be insulted. Only Mr. Weber, while reviewing the Ramayana and expressing his scholarship, said that the Ramopakhyana is a Buddhist epic and through Rama and the Ramayana, the ideals and doctrines of Buddhism are propagated. In support of these words, all those Yuyudhanas have used *'Dasaratha Jatakkhani'* written in Pali language by the Buddhists.

Their words have created more humor than the 'clowns' of Sanskrit dramas like *'Vasantaka*' or the 'shockers' of Shudras. The Ramakatha that *'Dasarath Jaatak'* contains is only a fragmentary anecdote. In Buddhist philosophy, violence is forbidden, and Rama Laxman-Sita is sent to the forest and returned to the kingdom after 12 years. Calling this fragmentary story as the source of epic history and epic like. Rather, it can be said that in the light of Ramayana's Ramakatha, the folklore of the hill tribes like Sakyas located in Kapilvastu is the main subject of *'Dasaratha Jataka'*.

So, in that tribe Sibling marriages are mentioned in imitation of social norms. On the other hand, every ritual behaviour described in Ramayana is Vedic. In Rigveda 10th Mandal, 10th chapter, the story of 'Yama-Yami' is proved that since Rama is married to Sita, Sita cannot be his sister in any way. Because it is universally accepted that nothing non-Vedic can have a place in the whole of Vedism.

In addition, Ramayana is proved to be a later work of Buddhist literature if Ramayana was written by 'Dasaratha Jataka'. But no critic, except Mr. Weber and a few of his disciples, dares to express such boldness.

Unfortunately, those who are pandering to *Bharatanatyam* for writing The *Ramayana* on the basis of Pali Jataka and accordingly establishing Sita as Rama's sister, have not read the Ramayana as a vast and poetic work in Sanskrit, nor have they read the Jataka literature - not all Jatakas are easy. If you had read both their books, you would have easily understood who is good and who is bad. Caste is another sign of their ignorance. As they only hear the name of Dasaratha Jataka, and they know and try to tell others that Dasaratha Jataka has recorded all the stories of Rama. That misconception has already been mentioned. Then it should be noted that apart from Dasaratha Jataka in Jataka literature, 'Anam Jataka' talks about Ram and Sita's exile, Sitaharan, Jatayu, Bali-Sugriva war, Setubandha, and Sita's ordeal. In addition to the Buddhist text Jataka, the extinct, Chinese-translated contribution 'Dasaratha Kathan' contains anecdotes of Rama. By this it is easily inferred that if Pali jataka was the original source of ram katha, it would have existed only once. It was not described differently in different places. In the 'Dasharatha Jataka' Dasharatha is the king of Varanasi. He has two wives. The first wife died and his sons were Rama, Lakshmana and Sita. King Dasharatha asked them to go to another place for twelve years to protect themselves, fearing Bimata's conspiracy.

Instead of fatherly instructions to the 'Anam Jat', there is talk of Rama's exile in fear of Matula's attack. Contributed by *'Dasarath Kathan'* Dasharath is the king of *Jambudwipa*. He had four wives and four sons by four wives - Rama, Lakshmana, Bharata and Shatrughan. Here Rama went to the forest to observe fatherhood.

Also, Jaini's Jatak has 17th sagas about Rama's exile. Besambhara Jaatak' is mentioned in 541th Gathas about Sita's marriage. The Sama Jatak has a similar story of Andhamuni's son-in-law.

The insertion of the story of Rama in various places in the Buddhist literature proves that the Ramayana is not based on the Buddhist story, but the Buddhist literature has been nourished by extracting the high ideology of the Ramayana.

3. Conclusion

Finally, it has to be mentioned that we have gradually lost the right to acquire the Vedas, Upanishads, Ramayana, Mahabharata, Puranas, Dharma shastras which were the mature fruits of wisdom and wisdom in ancient times due to our intellectual disability. We burn the greatness of *Rama and Ramayana* in our mischief out of ignorance. But in ignorance and

error there is never eternity. Therefore, no misguided controversies can distort even a single word of Valmiki's eternal glory Rama katha from the heart of the Indian mind. Bharat Bharati, the son of Bharati, will not fail to establish the glory of India and Indians.

4. References

1. Alan, Davidson Keith. *A History of Sanskrit Literature*. Oxford University Press, London: 1920.
2. Bandyopadhyay, Vivekananda. *Tulonamulak alochanay Ramayan o Mahabharat.* Kolkata**:** Sanskrit book depot, 2006.
3. Bhattacharya, Sukhomoy. *Mahabharate chaturbarga*. Kolkata: Sanskrit Mahavidyalaya Gobeshona Granthamala: 82
4. Choudhuri, Sajal (Ed.). *Ananta shradhanjali*. Kolkata: Saraswatasamaj, 1411 B.
5. Thakur, Anantalal. *Nibandhabali***.** Kolkata: New age publishers.1422 B.
6. M. Winternitz. *A History of Indian Literature*. Vol. I, Part-II Calcutta University,1978.
7. Shrimad Balmikiya Ramayana, Gita press, Gorakhpur.

Journal and Paper Consulted

1. Anviksha Vol. XXXIII, Journal of the department of Sanskrit, Jadavpur University, Ed. Lalita Sengupta.Kolkata:2012.
2. Chauhan, Mehul. Leaders in Competitive Business Environment. 5th International Ramayana Conference.

Regent of Ayodhyā: Leadership Lessons from Bharata's Life in the Rāmāyaṇa

Dharmesh Kumar
Jayashree Aanand Gajjam
Mahesh K
Indian Institute of Technology Kharagpur, Kharagpur
(dharmeshkumarbth@gmail.com)
(jayashree@iks.iitkgp.ac.in)
(mahesh@iks.iitkgp.ac.in)

Bharata, among many other characters in the Vālmīki Rāmāyaṇa, stands as an exemplar for dharmic leadership. The current research examines how Bharata's rule during the absence of the rightful leader, Rāma, embodies the principles of duty and righteousness (dharma), selfless service (dāsatva/sevā), humility, ethical and moral accountability (nīti), and a steadfast mindset. It offers valuable insights for modern leaders on decision-making and for sustained societal harmony in times of crisis or transition. This study also emphasizes the relevance of the rich legacy of Rāmāyaṇa in contemporary contexts.

1. Introduction

Vālmīki's Rāmāyaṇa is India's first epic that represents a narrative of both divine incarnation and moral foundation for humanity, but it also serves as an important ethical treatise on leadership and governance. While many scholars' works focused on Rāma as the embodiment of *dharma* and an ideal king, the character of Bharata, younger brother of Śrī Rāma and regent of Ayodhyā, presents a compelling model of moral authority and *dharma*-oriented leadership. Bharata, in his role as caretaker king or regent during Rāma's exile, is portrayed as a model of ethical leadership, where the power of kingship is exercised not for personal supremacy but rather as an expression of devotion to the rightful king and the state. The *Ayodhyā Kāṇḍa* of the *Vālmīki Rāmāyaṇa* describes Bharata's conduct and the nature of legitimate authority, as well as the ethics of restraint and the relationship between leadership and moral self-discipline.

Bharata accepts the political authority by placing Rāma's sandals (*pādukā*) upon the throne and sets a remarkable example of symbolic guardianship of the state while not residing in the palace. During the entire exile period of Rāma, Bharata ruled from Nandigrāma, a forest area which was very far from Ayodhyā. Bharata embodies values of empathy, humility, accountability, and emotional intelligence.

The purpose of this paper is to analyse Bharata's regency as an example of dharma-based leadership, based on a textual analysis of the *Vamiki Rāmāyaṇa*, along with other *Rāmayanas,* such as the *Śrīrāmacaritamānasa* and the *Adhyātma Rāmāyaṇa*. Bharata's examples illustrate the concept of duty before dominion, where moral authority supersedes political power, and where restraint can be the ultimate manifestation of leadership. His role as a regent of Ayodhyā during Rāma's fourteen years of exile represents an ideal of servant leadership where power is exercised not for personal gain but as an act of devotion and moral obligation.

2. The Great Epic Rāmāyaṇa

In the *Bālakāṇḍa* of the *Rāmāyaṇa*, Lord *Brahmā* tells *Vālmīki* about the significance of the *Rāmāyaṇa* as –

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले । तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति ।। वाल्मीकि रामायण - I. 2. 36 ।।

"As long as the mountains and rivers shall endure upon the earth, so long will the tale of the *Rāmāyaṇa* be told among the people."

Rāmāyaṇa is one of the most remarkable classical literary works in its moral appeal. It is famous for its poetic excellence and is the oldest specimen of epic poetry. It is popular not only in India but also worldwide, in various versions and languages. The *Rāmāyaṇa* (Journey of Rāma), one of the classics of ancient Indian literature, is a Sanskrit epic comprising seven Kāṇḍas (cantos) and 24,000 verses. It is not only an epic but also an excellent repository of various kinds of knowledge, including history, geography, anthropology, politics, military science, ethics, human values, and spirituality. Its authorship is attributed to the *Ādikavi Maharṣi Vālmīki*. With the help of various episodes and characters, he has set limits (*maryādā*) for individuals, society, and the state in the *Rāmāyaṇa*. Each and every character of the *Rāmāyaṇa* teaches us many lessons.

3. The Ideal Life of Bharata

Among the various characters in the *Rāmāyaṇa*, the life of Bharata is ideal and bright with no fault at all. He was the son of King Daśaratha's third wife, Kaikeyī, and the younger brother of Śrī Rāma. He has set the example of an ideal son, brother, servant, and leader. Like Śrī Rāma, Bharata is an ocean of virtue and value, encompassing righteousness, humility, penance, self-restraint, endurance, steadfastness, bravery, simplicity, serenity, compassion, loyalty, sacrifice, friendliness, fatherly love, and brotherly affection. The role of Bharata offers profound lessons in selfless service, unconditional devotion, sacrifice, and adherence to ethical principles that are central to governance and leadership.

4. Dharma before domination: Bharata's Ethics of Leadership

In the *Rāmāyaṇa*, *Dharma* (righteousness, duty) is the basis on which actions are evaluated. Bharata is the embodiment of *Dharma*, humility and all human values. He always put duty (*Dharma)* before possession (*Adhikāra*). Many times, Maharṣi Vālmīki has used adjectives like *Dharmātmā* and *Mahātmā* (*Vālmīki Rāmāyaṇa*, *Ayodhyā Kāṇḍa*, 82-21, 23) for Bharata.

After marriage, Bharata went with his maternal uncle, Yudhājīta, to his kingdom. While he was at his maternal uncle's home, he had a fierce dream. Bharata shared his disturbing dream with his friends and expressed his concern for his father. When he came back to Ayodhyā and listened to the demise of his father from his mother, he was extremely shocked. When the mother asked him to be patient, he replied, I thought that the king would coronate Śrī Rāma on the throne and himself get initiated for *yajña*. With this thought, I started from there, but after coming here, I found everything topsy-turvy. My heart is breaking as I do not see my father, who always did what was dear and benedictory to me. This incident demonstrates Bharata's filial piety towards his father. While he was expressing his sorrow for his father, his heart was suddenly overflowed with love and dedication for Rāma, and he says –

यो मे भ्राता पिता बन्धुर्यस्य दासोऽस्मि धीमतः।

तस्य मां शीघ्रमाख्याहि रामस्याक्लिष्टकर्मणः।।

पिता हि भवति ज्येष्ठो धर्ममार्यस्य जानतः। ।। वाल्मीकि रामायण - II.72.32,33 ।।

"Please inform Śrī Rāma, who is my brother, father, and friend, whose dear servant I am and who always performs pious deeds, about my arrival. The brother is like a father to a meritorious person who knows the dharma."

Then Kaikeyī narrates all the incidents that took place in Bharata's absence and asks him to accept the kingship. Hearing from his mother about Śrī Rāma's exile to the forest, he was stunned. After hearing the incident, Bharata grieves over his misfortune and accuses Kaikeyī in so many words. After that, he happened to meet Kauśalyā on the way, while she was coming to meet him, and he started weeping in her arms. Thereafter, he assured Kauśalyā by swearing in many ways that he had no concurrence in the exile of Śrī Rāma. According to the instructions of Guru Vasiṣṭha, preparations were made for King Daśaratha's funeral. At that time, when Bharata saw the dead body of his father, he started weeping and said –

किं ते व्यवसितं राजन् प्रोषिते मय्यनागते। विवास्य रामं धर्मज्ञं लक्ष्मणं च महाबलम्।। वाल्मीकि रामायण II.76.6 ।।

"O king! How did you decide to send to the forest the pious Śrī Rāma and mighty Lakṣmaṇa while I was out in some other country and could not even come to you?"

To see the condition of Bharata, the great sage Vasiṣṭha admonishes him. After that, with due formality, the funeral ceremony of Daśaratha was performed. After being freed from the *Śrāddha-Karma*, Guru Vasiṣṭha and other counsellors came to the royal court and insisted that Bharata assume the kingship. Then Bharata said, Myself and this kingdom both belong to Śrī Rāma. I request that you all teach me the *Dharma*. Śrī Rāma is senior to me in every respect. Therefore, Śrī Rāma, the supreme among persons, deserves to be the Lord of all the three worlds, what to talk of Ayodhyā only. I will follow his footsteps and try my best to get him back before all gentlemen like you. Even then, if I fail to get Śrī Rāma back, I will also stay with him in the forest like the great Lakṣmaṇa.

When Bharata sets out for Citrakūṭa, accompanied by his army to bring back Rāma, he meets with Niṣādarāja Guha, the ruler of *Niṣādas*. Guha became suspicious upon seeing such a huge four-winged army with him, but after meeting with him, his doubt was dispelled. Further, when Bharata reached the hermitage of Maharṣi Bharadvāja, after proper salutations, he asked a question very much pinching to his heart. He said, For what purpose have you come to the forest? Is it for doing any harm to the pious and guiltless Rāma and Lakṣmaṇa?" It caused tears to well up in Bharata's eyes. He spoke in a faltering voice – When one so venerable as you misunderstand me, I am gone. There is no danger for him from me. Do not rebuke me this way. I do not approve of whatever my mother said in my absence. I am not happy with those words, and I do not accept them. I have come to worship the feet of Rāma, the best of men and persuade him to return to Ayodhyā. Hearing this, Maharṣi Bharadvāja was very pleased and praised Bharata, saying, I know what is in your mind, O Bharata, yet in order to strengthen it and to spread your fame much more, I have said so to you.

When Bharata reached near Citrakūṭa, Śrī Rāma saw the dusk rising in the sky and asked Lakṣmaṇa to find out the reason. Lakṣmaṇa surveyed the situation from above a tree and came to the conclusion that Bharata was coming with his army to kill them, and expressed his suspicion, uttering some harsh words. Then, Śrī Rāma praised the qualities and love of Bharata, saying, 'Finding the time appropriate, Bharata has come to see us.' Even in his mind, he would have never thought of causing any harm to us in any way. Why are you suspicious of Bharata? Has he done anything disagreeable to you any time in the past? You must not speak any harsh or unpleasant words against Bharata. If you do, they will be deemed to be directed against me.

This way, Bharata was entirely faultless and pious, yet he had to be a victim of everyone's suspicion. It is a strange thing in the history of the world that a person like Bharata, who was entirely desireless and a renouncing great man, became the target of suspicion of all. For some time, if we ignore Bharata's fatherly love, brotherly affection, dharma, ethics and all human values, and see him as a strategist or a leader, it was a great move of Bharata to not accept the throne of Ayodhyā while King Daśaratha and Śrī Rāma had accepted him as a king. There is no doubt that Bharata was fully capable of being the king of Ayodhyā, but the public and courtiers were in favour of Rāma, which could have caused chaos and unrest against him. So, he went to Citrakūṭa to bring back Śrī Rāma.

5. Pādukā on the Throne: Symbolic Authority and Moral Legitimacy

On the way to Citrakūṭa, Bharata entered the dense forest on foot to trace out Śrī Rāma. He climbed a tall tree and recognised the Ashrama where Śrī Rāma himself was sitting, from that distance. He was glad enough and started for the Ashrama, accompanied by Guha. After reaching near the hermitage of Śrī Rāma, Bharata saw that the Lord of the entire world was sitting with Sītā and Lakṣmaṇa on an earthen platform. He saw Śrī Rāma wearing garments made from the skin of a black deer and the bark of a tree. Seeing him in such a state, Mahatma Bharat was overcome with grief. The tears rolled down on his lotus-like face. His condition was quite miserable. Before he could touch Rāma's feet, he fell down like a wretch. Thereafter, Śrī Rāma took Bharata in his lap and asked, Brother, why did you abandon the capital, have matted locks and a deer skin, and come here to the forest? Then Bharata informed him of his father's demise and said, 'O one who gives respect to all traditionally, as well as being a deserving candidate, you are the proper successor to the kingdom. Therefore, justice demands that you accept the kingship and fulfil the cherished desire of your friends. I am a brother, disciple and a servant to you. Along with these ministers, I request you, with my head bent at your feet, to have mercy on me and accept the kingdom. Then, Śrī Rāma, while explaining the father's order, tried to convince Bharata to have the kingdom, but he was not satisfied. Śrī Rāma again made an effort to convince Bharata and said Brother, this act of yours is against dharma. So, give up this stubbornness. Bharata got up and said to the audience, 'If it is necessary for me to stay in the forest to implement my father's order, I will live in the forest in his place for fourteen years.' After that, Śrī Rāma said before all, I know Bharata as a man of forbearance and one who honours elders. Everything will turn out well for this great soul wedded to truth. On returning from the forest, I shall become the supreme lord of this earth along with this virtuous brother. The king (Daśaratha) was solicited by Kaikeyī, and I shall abide. Therefore, you also release the lord of the Earth, our father, from the charge of falsehood.

After this, all the sages asked Bharata to accept Rāma's words. Rāma was pleased with this, but Bharata still was not satisfied. He said to Śrī Rāma with folded hands, Arya! I am incapable of safeguarding this kingdom. You please accept this kingdom and then give to somebody else its charge. Saying so, Bharata fell to his feet. Then Śrī Rāma lifted him and seated him in his lap and spoke sweetly –

आगता त्वामियं बुद्धिस्स्वजा वैनयिकी च या। भृशमुत्सहसे तात रक्षितुं पृथिवीमपि ।। वाल्मीकि रामायण - 2.112.16 ।।

"Dear brother, the wisdom which you have got by birth as a result of humility, is sufficient for you to guard fully even the whole world." Hearing the loving words of Śrī Rāma, Bharata said –

आधिरोहाऽर्य पादाभ्यां पादुके हेमभूषिते। एतेहि सर्वलोकस्य योगक्षेमं विधास्यतः।। वाल्मीकि रामायण - 2.112.21 ।।

"O noble one, place your feet on these sandals decorated with gold. They will secure the prosperity and safety of the entire world."

Then, Śrī Rāma put his auspicious feet on them and handed them over to Bharata. Saluting those sandals, Bharata said to Śrī Rāma, 'I will also have matted locks and bark garments, and I will eat fruits and roots, looking forward to your arrival.' I will stay outside the city for fourteen years. For this period, the entire responsibility of administration will rest on your shoulders. If I do not see you the same day after the completion of fourteen years, then I will enter the inflamed fire. Having heard these words, Śrī Rāma gladly approved of it. Śrī Rāma's sandals (*pādukā*), which Bharata enthrones as a regent of Ayodhyā in Rāma's absence, have symbolic significance. This simple act transforms sandals (*pādukā*) into the most effective moral authority in the Rāmāyaṇa. It shows the theology of representation. *Pādukā* becomes both a substitute for Rāma's physical presence and a transmitter of his moral essence. This symbolism presents different meanings on several grounds. Religiously, it sacralises governance; ethically, it demonstrates accountability; politically, it prevents civil strife while preserving Śrī Rāma's legitimacy. By enthroning the sandals (*pādukā*), Bharata transformed authority into a ritual act, embodying the Indian conception of kingship as a divine trust, not a personal possession. We can say that Bharata was a de facto ruler of Ayodhyā in the absence of Śrī Rāma.

6. Governance from Nandigrāma: A Symbol of Renunciation and Penance

Holding the sandals (*pādukā*) of the Lord on his head, Bharata mounted gladly on the chariot. He met Maharṣi Bharadvāja on the way and reported everything to him. With his permission, he reached Śṛṅgaverapura and from there to Ayodhyā and addressed the elders as – I take leave of all of you. I am going to Nandigrāma, where I shall dwell in grief over Rāma's absence. King Dasaratha has gone to heaven. My elder brother, who is also my Guru, is in the forest. I shall await his return for ruling the kingdom since he alone is the illustrious king of Ayodhyā. After obtaining permission from all, holding the sandals (*pādukā*) of Śrī Rāma on his head, Bharata, along with Śatrughna, went to Nandigrāma. After getting down from the chariot, Bharata said to the elders, my brother gave me this kingdom as a trust. He gave me the sandals (*pādukā*) decorated with gold for maintaining the security and prosperity of the kingdom. This is the accepted symbol of the exalted feet of my brother. These sandals (*pādukā*) shall establish righteousness (*dharma*) in the kingdom. I shall safeguard it until Rāma's return. The burden of this kingdom has been cast on me. On reunion with Rāma, I shall hand it over to my brother, my guru and shall be engaged in his service. By returning these sandals (*pādukā*), this kingdom, as well as Ayodhyā, to Śrī Rāma, I will get free from the burden and sins also." Thereafter, the steadfast Bharata lived in Nandigrāma as an ascetic, clad in bark and wearing matted locks on his head. He performed all administrative tasks only after presenting them to the sandals (*pādukā*). He himself put the royal umbrella and moved *Chanwara* around sandals (*pādukā*). This way Bharata performed the coronation of the sandals (*pādukā*). Whatever state affairs happened to come or even any valuable presents came, he first put them before the sandals (*pādukā*), and only after that did the needful.

Bharata's governance from Nandigrāma, a hermitage village far from Ayodhyā, symbolises renunciation and penance, which are crucial for a leader or administrator. Bharata lived an ascetic life, symbolising empathy, solidarity and self-imposed penance for the injustice inflicted upon Rāma. From an administrative viewpoint, Bharata's governance from Nandigrāma, is an ideal example of restraint and decentralization. Although he was physically far from Ayodhyā, he maintained effective governance through delegation and compliance with Rāma's policies. In modern terms, the character of Bharata in Rāmāyaṇa establishes an ethical administration, guided by moral intent rather than personal ambition.

7. Conclusion

The ideal life of Bharata in the *Rāmāyaṇa* offers numerous lessons for individuals, administrators, and leaders, which are worth following for all. As Bharata handled the crisis situation and governed Ayodhyā on behalf of the real successor and his elder brother, Śrī Rāma, he set a standard for modern leadership. While administrators and leaders across the globe face numerous challenges and turbulence on various levels in the present time, the Ideal Life of Bharata may serve as a pioneer for them. In conclusion, we can say that –

- Dharma (righteousness, sense of duty) is essential for administrators and leaders
- The power is for the welfare of society, not for personal gain and comfort.
- The virtues like humility, loyalty, simplicity, penance, and renunciation are crucial for a good leader.

The leadership model of Bharata in the *Rāmāyaṇa*, rooted in the *Dhārmika* principle of governance, serves as a torchbearer for those who wish to serve society for the sake of peace and prosperity.

8. References

1. Ramacharit Manas, Gita Press, Gorakhpur.
2. Shrimad Valmiki Ramayana (Original with Hindi translation). Gita Press, Gorakhpur.
3. Goyandka, J. (2008). Some ideal characters of the Ramayana. Gita Press, Gorakhpur.
4. Shrimad Valmiki Ramayana (With Sanskrit Text and English Translation) Revised Edition, Gita Press, Gorakhpur.
5. Vālmīki. (2021). The Rāmāyaṇa of Vālmīki: The Complete English Translation. Princeton University Press.
6. Valmiki. (1952). The Ramayana of Valmiki (H. P. Shastri, Trans.). Shanti Sadan. London.
7. https://www.valmiki.iitk.ac.in/

सगुण - निर्गुण भक्ति परस्पर पूरक

Ameeta Gupta
(ameetagupta12@gmail.com)

1. प्रस्तावना

भक्ति का अर्थ है, ईश्वर के प्रति व्यक्तिगत प्रेम, स्नेह, और समर्पण। यह संस्कृत की "भज "धातु से बना है ।जिसका अर्थ है पूजा करना या समर्पित करना। यह एक आध्यात्मिक मार्ग है , जो ईश्वर के साथ एक गहरा और व्यक्तिगत संबंध स्थापित करने में मदद करता है।

भक्ति के प्रमुख पहलू

प्रेम और समर्पण - भक्ति का मुख्य तत्व ईश्वर के प्रति निस्वार्थ प्रेम और समर्पण , जिसमे कोई स्वार्थ या अपेक्षा नहीं होती।

आस्था और विश्वास - यह ईश्वर में दृढ़ विश्वास और आस्था की भावना है।।

सेवा और पूजा - यह मोक्ष प्राप्ति का एक सुगम साधन माना जाता है। भक्ति सगुण और निर्गुण, दो प्रकार की मानी जाती है।

राम चरित मानस में भक्ति के कई रूपों को दिखाया गया है। यह ईश्वर की सेवा करने।, उनके गुणों का गान करने , और सच्चे मन से उन पर विश्वास रखने का मार्ग है। भक्ति में सकाम और निष्काम , दोनों तरह के प्रेम शामिल हैं, लेकिन निष्काम भक्ति सबसे श्रेष्ठ मानी जाती है।

भगवद्गीता में भगवान भक्ति योग को सर्वश्रेष्ठ मार्ग बताते हैं। वह कहते हैं जो भक्त अपने सभी कर्म मुझमें समर्पित करके,, मेरे प्रति शुद्ध , अनन्य प्रेम और समर्पण रख कर अपना मन मुझमें लगाते हैं,वे जन्म मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाते हैं आगे भगवान चार प्रकार के भक्तों का वर्णन करते हैं। आर्त, जिज्ञासु ,अर्थार्थी, और ज्ञानी। भगवान कहते हैं, जो परम ज्ञानी शुद्ध भक्ति भाव से मुझ ईश्वर की भक्ति में लगा रहता है ,वही सर्वश्रेष्ठ भक्त है, क्योंकि उन भक्तों के लिए मैं प्रिय हूँ , और मेरे लिए वे भक्त प्रिय हैं। भक्ति योग , ज्ञान योग,और कर्म योग, के साथ तीन मुख्य आध्यात्मिक मार्गों में से एक है।

2. विस्तार

भगवद्गीता के अनुसार, भक्ति ईश्वर के प्रति प्रेम, समर्पण और विश्वास का एक आध्यात्मिक मार्ग है। इसमें भगवान को अपने प्राण समर्पित करके, सभी कार्यों को उनकी सेवा के रूप में करते हुए, उनके ध्यान में लीन रहना ही भक्ति है। भक्ति का एक पहलू निस्वार्थ प्रेम है, जहाँ व्यक्ति किसी, फल या लाभ की इच्छा के बिना प्रेम करता है।

गीता में वर्णित भक्ति सगुण और निर्गुण दोनों हैं। सगुण को भगवान ने सुलभ और सुरक्षित बताया। परंतु सगुण के विकास में निर्गुण रूपी तत्त्वनिष्ठा रूपी बौर आना चाहिए। भक्ति के उदर से ज्ञान का जन्म होना चाहिए। भक्ति की बेल में ज्ञान के फूल खिलने चाहिए।।

निर्गुण भक्ति सर्वभूत हित रत् होती है।। सारे विश्व का कल्याण, पूजा की तरह करना, ईश्वर की आज्ञा से करना। यह कहने में सरल है, पर बहुत कठिन है। निर्गुण ज्ञान मय है, इसमें भक्त को संबल न मिलने पर भय हो सकता है। निर्गुण भक्ति को भी चित के सूक्ष्म मैल धोने के लिए सगुण की आद्रता चाहिए।

यह दोनों प्रकार की भक्ति मानस में उत्तम ढंग से दिखती है। अरण्य कांड में सगुण भक्ति के दर्शन होते हैं। भगवान राम, लक्ष्मण से कहते हैं , धर्म के आचरण से वैराग्य और योग से ज्ञान होता है। यह ज्ञान मोक्ष देने वाला होता है, ऐसा वेदों में वर्णित है। पर भाई जिससे मैं शीघ्र ही प्रसन्न होता हूँ , वह मेरी भक्ति है जो भक्तों को सुख देने वाली है। अरण्य कांड १५; २। भगवान राम कहते हैं वह भक्ति स्वतंत्र है , उसको दूसरे साधन का सहारा नहीं चाहिए। ज्ञान और विज्ञान उसके अधीन हैं। हे तात ! भक्ति अनुपम सुख की ख़ान है। अरण्य १५;३।

शबरी की भक्ति सगुण भक्ति का द्योतक है। पूरा जीवन वह गुरु के वचन पर प्रेम और विश्वास रख कर राम के आने की प्रतीक्षा करती रही। शबरी प्रेम।, श्रद्धा और धैर्य की द्योतक है। जब शबरी ने भगवान श्री राम को घर आए देखा तो उनका मन प्रसन्न हो गया ।कमल सदृश नेत्र और विशाल भुजाओं वाले, सिर पर जटाओं का मुकुट धारण किए हुए, भगवान के चरणों में शबरी लिपट गईं।वे प्रेम मगन हो गईं। उन्होंने अत्यंत रसीले कंद ,मूल और फल प्रभु को अपने हाथों से चख चख कर खिलाए ।उसकी भक्ति देखकर राम कहते हैं, हे भामिनी , मैं केवल भक्ति ही का संबंध मानता हूँ। वह कहते हैं जाति, पाँति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन, बल और चतुरता - इन सबके होने पर भी भक्ति से रहित मनुष्य ऐसा लगता है जैसे जलहीन बादल शोभाहीन दिखता है। फिर भगवान शबरी को , जो एक साधारण भील स्त्री है, नवधा भक्ति का रहस्य बताते हैं। भगवान कहते हैं , तुझमें सभी प्रकार की भक्ति दृढ़ है। अतएव जो गति योगियों को भी दुर्लभ है , वही आज तेरे लिए सुलभ हो गई। इस प्रकार शबरी को अपना सहज स्वरूप प्राप्त हो गया।

भरत की भक्ति निर्गुण भक्ति है। उसमे सगुण की मधुरता है ।भरत निर्गुण भक्ति के द्योतक हैं। ।तुलसीदास जी ने उनका मानस में बहुत सुंदर चित्र खींचा है । राम वन को गए तब भरत अयोध्या में नहीं थे । जब भरत आते है , तो राम वनवास को जा चुके हैं।, और पिता दशरथ शरीर त्याग चुके हैं। । गुरु वशिष्ठ उन्हें समझाते हैं , कि अब तुम राज चलाओ । भरत का मन भीतर से राम को मिलने को छटपटा रहा था, परंतु राम की आज्ञा से राज्य का प्रबंध उन्ही को करना था । उनकी भावना यह थी कि यह राज्य राम का है, इसका प्रबंध करना राम की ही सेवा है । लक्ष्मण की तरह भरत मुक्त नहीं हो सकते। ।यहाँ राम की भक्ति का अर्थ है, राम का कार्य करना। ।राज काज की सारी व्यवस्था करके भरत राम से भेट करने पंचवटी में आते हैं । राम कहते हैं , भरत तुम्ही राज काज चलाओ। भरत कहते हैं जो राम कहें सो मंजूर । उन्होंने अपना सबकुछ राम पर निछावर कर रखा था । चलते हुए , जब राम ने अपनी पादुकाएं भरत को दी, वो भरत के लिए सगुण का आधार बनी ।

भरत गए और पादुकायों की आज्ञा शिरोधार्य करके अपना कर्तव्य करते रहे । अयोध्या से कुछ दूर नंदी ग्राम में तपस्वी का जीवन जीते रहे । यद्यपि भरत राम से, शरीर से दूर थे, तो भी क्षण भर के लिए भी वियोग नहीं था । अंत में राम जब भरत से मिले, तब यह पहचानना मुश्किल हो गया कि वन में रह कर

तप करने वाला असली तपस्वी कौन है? दोनों के एक से चेहरे, उम्र का थोड़ा सा अंतर, और मुखमुद्रा पर वही तपस्या के चिह्न । दोनों को देखकर यह पहचाना नहीं जाता कि इनमें राम कौन और भरत कौन ?

हरि भक्ति में श्रद्धा, प्रेम और विश्वास की आद्रता आवश्यक है । इसलिए भगवान ने अर्जुन से बार बार कहा

मैयासक्त मनः पार्थ - अर्जुन मुझमें आसक्त रह। ,मुझमें भक्ति रख।, फिर कर्म कर, फिर तू कर्म बंधन में नहीं बंधेगा। जिस भगवद्गीता में बार बार इस बात पर ज़ोर दिया गया कि अनासक्त रह कर कर्म करो, राग द्वेष छोड़ कर कर्म करो, निरपेक्ष कर्म करो।, वहीं गीता कहती है - अर्जुन मुझमें आसक्ति रख । पर यहाँ आसक्ति भगवान के प्रति कही गई है, यह बहुत पवित्र भाव है। ।

सगुण और निर्गुण, दोनों एक दूसरे में गूँथे हुए हैं। सगुण , निर्गुण का आधार सर्वथा तोड़ नहीं सकता।। निर्गुण को सगुण के रस की आवश्यकता होती है।

मामानुस्मर युद्ध च - मेरा स्मरण करते हुए कर्म करो ।क्योंकि कर्म स्वयं भी एक पूजा है ।

मत्कर्म कृणमतपरमों मदभक्तः संगवर्जितः

निर्वैर सर्वभूतेषु यः स मामेती पाण्डव ।।

भगवान कहते हैं, हे पांडव जो सब कर्म मुझे समर्पित करता है, मुझमें परायण रहता है , मेरा भक्त बनता है, और प्राणिमात्र में द्वेषरहित हो कर , जो जो करता है, मुझे अर्पित करता है, मेरी भक्ति में सराबोर है वह प्रेममय मेरा भक्त है ।

3. निष्कर्ष

तो असली वस्तु है भावना । सगुण और निर्गुण, कर्म और प्रीति, ज्ञान और भक्ति , ये सब एक ही रूप हैं । एक दूसरे के परस्पर पूरक हैं । रामायण में तुलसीदास कहते हैं,

जाध्यपी सम नहीं राग न रोशू ।गहही न पाप पुनु गुण दोषू ।।
करम प्रधान बिस्व करि राखा । जो जस करयी तो तस फल चाखो ।।

यदपि वे राम अर्थात् ब्रह्म सम हैं - उनमे न राग है, न रोष है । और न वे किसी का पाप - पुण्य और गुण दोष ही ग्रहण करते हैं, उन्होंने विश्व में कर्म को ही प्रधान कर रक्खा है, जो जैसा करता है वैसा ही फल भोगता है।।

यह पूर्णतः भगवद्गीता का मूल मंत्र है, जो मानस में दिखता है ।

तदपि करहीं सम विषम बिहारा । भगत - अभगत हृदय अनुसारा
अगुण अलेप अमान एक रस। । रामु सगुन भए भगत पेम बस ।।

वह राम , वो ईश्वर , भक्त को गले लगाकर और अभक्त को मार कर तार देते हैं। वे गुण रहित , निर्गुण , निर्लेप , मानरहित और सदा एकरस हैं वे राम, भक्त के प्रेमवश ही सगुण हुए। ।

राम मानस में सुंदरकांड में विभीषण से कहते हैं, जो नर चराचर द्रोही भी हो, यदि मेरी शरण में आता है तो उसका मद, मोह।, कपट और अन्य दोष स्वयं हट जाते है ।और वह साधु के समान हो जाता है । उसकी तन, धन, घरबार से आसक्ति हटा कर मैं अपने में कर देता हूँ । ऐसा समदर्शी भक्त की सब इच्छाएँ फिर समाप्त हो जाती हैं। उसे हर्ष और शोक नहीं सताता।। ऐसे भक्त को में अपने हृदय में ऐसे रखता हूँ , जैसे लोभी धन को अपने हृदय में रखता है । फ़िर राम कहते हैं

सगुण उपासक परहित निरत नीति दृढ़ नेम ।
ते नर प्राण समान मम जिन्ह कें द्विज पद प्रेम ।।

भगवान राम कहते हैं सगुण भक्त और परहित में लगा हुआ निर्गुण भक्त , दोनों मेरे हृदय में रहते हैं ।

अर्थात् सगुण भक्त और निर्गुण में कोई अंतर नहीं है।

अंत में भगवान कृष्ण कहते हैं। " अर्जुन , तुम चाहे सगुण रहो या निर्गुण ,पर भक्त ज़रूर बनो।

मंमना भव मदभक्तो मद्याजी माम नमस्कुरु

मामेवैश्यसी युक्तवैवमात्मानं मतपरायण : ।।

मुझमें मनवाला हो।, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करनेवाला हो, मुझको प्रणाम कर। इस प्रकार आत्मा को मुझमें नियुक्त करके तू मुझको अर्थात् ब्रह्म को ही प्राप्त होगा।

रामायण भक्ति प्रधान होते हुए भी कर्म को स्थापित करती है। भगवद्गीता कर्म प्रधान होते हुए भी भक्ति को स्थापित करती है। दोनों में कोई अंतर नहीं। दोनों परस्पर पूरक हैं।

उर्मिला की मौन प्रतीक्षा

अलका श्रीवास्तव
(alkash1960@gmail.com)

जिस वक्त श्री राम, सीता और लक्ष्मण वनवास के लिए तैयार होते हैं। उर्मिला भी साथ जाने के लिए आग्रह करती। लक्ष्मण उन्हें राजमहल में ही रुक कर अपने धर्म का पालन करने के लिए कहते हैं। जिसे उर्मिला पूरे सम्मान पूर्वक स्वीकार करती है। उनकी संवेदनशीलता और मौन ही उनके अदृश्य आत्मिक संबंध को व्यक्त करता है। वे सहनशील, पतिव्रत धर्म का पालन करते हुए 14 वर्ष महल में रहते हुए भी एक तपस्विनी की तरह अपना जीवन बिताती है। लेकिन उर्मिला की मौन साधना समझना कठिन है क्योंकि, उन्होंने किसी धर्म से नहीं बल्कि अपने मन से धर्म का पालन किया है।

1. प्रस्तावना

शक्ति किसी की भी हो, पत्नी हो या माँ, उन्हें प्रमाणित करने की ज़रूरत नहीं है। वे स्वयं में इतनी तेजस्विनी, प्रकाशित और ईश्वर की ही दी हुई परम शक्ति सदैव उनमें जाग्रत रहती है। समाज में रहते हुए उसे समय के अनुसार अपने आपको ढालने को शक्तिमय किरण बनकर अपने कर्तव्यों को बड़ी निष्ठा के साथ निभाती है। वह चाहे सीता हो, जगदम्बा हो, कौशल्या हो या उर्मिला हो, शक्ति सदा से तेजोमय प्रकाश से प्रकाशित होती है आत्मबल।

आत्मबल ही आत्मा को उच्च चरित्र का प्रकाश है जिसकी कार्य जीवन को सर्वोत्तम के लिए प्रस्तुत करना होता है। अपनी सीमा को समझते हुए संघर्ष करना और अपने को बदल सकना, अपनी गतिविधियों को निम्न स्तर से उठाकर उच्च स्तर पर प्रतिष्ठित करना मानव जीवन की सबसे बड़ी सफल साधना है। आत्मा की शक्तियों की कोई सीमा नहीं होती।

हमारी भारतीय संस्कृति, सनातन संस्कृति को नमन करते हुए मैं आज एक अत्यंत संवेदनशील, धैर्यवान, निष्ठावान, शक्ति, सती उर्मिला का विवरण, उनका धैर्य लक्षित करती हूँ। अपने को गौरान्वित महसूस करती हूँ कि हमारी संस्कृति है जहाँ इतनी शक्तिशाली, सुसंस्कृत, त्याग, और मर्यादा से परिपूर्ण नारी शक्तियाँ थीं। उनके त्याग और संयम को गोस्वामी जी ने बड़े ही सम्मान पूर्वक लिखा।

2. विस्तार

राम चरित मानस में राजा दशरथ के चार पुत्र हुए जिनका नाम राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न है। राम कौशल्या के पुत्र थे। शत्रुघ्न और लक्ष्मण सुमित्रा के एवं भरत केकई के पुत्र हुए। सभी साथ में बड़े होते हैं। कुछ समय बाद विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को वन जाने के लिए दशरथ से आग्रह करते हैं। मुनियों की रक्षा के लिए उन्हें लेकर वन में उचित शिक्षा व अस्त्र-शस्त्र प्रदान करते हैं। कुछ समय बाद मिथिला की ओर आगे बढ़ते हैं।

मिथिला नगरी राजा जनक की सुंदर नगरी थी। राजा जनक की भूमिजा पुत्री सीता थी और, उर्मिला राजा जनक की निजी संतान थीं। वह सीता से छोटी थी, और राजा जनक के भाई कुशध्वज की दो पुत्रियाँ - माँडवी और श्रुतकीर्ति थीं, इस प्रकार चारों का पालन-पोषण राजा जनक द्वारा ही किया गया। राम द्वारा शिवधनुष तोड़े जाने पर उनका सीता के साथ स्वयंवर विवाह होता है। राजा जनक और राजा दशरथ के विचार-विमर्श पश्चात् लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न का विवाह भी उर्मिला, माँडवी और कीर्ति के साथ करने के लिए दोनों पक्ष तैयार होते हैं।

अयोध्या में :

जिस वक़्त केकई ने राजा दशरथ से दो वरदान माँगे और राम वन जाने के लिए तैयार होते हैं। सीता भी उनके साथ वन की ओर जाने को तैयार होती है। यहाँ उर्मिला जब लक्ष्मण से आग्रह करती है, कि मैं भी आपके साथ जाना चाहती हूँ, तो लक्ष्मण उन्हें मना कर कहते हैं: "आप महल में रहकर माताओं को ध्यान रखें"। वे मन को समझाकर चुप रह जाती है।

उर्मिला का व्यक्तित्व:

उर्मिला एक बहुत ही बुद्धिमान, समझदार, ज्ञानी, आत्मविश्वास से पूर्ण, विनम्र व्यक्तित्व वाली थीं। बड़ों के प्रति आदर भाव सदैव उनके व्यवहार में दिखाई देता था। चित्रकला और अध्ययन की शौकीन थीं। बहनों के प्रति स्नेह भाव विशेष तौर पर सीता को उन्होंने सदैव बड़ी बहन का ही सम्मान दिया। उनका चरित्र बहुत ही उच्च कोटि का था।

बिदाई का समय नज़दीक आते ही उर्मिला अंदर तक बेहद आहत होती है कि सीता के साथ तो राम होंगे, मेरे साथ न तो सीता है और न लक्ष्मण। यह सोचकर उनका दिल बैठ गया । वे इस अंतर्मन की वेदना को दिल में रख दुखी मन से सब सहन करती है। सीता भावुक होकर उर्मिला को सांत्वना देती है "तुम यहाँ अकेली हो लेकिन हम सबका संबल हो"। "हर परिस्थिति का सामना कर सकती हो इसीलिए शायद लक्ष्मण ने तुम्हारे ऊपर घर की जवाबदारी और सभी को सँभालने का भार डाला हैं"।

अश्रुजल से उर्मिला और सीता एक दूसरे को देख ढाँढस बँधाती है। राम लक्ष्मण बाहर खड़े हैं। उर्मिला सीता को लेकर उनके पास आती है तभी राम उर्मिला से कहते हैं: "उर्मिला तुम बहुत बहादुर हो, ज्ञानी हो, मैं सदैव तुम्हारा ऋणी रहूँगा"।

सुमित्रा ने लक्ष्मण से कहा, "तुम राम और सीता के साथ बाहर जा रहे हो, उनकी सेवा में कोई कमी न करना"। "जहाँ राम, सीता हैं, वहीं तुम्हारी अयोध्या है"। यह सुन उर्मिला स्वयं को तुच्छ समझती है। उनका प्यार - गर्व, सम्मान, खुशियों से भरा था। भावुकता, पछतावा या व्यर्थ की बातों के लिए कोई स्थान नहीं था।

उर्मिला पूरे सम्मानपूर्वक पतिव्रत धर्म का पालन करते हुए 14 वर्ष महल में रहते हुए भी, एक तपस्विनी की तरह जीवन व्यतीत करती है। उनकी संवेदनशीलता और मौन ही उनके अदृश्य आंतरिक संबंध को व्यक्त करता है।

उर्मिला एक अदृश्य शक्ति तत्व के रूप में है इसलिए उन्हें अप्रकट त्याग का प्रतीक समझा जाता है। सीता ने जो त्याग, व्रत किए वे समाज जानता है, लेकिन उर्मिला की मौन साधना समझना कठिन है। क्योंकि, उनका व्यक्तित्व अंतर्मुखी था।

कुछ दिनों बाद जब भारत अपनी माताओं के साथ - राम, लक्ष्मण, सीता को वापस लाने के लिये चित्रकूट जाते हैं तब उर्मिला भी उनके साथ जाती है। जब लक्ष्मण अपनी आत्मीय उर्मिला को देखते ही भावुक हो जाते हैं और उनसे कहते हैं, "तुम बहुत ही शुद्ध, स्थिर और शक्तिशाली हो, एक कर्तव्यपरायण पुत्री, चतुर प्रशासक, बुद्धिमान, इन सब की भूमिका एक साथ निभा लेती हो"।

तभी उर्मिला कहती है: "तुमने भी अपना कर्तव्य निभाने के लिए महल छोड़ा और एक महान कार्य करने के लिया अपने सुख का त्याग कर निस्वार्थ सेवा में कार्यरथ हो, इससे बड़ा कार्य और क्या होगा?"

ऐसा प्रतीत होता है जैसे दोनों विधि के आगे दोनों अपना कर्तव्य निभा रहे हों।

आत्मबल आत्मा का प्रकाश होता है जो जीवन को सर्वोत्तम कार्य के लिए प्रस्तुत करता है। संघर्ष करते हुए अपने को बदल सकना और अपने कार्य को उच्च स्तर पर प्रतिष्ठित करना मानवीय चेतना की सबसे बड़ी साधना है। उर्मिला के संघर्षों में यह परिलक्षित होती है कि कठिन से कठिन परिस्थिति में वे धैर्य खोये बगैर सहजता से बाहर आ जाती हैं।

उर्मिला और लक्ष्मण का वैवाहिक जीवन अत्यंत प्रेमपूर्ण, त्यागमय और मर्यादित था।उर्मिला का चरित्र अखंड धैर्य और मौन त्याग का प्रतीक है, जो आज के हर मनुष्य के लिए एक शक्तिशाली प्रेरणा है। तुलसीदास जी ने कहा है: "धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपद काल परखिए चारी॥" (अर्थात: धैर्य, धर्म, मित्र और पत्नी—इन चारों की परीक्षा विपत्ति के समय होती है)। उर्मिला ने चौदह वर्ष तक अकेले रहकर, न केवल अपने पति लक्ष्मण के वनवास की पीड़ा सही, बल्कि उन्होंने राजमहल में रहकर भी एक तपस्विनी जैसा जीवन जिया। उनका धैर्य हमें सिखाता है कि जीवन की बड़ी 'परीक्षा' या 'संकट' (जैसे करियर में असफलता, रिश्ते में दूरी, या लंबी प्रतीक्षा) के दौरान शांत और संयमित रहना ही हमारी सबसे बड़ी शक्ति है। उन्होंने लक्ष्मण को अपने कर्तव्य पथ पर जाने दिया और स्वयं परिवार की सेवा में लीन रहीं। उर्मिला का यह मौन समर्पण हमें सिखाता है कि सच्चा बलिदान वह नहीं जो दिखाया जाए, बल्कि वह है जो बिना किसी शिकायत के अपने कर्तव्यों को निभाते हुए किया जाए—यह सीख हर उस व्यक्ति के काम आएगी जो आज के भागदौड़ भरे जीवन में स्थिरता और आंतरिक शांति चाहता है।

उर्मिला एक बहुत ही समझदार आत्मविश्वास से पूर्ण बुद्धिमान ज्ञानी और विनम्र स्वभाव की थी। उर्मिला ने गुरु वशिष्ठ अयोध्या के गुरु रामदेव मारकंडे कात्यायन कश्यप से शिक्षा ली थी। जिन्होंने उनके ज्ञान को और अधिक बढ़ाया और विदुषी बानया।

जिसकी वजह से राजा जनक ने उर्मिला को अपनी सभा में आने का निमंत्रण दिया, जहां कई विद्वानों के बीच तत्व ज्ञान पर चर्चा होने वाली थी । राजा जनक ने उर्मिला को अपनी पुत्री के दृष्टिकोण से नहीं बल्कि एक विदुषी की तरह सभा में आने के लिए निमंत्रण भेजा था। इस सभा में विदुषी गार्गी और विवादास्पद गुरु जावली के साथ रोचक बहस होने वाली थी।

उर्मिला, धर्म की उपयोगिता पर प्रश्न करती थी साथ ही इसका प्रकृति पर प्रभाव जानना चाहती थी जबकि पिता धर्म में देवता देखते थे। सभा में उर्मिला महान पंडितों और ज्ञानियों के बीच में थी जहां उनके गुरु याग्य्ल्क जो उनके पिता के भी गुरु थे उनके बीच में बैठकर उर्मिला को एक नए दृष्टिकोण से जीवन को देखने और समझने का एहसास हुआ। विदुषी गार्गी और गुरु जवाली से विमर्श करते समय जितनी बार भी उर्मिला की नज़र अपने पिता पर पड़ती - अपने पिता को अपनी और ध्यान से सुनते हुए देख और उनके चेहरे पे अत्यंत गौरव और संतुष्टि देख वह बहौट परस्सन्न हुई। राजा जनक ने उर्मिला से कहा अपने नाम की तरह एक लगनशील स्त्री हो। एक पुत्री और एक पत्नी के रूप में तुमने अपने व्यक्तित्व को न खोते हुए जीवन में आए संघर्षों के समय को समझ लिया है।" उर्मिला ने पिता से आशीर्वाद लेने के लिए उनके पैर छुए, वह नम्रता से भरी हुई महान व्यक्ति का आशीर्वाद ले रही थी जो सौभाग्य से उसके पिता थे। राजा जनक ने कहा - "में लम्बे समय से इस दिन की प्रतीक्षा कर रहा था। तुम्हारी उत्सुकता और

अभिव्यक्ति को देख कर तुम्हारी विद्युता का मुझे कुछ अनुभव था, तुमने अयोध्या के राज ऋषियों से ज्ञान पाया और इस ज्ञान को कभी रुकने नहीं दिया, जो तुम्हारे जीवन के लिए ज़रूरी था।" - इस प्रशंसा को सुन उर्मिल्ला बहुत ख़ुश हुई।

राजा जनक ने कहा राम का वनवास लक्ष्मण के लिए भी वनवास था और तुम्हारा उनसे दूर रहनातपस्या का अर्थ समझता है। जिसने तुम्हें तपस्विनी बना दिया। इससे हम प्रेम का मूल्य और भावनाओं के भेद को समझ सकते हैं। वनवास से तुम्हें तपस्या का अर्थ और गहराई समझ में आई और ऐसी तपस्विनी बानया जिसके पास महान आध्यात्मिक समझ और बौद्धिकता है। मैं तुम्हें एक विदुषी होने के लिए आज शुभकामनाएं देता हूं। तुम्हारी विद्वता मंत्रों के उच्चारण से तुम्हारा ध्यान तुम्हारा आध्यात्मिक पुनर्जन्म और पति के प्रति तुम्हारा प्रेम - इसी दृष्टि ने तुम्हें धैर्य का अर्थ और विनम्रता समझाइ है, उर्मिला का मन और मस्तिष्क एक साथ बौधिक और आध्यात्मिक रूप से समृद्ध हो चुके थे। हम अपने जीवन को कैसे जीते हैं यह हमारे दृष्टिकोण पर निर्भर करता है व्यक्ति को अपना जीवन अपनी क्षमता समग्रता के आधार पर जीना होता है।

युद्ध _सीता हरण एवं लक्ष्मण शक्ति

जिस वक्त सीता का हरण रावण द्वारा कर लिया जाता है। यह खबर राजमहल तक पहुंचती है जिसे सुन उर्मिला स्तब्ध रह जाती हैं और चिंतित होती हैं कि राम के रहते यह कैसे हो सकता है।उर्मिला ने क्रोध पूर्वक प्रश्न किया वहां उसकी (सीता की)कौन रक्षा करेगा? यह सब शायद इसलिए हुआ होगा क्योंकि राम के हाथों रावण का वध होना है। और इसी वजह से रावण ने सीता का हरण किया है। उर्मिला को पूरा विश्वास था की नियति के अनुसार राम रावण का वध कर ही देंगे फिर भी वह कुछ संदर्भों को लेकर विचलित थी, और उसने एक उच्च शक्ति के समक्ष विनय व निवेदन किया जो, सीता और लक्ष्मण को कोई क्षति नहीं होने देगी, निराशा के समय इच्छा शक्ति और प्रार्थना ही सहारा होती है। तभी भरत महल में आकर समाचार देते हैं की युद्ध के दौरान इंद्रजीत के शक्ति बाँड से लक्ष्मण अचेत हो गए हैं। और हनुमान उनके लिए जड़ी बूटी लेने गए हैं जिसे लेकर सूरज उगाने के पहले पहुंचना है उर्मिला महल में सभी की हिम्मत बढ़ रही थी वह स्वयं परेशान थी लेकिन उनके अंतर्मन में द्वन्द चल रहा था। उन्होंने कहा लक्ष्मण के हृदय में राम बसे हैं उन्हें कुछ नहीं होगा और वह सीता को लेकर रावण का वध करके जल्दी ही लौट आएंगे, उर्मिला का यही विश्वास सब की ताकत बन गया। लक्ष्मण को कुछ नहीं होगा मैं जानती हूं वह एक योधा है। वह विजय होंगे और भाई के लिए अपने प्राण भी त्याग देंगे इस कठिन परिस्थिति में इस तरह की बातें और उर्मिला ही कर सकती थी। वह किसी भी निराशा या भय को मन में नहीं लाना चाहती थी। वन में लक्ष्मण रह रहे थे, उर्मिला को नहीं पता थे की वह कभी वापस आएंगे या नहीं, लेकिन उसने कभी अपने दुख को प्रदर्शित नहीं किया। यह सब का अपना युद्ध था संजीवनी के आते ही लक्ष्मण आघात से बाहर आ गए और इंद्रजीत से लड़ने के लिए तैयार हो गए। इंद्रजीत बलशाली था उसे केवल एक धार्मिक ब्रह्मचारी योगी जो दैविक रूप से शक्तिशाली हो और पतिव्रता पत्नी के प्रेम व त्याग से सुरक्षित हो वही उसे मार सकता था। और वही लक्ष्मण है जो आपके प्रेम व शक्ति से जीवित है। भरत ने कहकर उर्मिला के सामने अपना मस्तक झुका दिया और कहा इतने सालों तक आपने ही पूरे महल को एक करके रिश्तो में बाँध कर रखा है, माता सुमित्रा - उर्मिला को बहुत आशीर्वाद देती हैं। उन्होंने कहा - "तुमने अपनी बेड़ियों को ही पायल बना दिया।"

वापसी

नवरात्रि के अंतिम दिन राम ने रावण का वध कर दिया सीता मुक्त हुई और राम ने बुराई को खत्म कर दिया। उर्मिला ने देवी से प्रार्थना की," है मां - इस देश में शांति और प्रसन्नता का शासन कर दो।" उर्मिला ने जोर से सांस भरी जब समाचार आया कि राम सीता और लक्ष्मण घर की ओर लौट रहे हैं उसकी मां प्रसन्नता से खिल उठा स्वागत की तैयारी चलने लगी राम लक्ष्मण और सीता के आते ही उनका स्वागत होता है। लक्ष्मण और उर्मिला एक दूसरे से मिलकर प्रसन्न होते हैं अपनी व्यथा कहते सुनते हैं लक्ष्मण आश्चर्य से उर्मिला से पूछते हैं कि तुमने कैसे इतनी निर्भीकता से पूरे घर को संभाल कर रखा सबका ध्यान रखा घबराई नहीं उर्मिला मुस्कुरा के चली जाती है।

3. निष्कर्ष

राजा जनक की पुत्री उर्मिला बहुत ही समझदार आत्मविश्वास से पूर्ण बुद्धिमान और ज्ञानी महिला थी उनका व्यक्तित्व अंतर्मुखी और विनम्र था , बड़ों के प्रति आदर भाव व प्रेम सदैव दिखाई देता था। जीवन क्रम में संघर्ष मनोबल संपन्न व्यक्ति निश्चित दिशा में तत्परता से गतिशील रहते हैं, और बड़े-बड़े कार्य कर पाते हैं। उर्मिला के जीवन में इतनी कठिनाई चुनौतियां अकेलापन और संघर्ष रहा लेकिन वह कभी घबराई नहीं हर मुसीबत का सामना बहुत ही साहस और शक्तिपूर्ण तरीके से करती गई। हमें कार्य को करने की प्रेरणा देती है। आत्मा की शक्ति ही सर्वोपरि है, उर्मिला का अध्ययन एवं उनका जीवन जीने की कला समाज में सभी के लिए एक प्रेरणा का स्रोत है। इसीलिए उनका चरित्र अखंड धैर्य और महान त्याग का प्रतीक माना जाता है जो आज के हर मनुष्य के लिए एक शक्तिशाली प्रेरणा है। तुलसीदास जी भी कहते हैं

धीरज धर्म मित्र अरु नारी। आपातकाल प रखिए चारी।।

उर्मिला का मन समर्पण ही हमें सिखाता है सच्चा बलिदान वह नहीं जो दिखाया जाए बल्कि वह जो बिना किसी शिकायत के अपने कर्तव्य को निभाते हुए किया जाए, यह सीख हर उसे व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण है जो जीवन में स्थिरता और अंतरिक शांति चाहता है।

4. संदर्भ ग्रन्थ

1. राम चरित मानस ISBN 81-293-0123-7
2. मनुष्य में देवता का उदय - श्री राम शर्मा आचार्य- वांगमय 54
3. सीता की बहन उर्मिला - कविता काणे ISBN 978-93-90085-99-6

आंतरिक स्थिरता से सतत विकास: वाल्मीकि रामायण का एक योग-मनोवैज्ञानिक अध्ययन

संगीता शर्मा
स्वतन्त्र अध्येता, फरीदाबाद, हरियाणा
(Sangeetasharma2121@gmail.com)

वाल्मीकि रामायण को पतंजलि योगसूत्र के परिप्रेक्ष्य में एक समन्वित अध्ययन के रूप में देखे जाने पर हम आंतरिक स्थिरता को सतत विकास की नींव के रूप में पाते हैं। इस शोधपत्र में यह स्पष्ट होता है कि रामायण का वास्तविक युद्धक्षेत्र पात्रों का अपना मन है, जो 'क्लेशों' से संचालित होता है। यहाँ राम और रावण के तुलना आधारित मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन में पाया गया कि जहाँ रावण क्लेशों के अधीन एक अस्थिर मन का प्रतीक है, जो व्यक्तिगत और सामाजिक विनाश का कारण बनता है। वहीं इसके विपरीत, श्री राम का समभाव 'आंतरिक स्थिरता' का आदर्श है, जो धर्म आधारित एक स्थायी व विकसित समाज की पुनर्स्थापना करता है।

मुख्य शब्द: वाल्मीकि रामायण, पतंजलि योगसूत्र, क्लेश, चित्त भूमि, योग-मनोविज्ञान, आंतरिक स्थिरता, राम, रावण।

1. प्रस्तावना

भारतीय वाङ्मय के दो आधारस्तंभ—महर्षि वाल्मीकि रचित 'रामायण' और महर्षि पतंजलि प्रणीत 'योगसूत्र'—दो अलग विषय का नेतृत्व करते हुए भी मानवीय अस्तित्व के एक ही मूल प्रश्न से संवाद करते हैं कि दुःख का स्वरूप क्या है और उसका निवारण कैसे हो? वाल्मीकि रामायण को पारंपरिक रूप से धर्म और अधर्म, या अच्छाई और बुराई के बीच एक शाश्वत बाह्य संघर्ष के महाकाव्य के रूप में देखा जाता है। यह एक ऐसी गाथा है जो सामाजिक और नैतिक आदर्शों को स्थापित करती है। दूसरी ओर, पतंजलि का योगसूत्र पूर्णतः एक अंतर्मुखी यात्रा का ग्रंथ है, जो 'मन के विज्ञान' के रूप में प्रतिष्ठित है। यह चित्त की संरचना, उसकी वृत्तियों और उन विकारों का विश्लेषण करता है जो मानवीय दुःख का मूल कारण हैं। रामायण की परंपरागत व्याख्याओं में कथा को प्रायः बाहरी घटनाओं, पात्रों के द्वंद्व और दैवीय हस्तक्षेप के रूप में विश्लेषित किया गया है। किंतु, इस बाह्य संघर्ष के विश्लेषण में प्रायः एक महत्वपूर्ण आयाम की उपेक्षा हुई है—पात्रों की आंतरिक मानसिक स्थितियों का गहन मनोवैज्ञानिक अन्वेषण। इस मनोवैज्ञानिक पक्ष पर विशेषत: यौगिक दृष्टि से पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है, जो इस शोध के लिए एक महत्वपूर्ण अन्वेषणात्मक अवसर प्रस्तुत करता है।

यह शोधपत्र इस मूल तर्क को स्थापित करता है कि रामायण का वास्तविक युद्धक्षेत्र लंका का मैदान नहीं, अपितु उसके पात्रों का अपना मन ही है। इस अध्ययन की परिकल्पना है कि पात्रों की आंतरिक स्थिरता या अस्थिरता जो पतंजलि द्वारा वर्णित पंच क्लेश से निर्धारित होती है जोकि उनके व्यक्तिगत व्यवहार, चरित्र और सामाजिक परिणामों को आकार देती है; पर निर्भर करती है। इस शोध का मुख्य उद्देश्य पतंजलि योगसूत्र के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को एक विश्लेषणात्मक उपकरण के रूप में प्रयोग करते हुए रामायण के नायक श्री राम और प्रतिपक्षी रावण का एक तुलनात्मक चरित्र-विश्लेषण प्रस्तुत करना है, जिससे यह सिद्ध होता है कि व्यक्तिगत 'आंतरिक स्थिरता' ही सामाजिक-पारिस्थितिक 'सतत विकास' की अनिवार्य आधारशिला है।

2. सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

वाल्मीकि रामायण पर धार्मिक, साहित्यिक, और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विपुल साहित्य उपलब्ध है जो इसे धर्म-अधर्म के संघर्ष के रूप में व्याख्यायित करता है, तथापि ये अध्ययन प्रायः कथा के नैतिक और बाह्य संघर्षों पर केंद्रित रहे हैं। पात्रों के कार्यों के पीछे की गहन मनोवैज्ञानिक प्रेरणाओं का विश्लेषण, विशेषकर योग-मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से, अभी भी एक उपेक्षित क्षेत्र है। सैद्धांतिक ग्रंथों के नियमों की सिद्धि हेतु व्यवहारिक ग्रंथों की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से, रामायण एक आदर्श 'केस स्टडी' के रूप में उभरता है क्योंकि इसके पात्र केवल अच्छाई या बुराई के प्रतीक मात्र नहीं हैं, बल्कि वे दो भिन्न मानसिक अवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस शोध का सैद्धांतिक आधार महर्षि पतंजलि का योगसूत्र हैं, जो चेतना के विज्ञान पर एक आधारभूत ग्रंथ है। पतंजलि के अनुसार, मानवीय अनुभव का केंद्र 'चित्त' है और योग का परम लक्ष्य ही "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः॥" (पतंजलि, योगसूत्र, 1.2) अर्थात् चित्त वृत्तियों का निरोध कर चेतना को उसके सहज स्वरूप में स्थापित करना है। किन्तु ये वृत्तियाँ दुःख क्यों देती हैं? इसका निदान करते हुए पतंजलि साधनपाद में पाँच मूल कारणों की स्थापना करते हैं, जिन्हें 'क्लेश' कहा गया है: "अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः॥" (पतंजलि, योगसूत्र, 2.3)। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष

और अभिनिवेश—ये पाँच क्लेश ही वे मनोवैज्ञानिक अशुद्धियाँ हैं जो व्यक्ति के निर्णयों को प्रभावित कर उसे दुःख और बंधन के चक्र में उलझाए रखती हैं।

इस सैद्धांतिक ढांचे का विस्तार करते हुए, 'अविद्या' को रावण के पतन के मूल कारण के रूप में माना जा सकता है। रावण की मूल अविद्या यह थी कि उसने अपने भौतिक 'मैं' अर्थात् असत्य को सत्य स्वरूप मान लिया था। इसी तरह, 'अभिनिवेश' अर्थात् मृत्यु का भय या जीवन से मोह को रावण के उस हठ के रूप में देखा जा सकता है जहाँ वह अंत तक सब कुछ जानते हुए भी हार नहीं मानता, क्योंकि हारना उसके अहंकारी अस्तित्व की मृत्यु के समान था। इसके अतिरिक्त, योगसूत्र की 'चित्त भूमियों' की अवधारणा भी प्रासंगिक है। रावण का चित्त अधिकांशतः 'क्षिप्त' यानि अत्यंत चंचल और 'मूढ़' अर्थात् क्रोध और अहंकार से ग्रस्त भूमियों में रहता था, जबकि राम का चित्त 'एकाग्र' भूमि का प्रतिनिधित्व करता है, जो उन्हें धर्म पर केंद्रित रहने में मदद करता है।

3. शोध प्रविधि

इस अध्ययन में पाठ्य-विश्लेषणात्मक एवं मनो-दार्शनिक पद्धति का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों के रूप में वाल्मीकि रामायण और पतंजलि के योग सूत्रों का उपयोग किया गया है, तथा विश्लेषण की प्रक्रिया के अंतर्गत रामायण के प्रमुख प्रसंगों और पात्रों के संवादों व कार्यों को 'क्लेशों' एवं 'चित्त भूमियों' के सिद्धांत के माध्यम से व्याख्यायित किया गया है।

4. विश्लेषण एवं विवेचना

4.1 रावण: क्लेशग्रस्त चित्त का प्रतीक और विनाश का मार्ग

पतंजलि के योगसूत्र में वर्णित 'क्लेश' केवल दार्शनिक अवधारणाएँ नहीं हैं, बल्कि वे शक्तिशाली मनोवैज्ञानिक शक्तियाँ हैं जो व्यक्ति के विवेक को नष्ट कर उसे आत्म-विनाश के मार्ग पर धकेल देती हैं। वाल्मीकि रामायण का प्रतिपक्षी, लंका का दशानन राजा रावण, इस यौगिक सिद्धांत का सबसे जीवंत और त्रासद उदाहरण है।

- **अस्मिता: आत्म-छवि से विनाशकारी तादात्म्य**

पतंजलि के अनुसार, 'अस्मिता' वह क्लेश है जिसमें व्यक्ति अपनी वास्तविक 'दृक्-शक्ति' को 'दर्शन-शक्ति' से एकाकार कर लेता है (पतंजलि, योगसूत्र, 2.6)। सरल शब्दों में कहा जाए, यह 'मैं' की झूठी पहचान है। रावण के लिए, उसका 'मैं' उसके ज्ञान, उसकी शक्ति और देवताओं पर उसकी विजय से बना था। उसका अहंकार इतना प्रबल था कि वह स्वयं को ही अंतिम सत्य मान बैठा था। विभीषण की धर्म सम्मत सलाह पर वह क्रोधित होकर कहता है- "योऽन्यस्त्वेवंविधं ब्रूयाद् वाक्यमेतन्निशाचर। अस्मिन् मुहूर्ते न भवेत् त्वां तु धिक् कुलपांसनम्" (वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड, 14.9)। यहाँ रावण की 'अस्मिता' उसे यह देखने ही नहीं देती कि विभीषण का परामर्श उसके हित में है। वह किसी भी आलोचना को अपने 'मैं' पर सीधा प्रहार मानता है।

- **राग: विवेक-नाशक मोह**

'राग' वह क्लेश है जो सुख और सुख के साधनों के प्रति एक अनियंत्रित तृष्णा के रूप में प्रकट होता है (पतंजलि, योगसूत्र, 2.7)। रावण का सीता के प्रति आकर्षण प्रेम नहीं, बल्कि अधिकार और भोग का 'राग' था। यह आसक्ति इतनी प्रबल थी कि उसने रावण के विवेक को पूरी तरह से हर लिया। वह मारीच से कहता है- मैथिली का हरण नहीं हुआ, तो मैं जीवित नहीं रह सकूँगा "एवं मे निश्चिता बुद्धिहदि मारीच वर्तते।" यह मेरा बुद्धिपूर्वक निश्चित हृदय का विचार है।। (वाल्मीकि रामायण, अरण्य काण्ड, 25.6)। यह कथन उसकी गहरी मनोवैज्ञानिक निर्भरता को दिखाता है। अपनी इस मनोवैज्ञानिक जड़ता को वह स्वयं स्वीकार करता है: "द्विधा भज्येयमप्येवं न नमेयं तु कस्यचित्। एष मे सहजो दोषः स्वभावो दुरतिक्रमः॥" (वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड, 36.11)।

- **द्वेष: प्रतिशोध की आत्मघाती अग्नि**

'द्वेष' दुःख और दुःख के साधनों के प्रति प्रतिकर्षण या घृणा है (पतंजलि, योगसूत्र, 2.8) । शूर्पणखा के अपमान ने राम के प्रति उसके द्वेष को प्रज्वलित किया। यह द्वेष उसे किसी भी शांति प्रस्ताव को स्वीकार करने से रोकता है। वह युद्ध को ही एकमात्र समाधान मानता है, क्योंकि उसकी घृणा को केवल राम के विनाश से ही शांति मिल सकती थी। वह राम से कहता है: "हे दुराचारी! आज मैं अपने धनुष से छूटे हुए विषधर सर्पों के समान बाणों से तुझे यमराज के घर भेज दूँगा।" (वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड)।

4.2 श्री राम: समभाव एवं अनुशासित चित्त का आदर्श

यदि रावण का चरित्र क्लेशों के अधीन एक विक्षिप्त चित्त का अध्ययन है, तो श्री राम का जीवन योग के परम लक्ष्य—"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः॥" (पतंजलि, योगसूत्र, 1.2) का एक सजीव प्रतिमान है।

- **समभाव: विषम परिस्थितियों में अविचलित निष्ठा**

राम के जीवन की सबसे बड़ी परीक्षा उनके राज्याभिषेक की पूर्व संध्या पर आती है। परंतु, राम की प्रतिक्रिया योग के 'स्थितप्रज्ञ' आदर्श

को दर्शाती है। वाल्मीकि लिखते हैं: "न वनं गन्तुकामस्य त्यजतश्च वसुन्धराम्। सर्वलोकातिगस्येव लक्ष्यते चित्तविक्रिया॥" (वाल्मीकि रामायण, अयोध्या काण्ड, 19.33)। यह 'अस्मिता' और 'राग' से मुक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

- **दुःख का अनुभव, क्लेश से मुक्ति: साक्षी भाव**

  योग का आदर्श भावनाओं का दमन नहीं, बल्कि उनसे तादात्म्य स्थापित न करना है। सीता हरण के पश्चात् राम का विलाप अत्यंत मार्मिक और मानवीय है। वे प्रकृति के कण-कण से सीता का पता पूछते हैं, जो उनके गहरे प्रेम को दर्शाता है। किंतु यह दुःख रावण के 'राग' की तरह विवेक-नाशक नहीं बनता। उनका दुःख उन्हें 'द्वेष' से नहीं भरता। इसका सबसे बड़ा प्रमाण रावण की मृत्यु के पश्चात् मिलता है। जब विभीषण संकोच करते हैं, तब राम कहते हैं: "मरणान्तानि वैराणि न वृत्तं नः प्रयोजनम्। क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव॥" (वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड, 99.39)। यह कथन एक ऐसे चित्त से ही संभव है जो 'द्वेष' नामक क्लेश से पूरी तरह मुक्त हो।

4.3 तुलनात्मक विश्लेषण: आंतरिक जगत और बाह्य परिणाम

राम और रावण का द्वंद्व, चेतना की दो भिन्न अवस्थाओं का संघर्ष है। जिसे समझने के लिए कुछ विशेष सिद्धान्तों का उल्लेख विषय के साथ किया जा रहा है-

- **प्रतिक्रिया बनाम अनुक्रिया: आवेग और विवेक का संघर्ष**

  आधुनिक मनोविज्ञान में, विक्टर फ्रैंकल ने स्थापित किया कि "उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच एक स्थान होता है..." (Frankl, 1959)। रावण इस 'स्थान' का उपयोग करने में विफल रहता है, जो एक 'एमिग्डाला हाइजैक' का उदाहरण है (Goleman, 1995)। इसके विपरीत, राम उस 'स्थान' का उपयोग कर एक विवेकपूर्ण अनुक्रिया चुनते हैं, जो उच्च भावनात्मक बुद्धिमत्ता का प्रतीक है।

- **मन की संरचना: अनियंत्रित बनाम अनुशासित चित्त**

  प्लेटो ने आत्मा के तीन भागों की कल्पना की: तर्क, भावना, और कामना (Plato, The Republic)। रावण का चित्त उसकी 'कामना' का दास है, जबकि राम का चित्त 'तर्क' अर्थात् 'धर्म' द्वारा शासित है। उनका मन भगवद्गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ के आदर्श के समान है, "दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः" (श्रीमद्भगवद्गीता, २.५६)।

- **क्रिया की प्रेरणा: कर्तव्य बनाम आसक्ति**

  इमानुएल कांट के अनुसार, नैतिक कार्य वह है जो 'कर्तव्य के लिए 'किया जाता है, न कि 'आसक्ति से' (Kant, 1785)। रावण के सभी कार्य उसकी व्यक्तिगत आसक्तियों से प्रेरित हैं, जो केवल अहं-तुष्टि में फंसा हुआ है (Maslow, 1943)। राम के कर्म 'धर्म' रूपी कर्तव्य से प्रेरित हैं।

अंततः, यह विश्लेषण अरस्तू के 'eudaimonia' के सिद्धांत को भी चरितार्थ करता है (Aristotle, Nicomachean Ethics)। रावण का क्लेश-ग्रस्त आंतरिक जगत उसे अवगुणों की ओर ले जाता है, जबकि राम की आंतरिक स्थिरता सद्गुणों का प्रतीक है। कार्ल युंग के मनोविज्ञान के अनुसार, रावण एक ऐसे व्यक्ति का प्रतीक है जो अपने 'छाया' (Shadow) पक्ष से अभिभूत हो गया है, जबकि राम 'स्व' (Self) के आदर्श हैं (Jung, 1968)।

5. निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से यह तर्क स्थापित होता है कि रामायण का वास्तविक युद्धक्षेत्र पात्रों का अपना मन है। पतंजलि के पंच 'क्लेशों' के नैदानिक ढांचे से यह स्पष्ट होता है कि रावण का चरित्र अस्मिता, राग और द्वेष से संचालित एक अस्थिर चित्त का प्रतीक है, जिसकी तार्किक परिणति व्यक्तिगत और सामूहिक विनाश के रूप में सामने आती है। चेतना के इस आत्म-विनाशकारी प्रतिमान के प्रतिकूल श्री राम का व्यक्तित्व एक क्लेश-मुक्त, अनुशासित एवं स्थिर चित्त के उस आदर्श को साकार करता है, जो बाहरी परिस्थितियों का दास नहीं, अपितु उनका स्वामी होता है।

इस शोध का सबसे महत्वपूर्ण और अंतिम निष्कर्ष यह है कि व्यक्तिगत स्तर पर 'आन्तरिक स्थिरता' प्राप्त करना ही सामूहिक स्तर पर 'सतत विकास' की अनिवार्य शर्त है। रावण की स्वर्णमयी लंका बाह्य रूप से विकसित होते हुए भी 'असतत' थी, क्योंकि उसकी नींव शोषण, अहंकार और एक अस्थिर शासक के अधर्म पर टिकी थी। वहीं दूसरी ओर, राम द्वारा स्थापित 'राम-राज्य' सच्चे अर्थों में 'सतत' था, क्योंकि उसका आधार भौतिक समृद्धि मात्र नहीं, बल्कि शासक और प्रजा की सामूहिक नैतिक एवं मानसिक आरोग्यता थी।

6. संदर्भ ग्रंथ

1. पतंजलि. (2008). पातञ्जलयोगसूत्रम् (व्यास भाष्य सहित). चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन.
2. वाल्मीकि. (2004). श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणम् (सटीक). गीताप्रेस, गोरखपुर.
3. Srimad Bhagavad Gita (with commentary of Swami Sivananda). (2010). Divine Life Society.
4. Aristotle. Nicomachean Ethics. (W. D. Ross, Trans.). In R. McKeon (Ed.), The Basic Works of Aristotle (1941). Random House.

5. Frankl, V. E. (1959). Man's Search for Meaning. Beacon Press.
6. Goleman, D. (1995). Emotional Intelligence: Why It Can Matter More Than IQ. Bantam Books.
7. Jung, C. G. (1968). The Archetypes and the Collective Unconscious. (Collected Works of C.G. Jung, Vol. 9, Part 1). Princeton University Press.
8. Kant, I. (1785). Groundwork of the Metaphysics of Morals (M. Gregor, Trans., 1997). Cambridge University Press.
9. Maslow, A. H. (1943). A theory of human motivation. Psychological Review, 50(4), 370–396.
10. Plato. (1992). Republic (G. M. A. Grube, Trans.). Hackett Publishing Company.

त्रिजटा – एक अद्भुत व्यक्तित्व

करुणा पांडे
(karunapande15@gmail.com)

मनोवृत्तियों का सूक्ष्म अंकन किसी भी प्रकार से प्रस्तुत करना असंभव है | सत्य रूप में देखा जाय तो मानव प्रवृत्तियां अनंत हैं ,और उनका सूक्ष्म वर्णन करना संभव नहीं है | नारी के भावों को प्रस्तुत करना तो और भी दुर्लभ काम है ,जिसके लिए कहा गया है कि उसकी गति को विधाता भी नहीं जान सकता है | रामकथा में ऐसे बहुत से नारी पात्र हैं जो रामकथा को गति देते हैं उसका आधार बनाते हैं | जिनकी उपस्थिति के पीछे कोई न कोई रहस्य छिपा है ..... उन्हीं नारी पात्रों में एक महत्वपूर्ण पात्र त्रिजटा का है | यह पात्र आकार में जितना छोटा है ,महिमा में उतना ही गौरवामंडित है | सागर मंथन में महालक्ष्मी के रूप में प्रकट हुयी अपनी सर्व सुलभ सम्पन्ना दुहिता के लिए रत्नाकर ने क्षीरसागर में विश्वकर्मा से सुन्दर भवन का निर्माण कराया | अष्ट सिध्दि -नवों निधि के अतिरिक्त अनेकानेक शक्तियां देह धारण कर उनकी सेवा में संलग्न हो गयी | अपने पिता दानवराज बलि की आज्ञा लेकर उनकी एक पुत्री महालक्ष्मी की सेवा में रत्नाकर की अनुमति से नियुक्त हो गयी | उसका कज्जल वर्ण देखकर अन्य अनुचारिकाएं प्राय: उसका उपहास उड़ाती थी | उसे दुखी देखकर महालक्ष्मी ने उसे वरदान दिया कि "तुम्हारा उपहास करने वाली ये अगले जन्म में तुमसे भी अधिक कज्जल वर्णी होकर ,तुम्हारी अधीनता प्राप्त करेंगी | वहां हमारी सेवा का तुम सुख प्राप्त करोगी | | अब तुम हिरण्यमयी (हिंडन) के तट पर जाकर भगवती गौरी और शिव की आराधना करो | यथासमय तुम्हारा सानिध्य प्राप्त करने मैं स्वयं आऊंगी | बलि पुत्री हिंडन नदी के तट पर तपस्या करने चली गयीं | कुछ समय पश्चात प्रजापति पुलत्स्य के पुत्र महर्षि विश्रवा वहां आश्रम स्थापित कर निवास करने लगे | कालान्तर में माल्यवान की पुत्री पुष्पोत्कटा के गर्भ से विश्रवा की पुत्री के रूप में उसने जन्म लिया | तपस्या के संस्कार सुदृढ़ होने के कारण श्रृंगार में उसकी रूचि नहीं थी | इससे उसके केश प्राय: बिखरे रहते थे | अत: उसका त्रिजटा नाम पड़ गया |कुम्भीनसी इसी की बहिन थी | जिसका मधु दैत्य ने अपहरण कर लिया था | इसका भी अपहरण न हो जाय ,इस कारण रावण उसे लंका ले आया | इस कन्या ने विवाह नहीं किया | सात्विक प्रवृति के कारण यह अपने विमातृज भ्राता विभीषण की विशेष स्नेह पात्रा बन गयी | जानकी जी को जब अपहरण के बाद अशोक वाटिका में रखा तो विभीषण ने त्रिजटा को माँ सीता की सेवा में नियुक्त करा दिया | राक्षसियों के उग्र होने पर यह उनको शांत करती रहती थी | रावण विनाश का स्वप्न विधाता ने इसको ही दिया | यह श्रीराम के राजसूय यज्ञ में लंका के राजपरिवार के साथ अयोध्या भी गयी | इस तरह रामकथा को एक आधार देने वाली पात्रा त्रिजटा का महत्वपूर्ण स्थान है |

सम्पूर्ण रामकथा में केवल सुन्दर काण्ड और लंकाकाण्ड में सीता त्रिजटा संवाद के रूप में त्रिजटा का वर्णन आया है ,परन्तु इन लघु संवादों में ही त्रिजटा के चरित्र की महत्वपूर्ण विशेषताएं उभरकर सामने आई हैं | अशोकवाटिका में सीता जी के साथ रहने वाली राक्षसियों में एक राक्षसी ऐसी भी है जिसने जन्म तो राक्षस कुल में लिया है ,परन्तु उसकी प्रवृत्ति पैशाचिक नहीं है |

"त्रिजटा नाम राक्षसी एका | रामचरन रति निपुन विवेका || (रामचरितमानस -सुन्दरकाण्ड)

मानस में सिर्फ इसी राक्षसी के लिए गोस्वामी जी ने 'राम चरन रति निपुन विवेका" कहा है | मात्र अरधाली त्रिजटा के चार प्रमुख गुणों को स्पष्ट करती है | 1- वह राक्षसी है ,2- उसकी रामचंद्र जी के चरणों में रति है 3- वह व्यवहार निपुण है , 4- वह विवेकशील है | अर्थात राक्षसी होते हुए भी श्रीरामचरणानुराग ,व्यवहार कुशलता एवं विवेकशीलता जैसे दिव्य देवोपम गुणों की अवतारणा चरित्र में अलौकिकता को समाविष्ट करती है | संत कहते हैं कि उसके मस्तक पर ज्ञान, भक्ति और वैराग्य रूपी तीन जटाएं हैं इसी कारण उसको त्रिजटा नाम से पुकारा गया |

प्रश्न है कि एक राक्षसी के हृदय में राम के प्रति प्रेम आया कैसे ? त्रिजटा कौन थी ? इन प्रश्नों पर जब हम विचार करते हैं तो बहुत से रहस्य उजागर होते हैं |

रामायण के कुछ आख्यानों में त्रिजटा रामभक्त विभीषण की पुत्री हैं | इनकी माता का नाम शरमा है | यह रावण की भातृजा है | राक्षसी उनका वंशगुण है और रामभक्ति उनका पैतृक गुण है | सीता के प्रति उनकी भक्ति के कारण श्रीराम उनसे प्रसन्न हुए ,इसलिए उन्होंने अगले जन्म में सुभद्रा (कृष्ण की बहन) के रूप में जन्म लिया |

रामकथा में त्रिजटा को लेकर अनेक मत मिलते हैं | जब हनुमान विभीषण से मिलते हैं तो विभीषण की पत्नी ने अपनी बेटी कला(जिसे कुछ संस्मरणों में नन्द या अनला के नाम से जाना जाता है) को भेजा था | जब रावण सीता को राम का कटा सिर दिखाता है तो सरमा सीता को सांत्वना देती है | बाद में रामकथा केन्द्रित साहित्य में सरमा को विभीषण की पत्नी के रूप में पहचाना गया | तमिल महाकाव्य कम्ब रामायण , गोविन्दराज की रामायण ,उडिया बलराम दास रामायण, जावानीस काकाविन रामायण, और मलय सेरी राम कथा सभी में त्रिजटा को विभीषण की बेटी के रूप

में पहचाना गया है | त्रिजटा को विभीषण की बेटी मानने के तर्क पर 'गोल्डमैन' का कहना है कि यह कुछ अजीब सा लगता है ,क्योंकि मूल महाकाव्य में त्रिजटा की आयु उससे अधिक है | आनंद रामायण में त्रिजटा को विभीषण की बेटी ,और एकनाथ की मराठी रामायण में विभीषण की बहन माना गया है | इसी तरह जैन संस्करण, संघदास गनी की वासुदेव (हिन्दी) में इसे विभीषण की बहन कहा गया है | भट्टिकाव्य पर जयमंगल की टिप्पणी में इसे रावण की बहन के रूप में प्रस्तुत किया गया है |

इसी तरह त्रिजटा को लेकर राम कथा साहित्य में अलग-अलग रूप मिलते हैं | रामायण के कई रूपांतरण त्रिजटा और सीता के बीच विकसित मित्रता और साहचर्य का वर्णन करते हैं | लेकिन हर स्थान पर त्रिजटा सीता के लिए वासल्यमयी रूप में दिखाई देती हैं | "बालरामायण" और "आनंद रामायण" में उल्लेख मिलता है कि युध्द के बाद सीता के साथ पुष्पक विमान से त्रिजटा अयोध्या आती हैं | "काकविन रामायण" में उल्लेख है कि सीता ने अयोध्या में अपनी रक्षक त्रिजटा को पुरुस्कृत किया | अयोध्या में त्रिजटा की उपस्थिति का उल्लेख करने वाली सबसे पुरानी पाण्डुलिपि "पौमाक्रिउ" है |

इसके अलावा त्रिजटा के विवाह के विषय में भी कुछ कथाएं मिलती हैं | थाई "रामकियेन'' में हनुमान ने त्रिजटा (बेनचकाई) से विवाह किया था जिससे उनके पुत्र असुरपाद का जन्म हुआ था ,जो बन्दर के मुख वाला था | हनुमान विभीषण की बेटी से विवाह करने के लिए इस शर्त पर राजी हुए थे कि वह उनके साथ केवल एक माह ही रहेंगे और फिर अपने गंतव्य को चले जायेंगे | जब हनुमान श्रीराम के साथ अयोध्या के लिए प्रस्थान करते हैं ,तो उसी समय त्रिजटा उनके पुत्र हनुमान तेगंगा (असुरपाद) को जन्म देती है | जावानीस और सुंदानी वेयांग की कठपुतली परम्परा में भी त्रिजटा को हनुमान की पत्नी के रूप में चित्रित किया गया है |

उनके पूर्व जन्म को लेकर बहुत सी कथाएं मिलती हैं |

–एक कथा के अनुसार पूर्व जन्म में वह सुवर्तना नामक अप्सरा की पुत्री सुरेखा थी | सुरेखा चित्रसेन नामक गन्धर्व से प्रेम करती थीं | एक बार चित्रसेन और सुरेखा इंद्र के दरबार में नृत्य कर रहे थे | अचानक सुरेखा का ध्यान भंग हो गया और वह रोने लगी | उसे लगा जैसे उसका और चित्रसेन का सम्बन्ध टूटने वाला है | तभी वहां नारद जी आ गए | नारद जी ने कहा – हे सुरेखा आगे जो होने वाला है उसके बारे में तुम नहीं जानती हो | जल्द ही तुमको भविष्य मालूम चल जाएगा | बस इतना कहकर नारद जी चुप हो गए | सुलेखा चित्रसेन के साथ पृथ्वी पर आई | पृथ्वी के खूबसूरत दृश्य देखकर सुलेखा और चित्रसेन बहुत खुश हुए | वह एक झरने के पास जाकर जलक्रीडा करने लगे | वह एक दूसरे पर जल की बौछार कर रहे थे | वहीं पास की एक चट्टान पर दुर्वासा ऋषि तपस्या कर रहे थे | जब सुलेखा ने पानी के छीटें चित्रसेन पर डाले , तो उसके छीटें ऋषि के ऊपर गिरे ,जिससे उनकी तपस्या में विध्न पड़ गया | अब वह अपना मन एकाग्र नहीं कर पा रहे थे | उन्होंने अपने नेत्र खोले और सुलेखा से कहा – हे सुलेखा! मैं जानता हूँ तुम एक अप्सरा हो और ये एक गन्धर्व है | तुम यहाँ से चली जाओ | सुलेखा ने हँसते हुए कहा – अरे महर्षि आप ही कहीं और चले जाइए ,यह प्रकृति तो सबकी है | इस प्रकार कहकर वह बार-बार जल क्रीडा करती रही, जिससे पानी के छींटे ऋषि पर गिरते रहे | तब ऋषि ने क्रोध में आकर शाप दिया – यह कार्य तो सिर्फ राक्षसों द्वारा किया जाता है और तुमने मेरे साथ राक्षसों वाला व्यवहार किया है ,इसलिए मैं श्राप देता हूँ कि जाओ तुम इसी समय राक्षसी रूप में परिवर्तित हो जाओ | यह सुनकर चित्रसेन ने ऋषि के पैर पकड लिए और कहा –"ऋषिवर ! सुलेखा के अपराध को क्षमा कीजिये | उसको शाप मुक्त कर दीजिये |

बार-बार चित्रसेन और सुलेखा के क्षमा मांगने पर दुर्वासा ऋषि ने कहा – जैसे धनुष से निकला तीर वापस नही लौटता उसी तरह मेरे मुख से निकला शाप भी कभी बदल नहीं सकता | लेकिन तुम इतना पाश्चाताप कर रही हो तो मैं एक वरदान भी देता हूँ कि तुम्हें इसी रूप में साक्षात नारायण और नारायणी के दर्शन होंगे और मुक्ति प्राप्त होगी | तुमको सीता जो साक्षात लक्ष्मी का अवतार हैं उसकी सेवा करने का अवसर मिलेगा | तब जाकर तुमको मुक्ति मिलेगी | उसी समय अप्सरा रूप त्यागकर उनका राक्षसी रूप में जन्म हुआ |

एक कथा इस प्रकार भी मिलती है कि माली नामक राक्षस के कंचुकेशी नाम की एक पुत्री थी | एक बार कंचुकेशी विश्रवा (रावण के पिता) के निकट गयी ,उसने हरिकीर्तन के नाम से ऋषि को प्रसन्न किया | उनके रतिदान से कंचुकेशी गर्भवती हुयी | कंचुकेशी की सेवा से प्रसन्न हुए | ऋषि ने वरदान दिया कि तुझसे उत्पन्न पुत्र साधू और भगवान का भक्त होगा और पुत्री साक्षात लक्ष्मी की सेविका होगी | ऋषि के वरदान से कंचुकेशी के पहले पुत्र विभीषण हुए जिनकी भक्ति विश्वप्रसिध्द है | और पुत्री त्रिजटा हुयी जिन्होंने साक्षात् लक्ष्मी सीता की माँ बनकर सेवा की और प्रभु राम के दर्शन कर मुक्ति को प्राप्त हुयी | रावण विभीषण ,कुंभकर्ण और त्रिजटा ने नर्मदा के तट पर घोर तपस्या की थी और उसी तपस्या में त्रिजटा ने अक्षुण्ण भगवद्भक्ति माँगी थी | इस कथा के अनुसार त्रिजटा रावण की मौसेरी बहन थी | क्योंकि रावण की माँ का नाम कैकसी था और कैकसी के चाचा माली की पुत्री कंचुकेशी थी | त्रिजटा के विषय में बहुत सी कथाएं मिलती हैं |

इस सम्बन्ध में "हिन्दी शब्द सागर" में त्रिजटा को विभीषण की बहन बताया गया है | वहां सिर्फ यही उल्लेख है कि वह सीताजी के साथ अशोक वाटिका में रहती हैं | महाभारत के वनपर्व में अध्याय -281 में त्रिजटा का उल्लेख उन सखियों के साथ मिलता है जो सीताजी की देखभाल के लिए नियुक्त की गयी थीं -उनमें त्रिजटा, त्रयक्षी, दन्यक्षी ,दीर्घ जिव्हा, ललाटाक्षी,त्रिस्तनी ,एकलोचना आदि प्रमुख थीं | रामचरितमानस में तुलसी ने त्रिजटा को एक पावन स्थान दिया है | त्रिजटा ने जन्म तो अवश्य राक्षस कुल में लिया है परन्तु उसकी प्रवृत्ति पैशाचिक नहीं रही है | दुःख व वेदना से कृशकाय होती हुयी सीता को वह सांत्वना देती है | उसको धमकाने वाली राक्षसियों को डांटती है | वह भविष्य दृष्टा भी है | उसे पूर्व में ही आभास हो

जाता है इसलिए वह सभी राक्षसियों को बुलाकर कहती है –" सीताजी की सेवा करके अपना कल्याण कर लो ,मैंने स्वप्न में एक वानर को लंका दहन करते हुए देखा है | उस वानर ने सारे राक्षसों की सेना को मार दिया |

"सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना | सीतहिं सेई करहूँ हित अपना ||
सपने वानर लंका जारी | जातु धान सेना सब मारी ||
खर आरूढ़ नगन दससीसा | मुंडित सर खंडित भुज बीसा ||

श्वेत ऐरावत पर आरूढ़ होकर राम लक्ष्मण असुर रावण को युध्द में मारकर सीता को लेकर पर्वत शिखर पर बैठे हैं और रावण गले में मुंडमाला पहने ,शरीर में तेल लगाए, नंगा होकर अपने पुत्र -पौत्रों के साथ गोबर के कुंड में डुबकी लगा रहा है | (शास्त्रों में यमराज का स्थान दक्षिण दिशा कहा गया है)

वियोगिनी सीता को त्रिजटा का बहुत सहारा था | जब भी माँ सीता को कष्ट हुआ ,उन्होंने उसका निवारण करने का प्रयास किया | अपने सम्पूर्ण चरित्र में सीताजी के लिए इन्होने परामर्शदात्री और प्राण रक्षिका का कार्य किया है यही कारण है कि माँ सीताजी उसे माँ कहकर पुकारती थीं - "त्रिजटा सन बोली कर जोरी | मातु विपति संगिनी तै मोरी ||" (मानस -सुन्दरकाण्ड -11- 2)

त्रिजटा को मानव-मनोविज्ञान का सूक्ष्म ज्ञान है | वह सीताजी के स्वभाव और मनोभाव को अच्छी तरह समझती हैं | उन्हें पता है कि राम की यश गाथा को सुनकर सीताजी का दुःख कम होता है |

सीता राम की विरह वेदना से आत्मदाह करने के लिए त्रिजटा से अग्नि मांगती हैं ,यह सुनकर त्रिजटा का हृदय विदीर्ण हो जाता है और वह रामभक्त यह कहकर टाल देती हैं कि रात्रि के समय अग्नि नहीं मिलेगी और राम के गुणों का बखान करती हैं ,और वह सोचती हैं कि मेरी उपस्थिति इस समय यहाँ उपयुक्त नहीं है ,वह सीता को समझाती हुयी कहती हैं –

"निसि न अनल मिल सुनु सुकुमारी | अस कहि सो निज भवन सिधारी | (मानस – सुन्दरकाण्ड)

त्रिजटा की चातुरी और ज्ञान का एक उदाहरण युध्द्कांड में भी मिलता है | राम रावण का युध्द चरम पर है | रावण के सिर कट-कट कर गिरते हैं और नए आ जाते हैं और रावण श्रीराम के प्रयासों से नहीं मरता है | इस तरह के युध्द के समाचार को सुनकर सीता के मन में संदेह उत्पन्न होता है कि इस युध्द में रावण मारा भी जाएगा या नहीं क्योंकि उसके बार-बार नए शीश आ जा रहे हैं | राम का स्मरण करके सीता बहुत प्रकार से विलाप करती हैं -- "बहुविधि करत विलाप जानकी | करि-करि सुरति कृपा निधान की ||"

लेकिन त्रिजटा रावण वध के प्रति आश्वस्त हैं | वह सीता को बहुत प्रकार से समझाती है और बताती कि रावण कैसे मरेगा | प्रभु श्रीराम उसे क्यों नहीं मार रहे हैं | त्रिजटा कहती हैं कि रावण हृदय में बाण लगने से ही मरेगा ,परन्तु प्रभु इस कारण उसके हृदय में बाण नहीं मार रहे हैं क्योंकि रावण के हृदय में आप (जानकी जी) बसती हैं |

"प्रभु ताते उर हतहि न तेही | एही के हृदय बसति वैदेही||"(मानस-लंकाकाण्ड)

रावण के हृदय में जानकी का वास है ,और जानकी के हृदय में मेरा (राम जी का) वास है ,तथा मेरे हृदय में अनेक भुवन व्याप्त हैं , सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का वास है | अत: बाण लगते ही सबका नाश हो जाएगा | यह सुनते ही सीताजी अत्यंत हर्ष से भर जाती हैं | त्रिजटा कहती है कि हे सुकुमारी ! आप संदेह का त्याग कर दो | जब बार-बार शीश कटने पर रावण व्याकुल हो जाएगा और उसका ध्यान अपने जीवन की रक्षा में लगेगा और उसके हृदय से तुम्हारा ध्यान हट जाएगा , उसी पल राम जी उसके हृदय में शर-संधान करेंगे | यह सुनते ही सीताजी का संदेह दूर हो गया और वह संतुष्ट हो गयी |

"एहि के हृदय बस जानकी , जानकी उर मम वास है |
मम उदर भुवन अनेक लागत , बान सब कर नास है ||" (मानस – लंकाकाण्ड)

इस प्रकार मानस में त्रिजटा का चरित्र वात्सल्य -सम्पन्नता , उदारमना, राम के प्रति दृढ़ आस्थावान के रूप में चित्रित किया गया है | इसी तरह आध्यात्म रामायण में त्रिजटा का चरित्र एक वृध्दा राक्षसी के सद्व्यहार और उसके स्वप्न का वर्णन करते हुए कहा गया है -- "एवं तां भीषयन्तीस्त , राक्षसी विकृर्तान्ना:
निवार्य त्रिजटा वृध्द , राक्षसी वाक्यम ब्रबीत ||
श्रृणुध्वम रुदतीम नमस्कूरुत जानकीम |
इदानीमेव में स्वप्ने राम: कमललोचन: ||
आरुहयैरावतं शुभम लक्षमनेन समागत: |
दगहवा लंकापुरी सर्वा हत्वा रावणमाह्वे ||" (अध्यात्म रामायण -सुन्दरकाण्ड)

सीता जी को इस प्रकार डराती हुयी विकृत वदना राक्षसियों को रोककर बोली – अरी दुष्टा राक्षसियों ! मेरी बात ध्यानपूर्वक सुनो क्योंकि इसमें तुम्हारा ही हित होगा | तुम रोती बिलखती जानकी जी को भयभीत मत करो ,इन्हें नमस्कार करो , मैंने अभी-अभी एक स्वप्न देखा है जिसमें राम जी

लक्ष्मण समेत श्वेत ऐरावत हाथी पर चढ़कर आये हैं और सम्पूर्ण लंकापुरी को दहन कर रावण को युध्द में मारकर सीताजी को अपनी गोद में लिए पर्वत शिखर पर बैठे हुए देखा है |

आनंद रामायण में भी इसी प्रकार का वृत्तांत है –

"जानकीं तां स्वशब्दैश्च तथा क्ररोक्तिभिमुह:

आस्यविंदीर्णखडग़द्य भीषयन्स्य: करादिभि: -----|"

रावण के चले जाने पर राक्षसियां अपने भयानक वाक्यों से सीता को भयभीत करने लगी | तब त्रिजटा ने राक्षसियों को अपना स्वप्न और लंका को जलाने वाली बात बताई जिसको सुनकर सारी राक्षसियां चुप हो गयीं

इसी प्रकार बाल्मिकीय रामायण में भी त्रिजटा का चरित्र जन्म से राक्षसी होकर भी कर्म से अलग बताया है | अशोक वाटिका में राक्षसियां सीताजी से पापपूर्ण विचार रखती थी | त्रिजटा ने उनसे कहा -नीच निशाचारियों तुम सब अपने आपको खा जाओ | तुम सब राजा जनक की प्यारी बेटी एवं राजा दशरथ की पुत्रवधू को नहीं खा सकती | इस तरह त्रिजटा ने सीता की एक माँ समान रक्षा की और उनका मनोबल बनाए रखा | त्रिजटा का सीता के प्रति अगाध स्नेह और उनके लिए मन की संवेदनाएं उस समय अपने चरम पर दिखाई देती हैं जब श्री राम अपने यात्राक्रम में लंका पहुंचे | उनकी जिज्ञासा अनुभव करते हुए अंगद -मारुती आदि कपि उन्हें सुवेलाचन के अलावा उन निकुम्भिला आदि स्थानों पर भी ले गए ,जहाँ वे वनव्रती होने के कारण नहीं जा पाए | इसी क्रम में वे लोग अशोकवाटिका भी जा पहुंचे | वहां अशोक वृक्ष के नीचे सीता प्रतिमा को देखकर सभी के नेत्र भीग गए और हाथ जुड़ गये | पास में ही एक अधेड़ उम्र की ममतामयी नारी को घेरकर निशाचर नारियों का समूह वार्ता कर रहा था | उन्होंने जैसे ही श्रीराम को देखा तो तुरंत आगे बढ़कर कहा-"श्रीसीतापति राजराजेश्वर ! परिकर सहित त्रिजटा का प्रणाम स्वीकार करें |" सभी की निर्निमेष तरल दृष्टि श्री जानकी विग्रह की ओर लगी हुयी देखकर त्रिजटा बोली –"महारानी यहीं अपनी प्रवास अवधि में रहीं | प्राय: इसी मुद्रा में सिमटी-सकुचाई मौन धारण किये , धरती पर दृष्टि केन्द्रित किये हमने उन्हें सदैव देखा | इस वेदी से उतरकर उनको टहलते हमने कभी नहीं देखा | वे नित्य कृत्यों से किस समय निवृत्त हो जाती थी हममें से कोई रात-रातभर जागकर भी नहीं जान पायी | अगर राजेश्वर श्री राम की अनुमति होगी तो मैं जितना उनके सानिध्य में जान पायी, आज कहूंगी |

सभी की दृष्टि श्रीराम पर उठ गयी | राम धीरे से बोले –" देवि त्रिजटे ! आप जानकी के सभी गुण दोषों का वर्णन निर्भीक और निसंकोच होकर कर सकती हो |"

"महाराज ! आप यह क्या कह रहे हैं? महारानी में दोष ? शिव-शिव ,उनका सानिध्य तो बड़े से बड़े दोषी को दोषमुक्त करने में संजीवनी की तरह हमने देखा है | मेरे पास इसका प्रमाण है | वह जो कोने में दबी सी आँखे नीची किये ,एक अपराधिनी की तरह सजल नेत्रों से पूछ रही है कि मेरे अपराधों का और मेरे पापों का प्रायश्चित कब पूरा होगा ? जानते हैं आप -यह कौन है ? इसने लंकेश्वर की आज्ञा से महारानी को न जाने कितनी कडवी और निम्न स्तर की बातें कह दी और तलवार का वार करने को भी उद्दत हुयी | मगर महारानी तो पता नहीं कहां विचारमग्न रहती थी | जब महारानी ने कोई शब्द नहीं कहा और बहुत स्नेह के भाव से इसकी तरफ देखा तो इसका हृदय परिवर्तित हो गया | यह महारानी के चरणों में गिरते हुए रोती-बिलखती माफी मांगने लगी | तब महारानी धीरे से बोली – बावली ! तू दोषी नहीं है | क्यों व्यर्थ में दुखी हो रही है ? तेरे शब्दों को मैंने सुना ही नहीं क्योंकि मेरे कान तो श्रीराम के शब्दों से ही गुंजायमान होते रहते हैं | तू अपने कर्तव्य का पालन कर |" यह सुनते ही सीता माँ की इस दशा का कारण स्वयम को मानकर भरत के नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी |

त्रिजटा ने कहना प्रारम्भ किया – "एक दिन एकांत पाकर मैंने उनके परिधान पट का स्पर्श करते हुए जिज्ञासा व्यक्त की कि महारानी यह कौन सा वस्त्र है जो अनेक मासों के व्यतीत हो जाने के बाद भी ना तो मलिन दिखा और नहीं पुराना पड़ा | क्या यह अयोध्या का निर्माण है या मिथिला का है ?"

यह सुनते ही एक दिव्य भाव उनके नेत्रों में जैसे प्रकट हो गया ,सदैव शांत रहने वाली महारानी बोली – " यह वस्त्र न तो अयोध्या का है और न ही मिथिला का है | यह पातिव्रत्य के पावित्र्य की अद्वितीय प्रतिमा महादेवी माँ अनसूया का प्रसाद है | जब हम चित्रकूट से चलने लगे तो महर्षि अत्रि से आशीर्वाद मांगने उनके आश्रम गए ,तब माँ अनसूया ने यह वस्त्र और कुछ आभूषण दिए | मेरे संकोच करने पर भविष्य दृष्टा माँ ने कहा –"मिथिलेश दुहिते ! इन्हें देवता का प्रसाद समझकर ग्रहण करो ,कहते हुए वह मौन होकर शून्य में कुछ देखने लगी | कुछ समय बाद स्वस्थ होकर बोली –"पुत्री ! ये वस्त्र-आभूषण प्रसाद की तरह ग्रहण करो | मैं तुम्हारे भविष्य को स्पष्ट देख रही हूँ | चित्रकूट से निकलते ही अनेक समस्याएं जीवन में आयेंगी | उस समय ये तुम्हारे लिए रक्षा कवच सिध्द होंगे | मैं इस वस्त्र को धारण करते हुए नित्य त्रिसन्ध्य स्नान करती हूँ | यह शरीर पर कब सूख जाते हैं ,मैं आज तक जान न पाई | इनका रंग आप देख ही रही हैं | कहीं से मैला -धुमैला आज तक नहीं हुआ | यदि यह नहीं होती तो क्या होता , क्योंकि लंका का तो कोई वस्त्र मैं कदापि स्पर्श नहीं करती | अत: माँ के द्वारा दिया वस्त्र मेरे लिए किस तरह रक्षा कवच बना यह सिध्द हो गया | आगे त्रिजटा ने कहा –" प्रभु हम सब गृह कार्यों से निवृत्त होकर पति-और पुत्र की स्मृति को हृदय में सहेजे , यहाँ आकर माँ की कुछ चर्चा करते हैं जिससे हमारे कुछ शोक-संताप नष्ट हो जाते हैं | आज महारानी लंका की अधिष्ठात देवी के रूप में प्रत्येक घर में स्थापित हो चुकी हैं | उनकी प्रतिमाएं

नित्य पूजी जाती हैं ,उनके नाम के उठावने भी रखे जाते हैं ,लोगों को इससे कार्यों की सिध्दी भी मिलती है | आज अशोकवाटिका लंका का तीर्थ बन गयी है |बस कहने को बहुत हैं पर अब कहने की सामर्थ्य नहीं है प्रभु ---|

त्रिजटा के मौन होते ही श्रीराम उठ गए | सभी ने त्रिजटादि से उस अशोक वृक्ष के पत्र लेकर प्रसाद रूप में अपने-अपने मुकुटों में लगाया और अशोक वृक्ष को प्रणाम करके द्वार से बाहर चले गए | इस समय सभी की आँखें तरल थी और मन भीगे हुए थे | त्रिजटा अत्यंत भाग्यशाली रहीं कि उनको साक्षात लक्ष्मी स्वरुप सीता का प्रत्येक क्षण मिला , उनकी सेवा करने का अवसर मिला और उनका प्रेम मिला | जब श्रीराम ने उन पर कृपा करके कुछ देना चाहा तो त्रिजटा ने कहा –"हे प्रभु ! मैं केवल आपके स्वरूप के प्रति एक मात्र निष्ठां को चाहती , आपके प्रेम दास्य की कामना करती हूँ | अत: हे रघुकुल शिरोमणि हमें निष्कलुष अपनी भक्ति प्रदान कीजिये |" भगवान् के पास देने के लिए सबसे छोटी वस्तु है मोक्ष और सबसे बड़ी वस्तु हैं भक्ति | इस भक्ति को कोई विरला ही प्राप्त कर पाता है | त्रिजटा ने अपने सद्गुणों और व्यवहार से इस परम दुर्लभ भक्ति को प्राप्त किया

त्रिजटा मोक्ष पाने के लिए काशी में निवास करने लगी | वहीं वाराणसी में त्रिजटा का एक मंदिर है ,जहाँ देवी रूप में उनकी पूजा होती है | यहाँ त्रिजटा को मूली और बैंगन का चढ़ावा चढ़ाया जाता है | इसी तरह त्रिजटा का एक मंदिर उज्जैन में भी है ,जो बालवीर हनुमान मंदिर परिसर में है | इस तरह राक्षस कुल में जन्म लेकर भी त्रिजटा ने अपनी भक्ति और सात्विकता से परम पद मोक्ष को प्राप्त किया |

(विभिन्न काल,परिवेश, सामाजिक पृष्ठभूमि ,हर युग और स्थान के आधार पर त्रिजटा के व्यक्तित्व को सबने अपने - अपने ढंग से परिभाषित किया | जो लिखा गया,कहा गया ,उससे ज्यादा अनुत्तरित अभी बहुत कुछ है ,जिसे जानना होगा |)

रामराज्य का आधार-राम का वनगमन

Aasha Srivastava
(asha.srivastava24@gmail.com)

1. प्रस्तावना

जब हम 'रामराज्य' की बात करते हैं,तो सहज ही श्रीरामचरितमानस की वे पंक्तियाँ सम्मुख आ जाती हैं-

राम राज बैठें त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका।।
बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई।।
दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।

'रामराज्य' अर्थात् त्रेतायुग के महानायक राजा राम द्वारा शासित, पोषित, उन्नति के चरमोत्कर्ष तक विकसित अयोध्यानगरी , जो श्रीराम के राज्याभिषेक के पश्चात एक आदर्श नगरी कहलाई।

वह राज्याभिषेक, जो उनके पिता - दसों दिशाओं में रथ चलाने वाले और दसों इन्द्रियों -पांच ज्ञानेंद्रियों और पांच कर्मेन्द्रियों को वश में रखने वाले महाराज दशरथ ने, चौदह वर्ष पूर्व ही होना निश्चित किया था, किन्तु उसके स्थान पर उनको चौदह वर्षों के लिए वल्कल और जटाजूट धारण कर वनगमन का आदेश मिल गया। यह संयोगवश नहीं,बल्कि पूर्वनियोजित था। देवताओं द्वारा देवी सरस्वती से आग्रह कर मंथरा की मति फेरना, मंथरा द्वारा रानी कैकेयी की मति फेरना , उनको वर्षों पूर्व धरोहरस्वरूप महाराज दशरथ के पास रखे हुए दो वचनों का याद दिलाना, फिर वे दो वचन-भरत का राज्याभिषेक और राम को चौदह वर्षों का वनवास- यह सब पूर्वनिर्धारित था। उन चौदह वर्षों का वनवास ही 'रामराज्य' का आधार बना।

"पिताँ दीन्ह मोहि कानन राजू। जहँ सब भाँति मोर बड़ काजू।।" अयोध्याकांड में जब यह बात राम अपनी माता कौशल्या से कहते हैं, तभी यह सङ्केत मिलता है, कि चौदह वर्ष का जो वनवास उन्हें विमाता कैकेयी ने नकारात्मकता से प्रेरित हो अभिशाप या दण्ड स्वरूप दिया था, उसी को वे अपनी सकारात्मकता से भरकर वरदान में परिणत करने वाले हैं।

'रामराज्य' पर बात करने से पूर्व यह जानना आवश्यक हो जाता है, कि वे कौन सी विशेषताएं हैं,जो एक राजा को 'सर्वोत्तम राजा' बनाती हैं और उन्हें हम उनके वनवास में कैसे देख सकते हैं।

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार राजा में न्यायप्रियता,दयालुता,सत्यनिष्ठा,विश्वसनीयता,
ईमानदारी, साहस और दूरदर्शिता जैसे गुणों का होना आवश्यक है। प्रजा के हितों को सर्वोपरि रख उसके कल्याण के लिए कार्य करना और अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं करना भी प्रमुख हैं।

अब उस 'वनगमन' के आदेश के फलस्वरूप प्राप्त 'वनवास' की बात करते हैं और बात करते हैं उन समस्त कार्यों की जो 'वनवासी' या 'वन के राजा' राम ने उन चौदह वर्षों की अवधि में किये।

उनसे यह अपेक्षा की गई थी कि वे उस अवधि को तपस्वियों की भाँति वन में रहकर व्यतीत करेंगे। परन्तु वे तो क्षत्रिय थे, तो अपना स्वधर्म- क्षात्र धर्म कैसे भूलते? प्रसङ्गवश यहाँ श्रीमद्भगवद्गीता के 18वें अध्याय के 43वें श्लोक की चर्चा आवश्यक हो जाती है,जिसमें भगवान श्रीकृष्ण क्षात्र कर्मों की विशेषताएं बताते हुए अर्जुन से कहते हैं-

शोर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।

अर्थात् पराक्रम, शौर्य, धैर्य,कार्य मे दक्षता, युद्ध में पलायन न करना, खुले हाथों से दान और प्रभुत्व यानी नेतृत्व का भाव -यह क्षत्रिय के स्वाभाविक कर्म हैं।

उन्होंने अपने सहज क्षात्र धर्म और चूंकि वे राजकुमार थे ,तो राजधर्म के ज्ञान का सदुपयोग वन में रहकर किया।

अब हम एक उत्तम राजा की उन कुछ विशेषताओं पर प्रकाश डालने का प्रयास करेंगे, जिनका पालन उन्होंने वनवास की अवधि में किया।

2. जनसम्पर्क

राजा का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कर्तव्य होता है कि वह अपने प्रजाजनों के साथ सम्पर्क बनाये रखे और उनके हर प्रकार के कष्टों का निवारण कर

उन्हें सुखी रखे। वे वन में जहाँ जहाँ से होकर गुज़रे, वहाँ वहाँ के निवासियों के कष्टों को चिह्नित कर उनका भलीभाँति निवारण किया। दैत्यकुल के नाशक,ऋषियों के रक्षक हैं राम। उनका जन्म ही 'परित्राणाय साधूनाम, विनाशाय च दुष्कृताम्' हुआ था।इसे सार्थक करते हुए उन्होंने जहाँ विविध राक्षसों का सँहार कर ऋषियों, मुनियों, तपस्वियों और वनवासियों को अभयदान दिया, वहीं किष्किन्धा पहुँच कर वहाँ के निवासी वानरों, रीछों ,भालुओं से मित्रता की और बाली का वध कर सुग्रीव को अभयदान देकर उसे उसका राज्य वापस दिलाया।

अब एक मूलभूत प्रश्न यह उठता है, कि उन्होंने वानरों, रीछों ,भालुओं से संवाद कैसे किया होगा? किस भाषा के माध्यम से उनकी बात समझी होगी, क्या उनके मध्य किसी सांकेतिक भाषा का प्रयोग हुआ होगा?

यदि भौतिक दृष्टिकोण से देखें,तो यह सभी प्रश्न नितान्त स्वाभाविक हैं। किन्तु यदि इनको आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखने का प्रयास करें, तो यह बिल्कुल वैसा ही था,जैसे किसी पिता ने अपनी संतानों की समस्या सुलझाई हो। श्रीराम साक्षात परमात्मा थे, (जो मनुष्य रूप में 'लीला' कर रहे थे)। सम्पूर्ण जगत के सभी स्थावरजङ्गम, चराचर प्राणियों में उनका ही तो अंश विद्यमान होता है। फिर एक दूसरे से संवाद में समस्या होने का प्रश्न ही नहीं उठता। यही वानर,भालू रीछ कालांतर में रावण से युद्ध के समय उनकी 'सेना' बने और उन्होंने विचित्र अस्त्र-शस्त्रों- पेड़ ,पहाड़, पाषाण खण्डों के शत्रुसेना पर फेंक फेंक कर प्रहार कर उन्हें विचलित किया और श्रीराम को अंततः विजयश्री प्राप्त हुई।

3. दूरदर्शिता

एक राजा का दूरदर्शी होना परमावश्यक होता है। इसके द्वारा वह दुष्कर कार्यों को सम्भव कर सकता है। निम्न प्रसंगों पर दृष्टि डालें-

ऋषि शरभंग,जिन्होंने श्रीराम के पुण्य दर्शन प्राप्त कर आत्मदाह कर मुक्ति पाई थी, उनके आश्रम से निकल श्रीराम ने अस्थियों के ढेर देखे। मुनियों ने बताया कि यह उन सब मुनियों की अस्थियां हैं, जिन्हें राक्षसों ने खा डाला है। इससे वे दुःखी अवश्य हुए,किन्तु तत्क्षण राक्षसों के सर्वनाश का प्रण भी लिया ,जिसे उन्होंने पूरा भी किया। यह दूरदर्शिता ही थी, कि कामवासना में चूर रावण की बहन सूर्पणखा का अपमान कर मानो दंडकारण्य में आतंक बनाने वाले उसके भाइयों खर दूषण और त्रिशिरा को खुली चुनौती दे डाली। एक उत्तम योद्धा और राजा भाँति उन शत्रुओं का वध कर मानो रावण तक यह मौन सन्देश पहुंचाया कि अब उन राक्षसों के अन्याय और आतंक का अन्त निश्चित है।

एक उत्तम राजा शतरंज के दक्ष खिलाड़ी की भाँति प्रतिद्वंद्वी की चालों- अपनी हर क्रिया पर उसकी प्रतिक्रिया का पूर्वानुमान कर उसके अनुसार आगे की क्रियाओं को सोचता है। सूर्पणखा के अपमान, खर दूषण त्रिशिरा के वध के फलस्वरूप अहंकारी रावण से अपना संतुलन खोकर किसी अशोभनीय कृत्य की ही अपेक्षा और आशंका थी। इसीलिए उन्होंने सीता को अग्नि में प्रवेश कर अपनी छाया के रूप में तब तक रहने को कहा, जब तक वे लंकापति रावण का वध न कर दें। हनुमान की सहायता से सुग्रीव से मित्रता और बाली से मुक्ति में उसकी सहायता कर वानर सेना का सहयोग लेना भी दूरदर्शिता के ही परिणाम थे।

गुरु बृहस्पति द्वारा प्राप्त शाप के कारण रावणपुत्र अक्षय कुमार के सम्मुख अंगद का बचना कठिन था । इसलिए सीता की खोज के लिए हनुमान जी को भेजना और अक्षय कुमार की मृत्यु के पश्चात अंगद को भेजना ,यह सब दूरदर्शिता के लक्षण हैं।

4. न्यायप्रियता

सूग्रीव से मित्रता और उसे न्याय देने के लिए श्रीराम ने बाली का वध किया और उसके इस प्रश्न का कि मुझे क्यों मारा ,उसे उसका कारण बताते हुए उपदेश दिया और उसे अपने धाम की अंतिम गति भी प्रदान की।

इसके अतिरिक्त भी अनेकों राक्षसों यथा कबंध, विराध का वध कर उन्हें अपने धाम भेजा।

सागर द्वारा विनती करने पर उसके उत्तर तट पर रहने वाले दुष्ट मनुष्यों को बाण से मारकर उसे अभयदान देना उनकी न्यायप्रियता के उदाहरण हैं।

लोकप्रियता और लोकवात्सल्य-

श्रीराम की लोकप्रियता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि वे अयोध्या से निकलकर वन जाते समय जहाँ से होकर गुज़रे,वहाँ के निवासी उनके व्यक्तित्व के दिव्यत्व, सौम्यत्व और सौन्दर्य पर मुग्ध हो गए। उनको अपनी इस लोकप्रियता का भान था,लेकिन वे इसका गुमान न करते हुए सहज रूप में लोकवत्सल रहे। निषादराज गुह से प्रेमपूर्वक मिलकर उसे इस सँकोच से बचाया कि वह निम्न जाति का है और वे राजपुत्र हैं। जटायु के दाहकर्म और निजधाम भेजने के पश्चात जब वे भीलनी शबरी के आश्रम में पधारे तो उसके प्रेम और भक्ति में पगे वचनों से अभिभूत हो उसके दिए कंद,मूल,फल आदि प्रेम से ग्रहण किये। उसे इस कुण्ठा से कि वह निम्न जाति की है, अधम है या स्त्री है, मुक्त कराकर उसे नवधा भक्ति का ज्ञान दिया।

सत्यनिष्ठा और विनम्रता-

एक राजा के लिए सत्यनिष्ठ और विनम्र होना परमावश्यक है। अयोध्या से वन के मार्ग में श्रीराम की

जिन भी ऋषियों ,मुनियों से भेंट हुई, फिर चाहे वे ऋषि अत्रि,भरद्वाज हों,वाल्मीकि, अगस्त्य मुनि के शिष्य सुतीक्ष्ण या स्वयं अगस्त्य मुनि हों, चित्रकूट पर्वत पर रहने वाली मुनि मण्डली हो या सामान्यजन हों ,श्रीराम की विनम्रता, सौम्यता और तेजोमय रूप से सभी प्रभावित और उनकी प्रशंसा,स्तुति करने को तत्पर थे। उनकी प्रशंसा या स्तुति से निर्लिप्त वे निर्द्वन्द्व,निरभिमान,निर्दम्भ, सहज,स्वाभाविक रहे और बड़ी विनम्रता से अपने

पिता के वचनों के विषय में सत्य ही बताया। उनकी सत्यनिष्ठा की पराकाष्ठा हमें तब देखने को मिलती है, जब रावण का सँहार कर विजयी हो उनकी प्रिया पत्नी सीताजी को लंका से लाना था।

लोकनीति तो कहती है,कि पत्नी को लाने पति को ही जाना चाहिए, किन्तु सत्यनिष्ठा यह कहती है,कि तब तक उनके वनवास की चौदह वर्ष की अवधि पूर्ण नहीं हुई थी और वे वन के अतिरिक्त कहीं और नहीं जा सकते थे। फिर वह तो 'हाटकपुर' ,सोने की लँका थी।वहाँ जाने से पिता का वचन भंग होता। इसलिए उन्होंने सीता जी को लँका से वापस लाने के लिए हनुमान,अंगद और विभीषण को भेजा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वनवास की अवधि में श्रीराम एक उत्कृष्ट राजा के रूप में ही नहीं उभरे,उन्होंने यह सिद्ध कर दिया मनःस्थिति बदलती है,तो परिस्थितियां भी बदलती हैं। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि प्राञ्जल प्रज्ञा प्रेरित सकारात्मक मनःस्थिति से नकारात्मक परिस्थितियों में भी उन्नति और उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त कर लोक कल्याणोन्मुख हुआ जा सकता है। वे जातिगत, वर्णगत और प्राणिगत भेदभाव किये बिना वनवास की अवधि पूर्ण होने तक एक सर्वप्रिय, सर्वसमर्थ और सर्वगुणसम्पन्न राजा बन चुके थे। यहीं से नींव पड़ी उस 'रामराज्य' की, जिसकी महिमा महर्षि वाल्मीकि ने इस प्रकार बखानी है-

रामो राज्यमुपासीत प्रजा धर्मपतिः पितेव।
चचार तापसं धर्मं रक्षन् सर्वप्रजाः सदा।।
रामो रामो रामो राज्यमानीश्वरो नृणाम्।
सर्वे लक्षणसम्पन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः।।

प्रस्तुति-आशा श्रीवास्तव

सन्दर्भ ग्रन्थ-

श्रीरामचरितमानस
श्रीमद्भगवद्गीता
श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण

इति

विभीषण गीता: धर्म, नीति और आत्मबल का प्रकाशपुंज

नीलम झा
(njforexamcell18@gmail.com)

कह गए राम विभीषण से
धर्म-पथ पर जो डट जाए, उसका जीवन प्रकाश बन जाए,
विजयी हो वो हर समर में, जिसके मन में नीति-दीप जल जाए।

1. प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में धर्म, नीति, मर्यादा के आदर्शों का जितना सूक्ष्म व गहन प्रतिपादन श्रीरामचरितमानस में हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। इस महाकाव्य का प्रत्येक पात्र किसी न किसी आदर्श का प्रतीक है। इनमें विभीषण का चरित्र विशेष उल्लेखनीय है, जब रावण ने बार-बार विभीषण द्वारा दिए गए सदुपदेशों की उपेक्षा की, तब विभीषण ने यह अनुभव किया कि अधर्म का साथ देना स्वयं अधर्म को पोषित करना है। तत्पश्चात वे रावण का परित्याग कर श्रीराम की शरण में चले गए, जहाँ उन्हें धर्म, नीति और कर्तव्य का वास्तविक स्वरूप ज्ञात हुआ।

श्रीरामचरितमानस के लंका काण्ड में श्रीराम और विभीषण के मध्य हुआ संवाद, जिसे 'विभीषण गीता' कहा जाता है, केवल पौराणिक प्रसंग नहीं, बल्कि धर्म, नीति और विवेक का गहन दार्शनिक विमर्श है। इसमें श्रीराम के उपदेश करुणा, समता, कर्तव्यबोध और नीति का अद्भुत संगम प्रस्तुत करते हैं। यह संवाद भगवद्गीता की भाँति शाश्वत, उपदेशात्मक, मार्गदर्शक और सार्वकालिक है । आज के सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य में, जब नीतियाँ ढुलमुल हैं, सत्य को दबाया जा रहा है और व्यक्ति धर्म-स्वार्थ के द्वंद्व में उलझा है, विभीषण गीता की शिक्षाएँ प्रकाश-स्तंभ की भाँति पथप्रदर्शक लगती हैं। यह संवाद समयातीत सत्य का उद्घोष करते हुए व्यक्ति और समाज दोनों के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है।

2. विस्तार

विभीषण गीता का स्वरूप आत्मसंयम, विवेक और धर्मनिष्ठा के माध्यम से आंतरिक और बाह्य विजय का शाश्वत प्रतीक है। यह वह दार्शनिक संवाद है, जिसमें श्रीराम धर्म, नीति और आत्मविजय का मर्म प्रकट करते हैं। श्रीराम स्पष्ट करते हैं कि राक्षस रूपी दुर्गुणों से युद्ध शस्त्र से नहीं, बल्कि शास्त्र, साधना, संयम और सदाचार से होता है।

विभीषण गीता : धर्मरथ से विजय का मार्ग

जब विभीषण अपने भाई रावण का त्याग कर प्रभु श्रीराम की शरण में आए , तब उनके मन में एक गहन द्वंद्व उत्पन्न हुआ। वे धर्म और भ्रातृ–स्नेह के बीच उलझ गए। एक ओर उनका हृदय श्रीराम की मर्यादा, सत्य और करुणा से अभिभूत था, तो दूसरी ओर रावण की अपार शक्ति, रथ, अस्त्र–शस्त्र और सामर्थ्य ने उन्हें विचलित कर दिया। तुलसीदासजी ने उनकी इस दुविधा को अत्यंत भावपूर्ण ढंग से व्यक्त किया है—

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि बिभीषन भयउ अधीरा।।
अधिक प्रीति मन भा संदेहा।
बंदि चरन कह सहित सनेहा।।

विभीषण विनम्रता से श्रीराम के चरणों में प्रणाम कर कहते हैं—
"नाथ! रावण रथारूढ़ है, उसके पास बल, शस्त्र और कवच सब हैं; परंतु आप तो बिना रथ, बिना कवच के नंगे पाँव हैं। ऐसे में आप उसे कैसे पराजित करेंगे?"

"नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना।
केहि बिधि जितब बीर बलवाना।।"

विभीषण की यह चिंता केवल उस युग में नहीं, आज भी प्रासंगिक है। आज भी मनुष्य यह सोचता है कि क्या धर्म, सत्य और नैतिकता के बल पर संसार के असत्य, अन्याय और अधर्म से लड़ा जा सकता है? क्या साधनहीन होकर भी सफलता पाई जा सकती है?
उस समय श्रीराम का मुखमंडल करुणा और आत्मविश्वास से आलोकित हो रहा था। उन्होंने इसका उत्तर श्मुस्कुराते हुए विभीषण को दिया —

"सुनहु सखा कह कृपानिधाना।

जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।"

"हे सखा! जिस रथ से सच्ची विजय प्राप्त होती है, वह भौतिक रथ नहीं है, वह धर्मरथ है। वह आत्मबल और सद्गुणों से निर्मित है।"

और फिर श्रीराम ने उस दिव्य धर्मरथ का अद्भुत वर्णन किया —

"सौरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।।"

इस रथ के पहिए हैं – शौर्य (साहस) और धैर्य (संयम)।

इसकी ध्वजा और पताका हैं – सत्य और शील अर्थात (सदाचार)।

"बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।।"

इस रथ के चार घोड़े हैं – बल, विवेक, दम अर्थात (इंद्रिय–संयम) और परोपकार।

जो क्षमा, दया और समतारूपी डोरी से रथ में जोड़े हुए हैं।

"ईस भजनु सारथी सुजाना।
बिरति चर्म संतोष कृपाना।।"

इस रथ का सारथी है – ईश्वर का भजन, अर्थात् परम श्रद्धा और भक्ति।

वैराग्य ढाल है और संतोष तलवार है।

"दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा।
बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।"

दान फरसा है। बुद्धि प्रचंड शक्ति है और उत्तम विज्ञान कठिन धनुष है ।

"अमल अचल मन त्रोन समाना।
सम जम नियम सिलीमुख नाना।।"

तरकस के समान है – निर्मल और अचल मन।

शम (मन का वश में होना) यम और नियम इसके बहुत से बाण हैं।

"कवच अभेद बिप्र गुर पूजा।
एहि सम बिजय उपाय न दूजा।।"

और अंत में श्रीराम कहते हैं—

'ब्राह्मण और गुरु की पूजा' अभेद्य कवच है,

इसके समान विजय का कोई दूसरा उपाय नहीं है ।

"सखा धर्ममय अस रथ जाकें।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।।"

हे सखे! ऐसा धर्ममय रथ जिसके पास हो उसके लिए जीतने को कहीं शत्रु नहीं है। ।

"महा अजय संसार रिपु, जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मतिधीर।।" 80 क (लंकाकांड, श्रीरामचरितमानस)

श्रीराम का यह उपदेश केवल विभीषण के मन से भय और संदेह को दूर नहीं करता, बल्कि सम्पूर्ण मानवता को यह सिखाता है कि सच्ची विजय बाहुबल या भौतिक साधनों से नहीं, बल्कि धर्म, सत्य, विवेक और आत्मबल से होती है। इसके बाद विभीषण का भ्रम दूर हो गया । वे समझ गए कि जो व्यक्ति सत्य, धैर्य, करुणा से सुसज्जित और ईश्वर भक्ति में लीन है, उसे कोई भी रावण परास्त नहीं कर सकता।

हमने देखा कि रावण ने अपनी समस्त शक्तियों से युक्त हो युद्ध किया, पर अंततः वह धर्म और मर्यादा के रथ से पराजित हुआ। यही श्रीराम का संदेश है कि धर्मरथ से बढ़कर कोई विजय रथ नहीं अर्थात धर्म ही विजय का सच्चा सारथी है।

3. विभीषण गीता की आधुनिक युग में प्रासंगिकता

विभीषण गीता, केवल युद्ध या धर्म का उपदेश नहीं है, बल्कि यह जीवन प्रबंधन, नैतिक नेतृत्व और आत्म-विकास का गहन दर्शन प्रस्तुत करती है। अब निम्नलिखित बिंदुओं के आधार पर इसकी वर्तमान में प्रासंगिकता पर एक नज़र डालते हैं -

1. **नैतिक नेतृत्व और निर्णय की दृढ़ता**

विभीषण का निर्णय — अपने भ्राता रावण के अन्यायपूर्ण मार्ग का विरोध कर श्रीराम की शरण लेना — नैतिक साहस और सत्यनिष्ठा का प्रतीक है। आज के राजनीतिक और सामाजिक जीवन में, जब व्यक्तिगत स्वार्थ और वंशवाद हावी हैं, विभीषण सिखाते हैं कि धर्म और नीति सर्वोपरि हैं। सच्चा नेता वही है जो सत्य के पक्ष में खड़ा हो, भले ही उसे अपनों का विरोध सहना पड़े।

2. नीति आधारित शक्ति और संघर्ष

श्रीराम का 'धर्ममय रथ' केवल युद्ध का प्रतीक नहीं, बल्कि जीवन का प्रबंधन सूत्र है।

"सखा धर्ममय अस रथ जाकें।

जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें॥"

इस धर्मरथ के घटक सत्य, नीति, विवेक, संयम, और भक्ति — हमें यह बताते हैं कि वास्तविक शक्ति नैतिकता और आत्मसंयम में निहित है। आज की प्रतिस्पर्धी दुनिया में यह संदेश अत्यंत प्रासंगिक है।

3. युवाओं के लिए प्रेरणा

आधुनिक युवा भौतिकता, सोशल मीडिया और नैतिक विचलन के कारण दिशाहीन हो रहे हैं। विभीषण गीता उन्हें सिखाती है कि सच्ची सफलता आत्मबल, सत्य और संयम से आती है, न कि बाहरी चमक-दमक से। श्रीराम का उपदेश युवाओं के लिए चरित्र निर्माण का शाश्वत मार्गदर्शन है।

4. आध्यात्म और आत्म-प्रबंधन का संदेश

"ईस भजनु सारथी सुजाना"

यह पंक्ति हमें बताती है कि जीवनरूपी रथ का सारथी ईश्वर भक्ति और आत्म-नियंत्रण होना चाहिए। जब मनुष्य भक्ति, वैराग्य और संतोष के साथ चलता है, तब वह अपने भीतर के भ्रम और भय को जीत सकता है।

5. मानसिक संघर्षों में विजय का उपाय

"अमल अचल मन त्रोन समाना।

सम जम नियम सिलीमुख नाना॥"

शुद्ध, स्थिर और अनुशासित मन ही जीवन के आंतरिक रावणों — अहंकार, लोभ, क्रोध, वासना, ईर्ष्या पर विजय पा सकता है। विभीषण गीता मनोविज्ञान और आत्म-प्रबंधन की एक गहन शिक्षिका है।

6. शैक्षिक, सांस्कृतिक और प्रबंधकीय उपयोगिता

विभीषण गीता केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि नैतिक शिक्षा और नेतृत्व प्रशिक्षण का आदर्श मॉडल है। इसे शिक्षा नीति में इसे नैतिक मूल्यों के अध्ययन हेतु शामिल किया जा सकता है। राजनीतिक नेतृत्व प्रशिक्षण में यह नीति और धर्माधारित शासन का उदाहरण है। प्रबंधन शिक्षा में 'धर्मरथ' मॉडल को नेतृत्व कौशल और निर्णय-प्रक्रिया के रूप में अपनाया जा सकता है।

7. विजय का सार्वभौमिक मंत्र

"महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।

जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर॥"

श्रीराम स्पष्ट करते हैं कि जो व्यक्ति धर्म, सत्य और संयम से सुसज्जित है, वह वीर संसार रूपी महान दुर्जय शत्रु को भी जीत सकता है (रावण की तो बात ही क्या है।) यह संवाद आज जीवन का विजय-मंत्र बन सकता है।

8. विभीषण की प्रतिक्रिया: विनम्रता और कृतज्ञता

सुनि प्रभु बचन बिभीषन हरषि गहे पद कंज।

एहि मिस मोहि उपदेसेहु राम कृपा सुख पुंज॥

विभीषण का यह भाव बताता है कि ज्ञान और विनम्रता का संगम ही सच्ची साधना है। श्रीराम के उपदेश को हृदय से स्वीकार कर उन्होंने यह सिद्ध किया कि सच्चा भक्त वही है जो ज्ञान को आचरण में उतारे।

9. साहसिक निर्णय का आदर्श

रावण जैसे शक्तिशाली और प्रचंड राजा के विरुद्ध खड़े होना साहस का कार्य था। विभीषण ने यह जोखिम उठाया, क्योंकि उनके लिए धर्म, आत्मा की शांति और सत्य, सत्ता और संबंधों से अधिक मूल्यवान थे।

वर्तमान में जब बहुत लोग सुविधाओं और डर के कारण अन्याय का साथ देते हैं, ऐसे में विभीषण सिखाते हैं कि साहसी निर्णय ही व्यक्ति को महान बनाते हैं।

10. नैतिक संकट और सही-गलत की पहचान

आधुनिक समय में बहुत से लोग व्यक्तिगत लाभ, सामाजिक दबाव, मीडिया प्रभाव आदि के कारण सही और गलत के बीच उलझ जाते हैं। विभीषण गीता हमें यह सिखाती है कि धर्म और नैतिकता की आवाज को सुनना चाहिए, चाहे परिस्थिति कितनी भी कठिन हो।

11. वैयक्तिक-स्वातंत्र्य और सामाजिक दबाव

कभी-कभी लोग अपने परिवार, जाति, देश या संगठन के दबाव में अपनी आत्मा की आवाज दबा देते हैं। विभीषण ने दिखाया कि धैर्य, विवेक और ईमानदारी से, आत्म-स्वाधीनता प्राप्त की जा सकती है। यह आज के समाज में महत्वपूर्ण है, जहाँ व्यक्तिगत पहचान, स्वावलंबन और आत्मसम्मान की बातें अत्यधिक प्रासंगिक हैं।

12. वैश्विक संदर्भ में सर्वधर्म सद्भाव

विभीषण गीता यह सिखाती है कि धर्म केवल आस्थागत तौर-तरीके नहीं, बल्कि सार्वभौमिक मूल्यों की पालना है। यदि कोई धर्म, जन्म, राजनीति आदि सीमाओं से ऊपर उठकर सत्य, न्याय, करुणा और संयम का अनुसरण करे, तो वह मानवता को जोड़ने का काम करता है।

13. राजनीति में नीति की आवश्यकता

आज राजनीति अवसरवाद, स्वार्थ और छल की शरणस्थली बन चुकी है। ऐसे में विभीषण जैसे चरित्र यह स्पष्ट करते हैं कि नेतृत्व केवल सत्ता नहीं, बल्कि नीतिपरक दृष्टि, साहसिक निर्णय और जनहित की भावना का नाम है।

अन्य रामायणों में तुलनाएँ

वाल्मीकि रामायण में भी विभीषण का वर्णन है, जहाँ वे रावण को सलाह देते हैं और रावण द्वारा उनकी बात न मानने पर राम की शरण लेते हैं। इस रूप में वाल्मीकि रामायण में विभीषण की स्वायत्त "धार्मिक चेतना" का अंकन मिलता है।

रामायण की विविध भाषायी और क्षेत्रीय प्रस्तुतियों में विभीषण को अक्सर धर्म, न्याय और संकल्प का प्रतीक माना गया है। विभीषण गीता की अवधारणा लोकमानस में गहरी पैठ रखती है।

4. निष्कर्ष

आधुनिक युग में विभीषण गीता केवल एक धार्मिक प्रसंग नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन, नीति और नैतिक नेतृत्व का अमर ग्रंथ है। विभीषण गीता नीति, निष्ठा और नैतिक विजय का शाश्वत प्रेरणा-स्रोत है।

- सच्चा नेतृत्व शस्त्रों से नहीं, शास्त्र और विवेक से होता है।
- आत्मिक संतुलन और संयम ही जीवन की विजय का मार्ग हैं।
- यदि समाज विभीषण गीता की शिक्षाओं को आत्मसात करे, तो एक ऐसा मार्ग प्रशस्त हो सकता है जहाँ नैतिकता, करुणा और आत्म-संयम से समाज का पुनरुत्थान होगा।
- यह संवाद हमें धर्म, विवेक, नीति और साहस का वह पथ दिखाता है जो आज के युग में भी उतना ही उपयोगी और आवश्यक है जितना त्रेतायुग में था।
- जहाँ आज की दुनिया में 'सफलता' को ही सबसे बड़ा मूल्य मान लिया गया है, वहाँ विभीषण गीता हमें याद दिलाती है कि नीति, धर्म और आत्मबल ही वे मूल्य हैं, जो व्यक्ति को सच्चा और स्थायी विजेता बनाते हैं। इस प्रकार विभीषण गीता, श्रीरामचरितमानस का एक अत्यंत सारगर्भित अंश है, जो केवल युद्ध नीति या राज्यचक्र नहीं, बल्कि जीवन दर्शन की गूढ़ शिक्षा प्रदान करता है।

5. संदर्भ ग्रंथ

1. श्रीरामचरितमानस
2. वाल्मीकि रामायण
3. गीता संहिता
4. गीता प्रबंध संग्रह

Critical Astronomical Analysis of the Date of Rāma's Return to Ayodhyā

Krutesh Patel
Vaidika Sansthan
(krutesh@krutesh.ca)

This study critically examines the commonly held belief that Lord Rāma returned to Ayodhyā on the day of Dīpāvalī, a notion unsupported by scriptural or astronomical evidence. Drawing primarily from the Vālmīki Rāmāyaṇa *and correlating it with* jyotiṣa *(astronomical) computation, the paper establishes that Rāma's homecoming occurred on* Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī *under the* Puṣya Nakṣatra*, not on* Kārtika Amāvasyā*. An alternative model based solely on* Vālmīki Rāmāyaṇa *(without reliance on Purāṇic expansion) is also presented, placing Rāma's return on* Caitra Śukla Daśamī *under the* Puṣya Nakṣatra*. The analysis discusses* tithi *definition, examines planetary positions and* nakṣatra *references within the epic, evaluates corroborative evidence from* Padma Purāṇa*, and identifies how modern cultural narratives—particularly those formed through television and popular media-have shaped contemporary belief. The paper restores a historically and astronomically consistent chronology of Rāma's return.*

Keywords: Rāmāyaṇa, Puṣya Nakṣatra, Tithi Calculation, Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī, Rāma, Ayodhyā, Jyotiṣa, Vālmīki.

1. Introduction

Among contemporary Hindus, the belief that Śrī Rāma returned to Ayodhyā on the festival of Dīpāvalī is nearly universal. Yet, this association is not attested in the textual or astronomical descriptions preserved in the Vālmīki Rāmāyaṇa. Neither *Vālmīki Rāmāyaṇa* nor the Purāṇas explicitly associate Rāma's homecoming with *Kārtika Amāvasyā*. This association appears to be a later cultural formation, likely emerging through popular devotional performance traditions, and in recent times, cinematic and television portrayals.

However, the *Vālmīki Rāmāyaṇa* itself provides clear temporal markers in the form of *nakṣatra* and *tithi* references. These references align with systematic astronomical calculations and permit a precise reconstruction of chronological events, including Rāma's birth, exile, the death of Rāvaṇa, and ultimately, the return to Ayodhyā.

2. Glossary

Term	Meaning
Tithi	Lunar day defined by angular distance between Sun & Moon
Nakṣatra	1 of 27 lunar constellations used in Vedic astronomy
Śukla Pakṣa	Bright half of the lunar month (waxing Moon)
Kṛṣṇa Pakṣa	Dark half of the lunar month (waning Moon)
Puṣya Nakṣatra	A lunar constellation associated with auspicious ceremonies
Amāvasyā	New Moon (0° Sun–Moon separation)
Pūrṇimā	Full Moon Day
Pūrṇa Tithi (Daśamī etc.)	"Full / complete" tithis considered auspicious
Riktā Tithi (Navamī, Caturdaśī etc.)	"Empty / void" tithis considered less auspicious

3. Understanding *Tithi* and *Nakṣatra* in Jyotiṣa

A *tithi* is defined by the longitudinal angular separation between the Sun and the Moon. The zodiacal circle of 360 degrees is divided into 30 *tithi-s*, each spanning 12 degrees of separation. Similarly, *nakṣatras* are divisions of the zodiac into 27 equal parts. The Angular difference between the Sun and the Moon remains pre-determined on every *tithi.*

For example:

- Amāvasyā occurs when the Sun and Moon share equal longitude i.e angular difference is between 348°-360°.
- Pūrṇimā occurs when the angular difference is between 168°-180°

- The lunar nakṣatra of the Moon on Pūrṇimā determines the name of the month: **For example, when the Moon in the Viśākhā Constellation, the month is known as Vaiśākha or the Moon in Jyeṣṭhā is the reason why that month is names as Jyeṣṭh**, etc.

This system is mathematically stable. Even with precession (*ayanāṃśa*), the relative sequencing of *tithi–nakṣatra* remains consistent. We may see minor variation of One Nakṣatra on every Tithi. But we cannot see any major variation beyond this. So, we may conformably conclude that position of moon on every *nakṣatra* on every Tithi is relatively confirmed.

4. Textual Astronomical Markers in Vālmīki Rāmāyaṇa

4.1. Rāma's Birth

ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ |
नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पञ्चसु ||

tataś ca dvādaśe māse caithre nāvamike tithau
nakṣatre 'ditidaivatyē svocca-saṁstheṣu pañcasu.
(*Bāla Kāṇḍa*, 18.8/9)

Word Gross

dvādaśe in the twelfth

māse month

caitre in the month of **caitra**

nāvamike (navamīke) on the **Navamī (9th)** tithi

tithau on the lunar day

nakṣatre when the Moon was in the constellation

aditi-daivatyē governed by **Aditi** (i.e., the **Punarvasu** Nakṣatra)

svocca-saṁstheṣu situated in their **own or exalted signs / highest positions**

pañcasu the **five** (grahas/planets)

Translation

"Then, in the end of the twelfth month, in the month of *Caitra*, on the *Navamī* tithi, when the Moon was in *Punarvasu*, the *Aditi*-ruled constellation, and when five planets were situated in their Own House or exalted positions, Rāma was born."

Even Today, *Caitra Navamī* falls within *Punarvasu* constellation (with exceptions). It establishes the fact that the mathematics we used in Rāmāyaṇa era largely remained same as today. Thus, the stability of the tithi–nakṣatra system across millennia permits reliable backward-astronomical inference.. It may be noted that this verse is absent in the critical edition of the Vālmīki Rāmāyaṇa, although it is widely retained in regional and traditional recensions.

4.2. The Dates of Scheduled Coronation and Exile of Śrī Rāma

The *Vālmīki Rāmāyaṇa* records that Rāma's coronation (*pattābhiṣeka*) was scheduled to take place in the month of *Caitra* under the *Puṣya Nakṣatra*.(VR 2.3.4 and 2.4.2) Since Rāma was born on *Caitra Śukla Navamī* when the Moon was in *Punarvasu*, and because *Puṣya* consistently follows *Punarvasu* in the lunar constellation sequence, the coronation naturally fell on the following *tithi*, *Caitra Śukla Daśamī*. Hence, it is highly probable that Rāma's Coronation was scheduled on *Caitra Śukla Daśamī under Puṣya constellation.* It is to be noted that Puṣya can also fall on Navamī or Ekādaśī in exceptional cases. But we are ignoring those exceptions as its possibility is being very rare. Further, Daśamī being Pūrṇa tithi is more likely to be considered for coronation in compared to Riktā Tithi like Navamī.

However, the coronation did not occur, as Rāma was sent into exile on the night of *Śukla Navamī*, immediately preceding the coronation day. This sequence establishes an important chronological anchor: the fourteen-year exile must therefore conclude no earlier than *Caitra Śukla Daśamī* in the year of Rāma's return. This fixed point will serve as the temporal baseline for determining the precise date of Rāma's re-entry into Ayodhyā.

4.3. Determining the Date of Rāvaṇa's Death

Establishing the date of Rāma's return to Ayodhyā requires first determining the date of Rāvaṇa's death. The widely held belief that Rāvaṇa was killed on *Aśvina Śukla Daśamī* (commemorated in many regions of India as *Daśaharā* or *Vijayadaśamī*) does not derive from the *Vālmīki Rāmāyaṇa*. In fact, *Kiṣkindhā Kāṇḍa* 53.9 indicates that the search for Sītā commenced in the month of *Aśvina*, and the text notes that one month period allotted for the search elapsed without result. It establishes the fact that Vānara-sena was not aware about Sītā's whereabouts even by end of Āśvina. There is considerable period elapsed between search of Sītā and the final war with Rāvaṇa. Hence, it is chronologically implausible for the final battle and Rāvaṇa's death to have occurred in *Aśvina* or the immediately following month, *Kārtika*.

The *Vālmīki Rāmāyaṇa* explicitly states that the decisive battle took place on *Amāvasyā*:

अभ्युत्थानं त्वमद्यैव कृष्णपक्षचतुर्दशी ।
कृत्वा निर्गह्यमावास्यां विजयाय बलैर्वृतः ॥

abhyutthānaṁ tvam adyaiva kṛṣṇa-pakṣa-caturdaśī
kṛtvā niryāhya amāvāsyāṁ vijayāya balair vṛtaḥ.
(*Yuddha Kāṇḍa* 92.66)

Word Gloss

- **kṛṣṇa-pakṣa-caturdaśī** — the fourteenth day of the dark fortnight
- **amāvāsyām** — on the new moon day
- **vijayāya** — for victory
- **balaiḥ vṛtaḥ** — accompanied by the army

Translation

"Prepare the forces today, on the fourteenth day of the dark fortnight. Tomorrow, on *Amāvasyā*, march forth with your army to achieve victory."

This was the advice given by ministers of Rāvaṇa when he was proceeding to kill Sītā under rage, hearing about the death of his beloved son Meghanāda. Hence, it is established that the climactic battle between Śrī Rāma and Rāvaṇa occurred on *Amāvasyā*, not on *Daśamī*. The subsequent narrative confirms that Rāvaṇa's death took place during this war.

It is to be noted that the text of Valmiki Rāmāyaṇa does not specify **which lunar month's Amāvasyā** is referenced in the above verse. Determining the precise month therefore requires correlating this event with other chronological markers—specifically, the completion of the exile and the return under *Puṣya Nakṣatra*. The following sections address this correlation in detail.

4.4. The Return Sequence and the Puṣya Nakṣatra

The completion of the fourteen-year exile is marked explicitly in the *Vālmīki Rāmāyaṇa*. Upon fulfilling the period of exile, Rāma arrives at the āśrāma of Sage Bharadvāja:

पूर्णे चतुर्दशे वर्षे पञ्चम्यां लक्ष्मणाग्रजः ।
भरद्वाजाश्रमं प्राप्य ववन्दे नियतो मुनिम् ॥

pūrṇe caturdaśe varṣe pañcamyāṁ lakṣmaṇāgrajaḥ
bharadvājāśrāmaṁ prāpya vavande niyato munim.
(*Yuddha Kāṇḍa* 124.1)

Word Gloss:

- **pūrṇe caturdaśe varṣe** — when the full fourteen years were completed
- **pañcamyām** — on the *Pañcamī* tithi (fifth lunar day)
- **bharadvāja-āśrāmam** — to the hermitage of Sage Bharadvāja
- **vavande** — he offered salutations
- **niyataḥ** — with discipline / self-control

Translation:

"When the full fourteen years had been completed, Rāma, the elder brother of Lakṣmaṇa, reached the āśrāma of Sage Bharadvāja on the *Pañcamī* tithi and offered him respectful salutations." (*Yuddha Kāṇḍa* 124.1)

From this āśrāma, Rāma dispatched Hanumān to Nandigrāma to inform Bharata of his return. The message conveyed specifies the precise astral condition under which Rāma will arrive:

तां गङ्गां पुनरासाद्य वसन्तं मुनिसंनिधौ ।
अविघ्नं पुष्ययोगेन श्वो रामं द्रष्टुमर्हसि ॥

tāṁ gaṅgāṁ punar āsādya vasantaṁ muni-saṁnidhau
avighnaṁ puṣya-yogena śvo rāmaṁ draṣṭum arhasi.
(*Yuddha Kāṇḍa* 126.54)

Word Gloss

- **Puṣya-Yogena** — under the conjunction of *Puṣya Nakṣatra*
- **Śvaḥ** — tomorrow
- **Draṣṭum Arhasi** — you shall see (him)

- **Avighnam** — without obstruction

Translation
"After returning to the Banks of Gaṅgā, he is residing near the sage. You shall see Rāma tomorrow, under the *Puṣya Nakṣatra*, without any hindrance." (*Yuddha Kāṇḍa* 126.54)

Rāma's entry into Ayodhyā occurred under the Puṣya Nakṣatra. This observation is astronomically determinative. Because *Puṣya Nakṣatra* falls during the bright half (*Śukla Pakṣa*) and **Dīpāvalī occurs on *Kārtika Amāvasyā*** (the final day of the dark fortnight), the two events **cannot coincide**. The **lunar phase alone** makes it impossible for Rāma's return to have occurred on what is now widely celebrated as Dīpāvalī.

Furthermore, since the exile began in *Caitra* month, the completion of fourteen years must also align with the *Caitra* lunar cycle, not *Aśvina* or *Kārtika*. Thus, the association of Rāma's return with the modern Dīpāvalī festival cannot be traced to the *Vālmīki Rāmāyaṇa* and represents a **later cultural development**.

4.5. Interim Astronomical Summary
The narrative provides three fixed astronomical markers:
- **Rāvaṇa's death occurred on *Amāvasyā*.**
- **Rāma reached Bharadvāja's āśrāma on *Śukla Pañcamī*.**
- **Rāma entered Ayodhyā under *Puṣya Nakṣatra*.**

These data points permit the determination of the **specific lunar month** in which the return occurred. Two historically plausible interpretations arise, derived from (a) the *Padma Purāṇa* tradition and (b) a strictly internal reading of the *Vālmīki Rāmāyaṇa*. The following section examines these two models.

5. Establishing the Return Date According to the *Padma Purāṇa*
One interpretive tradition holds that Rāma reached the āśrāma of Sage Bharadvāja on *Śukla Pañcamī*, dispatched Hanumān immediately to Nandigrāma with the message of his return, and entered Ayodhyā on the following day, under *Puṣya Nakṣatra*. Since the nakṣatra configuration places *Puṣya* on the *Ṣaṣṭhī* tithi only during the waxing half (*Śukla Pakṣa*) of the month of *Vaiśākha*, this tradition identifies **Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī** as the date of Rāma's return to Ayodhyā.
Consequently, the preceding *Amāvasyā*-the day of Rāvaṇa's death-would fall in **Caitra**, under the *Amānta* calendar system (where the month ends with *Amāvasyā*), or **Vaiśākha**, under the *Pūrṇimānta* system (where the month ends with *Pūrṇimā*).
This dating framework is explicitly reflected in the *Padma Purāṇa*. According to *Padma Purāṇa*, Rāma met Bharata at Nandigrāma on *Ṣaṣṭhī* and was coronated the next day on *Saptamī*:

नन्दिग्रामे तु षष्ठ्यां स भरतेन समागतः ।
सप्तम्यामभिषिक्तोऽसावयोध्यायां रघूद्वहः ॥

nandigrāme tu ṣaṣṭhyāṁ sa bharatena samāgataḥ
saptamyām abhiṣikto 'sāv ayodhyāyāṁ raghūdvaḥḥ.
(*Padma Purāṇa*, Patala–Khaṇḍa 5.36.75)

Translation:
"On the *Ṣaṣṭhī* tithi, he (Rāma) met Bharata at Nandigrāma, and on the *Saptamī* tithi, that scion of the Raghu lineage was consecrated as king in Ayodhyā."

It is important to note that while the **Vālmīki Rāmāyaṇa** clearly indicates that the climactic battle culminating in Rāvaṇa's death took place on **Amāvasyā**, the **Padma Purāṇa** presents a slightly different tithi tradition. According to Padma Purāṇa, Rāvaṇa was slain on **Kṛṣṇa Pakṣa Caturdaśī**, i.e., the **fourteenth lunar day** of the dark fortnight, one day **before** Amāvasyā.

Scholarly Observation
This chronology yields the following sequence:
- **Death of Rāvaṇa:** *Caitra Amāvasyā* (Amānta) / *Vaiśākha Amāvasyā* (Pūrṇimānta)
- **Rāma reaches Bharadvāja's āśrāma:** *Vaiśākha Śukla Pañcamī*
- **Rāma enters Ayodhyā:** *Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī* (*Puṣya Nakṣatra*)
- **Coronation:** *Vaiśākha Śukla Saptamī*

Thus, the *Padma Purāṇa* version presents a consistent lunar and stellar alignment.

5.1. A Narrative Consideration
This interpretation implies that Rāma returned approximately one lunar month after the completion of the exile period, rather than immediately upon its conclusion in *Caitra*. This raises the well-known narrative question of Bharata's vow of self-immolation should Rāma not return at the appointed time. Two scholarly explanations have been proposed in literature:
1. **Poetic or Hyperbolic Expression** common to epic narrative speech-patterns.

2. **Textual Growth Hypothesis:** Early Buddhist sources (e.g., the 2nd-century CE *Abhidharmavibhāṣā*) mention the *Rāmāyaṇa* as consisting of **12,000 verses**, while the received text today contains **approximately 24,000 verses**, indicating the possibility of subsequent expansion. Thus, the Bharata-vow episode may represent a later narrative amplification rather than the chronological core of the epic.

This scholarly framing does **not** assert textual corruption, but acknowledges the well-documented phenomenon of **epic accretion**, common to Sanskrit itihāsa literature.

5.2. Interim Conclusion

The *Padma Purāṇa* tradition thus offers a **self-consistent astronomical chronology** for Rāma's return:

Rāma's return to Ayodhyā on *Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī* under the Puṣya Nakṣatra and Coronation on Vaiśākha Śukla Saptamī

The next section will examine the **alternative chronology** derived solely from the internal narrative logic of the *Vālmīki Rāmāyaṇa*, without reliance on Purāṇic expansion.

6. Alternative Chronological Reconstruction Based on the *Vālmīki Rāmāyaṇa*

A second interpretive approach relies exclusively on the internal chronological indicators of the *Vālmīki Rāmāyaṇa*, without reference to Purāṇic traditions. Since the exile commenced when the coronation was scheduled in the month of *Caitra* under the *Puṣya Nakṣatra* on *Caitra Śukla Daśamī*, it is reasonable to propose that the exile would likewise conclude at the corresponding *Caitra Śukla Daśamī* fourteen years later. This interpretation preserves narrative symmetry and resolves the issue of Bharata's vow without requiring temporal extension into the month of *Vaiśākha*.

The *Vālmīki Rāmāyaṇa* states that Rāma reached the āśrāma of Sage Bharadvāja on *Śukla Pañcamī*. Padma Purāṇa traditions assume that Śrī Rāma dispatched Hanumān immediately to Nandigrāma. However, Valmiki Rāmayan does not mention the time gap between the Rāma's arrival to Bharadvāja Āśrāmam and Hanumān meeting Bharata. It is possible that Śrī Rāma spent few nights in Bharadvāja Āśrāmam waiting to get period of his exile competed and he sent Hanumān to meet Bharata after his period of exile was about to get over.

The relevant verse also give indication that Sri Rāma spent five nights in the Bharadvāja ashRāma.

पञ्चमीमद्य रजनीमुषित्वा वचनान्मुनेः ।
भरद्वाजाभ्यनुज्ञातं द्रक्ष्यस्यत्रैव राघवम् ॥

pañcamīm adya rajanīm uṣitvā vacanān muneḥ
bharadvājābhyanujñātaṁ drakṣyasy atraiva rāghavam.
(*Yuddha Kāṇḍa* 125.24)

Word Gloss

- **pañcamīm … rajanīm** — "the fifth night" / "night of Pañcamī" (interpretively ambiguous)
- **uṣitvā** — after spending
- **bharadvāja-abhyanujñātam** — having received permission from Bharadvāja
- **drakṣyasi** — you shall see
- **rāghavam** — Rāma

Translation

"Having spent the fifth night here, and with the permission of Sage Bharadvāja, you shall see Rāghava (Rāma) here tomorrow."

6.1. Interpretive Reasoning

Traditional commentators interpret '**pañcamīm … rajanīm'** as "the night of *Śukla Pañcamī*," implying that Rāma entered Ayodhyā the next day, on *Ṣaṣṭhī*, consistent with the *Padma Purāṇa* model.

However, the syntax also permits reading '**pañcamīm … rajanīm'** as "the fifth night." Under this analysis, the count begins when Rāma arrives at Bharadvāja's āśrāma on *Caitra Śukla Pañcamī*, implying him staying there through Pañcamī, Ṣaṣṭhī, Saptamī, Aṣṭamī and Navamī.

On *Śukla Navamī*, Hanumān informs Bharata of Rāma's imminent arrival under *Puṣya Nakṣatra*. Astronomically, *Puṣya Nakṣatra* aligns with *Caitra Śukla Daśamī* in this year-cycle. Thus, under this reading **Rāma's return to Ayodhyā is on Caitra Śukla Daśamī (Puṣya Nakṣatra) and Coronation on next date i.e Caitra Śukla Ekādaśī**

6.2. Scholarly Implication

This reconstruction:

- Preserves the **Caitra-to-Caitra symmetry** of the exile duration
- Requires **no delay** beyond the completion of the exile
- Maintains **Bharata's vow** as narratively and ethically consistent

- Operates **solely on internal Ramāyaṇa textual evidence**

However, it lacks explicit Purāṇic corroboration and depends upon the grammatical interpretation of **pañcamīm … rajanīm** as "fifth night" rather than "night of the Pañcamī tithi."

7. Conclusion

Therefore, both textual and astronomical evidence converge to demonstrate that the widely celebrated association of Rāma's return with Kārtika Amāvasyā (the modern Dīpāvalī) is a later cultural development rather than an element of the early epic tradition. The original chronology, whether following the Padma Purāṇa (Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī) or the internally coherent Caitra-based reconstruction (Caitra Śukla Daśamī), places Rāma's homecoming under the Puṣya Nakṣatra and within the bright half of the lunar month.

We may summarise these things in form of table as follows.

Event	Month (Model 1: Based on Padma Purāṇa)	Month (Model 2: Internal)
Exile Begins / Coronation Planned	Caitra Śukla Daśamī	Caitra Śukla Daśamī
Rāvaṇa's Death	Caitra(Amānta)/Vaiśākha (Pūrṇimānta)Amāvasyā	Caitra Amāvasyā
Rāma at Bharadvāja Āśram	Vaiśākha Śukla Pañcamī	Caitra Śukla Pañcamī
Rāma enters Ayodhyā	Vaiśākha Śukla Ṣaṣṭhī	Caitra Śukla Daśamī
Coronation	Vaiśākha Śukla Saptamī	Caitra Śukla Ekādaśī

8. Acknowledgements

The author expresses sincere gratitude to **Śrī Maulik Bhaṭṭ**, under whose guidance foundational principles of *Jyotiṣa* were studied and through whose instruction the astronomical reasoning employed in this paper became possible. The author further acknowledges **Śrī Kuśāgra Aniket (USA)** for drawing attention to the alternative *Caitra-based* chronological interpretation and for the many sustained scholarly discussions that meaningfully contributed to the refinement of this argument.

9. References

Primary Sources

1. Vālmīki. **Śrīmad Vālmīki Rāmāyaṇa** (Sanskrit text with Hindi translation). Gītā Press, Gorakhpur, 46th Reprint.
2. **Padma Purāṇa**. Ed. Chowkhamba Kṛṣṇadāsa Ākāḍemī. 2 vols. Vārāṇasī, 2019. Vol. I ISBN: 978-81-218-0425-7; Vol. II ISBN: 978-81-218-0427-1.

रावण : एक पराक्रमी व्यक्तित्व किंतु अभिशाप्त

रसिका मुकुंद ढेपे
मूळजी जेठा महाविद्यालय, जळगाव, महाराष्ट्र
(rasikadhepe6@gmail.com)

रामायण में रावण का व्यक्तित्व अत्यंत जटिल और बहुआयामी है। वह महान विद्वान, शिवभक्त, कुशल शासक और पराक्रमी योद्धा था, परंतु उसके अहंकार और अधर्म ने उसे अभिशप्त बना दिया। प्रश्न उठता है — "रावण इतना पराक्रमी होकर भी अभिशप्त क्यों रहा?" सीता हरण के माध्यम से उसने न केवल धर्म का उल्लंघन किया, बल्कि अपने विनाश का मार्ग भी स्वयं प्रशस्त किया। राम, जो मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाते हैं, उन्हें रावण जैसा प्रबल प्रतिद्वंदी मिलने से उनका पराक्रम और कीर्ति और भी प्रकाशमान हुई। प्रस्तुत शोधपत्र में रावण के पतन के कारणों, उसके व्यक्तित्व की विरोधाभासी विशेषताओं तथा उसके अभिशप्त जीवन पर विस्तृत विमर्श किया गया है।

1. प्रस्तावना

भारतीय साहित्य की परंपरा में "रामायण" केवल एक कथा नहीं, बल्कि जीवन का दर्पण है — जहाँ प्रत्येक पात्र अपने भीतर एक दर्शन समेटे हुए है। इस महाकाव्य में रावण का व्यक्तित्व विशेष रूप से आकर्षित करता है, क्योंकि वह साधारण खलनायक नहीं, बल्कि एक ऐसी विलक्षण विभूति है, जिसमें तेज, तप और त्रुटि तीनों एक साथ विद्यमान हैं। वह शक्ति का शिखर है, परंतु संयम की परीक्षा में पराजित। उसके भीतर का ज्ञान जब गर्व में परिवर्तित हुआ, तब वह स्वयं अपने तेज से दग्ध हो गया। यही द्वंद्व — पराक्रम और अभिशाप — रावण के चरित्र की आत्मा है।

रावण के जीवन में हम प्रतिभा का उत्कर्ष देखते हैं, पर उसी के साथ उसकी नियति का पतन भी। वह जितना प्रखर है, उतना ही अस्थिर; जितना दार्शनिक है, उतना ही विनाशकारी। उसकी प्रत्येक उपलब्धि के साथ कोई न कोई दर्प जुड़ा है, और प्रत्येक दर्प के साथ कोई न कोई विनाश। यही कारण है कि उसका नाम आज भी ज्ञान और अहंकार, दोनों का पर्याय बना हुआ है। वह एक ऐसा पात्र है, जो हमें यह सोचने पर विवश करता है कि क्या केवल शक्ति और ज्ञान ही महानता का प्रमाण हैं, या उनके पीछे छिपा हुआ विवेक ही वास्तविक महिमा है।

रावण के चरित्र की यह जटिलता उसे कालजयी बनाती है। वह शिव का उपासक है, परंतु धर्म का उल्लंघन करने वाला भी। वह वेदों का ज्ञाता है, किंतु नीति से विमुख। उसकी दसों मुखों में केवल बल और बुद्धि नहीं, बल्कि मनुष्य के दस स्वभावों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है — ज्ञान और अभिमान, करुणा और क्रोध, विवेक और वासना, भक्ति और दर्प, नीति और अधर्म — सब एक ही शरीर में समाहित। यही रावण की भव्यता और विडंबना है।

रावण का अभिशाप केवल किसी देव या ऋषि के शाप से नहीं, बल्कि उसकी अपनी वृत्तियों से उत्पन्न हुआ था। वह उस मनुष्य का प्रतीक है, जो अपनी सीमाओं को भूल जाता है; जो अपनी क्षमताओं से अधिक अपने अहंकार पर विश्वास करता है। इसी कारण रावण केवल पौराणिक पात्र नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर छिपे उस संघर्ष का प्रतीक है, जो हर युग में दो शक्तियों के बीच चलता रहा है — धर्म और अधर्म, विवेक और अहंकार, मर्यादा और मोह।

प्रस्तुत शोधपत्र में रावण के इसी द्वंद्वमय व्यक्तित्व का विश्लेषण किया गया है — एक ऐसा व्यक्तित्व जो अपनी प्रतिभा के कारण पूज्य, पर अपने अहंकार के कारण अभिशप्त हुआ। यह अध्ययन केवल रावण के पतन की कथा नहीं, बल्कि उस सत्य की खोज है कि जब शक्ति बिना संयम के चलती है, तो उसका अंत सदैव विनाश में ही होता है। रावण के जीवन से यही अमर संदेश निकलता है — "ज्ञान तभी प्रकाश देता है, जब वह विनम्रता के दीपक में जलता है।"

2. विस्तार

1. रावण शब्द की व्युत्पत्ति

'रावण' शब्द संस्कृत धातु "रु (रवते)" से बना है, जिसका अर्थ है — गर्जना करना, रुदन करना या प्रबल ध्वनि उत्पन्न करना। इस धातु में "अण" प्रत्यय जोड़ने से 'रावण' शब्द की रचना होती है, जिसका शाब्दिक अर्थ है — "जो भयंकर गर्जना करता है" या "जो सम्पूर्ण लोकों को अपनी ध्वनि से कंपा देता है।"

पुराणों के अनुसार, जब रावण ने अपने पराक्रम के घमंड में कैलास पर्वत उठाने का प्रयास किया, तब भगवान शिव ने अपने पाँव के अंगूठे से पर्वत दबा दिया। पर्वत के नीचे दबकर रावण अपने दस मुखों से जोर-जोर से चिल्लाने लगा। तब भगवान शिव ने कहा — "जो दसमुखों से राव

(गर्जना) कर रहा है, वही रावण कहलाएगा।"

इस प्रकार, 'रावण' नाम केवल उसका परिचय नहीं, बल्कि उसकी अहंकार, शक्ति और गर्जना का प्रतीक भी बन गया।

2. रावण के गुण

रावण का व्यक्तित्व केवल उसके दोषों से नहीं, बल्कि उसके अनेक गुणों से भी पहचाना जाता है। वह अत्यंत तेजस्वी, बलवान, रूपवान और बुद्धिमान था। उसके शरीर में सभी शुभ लक्षण विद्यमान थे।

वाल्मीकि रामायण के सुंदरकांड में हनुमान स्वयं रावण के इन गुणों की प्रशंसा करते हुए कहते हैं —

"अहो रूपं अहो धैर्यं अहो सत्त्वं अहो द्युतिः।
अहो राक्षसराजस्य सर्वलक्षणयुक्तता॥
यद्यधर्मो न बलवान् स्यादयं राक्षसेश्वरः।
स्यादयं सुरलोकस्य सशक्रस्यापि रक्षिताः॥"

(सुंदरकांड, श्री वाल्मीकि रामायण)

अर्थात — "वाह! क्या रूप है, क्या धैर्य है, क्या साहस और क्या तेज है इस राक्षसराज का! यह सभी लक्षणों से युक्त है। यदि इसमें अधर्म का दोष न होता, तो यह इंद्र के समान देवताओं का भी रक्षक बन सकता था।"

रावण का वैभव भी इंद्र के समान था। जब हनुमान लंका पहुँचे, तो उन्होंने उसकी समृद्धि और सौंदर्य देखकर आश्चर्य से कहा —

"स्वर्गोऽयं देवलोकोऽर्यामद्रस्याऽपि पुरी भवेत्।
सिद्धिर्वेयं परा हि स्यादित्यमन्यत मारुतिः॥"

(सुंदरकांड, श्री वाल्मीकि रामायण)

अर्थात — "क्या यह स्वर्ग है? क्या यह देवताओं का लोक है? या फिर यह स्वयं इंद्र की अमरावती नगरी है?" हनुमान के ये शब्द यह सिद्ध करते हैं कि रावण का राज्य विलक्षण समृद्धि और ऐश्वर्य से युक्त था।

रावण अग्निहोत्री था, उसने कठोर तपस्या की थी और उपनिषदों का गहन अध्ययन किया था। वह यज्ञ और कर्मकांड में निपुण था, तथा वेदों के अर्थ का ज्ञाता था। उसकी ज्ञानलिप्सा और भक्ति दोनों अद्वितीय थीं। (संदर्भ: सुंदरकांड, श्री वाल्मीकि रामायण; शर्मा, रामावतार – रामायण का नायकीय पक्ष) रावण उदार और विवेकशील भी था; वह गुणग्राहक था और ऋषि-मुनियों के वचनों में उसकी आस्था दिखती है। यशलिप्सा उसके जीवन का एक प्रेरक तत्व थी; परन्तु उसकी गर्वोक्तियाँ और आत्मगौरव उसके पतन का कारण भी बने। (संदर्भ:वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला)

वह चारों वेदों और छः शास्त्रों का ज्ञाता था; साथ ही वह चौंसठ कलाओं (६४ कलाओं) में भी निपुण था। संगीत में पारंगत माना जाता है – "रावणहस्त वीणा" इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। वह भगवान शिव का अनन्य भक्त था, और उसकी विद्या तथा भक्ति उसके व्यक्तित्व के उजले पक्ष को दर्शाती है। इस दृष्टि से देखा जाए तो रावण केवल एक राक्षस नहीं, बल्कि विद्या, बल, सौंदर्य और समृद्धि का प्रतीक भी था — जो अपनी सीमाओं को न समझने के कारण अभिशप्त हुआ।

3. रावण का पराक्रम और ज्ञान

रावण ब्रह्मा का परपोता और विश्रवा ऋषि तथा कैकसी का पुत्र था। जन्म से ही उसमें अपार तेज, साहस और बुद्धि का संयोग था। वाल्मीकि रामायण के अनुसार उसने कठोर तपस्या कर ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया, जिससे वह देवताओं तक पर विजय प्राप्त करने में समर्थ हुआ।

रावण ने कठोर तपस्या करके ब्रह्मा से यह वरदान प्राप्त किया था कि उसे देवताओं, दानवों या किसी अन्य प्राणी से भय नहीं रहेगा। उसने उस समय मनुष्यों को दुर्बल समझते हुए उनका अपमान किया। यही उसका सबसे बड़ा अहंकार था, जो आगे चलकर उसके पतन का कारण बना। देवताओं ने तब निश्चय किया कि रावण का वध केवल मनुष्य रूप में जन्मे विष्णु अवतार द्वारा ही संभव है। (सार्थ श्रीवाल्मीकि रामायण,2013)

लंका का उसका राज्य स्वर्णमयी, सुव्यवस्थित और समृद्ध था। इससे उसकी शासनकुशलता और दूरदर्शी नीति का परिचय मिलता है। रावण न केवल एक पराक्रमी योद्धा और शिवभक्त था, बल्कि एक कुशल राजनीतिज्ञ भी था। उसके शासन में लंका एक समृद्ध और संगठित राज्य थी। उसने सम्राटों और स्वर्गलोक के साथ वैधानिक संबंध बनाए रखे; व्यवहार-कुशल होकर वह मंत्रीगणों से परामर्श लेकर राज्यकार्य करता था। उसकी प्रशासनिक समझ और राजनैतिक दूरदर्शिता लंका के वैभव में स्पष्ट दिखती है। किंतु उसके हठ और अधर्म ने उसे कई बार विपरीत परिणामों का भागी बनाया। उदाहरणार्थ, मारीच के सत्परामर्श को न मानना और सीता हरण के निर्णय ने अंततः उसकी स्थिति को कठिन बना दिया।

4. रावण का अहंकार और अभिशाप

रावण जितना ज्ञानवान था, उतना ही अहंकारी भी। उसका पतन बाहरी नहीं, बल्कि उसके स्वयं के कर्मों और दोषों से हुआ। रावण के स्वभाव में हठ और अहंकार स्पष्ट झलकता है। जब मारीच ने उसे सीता हरण से मना किया, तो रावण ने क्रोध से कहा — "हे दूषित कुल में जन्मे मारीच, तू व्यर्थ

की बातें करता है। मैं राम की पत्नी सीता को तेरी आँखों के सामने हर लाऊँगा।" (संदर्भ: सार्थ श्री वाल्मिकीरामायण) उसके ये शब्द न केवल उसके अहंकार को दर्शाते हैं, बल्कि उसकी बुद्धि के विपरीत दिशा में जाने की स्थिति भी बताते हैं।

इसके अतिरिक्त उसे वेदवती का श्राप मिला कि उसका विनाश एक स्त्री के कारण होगा; नलकुबेर के प्रसंग से भी उसे चेतावनी मिली कि स्त्री के विरुद्ध अत्याचार उसका विनाशकारक सिद्ध होगा। इस प्रकार रावण का अंत उसके अपने कर्मों और अहंकार का प्रतिफल था। अहंकार, काम और अधर्म ने उसकी बुद्धि और विवेक को ढक दिया।

5. रावण का धर्म और अधर्म के बीच द्वंद्व

रावण के चरित्र में सबसे बड़ी विशेषता उसका आंतरिक द्वंद्व है। वह वेदों और शास्त्रों का ज्ञाता था, परंतु उनका सार नहीं समझ पाया। उसने धर्म का ज्ञान तो अर्जित किया, पर उसका आचरण नहीं किया। वाल्मीकि रामायण में एक स्थान पर रावण कहता है —

> "धर्मज्ञोऽस्मि परो धर्मं वेद्मि लोकस्य सर्वशः।
न तु मां धर्मपालत्वं प्राप्नुयादिति मे मतिः॥"

(उत्तरकांड, श्री वाल्मीकि रामायण)

अर्थात — "मैं धर्म को जानता हूँ, मैं समस्त लोक के धर्म से परिचित हूँ, किंतु मुझे धर्मपालक बनना रुचिकर नहीं लगता।"

यह श्लोक रावण के भीतर के विरोधाभास को उजागर करता है — जहाँ एक ओर ज्ञान है, वहीं दूसरी ओर उसका पालन करने की अनिच्छा। उसकी यह मानसिक स्थिति बताती है कि केवल ज्ञान पर्याप्त नहीं, बल्कि उस ज्ञान का सदुपयोग ही मनुष्य को श्रेष्ठ बनाता है।

6. रावण के व्यक्तित्व की विरोधाभासी विशेषताएँ

रावण अपने पराक्रम का बखान करते हुए गर्व से कहता है — "जहाँ मैं खड़ा होता हूँ वहाँ की हवा रुक जाती है, सूर्य अपनी किरणें मंद कर लेता है, और नदियाँ भी बहना छोड़ देती हैं। मेरे दर्शन से ही पर्वत काँप उठते हैं और समुद्र की लहरें शांत हो जाती हैं। जब मैं आकाश में चलता हूँ, तो बादल मेरे भय से दूर हो जाते हैं।"

वह आगे कहता है — "मेरे एक ही गर्जन से शत्रुओं के हृदय काँप उठते हैं। देवता भी मेरे नाम से भयभीत हो जाते हैं।" यह कथन उसके अत्यधिक आत्मविश्वास, गर्व और दर्प का प्रतीक है।(संदर्भ:सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण) जब खर और दूषण का वध हुआ और एक राक्षस ने यह समाचार रावण को सुनाया, तब उसने अपने पराक्रम की डींगे हाँकते हुए कहा —

"कालस्य चाप्यहं कालो देहयमपि पावकम् ।
मृत्युं मरणधर्मेण संयोजयितुमुत्सहे ॥
वातस्य तरसावेगं निहंतुमपि चोत्सहे ।
दहेयमपि संक्रुद्धस्तेजसाऽऽदित्यपावको ॥"

(वाल्मीकि रामायण)

अर्थात — "मैं ही काल का भी काल हूँ; मैं अग्नि के समान प्रज्वलित हूँ; मैं मृत्यु को भी अपने अधीन कर सकता हूँ। मैं वायु की तीव्र गति को रोक सकता हूँ, और यदि क्रोधित हो जाऊँ तो अपने तेज से सूर्य और अग्नि को भी भस्म कर सकता हूँ।" ये श्लोक रावण के आत्मगौरव, दर्प और अतिशय आत्मविश्वास का परिचायक हैं। उसमें असाधारण शक्ति थी, परंतु वह उस शक्ति को विनम्रता के साथ नहीं, बल्कि अहंकार के साथ उपयोग करता था। यही गर्व उसे देव-तुल्य होने का भ्रम देता गया।उसका यह अतिविश्वास ही उसके विनाश का मूल कारण बना — "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः।" (संदर्भ: सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण)

फिर भी उसी व्यक्ति में भक्ति, विद्या और शासनकला भी विद्यमान थी; यही द्वैधता उसे त्रासदीमय नायक बनाती है — एक तरफ पराक्रम, दूसरी तरफ अभिशप्तता। सीता हरण उसका वो मोड़ था जहाँ से पराक्रम विनाश में परिवर्तित हुआ।

7. रावण का व्यक्तित्व : त्रासदीमय नायक का प्रतीक

रावण का चरित्र केवल राक्षसी प्रवृत्तियों का परिचायक नहीं, बल्कि वह एक त्रासदीमय नायक (tragic hero) भी है — जो अपनी असाधारण शक्तियों, विद्या और भक्ति के बावजूद अपने दोषों से पराजित हुआ। कालिदास के "रघुवंशम्" में रावण के बारे में उल्लेख मिलता है कि वह "बल और ज्ञान दोनों में अद्वितीय था, किंतु मर्यादा से विमुख।" वह एक ऐसा नायक था जो अपने कर्मों के कारण शापित हुआ, पर उसकी वीरता ने उसे अमर बना दिया। वाल्मीकि रामायण में भी रावण का अंतिम क्षण बड़ा गहन है —

"नियतो निश्चलो भूत्वा रावणो युद्धदुर्मदः।
जगाम यत्र धर्मात्मा रामो धर्मभृतां वरः॥"

(युद्धकांड, श्री वाल्मिकीरामायण)

अर्थात — "रावण युद्ध में अचल होकर गिरा और वहीं गया जहाँ धर्मात्मा राम स्थित हैं।"

यह श्लोक यह संकेत देता है कि मृत्यु के पश्चात् भी रावण को मुक्ति प्राप्त हुई — क्योंकि उसके अंत में भी उसमें एक योद्धा की मर्यादा थी।

8. हित की अनसुनी और रावण का पतन

रावण का जीवन इस बात का प्रमाण है कि जब व्यक्ति में अहंकार बढ़ जाता है, तो वह सच्चे और हितैषी सल्ले भी सुनना बंद कर देता है। उसके जीवन में तीन ऐसे प्रसंग हैं जब उसके अपने शुभचिंतकों — मारीच, कुंभकर्ण और विभीषण — ने उसे सावधान किया, परंतु उसने किसी की भी बात नहीं मानी।

सबसे पहले, मारीच ने उसे सीता-हरण से रोका और स्पष्ट कहा कि राम कोई साधारण मनुष्य नहीं हैं, वे परमात्मा के अवतार हैं। परंतु रावण ने उसके हितकर शब्दों को व्यर्थ ठहराया और क्रोध में कहा — "हे दूषित कुल में जन्मे मारीच, तू व्यर्थ की बातें करता है। मैं राम की पत्नी सीता को तेरी आँखों के सामने हर लाऊँगा।" (संदर्भ: अरण्यकांड, चालीसवाँ सर्ग, श्री वाल्मीकि रामायण)

बाद में कुंभकर्ण ने भी उसे समझाया कि वह अधर्म के मार्ग पर चल रहा है। उसने विनम्रता से कहा — "हे भ्रातृ, तू अपने शुभचिंतकों की बात नहीं सुनता, इसलिए अब अपने कर्मों का फल भोग रहा है।" (संदर्भ: युद्धकांड, तिरेसठवाँ सर्ग, श्री वाल्मीकि रामायण)

अंततः विभीषण, जो रावण का छोटा भाई था और हमेशा धर्म का पक्षधर रहा, उसने भी उसे चेतावनी दी। विभीषण ने कहा कि सीता के लाए जाने के बाद लंका में अनेक अशुभ संकेत दिखाई दे रहे हैं; इसलिए सीता को राम को वापस दे देना ही उचित है। उसने रावण से कहा — "जो हितकर है, वही कहना मेरा धर्म है, और तुझे उस पर विचार करना चाहिए।" परंतु रावण ने क्रोध से उत्तर दिया —

"भयं न पश्यामि कुतश्चिदप्यहं ।
न राघवः प्राप्स्यति जा तु मैथिलीम् ।
सुरैः सहेंद्रैरपि संगरे कथं
ममाग्रतः स्थास्यति लक्ष्मणाग्रजः॥"
(वाल्मीकि रामायण, युद्धकांड)

अर्थात — "मुझे किसी से कोई भय नहीं है। राम कभी भी सीता को प्राप्त नहीं कर सकेगा। देवताओं और इंद्र के साथ भी यदि वह युद्ध करे, तो भी वह मेरे सामने टिक नहीं सकेगा।" यह प्रसंग इस बात का प्रतीक है कि जब व्यक्ति की बुद्धि अहंकार से ढक जाती है, तब वह शुभ और अशुभ के बीच का अंतर ही भूल जाता है। रावण ने भी अपने सबसे हितैषी जनों की बातों को अनसुना कर दिया — और इसी अनसुनी में उसके पराभव के बीज छिपे थे। (संदर्भ: सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण2013)

3. निष्कर्ष

रावण का जीवन एक गहरी और सजीव सीख है — न केवल इतिहास या पौराणिक कथा का वर्णन, बल्कि हमारे लिए एक नैतिक चेतावनी भी। रावण का जीवन एक ऐसे पात्र का उदाहरण है, जिसमें अद्भुत सामर्थ्य, विद्या और भक्ति थी, परंतु जिसने अपने अहंकार और वासनाओं को नियंत्रित न किया। उसमें असाधारण प्रतिभा थी, पर विनम्रता का अभाव था। वह जितना विद्वान और पराक्रमी था, उतना ही अपनी शक्ति के गर्व में अंधा भी हो गया — और यही गर्व उसके पतन का कारण बना।

हम जब रावण को देखते हैं, तो केवल एक राक्षस नहीं, बल्कि एक त्रासदीमय नायक दिखाई देता है — जो अपने गुणों के बावजूद अपने दोषों से पराजित हुआ। उसका जीवन इस बात का प्रतीक है कि जब मनुष्य में विवेक की जगह अहंकार ले लेता है, तो उसका पतन निश्चित होता है। राम और रावण दोनों ही इस कथा के अनिवार्य अंग हैं — एक मर्यादा का प्रतीक है, तो दूसरा मर्यादा के उल्लंघन का। श्रीराम का तेज रावण जैसे प्रतिद्वंदी से ही और अधिक उज्जवल हुआ। इसी दृष्टि से रावण का जीवन हमें यह सिखाता है कि शक्ति का अर्थ विनाश नहीं, बल्कि सेवा और संयम में है।

रावण का पराक्रमी जीवन मंगलमय नहीं हो सका, क्योंकि उसके आहार, विचार और आचरण से विकार दूर नहीं हुआ था। यदि वह अपने विकारों को त्यागकर विवेक का मार्ग अपनाता, तो उसका जीवन भी कल्याणकारी हो सकता था। रावण यदि नीतिमान होता, तो उसका महानत्व सच्चे अर्थों में महान बनता। नीति के बिना महानता वैसी ही है जैसे सुगंध के बिना इत्र, प्रकाश के बिना रत्न, या चंद्रमा के बिना चाँदनी।

अंततः रावण का पतन हमें यह संदेश देता है कि जीवन में चाहे कितनी भी सिद्धियाँ प्राप्त हों, यदि उनमें विनम्रता, धर्म और करुणा का समावेश न हो तो वे व्यर्थ हैं। अहंकार की ज्वाला अंततः अपने ही तेज को भस्म कर देती है। अहंकार चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो, सत्य और धर्म के आगे टिक नहीं सकता। वाल्मीकि का संदेश यही है कि हमें रावण के चरित्र-दर्शन से यह सीख लेनी चाहिए कि विवेक और मर्यादा से युक्त जीवन ही सच्चे अर्थों में मंगलमय होता है। और इसलिए कहा गया है —

"रामादिवत् वर्तीतव्यम्, न रावणादिवत्।"

4. संदर्भ ग्रन्थ

1. सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण, बालकांड, सोलहवाँ सर्ग, खंड 1, 2013, प्रकाशक – विदर्भ मराठवाड़ा बुक कंपनी, पुणे।
2. सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण, अरण्यकांड, चालीसवाँ सर्ग, खंड 2।

3. सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण, अरण्यकांड, अड़तालीसवाँ सर्ग, खंड 2।
4. सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण, युद्धकांड, तिरेसठवाँ सर्ग।
5. सार्थ श्रीवाल्मीकिरामायण, सुंदरकांड
6. शर्मा, रामावतार, रामायण का नायकीय पक्ष, हिंदी साहित्य अकादमी, दिल्ली।
7. डॉ. नोदनाथ मिश्र – वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला।
8. रामायणके पात्रोंका व्यक्तित्वदर्शन - न्या. राम केशव रानडे.
9. रावणकी सत्यकथा - रामनगीना सिंह

वाल्मीकि रामायण में सीता चरित्र व अन्य स्त्री स्वरूप

चेतना विलास काथार
मूळजी जेठा महाविद्यालय, जळगाव, महाराष्ट्र
(chetanakathar29@gmail.com)

वाल्मीकि रामायण में सीता का चरित्र पवित्रता, त्याग, निष्ठा, साहस, तेजस्वीता, दिप्ती एवं गरिमा का प्रतीक है। सीता ने कई कठिनाइयों का सामना किया, जैसे कि रावण द्वारा अपहरण और बाद में राम द्वारा त्याग देना, लेकिन उन्होंने अपने धर्म के प्रति सच्ची रहते हुए हर बार साहस और दृढ़ संकल्प दिखाया । वाल्मीकि रामायण में सीता का चरित्र और उसके साथ साथ अन्य स्त्रियों का चरित्र भी आदर्श है। वाल्मीकि रामायण में स्त्री के चरित्र को सीता, मन्दोदरी, उर्मिला,शबरी, मन्थराजैसे कई किरदारों के माध्यम से दर्शाया गया है। इन किरदारों में पतिव्रता, त्याग, धैर्य, सहनशीलता, ज्ञान, और छल व कपट जैसे कई विपरीत गुण दिखाए गए हैं, जो महिलाओं के विविध और जटिल पहलुओं को उजागर करते हैं। इससे अधिक उज्ज्वल नारी-चरित्र के भाव-भूमि की कल्पना सम्भवतः नहीं की जा सकती।

1. प्रस्तावना

यावत्स्यास्यन्ति गिरयः सरितइच महीतले ।
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति ॥
(बालकाण्ड, सर्ग श्लोक नं.३६)

जब तक पृथ्वी पर पर्वत और नदियाँ रहेंगी, रामायण की कथा जन-जन में प्रचलित रहेगी। ऐसा वरदान पाकर रची गई रामायण, वाल्मीकि द्वारा समस्त मानवता को दिया गया महान उपहार है। वाल्मीकि रामायण केवल एक ऐतिहासिक काव्य नहीं, बल्कि मानव जीवन का पथ आलोकित करने वाला एक महान प्रकाश स्तंभ है। रामायण में सागर की गम्भीरता, गंगा की पवित्रता और हिमालय की उदात्तता समाहित है। (रामायणतील व्यक्तिदर्शन, पान नं. १६-रानडे ,राजीव प्रकाशन ठाणे,१९८०)

रामायण की केन्द्र बिन्दू सीता ही है। रामचरित के साथ-साथ महाकाव्य में सीता का भी महान् चरित निबद्ध है। रामायण के नारी पात्रों में सीता का सात्त्विकतापूर्ण चित्रण हुआ है। कवि ने उन्हीं को उदात्त गुणों से युक्त काव्य की मुख्य नायिका के रूप में चित्रित किया है। कवि वाल्मीकि ने जानकी को स्वयं उद्भूत होकर जनक की पुत्री के रूप में अंकित कर एक महत्त्वपूर्ण पद दिया है। धर्मज्ञ जनक के यहां जन्म लेकर वह मानो स्वयं धर्मस्वरूपा शक्तिरूपिणी जानकी थी।

वाल्मीकि सीता की प्रशंसा करते कभी नहीं थकते। सीता के सौन्दर्य वर्णन में कवि ने उन्हें ' पद्मपत्र विशालाक्षी, पूर्णाचन्द्रानना, कनकवर्णाङ्गी' और मृदुसवगात्री' कहा है । सीता के श्वास की तुलना मनोहर वायु से की गई है – "निःश्वासःइव सीताया वातिवायुर्मनोहरः"। सीता राम के समान ही सुन्दर हैं और दोनों एक-दूसरे के लिए उपयुक्त थे । सम्पूर्ण विश्व का साम्राज्य सीता के हृदय-साम्राज्य के समक्ष हीन था'। (वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला – डॉ . नोदनाथ मिश्रा)

वाल्मीकि रामायण में माता सीता का स्वरूप हर मुश्किल समय में खंबीर और सच्चा रहना सीखाता है | आज के समय में जहाँ कई स्त्रियां अपने पति और संसार प्रति अपना कर्तव्य भूल जाती हैं| वहीं माता सीता का जीवन संकटों से भरा रहा लेकिन उनका एक पल भी ऐसे नहीं रहा जब वे आदर्श से विमुख रही हो | वाल्मीकि रामायण में सीता माँ का चरित्र साहस, पवित्रता, समर्पण और त्याग का प्रतीक है | वह एक आदर्श पत्नी, पुत्री और माँ थीं | जिन्होंने अत्यंत कठिन परिस्थितियों में भी अपनी गरिमा और मर्यादा बनाए रखी | (रामायण: डेव्हलप युअर लाईफ स्किल्स -वर्षा परगट पेज नं.१८)

सीता का विवाह राम के साथ बहुत कम अवस्था में हुआ था। वे स्वयं कहती हैं "बाला' बाल्येन संप्राप्तां भार्यां मां सहचारिणीम्" । वनवास से पूर्व वे राम के यहां बारह वर्ष तक रहीं। एक जगह राम ने सीता को सहधर्मचरी, पतिव्रता और महाभागा शब्द का प्रयोग किया है । इससे राम और सीता के भद्रता और पवित्रतापूर्ण व्यवहार का संकेत मिलता है। जैसे राम धर्मावतार है वैसी सीता भी" ।

सीता राम को ईश्वरावतार मानती हैं और अपनी सासों (कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी) को समान आदर और प्रेम की दृष्टि से देखती हैं। राम के साथ वनवास हेतु जाने के लिए सीता उद्यत हैं, और उनके इस वनवास की भविष्यवाणी ज्योतिविदों ने पहले से ही कर रखी है, इसीलिए भी वे वन जाना चाहती हैं। राम उनके कथ्य से सहमत हो जाते हैं और उन्हें भी वन ले जाने को सहमत हो जाते हैं।

राम के प्रति सीता की अनुरक्ति, भक्ति और पतिव्रता का वर्णन रामायण में अनुपम है। हनुमान के द्वारा कवि ने सीता की राम के प्रति अनुरक्ति का वर्णन कराया है। "अनुरक्ता हि वैदेही राम सर्वात्मनाशुभा"। (वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला – डॉ . नोदनाथ मिश्रा)

माता सीता ने अपने जीवन से हमारे समाज के लिए एक आदर्श स्थापित किया है | माता सीता स्वभाव से शांत, गंभीर और एकाकी प्रिय थी| अत्यंत सुंदरी और सौंदर्य से परिपूर्ण थी | उनके जीवन में हर चुनौती और कष्ट ने उनके साहस, संयम और चरित्र की परीक्षा ली| माता जानकी को कई बार संकटों का सामना करना पड़ा | कई कारणों की वजह से माँ सीता को वनवास, रावण द्वारा अपहरण, भगवान राम से त्याग, अग्निपरीक्षा कई कठिणाईयों का सामना करना पड़ा | इतने संकट कदाचित हि किसी भी स्त्री ने सहन किए होंगे | ऐसी विपत्ति की आंच में तपकर वे सदा खरे सोने की भाँति निखर उठी थी | वाल्मीकि रामायण में माता सीता का चरित्र धर्मनिष्ठ ,कर्तव्यनिष्ठ, शांत , संयमी, अपने कर्तव्य और पती के प्रति एक रूप रहना सीखाता है |

वाल्मीकि रामायण मैं माता सीता का चरित्र धैर्यवान, आत्मसंयम, सदाचारी, धर्मनिष्ठा, और कर्तव्यनिष्ठा से भरा हुआ है और अन्य स्त्रियों का चरित्र भी हमें जीवन में एकनिष्ठा सीखाता है | वाल्मीकि रामायण में उर्मिला, मंदोदरी, शबरी जैसे कई स्त्रियों ने अपने धर्म के प्रति सच्चे रहते हुए अपना कर्तव्य निभाया | तो मन्थरा जैसे खलनायक पात्र समाज में होने वाले कई वाद विवाद के कारण को दर्शाता है | वाल्मीकि ऋषी द्वारा रचित रामायण में हर एक पात्र एक दुसरे से संबंधित है, जो सकारात्मक और नकारात्मक दोनो भाव दिखाता है | जो आदर्श जीवन जीने के लिए प्रेरणा देता है |

2. विस्तार

वाल्मीकि रामायण आज के कलयुग में एक आदर्श जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है | ' रामायण' में सीता का चरित्र हर मुश्किल में चाहे सुख हो या दु:ख, खंबीर और समान रहना सीखाता है | जो आज की पीढ़ी के लिए सर्वोत्तम उदाहरण है | वाल्मीकि रचित रामायण में स्त्रियां जैसे उर्मिला, शबरी, मंथरा और मंदोदरी का जीवन चरित्र सही और गलत का पाठ सिखाता है |

१) माता सीता

माता सीता का जन्म

माता सीता का जन्म मिथिला नगरी (वर्तमान में नेपाल) हुआ था| जनक राजा खेत में हल करते समय हल की नोक से जमीन से माता सीता का जन्म हुआ | माता सीता को कई नामो से जाना जाता है|

जैसे :-

1. Tuमैथिली:- मिथिला नगरी की राजकुमारी यानी मैथिली |
2. जानकी:- राजा जनक की पुत्री मतलब जानकी |
3. भूमाता:- भू यानि धरती से जन्मी हुई भूमाता|
4. सीता :- ' सीत' के हल से जन्मी हुई सीता |
5. वैदेही :- उनके पिता राजा जनक 'विदेह' के राजा थे |

माता सीता का बचपन:-

माता सीता का पालन पोषण राजा जनक और रानी सुनैना ने किया | जानकी ने बचपन में अपने बाल क्रीड़ा से माता पिता को अभिभूत किया | सीता कापते हाथों से चित्र रचना करती थी | बाल सुलभ क्रीड़ाओं से युक्त जल संचरण संबंधी क्रीडायें और विविध क्रीड़ाओं में भी जैसे माँ से कहानी सुनाने की हठ करना, चंद्र प्राप्ति की याचना करना, घास पूस के घरौंदे बनाकर खेलना, गुड्डे गुड़ियों का ब्याह रखना , सखियों के साथ मिट्टी की चक्की बनाकर झूठ मूठ में पीसने की क्रीड़ा आदी करना| सभी को नयनतृप्त करती थी | (Ref. Journal Of JETIR Vol.9 -244)

माता सीता शक्ती का स्वरूप

माता सीता शक्ति का स्वरूप है | एक बार जानकी जी फूलों की गेंद से सखियों के साथ खेल रही थीं ,तभी उनकी गेंद धनुष के नीचे जा गिरी, शिवजी का धनुष जिसे कोई नहीं उठा सकता था | वह हल्के में ही उठाकर उससे अपनी गेंद निकाल लेती है| यह शक्ति स्वरूपा होने का परिचय देती है | यह दृश्य देखकर सीताजी के पिता राजा जनक जी ने यह प्रतिज्ञा की , जो योग्य और बलशाली इस धनुष को उठा पायेगा उस पुरुष से ही सीता जी का विवाह करेंगे | जानकी जी दया , करुणा , परोपकार के गुणों से परिपूर्ण थी| वे प्रभात बेला में विहग को चारा , शतकों को चावल के दाने देती थी | वह पाककला , चित्रकला आदि में प्रवीण थी| सीता में लज्जा , शीलता , गंभीरता से गुणों का प्रस्फुटन हो गया | वे अत्यंत सुंदरी और सौंदर्य से परिपूर्ण थी |

माता सीता का जीवन :-

माता सीता युवावस्था में आने पर राजा जनक ने उनके स्वयंवर का आयोजन करते हैं | उससे पहले माता सीता भगवान राम से पुष्प वाटिका में छोटी सी मुलाकात होती है , तब वे लज्जा वश अपने नैन झुका लेती है | लज्जा नारी का आभूषण होता है| माता सीता लज्जा, शिलता की मूर्ति है | प्रभु

राम द्वारा जीते गए स्वयंवर में उनके साथ शादी कर अपने माता सुनैना द्वारा दी गयी सारी शिक्षाओं को अपनी गाठ में बांधकर ससुराल में जैसे सास ससुर की सेवा करना, पति के कार्यों का ध्यान रखना, अपने छोटे के साथ प्यार से व्यवहार करना इन सारी बातों को ध्यान में रखकर जीवन भर उनका पालन करते हैं | माता सीता के ये गुण दया ,शील , साहसी , क्षमावान , प्रेम जैसे संस्कार सिखाते हैं | सीताजी संस्कारों से परिपूर्ण थी|

सीता राम को ईश्वरावतार मानती हैं और अपनी सासों (कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी) को समान आदर और प्रेम की दृष्टि से देखती हैं। राम के साथ वनवास हेतु जाने के लिए सीता उद्यत हैं, और उनके इस वनवास की भविष्यवाणी ज्योत्विदों ने पहले से ही कर रखी है, इसीलिए भी वे वन जाना चाहती हैं। राम उनके कथ्य से सहमत हो जाते हैं और उन्हें भी वन ले जाने को सहमत हो जाते हैं।

माता सीता का त्याग , समर्पण का गुण उनके प्रति सम्मान और आदर बढ़ाता है | जब प्रभुराम उनको वनवास में होने वाले कठिनाइयों के बारे में ज्ञात कराते है तो वह चौदा बरस वनवास में प्रभु श्रीराम के साथ हर परिस्थितियों में रहना का वचन देती है| जब श्रीराम को वनवास मिला तब माता सीता कहती है |

स मामनादाय वनं न त्वं प्रस्थितुमर्हसि ।
तपो वा यदि वाऽरण्यं स्वर्गो वा स्यात् त्वया सह ॥

आप अपने साथ मुझे भी वन को ले चलिए। चाहें आप तप करें, चाहें आप वनवास करें और चाहें आप स्वर्गवास करें, मुझे तो आपके सान्निध्य में ही रहना है। प्रभु श्रीराम से आज्ञा मिलने पर वे साथ जाती है। (Epaper-Jagran)

राम के प्रति सीता की अनुरक्ति, भक्ति और पतीव्रता का वर्णन रामायण में अनुपम है" । हनुमान के द्वारा कवि ने सीता की राम के प्रति अनुरक्ति का वर्णन कराया है। "अनुरक्ता हि वैदेही रामं सर्वात्मनाशुभा" । राम और सीता के पारस्परिक प्रेम का वर्णन कवि के शब्दों में अमर है।

अशोकवन में राम के वियोग में रहती सीता का स्वाभाविक चित्रण भी मार्मिक है। सधवा स्त्रियों के लिए आवश्यक आभूषणों को ही उसने धारण कर रखा है'। रावण के कठोर नियन्त्रण में रहती हुई भी सीता को राक्षसियों का अशोकवन के उस स्थल का आभास नहीं हो रहा था क्योंकि वह एकचित्त से राम का ध्यान कर रही थी।

सीता यदि चाहती तो रावण को भस्म कर सकती थी किन्तु इस हेतु राम की आज्ञा उन्हें नहीं मिली थी। यह भी उनकी पातिव्रत-धर्म-चारिता का एक प्रमाण है'। मन्दोदरी को ऐसा अनुमान हुआ कि सीता के तपःप्रभाव से रावण का यश समाप्त हो गया। हनुमान का भी कथन है कि सीता के तेज से ही लंका भस्म हो गई। और तेज तेज को नष्ट नहीं करता है, इसीलिए सीता स्वयं दग्ध नहीं हुई। यह सीता के पातिव्रत-धर्म, तेजस्विता का ही प्रभाव था कि हनुमान के पूँछ की आग उनके कथन मात्र से शान्त हो गई। इसके अतिरिक्त रामायण में सीता के अन्य गुणों का वर्णन वास्तव में उसका उदात्त चरित्र उपस्थित करते हैं। (वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला)

राम और सीता की धर्म पर चर्चा :- ऐसी मान्यता है कि विवाहित स्त्री को अपने पति से कोई बात नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसे अपने पति की हर बात सुननी चाहिए। वह एक सच्ची समर्पित पत्नी हैं। वह अपने पति से खुलकर धर्म पर चर्चा करती हैं, और राम भी उनके प्रश्नों का खुलकर उत्तर देते हैं।

वन में भ्रमण करते समय सीता राम से धर्म पर चर्चा करती हैं। वे राम से कहती हैं-

"प्रभुराम, काम से तीन व्यसन उत्पन्न होते हैं। पहला व्यसन मिथ्या भाषण है; दूसरा व्यसन व्यभिचार है और तीसरा व्यसन शत्रुता है। राम, पहले दो व्यसन, मिथ्या भाषण और व्यभिचार, तुम्हारे यहाँ नहीं हैं; परन्तु राम, तीसरा व्यसन, जो बिना शत्रुता के दूसरों के प्रति हिंसा है, तुम्हारे यहाँ उत्पन्न हुआ है। तुम धनुष-बाण लेकर वन में आए हो और राक्षसों का नाश करने की प्रतिज्ञा की है। तुम्हारी प्रतिज्ञा सुनकर, तुम्हारे परलोक सुख के बारे में सोचकर मेरा मन व्याकुल हो रहा है। इसलिए मुझे लगता है कि अब आपको शस्त्र उठाने का कोई कारण नहीं है। चूँकि हिंसा अधर्म है, इसलिए वन में ऋषि की तरह आचरण करने में ही आपका कल्याण है। जब आप अयोध्या लौटो, तो प्रसन्नतापूर्वक शस्त्र उठाओ। धर्म से अर्थ प्राप्त होता है, धर्म से सुख प्राप्त होता है, धर्म से ही सब कुछ प्राप्त होता है। इसलिए, धर्म ही संसार का सच्चा सार है। राम, स्त्रियों के शीघ्र स्वभाव के कारण, मैंने यह बात आपसे कही है।"

राम बडे प्यार से कहते की "हे सीता, विद्वान ऋषिवर! आपकी वाणी लाभदायक है; किन्तु स्मरण रहे कि मुझे शस्त्र धारण करना होगा, ताकि मुझे ऋषियों की रक्षा न होने के कारण बैठकर रोना न पड़े। तपस्वी और ऋषिगण मानव-मांस खाने वाले राक्षसों द्वारा खाए जाते हैं। इन निधियों की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। हे जनकपुत्री, इसीलिए मैंने इन ऋषियों के शरणागत होने पर उनकी रक्षा करने की प्रतिज्ञा की थी, और मैं जीवनपर्यन्त इस प्रतिज्ञा का पालन करूँगा।" सीता, एक दिन मैं अपने प्राण त्याग दूँगा, लक्ष्मण का त्याग कर दूँगा, या तुम्हारा भी त्याग कर दूँगा; लेकिन मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड़ूँगा।

इस प्रकार रामायण में सीता का चरित्र उत्कृष्ट और उदात्त रूप में चित्रित है। रामायण के समस्त स्त्री चरित्रों में इसकी प्रधानता और सात्त्विकता आदर्शोपस्थापन करती है। काव्य के अनुरूप ही सीता के चरित्र का का अंकन हो सका है। (वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला)

२) उर्मिला :-

वाल्मीकि रामायण के अनुसार, ऊर्मिला जनक नंदनी सीता की छोटी बहन थी और सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण को ब्याही गई थीं। इनके अंगद और

चंद्रकेतु नाम के दो पुत्र तथा सोमदा नाम की एक पुत्री थी। आधुनिक साहित्यकारों ने ऊर्मिला को विविध कलाओं में पारंगत और कर्तव्यपरायण नारी के रूप में चित्रित किया है।

उर्मिला मिला निद्रा का वरदान :-

वनवास की पहली रात में जब भगवान राम और देवी सीता कुटिया में विश्राम करने चले गये तो लक्ष्मण कुटिया के बाहर एक प्रहरी के रुप में पहरा दे रहे थे। तभी उनके पास निद्रा देवी प्रकट हुई थी। भगवान लक्ष्मण ने निद्रा देवी से यह वरदान मांगा था कि उन्हे चौदा वर्षो तक निद्रा से मुक्त कर दें तो निद्रा देवी ने उनकी इस इच्छा को स्वीकार करते हुए यह कहा था कि उनके हिस्से कि निद्रा को किसी न किसी को लेना ही होगा। तब भगवान लक्ष्मण ने निद्रा देवी से विनती की थी कि उनके हिस्से की निद्रा को उनकी पत्नी उर्मिला को दे दिया जाय। कहा जाता है कि निद्रा देवी के इस वरदान के कारण भगवान लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला माता लगातार चौदा वर्षो तक सोती रही और लक्ष्मण जी जागते रहे।

कर्तव्य के प्रति समर्पण और सरल, शांत और विनम्र स्वभाव वाली उर्मिला एक ऐसी महिला हैं जो रामायण की सबसे बलिदानी नायिका हैं। वह अपने पति के कर्तव्य को ही अपना सब कुछ मानती हैं और चौदा वर्षों तक महल में रहकर भी एक तपस्वी सन्यासिनी का जीवन जीती थीं।

ऊर्मिला द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य और त्याग लक्ष्मण को बंधन का नहीं मुक्ति का संदेश देते है। स्त्रियों का जीवन वैसे भी त्याग और संघर्ष से भरा होता है, फिर चाहे वह एक मेहनतकश स्त्री हो या राजघराने की महारानी परंतु कुछ ही स्त्रियों का जीवन हमें प्रेरणा प्रदान करता है। इस संदर्भ में ऊर्मिला का चरित्र सर्वप्रिय है। वर्तमान समय में स्त्रियों में सहनशीलता और कर्तव्य परायणता की कमी देखी जा सकती है अतः आज की स्त्रियों को धैर्य और संयम ऊर्मिला से सीखने का प्रयास करना चाहिए। (1-साकेत ,नवम सर्भ – मैथिलीशरण गुप्त)

३) मन्थरा :-

मन्थरा के कई अर्थ हैं, जिनमें मुख्य रूप से 'कुबड़ी' और ' षड्यंत्र रचने वाली' शामिल हैं। यह संस्कृत शब्द 'मंथर' से लिया गया है, जिसका अर्थ 'कुबड़ा', 'धीमा', 'आलसी' या 'टेढ़ा' है।

वाल्मीकि रामायण मन्थरा का चरित्र कैकेयी की दासी के रूप में वर्णित है, जो एक कुबड़ी और वृद्ध महिला है। मन्थरा मूल रूप से राजकुमारी रेखा थी, जो कैकेयी की सहेली थी और उसके साथ ही अयोध्या आई थी। उसके कुरूप और कुबड़ी होने के कारण उसे दासी का पद मिला।

दासी मन्थरा कुटिल और चालाक थी, कैकेयी को श्री राम के विरोध में भड़काकर अयोध्या के राज परिवार में संकट पैदा करती है, जिसके परिणामस्वरूप भगवान राम को चौदा वर्ष का वनवास भोगना पड़ा था। राजा दशरथ जब राम को युवराज बनाने की घोषणा करते हैं, तो मन्थरा कैकेयी को उत्तेजित करती है। वह कैकेयी को अपनी वफादारी और हित के बारे में सोचकर, राम के खिलाफ भड़काती है ताकि भरत राजा बन सके। परिणामी मन्थरा के षड्यंत्र के कारण कैकेयी राजा दशरथ से दो वरदान मांगती है, जिसमें राम का चौदा साल का वनवास और भरत का राज्याभिषेक शामिल था।

उसका नाटकीय ढंग से कैकेयी को अपना मन्तव्य मनवाने के लिए सब युक्तियां बताना उसके खलनायकत्व का परिचय देते हैं। वाल्मीकि ने दास-वर्ग की मनोदशा का यथार्थ चित्रण मन्थरा के चरित्र में किया है। मन्थरा जैसी खलनायिका की पूत्ति वाल्मीकि ने इसी पात्र से की है। (वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला)

४) मंदोदरी :-

रानी मंदोदरी रावण की पटरानी थी | रावण की पत्नी मंदोदरी बुद्धिमान थी। रावण भी बुद्धिमान था। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि मंदोदरी की बुद्धि अच्छी थी, इसलिए वह दुष्ट बन गई, और रावण की बुद्धि अच्छी नहीं थी, इसलिए वह दुष्ट बन गया।

मंदोदरी ने रावण को सीता के संबंध में अच्छी सलाह दी थी, क्योंकि वह नैतिकता को बहुत महत्व देती थी। मंदोदरी रावण को हमेशा धर्म का मार्ग अपनाने और सीता को वापस लौटाने की सलाह देती थीं, लेकिन रावण उनकी सलाह नहीं मानता था वह एक कर्तव्यपरायण और बुद्धिमान महिला के रूप में चित्रित की गई हैं। रावण ने वह सलाह नहीं मानी। इसका कारण यह था कि वह नैतिकता नहीं चाहता था। नैतिकता और स्वभाव का मेल संस्कृति है और नैतिकता और स्वभाव का मेल विकृति है। नैतिकता का सम्मान करने वाली मंदोदरी के कर्म संस्कृति थे, जबकि नैतिकता को कुचलने वाले रावण के कर्म विकृति थे। हृदय की भाषा का अनुष्ठान अनूठा और अलग है, यह अनुष्ठान भक्ति की आत्मीयता है। ऐसा ही अनुष्ठान मंदोदरी के यहाँ हुआ था; इसीलिए हम पाँचों स्त्रियों का स्मरण करते हुए मंदोदरी का नाम लेते हैं और कहते हैं|

अहल्या द्रौपदी सीता तारा मंदोदरी तथा।
पंचकंन्यां स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम्।।

(रामायणातील व्यक्तिदर्शन – रानडे पेज नं. ४४४)

५) शबरी :-

शबरी की कहानी रामायण में एक महान भक्त की कथा है, जिन्होंने अपना पूरा जीवन भगवान राम की भक्ति में बिताया। शबरी का जन्म एक भील समुदाय में हुआ था। वह विवाह की पारंपरिक प्रथाओं के कारण घर से भागकर जंगल में आ गई थीं, जहाँ उन्होंने ऋषियों की सेवा की।

एक सिद्ध तपोनिष्ठा श्रमिणी के रूप में रामायण में शबरी का चित्रण है। अलौकिक दिव्य पुरुष राम ने इस पृथ्वी पर कितनों को मुक्ति दी। तपस्विनी की तपस्या का परमफल मुक्ति आदि का सजीव चित्रण करने के लिए वाल्मीकि को भी, शबरी को भी अपना पात्र बनाना पड़ा | श्रीराम और लक्ष्मण पम्पा नामक पुष्करिणी के पश्चिमी तट पर स्थित उसके आश्रम में जाकर उससे मिले। दोनों को उसने प्रणाम किया। शबरी ने भगवान राम को अपने हाथ से चखे हुए सबसे मीठे झूठे बेर खिलाए, और राम ने प्रेम से उन्हें स्वीकार किया। श्रीराम द्वारा इसकी तपस्या के बारे में पूछने पर इसने कहा, "आपका दर्शन मिलने से आज मेरी पूजा सार्थक हुई और मुझे अब आपके दिव्यधाम की प्राप्ति होगी। इससे प्रकट होता है कि शबरी की तपस्या सकाम थी।"

शबरी में असीम गुरु-भक्ति भी थी। उसने दिव्यलोक में अपने गुरुजनों के पास जाने की आज्ञा मांगी। राम से आज्ञा प्राप्त करने पर इसने अग्नि में प्रवेश करके दिव्यरूप धारण किया और अपने गुरुजनों के पुण्यधाम की यात्रा की। इस प्रकार एक समाधि योगिनी का रूप शबरी का चित्रित किया गया है। (वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला -१८८)

3. निष्कर्ष

वाल्मीकि रामायण में माता सीता के जीवन के कई पहलू हैं जो हमें शिक्षा देते हैं | उनका धैर्य उनके संस्कार और प्रभु श्रीराम के प्रति अडिग विश्वास यह साबित करता है कि केवल एक पत्नी या एक महिला नहीं बल्कि उज्ज्वल चरित्रवान और आदर्श व्यक्तित्व थीं | सीता परम तेजस्विनी , स्वाभिमानी नायिका है | सीता धीर, गंभीर , साहसी, पतिव्रता ,नारी सुलभ सुसंस्कारों से सुसज्जित एक तेजस्वी नारी है | जो भारतीय संस्कृति में नारी गरिमा को नूतन आयाम प्रदान करती है | वाल्मीकि रामायण में अन्य स्त्रियों का स्वरूप भी आज के युग में भक्ति , धर्मनिष्ठा सदाचार , धैर्य और संयम सीखाता है | (epaper Jagran)

माता सीता संपूर्ण विश्व के हिंदू समाज में एक आदर्श है और पूजनीय नारी है | जिनके चरित्र का अनुसरण करके कोई भी नारी अपने परिवार को बांधकर रखने में सदा सक्षम हो पाएगी और अपने जीवन आदर्श नारी बनकर जी पाएंगी |

पतिव्रताधुरीणां त्वां नमामि जनकात्मजाम्।

अनुग्रहपरामृद्धिमनघां हरिवल्लभाम्।

अर्थ:- हे पतिव्रताओं में श्रेष्ठ, जनक की पुत्री, मैं तुम्हें नमन करती हूँ, तुम अनुग्रह करने वाली, समृद्ध और निष्पाप हो।

वाल्मीकि रामायण पारिवारिक एकता, धैर्य और माता-पिता की आज्ञा का पालन करने के महत्व को भी दर्शाती है। वाल्मीकि रामायण के हर एक पात्र जीवन की सीख देता है | रामायण सिर्फ एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि एक सामाजिक और ऐतिहासिक महाकाव्य भी है, जो हमें जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए मार्गदर्शन करता है। (Ref .journal of JETIR Nov.22,vol.9)

4. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. वाल्मीकि और कालिदास की काव्यकला -डॉ. नोदनाथ मिश्रा
2. रामायण के व्यक्तिदर्शन , राजीव प्रकाशन १९८०
3. सार्थ श्रीवाल्मीकि रामायण
4. रामायण:- डेव्हलप युअर लाईफ स्किल्स २०२३
5. E paper जागरण
6. Ref .Journal of JETIR Vol.9
7. मैथिलीशरण गुप्त संदर्भ

सीता (भक्ति) की खोज - एक विवेचना

पुरुषोत्तम श्रीवास्तव 'पुरु'
पूर्व उपमहानिदेशक, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, जयपुर
(purupurujaipur@gmail.com)

शास्त्रों में चार पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष बतलाये गये हैं। सामान्य से सामान्य सामाजिक मानव दो पुरुषार्थ काम और अर्थ, तो करता ही है। थोड़ा और अधिक जागरूक मानव ये दोनों पुरुषार्थ धर्म के अनुशासन में, और धर्म पुरुषार्थ पूरा करता है। पर प्रज्ञावान व्यक्ति का सारा प्रयत्न क्षणिक उपलब्धियों से अलग शाश्वत शांति - मोक्ष प्राप्त करना होता है। इसके लिए आपस में सहयोगी तीन मार्ग ज्ञान, कर्म और भक्ति मार्ग हैं। जिसमें भक्ति मार्ग साधन में सुगम होने से विशेष उपयोगी कहा जा सकता है। भक्ति का अनिवार्य पक्ष है इष्ट के प्रति पूर्ण समर्पण। साधकों के मार्गदर्शन के लिए इस पक्ष को माता सीता ने रामावतार काल में स्वयं चरितार्थ करके दिखाया है। भक्ति मार्ग अपनाने वाले माता सीता, जो भक्तिस्वरूपा हैं, के जीवन चरित्र से अनुपम शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में माता सीता के जीवन में भक्ति कहाँ-कहाँ दृश्य है , किस रूप में है, किस तरह से निभाई गई है को खोजने का यथा समझ एक प्रयास किया गया है।

1. प्रस्तावना

माता सीता को संतो, मनीषियों, पंडितों, बुद्धिजीवियों और जनमानस ने अपने-अपने विवेक के अनुसार प्राप्त ग्रंथों, ग्रंथों के भाष्यों, व्याख्याओं, उपदेशों, प्रचलित किंवदंतियों, स्व मनन और कहीं-कहीं निज आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भी समझा, माना और व्यवहार किया। निर्गुण निराकार उपासकों ने सीता माता को ब्रह्म की माया शक्ति माना यथा-

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्॥ बाकां (5)॥

शब्दार्थ: उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाली, सम्पूर्ण क्लेशों को हरने वाली तथा सम्पूर्ण कल्याणों को करने वाली श्री रामचन्द्र जी की प्रियतमा श्री सीता जी को मैं नमस्कार करता हूँ। कई स्थानों पर अनेक संतों ने माता को कार्य -कारण सिद्धांत की अधिष्ठात्री के रूप में कहा है जैसे

ऊँ शक्ति जय , ऊँ शक्ति जय , ऊँ शक्ति जय ऊँ।
इच्छा शक्ति ऊँ, ज्ञान शक्ति ऊँ, क्रिया शक्ति जय ऊँ॥ लोक काव्य॥

दूसरी ओर सगुण भक्तों ने उसी शक्ति को अनेक रूपों में, देखा, माना और पूजा भी। जैसे दुर्गा और उनके नो रूप:

ऊँ जयंती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते॥ "देवी महात्म्य" (अर्गला स्तोत्र")

शब्दार्थ: जयंती, मंगला, काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा धात्री और स्वधा नामों से प्रसिद्ध जगदंबे आपको मेरा नमस्कार है। या फिर उमा-पार्वती, रमा-लक्ष्मी, ब्रह्माणी- सरस्वती, काली, गायत्री, शिवा, नारायणी आदि के रूप में।

"सर्वमंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके।
शरण्ये त्र्यंबके गौरी नारायणि नमोस्तुते॥' श्लोक देवी महात्म्य (अध्याय 8 -नारायणि स्तुति)

जयनारायणी! तुम सब प्रकार का मंगल प्रदान करने वाली मंगल मयी हो। कल्याण दायिनी शिवा हो। सब पुरुषार्थो को (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को) सिद्ध करने वाली हो। शरणागत वत्सला, तीन नेत्रों वाली एवं गौरी हो। हे नारायणी, तुम्हें नमस्कार है।

ॐ गिरिजाय च विद्महे, शिवप्रियाय च धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्॥ (गायत्री छंद)

शब्दार्थ: हिमालय राज की पुत्री और भगवान शिवजी की प्रिया जिनका नाम गिरिजा है, जो विशेष बुद्धि की धारक हैं ऐसी दुर्गा माँ का हम ध्यान करते है, और उन माँ दुर्गा को प्रणाम करते है। माता हमें अपनी शरण में लें कालान्तर में देवीय गुणों को भी विशेषण-विशेष्य के न्याय से देवी रूप में पहचाना गया और उपासना की गई। जैसे शक्ति, भक्ति, क्षमा, स्मृति, विद्या, क्षुधा, कांति, लज्जा, स्मृति आदि रूपों में जैसे दुर्गा सप्तशती में आया है।

या देवी सर्वभूतेषु शक्ति-रूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
या देवी सर्वभूतेषु सरस्वती-रूपेण संस्थिता।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
"या देवी सर्वभूतेषु भक्ति-रूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ (दुर्गा सप्तशती)

प्रस्तुत शोध पत्र में माँ सीता को भक्ति रूप में मानकर प्रमुखतया राम चरित मानस, वाल्मीकि रामायण, दुर्गा सप्तशती, श्रीमद भगवद्गीता आदि का आधार लेकर सीता (भक्ति) कहाँ-कहाँ और कैसे मिलेंगी इस पर विचार व्यक्त किये गये हैं।

2. विस्तार

साधना के मार्ग

प्रत्येक चेतन जीव सम्पूर्ण जीवन में सुख प्राप्ति के लिए निरंतर क्रियाशील रहता है। उसका सदा से अनुभव रहा है कि सुख मिलते तो हैं पर वे क्षणिक होते हैं, अनिश्चिता से भरे और अंततः दुख के कारण ही बनते हैं। ऐसे में जीवन की विषमताओं से उपहत उचाट वैरागी मन शाश्वत और सार्वभौमिक सुख की तलाश में निकलता है। एक अन्य कोटि का सत्यान्वेषी, जीवन के उद्देश्य की खोज में रत, साधक बाह्यभान्तर अन्वेषण करता है तो पाता है कि वह अपनी ही संकीर्णता से क्षुब्ध है। ''मैं- मेरा, तू- तेरा'' के जाल में फंसा है। वह अपना कितना भी विस्तार क्यों ना कर ले, पिपीलिका से लेकर ब्रह्म होने तक की यात्रा करने के बाद भी, वह शाश्वत शांति नहीं पाता। कारण है जब तक अंश, अंशी से नहीं मिल जाता अतृप्ता बनी ही रहती है। यह अंशी जो एक है पर अनेक नामों से जाना, पुकारा जाता है, कैसे मिलेगा, उसको जानना और पाना बड़ा प्रश्न है।

भगवद्गीता में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण मुमुक्षु के स्वाभाविक आध्यात्मिक झुकाव को देख कर दो मार्ग बता रहे हैं एक ज्ञानयोग और दूसरा कर्मयोग।

जहाँ कर्मयोग ज्ञानयोग प्रमेय का पूर्वगामी है।

लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ।
ज्ञानयोगेन सांख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्॥गीता3.3॥

श्री भगवान् ने कहा हे निष्पाप (अनघ) अर्जुन इस श्लोक में दो प्रकार की निष्ठा मेरे द्वारा पहले कही गयी है ज्ञानियों की (सांख्यानां) ज्ञानयोग से और योगियों की कर्मयोग से। इस कर्मयोग में साधक अपनी क्षमता अनुसार कर्म का भाव पहले विहित कर्म, कर्तव्य कर्म, फिर निष्काम भाव और पूर्ण समर्पण से करता जाता है। यह पूर्ण समर्पण भाव से जीना और कर्म करना ही भक्ति (सीता) हैं। यह भक्ति कहाँ रहती है कैसे इसी की खोज की जाये आइये देखते हैं:

सीता अर्थात् भक्ति

भारतीय प्रज्ञा में सीता सिर्फ एक पात्र नहीं, बल्कि भक्ति का पर्याय मानी गई हैं। सीता जी ने हर शुभाशुभ परिस्थिति में अपना सम्पूर्ण जीवन श्रीराम के प्रति उसी प्रकार समर्पित रखा जिस प्रकार एक भक्त हर स्थिति में अपने इष्ट के प्रति प्रणत रहता है। वाल्मीकि रामायण हो या राम चरित मानस या फिर कोई अन्य सीता राम संबंधित ग्रंथ सब में सीता जी को धर्म, अव्यभिचारिणी भक्ति और मर्यादा की प्रतिमूर्ति कहा गया है। राम और सीता का संबंध अविभाज्य है वास्तव में दोनों एक ही हैं इसलिए यह कहना सत्य है कि भक्ति के बिना ईश्वर का मिलना संभव नहीं।

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीता राम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न॥ बाकां18॥

तुलसीदास जी कहते हैं जैसे ''वाणी और उसके अर्थ'' तथा ''जल और जल की लहर'' सुनने में अलग-अलग हैं, परन्तु वास्तव में अभिन्न (एक) हैं, उन श्री सीतारामजी के चरणों की मैं वंदना करता हूँ, जिन्हें दीन-दुःखी बहुत ही प्रिय हैं।

ऐसी सीता (भक्ति) इष्ट के प्रति संपूर्ण निष्ठा, गुरु की कृपा और नाम-स्मरण से ही प्राप्त होती है। हर जीव के हृदय में राम का निवास है तो सीता (भक्ति) तो वहां स्वत रहती ही है। अंतर है तो जहाँ शुद्ध निर्मल अंतस है वहाँ प्रकट रूप में और जहां कलुषता है वहाँ गुप्त रूप में रहती हैं। प्रकट और गुप्त रूप भक्ति कहाँ-कहाँ मिलती है आइये खोजते हैं।

पहले प्रकट रूप में सीता-भक्ति के निवास को देखते हैं:

सीता (भक्ति) के स्थान

तुलसीदास जी ने मानस में जैसे राम जी के रहने के चौदह स्थान बताये है वैसे ही सीता जी मुख्यतया कहाँ-कहाँ निवास करती हैं और वहाँ-वहाँ क्यों रहती हैं उसकी लक्ष्यार्थ चर्चा करते है। सीता (भक्ति) की खोज निम्न स्थान पर की जा सकती है:

1. **पावन धरा - सीता (भक्ति) का जन्म स्थान**

"जननी धरती सुत उपजि, लाज सीतासु भली।
राम नाम के संग उत्पन्न, धरनि पर झली॥कवितावली॥

शब्दार्थ: सीता जी धरती से उत्पन्न हुई। धरती माता को उन पर गर्व हुआ। उनका प्राकट्य राम के नाम और लीला से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। यह दर्शाता है कि सीता (भक्ति) का पवित्र और महान चरित्र ही धरती (मन) पर राम नाम के प्रभाव को संभव बना सका।

लक्ष्यार्थ: सीता (भक्ति) उस हृदय धरा में जन्म लेती है जो मन, वचन, कर्म से पवित्र हो। व्यवहार सुन्दर हो अर्थात् कपटहीन, छलहीन हो, द्वेष रहित हो और धरा जैसे क्षमावान हो। मानस में राम भी कहते हैं :

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥ मानस 5.3॥

भावार्थ: राम जी कहते हैं मुझे कपट और छल-छिद्र नहीं सुहाते। अर्थात जिस मनुष्य का निर्मल मन होता है, जो गुप्त या धोखाधड़ी वाली प्रवृत्ति का नहीं है, निष्कपट होता है उसे मैं पसंद करता हूं। इसलिए यदि सीता (भक्ति) की खोज करनी है उन्हें ओर पाना है तो मन को निर्मल बनाना होगा। एक बार मन निर्मल बन गया तो सीता (भक्ति) का स्वयं प्राकट्य हो जायेगा।

2. जनक का घर - देहाभिमान मुक्त अंतस

वाल्मीकि रामायण के अनुसार एक बार मिथिला में पड़े भयंकर सूखे से राजा जनक बेहद परेशान हो गए थे। तब इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए उन्हें एक ऋषि ने यज्ञ करने और धरती पर हल चलाने का सुझाव दिया। उन ऋषि के सुझाव पर राजा जनक ने यज्ञ करवाया और उसके बाद राजा जनक धरती जोतने लगे। तभी उन्हें धरती में से सोने की डलिया में मिट्टी में लिपटी हुई एक सुंदर कन्या मिली। उस कन्या को हाथों में लेकर राजा जनक ने उसे 'सीता' नाम दिया और उसे अपनी पुत्री के रूप में स्वीकार किया।

भावार्थ: जब साधक को कठिन साधना के बाद भी शांति नहीं मिलती तो कोई ऋषि, साधक को विवेक रूपी हल से भाव धरा को जोतने- मंथन करने का यज्ञ करने को कहता है। तब इसके फल स्वरूप जनक (साधक) के घर (हृदय) में भक्ति रूपी शांति प्राप्त होती है।

“उद्भव धरति सुशोभित, जनक हर्षित भए।
कारसीता सुत प्रकट भई, धरनि पर आई छाए।” लो.का.॥

व्याख्या: राजा जनक-साधक के घर (हृदय) में जब सीता (भक्ति) आईं तो वे अत्यंत प्रसन्न हुए। उनका यह मानना था कि यह कन्या उनके देह-राज्य में धर्म के लिए यह बहुत बड़ा सौभाग्य है। ‘राजा जनक कर्मयोगी होतेहुए भी विदेह थे” - शरीर के प्रति अनासक्त थे, देहाभिमान (मैं शरीर हूँ) से मुक्त थे। वह जानते थे कि “मैं यह शरीर नहीं आत्मा हूँ। वे ब्रह्म भाव होने के कारण सदैव प्रसन्न रहते थे। गीता मे कृष्ण भी भक्ति की यही पहचान बताते हैं।

"ब्रह्मभूत: प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ् क्षति |
सम: सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् || (गीता 18/54)॥

परम ब्रह्म में स्थित मनुष्य शांति प्राप्त करता है, वह न तो शोक करता है और न ही कोई कामना करता है। वह सभी के प्रति समभाव रखता है, ऐसा परम योगी मेरी भक्ति को प्राप्त करता है। वे कहते हैं कि ज्ञान की इस अवस्था को प्राप्त करने के पश्चात् मनुष्य 'परा भक्ति' अर्थात् भगवान का दिव्य प्रेम प्राप्त करता है। सीता (भक्ति) ऐसे ही स्थान में रहती हैं और वृद्धि को परम रूप को प्राप्त होती है।

3. धनुष-यज्ञ

सीता भक्ति की खोज करनी है तो वे धनुष-यज्ञ में मिलेंगी । उन्हें पाना है तो साधना करनी होगी और धनुष-यज्ञ प्रांगण में अपनी पात्रता सिद्ध करनी होगी।

राजा जनक ने सीता स्वयंवर के लिए यज्ञ रखा। शर्त थी- जो शिवजी का भारी धनुष उठाकर चढ़ा दे या तोड़ दे, वही सीता का वर होगा।

उठि न सके सब भूप धनु, हँसि लखि लखि नरनाथ॥ औरबाकां चो.262॥
“भए सब बिस्मित देखि, लखि राम लघुता असीम।”॥बाकां दो.262॥

अनेक वीर आये, पर कोई धनुष को हिला भी न सका। सारे राजा थक गये, पर धनुष को तोड़ नहीं पाए। क्योंकि राजाओं को अपनी शक्ति का अभिमान था, कर्ता और भोक्ता का भाव था, भक्ति के प्रति समर्पण नही अधिकार का भाव था। यह दुस्साहस की अभिव्यक्ति थी इसलिए पराजय होनी ही थी। तब गुरु विश्वामित्र अत्यंत प्रेमभरी वाणी बोले हे राम! उठो, शिव का धनुष तोड़ो और हे तात! जनक का संताप मिटाओ।

बिस्वामित्र समय सुभ जानी। बोले अति सनेहमय बानी॥
उठहु राम भंजहु भवचापा। मेटहु तात जनक परितापा॥ बाकां 1/226॥

राम द्वारा धनुष भंग, गुरु की आज्ञा का पालन था। कामना से इतर, अहंकार और कर्ता भाव से विहीन कर्तव्य मात्र। ऐसा व्यवहार ही साधना का प्रतीक है -जब तक मन में ‘‘मैं कर्ता का’’ अहंकार है, भक्ति सिद्ध नहीं होती। मोरारी बापू कहते हैं धनुष यज्ञ कोई बाहरी शक्ति-क्रीड़ा नहीं थी। यह भीतर के अहंकार-भंजन की कथा है। जहाँ शक्ति, शुद्धि और श्रद्धा एकत्र हों वहीं सीता-राम का मिलन होता है अर्थात सत्य और भक्ति का मिलन।

4. अयोध्या धाम

राम से परिणय के बाद सीता जी अपने ससुराल अयोध्या पंहुचीं जो अति पावनी है।

बंदउँ अवध पुरी अति पावनि।सरजू सरि कलि कलुष नसावनि।बाकां 1/16॥

"अयोध्या" शब्द का अर्थ ही है - जहाँ युद्ध (योद्धा) न हो, अर्थात जहाँ द्वेष, संघर्ष, अहंकार और विकारों का स्थान न हो। आध्यात्मिक दृष्टि से अयोध्या केवल बाह्य नगर नहीं, बल्कि मानव हृदय का दिव्य धाम भी है। यहां के राजा दशरथ वेदों में विख्यात धर्मधुरंधर, गुणों के भंडार और ज्ञानी हैं। उनके हृदय में शार्गधनुष धारण करनेवाले भगवान की भक्ति थी, और उनकी बुद्धि भी उन्हीं में लगी रहती थी। जिनकी तीन पत्नियां और चार पुत्र हैं। इनके घर सीता भक्ति आई है।

अवधपुरीं रघुकुलमनि राऊ। बेद बिदित तेहि दसरथ नाऊँ॥
धरम धुरंधर गुननिधि ग्यानी। हृदयँ भगति भति सारँगपानी॥ बाकां1/16॥

आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसा साधक जो अपनी दसों इंद्रियों के रथों का राजा हो । जिसने अपनी सभी इंद्रियों पर अपनी तीनों पत्नियों कौशल्या (ज्ञान), केकैई (कर्म) और सुमित्रा (उपासना) के माध्यम से विजय प्राप्त कर ली हो वह दशरथी है। जिसके तप के फल से जीवन में सत्य (राम), प्रेम (भरत), वैराग्य (लक्ष्मण) और समता (शत्रुघ्न) हो वहां सीता (भक्ति) आ ही जाती हैं। इसलिए साधक को चाहिए कि मन में अहंकार और राग-द्वेष का अंत हो जिससे वहाँ केवल राम-सीता (सत्य और प्रेम) का निवास हो। वह अपना मन ऐसी "अयोध्या" बनाए। ऐसे सत्य के प्रति समर्पित हृदय में जहाँ धर्म, सत्य, प्रेम और शांति हो सीता (भक्ति) निवास करती है । सीता - भक्ति की खोज अगर करनी है तो जिस जगह, जिस जिस परिवेश मे भक्ति, ज्ञान और त्याग की भावना हो वहाँ भक्ति की खोज की जानी चाहिए। दूसरे शब्दों में साधक सत्य, ज्ञान, मर्यादा, प्रेम और त्याग के पथ पर चले तो ऐसे साधक के हृदय में भक्ति स्वयं आकर निवास करने लगेगी। ऐसी ही यह अयोध्या है जहां वेदज्ञ, तपस्वी, ब्रह्मनिष्ठ और धर्मपरायण लोग निवास करते थे।

संतसभा अनुपम अवद सकल सुमंगल मूला। बाकां 39॥

ऐसे किसी जितेन्द्रिय साधक के मन में भी यदि कभी ईर्ष्या या मोह का उदय हो जाए तो सीता (भक्ति) वहाँ से दूर चली जाएगी, जैसे केकैई में पुत्र मोह उत्पन्न होने से राम -सीता अयोध्या छोड़ वन चले गये थे।

5. चित्रकूट

अयोध्या से वनवास होने पर अधिकतम समय राम सीता जी ने चित्रकूट में बिताया। चित्रकूट दो शब्दों चित्र और कूट के मेल से बना है. संस्कृत में चित्र का अर्थ है अशोक और कूट का अर्थ है शिखर या चोटी। यह सुख और शांति का क्षेत्र माना जाता है। चित्रकूट है।

शांति और शुद्धि का स्थान: यहाँ आने वाले भक्त मन की शांति पाते हैं और मंदाकिनी नदी में स्नान कर आत्मा की शुद्धि का अनुभव करते हैं।

तपस्या और ध्यान का केंद्र: यह स्थान ऋषियों और संतों के लिए तपस्या और ध्यान का केंद्र रहा है, जैसे कि महर्षि अत्रि और सती अनुसूया का आश्रम।

विभिन्न तीर्थों का संगम: यहाँ की कामदगिरि पर्वत की परिक्रमा को सभी तीर्थों का समागम माना जाता है, जिससे भक्तों की मनोकामनाएं पूरी होती हैं।

ब्रह्मांडीय चेतना का केंद्र: प्राचीन काल से ही चित्रकूट ब्रह्मांडीय चेतना के लिए एक प्रेरणादायक केंद्र रहा है।

आध्यात्मिक लाभ: कुछ मान्यताओं के अनुसार, इस पवित्र स्थान पर रहने या यहाँ की यात्रा करने से व्यक्ति को आध्यात्मिक लाभ मिलते हैं। तुलसीदास जी गीतावली में कहते हैं:

चित्रकूट अति बिचित्र, सुन्दर बन, महि पबित्र, पावनि पय-सरित सकल मल-निकन्दिनी I
सानुज जहँ बसत राम, लोक-लोचनाभिराम, बाम अंग बामाबर बिस्व-बन्दिनी IIगीतावली॥

चित्रकूट पर्वत बड़ा ही विचित्र है; वहाँ का वन बड़ा ही सुन्दर और पृथ्वी अतिशय पवित्र है I वहाँ सम्पूर्ण मलोंको नष्ट करनेवाली परम पावनी पयस्विनी (मन्दाकिनी) स्वर्ग की नदी हैI वहाँ सकल लोकोंके नेत्रोंको प्रिय लगनेवाले भगवान श्रीराम अपने अनुज लक्ष्मणजीके सहित रहते हैं तथा उनके वाम भागमें विश्व वन्दिता रमणीरत्न वैदेही जी विराजती हैं I

मोरारी बापू कहते हैं जो कामना तुम्हारी मुस्कराहट छीन ले, तुम्हें तनाव कर दे वह भक्ति सही नहीं है। ये सब प्रभु पर छोड़ दें। उन्होंने कहा कि अपेक्षा मात्र भी हरिमिलन में रूकावट है। जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करने में हरि स्मरण और निष्काम कर्म श्रेष्ठ है । चित्रकूट तो चित्त का प्रदेश है मानस की राजधानी है। यहां राम सीता का मनन चिंतन जितनी भी हो कम है। आनंद अगर कहीं है तो चित्त के साथ है। चित्रकूट में श्री है, ऐश्वर्य है, आनंद है अकारण आनंद, स्वरूपावस्था का आनंद ।

आध्यात्मिक अर्थ में वन गमन करके सीता राम जी ने बताया कि साधक के मन की धरा पर स्वयं के कारण या कोई आरोपित लोभ या मोह के कारण भी विक्षेप हो जाय तो साधक को उस स्थान या वातावरण से दूर चले जाना चाहिए। दूर का अर्थ बाह्य जगत से परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया बहुत कम करके अपने भीतर चित्त में स्थिर हो जाना चाहिए । कूटस्थ भाव में विचरण करना चाहिए। संसार में रह कर भी दृष्टा भाव से व्यवहार करते हुए स्वरूपानंद में रहना चाहिए जो साधक का परम लक्ष्य है। यहाँ यह कहना अतिश्योक्ति नहीं वरन परम सत्य होगा कि सीता (भक्ति) के मिलने का सर्वोच्च स्थान कूटस्थ चित्त ही है। इस स्थान से उतर कर सीता राम जी द्वारा किए गए सभी कार्य लीला मात्र हैं।

अब गुप्त रूप में सीता-भक्ति के निवास और फिर उनके साधना द्वारा प्रगट होने को देखते हैं-

6. पंचवटी

चित्रकूट में स्वरूपास्थित राम- सीता (भक्ति), चित्रकूट छोड़ने के बाद मानव लीला हेतु अनेक श्रृषियों के दर्शन करते हुए पंचवटी में पधारे। पंचवटी' का अर्थ है - पाँच वृक्षों वाला उपवन। यह वह स्थान है जहाँ श्रीराम, सीता और लक्ष्मण ने वनवास के दौरान निवास किया था। यहीं से रावण द्वारा सीता-हरण की घटना हुई और राम की युद्ध-यात्रा का आरंभ हुआ।

आध्यात्मिक संदर्भ में "पंचवटी" मात्र स्थान नहीं, अपितु ऐसे मनुष्य के अंतर्मन की आध्यात्मिक यात्रा का आरंभ है जहां भक्ति गुप्त रूप में स्थित है। पंचवटी मनुष्य के शरीर-रूपी वन में स्थित पाँच वृक्ष अर्थात पाँच इन्द्रियों श्रवण (कान), दर्शन (नेत्र) घ्राण (नाक), रसना (जीभ) और स्पर्श (त्वचा) हैं। ये पाँचों वृक्ष जीव के मन रूपी वन में फलते फूलते रहते हैं। इन पाँचों को संयमित करना साधना है, जिससे मन राममय बनने अर्थात अर्थात आत्मस्वरुपहोने की यात्रा पर आगे बढ़ता है। पंचवटी में ही राम राक्षसों को मारकर धरा, मुनियों, साधु संतों के शोक हरने और धर्म की पुन: प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिए लीला करने का निश्चय करते हैं और सीताजी को अग्नि में निवास करने की बात कहते हैं।

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करबि ललित नरलीला॥
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा॥1॥ अरण्य कां 1/19 ॥

हे प्रिये! हे सुंदर पतिव्रत धर्म का पालन करने वाली सुशीले! सुनो! मैं अब कुछ मनोहर मनुष्य लीला करूँगा, इसलिए जब तक मैं राक्षसों का नाश करूँ, तब तक तुम अग्नि में निवास करो॥ यहां छाया-सीता लीला के माध्यम से ऐसे साधक की स्थिति को उजागर करती है जो साधना के मार्ग पर चलने के बाद भी लोभ के कारण अपने स्तर से क्रमवार गिरता चला जाता है और अंत में वासना के गढ़ में कैद हो जाता है। लीला अनुसार छाया-सीता स्वर्ण मृग की कामना के लिए राम अर्थात सत्य की बात ही नहीं सुनती बल्कि सत्य को अपने से दूर भेज देती है और लक्ष्मण - वैराग्य का भी तिरस्कार करती हैं। वैराग्य की सीमा भी पार कर जाती हैं। फलस्वरूप राक्षसी प्रवृत्ति रावण उनका हरण करके ले जाता है।

आध्यात्मिक भाव में श्रीराम, सीता और लक्ष्मण का पंचवटी प्रवास सिखाता है कि जब तक साधक राम (सत्य), भक्ति (सीता) के साथ पंचवटी अर्थात इन्द्रिय-जगत् में और विवेक और वैराग्य (लक्ष्मण) के साथ में चलता है, तब जीवन साधना के पथ पर बढ़ता जाता है। लेकिन यदि लोभ के वश हो (स्वर्ण मृग) या फिर अहंकार वश हो व्यवहार करने लगता है तो उसके हृदय से भक्ति का हरण हो जाता है।

7. अशोक वाटिका

अपहरण के बाद सीता जी भोग नगरी लंका (जहां चहुं ओर काम, क्रोध , द्वेष और द्वंद का कोलाहल रहता है) के मध्य जहां रहती हैं वह है अशोक वाटिका। वहां राम से विरह की पीड़ा तो है पर सांसारिक शोक नहीं है। नितांत सांसारिक जीव या पथ भष्ट साधक के हृदय में भक्ति सुप्त अवस्था में लुप्त प्रायः सी रहती है। ऐसी स्थिति में जीव जब भक्ति के लिए प्रयास ही नहीं करता या स्वयं को प्रयास करने में सक्षम नहीं पाता, विमूढ़ सा दिशाहीन, गतिहीन हो, बलात संसार की ओर खिंचता चला जाता है तब उसकी पुकार सुन कृपालु राम, हनुमान जी को गुरु के रूप में भेजते हैं। तब हनुमान जी जीव की मन रूपी लंका में प्रवेश कर शुब्ध भक्ति को साहस प्रदान करते हैं और पुन: राम के शीघ्र मिलने का आश्वासन देते हैं। फिर कामना, मोह, क्रोध और अहंकार की भित्तियों से घिरी लंका का दहन कर देते हैं। ये गुरु ही हैं जो अक्षम जीव को राम से मिलन का मार्ग प्रशस्त करते हैं और अपने ही चरित्र से जीव को उपदेश भी करते हैं कि जब तक राम से भेंट ना हो मन में राम को रखिए और सब काज कीजिए जैसे मैं करता हूँ।

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥
गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई॥ सुन्दर कां.21।

अयोध्यापुरी के राजा श्री रघुनाथजी को हृदय में रखे हुए नगर में सब काम कीजिए। तब विष अमृत हो जाता है, शत्रु मित्रता करने लगते हैं, समुद्र गाय के खुर के बराबर हो जाता है, अग्नि में शीतलता आ जाती है।

8. भरोसा

भक्ति भरोसे का ही दूसरा नाम है। जीव चाहे सांसारिक हो, साधक हो या फिर सिद्ध हो उसका अपने ईष्ट में भरोसा ही उसकी भक्ति है। सीता अर्थात भक्ति सदा ही भरोसे में प्रतिष्ठित हैं। जीव का अपने अपने ईष्ट से साक्षात्कार और उनमें विलय सदा कृपा साध्य है ना कि साधना साध्य। जीव चाहे कितनी भी साधना क्यों ना कर ले वह सिर्फ अपनी साधना के बल पर प्रभु को साक्षात्कार के लिए बाध्य नहीं कर सकता । हाँ, साधना के बल से वर पाने का अधिकार जरुर है। देव या असुर सदा से तप करके इच्छित वर पाते रहे हैं पर ईष्ट में विलय नहीं।

कोई भी स्तर का साधक क्यों ना हो उसे ज्ञात होना ही चाहिए कि अपने सामर्थ्य अनुसार साधना के बाद अपने ईष्ट को पूर्ण समर्पण से पुकारना और प्रतीक्षा करना ही प्रभु को पाने का एकमात्र रास्ता है। भरोसा यदि पूर्ण हो, दृढ़ हो तो प्रभु स्वयं चल के, सेतु बांध के या फिर खंभ फाड़ के भी, जैसे भी हो अपने भक्त से मिलने, रक्षा करने और उद्धार करने प्रकट होते हैं। कोई भी सदगुरु अपने शिष्य को यही मार्ग दिखलाता है। जैसे मतंग ऋषि ने शबरी को, हनुमान जी ने सीता जी को और नारद जी ने प्रहलाद जी को यही मार्ग बताया था। भरोसे को निभाने के लिए ही राम पैदल चल कर

शबरी से मिलने गए और उनका उद्धार किया। सेतु बांध कर राक्षसों को मार कर सीता जी को मिले। भक्त प्रह्लाद के भरोसे को कायम रखने के लिए खंभ फाड़ कर प्रकट हुए।

9. परीक्षा

भक्ति ओर परीक्षा का चोली दामन का साथ है। भक्ति यानी इष्ट के प्रति झुकाव, आकर्षण, लगाव, प्रेम, समर्पण फिर पूर्ण समर्पण एक प्रकार से साधक के साधना का क्रमवार स्तर है। साधना करते करते एक एक सीढ़ी चढ़ कर इस स्थिति को प्राप्त किया जाता है । साधक को स्वंय की स्थिति का समय- समय पर मूल्यांकन करना ही चाहिए। प्रकृति में भी इस तरह की परीक्षाओं की व्यवस्थाएं हैं । ना सिर्फ साधक की भक्ति की जांच हेतु बल्कि संसार में साधक की भक्ति की निर्विवाद और निर्विरोध स्थापना के लिए भी। भक्ति की ऐसी परम अवस्था को ही कृष्ण गीता में अव्यभचारिणी भक्ति कहा है। भक्ति की यह पराकाष्ठा है। इसमें साधक को अपने लिए कुछ भी नहीं चाहिए। अपने इष्ट के लिए वह अपना सब कुछ बिना प्रश्न किए न्योछावर करने को सदैव तत्पर रहता है। गोपियों का प्रेम उदाहरण है, कृष्ण की भक्ति में वह अपना घर - परिवार, स्वामी, बंधु-बांधव यहाँ तक की अपनी देह का भी विस्मरण कर देती हैं। सीता माता ने भी इसीलिए किसी भी, कैसी भी परीक्षा के लिए स्वयं को सहर्ष प्रस्तुत किया है चाहे वह लंका विजय के बाद की अग्नि परीक्षा हो या सामाज के धूर्त, अवांछित, कुत्सित आक्षेप के लिए भी पुनः वनवास स्वीकार करने की। सीता (भक्ति) माता ने चरितार्थ कर के दिखा दिया कि किसी भी परिपेक्ष में साधक की भक्ति का एकमात्र उद्देश्य अपने इष्ट की प्रसन्नता ही होनी चाहिए। ऐसी भक्ति प्रत्येक साधक का परम लक्ष्य होता है।

3. निष्कर्ष

मानव जीवन का परम लक्ष्य सार्वकालिक और सार्वभौमिक, जो किसी व्यक्ति, स्थान, या परिस्थिति तक ना तो सीमित हो, ना उन पर आधारित हो, ऐसे शाश्वत सुख की प्राप्तिहै। ऐसा सुख सिर्फ हृदय में विराजित अद्वितीय सियाराम के साथ जीव भाव के एकाकार होने पर ही संभव है। भारतीय वांग्मय में इसके अनेक मार्ग हैं जिसमें भक्ति एक उत्कृष्ट मार्ग है। भक्ति यानी इष्ट के प्रति पूर्ण समर्पण कैसा हो, इसको माता सीता ने चरितार्थ करके साधकों का मार्गदर्शन किया है सीता जी के जीवन में ऐसी भक्ति के सूत्र कहाँ-कहाँ मिलते हैं, भक्ति का पथ क्या है और कैसे उस पर चल कर अपनी स्वरूपावस्था में स्थित हुआ जा सकता है इसी विषय पर इस शोध प्रत्र में कुछ चर्चा की गई है।

4. संदर्भ

1. तुलसीदास, संवत् 2081, राम चरित मानस, गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. देवी महात्म्य (अर्गला स्तोत्र") मार्कण्डेय पुराण 2017, अध्याय 81 से 93, गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. वाल्मीकि रामायण, 2021, गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. भगवत गीता, संवत् 2054, गीता प्रेस, गोरखपुर।
5. गीतावली, 2014, गीता प्रेस, गोरखपुर।
6. कवितावली, 2014, गीता प्रेस, गोरखपुर।
7. मोरारी बापू, भावार्थ रामायण, मानस प्रकाशन, नयी दिल्ली -5.
8. प्रचलित लोक काव्य से।

रामराज्य : सतत और समावेशी शासन का आदर्श मॉडल

स्मिता कुमारी
पटना विश्वविद्यालय, पटना
(smita.san@patnawomenscollege.in)

भारतीय परंपरा में 'रामराज्य' केवल एक धार्मिक आदर्श नहीं, बल्कि सुशासन, न्याय, समानता और सामाजिक समरसता का प्रतीक रहा है। वाल्मीकि रामायण, तुलसीकृत रामचरितमानस तथा अन्य ग्रंथों में वर्णित रामराज्य का स्वरूप मानव-केंद्रित, प्रकृति-सम्मत और नैतिक मूल्यों पर आधारित शासन की अवधारणा प्रस्तुत करता है। आधुनिक युग में जब 'सतत विकास', 'समावेशी शासन' और 'मानवाधिकार' जैसे विषय वैश्विक विमर्श का केंद्र हैं, तब रामराज्य की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक बन जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य रामराज्य की ऐतिहासिक, सामाजिक, दार्शनिक और व्यावहारिक व्याख्या करते हुए इसे सतत एवं समावेशी शासन के आदर्श मॉडल के रूप में प्रस्तुत करना है।

1. प्रस्तावना

भारतीय चिंतन परंपरा में 'राज्य' केवल शासन व्यवस्था नहीं, बल्कि नैतिकता, धर्म और लोक-कल्याण का प्रतीक रहा है। 'राजा' को ईश्वर का प्रतिनिधि माना गया, जिसका प्रमुख कर्तव्य था- प्रजा के सुख, सुरक्षा, समानता और पर्यावरण का संरक्षण। इसी आदर्श को पूर्णरूपेण मूर्त करने वाला राज्य था- **रामराज्य**। 'रामराज्य' केवल एक धार्मिक आदर्श नहीं, बल्कि सुशासन, न्याय, समानता और सामाजिक समरसता का प्रतीक रहा है। वाल्मीकि रामायण, तुलसीकृत रामचरितमानस तथा अन्य ग्रंथों में वर्णित रामराज्य का स्वरूप मानव-केंद्रित, प्रकृति-सम्मत और नैतिक मूल्यों पर आधारित शासन की अवधारणा प्रस्तुत करता है। जिसकी विशिष्टता है- सबके साथ निष्पक्ष व्यवहार और सबकी आवश्यकताओं की पूर्ति। जिसमें राज्य की सभी नीतियाँ प्रजा के हित, न्याय और समान अवसरों पर आधारित हों।

रामराज्य और सतत विकास का दृष्टिकोण- भारतीय दर्शन में सतत विकास *(Sustainable Development)* की संकल्पना अति प्राचीन काल से ही विद्यमान है जिसका अर्थ है- वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता न करना। यह विकास की उस अवधारणा का प्रतिपादन करता है जो केवल भौतिक नहीं, बल्कि नैतिक और पारिस्थितिक है। यह संपूर्ण सृष्टि ईश्वर से आच्छादित है। ईश्वर ने हमें जो संसाधन प्रदान किया है वह सब के लिए है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हम इन संसाधनों का संयमित रूप से प्रयोग करें तभी सतत विकास संभव है। भारतीय संस्कृति त्याग पूर्वक भोग करने का संदेश देती है, राम उसी त्यागाधारित संस्कृति के प्रतिनिधि हैं जिसमें यह कहा गया है -

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

(ईशावास्योपनिषद् मंत्र-1)

भारतीय संस्कृति भी यही संदेश देती है कि स्वार्थ का परित्याग करते हुए संयमपूर्वक भोग करें, अधिकाधिक पाने की लालसा नहीं रखें। रामायण इसी संयम की नीति को व्यवहार में लाता है। त्याग वृत्ति वाला शासक ही रामराज्य ला सकता है। राम ने अपना सर्वस्व इसलिए त्याग दिया कि लोक प्रसन्न और सुखी रहे। । वाल्मीकि कहते हैं कि राम का राज्याभिषेक हुए एक महीने से अधिक हो गया तब से सभी लोग नीरोग दिखाई देते हैं। वृद्ध व्यक्तियों के पास भी मृत्यु नहीं भटकती। स्त्रियाँ बिना कष्ट सहे ही प्रसव करती हैं। सभी मनुष्य हृष्ट-पुष्ट दिखाई देते हैं। सभी पुरवासी हर्षित एवं प्रसन्नचित्त हैं। मेघ अमृत के समान जल गिराते हुए समय पर वर्षा करते हैं। शीतल और सुखद स्पर्श वाली वायु बहती है। **(वा. रा., उत्तरकाण्ड, 41.18-21)** रामराज्य में समाज और प्रकृति दोनों का संतुलन था। वर्षा समय पर होती थी, अन्न भण्डार पर्याप्त था, पशु-पक्षी निर्भय थे। रामराज्य शासन के उस आदर्श का प्रतिरूप है जहाँ प्राकृतिक, सामाजिक, आर्थिक- कोई भी पीड़ा समाज को नहीं सताती। तुलसीदास जी कहते हैं-

राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माही।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहूहि नाहि।।
(रामचरितमानस-उत्तरकाण्ड- दोहा 21)

यह सब सतत और समावेशी शासन (Sustainable and Inclusive Governance) की विशेषताएँ हैं। इससे स्पष्ट है कि रामराज्य में सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिक संतुलन सर्वोपरि था। 21वीं सदी में जब विश्व 'जलवायु परिवर्तन', 'आर्थिक असमानता' और 'सामाजिक विभाजन'

जैसी समस्याओं से जूझ रहा है, तब रामराज्य का आदर्श प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग द्वारा सतत विकास, समाज के अंतिम व्यक्ति तक विकास को पहुँचाने के लिए समावेशी नीति निर्माण, भ्रष्टाचार मुक्त, उत्तरदायी और पारदर्शी प्रशासन, सांस्कृतिक एकता और लोक कल्याण हेतु मार्गदर्शन करता है। महात्मा गाँधी ने रामराज्य का आदर्श प्रस्तुत करते हुए भारतीयों को स्वराज्य पाने के लिए प्रेरित किया था । गाँधी ने 1929 में **'यंग इंडिया'** में रामराज्य के बारे में लिखा था। वे इसे एक राजनीतिक रूप से संगठित समाज के रूप में देखते थे जो धार्मिकता को बनाए रखता है और सभी आयु वर्गों, सामाजिक वर्गों, जीवित प्राणियों और पृथ्वी के लिए सुख लाता है। उनका मानना था कि रामराज्य एक सच्चा लोकतंत्र है जहाँ सबसे गरीब व्यक्ति भी जटिल प्रक्रियाओं के बिना शीघ्र और निष्पक्ष न्याय की उम्मीद कर सकता है। रामराज्य मानवता का पवित्र और नागरिक दृष्टिकोण है, जो सत्व-रज के माध्यम से मानवीय व्यवहारों और निर्णयों को प्रभावित करता है।

आज जब 'सतत विकास', 'समावेशी शासन' और 'मानवाधिकार' जैसे विषय वैश्विक विमर्श का केंद्र हैं, तब रामराज्य की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक बन जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य रामराज्य की ऐतिहासिक, सामाजिक, दार्शनिक और व्यावहारिक व्याख्या करते हुए इसे सतत एवं समावेशी शासन के आदर्श मॉडल के रूप में प्रस्तुत करना है।

2. रामराज्य की अवधारणा का ऐतिहासिक एवं दार्शनिक आधार

प्राचीन भारत में राजधर्म के रूप में शासन की कला और राज्यशास्त्र की परंपरा स्थापित की गई थी जिसका उद्देश्य व्यक्ति, समाज, उसके आचार-व्यवहार, प्रायश्चित एवं परंपरा आदि का संरक्षण करना था। राजधर्म का स्वतंत्र विवेचन सर्वप्रथम धर्मशास्त्रों में किया गया। धर्मसूत्रोत्तर काल में मनु ने राजधर्म का प्रणयन किया जिसमें राजत्व की शर्तें हैं- दंड, सुरक्षा, विजय, आर्थिक समृद्धि, सांस्कृतिक एवं धार्मिक विकास, मानवीय मूल्यों का विस्तार, वैदिक व्यवस्था की स्थापना, संधि और विग्रह आदि। यह नैतिक एवं मानवीय मूल्यों के आधार पर राजा का प्रजा एवं राज्य के प्रति व्यवहार तथा उत्तरदायित्व का विवेचन करता है। मनु ने शासन-व्यवस्था का वर्णन करते हुए राजा के सभी निर्णयों में जनहित, राजकोष और आर्थिक समृद्धि को ध्यान में रखे जाने की बात कही है। **(मनुस्मृति,अध्याय 7)** राजा के कर्तव्यों का जो विवरण प्रस्तुत किया गया उसका सार राजधर्म है। **(आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2.8.25)** पी०वी० काणे राजधर्म को सभी धर्मों का सार मानते हैं। **(काणे, 1965, भूमिका)** राजधर्म से विश्व एवं उसके समस्त प्राणियों का कल्याण संभव है। रामराज्य में एक आदर्श शासन-व्यवस्था के सभी तत्व सन्निहित थे। अतः रामराज्य के मूल सिद्धांतों एवं विशेषताओं का अध्ययन अपेक्षित है-

धर्म और शासन का समन्वय- भारतीय शासन-दर्शन में **धर्म** ही शासन का आधार है। 'राजधर्म' केवल प्रशासनिक नीति नहीं, बल्कि नैतिक अनुशासन है। महर्षि वाल्मीकि के शब्दों में राम धर्म के साकार रूप हैं- **रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्यपराक्रमः। (वा. रा. अरण्यकाण्ड - 37.13)** धर्म सत्य की क्रियामूलक अभिव्यक्ति है और सत्य धर्म का सारभूत तत्व है। राम का चरित्र सत्य और धर्म का युगल अधिष्ठान है-

धर्मिष्ठः सत्य संधश्च पितुर्निर्देशकारकः।
त्वयि धर्मश्च सत्यं च त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम्॥

(वा. रा. अरण्यकाण्ड - 9.7)

सत्य धर्म का निष्ठापूर्वक आचरण राम के चरित्र में अंतर्निहित एक महान जीवन मूल्य है। विपत्तियों से घिरे होने पर भी जिससे तिल भर भी नहीं डिगते। वह सुग्रीव को स्पष्ट शब्दों में कहते हैं- **अनृतं नोक्तपूर्वं मे न च वक्ष्ये कदाचन। (वा. रा. किष्किन्धाकाण्ड - 7.22)** राम को युवराज के रूप में देखने की इच्छुक प्रजा भी राम की सत्यनिष्ठा की प्रशंसा करती है- **रामः सत्पुरुषो लोके सत्यः सत्यपारायणः। (वा. रा. अयोध्याकाण्ड - 2.29)**

न्याय और समानता का आदर्श- श्रीराम ने धर्म को शासन का केंद्र बनाकर यह सिद्ध किया कि **न्यायपूर्ण शासन वही है जो धर्मसंगत हो।** रामराज्य में किसी के साथ अन्याय नहीं होता, न कोई दुःखी होता, न ही कोई भयभीत। तुलसीदास ने लिखा है—

दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज नहिं काहुहि ब्यापा।
सब नर करहिं परस्पर प्रीति। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीति॥

(रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

रामराज्य में न्याय व्यवस्था पूर्णतः निष्पक्ष थी। श्रीराम ने स्वयं भी लोकमत का सम्मान करते हुए व्यक्तिगत हित से ऊपर न्याय को रखा। सबके प्रेरणापुंज राम सर्वत्र न्याय की रक्षा में तत्पर दिखते हैं। लाभ एवं लालच के कीचड़ में आकण्ठ निमग्न हर क्षण अधीर होते हुए जनमानस के लिए उन्होंने धैर्य और त्याग का मंत्र दिया। उनकी त्याग वृत्ति ही रामराज्य की सबसे मजबूत आधारशिला है। अपने राज्य एवं परिवार की सुख शांति के लिए वह अपने वैयक्तिक सुख का परित्याग कर देते हैं। लोक कल्याण के लिए अपनी प्रियतमा पत्नी तक का त्याग कर देते हैं। 'सीता-त्याग' प्रसंग इस बात का प्रमाण है कि शासक को लोक आस्था और नैतिकता के प्रति जवाबदेह होना चाहिए। राष्ट्रहित के समक्ष निज हित का त्याग करते हुए एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। लोक निरंजन के लिए सर्वस्व न्योछावर करने वाले राजाराम की यह प्रतिज्ञा है-

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।।
(उत्तररामचरित- 1.12)

आधुनिक समाज में जहां जनता, नेता, सत्ताधारी, पदाधिकारी, शासक-शासित, पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-भाई, गुरु-शिष्य, परिवार एवं समाज के प्रत्येक स्थल पर विचार-वैभिन्य एवं मत-मतांतर हैं। ऐसे समय में रामराज्य के समदर्शिता मूलक दृश्यों एवं चरित्रों का समीक्षात्मक विश्लेषण अत्यंत अपेक्षित है। ये सामाजिक समावेशन के अद्भुत उदाहरण हैं, जिनमें शासन 'सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय' के सिद्धांत पर आधारित था। रामायण में महर्षि वाल्मीकि ने धर्म-दर्शन एवं नीति-रीति के साथ-साथ सामाजिक आचार-विचार का सर्वांगीण आदर्श प्रस्तुत किया है । राम मानवता के महान् मानदंड है। उनकी दृष्टि में संपूर्ण मानव समाज एक समान है। वे सबको समान भाव से देखते हैं एवं मिलते हैं।

3. रामराज्य और सतत विकास का दृष्टिकोण

आधुनिक संयुक्त राष्ट्र की सतत विकास अवधारणा (Sustainable Development Goals - SDGs) में तीन प्रमुख स्तंभ हैं— आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय संतुलन। रामराज्य इन तीनों का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है।
(क) आर्थिक समृद्धि और न्यायपूर्ण वितरण- रामराज्य में कोई गरीब या भूखा नहीं था। कृषि, व्यापार और श्रम- सभी के लिए समान अवसर थे। स्पष्ट है कि शासन का उद्देश्य समृद्धि का न्यायपूर्ण वितरण था, न कि केवल राजसत्ता का केंद्रीकरण। अयोध्या नगरी धन-धान्य से संपन्न थी। बालकांड में मागधी नदी के दोनों तटों पर फसलों से हरे भरे सुंदर उपजाऊ खेतों की शोभा का वर्णन है। **(वा. रा. बाल कांड - 32.10)** कृषि कार्य करने वालों के लिए कृषिजीविनः विशेषण के प्रयोग से यह पता चलता है उस समय लोग साधारणतया अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर थे। **(वा. रा. अयोध्या काण्ड - 67.18)** एक बड़े जनसमुदाय की आजीविका का साधन पशुपालन भी था। यही कारण था कि राजा दशरथ अपने चारों पुत्रों के विवाह के समय प्रत्येक पुत्र के मंगल के लिए धर्मानुसार एक-एक लाख गाौएँ ब्राह्मणों को दान करते हैं। **(वा. रा. बाल काण्ड - 71.22)** दन्तकार, बढ़ई आदि पेशे का भी वर्णन है। स्पष्टतः रामायण कालीन समाज एक श्रमजीवी समाज था जिसमें चारों वर्णों के लोग अपने कर्तव्यों का पालन पूरी तन्मयता से करते थे और प्रजा का उत्थान ही राज्य का लक्ष्य था।
(ख) पर्यावरण-संरक्षण और प्रकृति-सम्मान- रामराज्य की परिकल्पना प्रकृति के साथ सामंजस्य में थी। श्रीराम स्वयं वनवास काल में प्रकृति के साथ सह अस्तित्व का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वे वनस्पतियों, नदियों, पर्वतों का सम्मान करते हैं, जिससे 'ईको-सिविलाइजेशन' का आदर्श सामने आता है। भारतीय परंपरा में सतत विकास का आधार धर्म, समरसता और संयम है। रामायण का यह दृष्टिकोण आज की पर्यावरणीय चुनौतियों के समाधान में दिशा प्रदान कर सकता है। भारतीय संस्कृति में *प्रकृति* को माता कहा गया है - "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" (अथर्ववेद १२.१.१२)। जिसका अभिप्राय है कि मनुष्य और प्रकृति में कोई भेद नहीं, बल्कि दोनों एक ही चेतना के दो रूप हैं। वाल्मीकि रामायण इस चेतना का काव्यमय प्रकटीकरण है। यहाँ प्रकृति केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि सहचर के रूप में चित्रित है। तुलसीदास भी कहते हैं–

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक संग गज पंचानन।।
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई।
बिधु महिपूर मयूरखन्हि रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल रामचन्द्र के राज।।
(रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

यह रामराज्य तुलसी का सुखद स्वप्नलोक है जिसकी कामना वे सामाजिक व्यवस्था के रूप में करते थे। वनों में वृक्ष सदा फूलते और फलते हैं। हाथी और शेर वैर भूलकर एक साथ रहते हैं। पशु-पक्षी सब ने आपस में वैर-भाव को भुलाकर प्रेम बढ़ा लिया है, वे नाना प्रकार के मनोहर शब्द करते हैं। शीतल मन्द सुगन्धित वायु बह रही है। भ्रमर मकरन्द वहन करते हुए विहार कर रहे हैं। लता और वृक्ष माँगते ही मधु की वर्षा कर रहे हैं। गायें इच्छानुसार दूध देती हैं। धरती अन्न से सम्पन्न है, त्रेता मानो सतयुग हो गया हो। विविध पर्वतों से नाना प्रकार की मणियाँ प्राप्त होती हैं। सभी नदियों में सुन्दर जल प्रवाहित होता है, उनका जल निर्मल एवं सुस्वादु है। सागर अपनी मर्यादा में है, और तटों पर स्वयं रत्न डाल जाता है। तालाब कमलों से परिपूर्ण हैं, दसो दिशाओं के प्रदेश प्रसन्न हैं। रामचन्द्र के राज में चन्द्रमा अपनी किरणों से पृथ्वी को भर देता है। सूर्य अनुकूलता से ही तपता है और बादल आवश्यकतानुसार बरसते हैं। इस प्रकार रामराज्य में न सिर्फ मनुष्य बल्कि प्रकृति भी अनुशासित, मर्यादित आचरण करती है।

राम के वनगमन से लेकर रामराज्य तक, हर चरण में प्रकृति के साथ मनुष्य का सामंजस्य दिखाई देता है। यही सामंजस्य सतत विकास का मूल है। सतत विकास का यह आयाम आधुनिक पर्यावरण नीतियों से भी अधिक गहरा और संवेदनशील है। रामराज्य में प्रकृति भी सुखद और अनुकूल थी।

(ग) सामाजिक पूंजी और मानवीय विकास- रामराज्य में शिक्षा, धर्म, कला, संस्कृति और पारिवारिक मूल्यों का संरक्षण था। मनुष्य का विकास केवल आर्थिक नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति पर आधारित था। राम राज-संचालन में नीति को प्रमुखता देते हैं। वन जाते समय वह सुमन्त्र से कहते हैं कि ननिहाल से आते ही भरत को मेरा यह सन्देश देना कि राजा बनने के बाद वे किसी भी रूप में नीति का त्याग न करें। प्रजा का मन, कर्म, वचन से पालन करें और सभी माताओं को समान मानकर उनकी सेवा करे। किसी भी परिस्थिति में राजा को नीति के अनुसार ही आचरण करना चाहिए। उसमें किसी प्रकार का राज-मद नहीं होना चाहिए। यह मानव-केंद्रित विकास का आदर्श रूप है। रामायण में एक ऐसे स्वस्थ समाज की संकल्पना है जहाँ परस्पर प्रेम, सौहार्द और निश्छलता का साम्राज्य है। रामायणकालीन संस्कृति भारतीय शिष्टाचार का आदर्श रही है। अतिथि सत्कार सर्वोपरि धर्म रहा है। **(व्यास, पृ-26)** अन्याय पर न्याय की अंततः विजय का निरूपण करना रामायण का प्रमुख आशावादी पक्ष है। यह धर्माधारित नैतिक मूल्यों का विशाल भंडार है और जीवन की ज्वलंत समस्याओं को दूर करने का सुलभ मार्ग है। यह मानवीय जीवन- मूल्यों का विश्वकोष है। इसके महान चरित्र अत्यंत प्राणवान और वास्तविक हैं। अनीति का दमन, नीति का उन्नयन, पशुता का विरोध और मानवता का प्रवर्धन- यही रामराज्य का आदर्श।

4. रामराज्य और समावेशी शासन का तात्विक विश्लेषण

समावेशी शासन का तात्पर्य है- शासन में प्रत्येक व्यक्ति की भागीदारी और समान अवसर। रामराज्य में यह समावेशन चार स्तरों पर देखा जा सकता है-

(क) राजनीतिक समावेशन - राम का शासन 'परामर्श-प्रधान' था। वे मंत्रिमंडल, ऋषियों, प्रजा-प्रतिनिधियों और भ्राताओं से परामर्श करके निर्णय लेते थे। यह परामर्श मूलक शासन आधुनिक लोकतंत्र की भावना से मेल खाता है। श्री राम भरत से कहते हैं कि नीति-शास्त्र निपुण एवं गोपनीयता का पालन करने वाले अमात्यों की मंत्रणा ही राजाओं की विजय का मूल मंत्र है-

एकोऽप्यमात्यो मेधावी शूरो दक्षो विचक्षणः।
राजनं राजपुत्रं वा प्रापयेन्महतीं श्रियम्॥
(वा. रा. अयोध्याकाण्ड - 100.24)

एक राजा को कैसा होना चाहिए, प्रजा एवं राष्ट्र के प्रति उनका क्या कर्तव्य होना चाहिए, राम इसके उत्कृष्ट आदर्श हैं। वन में भरत के मिलने आने पर उन्हें परोक्ष रूप से राजनीति का उपदेश देते हुए वह कहते हैं-

मंत्रो विजयमूलं हि राज्ञां भवति राघव।
सुसंवृत्तो मन्त्रिधुरैरमात्यैःशास्त्रकोविदैः।
(वा. रा. अयोध्याकाण्ड - 100.16)

राजागण अपने मंत्रियों सभासदों और प्रजाजनों के प्रति सम्मान प्रकट किया करते थे। महाराज दशरथ अपने सभासदों के नमस्कार का उत्तर हाथ जोड़कर दिया करते थे। राजकीय अनुसार भी आदरणीय माने जाते थे। शरणागत की रक्षा करना राजा का परम धर्म है। राम की शरण में श्रद्धा के साथ आने वाले प्रत्येक प्राणी की राम ने रक्षा की है। सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदि इसके उदात्त उदाहरण है। **(वा. रा. किष्किंधाकाण्ड - 6.24-26)**

(2) <u>सामाजिक समावेशन</u>- राम के आदर्शों के मार्ग पर चलते हुए ही राम को पाया जा सकता है, एक सुसंस्कृत राममय समाज गढ़ा जा सकता है। पीड़ाओं, व्यथाओं के झंझावात में भी सदाचार का मार्ग न छोड़ने वाले राम अपने ऐसे ही दुर्लभ गुणों के कारण आज प्रासंगिक हैं। जंगल-जंगल भटकने के बजाय अयोध्या के राजकुमार राम यदि पिता के इस कठोर निर्णय के विरुद्ध विद्रोह कर देते, वनवास से इनकार कर देते तो राज सुख भोग रहे होते। ऐसे विद्रोह से राम राजा तो बन जाते लेकिन जनप्रिय नहीं बन पाते, मर्यादा पुरुषोत्तम नहीं बन पाते। वन-वन भटकने वाले राम का राजत्व तो इसमें है कि शोषितों, वंचितों, पीड़ितों के निकट जाकर उन्होंने उनकी सुध ली। राम ने समाज के सभी वर्गों को एकता के सूत्र में पिरोने की चेष्टा की। केवट को अपने हृदय से लगाकर, वनवासिनी शबरी को मातृतुल्य सम्मान देकर, वंचित शोषित सुग्रीव को न्याय दिलाकर, वनवासी, तपस्वियों, ऋषियों की आततायी राक्षसों से रक्षा का उत्तरदायित्व निभाकर उन्होंने एक सच्चे राजा होने का कर्तव्य निभाया। उन्होंने समतामूलक समाज की स्थापना की । उन्होंने अपने कृत्यों से यह आदर्श प्रस्तुत किया की समतामूलक दृष्टि रखने वाले ऐसे राजाओं, शासको की पहुँच समाज के अंतिम व्यक्ति तक होनी चाहिए। ऐसे महान् जीवनमूल्यों की स्थापना राजमहल में सिंहासन पर बैठे-बैठे नहीं होती। उसके लिए कंटकाकीर्ण मार्गों पर चलकर सत्य का साक्षात्कार करना होता है ।समाज की व्यथा को अपनी आंखों से देखकर महसूस करना पड़ता है। **(शाश्वती, पृ.-238)** राम प्रजावत्सलता का आदर्श प्रस्तुत करते हैं। रामचरितमानस में राम का यह स्पष्ट कथन है कि जिस राजा के राज्य में प्रजा दुःखी रहती है वह राजा अवश्य ही नरक का अधिकारी होता है- **जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृपु अवसि नरक अधिकारी।** (**रामचरितमानस-अयोध्याकाण्ड**) विश्वनाथ त्रिपाठी लिखते हैं "सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी में कोई व्यक्ति कहीं भी समाजवादी व्यवस्था की कल्पना नहीं कर सकता था। तुलसी सामन्ती व्यवस्था की त्रुटियाँ ही देख सकते थे, प्रजा के सुखी और राजा के प्रतिपालक रूप की ही कल्पना कर सकते थे। **(लोकवादी तुलसीदास, पृ.98)।"** राम का लक्ष्य राजा बनकर राजर्षि ठाठ भोगना नहीं था अपितु समाज में व्याप्त पीड़ा और दुःख का नाश करना था-

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं न पुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां केवलमार्तिनाशनम्॥
(महाभारत, द्रोण पर्व)

श्रीराम ने वनवासी, निषाद, शबरी जैसे समाज के वंचित वर्गों को भी सम्मान और समानता का स्थान दिया। यह सामाजिक समावेशन और 'अंत्योदय' की भावना का उत्कृष्ट उदाहरण है।

(3) आर्थिक समावेशन- रामराज्य में प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार अवसर मिले। न कोई भूखा था, न बेरोजगार। यह 'inclusive growth' का आदर्श मॉडल है। रामराज्य में समाज का प्रत्येक वर्ग- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र- अपने कर्तव्यों में संतुष्ट और परस्पर सम्मान में स्थित था। किसी के साथ भेदभाव नहीं था। तुलसीदास ने इस स्थिति का अति सुंदर वर्णन किया है-

"अल्पमृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुन्दर सब बिरुज सरीरा॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना॥"
(रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

रामराज्य में प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार अवसर मिलता था। न कोई भूखा था, न बेरोजगार। यह 'inclusive growth' का आदर्श मॉडल है। श्रीराम के विचारानुसार प्रत्येक व्यक्ति को उसकी क्षमता (capability) के अनुसार कार्य सौंपना चाहिए, जिससे वह अपनी वह अपनी क्षमता औ रप्रतिभा का सर्वोत्तम उपयोग कर सके -

"कच्चिन्मुख्या महत्स्वेव मध्यमेषु च मध्यमा:।
जघन्याश्च जघन्येषु भृत्या: कर्मसु योजिता:॥"
(वा.रा.अयोध्याकाण्ड-100.25)

श्रीराम के शासनकाल में **बुद्धिजीवियों** को उच्च पद प्रदान किए गए, जहाँ निर्णय क्षमता और योजना-निर्माण जैसे कार्यों की आवश्यकता थी। **मध्यम वर्ग** के लोगों को नियमित कार्यों की जिम्मेदारी दी गई, जबकि **निम्न वर्ग (जघन्य)** के लोगों को ऐसे कार्य सौंपे गए जिनमें अधिक शारीरिक श्रम और कम बुद्धिमत्ता की आवश्यकता थी। श्रीराम सेवकों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जो सेवक अपने स्वामी द्वारा दिए गए कार्य से भी अधिक कार्य कर दिखाता है, वह श्रेष्ठ सेवक पुरुषोत्तम कहलाता है। सक्षम होते हुए भी जो केवल अपेक्षित कार्य ही करता है, वह मध्यम नर कहलाता है। जो स्वामी के आदेशों की अवहेलना करता है और कार्य नहीं करता, वह निकृष्ट नर कहलाता है। **(वा.रा.युद्धकाण्ड-1.7-9)**
(4) नैतिक समावेशन– श्री राम की नीतिमत्ता साधुता और सद्गुण संपन्नता सर्वोपरि है। रामराज्य में नैतिकता शासन की आत्मा थी। राजा से लेकर सामान्य प्रजा तक, सभी धर्मानुसार आचरण करते थे। यही 'moral inclusivity' की नींव थी। श्री रामचंद्र जी के राज्य पर प्रतिष्ठित हो जाने पर तीनों लोक हर्षित हो गए। उनके सारे शोक जाते रहे। कोई किसी से वैर नहीं करता। श्री राम के प्रताप से सब की विषमता (आंतरिक भेदभाव) मिट गई। तुलसीदास जी कहते हैं-

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग॥
(रामचरितमानस- उत्तरकाण्ड)

तुलसीदास के वर्णाश्रम पर विचार करते हुए उदयभानु सिंह ने लिखा है "उनकी दृष्टि में मानव-धर्म, वर्ण-धर्म, आश्रम-धर्म, राज-धर्म और स्त्री-धर्म धर्म के प्रमुख रूप हैं; इनके समुचित परिपालन पर ही समाज का कल्याण निर्भर है। अपनी धर्म-भावना की इसी पृष्ठभूमि में उन्होंने अपने युग की धार्मिक-सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण किया है (*तुलसी काव्यमीमांसा*, पृष्ठ-193) पुनीत राज-व्यवस्था के लिए तुलसी धार्मिक निष्ठा, भावात्मक एकता, आत्मबल, चारित्रिक दृढ़ता को नितान्त आवश्यक मानते हैं–

सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी॥
एकनारि व्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी॥
(रामचरितमानस- उत्तरकाण्ड)

अयोध्या के सभी नर-नारी उदार हैं, सभी परोपकारी हैं। ब्राह्मणों के चरणों के सेवक भी हैं। सारे पुरुष एक पत्नीव्रत का पालन करते हैं और स्त्रियाँ मन, वचन और कर्म से पति का हित करने वाली हैं।"

कवि समाज की दिव्य दृष्टि एवं सशक्त स्रष्टा होता है। निश्चय ही गोस्वामी तुलसीदास जी का लक्ष्य रामत्व को, राम के द्वारा स्थापित आदर्शों को,जन-जन के मन में पिरो देना है जिससे एक सुसंस्कृत समाज का निर्माण हो सके,जीवन मूल्यों की रक्षा हो सके । राम के दिव्य चरित के प्रभाव से किसी भी व्यक्ति के हृदय में कवित्व जाग सकता है- राम तुम्हारा चरित्र स्वयं ही काव्य है। कोई कवि बन जाये सहज संभाव्य है॥ **(साकेत - सर्ग 5)**
तुलसीदास के अनुसार, रामराज्य शारीरिक, आध्यात्मिक और दैहिक कष्टों का निवारण करता है, जिससे शांतिपूर्ण जीवन नियमों और नैतिकता का

पालन होता है। यह सत्य, पवित्रता, करुणा और दान को भी बढ़ावा देता है। तुलसीदास ने रामचरितमानस में अपने अनुभूत जीवन का बहुत गहरा और व्यापक चित्रण किया है। उन्होंने राम के परम्परा-प्राप्त रूप को अपने युग के अनुरूप बनाया है। उन्होंने राम की संघर्ष-कथा को अपने समकालीन समाज और अपने जीवन की संघर्ष-कथा के आलोक में देखा है। उन्होंने वाल्मीकि और भवभूति के राम को पुनः स्थापित नहीं किया है अपने युग के राम का चित्रण किया है।

5. रामराज्य में शैक्षिक एवं सांस्कृतिक संवर्धन

न्याय और शासन को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए शैक्षणिक एवं बौद्धिक रूप से समृद्ध एवं संपन्न होना आवश्यक माना गया है। वाल्मीकि रामायण में उत्कृष्ट शैक्षिक स्थिति का वर्णन उपलब्ध होता है ।सभी द्विजों को शिक्षा का अधिकार था। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मनुष्य को सत्यवादी, सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत बनाना था। गुरु शिक्षा हेतु ऐसे शिष्य का चयन करते थे जो संस्कारी, सदाचारी, सुयोग्य एवं उत्साही होता था। रामायण कालीन समाज में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना,जीवन के आदर्श मूल्य का अनुकरण करना और कर्तव्यपरायण होना होता था। विद्यार्थी गुरु आश्रम में ही निवास कर सुयोग्य अनुभवी एवं प्रशिक्षित आचार्यों की देखरेख में मानसिक आध्यात्मिक और नैतिक गुणों को विकसित करते थे। शिष्य के लिए गुरु का चरित्र आदर्श एवं अनुकरणीय होता था।**(वा. रा. अयोध्याकाण्ड- 111.31)** स्वयं राम एवं उनके भाइयों ने परंपरागत प्रणाली का अनुरण करते हुए विद्याध्ययन किया था। छात्र जीवन में आत्मानुशासन एवं इंद्रियों के संयम पर विशेष बल दिया जाता था। विद्या को तप की तरह अर्जित करना होता था। तपस्वी की भांति विद्यार्थी से त्याग और सहिष्णुता की अपेक्षा की जाती थी। स्नातक तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना पड़ता था। अध्ययन की समाप्ति के उपरांत की गृहस्थ आश्रम में प्रवेश मिल सकता था। स्पष्ट है कि राम राज्य में शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान, संस्कार और परंपरा की रक्षा करना था।

6. रामराज्य में नारी की स्थिति

वेदों में नारी को 'अर्धांगिनी' की संज्ञा दी गई है। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'—यह दृष्टिकोण भारतीय समाज में नारी के सम्मान की प्रतिष्ठा करता है। रामायण इसी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में रचित है जिसमें नारी को केवल गृहिणी या माता के रूप में नहीं, बल्कि नैतिक निर्णयों की धुरी के रूप में भी देखा गया है। सीता का आत्मबल, कैकेयी की निर्णयशक्ति, तारा की नीति, मंदोदरी की चेतना और शबरी की श्रद्धा—इन सबके माध्यम से यह ग्रंथ नारी की अंतःशक्ति का उद्घोष करता है। नारी का स्वरूप बहुआयामी है- कभी वह करुणा और त्याग की प्रतीक है, तो कभी नीति, शक्ति और आत्मसम्मान की ध्वजवाहिका। वह परिवार की मर्यादा की रक्षक और समाज की नीति-नायिका दोनों है। नारियों को समाज में सम्मान प्राप्त था। लोगों में नारी के प्रति द्वेष, द्रोह एवं घृणा की भावना का वर्णन नहीं है। नारी को भी घरों में ही समुचित रूप से शिक्षा दी जाती थी। श्रौत एवं स्मार्त क्रिया और मंत्रों के विषय में उन्हें समुचित ज्ञान का उल्लेख प्राप्त होता है।

सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यं व्रत परायणा।
अग्निं जुहोति स्म सदा मंत्रवत् कृतमंगला॥
(वा. रा. अयोध्याकाण्ड- 20.15)

नारियों को समाज में सम्मान प्राप्त था। लोगों में नारी के प्रति द्वेष, द्रोह एवं घृणा की भावना का वर्णन नहीं है। लेकिन कन्या, बहन और अनुज-वधूको कामदृष्टि से देखने पर मृत्यु दंड का विधान था इसीलिए श्री राम ने अपने छोटे भाई सुग्रीव की पत्नी का अपहरण करने वाले लोकाचार से भ्रष्ट कपीश्वर बाली का वध कर डाला। **(वा. रा. किष्किंधाकाण्ड- 18.22)** रामराज्य की स्त्रियाँ पुरुष सत्ता के अधीन नहीं, बल्कि अपने नैतिक विवेक की स्वामिनी हैं। वे केवल गृहस्थ जीवन की सीमाओं में बंधी नहीं है, बल्कि वह समाज में सत्य, न्याय और धर्म के आदर्शों को दिशा देने वाली भी है। सीता का चरित्र भारतीय नारीत्व की पराकाष्ठा है। वह केवल राम की पत्नी नहीं, बल्कि धर्म की मूर्त स्वरूप हैं। उनकी भावनाएँ, निर्णय और त्याग इस महाकाव्य को मानवीय बनाते हैं।

7. निष्कर्ष

रामराज्य केवल एक पौराणिक या धार्मिक आदर्श नहीं, बल्कि एक **सार्वकालिक शासन-दर्शन** है, जो धर्म, नीति, न्याय, और मानवता के समन्वय से विकसित हुआ। यह एक आदर्श समतापूर्ण समाज एवं न्यायपूर्ण शासन का प्रतिनिधित्व करता है। वाल्मीकि विरचित रामायण में प्रचलित और मध्यकालीन रामचरित मानस में तुलसीदास द्वारा आगे प्रचारित, रामराज्य की अवधारणा में एक मानवीय दृष्टिकोण अंतर्निहित है जो सदाचार, शांति और सद्भाव पर ज़ोर देता है। यह मॉडल आधुनिक शासन की अनेक जटिलताओं का समाधान प्रस्तुत करता है —**नैतिक शासन की पुनर्स्थापना, सतत विकास के साथ सामाजिक समानता, पर्यावरणीय संतुलन और सांस्कृतिक संरक्षण**। इसलिए इसकी प्रासंगिकता अक्षुण्ण है।

यदि वर्तमान प्रशासनिक ढांचा रामराज्य के मूल सिद्धांतों धर्म, न्याय, लोककल्याण, और समरसता- को व्यवहार में उतारे, तो एक **सतत, समावेशी और मानव-केंद्रित शासन व्यवस्था** संभव है। रामराज्य की भावना से प्रेरित होकर आज भी कई नीतियाँ भारत में सरकार द्वारा चलाई जा रही हैं—सर्वाधिक वंचितों के उत्थान हेतु **अंत्योदय योजना**, सामूहिक उत्तरदायित्व के लिए **स्वच्छ भारत अभियान**, **सतत विकास लक्ष्य**

(SDGs) के साथ **लोककल्याणकारी नीतियाँ, पर्यावरण न्याय और ग्राम स्वराज्य** (गांधीजी का भी 'रामराज्य' आदर्श इसी पर आधारित था) इत्यादि।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि यदि हम अपने समृद्ध **भारतीय परंपरा और मूल्यों** को व्यवहार में उतारना चाहते हैं, तो हमें अपने सामाजिक और नैतिक मूल्यों को हर रूप में और हर स्तर पर बनाए रखना होगा। यही रामायण और उसके राम राज्य का सच्चा संदेश और आधुनिक नेतृत्व के लिए अमूल्य प्रेरणा है।

8. संदर्भ- ग्रन्थ

1. *आपस्तम्ब धर्मसूत्र*.(1895) विद्यामुद्राराक्षरशाला, कुम्भकोणम्.
2. *ईशावास्योपनिषद्* (सं 2060). गीता प्रेस, गोरखपुर.
3. Kapoor, K. (2010). *Bhartiya shasan-darshan.* New Delhi: Delhi University Publications.
4. काणे, पी०वी०. (1965).*धर्मशास्त्र का इतिहास.* हिंदी समिति, सूचना-विभाग, लखनऊ.
5. गुप्त, मैथिलीशरण (2013) *साकेत*, श्री साहित्य सदन, चिरगाँव झाँसी.
6. तुलसीदास गोस्वामी (सं 2080). *श्रीरामचरितमानस*, गीताप्रेस गोरखपुर.
7. त्रिपाठी विश्वनाथ (2024). *लोकवादी तुलसीदास*.(सं0-11) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,
8. द्विवेदी, कपिल देव.(1968). *उत्तररामचरितम्* रामनारायण लाल बेनी माधव, इलाहाबाद.
9. भट्ट, कुल्लूक. (1982) *मनुस्मृति.* चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी.
10. *मनुस्मृति.*(2009 वि०). चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी.
11. *महाभारत.* (2015 वि०). गीता प्रेस, गोरखपुर.
12. मिश्र, शैलेश कुमार. (2022).*शाश्वती.*चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी.
13. यंग इंडिया (19.9.1929), पृष्ठ- 305.
14. राजशेखर, (1984) बाल रामायणम्, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी.
15. व्यास, शांति कुमार नानूराम. (1958). *रामायण कालीन संस्कृति,* सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली.
16. शर्मा उमाशंकर, (2008). *संस्कृत साहित्य का इतिहास*, चौखंभा भारती अकादमी, वाराणसी.
17. Sharma, R. N. (2008). *Dharma and governance in ancient India.* Varanasi: Chaukhamba Sanskrit Series.
18. *श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण* (सं 2064) (हिंदी अनुवाद सहित प्रथम खण्ड) गीताप्रेस गोरखपुर.
19. *श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण* (सं 2064) (हिंदी अनुवाद सहित द्वितीय खण्ड) गीताप्रेस गोरखपुर.
20. शास्त्री, श्रीधरानंद.(1986) *प्रतिमानाटकम्*. मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली.
21. सिंह, उदयभानु (1966). *तुलसीकाव्य मीमांसा*. राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
22. United Nations Development Programme. (2023). *The sustainable development goals report* 2023. New York: United Nations.

मन्दोदरी- एक चरित्र

वीणा पाणि
(paniveena53@gmail.com)

मंदोदरी तत्कालीन व आधुनिक जीवन के संदर्भ में एक जीवंत चरित्र है | वे विदुषी है, साहसी है, नीति निपुण, व्यवहार कुशल, धैर्यशील नारी हैं | हमारे शास्त्रों में उन्हे पवित्र पंच कन्यायों में स्थान दिया गया है | रावण को सत्यमार्ग पर लाने के लिए मंदोदरी अनवरत प्रयत्नशील रहती हैं | प्रस्तुत प्रपत्र में इन्ही कुछ विंदुओं के आधार पर माता मंदोदरी के चरित्र को समझने का लाघव प्रयास किया गया है | यह शोधपत्र आठवीं अंतर्राष्ट्रीय रामायण अधिवेशन में प्रस्तुत करने के लिए तैयार किया गया है, जो 11-12-2025 से 13-12-2025 तक आई.आई.टी. रुड़की, उत्तराखंड, भारत में आयोजित किया जा रहा है |

माता मंदोंदरी एक ऐसी देदीप्यमान प्रकाश किरण हैं जो अपने उज्ज्वल चरित्र से नारी की गरिमा का दिग्दर्शन कराती हैं | वे सशक्त, स्वतंत्र, आत्मनिर्भर विचारों वाली मृदुभाषी, व्यवहार, कुशल, नीतिनिपुण स्त्री हैं | उन्होंने ने विल्कुलविपरीत परिस्थितियों में, असहमति के चरम विंदु पर समत्व को साधते हुए स्वयं को, जीवन को तराशा है | न रावण से आहत हुयीं न उन्हे आहत करने का प्रयास किया | व्यावहारिक जीवन के आधार पर हम समझ सकते हैं- ऐसी उच्चकोटि की मनःस्थिति प्राप्त करने के लिए उन्हें कितनी ऊर्जा लगानी पड़ी होगी माँ मंदोदरी की पारदर्शी दृष्टि स्थिति को यथास्थिति रूप में प्रस्तुत करने में सदैव अचूक रही है | निःसंदेह उनके ऐसे पुरुषार्थ के नाते हमारे शास्त्रों ने उन्हे पाँच पवित्र कन्याओं में स्थान दिया है –

“ अहिल्या द्रौपदी तारा कुन्ती मंदोदरी तथा
पंचकन्याः स्मरेन्नित्यमं महापातक नाशनम्”||

आइये अब अपनी अल्प बुद्धि से माता मंदोदरी की चरित्रगत किलक्षणताओं को समझने का यत् किंचित प्रयास करते है ---

1. **अप्रतिम सुंदरी :-** माँ मंदोदरी परमसुंदरी हैं | वाल्मीकि रामायण में उनके सौन्दर्य का गरिमापूर्ण कथन है | भक्त शिरोमणि हनुमान जी को भी उन्हें देखकर एकबार सीता माता होने का भ्रम हो गया था |

शारीरक सौन्दर्य के साथ मंदोदरी में आत्मिक सौन्दर्य का प्रश्रय है | वे सुन्दर हैं क्योंकि उनमें आत्मिक बल है, चारित्रिक दृढ़ता है, कर्तव्य निर्बहन का प्रबल उन्मेष है | उनका जीवन वेद शास्त्रों के अवगाहन से सुसंस्कृत है | उनका मानसिक परिवेश ज्ञान और ईश सानिध्य से अप्लावित है जिसमें आकर्षण है,

दिव्यता है, तेज है और जीवनी शक्ति का स्फुट प्रवाह है | तनिक आगे बढ़कर हम कह सकते हैं कि माँ मंदोदरी में उस मंगलकारी चैतन्य का प्रस्फुटन है जो सृष्टिगत लयात्मकता को व्यवहारिक जीवन में समानुकूल बनाने की साधना करता है | कहाँ रावण की लंका, कहाँ साध्वी मंदोदरी- वे लंका की अवांछनियताओं से सर्वथा असंपृक्त रहती हैं |

“चंदन विष व्यापत नहीं लिपटे रहत भुजंग”|

2. **वेद विज्ञ विदुषी एवं धैर्यशीला :-** विदुषी होने के साथ माता मंदोदरी धैर्यशील भी हैं | उन्होंने वेद शास्त्रों का अध्ययन किया है, साथ ही वे विभिन्न कलाओं में भी निष्णात हैं | रावण से वे सौम्यतापूर्ण, धैर्यपूर्वक संवाद करतीं हैं | रावण से वे कहतीं हैं कि राम को सामान्य मनुष्य समझने की भूल कतई न करें –--

“अंगद हनुमत अनुचर जाके | रन बांकुरे वीर अति बाँके ||
तेहि कह पिय पुनि पुनि नर कहहू | मुधा मान ममता मद बहहू”||

अंगद व हनुमान के करतब लंका देख चुकी है, राम तो उनके स्वामी हैं, मंदोदरी रावण से कहती है की आप व्यर्थ मान, ममता और मद का भार सिर पर लादें हुए हैं –-

“कंत समुझि मन तजहु कुमतहिं | सोह न समर तुम्हहि रघुपतिहिं ||
पति रघुपतिहि नृपति जनि मानहु | अग-जग नाथ अतुल बल जानहु”||

कहाँ राम कहाँ आप ? समर तो बराबर वालों के साथ होता है, राम तो चराचर जगत के, सकल ब्रम्हांड के नाथ हैं | आपकी की तरह केवल एक

राजा नहीं हैं—आप जानिए कि-

"विश्व रूप रघुबंस मनि करहु बचन विस्वासु |
लोक कल्पना वेद कर अंग अंग प्रति जासु" ||

रघुवंश शिरोमणि श्रीराम विश्व रूप हैं | समस्त जगत उन्हीं का स्वरूप है, वेद उनके अंगों में विभिन्न लोकों को बताते हैं | सभी जानते हैं कि भगवान करुणासागर हैं, वे अहैतुकी कृपा करने वाले हैं | निषादराज, शबरी व वनवासियों के पास स्वयं चलकर आयें हैं | ऐसे राम का विरोध करना आपके लिए सर्वथा अशोभनीय है- वे आपका कल्याण करने के लिए यहाँ आयें हैं |

माता मंदोदरी लंका की स्थिति और रावण की मनोदशा, दोनों की नाजुकता और गंभीरता को स्पष्ट देख रहीं हैं, अब भी यदि रावण संभल जाएँ तो, बात बन सकती है | अतः विना किसी कटुता व तिक्तता के,परिणाम की चिंता भी न करते हुए- वे अनवरत रावण को सत्य मार्ग पर लाने के लिए प्रयास करतीं हैं, उनसे संवाद बनाए रखतीं हैं |

उनका यह प्रयास गीता के कर्म सिद्धांत का याद दिलाता है कि वस्तुतः व्यक्ति कर्म करने के लिए पूर्ण स्वतंत्र होता है | भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को पूरी गीता सुना दी, और कितने तरह से सुनायी पर अंत मे कह दिया, 'अब तुम्हें जो इच्छा हो करो' |

हम जानते है अर्जुन तो भक्त हैं, सखा हैं भगवान के, किन्तु रावण ? मंदोदरी पुनः दूसरे तरह से लंका पति को समझाने का प्रयास करती हैं उनकी आयु का संदर्भ उठाती हैं, उनकी यश कीर्ति का बखान करतीं हैं, उनका बल पौरुष याद दिलाते हुए उन्हें खुश करते हुए कहतीं हैं—

"चाहिऊ करन सो सब कर बीते | तुम सुर असुर चराचर जीते ||
संत कहहि अस नीति दसानन | चौथेपन जाइहि नृप कानन ||
तासु भजन कीजै तँह भर्ता | जो कर्ता पालक संहर्ता" ||

आपकी सभी इच्छाएं, जिन्हें पूरी होनी चाहिए थी, सब पूरी हो गयीं | आपने चराचर जगत को जीत लिया राजा को चौथेपन वन में जाकर ईश भजन करना चाहिए यही बात संतों ने भी कहीं हैं- स्वामी अब इस चौथेपन को तो आप सार्थक करें | इस तरह मंदोदरी पत्नी धर्म का पूर्णतः पालन करती हैं|

3. **नीति निपुणा व व्यवहार कुशला:-** माँ मंदोदरी सुसंस्कृत, व्यवहार कुशल व नीति कुशल स्त्री हैं | कब, कहाँ, किससे, कितना, क्या कहना है उन्हे अवसर व इंसान का पूर्ण संज्ञान है | हम देखते हैं कि उन्होंने रावण से प्रमुखतः इस संदर्भ में दो बातें कहीं हैं |

1. **माता सीता को लौटाने के लिए**
2. **दूसरी भगवान राम से विरोध छोड़ने की बात**

पहले हम माता सीता को लौटाने के सम्बन्ध में उनके संवादों को दृष्टिगत करते हैं-

हम जानते हैं कि रावण के अत्याचार से चहुँदिशि त्राहि-त्राहि मची हुई थी, सुर-असुर मानव सभी त्रस्त हैं, केवल दरबारियों को छोड़कर | अनीति की परिणति तो तब हो गई जब रावण जगत जननी को ही हर ले आया, माँ आदिशक्ति जगदंबा का हरण किया | शास्त्रों में कहा गया है है- **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता".**

पूज्यन्ते अर्थात सम्मान किया जाना | मंदोदरी रावण से कहना चाहतीं हैं कि वे अज्ञान के उस अंधेरे में हैं कि माँ को ही नहीं पहचान पा रहे हैं, जिनसे यह सृष्टि है, जिनसे जीवन मिला है | अतः मंदोदरी अब विशेष रूप से सजग हो जातीं हैं | उन्होंने सीता माता को रावण के महल में नही ठहराने दिया | प्रत्युत उन्हे प्रकृति के सुरम्य वातावरण में, अशोक वाटिका में रखा गया | माता सीता भूमिजा हैं, वे प्रकृति की पुत्री हैं- उन्हें प्रकृति के सानिध्य में रखना उनकी पवित्रता व तेज को थोड़ा संभालें रखने में सहायक होगा | वाल्मीकि रामायण में भी लिखा है- **" सीता की पवित्रता लंका को भस्म कर देगी, वे वसुधा की भी वसुधा और श्री की भी श्री हैं" |**

एक बार रावण ने क्रोध में सीता के लिए अपना चन्द्रहास निकाल लिया तो मंदोदरी ने तुरंत हाथ पकड़ लिया | वाल्मीकि रामायण में मंदोदरी कहती हैं कि सीता को देखकर विभीषण ने कहा था को अब राक्षसों का विनाश निश्चित है

और मंदोदरी ने भी तुरंत रावण को चेताया और कहा –

"तव कुल कमल बिपिन दुखदायी| सीता सीत निसा सम आई" ||

वे कहती हैं कि शीत निशा सम सीता आपके कुल को निर्मूल कर देंगी | वे शक्ति हैं, काली हैं | माता मंदोदरी विनम्रता पूर्वक कहती हैं-

"सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें | हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें" ||

बिना सीता को लौटाए आपका कल्याण नहीं है | ब्रम्हा और शिव भी कुछ नही कर पाएंगे | राक्षस कुल तो मेढक की तरह है जिसे राम के वाण रूपी सर्प समूल निगल जाएंगे-

"राम बान अहिगन सरिस निकर निसाचर भेक |
जब लगि ग्रसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक" ||

रावण तो रावण है, मद में डूबा हुआ मंदोदरी उनसे राम का विरोध छोड़ने की बात कहतीं हैं | राम का विरोध छोड़ने का वास्तविक तात्पर्य क्या है ? जीवन में सरलता, सहजता को स्वीकारना, समता व सहृदयता में जीना | जीवन की लय, सृष्टि की लय के साथ एकरूप हो जाना ही तो रामत्व है | राम का किसी से द्वेष नहीं है, किन्तु जो जीवन की लय को विगाड़ता है, जो प्रकृति के विरुद्ध चलता है, जो सीता के विरुद्ध चलता है, जो माता के विरोध में खड़ा हो जाता है- वह विधाता के विपरीत है | राम जगत में संगति बैठाने आये हैं जो समकूल है उनकी सहायता करने आये है, जो बाधक होगा उसे रास्ते से हटना या हटाना पड़ेगा |

शिव जी ने 100 करोड़ से भी अधिक रामायणों में से केवल एक राम का नाम अपने लिए रखा | महादेव की आराधना करके रावण को इतनी

शक्ति मिली कि वह त्रिलोक विजयी हो गया | और उसी शक्ति से शिव के आराध्य श्रीराम से मोर्चा लेना चाहता है | मंदोदरी देख रहीं हैं की जहाँ व्यक्ति अपने घेरे में कैद हुआ उसमे विकृतियों का जाल बनाने लगता है जैसे रुके जल में सड़न पैदा होती है—ऐसे युग का, समय का, दुष्काल का निस्तारण करने के लिए प्रभु स्वयं आते हैं—यह ईश्वर का शाश्वत नियम है जिसका पूर्ण संज्ञान माता मंदोदरी को है |

गोस्वामी जी लिखते है:-

"जब जब होय धरम की हानी | बाढ़ै असुर अधम अभिमानी ||
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा | हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा" ||

गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण ने कहाँ है –

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लार्निभवति भारत |
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्" ||

मंदोदरी वही बात कहतीं हैं- "विनाश काले विपरीत बुद्धि"- काल विवश होने के कारण आपको (रावण को) किसी बात से, कथन से बोध प्रबोध हो ही नही रहा है | यह सब राम से विरोध करने के कारण |

"अहह कंत कृत राम बिरोधा | काल बिबस मन उपज न बोधा ||
निकट काल जेहि आवत साई | तेहि भ्रम होई तुम्हारिहि नाई ||
काल दण्ड गहि काहु न मारा | हरइ धर्म बल बुद्धि विचारा "||

जहाँ भ्रम हुआ बुद्धि विचार पहले जाता है पुनः धर्म और बल भी क्षीण हो जाता है |

गोस्वामी जी ने रावण के लिए ही लिखा है –

"फूलइ फरइ न बेत जदपि सुध बरसहिं जलद |
मूरख हृदय न चेत जौ गुरु मिलहिं बिरंचि सम" ||

ब्रम्हा भी मूर्ख को कुछ सिखा नहीं सकते, रावण उसी कोटि का है क्योंकि मंदोदरी की कल्याणमयी, सुधासिक्त वाणी रावण के पल्ले नहीं पड रही है, फिर भी वे उन्हे किसी न किसी तरीके से बोध कराने में जुटी हुई हैं और कहतीं हैं-

"अहंकार शिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान |
मनुज बास सचराचर रूप राम भगवान" ||

श्रीराम का अहंकार शिव अर्थात परम मंगलकारी है, बुद्धि ब्रम्हा अर्थात सृजन शक्ति है मन चंद्रमा अर्थात परम शीतलता एवं आनंद तथा चित तो स्वयं श्री विष्णु हैं इसका अगला तात्पर्य यह भी है कि शिव ब्रम्हा चंद्रमा आदि रूप श्री भगवान ही कार्य कर रहे हैं – वही चराचर में व्याप्त राम भगवान मनुज रूप में वास कर रहें हैं इसलिए आपको श्रीराम से वैर छोड़कर प्रीत करनी चाहिए जिससे मेरा अहिवाट बना रहे-

"अस विचारि सुन प्रानपति प्रभु सन बयरु विहाय |
प्रीत करहु रघुबीर पद मम अहिबात न जाय" ||

उक्त दोहे को पढ़ते हुए, ऊपर से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि माता मंदोदरी रावण के जीवन रक्षा की ही बात कर रहीं हैं- किन्तु संवाद मूल भावना इतर है |

इसमे यदि हम केवल दो पदों 'रघुबीर' और 'अहिबात' पर विचार करें तो माँ मंदोदरी के चरित्र की गूढ़ता थोड़ी समझ आ सकती है | पहला पद है 'रघुबीर' राम को रघुबीर क्यों कह रहीं हैं- रावण बहुत विद्वान है, उन्होंने रघुवंश का इतिहास भी पढ़ा होगा जहां महाप्रतापी राजा रघु, परम त्यागी राजा दिलीप जैसे अनेक राजा हुए हैं | इच्क्षवाकु वंश, कुकुत्स्य कुल क्या रहा है रावण को पता है उसमे भी रघुओं मे वीर शिरोमणि श्रीराम जिन्होंने –

"निसिचर हीन करउ महि" – का बीड़ा उठाया है उनके समक्ष रावण कहाँ ठहरता है? वह तो उनकी दृष्टि भी नहीं सहन कर पाएगा |

दूसरा पद है 'अहिवात'- माँ मंदोदरी कह रहीं हैं कि यदि आप श्रीराम से वैर छोड़ कर प्रीत कर लेतें तो मेरा अहिवात (सौभाग्य) बचा रहता क्योंकि मैं तो प्रभु भक्ति में मन लगा बैठी हूँ यदि उसी भक्ति से, ईश भजन से आप भी नाता जोड़ लेते तो मेरा यह लौकिक विवाह भी सम्पूर्ण हो जाता |

कबीर दास जी कहते हैं-

"दुलहिन गावहु मंगलचार |
मेरे घर आए राजा राम भरतार" ||

जिस ब्रह्म से हर जीव की सगाई हुई है, उसी से आप (रावण) भी लगन लगाओ और मेरा सौभाग्य अमर कर दो | माता मंदोदरी को संज्ञान है कि सीता राम- जगत जननी व जगत पिता हैं | माँ मंदोदरी राम सीता की भाँति ही रावण के कल्याण का हेतु बनकर लंका मे आयीं हैं | इस प्रकार हम कह सकते हैं कि माता मंदोदरी अखंड चरित्र की धनी, परम साहसी हैं | और तब हमें उनके चिर यौवना, चिर कुमारी और पंच कन्याओं में उनको सम्मिलित किए जाने को भी समझ पाएंगे | वे चिर यौवना हैं क्योंकि वे सशक्त और दृढ़ तथा पवित्र विचारों वाली हैं, विचार ही हमारा संसार होताहै | वे चिर कुमारी हैं क्योंकि संदेह उनमे है ही नही | वे सभी संशयों से परे हैं | और इस तरह रावण से विवाह भी हुआ तो वे रावण की त्रिगुणात्मक प्रकृति से अनछुई हैं | जीवन में विषम परिस्थितियों का दृढ़ता, साहस व धैर्यपूर्वक सामना और उन्हे समानुकूलन बनाने मे सक्षम होने के कारण ही अहिल्या, द्रौपदी, तारा, कुन्ती और मन्दोदरी को हमारे शास्त्रों में पाँच पवित्र कन्यायेँ कहा गया है | इसके समक्ष आज का स्त्रीवाद कहाँ ठहरता है?

स्त्री में जिन आठ अवगुणों की बात रावण करता है –

"साहस अनृत चपलता माया | भय अविवेक अशौच अदाया" ||

वे सब के सब तो रावण में हैं, एक मंदोदरी में है – वह अवगुण नहीं गुण है – वह साहस है | मंदोदरी में साहस है, वे रावण को दो टूक सुनाती रहती हैं | वे साहसी हैं | रावण में दुस्साहस है | माता मंदोदरी स्वधर्म का, स्त्री धर्म का, पत्नी धर्म का व देश धर्म का पूर्ण निर्वहन करतीं हैं | उनके चरित्र की विश्वसनीयता और स्वीकार्यता इतनी प्रबल-प्रगाढ़ है की आशुतोष राणा के शब्दों मे – रावण को मंदोदरी से कहना पड़ा-

"हृदय से धन्यवाद मंदा, मुझे जस का तस सम्मान पूर्वक स्वीकार करने के लिए, मेरे जीवन की प्रत्येक परिस्थित में मेरे साथ दृढ़ता पूर्वक खड़े रहने के लिए" |

अंत मे अपनी इन पंक्तियों के साथ मै माँ मंदोदरी को नमन करती हूँ –

"विषम परिस्थितियों मे जीवन साधा"
तपः पूत वह नारी थीं
रावण के संग रहकर भी
पूरी तरह अविकारी थीं
देश धर्म में मॅजी हुई वह
युग चेतना की सहकारी थीं
पंच कन्याओं में गिनी गयीं जो
साध्वी मंदोदरी हमारी थीं" |

1. संदर्भ ग्रंथ

1. रामचरितमानस
2. बाल्मीकि रामायण
3. रामराज्य, आशुतोष राणा

मानस शब्द मंथन

स्मिता लाधावाला

(ladhawala.smita@gmail.com)

1. प्रस्तावना

श्रीरामचरितमानस का प्रत्येक शब्द मंत्र है, जैसे - राम, ग्राम, नागर, परम, क्रम, दान, कोबिद, कृपा, कटाक्ष, लव, अतिथी, समधि, पुत्रवधु, यज्ञ, जलद, जलज, जलधि, अंगद, वाली, प्रदोष, प्रबोध, उपल, अरुणोपाल, व्रत, उपवास, उदासी, मृग, बेनी, अवध, अयोध्या, दम, सुमन, मधु, मेद, वानर इत्यादि।

2. विस्तार

आइये, चंद मंत्रो का मंथन करें -

1. **कटाक्ष:** हम तो समझते हैं कि कटाक्ष नकारात्मक शब्द है; परंतु मानस के अनुसार कटाक्ष में नकारात्मकता का भाव है ही नहीं। कटाक्ष = कट + अक्ष। अक्ष के अनेक अर्थ हैं; जैसे आँख, कोण, धूरी आदि ॥
2. **लव:** 'लव' के कुछ अर्थ देखें - सीयारामजी के सुपुत्र, काल गणना, क्षण, लोहा आदि। राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न चार भाईयों के आठ बेटे थे। रामजीने राजगद्दी मीलने के वर्षो बाद पूरा राज्य आँठो बेटो में बाँट दीया। लव के हिस्से में जो भाग आया उसका नाम लवपूरी था, जो बाद में लाहौर हो गया। आज के बच्चे तो लव और संस्कार का अलग ही अर्थ जानते हैं। उनके लीये तो संस्कार का मतलब है - Son's car; बेटे की गाड़ी। लव का अर्थ क्षण समझकर ही शायद टाटा ग्रुप नें Blinkit नाम रखा होगा ॥
3. **अतिथी:** सामान्य ज्ञान से अतिथी का अर्थ है - जिनके आगमन की तिथी तय नहीं हैं, अथार्त महेमान; परंतु आज के परीपेक्ष में महेमान भी तिथी और समय बताकर ही आते हैं। रामायण के अनुसार सीयाराम के बेटे लव के पुत्र का नाम अतिथी है। उनका राज्य इतना अच्छा था कि लोग कहते थे – "अतिथी देवो भव:" राजा अतिथी ने कई उमदा कार्य कीयें, जैसे कारावास से सभी बंदीओंको एक बार मुक्त कीया, वे मानते थे, कि इन्होंने गलती की है, पर एफबार सुधरने का मौका मिलना चाहीये। उन्होनें गायमाता को दोहना बंध करवाया, क्योंकि गौ माता का दूध उनके बछड़ो के लीये हैं, व्यापार करने के लीये नहीं ॥
4. **ग्राम**: हमारी नजर से ग्राम का अर्थ वजन की इकाई तथा गाँव हैं। मानस के बालकाण्ड का श्लोक 4 देखें

   सीतारामगुणग्रामपुण्यारण्यविहारिणो।
   वन्दे विशुद्धविज्ञानौ, कवीश्वर कपीश्वरौ ॥
   यहाँ पर ग्राम का अर्थ समूह है। गुणग्राम अर्थात् गुण समूह॥
5. **व्रत:** हम तो समझते हैं - व्रत रखना अथार्त भूखे रहना, जैसे, आज हमारा एकादशी का व्रत है। मानस के अनुसार व्रत का अर्थ प्रतीज्ञा है। हम सत्य बोलने का व्रत ले तथा उसका अनुकरण करें तो भी काफी है ॥
6. **उपवास:** हम तो उपवास का अर्थ भी व्रत जैसा ही समजते हैं - भूखे रहना। हकीकत में उपवास का अर्थ है नजदीक रहना, जैसे नगर - उपनगर, गण – उपगण। हम प्रभु के नजदीक रहें ॥
7. **बेनी:** सामान्य नजरीये से बेनी अर्थार्त चोटी, जटा या बालों में लगाने वाली फूलों की माला। मानस के अयोध्याकाण्ड के दोहा 106 में बेनी का अर्थ त्रिवेणी संगम से हैं, जहाँ गंगा, यमुना एवम् सरस्वती मिलती हैं। इस पावन दोहे के शब्द -

   एहि बिधि आइ बिलोकी बेनी। सुमिरत सकल सुमंगल देवी ॥
   मुदित नहाई कीन्हि सिव सेवा। पूँजि जथाबिधि तीरथ देवा ॥

इसका सरल अर्थ है - श्रीरामजी ने आकर त्रिवेणी का दर्शन किया। जहाँ कम से कम दो नदीयाँ मिले, वह स्थान प्रयाग है। भारतवर्ष में पांच प्रयाग है, उसमें यह सर्वश्रेष्ठ है, अत: इसे प्रयागराज, बेनी या त्रीवेणी करते हैं ॥

8. **मृग:** सामान्यतः हम मानते हैं कि मृग का अर्थ हिरण है। मानस में मृग का अर्थ हिरण तथा पशु दोनों है - विशेष रूप से ऐसे पशु जो वन में रहते हैं, जैसे बाघ, सिंह, चिता। अत: जंगल के पशु के शिकार को मृगया कहते हैं। ठीक इसी प्रकार वन में रहने वाले नर को वानर कहते हैं ॥

9. **दान:** राजा के 4 मुगुट या सद्गुण होते है - साम, दाम, दंड और भेद । त्रिकालज्ञानी गोस्वामीजी दाम के स्थान पर दान मंत्र का प्रयोग करते हैं । शायद उन्हें दाम में पैसे, व्यापार, मुनाफे की झलक दिख रही होगी ॥
10. **यज्ञ:** हम मानते हैं - यज्ञ करना अथार्त हवन करना । अग्नि में स्वाहा कहकर आहुति देते हैं। अग्नि में आहुति देते समय स्वाहा कहकर अग्नि देव की अर्धांगिनी को ही याद करते हैं। महाराज दशरथ ने काशी में गंगा तट पर जिस स्थान पर दस अश्वमेघ यज्ञ किये थे वह पुनित घाट दशाश्वमेघ घाट के नाम से विश्व विख्यात हो गया । बाबा मानते हैं - हम अपना काम पूरी श्रद्धा, भक्ति एवम् लगन से करें तो वह भी यज्ञ ही हैं ॥

अत: किसी ने ठीक ही कहा है - भक्ति से करें तो गीत भजन हो जाये, निहारना दर्शन हो जाये, यात्रा तीर्थयात्रा हो जाये तथा भोजन प्रसाद बन जाये ॥

11. **अंगद तथा वाली:** शायद यही दो शब्द आधुनीक समय में अंगत (निजी) तथा वाली (अभिभावक) बन गये हैं॥
12. **क्रम:** अयोध्या काण्ड दोहा 110 देखें

तेहि अवसर एक तापसु आवा । तेज पुंज लघुबयस सुहावा ॥
कबि अलखित गति बेषु बिरागी। मन क्रम बचन राम अनुरागी ॥

हम तो अपनी अल्प बुद्धि से मानते हैं क्रम अथार्त अनुक्रमांक, पहला, दूसरा, तीसरा आदि । मानस में बाबा कर्म के लीये क्रम प्रयुक्त करते हैं ॥

3. निष्कर्ष

अंत में, राम महा मंत्र की बात करूँ तो - हम सब राम मय जीवन जीयें, सीयाराम के आदर्श का पालन करते हुए भव सागर पार कर लें ॥

राम की चिडीया राम का खेत,
खाओ चिडीयां भर भर पेट ॥

इस अद्भुत मंच को सादर प्रणाम । उपरोक्त बातें भी इसी मंथन मंच का महा प्रसाद है ॥

मंदोदरी की व्यथा

सरिता श्रीवास्तव

(saritasrivastava5072@gmail.com)

1. प्रस्तावना

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित श्री राम चरित मानस की एक महत्वपूर्ण पात्र रावण कि पत्नी मंदोदरी हैं। मानस में बाबा तुलसी ने मंदोदरी को एक आकर्षक, रूपवान धार्मिक बुद्धिमान एवं पतिव्रता के रूप में प्रस्तुत किया है।

मंदोदरी अप्सरा हेमा और महान कारीगर राक्षसराज मयासुर की पुत्री हैं। उनके जन्म के संबंध में और भी कहानियां है शिव पुराण के अनुसार मधुरा नाम की अप्सरा कैलाश पर्वत पर जब भगवान शिव को आकर्षित कर रही थी तभी माता पार्वती ने देख लिया और उसे श्राप दिया कि वह मेंढकी बन जाए। मधुरा मेंढकी बनकर कुएँ में रहने लगी। श्राप की समयावधि पूर्ण होने पर हेमा और मयासुर ने उनका अपनी पुत्री के रूप में पालन पोषण किया और उनका नाम मंडोदरी रखा। यह कहाँ तक सच है यह नहीं कहा जा सकता।

मंदोदरी की व्यथा उनकी सबसे बड़ी विडंबना थी कि एक अत्यंत बुद्धिमान और धर्मात्मा स्त्री होने पर भी अपने पति रावण के अहंकार और विनाशकारी निर्णयों के कारण दुख सहना पड़ा।

2. विस्तार

मंदोदरी का नाम आते ही रावण की पत्नी का विचार आता है। हिंदू पुराणों के अनुसार मंदोदरी का जन्म एक साधारण अप्सरा के रूप में हुआ था, किंतु महान असुर दशानन से विवाह के बाद एक मंजिल तक पहुंचा।

कहते हैं एक बार रावण मायासुर से मिलने गया और उसकी अतीव सुंदर पुत्री को देख कर मंत्रमुग्ध हो गया जैसा कि उसकी प्रकृति थी और मयासुर के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा । मयासुर जानते थे कि वह दुराचारी एवं क्रूर प्रकृति का है। फिर भी ब्रह्मा के कुल का, ऋषि पुलत्स्य का पोता और ऋषि विश्रवा का पुत्र जानकर रावण और मंदोदरी के विवाह के लिए तैयार हो गए। मंदोदरी भी रावण के कुकृत्य से परिचित थीं, फिर भी भयवश विवाह करना पड़ा। इस प्रकार मंदोदरी रावण की पटरानी बनीं। उनके तीन पुत्र मेघनाथ, अतिकाय, अक्षय कुमार हुए। मंदोदरी बहुत समझदार और ज्ञानी स्त्री थीं, वे अपने पति को सदा अच्छी सलाह देती थीं। अपने पति के मनोरंजन के लिए शतरंज के खेल का आरंभ किया।

द्रौपदी,तारा,अहिल्या और कुंती की भांति ही मंदोदरी भी पंच कन्या में सम्मिलित हैं। इनके प्रतिदिन स्मरण से समस्त पाप धुल जाते हैं। ये विवाहित होते हुए भी कन्याओं की भांति पवित्र मानी गई हैं।

मंदोदरी को पता था कि रावण बहुत अहंकारी है और जिस राह पर वह चल रहा है, उसका विनाश निश्चित है।

जब वह मां सीता का हरण करता है तब महारानी मंदोदरी बहुत विनती करती हैं कि सीता जी को वापस कर दो और राम जी से क्षमा मांग लो किंतु वह नहीं मानता बार-बार रानी मंदोदरी का अपमान करता है।

वे बहुत दुखी और अपमानित महसूस करती हैं, जब रावण उनके सामने ही सीताजी को मनाने के लिए रामचरित मानस के सुंदर कांड में कहता है -

कह रावण सुनु सुमुखि सयानी
मंदोदरी आदि सब रानी
तव अनुचरी करहुं पन मोरा
एक बार बिलोकु मम ओरा

तब मंदोदरी जैसी ज्ञानी, गुणवती और अत्यंत सुन्दर रावण की पटरानी को कितना आघात लगा होगा। अनेकों बार मना करने और मंदोदरी के समझाने पर भी रावण नहीं माना, और राम जी से युद्ध का निर्णय लिया और अंत वही हुआ जो होना था परिवार सहित रावण और राक्षस कुल का सर्वनाश।

रावण की मृत्यु के पश्चात मंदोदरी युद्ध भूमि पर जाती हैं, हताश निराश। रावण और राक्षसकुल का विनाश देख कर अत्यंत दुखित होती हैं। ब्रह्मर्षि वाल्मीक ने मंदोदरी की व्यथा का बहुत मार्मिक चित्रण रामायण के सर्ग १११ में किया है।

मंदोदरी रावण के बल, परिवार और पौरुष के विषय में कहती हैं विलाप करती हैं आपके भाई कुबेर हैं, इंद्र भी आपसे भय खाते थे, जब आप क्रोध धारण करते थे तो देव दानव, ऋषि मुनि, यक्ष गंधर्व सब भाग जाते थे। व्यंग्य करती हैं कि वही आप एक साधारण बनवासी के हाथों मारे गए। राजन

लज्जा नहीं आती आपको! वे साधारण स्त्री की भांति रोती नहीं हैं कहती हैं आप तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करने वाले वीर योद्धा! एक मानव द्वारा मारे गए, राम के रूप में काल ने स्वयं आकर आपका वध किया।

जिस दिन खर और बड़े बड़े राक्षसों के वध का समाचार मुझे मिला और हनुमान ने आपकी सब तरह से सुरक्षित लंका में प्रवेश किया और आपके पुत्र को मारा और लंका ध्वस्त कर दी, उसी दिन मैं समझ गई थी कि राम कोई साधारण मानव नहीं हैं, पृथ्वी को भय मुक्त करने के लिए स्वयं परब्रह्म राम के रूप में अवतरित हुए हैं। आपको बहुत बार समझाया कि आप राम से बैर न करें, किंतु आप नहीं माने।

आपके महल में सीता से भी रूपवती स्त्रियां हैं किंतु आप काम के वश में हो गए। हे आर्य- यह सीता कुल, रूप, गुण किसी भी प्रकार मेरे बराबर नहीं है, सीता ही आपके लिए मृत्यु का कारण बन कर आई थी। मेरा पुण्य बहुत थोड़ा था इस कारण यह वेदना झेलनी पड़ रही है, आपके कारण ही एक साधारण विधवा स्त्री के समान हो गई हूं।

आपका सुंदर बलशाली शरीर जो आभूषणों से सुसज्जित रहता था, आज पृथ्वी पर पड़ा है।

मैं सदैव गर्व से भरी रहती थी भय हीन हो कर रहती थी, मेरे पिता राक्षसराज मायासुर, मेरा बेटा इंद्रजीत और त्रिलोकी मेरा पति दशानन रावण। किंतु आज राम के बाणों ने आपको ऐसा बेधा है कि एक अंगुल की जगह भी नहीं बची। आप कहते थे मैं मृत्यु की मृत्यु हूं, फिर भी राम द्वारा मारे गए। आपकी मृत्यु के पश्चात भी मैं जिंदा हूं , कितनी पाषाण हृदया हूं। मंदोदरी कहती हैं आपने युद्ध में कभो पीठ नहीं दिखाई कभी कायरता का परिचय नहीं दिया, किंतु देवी सीता का चुपके से हरण करके आपने कायरता दिखाई, वही आपके विनाश की सूचना थी किंतु पथभ्रष्ट होने के बाद आप प्रायश्चित कर लेते तो यह दंड नहीं मिलता,मेरा सर्वनाश न होता। मंदोदरी बहुत व्यथित हैं, अंत में रोते रोते वे रावण के वक्ष पर गिर पड़ती हैं।

परंपरा के अनुसार विभीषण से विवाह का प्रस्ताव था किंतु वे नहीं करना चाहती थीं, बाद में लंका को सही दिशा में लाने के लिये विभीषण से विवाह कर लेती हैं।

3. निष्कर्ष

अंत में मंदोदरी का चरित्र बुद्धिमत्ता, निष्ठा और सही का साथ देने जैसे गुणों के कारण आज भी प्रासंगिक है, जो चुनौती पूर्ण परिस्थितियों में भी संतुलन और नैतिकता का मार्गदर्शन करते हैं। आज के युग में मंदोदरी का उदाहरण नैतिक मार्गदर्शन और विवेकपूर्ण सलाह के महत्व को दर्शाता है। मंदोदरी जानती है कि क्या सही है और क्या गलत है, अपने पति को सदैव सही रास्ते पर चलने की सलाह देती है, इससे यह परिलक्षित होता है कि बुद्धिमान व्यक्तियों के लिए गलत निर्णयों का विरोध करना भी आवश्यक है, भले ही वह कितनी भी धर्म विरुद्ध शक्तियों के बीच में क्यों न हो। वह एक धर्मनिष्ठ पत्नी के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वहन करती है और बुद्धिमानी के साथ सलाह भी देती है। जो आज के परिवेश के लिए महत्वपूर्ण सीख है। मंदोदरी की व्यथा न केवल एक स्त्री के दुख की कहानी है अपितु यह इस बात का भी प्रतीक है कि जब अहंकार और मूर्खता ज्ञान और धर्म पर प्रभुत्व प्राप्त कर लेते हैं तो विनाश निश्चित है।

4. संदर्भ

१- रामचरित मानस
२- वाल्मीकि रामायण
३- शिव पुराण

Sri Lanka is Ravana Lanka: A Scientific Correlation through Paleomagnetism, Oceanography and Ancient Scriptures

Bala Venkateswara Rao Sankuratri
(bvraos@gmail.com)

The paper scientifically establishes that Sri Lanka is the Lanka of Ravana described in the Valmiki Ramayana. Integrating paleomagnetic evidence, oceanographic observations, and data from ancient scriptures such as the Surya Siddhanta, the study reconstructs the geomagnetic and geographical conditions of the era referenced in the epic. The analysis shows that the spatial orientation, distances, and natural features mentioned by Valmiki align precisely with Sri Lanka's geographic position and characteristics. Through a synthesis of scientific reasoning and scriptural insight, this study affirms that present-day Sri Lanka is indeed the legendary Lanka of Ravana.

Highlights

- The paper redefines *Itihāsa* through an **Ithihosic methodology**, enabling layered interpretation of the Rāmāyaṇa as both a historical and scientific record.
- Demonstrates that **Maharshi Vālmīki's Ramayana** encapsulates advanced geographical awareness, poetic pedagogy, and encoded civilizational knowledge.
- Establishes that the **"Prime Meridian" and "Equator"** referred to in *Sūrya Siddhānta* are **geomagnetic** rather than geographic — placing ancient Laṅkā precisely on the geomagnetic equator.
- Correlates paleomagnetic reconstructions with **Rāmāyaṇa-era geomagnetic poles**, showing minimal latitudinal drift between the ancient and present-day geomagnetic frameworks (~0.8° latitude, ~0.06° longitude).
- Integrates **archaeological–anthropological continuity** through identification of the *Jarawa* and *Shompen* tribes, whose prehistoric habitation in the Andaman–Nicobar islands aligns with Vālmīki's eastern expedition narrative.
- Validates scriptural records of **land–sea transformation** between Bhārata and Laṅkā through oceanographic evidence of submerged river channels and shallow ridges (Dubey et al., 2023; Dandabathula et al., 2024).
- Interprets the **three-day penance of Rāma** as a systematic survey and reconnaissance before constructing *Rāma Setu*, revealing the scientific precision behind the narrative.
- Synthesizes data from *Vālmīki Rāmāyaṇa*, *Śrīmad Bhāgavatam*, and *Mahābhārata* with modern paleomagnetic and oceanographic findings to conclude that **Sri Lanka is indeed the historical Ravana Laṅkā**.

1. Understanding the Authorial Intent of Maharshi Valmiki

Before delving into a scientific analysis of the *Ramayana*, it is imperative to first comprehend the **perspective, purpose, and intellectual intent** of its composer, **Maharshi Valmiki**. Any study that attempts to correlate the *Ramayana* with scientific evidence must begin by understanding the author's foundational motivations and narrative design.

While numerous versions, retellings, and reinterpretations of the *Ramayana* exist today, it is often presumed to be primarily the story of *Sri Rama*—as suggested by the title *Rama-ayanam*, meaning "The Journey of Rama." This assumption, though partially valid, represents only one dimension of Valmiki's grand composition. The *Bāla Kāṇḍa* (the opening book) of Valmiki's *Ramayana* reveals a much deeper intellectual and philosophical pursuit.

Maharshi Valmiki begins his composition by expressing a desire to find a **living person of his era** who embodies the highest human virtues—righteousness (*dharma*), gratitude, truthfulness, self-restraint, courage, beauty, and composure. This search indicates that Valmiki had already conceptualized the framework of his composition and sought a central figure through whom he could **express a multidimensional narrative**. His purpose was not merely to document a heroic tale, but to encapsulate the **ethical, social, scientific, and cultural knowledge** of his time within a poetic framework.

A careful reading of the *Valmiki Ramayana* reveals that through various episodes—whether concerning *Rama*, *Sita*, *Hanuman*, *Ravana*, *Vishwamitra*, or others—Valmiki integrates references to the **social structures, political systems, warfare technologies, town planning, geography, and natural environment** of his age. These contextual layers transform the *Ramayana* from a mere epic into a **comprehensive knowledge system**—an early form of an **encyclopaedia of civilization**, presented in poetic and narrative form.

Through recitation, listening, or enactment, the *Ramayana* served not only as a spiritual and moral guide but also as a **pedagogical tool**, transmitting multidisciplinary knowledge to successive generations. Maharshi Valmiki, thus, can be viewed as a **revolutionary educator and knowledge compiler** of his time.

To support this understanding, a few relevant *shlokas* from the *Bāla Kāṇḍa*—in **Roman transliteration** with their **tentative English translations**—are presented below, illustrating Valmiki's quest for the ideal person who would become the central pillar of his monumental composition.

Sloka
tapassvādhyāyaniratañ tapasvī vāgvidāñ varam .
nāradañ paripapraccha vālmīkirmunipuṅgavam ।।1.1.1।।

Translation
Ascetic Valmiki enquired of Narada, pre-eminent among the sages ever engaged in the practice of religious austerities or study of the Vedas and best among the eloquent.

Sloka
kōnvasminsāmpratañ lōkē guṇavānkaśca vīryavān .
dharmajñaśca kṛtajñaśca satyavākyō dṛḍhavrata:।।1.1.2।।

Translation
Who in this world lives today endowed with excellent qualities, prowess, righteousness, gratitude, truthfulness and firmness in his vows?

Sloka
cāritrēṇa ca kō yuktassarvabhūtēṣu kō hita: .
vidvānka: kassamarthaśca kaścaikapriyadarśana: ।।1.1.3।।

Translation
Who is that one gifted with good conduct, given to the wellbeing of all living creatures, learned in the lore (knowledge of all things that is known), capable of doing things which others can not do and singularly handsome?

Sloka
ātmavānkō jitakrōdhō dyutimānkō.nasūyaka: .
kasya bibhyati dēvāśca jātarōṣasya saṅyugē ।।1.1.4।।

Translation
Who (among men) is self-restrained? Who has conquered anger? Who is endowed with brilliance and free from envy? Who is that when exited to wrath even the devatas, are afraid of (let alone foes)?

References

- Ramayana of Maharshi Valmiki, Gita Press (English and Telugu editions)
- Sri Madh Ramayanamthargata (Telugu translation by Vavilla Ramaswami Sastrulu and Sons)
- Multilingual Digital Editions of Valmiki Ramayana, Indian Institute of Technology, Kanpur (https://www.valmiki.iitk.ac.in/)
- https://www.valmikiramayan.net/

2. The Ramayana as Itihāsa — A Perfect Fit to the Classical Definition

Upon composing the *Ramayana*, **Maharshi Valmiki** created a literary masterpiece that not only encapsulated the vast and diversified knowledge of his time but also served as a moral compass for human life. As noted in the previous section, the *Ramayana* can be compared to an *encyclopaedia of its era*; however, its uniqueness lies beyond being a mere repository of information — it embodies the **moral and philosophical essence of life**.

The *Ramayana* stands as the **Ādi Kāvyam** — the *first-ever poetic composition* — and for a long time, no explicit definition was required to classify such a work. It was only much later, when **Maharshi Vyasa** composed the *Mahabharata* in a similar style, that the need arose to collectively identify and define this genre of literary compositions.

Among countless scriptures, *Ramayana* and *Mahabharata* emerged as **the two monumental works** that revolutionized the educational, ethical, and philosophical thought systems of their respective ages.

As time progressed, scholars sought to define this genre of sacred narratives, and the term **Itihāsa** became the most appropriate descriptor for such compositions. A precise definition of *Itihāsa* is beautifully stated in *Bṛhad Bhāgavatāmṛta* by **Śrīla Sanātana Gosvāmī** (2.1.110):

Sloka:
Dharma-artha-kāma-mokṣāṇām upadeśa-samanvitam,
Pūrva-vṛtta-kathā-yuktam itihāsaṃ pracakṣate.

Translation
An Itihāsa is a historical narration presented in the form of a story (so as to make it easier to understand, remember, and transmit), composed with the intention of imparting the essential moral and spiritual principles of life — Dharma (righteousness), Artha (prosperity), Kāma (fulfilment of desires), and Mokṣa (liberation).

The *Ramayana* perfectly fits this classical definition of *Itihāsa*. The definition, in turn, aligns seamlessly with **Maharshi Valmiki's authorial intent** as examined in the previous section.

It thereby becomes evident that the *Ramayana* is **both historical and instructive** — it records real events while employing narrative and poetic elements for easier transmission and remembrance. The story-like framework facilitates **generational continuity of knowledge**, allowing cultural, ethical, and scientific wisdom to be passed down seamlessly. In modern terms, this *narrative flexibility* can be viewed as **creative liberty**, an essential aspect of poetic compositions aimed at universal communication and preservation of multidimensional knowledge.

3. Introducing the Neologisms "Ithihosically" and "Itihāsic"- A Method for Layered Interpretation

From the preceding discussions (Sessions 1 and 2), it becomes evident that an *Itihāsa*—in this context, the *Ramayana*—is a multidimensional composition intricately woven with several intertwined elements: poetic expression, factual narration, contextual storytelling, embedded knowledge systems of its era, and moral philosophy. Each of these dimensions complements the others, collectively creating the depth and continuity that render the *Ramayana* timeless.

However, as this research seeks to examine the *Ramayana* at a deeper and more scientific level, it becomes necessary to disentangle these intertwined strands in order to study them individually. This enables us to distinguish between the core narrative (historical or geographical events) and the contextual insertions (moral, philosophical, or poetic elements) that Valmiki skillfully integrated into the composition.

This process is analogous to the dispersion of white light into its component colors, each color representing a unique aspect of the epic that, when studied separately, contributes to a clearer and more comprehensive understanding of the whole.

To describe this method of layered dissection and interpretation of an *Itihāsa*, I introduce the neologisms **"Ithihosically"** and **"Itihāsic"** (may also be written as *Ithihosic)***.**

The terms signifies *"pertaining to the analytical study of an Itihāsa by examining its factual, poetic, philosophical, and moral layers independently, yet in relation to one another."*

Moving forward in this paper, the terms *Ithihosically* and / or *Ithihosic* will be used to indicate instances where a verse, episode, or description from the *Ramayana* is being analyzed through this layered interpretative lens—allowing both scientific scrutiny and scriptural authenticity to coexist in harmony.

4. Introducing Sugreeva's Atlas: Geographic Knowledge in the Ramayana Era

Before entering into paleomagnetic or scientific analysis, it is essential to understand the profound geographical knowledge preserved in the civilizational memory of the Ramayana era. This awareness is vividly evident in the episode preceding the commencement of Sita Devi's search expedition.

During the preparatory assembly convened by **King Sugreeva**, ruler of the *Vānaras* (forest-dwellers) at Kishkindha, he gathers his strongest warriors, divides them into four teams, and assigns to each the task of exploring one of the four cardinal directions. In this context, **Maharshi Valmiki** dedicates four *Sargas* (chapters) of the *Kishkindha Kāṇḍa*—namely Sargas 40 (excluding Slokas 1-19), 41, 42 and 43—each describing the search route toward the East, South, West, and North respectively.

To collectively refer to these four chapters containing this vast geographic narration, I first introduced in 2019 the term **"Sugreeva's Atlas."**

Geographical Narration and Context
It is important to analyze how this geography is embedded within the epic—narrated by Sugreeva to his commanders, yet presented to the reader through the literary framework of Valmiki. The **gathering of regional leaders from across the world** is mentioned in *Kishkindha Kāṇḍa* Sarga 37, showing the pan-civilizational scope of the narrative. Valmiki describes the forest-dwellers metaphorically as monkeys and bears, likely reflecting their attire and appearance.

Sloka
tē tu sarvē harivarāḥ pṛthivyāṅ sarvavānarān.
sañcōdayitvā tvaritā yūthānāṅ jagmuragrataḥ||4.37.33||

Translation
The foremost leaders of the Vānaras from all over the earth quickly mobilized their troops and proceeded ahead.

Sloka
tē tu tēna muhūrtēna yūthapāśśīghragāminaḥ.
kiṣkindhāṅ tvarayā prāptā ssugrīvō yatra vānaraḥ ||4.37.34||

Translation
Within a short time, the swift-moving leaders of the Vānaras reached Kishkindha, where King Sugreeva resided.

On the Identity of the Vānaras
In *Kishkindha Kāṇḍa* Sarga 2 (verse 24), when Sugreeva observes Rama and Lakshmana from afar, he instructs Hanuman to approach them in the form of a common man, avoiding the distinctive appearance of the forest-dwellers:

Sloka:
tau tvayā prākṛtēnaiva gatvā jñēyau plavaṅgama.
iṅgitānāṅ prakāraiśca rūpavyābhāṣaṇēna ca ||4.2.24||

Translation
Go to them, O Hanuman, in a commoner's form, for your Vānara guise may be recognized by Vali's agents. Discern their intentions through their gestures, manner, and speech.

Thus, while Valmiki describes them as *Vānaras* (from *vāna* = forest, *nara* = man), the etymology clearly signifies **"forest-dwellers" or "men of the forest."**

Geographical Focus of Sugreeva's Narration
From the above references, we understand that Rama, Lakshmana, and the *Vānaras* were at Kishkindha in southern India when the expedition began. However, Sugreeva's geographical narration starts **not from Kishkindha**, but from the **banks of the river Ganga** and its tributaries—implying that this region served as the **central reference point of the known world** in the Ramayana's worldview.
Based on this inference, a schematic reconstruction of the then-known world (Fig. 4.1) can be made, placing the *Ganga region* near the center. This positioning situates the **Americas at the extreme East** on such a projection.

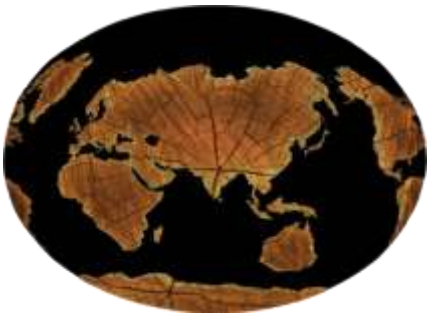

Figure 4.1 *(Author Generated)*

Examples from Sugreeva's Atlas — The Eastern Expedition
In this eastward narration, Sugreeva's description covers a vast expanse—from the Gangetic basin through the islands of Southeast Asia to regions resembling the Pacific and even the Americas.

He refers to **island-dwellers** resembling the *Jarawas* and *Shompens* of the Andaman & Nicobar Islands, to **gold- and silver-rich regions** consistent with Indonesia, and further to a **land across a great ocean** where a remarkable **mountain engraving** resembling the *Paracas Candelabra* of Peru appears.

Island Tribes: Jarawas and Shompens

Slokas
samudramavagāḍhāṅśca parvatānpattanāni ca.
mandarasya ca yē kōṭiṅ saṅśritāḥ kēcidāyatām।।4.40.25।।

karṇaprāvaraṇāścaiva tathā cāpyōṣṭhakarṇakāḥ.
ghōralōhamukhāścaiva javanāścaikapādakāḥ।।4.40.26।।
akṣayā balavantaśca puruṣāḥ puruṣādakāḥ.
kirātāḥ karṇa cūḍāśca hēmāṅgā: priyadarśanāḥ।।4.40.27।।

āmamīnāśanāstatra kirātā dvīpavāsinaḥ.
antarjalacarā ghōrā naravyāghrā iti śṛtāḥ।।4.40.28।।

ētēṣāmāśrayāssarvē vicēyāḥ kāvanaukasaḥ.
giribhiryē ca gamyantē plavanēna plavēna ca।।4.40.29।।

Translation

There are people who have taken shelter in the deep pits in the midst of the sea, in deep valleys, mountains, cities and broad peaks of Mandara mountain and forests.All those regions should be thoroughly searched. There are innumerable inhabitants,such as strong cannibals, some who cover their ears, some who have ears extended up to the lips, some with dreadful metallic faces, some swift-moving, one-footed indestructible beings. There are Kirata tribes of golden complexion and handsome looks whose tuft of hair is set to the sides so that it touches their ears. These Kiratas are Island-dwellers and they eat uncooked fish.They move in waters and are fierce, known as tiger-like men (Naravyagras because half of their body is human and other half is tiger in form). All the shelters of these forest-dwellers should be searched well.Those who can be sent by crossing mountains, those who can leap (in air) and those who can swim through waters may be also dispatched.

The description of island or forest dwellers with golden complexions and hair covering their ears aligns strikingly with the Shompens of the Andaman and Nicobar Islands, while the portrayal of beings resembling "half-human and half-tiger" unmistakably corresponds to the Jarawa tribe.

Furthermore, the mention of these island inhabitants immediately preceding the reference to *Yavadvīpa* (Java) decisively reinforces the geographical accuracy in Sugreeva's narration. This sequential placement confirms that Maharshi Valmiki was referring to the island chain lying en route to Java — the very region identified today as the Andaman and Nicobar Islands. Hence, the correlation between Valmiki's description and the Jarawa–Shompen tribes stands firmly reaffirmed, providing a tangible ethnographic continuity between the epic narrative and the present geography.

Anthropological and genetic studies affirm that both the Jarawas and the Shompens have continuously inhabited the Andaman and Nicobar Islands for an estimated 40,000 to 60,000 years (as of 2025 CE), preserving an extraordinary degree of cultural integrity with minimal external influence. Their physical features and traditional body markings—often characterized by striped patterns resembling a tiger's skin—closely resonate with the poetic imagery employed by Maharshi Vālmīki in the *Rāmāyaṇa*. The portrayal of "half-human, half-tiger" beings, therefore, is best understood as a figurative and poetic depiction of these distinct island tribes rather than a literal zoological reference.

The recognition of these tribes within the *Rāmāyaṇa* narrative stands as a crucial ethnographic and chronological marker. It provides tangible evidence of human settlements in the regions mentioned by Sugreeva, thereby delineating the civilizational frontiers and migratory pathways known during the time of the epic. Considering that the Jarawas are estimated — based on UNESCO's *The Jarawa Tribal Reserve Dossier: Cultural & Biological Diversities in the Andaman Islands* (UNESDOC Digital Library, https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000187690) — to have maintained uninterrupted habitation in these islands for at least 40,000 years, it can be logically inferred that the *Rāmāyaṇa* events must have taken place subsequent to this period, i.e., within the last 40,000 years from the present (2025 CE).

This correlation decisively reinforces the ethnographic authenticity of the *Rāmāyaṇa* and provides a solid chronological reference point for interdisciplinary validation. It thus serves as a foundational link between ancient literary testimony and modern scientific evidence, guiding the later analytical estimations of the time period in which the epic events historically unfolded.

Figure 4.2 *Shompens Tribe, Andaman and Nicobar Island*
(Image courtesy: blueandamantour.com)

Figure 4.3 *Jarawa Tribe, Andaman and Nicobar Island*
(Image courtesy: Robert G. Bednarik at researchgate.net)

Reference to Yavadvīpa (Java)
Sloka
ratnavantaṁ yavadvīpaṁ saptarājyopaśobhitam |
suvarṇarūpyakaṁ caiva suvarṇākaramaṇḍitam || 4-40-30 ||

Translation
Beyond lies the Yavadvīpa, resplendent with jewels (ratnavantam), adorned by seven prosperous kingdoms, rich in gold and silver, and surrounded by golden mines.

The phonetic proximity of *Yavadvīpa* and *Java* supports this identification, aligning with Indonesia's known abundance of gold and silver resources even in ancient times.

The Great Ocean and the "Three-Headed Palm"
Sloka
triśirāḥ kāñcanaḥ kētustālastasya mahātmanaḥ।।4.40.53।।
sthāpitaḥ parvatasyāgrē virājati savēdikaḥ.

Translation
Upon the summit of that mountain stands a radiant golden emblem in the form of a three-headed palm tree, established by that great being, shining brilliantly on its raised pedestal.

This description remarkably parallels the **Paracas Candelabra**—a monumental geoglyph on Peru's Paracas Peninsula—suggesting ancient awareness of far-eastern (or far-western from India's view) geography.

Figure 4.4a - *The Paracas Candelabra, Peru*
(Image courtesy: tripadvisor.in - 2-Hour Ballestas Islands Tour by modern boat)

Figure 4.4b - *The Paracas Candelabra, Peru*
(Image courtesy: https://undrstmtd.wordpress.com/2012/10/20/53/)

Conclusion of Session 4
Sugrīva's detailed instructions collectively form what may be termed **"Sugrīva's Atlas"**—a remarkable geographical account preserved in the *Kishkindha Kāṇḍa*. Vālmīki devotes four Sargas to this purpose: **40 (East) –** excluding slokas 1-19, **41 (South)**, **42 (West)**, and **43 (North)**, each describing distinct lands, peoples, and natural features. Together, they reveal the Ramayana era's extraordinary awareness of world geography. In the next session, **"Ithihosically – Sugrīva's Atlas,"** these accounts will help to **prism the thought of Maharshi Vālmīki**, allowing us to understand his vision **layer by layer** through both poetic and scientific lenses.

5. Ithihosically – Sugrīva's Atlas

After attaining a comprehensive sense of what is popularly referred to as *Sugrīva's Atlas*, this session attempts to delve into the poetic intellect of Maharshi Vālmīki. It is here that one begins to realize the extraordinary depth that transformed Vālmīki, the poet, into *Maharshi Vālmīki* — the seer who encoded geography, culture, and cosmic order within the fabric of epic narration.

Before analyzing the purpose and pattern of Sugrīva's geographic directions, let us comparatively examine two sets of verses — one preceding the eastern expedition and the other appearing during the narration of the southern direction.

Sloka (a): Before the Eastern Expedition
Sloka

tatra sītāṁ ca vaidehīṁ nilayaṁ rāvaṇasya ca ।

mārgadhvaṁ giriśṛṅgeṣu vaneṣu ca nadīṣu ca ॥ 4.40.19 ॥

Translation:
There, seek for Sītā, the daughter of King Videha, and also the abode of Rāvaṇa — search among the mountain peaks, in the forests, and along the rivers.

In the preparatory meeting preceding the commencement of Sītā Devī's search expedition, Sugrīva instructs the team assigned to the eastern direction — starting from the banks of the tributaries of the Gaṅgā and Sarasvatī — to look for Sītā Devī and the abode of Rāvaṇa, i.e., *Lankā*.

At this juncture, Sugrīva seems uncertain of Lanka's actual location. While he knows Sītā was abducted by Rāvaṇa and that his kingdom is Lanka, he remains unaware of its geographical position. Hence, he commands an all-directional search, making it appear as though the exact location of Lanka is unknown — a narrative strategy that sets the stage for a global exploration.

Sloka (b): During the Southern Expedition
Sloka

tatra sarvātmanā sītā mārgitavyā viśēṣataḥ ।

sa hi deśas tu vadhyasya rāvaṇasya durātmanaḥ ।

rākṣasādhipater vāsaḥ sahasrākṣa-sama-dyuteḥ ॥ 4.41.24–25 ॥

Translation
There, Sītā, the daughter of Videha, must be searched for with utmost dedication.
For that region is indeed the abode of the Rāvaṇa,
the king of the Rākṣasas, whose brilliance rivals that of Indra.

Here, Sugrīva unmistakably identifies the location of Lanka, the abode of Rāvaṇa, thus apparently contradicting his earlier uncertainty. Yet this is no inconsistency — it is the poetic intelligence of Vālmīki at work. The Maharshi's style is progressive revelation — truth unfolding gradually through narrative evolution rather than abrupt disclosure. The shift from general search to directional certainty is deliberate, guiding the reader and listener alike through the same journey of realization.

The Significance of Rāma's Ring
Sloka

dadau tasya tataḥ prītas svanāmāṅkopaśobhitam ।

aṅgulīyam abhijñānaṁ rājaputryāḥ parantapaḥ ॥ 4.44.12 ॥

Translation
Rāma, the scourge of enemies, gladly gave Hanumān a ring inscribed with his name (or mark) as an identification token for the princess (Sītā).

Sri Rāma entrusting his personal signet ring only to Hanumān — the leader of the southern contingent — is profoundly symbolic. If Sugrīva's mission were a literal, equal search in all four directions, such selective identification would appear illogical. Instead, it reveals Vālmīki's narrative design: only the southern path leads to Sītā and Lanka, and therefore only Hanumān is given the signet of truth.

The One-Month Timeline – Symbolism and Poetic Device
Sugrīva assigns all four teams a period of one month to complete their expeditions and return to Kiṣkindhā. The repetition of this timeline across directions — East, West, North, and South — forms one of the most intriguing literary patterns in the *Kiṣkindhā Kāṇḍa*.

Selected Verses
Sloka: (1)
adhigamya tu vaidēhīṁ nilayaṁ rāvaṇasya ca ।
māse pūrṇe nivartadhvam udayaṁ prāpya parvatam ॥ 4.40.68 ॥

Translation
Reaching the mountain behind which the Sun rises, look for Vaidehī and the home of Rāvaṇa and return by the month's end.

Sloka: (2)
ūrdhvaṁ māsān na vastavyaṁ vasan vadhyo bhaven mama ।
siddhārthāḥ sannivartadhvam adhigamya tu maithilīm ॥ 4.40.69 ॥

Translation
If you do not return within a month, you shall be punished. Return only after successfully finding Maithilī.

Sloka: (3)
yastu māsān nivṛtto 'gre dṛṣṭā sīteti vakṣyati ।
mattulya-vibhavo bhogaiḥ sukhaṁ sa viharişyati ॥ 4.41.48 ॥

Translation
He who returns within a month declaring that Sītā has been found will enjoy prosperity equal to my own.

Sloka: (4)
adhigamya tu vaidēhīṁ nilayaṁ rāvaṇasya ca ।
asta-parvatam āsādya pūrṇe māse nivartata ॥ 4.42.52 ॥

Translation
Go find Sītā and the abode of Rāvaṇa. After reaching the mountain where the Sun sets, return within a month.

Sloka: (5)
ūrdhvaṁ māsān na vastavyaṁ vasan vadhyo bhaven mama ।
sahaiva śūro yuṣmābhiḥ śvaśuro me gamişyati ॥ 4.42.53 ॥

Translation
If you exceed a month, you will be slain. My father-in-law, the valiant hero, will accompany you.

The poetic consistency of the "one-month command" defies literal geography. Traversing entire continents — the vast eastern oceans, the western lands beyond the seas, or the northern frontiers — within thirty days is beyond physical possibility. Hence, the timeframe must be symbolic: a poetic expression of discipline, divine urgency, and cosmic timing rather than a historical constraint.

The Return of the Three Teams
Sloka: (1)
vicitya tu diśaṁ pūrvāṁ yathoktaṁ sacivaḥ saha ।
adṛṣṭvā vinatā sītām ājagāma mahābalaḥ ॥ 4.47.7 ॥

Translation
Having searched the eastern direction as instructed by Sugrīva, the mighty Vinata returned with his ministers, unable to find Sītā.

Sloka: (2)
uttarāṁ ca diśaṁ sarvāṁ vicitya sa mahākapiḥ ।
āgataḥ saha sainyena vīraḥ śatavalīs tadā ॥ 4.47.8 ॥

Translation
Śatabalī, the heroic leader of the northern team, came back with his army after a fruitless search.

Sloka: (3)

suṣeṇaḥ paścimāṁ diśaṁ vicitya saha vānaraiḥ ।

sametya māse sampūrṇe sugrīvam upacakrame ॥ 4.47.9 ॥

Translation
Suṣeṇa searched the western direction for a full month and returned to report to Sugrīva.

The 47th Sarga concludes by emphasizing that all these teams returned within the allotted month — having searched extensively but in vain. Only the southern contingent failed to return within time, leading to the critical transition that follows.

Hanumān and the Southern Destiny
Sloka:

udāra-sattvābhijano mahātmā

sa maithilīṁ drakṣyati vānarendraḥ ।

diśaṁ tu yām eva gatā tu sītā

tām āsthito vāyusuto hanūmān ॥ 4.47.14 ॥

Translation
O king of monkeys! The noble and mighty Hanumān shall indeed see Maithilī (Sītā), for he has gone in the very direction where she was taken.

This verse explicitly confirms that all were aware Sītā had been taken southward. Both *Āraṇya Kāṇḍa* and *Kiṣkindhā Kāṇḍa* reinforce this fact — that Rāma's own journey southward was guided by this knowledge.

Supporting References from Earlier Episodes
Sloka: (1)

pariśrāntasya me tāta pakṣau chitvā sa rākṣasaḥ ।

sītām ādāya vaidehīṁ prayāto dakṣiṇāṁ diśam ॥ 3.68.10 ॥

Translation
O Rāma! When I (Jatāyu) was exhausted, that demon cut off my wings and carried Sītā away toward the southern direction.

Sloka: (2)

anumānāt tu jānāmi maithilī sā na saṁśayaḥ ।

hriyamāṇā mayā dṛṣṭā rakṣasā krūra-karmaṇā ॥ 4.6.9 ॥

krōśantī rāma rāmēti lakṣmaṇēti ca viśvaram ।

sphurantī rāvaṇasyāṅke pannagendra-vadhūr yathā ॥ 4.6.10 ॥

Translation
Indeed, I remember seeing a lady being carried away by a cruel demon, crying aloud, "O Rāma! O Lakṣmaṇa!" She struggled on Rāvaṇa's lap like the wife of a serpent-king.

Sloka: (3)

ātmanā pañcamaṁ māṁ hi dṛṣṭvā śaila-taṭe sthitam ।

uttarīyaṁ tayā tyaktaṁ śubhāny ābharaṇāni ca ॥ 4.6.11 ॥

Translation
Seeing me upon the mountain peak, she dropped her upper garment along with her auspicious ornaments.

These sequences collectively affirm that everyone — Rāma, Lakṣmaṇa, and the Vānaras — were already aware that Sītā and Lanka lay to the south.

The Delay and the Hidden Truth
Sloka:

Mayasya māyā-vihitaṁ giri-durgaṁ vicinvatām ।

teṣāṁ māso vyatikrānto yo rājñā samayaḥ kṛtaḥ ॥ 4.53.2 ॥

Translation
While searching the mountainous stronghold constructed by the magical powers of Maya, the month fixed by their king (Sugrīva) elapsed.

Unlike other teams, the southern contingent could not return within time, as they encountered the real challenge — crossing the seas to Lanka itself.

Ithihosical Understanding
The brilliance lies not in the apparent geography of the expedition, but in the intellect of its composer — Maharshi Vālmīki.

Pūrva-vṛtta (Historical Foundation)
Factually, the search could only have taken place in the southern direction, explaining why the southern team faced genuine challenges, why Rāma's signet was given to Hanumān alone, and why their delay was meaningful, not erroneous.

Kathā-yuktam (Narrative Design):
Poetically, Vālmīki uses this opportunity to embed within Rāma's story the geographic and cosmological knowledge of his civilization. Through Sugrīva's Atlas, the Rāmāyaṇa preserves ancient cartography and navigational awareness.

The very act of delineating all four directions — not from the team's current location but from the region between the rivers Saraswati and the tributaries of Gaṅgā — suggests the existence of a *prime meridian* or world-center concept in that age.

Further, the reference to the Jarawa and Shompen tribes in the Andaman–Nicobar region, known anthropologically to have inhabited these islands for over 40,000 years, situates the Rāmāyaṇa's timeline firmly after their migration. This provides an *anthropological anchor* — tangible evidence linking epic narrative with human prehistory.

Knowledge of Magnetism and Navigation in the Ramayana Era
Maharshi Vālmīki's intricate embedding of geographical precision in the *Rāmāyaṇa* suggests that the society of that era possessed a remarkably advanced awareness of the Earth's layout — a knowledge likely accumulated through extensive travel and careful transmission of earlier geographical records. Such understanding presupposes the use of navigational methods, indicating that people of that time must have been acquainted with instruments guided by magnetic properties. This implies that knowledge of magnetism — and the utilization of magnets or magnetically responsive materials — was already part of their cultural and exploratory practice. It is, therefore, plausible that tools functioning on principles similar to a compass might have existed in rudimentary form, aiding orientation and travel across land and sea.

6. The Paleomagnetic Axis of the Rāmāyaṇa Era — Tracing Lankā through the Surya Siddhānta

In continuation with the previous sessions, where the embedded geographical knowledge of the Rāmāyaṇa era was analyzed, this section attempts to examine how the **Surya Siddhānta** — one of the most ancient Sanskrit treatises on astronomy, geography, and mathematics — preserves the reference to **Lankā**, the kingdom of Rāvaṇa, within its coordinate framework.

The **Surya Siddhānta** distinctly mentions the coordinates of Lankā, the seat of Rāvaṇa who abducted Sītā Devī, and the context of these coordinates aligns with the chronological framework of the Rāmāyaṇa. The references imply that the coordinate system it describes originates from that same era. This connection also suggests that the *Surya Siddhānta* may have served as a later compilation or codification of the ancient geographical knowledge that was already embedded in **Maharshi Vālmīki's Sugrīva's Atlas**.

According to the Surya Siddhānta, the **prime meridian** (the "then" 0 longitude) was an imaginary line passing through the **North Pole** and **Lankā**, intersecting the kingdoms of **Avanti** (modern Ujjain), **Rohitaka** (modern Rohtak), and **Kurukshetra** in northern India. This statement implies that, if one connects these kingdoms on a map, the line would extend southward to pass through Lankā, and northward to reach the then-recognized North Pole.
This brings forth a critical question:

Which North Pole does Surya Siddhānta refer to?
Is it the modern **Geographic North Pole** (90° N, the axis of Earth's rotation), or does it correspond to the **Geomagnetic North Pole** — the magnetic dipole point of that ancient epoch?

It is unlikely that the ancient reference denotes the modern geographic pole, as the concept of the Earth's rotational poles is a relatively modern development, refined between the 16th and 20th centuries CE, and precisely defined only after 1962 with the establishment of the International Earth Rotation and Reference Systems Service (IERS).

In contrast, as observed in the previous sessions, the Rāmāyaṇa reveals a deep awareness of **navigation and magnetism**. Such understanding presupposes the use of navigational aids similar in concept to the **magnetic compass**, which would inherently depend on the geomagnetic field rather than the geographic axis. Thus, the "North Pole" mentioned in the Surya Siddhānta is most logically interpreted as the **Geomagnetic North Pole** of the Rāmāyaṇa Era, not the Geographic North Pole.

To visualize this, the locations of **Avanti (A)**, **Rohitaka (R)**, and **Kurukshetra (K)** may be plotted on a global map (see Fig. 6.1 and 6.2). Together with Lankā, these points delineate an **imaginary Great Circle Path**, which may be identified as the **Prime Meridian of the Rāmāyaṇa Era**.

Figure 6.1

Figure 6.2

An **epigraphic validation** supporting the identification of Sri Lanka as Rāvaṇa's Lankā is found in *Epigraphia Indica*, Vol. 1, Section XLII — *Hampi Inscription of Krishnaraya, Saka 1430 (1508 CE)*, recorded under B – North Face (Archaeological Survey of India, Central Library Acc. No. 58388 / 417.05 E.I.).

The inscription glorifies the Vijayanagara Empire as extending *"from Rāma's Bridge to Mount Sumeru."*
This *Rāma Setu* — also called *Adam's Bridge* — connects today's **Pamban Island** (India) to **Mannar Island** (Sri Lanka), reaffirming that the Lanka referred to in ancient literature is indeed the modern Sri Lanka.

Inscription (Roman Transliteration):
nadīṁ ca yā pūrvendra-śṛṅga-kaṭakāc ca hemācalāntā dā-setīr-yyaṁsā

Translation
"The illustrious Vīra-Nārasiṁha,—seated on a jewelled throne at Vijayanagara, surpassing in fame and wisdom Nṛiga, Nala, Nahusha and all other kings on earth, being voluntarily praised by the Brāhmaṇas and winning all hearts,—ruled the kingdom from (Rāma's) Bridge to (Mount) Sumeru and from the mountain of the east to the western mountain"

Figure 6.3 *(Image courtesy: mapsofindia.com)*

Considering Sri Lanka as Rāvaṇa Lanka, we may reconstruct a **Reference Great Circle Path (R.GCP)** passing through **Lanka, Avanti, Rohitaka, and Kurukshetra**, forming the **Prime Meridian (0° Longitude)** of the Rāmāyaṇa Era. This path, when extended globally, would also intersect the **then Geomagnetic North and South Poles**, defining the **Rāmāyaṇa Geomagnetic Prime Meridian (R.GmPM)**.

Figur 6.4a

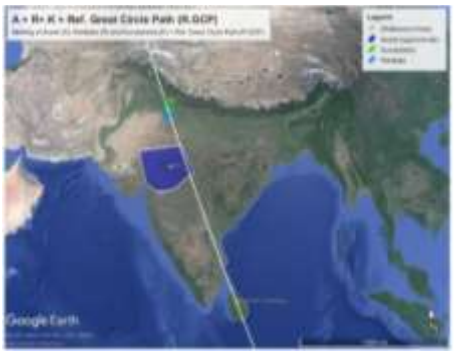

Figure 6.4b

References in Surya Siddhānta:
Sloka
rākṣasālaya-devīkāḥ śailayomadhya-sūtragāḥ |
rohitakam avantī ca yathā saṅgṛhitaṁ saraḥ || 1.62 ||

Translation and Meaning:
Situated upon the line which passes through the haunt of the demons (râkshasa) and the mountain which is the seat of the gods, are Rohîtaka and Avantî, as also the adjacent lake.

The "haunt of the demons" is Lankâ, the fabled seat of Râvaṇa, the chief of the Râkshasas, the abduction by whom of Râma's wife, with the expedition to Lankâ of her heroic husband for her rescue, its accomplishment, and the destruction of Râvaṇa and his people, form the subject of the epic poem called the Râmâyana.

Further Surya Siddhānta mention that **Lankā lies on the Equator**. From an *Ithihosical* perspective, this "Equator" should be understood as the **Geomagnetic Equator**, not the modern Geographic one.

Sloka
yāmyāyāṁ bhārate varṣe laṅkā tad-mahāpurī |
paścime tu ketumālākhye romakākhyā prakīrtitā || 12.39 ||

Translation
In the southern region of Bhārata-varṣa lies Laṅkā, that great city;
and in the western region, known as Ketumala, is the city called Romaka.

Sloka
tāsām upari go yāti viṣuvatyāḥ divākaraḥ |
na tāsū viṣuvac chāyā nākṣarṣyo tri-rātriṣu || 12.42 ||

Translation
Over the countries situated above the equator (Viṣuvat), the Sun moves northward;
in these regions, there is neither the equinoctial shadow nor equality of the three nights

Further Reference from Āryabhaṭīya
Similar to *Sūrya Siddhānta*, the *Āryabhaṭīya* of Āryabhaṭa also refers to the position of **Lankā (the abode of Rāvaṇa)** as lying at **0 longitude and 0 latitude** — which, when interpreted through the above analysis, corresponds to the **Geomagnetic Longitude and Geomagnetic Latitude** of the epoch. The respective verses are as follows:

Sloka (Āryabhaṭīya Golapāda 4.10)
udayāstamayanimittaṁ nityaṁ pravahena vāyunā kṣiptā |
laṅkāsamapaścimago bhapañjaraḥ sagraho bhramati || 4-10 ||

Translation
Driven constantly by the prevailing wind for the purpose of sunrise and sunset,
the globe of the heavens (bhapañjaraḥ), along with the planets (sagrahaḥ),
revolves westward, maintaining alignment with Lankā (the central reference point).

Explanation
Āryabhaṭa describes the apparent westward motion of the celestial sphere, emphasizing that all heavenly bodies appear to move from east to west due to Earth's rotation. Here, **Lankā is treated as the zero-longitude reference**, the prime meridian of the ancient coordinate system.

Sloka (Āryabhaṭīya Golapāda 4.14)
sthalajalamadhyāllaṅkā bhūkakṣyā yā bhavet caturbhāge |
ujjayinīṁ laṅkāyāḥ taccaturthāṁśe samottarataḥ || 4-14 ||

Translation
Lankā lies midway between land and water upon Earth's equatorial circle;
Ujjayinī (modern Ujjain) is situated one quarter of the circle north of Lankā.

Explanation:
Āryabhaṭa defines **Lankā as the equatorial origin (0° latitude)** and **Ujjayinī** as one-quarter meridian arc northward — approximately the **Tropic of Cancer**.
This clearly shows that **ancient Indian astronomers standardized their geodetic system** using Lankā as the **Prime Meridian and Equatorial Reference Point**, geographically corresponding to **Sri Lanka**, the same region identified in *Sūrya Siddhānta* and *Rāmāyaṇa* traditions as **Rāvaṇa's Lankā**.

By applying these references, and considering the earlier epigraphic confirmation that Sri Lanka is Rāvaṇa Lanka, we can reconstruct the **Rāmāyaṇa Era Geomagnetic Model**:

- **R.GmNP (Rāmāyaṇa Geomagnetic North Pole):** 77.50° N, 45.00° W
- **R.GmSP (Rāmāyaṇa Geomagnetic South Pole):** 77.50° S, 135.00° E
- **R.Gm(0, 0)** (Intersection of Rāmāyaṇa Prime Meridian and Equator): 7.39223° N, 80.85912° E

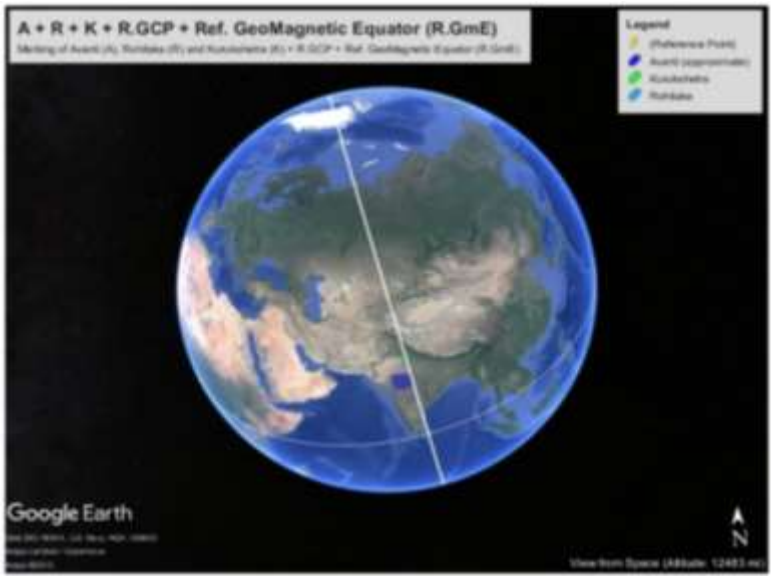

Figure 6.5a

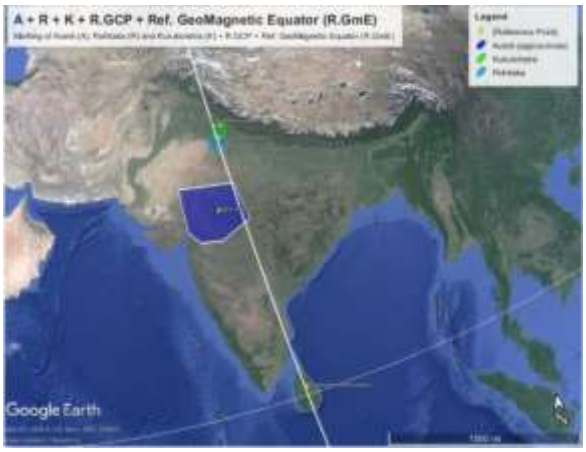

Figure 6.5b

Similarly, constructing a **modern (2025 CE) Geomagnetic Model**, assuming the current dipole positions (80.85° N, 72.76° W and 80.85° S, 107.24° E) and passing through Sri Lanka, yields:

- **2025CE.GmNP:** 80.85° N, 72.76° W
- **2025CE.GmSP:** 80.85° S, 107.24° E
- **2025CE.Gm(0, 0):** 8.20821° N, 80.79721° E

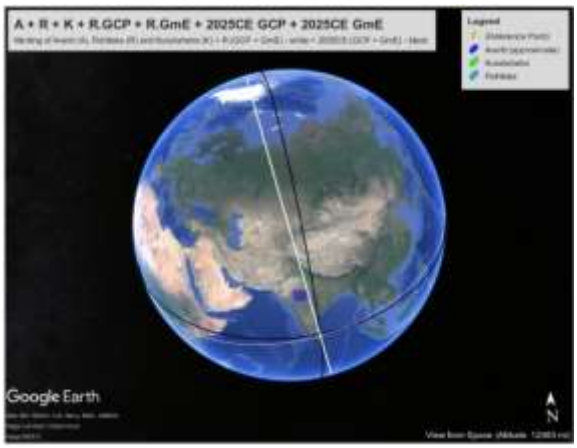

Figure 6.6a

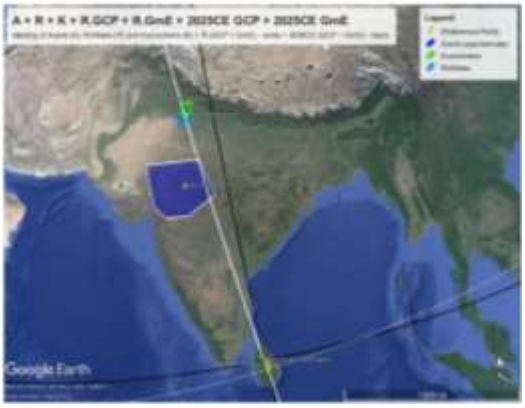

Figure 6.6b

The difference between **R.Gm(0, 0)** and **2025CE.Gm(0, 0)** is minimal — approximately **+0.82° latitude** and **–0.06° longitude** — well within the latitudinal span of Sri Lanka.

Given Sri Lanka's geographical extent (5.9° N – 9.8° N latitude, 79.7° E – 81.9° E longitude), both intersections lie within its boundaries.

The current predominant scientific datings based on astronomical analysis are those proposed by **Pushkar Bhatnagar** and **Nilesh Nilkanth Oak** in their respective works, *"Dating the Era of Lord Rama"* and *"12209 BCE: Rama–Ravana Yuddha."*

According to their calculations, the Rāmāyaṇa Era corresponds approximately to **5100 BCE** or **12,200 BCE**, with the proposed dates of birth of Śrī Rāma being **10 January 5114 BCE** and **29 November 12,240 BCE**, respectively.

Considering these chronological ranges—and the anchor frame established in Sessions 4 and 5, which indicated that the Rāmāyaṇa must have occurred **within the last 40,000 years BP**—we observe that the **latitudinal and longitudinal differences** between **R.Gm(0, 0)** and **2025 CE Gm(0, 0)** remain minimal (approximately +0.81598° latitude and −0.06191° longitude). This negligible deviation demonstrates that the intersection point of the ancient geomagnetic prime meridian and equator, **R.Gm(0, 0)**, would consistently fall **within the geographical bounds of Sri Lanka**, regardless of whether the Rāmāyaṇa Era aligns with the 12,000 BCE or 5,000 BCE timeframe.

When these findings are further **aligned with the anthropological records of the Jarawa and Shompen tribes**—whose uninterrupted habitation of the Andaman and Nicobar Islands dates back approximately 40,000 years—it strengthens the conclusion that the geomagnetic configuration of the Rāmāyaṇa Era placed **Lankā precisely on the ancient Geomagnetic Equator that passes through Sri Lanka.**

Hence, combining **Surya Siddhānta's geography**, **epigraphic evidence**, and **paleomagnetic analysis**, it can be concluded that — **Sri Lanka is indeed Rāvaṇa Lankā.**

7. Ancient Scriptures and Modern Oceanography — The Waters Between Mainland Bhārata and Rāvaṇa Lanka

It is a scientifically well-established fact that **India and Sri Lanka have remained parts of the same continental plate since at least the Late Triassic period**, continuing through the Jurassic and to the present. This geological continuity has been confirmed through numerous peer-reviewed studies, including:

- Nature: Plate Tectonics in the Indian Ocean Region
- Cambridge University Press: *Sri Lanka in Gondwanaland and the Evolution of the Indian Ocean*
- AGU: *The Geological History of India and Sri Lanka in Relation to Plate Tectonics*
- NatStrat: *The Umbilical Cord Connecting India and Sri Lanka*
- Research Gate: *Geological History of India and Sri Lanka*

Building upon this scientific foundation, this session continues the analysis with two objectives:

1. To examine the **causes and context** for the extension of oceanic waters between mainland India and Sri Lanka.
2. To reinforce, with combined scriptural and scientific reasoning, that **Sri Lanka is indeed the Rāvaṇa Lanka** of the Rāmāyaṇa.

Scriptural Record of the Land and Waters

Multiple passages in **Vālmīki Rāmāyaṇa** indicate that the region between mainland India and Sri Lanka was once **connected by land**, and that the extension of sea waters occurred later—specifically during the era of **King Sagara**, an ancestor of Śrī Rāma in the Ikṣvāku dynasty.

Maharṣi Vālmīki records this phenomenon repeatedly, in at least **five distinct contexts**, suggesting that he was consciously and *Ithihosically* embedding historical memory of a major geographical transformation.

Reference 1 — Bāla Kāṇḍa (Sargas 39 – 41)

Three consecutive chapters describe the sons of King Sagara digging into the earth across multiple regions. Though couched in poetic metaphor, the repeated imagery of excavation implies a massive geological event—consistent with an expansion of the sea in the area between India and Lanka.

Reference 2 — Sundara Kāṇḍa 1.89

Context:

The Sea God (Saagara) thinking to himself of helping Hanuma how is crossing the sea/ocean in support of Ikshwaku race (of King Sagara) because of whom my presence here is today.

Sloka

aham ikṣvāku-nāthena sagareṇa vivardhitaḥ।

ikṣvāku-sacivaś cāyaṁ nāvasīditum arhati॥ 5.1.89॥

Translation

'I expanded on account of a scion of the Ikshvaku race (Sagara) and I should not do anything to make him (Hanuman) suffer since he is the minister helping the Ikshvaku race

Reference 3 — Sundara Kāṇḍa 1.113

Context

Mainaka (the flying mountain that rose from the sea) talking to Hanuma who is crossing the sea. Expressing the wish of the

Sea God (Saagara) of Mainaka helping Hanuma who was on the duties of Ikshvaku race (Raghu Vamsa), who were the very reason for the sea to get extended and being here.

Sloka
rāghavasya kulē jātairudadhiḥ parivardhitaḥ.
sa tvāṅ rāmahitē yuktaṅ pratyarcayati sāgaraḥ ।।5.1.113।।

Translation
The son of Rama's family, Sagara, has extended the ocean in the past.It is most appropriate that he (the god of the sea) honours you in return as you have set out in the service of Rama.

Reference 4 — Yuddha Kāṇḍa 19.31
Context
Hanuma and Sugreeva asking advice from Vibhishana on how to cross the waters. In the context vibhishana talking about how the water / saagar came into exsistance at this location (b/w bharat & lanka)

Sloka
khānitassagarēṇāyamapramēyōmahōdadhiḥ .
kartumarhatirāmasyajñātē: kāryaṅmahāmatiḥ ।।6.19.31।।

Translation
This immeasurable great ocean was excavated by Sagara (A King of the Ikshvaku dynasty). The great ocean needs to do the task of Rama who is of the same race.

Reference 5 — Yuddha Kāṇḍa 22.48
Context:
Nala's conversation with Sri Rama in reference to the sea god.

Sloka
ayaṅhisāgarōbhīmassētukarmadidṛkṣyāḥ .
dadaudaṇḍabhayādgādhaṅrāghavāyamahōdadhiḥ ।।6.22.48।।

Translation
This fearsome ocean of mighty Sagara (dug by Sagara) then allowed a passage for Rama, out of fear of punishment and also to witness the building of a bridge.

On the Term "Śatayojanē"
The mention of *"śatayojanē"*—meaning "a hundred yojanas"—while describing the distance of Laṅkā (Rāvaṇa's capital) from the southern coast during the search expedition for Sītā, has often led to interpretative confusion. If taken literally, a hundred yojanas (approximately 1,200 kilometers) would far exceed the actual distance between mainland India and Sri Lanka.

However, this confusion dissolves when compared with another usage of the same expression *"śatayojanē"* elsewhere in the Rāmāyaṇa, where it is employed to describe the expanse of a single banyan tree. The relevant verses are presented below for comparative clarity.

Sloka
itō dvīpassamudrasya sampūrṇē śatayōjanē.
tasminlaṅkāpurī ramyā nirmitā viśvakarmaṇā।।4.58.20।।

Translation
The beautiful city of Lanka is an island, a hundred yojanas away from here.It was built by Visvakarma.

Sloka
tatrāpaśyatsa mēghābhaṅ nyagrōdhamṛṣibhirvṛtam।।3.35.27।।
samantādyasya tāśśākhāśśatayōjanamāyatāḥ.

Translation
He saw a banyan tree with its branches spread on all sides measuring a hundred
yojanas, looking like a cloud and providing shelter to the sages.

As it would be geophysically impossible for a single tree to extend over a distance of 1,200 kilometers, it becomes clear that the term *"śatayojanē"* is not a literal geodetic measure. Rather, it serves as a **poetic expression denoting great extent or distance** within a given context.

Thus, the usage of *"śatayojanē"* in the Rāmāyaṇa must be understood *Ithihosically*—that is, as an instance of poetic exaggeration intended to convey vastness rather than numerical precision.

Correlation with Śrīmad-Bhāgavatam and Mahābhārata

As the textual references so far affirm, the digging described in the Rāmāyaṇa took place between the southern coast of Bhārata and Rāvaṇa's Laṅkā—today's India and Sri Lanka—resulting in the extension of the ocean waters that now separate them.

To further reaffirm that the Rāvaṇa Laṅkā referred to in the epic is indeed **Sri Lanka**, we turn to additional ancient sources: the *Śrīmad-Bhāgavatam* and the *Mahābhārata*, both composed by **Maharşi Vyāsa**, who lived during the period of the latter Itihāsa.

In the *Śrīmad-Bhāgavatam* (Canto 5: *The Creative Impetus*, Chapter 19: *A Description of the Island of Jambūdvīpa*), Slokas 29–30 describe the very same episode of **King Sagara**, an ancestor of Śrī Rāma in the Ikṣvāku dynasty, whose sons excavated the earth in search of the sacrificial horse. The result of this extensive excavation, as stated, was the **formation of several islands**, among which *Siṁhala Dvīpa* (Sinhala Island) and *Laṅkā* are explicitly mentioned.

This is significant because the *Śrīmad-Bhāgavatam* not only corroborates the geological transformation narrated in the *Rāmāyaṇa* but also records the emergence of *Siṁhala Dvīpa*—a term that linguistically and historically aligns with **Sinhala**, the major spoken language of modern Sri Lanka. The fact that Sri Lanka even today is an island union composed of multiple adjoining landmasses strengthens this continuity.

Reference: Śrīmad-Bhāgavatam 5.19.29–30 – vedabase.io

Translation

(29–30 of Chapter 19, Canto 5, Śrīmad-Bhāgavatam by Maharşi Vyāsa, who also composed the Mahābhārata — another Itihāsa akin to the Rāmāyaṇa)

Śrī Śukadeva Gosvāmī said: My dear King, in the opinion of some learned scholars, eight smaller islands surround Jambūdvīpa. When the sons of Mahārāja Sagara were searching all over the world for their lost horse, they dug up the earth, and in this way eight adjoining islands came into existence. The names of these islands are Svarṇaprastha, Candraśukla, Āvartana, Ramaṇaka, Mandara-hariṇa, Pāñcajanya, Siṁhala and Laṅkā.

The association of Siṁhala and Laṅkā in the same context—both products of the same geophysical transformation—confirms that **Sri Lanka was historically perceived as an archipelagic region**, comprising several small islands formed through the geological process of land excavation and marine ingress described by both Vālmīki and Vyāsa.

Further, the Mahābhārata reinforces this connection. In the Vana Parva (3.51.22–26), the text mentions Siṁhala and Laṅkā together, indicating that during the Mahābhārata period too, the two names were understood as part of a single geographical and cultural continuum:

"…including the rulers of the Siṁhalas, the barbarous mlecchas, the natives of Laṅkā…"

(Mahābhārata, Vana Parva, 3.51.22–26; English translation available at sacred-texts.com)

This consistent association across the *Rāmāyaṇa*, *Śrīmad-Bhāgavatam*, and *Mahābhārata* reveals an unbroken thread of **Itihāsic geography and cultural identity**. The linguistic survival of the term *Siṁhala*—now *Sinhala*—as the predominant language of Sri Lanka further strengthens the historical link between **Rāvaṇa Laṅkā** and **modern Sri Lanka**.

Therefore, from a combined *Itihāsic*, linguistic, and geological perspective, the *Laṅkā* described in these ancient sources corresponds unmistakably to the island nation of **Sri Lanka**.

Oceanographic Evidence

If the ancient scriptures describe a landmass once continuous between mainland India and Sri Lanka and later submerged by oceanic waters, then traces of **ancient rivers and stream channels** should logically persist beneath the seafloor in that region.

Modern oceanographic studies substantiate this assertion.

- **K.M. Dubey et al., 2023 – "Evolution of Ramasetu region as a link between India and Sri Lanka during the Late Pleistocene and Holocene"** (Cambridge University Press) reports multiple **buried river and stream channels** extending across the Adam's Bridge region, consistent with the existence of a **formerly subaerial landscape** that connected the two landmasses.
  (Quaternary Research, DOI: 10.1017/qua.2022.41)

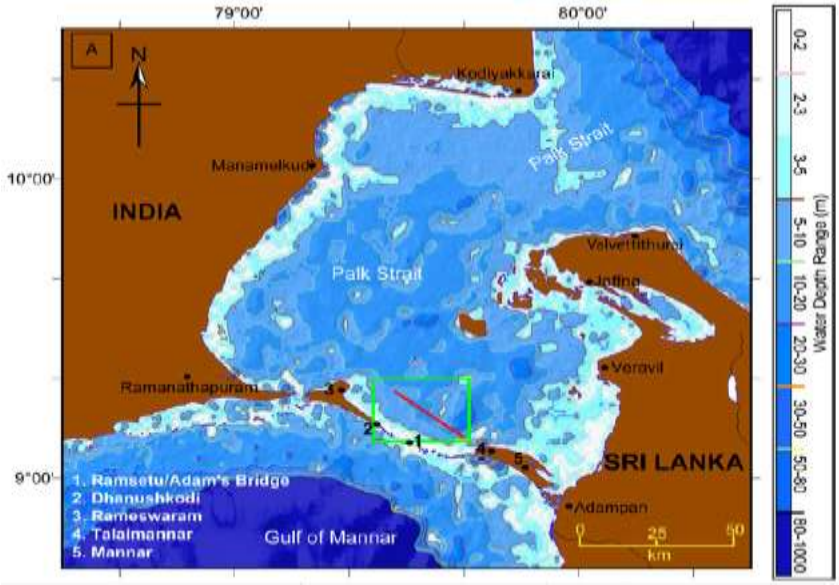

Figure 7.1a
(image courtesy: K.M. Dubey et al. paper)

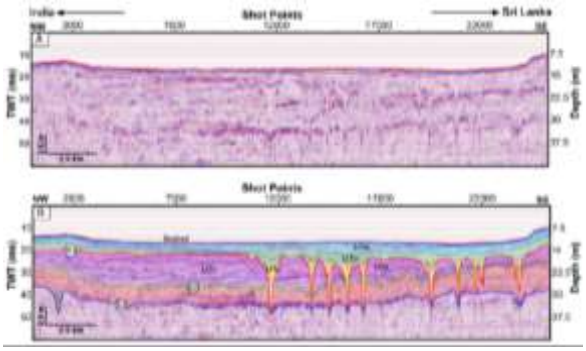

Figure 7.1
(Image courtesy: K.M. Dubey et al. paper)

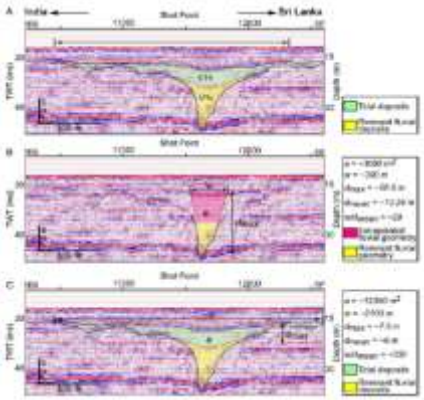

Figure 7.1c
(Image courtesy: K.M. Dubey et al. paper)

These findings support the *Itihāsic* narrative that the Rāma Setu area was **not a naturally deep ocean**, but a **previously excavated and partially submerged tract**—the same "dug-up" region described in the Rāmāyaṇa as the work of King Sagara. This would inherently make the seabed **shallower** compared to the surrounding oceanic depths.

- **Giribabu Dandabathula et al., 2024 – "Physical features of Adam's Bridge interpreted from ICESat-2 based high-resolution digital bathymetric elevation model"** (*Nature Scientific Reports*) further identifies **shallow ridges and sand-dune formations** beneath the water surface. These geomorphological features reveal that **Rāma Setu was constructed precisely over such elevated natural ridges**, where the depth was minimal, enabling **filling of shallow gaps** rather than full-scale underwater construction.

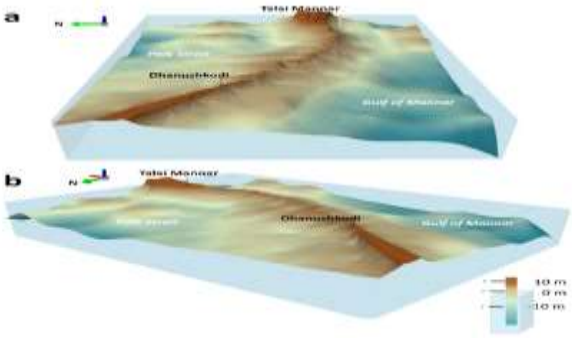

Figure 7.2a
(Image courtesy: Giribabu Dandabathula et al. paper)

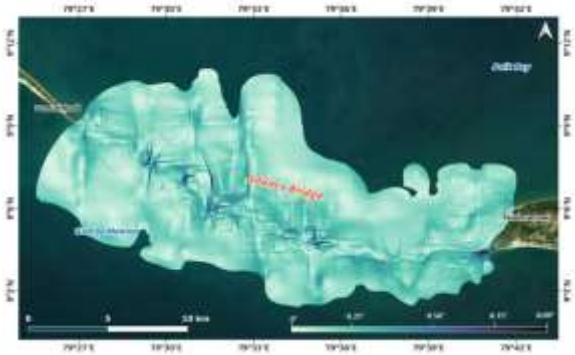

Figure 7.2b
(Image courtesy: Giribabu Dandabathula et al. paper)

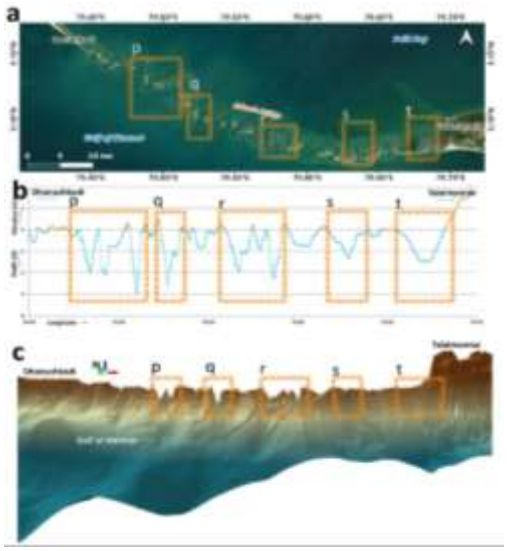

Figure 7.2c
(Image courtesy: Giribabu Dandabathula et al. paper)

Thus, both textual and scientific evidence converge to show that **Rāma Setu was built upon a pre-existing, partially submerged terrain**, chosen strategically for its **natural elevation and shallowness**, transforming an ancient **dug-up landscape** into a navigable land bridge linking Bhārata and Laṅkā.

***Itihāsic* Interpretation of Rāma's Three-Day "Waiting" (sometimes referred to as "Penance")**
In the *Yuddha Kāṇḍa* of *Vālmīki Rāmāyaṇa*, it is mentioned that Rāma observed a vow and remained by the seashore for three nights, performing what is described as penance or prayer to the Ocean God (*Sāgara*).
Sloka
tasyarāmasyasuptasyakuśāstīrṇēmahītalē .
niyamādapramattasyaniśāstisrō.ticakramuḥ ||6.21.10||

Translation
Following the scriptural injunction, Rama who was devoted to his sacred vow, while sleeping on the ground spread with Kusha grass, spent a time of three nights there.

Sloka
satrirātrōṣitastatranayajñōdharmavatsalaḥ .
upāsatatadārāmassāgaraṅsaritāṅpatim ||6.21.11||

Translation
Remaining there for three nights, Rama who was skilled in policy and fond of piety, waited upon the ocean, the lord of rivers.

When examined *Ithihosically*, these verses can be understood not merely as devotional penance but as a **metaphorical representation of scientific and strategic preparation**—a **three-day reconnaissance and assessment** of the sea and its geological features before constructing the *Setu*.

Given that the region between mainland Bhārata and Laṅkā was already a **dug-up landscape from King Sagara's era**, the area naturally contained **shallower waters, ridges, and sandbanks**. Rāma's so-called penance can thus be interpreted as:

1. **Systematic observation of the tides and currents** to understand the sea's temperament.
2. **Surveying seabed depth and elevation** with the help of Nala, the chief engineer, to locate natural shallow ridges.
3. **Determining the alignment** for the bridge along the most geologically stable and shallow course.

Hence, Rāma's three-day "penance" before the Sea God may signify a **ritualized retelling of practical survey and analysis**, blending **spiritual reverence with scientific foresight**.

Moreover, the reference to **Mainaka (Minaka) Mountain**—the golden peak that rose from the ocean to offer rest to Hanumān during his flight to Laṅkā (referred earlier)—when read *Ithihosically*, reflects the **existence of multiple sand-dune or ridge-like elevations** scattered across the shallow seabed in this very region. These natural outcrops, visible above the water at intervals, match the modern bathymetric descriptions of **submerged dune systems** across the dug-up area (Rāma Setu and its surroundings), not limited to the bridge zone alone.

Thus, through the ***Itihāsic*** (*Ithihosic)* lens, what appears as mythic narrative in the *Rāmāyaṇa* reveals a poetic documentation of real geophysical phenomena:

- The survey of shallow coastal topography,
- The selection of a pre-existing ridge system, and
- The construction of a land bridge by filling shallow gaps.

In this manner, *Maharshi Vālmīki's* genius emerges once again—transforming geoscientific observation into sacred storytelling, where **faith, geography, and engineering converge into eternal literature**.

Conclusion
Through both *Ithihosic* narration and modern oceanographic validation, this session reaffirms that the **waters between mainland Bhārata and Laṅkā (Sri Lanka)** were not originally oceanic, but the result of a later **marine transgression** over a previously continuous landmass.

The **repeated references** in *Vālmīki Rāmāyaṇa* to *Sāgara* being "expanded" by King Sagara—corroborated by the *Śrīmad Bhāgavatam* and the *Mahābhārata*—collectively preserve the record of a geological transformation. The "digging of the earth" by Sagara's sons poetically encodes an ancient event of land excavation followed by **marine transgression**, giving rise to the present-day channel between India and Sri Lanka.

Modern oceanographic research harmonizes with this ancient record. Studies such as **K.M. Dubey et al. (2023)** and **Giribabu Dandabathula et al. (2024)** identify **buried river systems, elevated ridges, and shallow sandbanks** across the Rāma Setu region—indicating a once-subaerial terrain later submerged by rising seas. These natural ridges and shallows explain both the **choice and feasibility** of constructing **Nala Setu (Rāma Setu)** precisely at this location, by bridging the gaps between naturally elevated formations.

The *Ithihosic* interpretation of Rāma's **three-day "penance"** further reveals an ancient tradition of **survey and selection**, disguised as ritual observance. His waiting on the shores for three nights symbolizes a meticulous study of tidal conditions and seabed ridges. Similarly, the reference to **Mainaka (Minaka) Mountain** represents the existence of multiple dune-like ridges within the excavated region — a feature consistent with modern bathymetric surveys.

Equally significant is the **cultural continuity** embedded in the names and languages. The *Śrīmad Bhāgavatam* (5.19.29–30) explicitly names both **Siṁhala Dvīpa and Laṅkā** among the islands formed after Sagara's excavation — a reference reaffirmed in the *Mahābhārata* (Vana Parva 3.51.22–26), where **Siṁhala** and **Laṅkā** are mentioned together. The enduring presence of the **Sinhala** language in modern Sri Lanka preserves this legacy, linguistically connecting the present nation to its ancient identity as **Rāvaṇa's Laṅkā**.

Taken together, these evidences demonstrate that—

- The region of Rāma Setu lies over a **naturally shallow, previously excavated terrain**;
- The **bridge was engineered** by filling gaps between pre-existing ridges;
- The **land-sea transformation** described in the epics reflects an actual **marine transgression**; and
- The **civilizational memory** of *Siṁhala-Laṅkā* continuity survives unbroken from Itihāsa to the modern era.

Thus, when read *Ithihosically*, the *Rāmāyaṇa* emerges not merely as divine literature but as an **encoded geochronicle** — preserving empirical knowledge of Earth's shifting form through sacred verse.

In conclusion, the convergence of **scriptural testimony, linguistic continuity, geological reconstruction, and oceanographic data** firmly establishes that **Sri Lanka is the historical Laṅkā of Rāvaṇa**, and that **Rāma Setu (Nala Setu)** stands as both an engineering marvel and a living testament to the scientific sophistication of the Ramayana era — a bridge not only across the sea, but across time, civilization, and consciousness.

8. Conclusion — Integrating Itihāsa and Earth Science

The journey through this paper has demonstrated that the *Rāmāyaṇa* is far more than an epic of devotion and ethics—it is a civilizational record where poetic symbolism, geographical precision, and scientific foresight converge.

When examined *Ithihosically*, Vālmīki's composition emerges not as mere poetic narrative but as a structured account reflecting early human understanding of magnetism, navigation, and terrestrial organisation.

The synthesis of ancient Sanskrit texts (*Sūrya Siddhānta*, *Vālmīki Rāmāyaṇa*, *Śrīmad Bhāgavatam*, and *Mahābhārata*) with contemporary disciplines such as **paleomagnetism, oceanography, and tectonic geology** yields a coherent and verifiable picture:

- The *Prime Meridian* of the Rāmāyaṇa era, passing through Kurukshetra–Rohitaka–Avanti–Laṅkā, aligns with the reconstructed **geomagnetic meridian** of that period.
- The *Laṅkā* described as situated on the equatorial line corresponds to the **geomagnetic equator**, not the modern geographic one.
- The **Rāmāyaṇa-era geomagnetic intersection (R.Gm 0,0)** falls within modern Sri Lanka, consistent with the 2025 CE geomagnetic alignment—indicating continuity through nearly at least 40,000 years.

Scriptural testimony of **King Sagara's excavation** finds affirmation in marine geoscience. Sediment profiles and high-resolution bathymetry reveal paleo-river networks and ridge formations beneath the Rāma Setu region including the dug-up area around the Setu, confirming ancient land continuity and subsequent **marine transgression**. The *Setu* constructed by Nala utilized these natural ridges, converting a submerged plateau into a traversable causeway.

Linguistic and cultural continuities—from the *Siṁhala Dvīpa* of Vyāsa's time to the modern Sinhala identity—further attest to Sri Lanka's uninterrupted civilizational memory as Ravana's Laṅkā.

Through this interdisciplinary exploration, the *Rāmāyaṇa* stands reaffirmed as **historical Itihāsa**—a precise, poetic, and profoundly scientific record of an ancient epoch. The convergence of textual, magnetic, and geological evidence collectively leads to one inevitable conclusion:

9. Acknowledgements

The author expresses sincere gratitude to all those who extended their valuable support and encouragement during the course of this research.

Special thanks are due to:

- **Dr. M. Venkateshwarlu**, Chief Scientist, Paleomagnetism, Council of Scientific & Industrial Research – National Geophysical Research Institute (CSIR–NGRI), Hyderabad, Telangana, India.
- **Dr. Sriram Gullapalli**, Principal Scientist, Council of Scientific & Industrial Research – National Institute of Oceanography (CSIR–NIO), Dona Paula, Goa, India.
- **Prof. Sunil Kumar Singh**, Director, Council of Scientific & Industrial Research – National Institute of Oceanography (CSIR–NIO), Dona Paula, Goa, India.
- **Dr. Sama Arun Kumar Reddy**, Regional Director, Indira Gandhi National Centre for the Arts (IGNCA), Regional Centre – Goa, Ministry of Culture, Government of India.
- **Shri Suddamalla Sreekanth Reddy**, Senior Conservation Assistant, Old Goa Sub Circle, Archaeological Survey of India (ASI), Goa Circle, Goa, India.
- **Dr. Aditya Kumar Singireddy**, Assistant Epigraphist, Office of the Director (Epigraphy), Archaeological Survey of India, Mysuru, Karnataka, India.
- **Shri Andhekar Sathish Lal**, Renowned Tribal Photographer of India, Associate of The Royal Photographic Society of Great Britain (in Natural History).

The author also extends heartfelt thanks to **my loving family** for their constant support, patience, and encouragement throughout this journey.

10. References / Bibliography

Primary Ancient Texts and Classical Sources

- Āryabhaṭa. (c. 499 CE). *Āryabhaṭīya*. (W. E. Clark, Trans.). University of Chicago Press; reprint: D.K. Printworld (P)

Ltd, New Delhi.
- Maharṣi Vālmīki. (n.d.). *Śrīmad Vālmīki Rāmāyaṇa* (English trans., 2 Vols.). Gorakhpur: Gita Press.
- Maharṣi Vālmīki. (n.d.). *Śrīmad Rāmāyaṇamu* (Telugu trans., 3 Vols.). Gita Press.
- Maharṣi Vālmīki. (n.d.). *Śrīmad Rāmāyaṇāntargata* (Telugu ed., 7 Vols.). Vavilla Ramaswami Sastri & Sons.
- Maharṣi Veda Vyāsa. (n.d.). *Śrī Mahābhāratamu* (Telugu trans., 7 Vols.). Gita Press.
- Maharṣi Veda Vyāsa. (n.d.). *Śrīmad Bhāgavata Mahāpurāṇamu* (Telugu trans., 2 Vols.). Gita Press.
- *Śrīmad Bhāgavatam (Canto 5, Chapter 19)*. (n.d.). Retrieved from https://vedabase.io/en/library/sb/5/19/
- *Mahābhārata (Vana Parva 3.51.22-26)*. (Tr.) at The Sacred Texts Archive. Retrieved from https://sacred-texts.com/hin/m03/m03051.htm
- *Sūrya Siddhānta*. (Trans. E. Burgess, ed. S. Jain). Varanasi: Chowkhamba Sanskrit Series.
- *Sūrya Siddhānta*. (Trans. E. Burgess, ed. P. L. Gangooly). Calcutta: University of Calcutta.
- Yerramalli Ramachandra Rao, Dr. (n.d.). *Surya Siddhānta (Telugu translation)*. Hyderabad.

Online Scriptural Editions
- *Vālmīki Rāmāyaṇa Multilingual Digital Edition*. Indian Institute of Technology Kanpur. https://www.valmiki.iitk.ac.in/
- *Vālmīki Rāmāyaṇa Online*. https://www.valmikiramayan.net/

Modern Scientific and Research Publications
- Burgess, E. (Trans.), & Gangooly, P. L. (Ed.). (1860 / reprint). *The Sūrya Siddhānta: An Ancient Indian Treatise on Astronomy*. University of Calcutta.
- Clark, W. E. (1930). *The Āryabhaṭīya of Āryabhaṭa, with Notes and Translation*. University of Chicago Press.
- Dandabathula, G., Ghosh, K., Hari, R., Sharma, J., Sharma, A., Padiyar, N., Poonia, A., Bera, A. K., Srivastav, S. K., & Chauhan, P. (2024). *Physical features of Rāma Setu interpreted from ICESat-2 based high-resolution digital bathymetric elevation model*. *Nature Scientific Reports*, 14, Article 65908. https://www.nature.com/articles/s41598-024-65908-2
- Dubey, K. M., Chaubey, A. K., Gaur, A. S., & Joglekar, M. V. (2023). *Evolution of Rāmasetu region as a link between India and Sri Lanka during the Late Pleistocene and Holocene*. *Quaternary Research*, Cambridge University Press. DOI: 10.1017/qua.2022.41
- *The Umbilical Cord Connecting India and Sri Lanka*. (2022). National Strategy (NatStrat) Institute. Retrieved from https://www.natstrat.org/articledetail/publications/the-umbilical-cord-connecting-india-and-sri-lanka-164.html
- *Sri Lanka in Gondwanaland and the Evolution of the Indian Ocean*. *Geological Magazine*, Cambridge University Press. https://www.cambridge.org/core/journals/geological-magazine/article/abs/sri-lanka-in-gondwanaland-and-the-evolution-of-the-indian-ocean/58610BFB1A02FD9D8B66C9E023CE008F
- *The Geological History of India and Sri Lanka in Relation to Plate Tectonics*. (AGU Publications). Retrieved from https://agupubs.onlinelibrary.wiley.com/doi/full/10.1002/jgrb.50079
- *Plate Tectonics in the Indian Ocean Region*. (2021). *Nature Scientific Reports*. https://www.nature.com/articles/s41598-021-90172-z
- *The Geological History of India and Sri Lanka in Relation to Plate Tectonics – ResearchGate Visual Archive*. https://www.researchgate.net/figure/The-geological-history-of-India-and-Sri-Lanka-in-relation-to-plate-tectonics-Sri-Lanka_fig1_321311027
- *UNESCO (2010). The Jarawa Tribal Reserve Dossier: Cultural & Biological Diversities in the Andaman Islands.* UNESDOC Digital Library. https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000187690
- Sircar, Pronod Kumar. (2004). *The Primitive Tribes of Andaman & Nicobar Islands.* New Delhi: Akansha Publishing House.

Historical and Epigraphic Records
- Epigraphia Indica, Vol. I, Section XLII – Hampi Inscription of Krishnaraya (Saka 1430 / 1508 CE). Archaeological Survey of India, Central Library Acc. No. 58388 / 417.05 E.I.
- Maps of India – Reference Geographical Data. (https://www.mapsofindia.com/)

Secondary Research Works and Authors Cited
- Bhatnagar, Pushkar. (2004). *Dating the Era of Lord Rama.* New Delhi: Rupa Publications.
- Oak, Nilesh Nilkanth. (2019). *12209 BCE – Rama-Ravana Yuddha: Subbu Publication*
- Sanātana Gosvāmī. (15th century CE). *Bṛhad Bhāgavatāmṛta.* Verse 2.1.110.

Digital Maps and Geospatial Sources
- Google Earth Pro (Version 7.x). (2025). Author-generated topographical imagery and path analysis marking Great Circle Paths, Geomagnetic Equators, and Rama Setu region between India and Sri Lanka. Google LLC. Retrieved from https://earth.google.com

रामचरितमानस में पक्षियों का कलरव

चुंडूरी कामेश्वरी
(kameswari.sahitya@gmail.com)

पक्षी, पंछी, खग, गगनचर, विहंग, चिड़िया, जितने सुंदर नाम, पर्याय, उतना ही उनका मीठा कलरव। प्रकृति प्रेमी मनुष्य एक ओर जहाँ फल-फूल, पत्ते, हरियाली देख प्रसन्न हो जाता है, बादलों, जलधाराओं, समुद्र, नदी-नद, नालों के विस्तार में खो जाता है, यथा पक्षियों का कलरव उसे मुग्ध कर देती है। उसके मन को खुशी से भर देती है। इनकी मीठी तान में वह अपनी सुध-बुध खो देता है। तोता, मैना, मोर, पपीहा, कोयल, कौआ, कबूतर, चील, गिद्ध, भिन्न-भिन्न प्रकार के नाम हैं। रामचरित मानस में हम देखते हैं किन-किन पक्षियों के कलरव ने किस संदर्भ में भिन्न-भिन्न पात्रों का मन मोह लिया।

1. प्रस्तावना

प्रकृति के फल-फूल, पत्ते, बादल, पर्वत, पहाड़, नदी, नद-नाले, पशु-पक्षी, मनुष्य के साथी रहे हैं। सुख-दुःख में मूक सांत्वना देते हुए वे उसका मन बनाए रखते हैं। वह चाहे उन्हें देखें या नजरअंदाज कर दे, वे उसके लिए सदा, फलते-फूलते, बहते हैं और उसके मन को आनंद प्रदान करने का प्रयास करते हैं। मौसम के अनुसार अपना रंग-रूप आकार बदलते हुए मनुष्य के मन को रंजित करते हैं। पशु-पक्षी और प्रकृति, मनुष्य के बीच एक समन्वय स्थापित करते हैं। अपने कलरव से मनुष्य के मन को अनायास ही अपनी ओर खींच लेते हैं। कभी-कभी संगी-साथी के अभाव में वे उसका साथ देते हैं, उसे प्रेरित करते हैं, प्रोत्साहन देते हुए प्रतीत होते हैं। तुलसीदास कृत रामचरितमानस का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि कौआ, कोयल, मोर, पपीहा, आदि भिन्न-भिन्न पंछी समय-समय पर मानस के विभिन्न पात्रों के सहायक समान व्यवहार करते हैं और अपना अनोखा रूप प्रदर्शित करते हैं। आइए, हम इनका विस्तार से परिचय प्राप्त करें।

2. विस्तार

रामचरितमानस में विभिन्न पक्षी कलरव करते हुए पात्रों-सा व्यवहृत करते हैं। वे सुन, बोल सकते हैं, मानवों की तरह भावुक होते हुए भी चित्रित किये गये हैं तो कभी उसके सहायक भी बन जाते हैं। वे उसे कभी चोंच या पंजे से मारकर दुःख पहुँचाते हैं तो कभी बचाव रूप में भी वे प्रहार करते से दीख पड़ते हैं। यूँ तो कौआ, कोयल, तोता, मोर, हंस मनुष्य के अत्यंत समीप रहने वाले पंछी हैं, परंतु चकवा, चकोर, चातक, हंस, गरुड़ आदि विहंग प्रकृति में रहते हुए अपनी विशिष्टताओं से मनुज के मन को सुकून प्रदान करते हैं।

रामचरितमानस के सातों कांडों में इन पंछियों के प्रसंगों को चिह्नित करने का प्रयास किया गया है -

अ. काक / कौआ / वायस - काकभुशुण्डि-गरुड़ संवाद, राम कथा का आधार है, जनमानस को राम कथा में गोते खाने का अवसर प्रदान करता है। (बा. का. दो. 120 ख)

बालकाण्ड के प्रारंभ में प्रयागराज के प्रभाव को अलौकिक और अकथनीय कहते हुए, इसमें स्नान करने से तत्काल फल मिलने की बात कही गया है, इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। कहते हैं कि इसमें स्नान करने से कौए कोयल बन जाते हैं और बगुले हंस बन जाते हैं –

मज्जन फल पेखिअ ततकाला । काक होहिं पिक बकउ मराला ।

(बा. का. दो.2, चौ. 1)

ऐसे माना जाता है कि कौआ, ढीठ प्राणी होता है। यह भी कहा गया है कि प्रेम से पालने पर भी उसके व्यवहार में परिवर्तन नहीं ला सकते।

बायस पलिअहिं अति अनुरागा । होहिं नीरामिष कबहुँ कि कागा ।

(बा. का. दो.4, चौ. 1)

कपटी की तुलना कौए से की जाती है, जो हंस के समान छद्म रूप धारण करता है। (बा. का. दो 11, चौ. 1)

अयोध्या आते हुए भरत जी, नगर प्रवेश करते समय अपशकुनों का सामना होता है जहाँ कौए बैठे काँव-काँव कर रहे हैं – *रटहिं कुभाँति कुखेत करारा।* (अ. का. दो 157, चौ. 2)

इंद्र की रीति को कौए के समान कहा गया है – *काक समान पाकरिपु रीती।* (अ. का. दो. 301, चौ. 1)

देवराज इंद्र का पुत्र जयंत, कौए का रूप धारण कर मूढ़ कहलाया और अपनी ही हानि कर बैठा, सीता के चरणों में चोंच मारकर आँख से काना हो गया। (अर. का. चौ. 3, 4, दो. 2, चौ. 7)

आ. हंस - संतजनों की तुलना हंस से करते हुए समाज में निहित गुण-दोष से परे रहने की सलाह दी गई है।

जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार ।।

(बा. का. दो. 6)

कवि, पंडितगणों को रामचरितरूपी मानसरोवर के सुंदर हंस कहा गया है। (बा. का. दो 14 ग)

इ. तोता - बालकों की मीठी वाणी को तोते के वचन कहा जाता है – *जौ बालक कह तोतरि बाता*। (बा. का. दो 7, चौ. 5)

सुक सारिका जानकी ज्याए - जानकी जी ने तोता और मैना को पाल-पोसकर बड़ा किया था। उन्हें छोड़कर जाते हुए दुःख का अनुभव कर रहीं थीं। बालक तोता-मैना को पढ़ाते हैं तो वे, राम, रघुपति, जनपालक बोलते हैं -

सुक सारिका पढ़ावहिं बालक। कहहु राम रघुपति जनपालक ।।

(उ. का. दो. 27, चौ. 4)

ई. कोयल / हंस - हर्षित होते जनकपुर के स्त्री-पुरुष का वर्णन सुंदर मुख और नेत्रोंवाले के रूप में किया गया है। स्त्रियों की वाणी, कोयल की मधुर बोली के समान है। अयोध्याकांड में सीताजी को पिकबयनी की संज्ञा दी गई है। *भरत भारती मंजु मराली* कहते हुए, भरत जी की वाणी को सुंदर हंसिनी के समान गुण-दोष का विवेचन करनेवाली कहा गया है। जब राम-सीता की बारात आती है, उस समय सुंदर शकुन हो रहे हैं। नीलकंठ पक्षी एक ओर चारा ले रहा है तो दूसरी ओर कौआ खेत में शोभा पा रहा है। चील को छेमकरी (कल्याणकारी) और कोयल को श्यामा का पर्याय कहा गया है। *'केकि कंठ दुति स्यामल अंगा'* कहते हुए - राम जी को मोर के कंठकी-सी कांतिवाला (हरिताभ) शरीर युक्त कहा गया है। अन्य संदर्भ में राम, सीता को हंसगामिनी संबोधित करते हुए, उन्हें वन में आने से रोकना चाहते हैं। वे उन्हें हंसिनी की उपमा देते हुए कहते हैं कि यथा हंसिनी खारे समुद्र में जी नहीं सकती, वे भी वन में रहने योग्य नहीं हैं। (अ. का. दो 62, चौ. 3)

वाल्मीकि आश्रम में पहुँचे राम जी को मुनि उन लोगों के हृदय में निवास करने को कहते हैं जिनकी जीभ हंसिनी बनी हुई है, वे उनके गुण रूपी मोती को ही चुगना चाहती हैं -

जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुन गन चुनइ राम बसहु हियँ तासु ।।

(अ. का. दो 128)

स्वयं को स्त्रीविहीन पाकर राम वन में जाते हुए उसकी शोभा देख प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाते, अपने भाई लक्ष्मण से उसका बखान करते हुए कहते हैं –

कूजत पिक मानहुँ गज माते। ढेक महोख ऊँट बिसराते ।।
मोर चकोर कीर बर बाजी। पारावत मराल सब ताजी ।।

(अर. का. दो. 37, चौ. 3)

कोयल कूज रही हैं, मतवाले हाथी चिग्घाड़ रहे हैं। ढेक और महोख पक्षी, ऊँट और खच्चर से प्रतीत होते हैं। मोर, चकोर, तोते, कबूतर और हंस सुन्दर ताजे अरबी घोड़े से लगते हैं।

तीतिर लावक पदचर जूथा। बरनि न जाइ मनोज बरूथा।।
रथ गिरि सिला दुंदुभीं झरना। चातक बंदी गुन गन बरना ।।

(अर. का. दो. 37, चौ. 4)

कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं। सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं।

(अर. का. दो. 39, चौ. 5)

कोयल कुहू-कुहू कर रही हैं। उनकी रसीली बोली सुनकर मुनियों का ध्यान भी टूट जाता है।

उ. पक्षी / पंछी / खग - रामचरित कथा में रोमांच को वाटिका, बाग, वन कहते हुए, सुख को सुंदर पक्षियों का विहार कहा गया है। जनकपुर की सुंदरता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि यहाँ पक्षी मधुर आवाज़ करते हैं और तरह-तरह के पक्षी वास करते हैं। (बा. का. दो 212)

पुलक बाटिका बाग बन सुख सुबिहंग बिहारु।
माली सुमन सनेह जल सींचत लोचन चारु ।।

(बा. का. दो 37, चौ. 5)

नव पल्लव फल सुमन सुहाए। निज संपति सुर रूख लजाए ।।
चातक कोकिल कीर चकोरा। कूजत बिहग नटत कल मोरा ।।

(बा. का. दो 226, चौ. 4)

नये पत्तों, फलों और फूलों से युक्त सुन्दर वृक्ष अपनी सम्पत्ति से कल्पवृक्ष को लजा देते हैं। पपीहे, कोयल, तोते, चकोर आदि पक्षी मीठी बोली बोल रहे हैं और मोर सुन्दर नृत्य कर रहे हैं। सावन के बादल जब घुमड़-घुमड़कर छाते हैं तो बगुलों की पाँति मानो मन को खींच लेती हैं (बा. का. दो 346)। *अरुनचूड़ बर बोलन लागे*, से यह संकेत मिलता है कि पूर्वकाल में लोग भोर में मुर्गे की बाँग सुनकर उठते थे (बा. का. दो 347, चौ. 3)। राम, सीता को वन में होने वाले कष्टों के बारे में बताते हुए परोक्ष रूप में उन्हें आने से मना करने का प्रयास करते हैं तब सीता वन में रहने का हठ करती हुई कहती हैं कि पशु-पक्षी उनके कुटुंबी होंगे। उनको राम की सीख वैसे ही अच्छी नहीं लगती जैसे शरद् ऋतु के चंद्रमा की चाँदनी को देख चकवी व्याकुल हो जाती है।

श्रीराम के वियोग में सभी पशु-पक्षी व्याकुल से दिखाई देते हैं –

हय गय कोटिन्ह केलिमृग पुरपसु चातक मोर।
पिक रथांग सुक सारिका सारस हंस चकोर ॥

(अ. का. दो 83)

अगस्त्य मुनि के आश्रम की सुंदरता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि, *खग मृग बृंद अनंदित रहहीं,* अर्थात् पशु-पक्षी यहाँ आनंदित रहते हैं। (अर. का. दो. 13, चौ. 2)

जंगल में विचरण करते हुए राम-लक्ष्मण को मार्ग मध्य पशु-पक्षी भयंकर शब्द करते हुए सुनाई पड़ते हैं।

खग कंक काक सृगाल । कटकटहिं कठिन कराल।

(अर. का. दो. 19, छं. 1)

सीता के आँखों की तुलना खंजन पक्षी से की गई हैं – *खंजन मंजु तिरीछे नयननि।*

मुनि श्रेष्ठ वाल्मीकि राम को चित्रकूट पर्वत पर सभी सुविधाएँ, विविध पक्षियों के निवास स्थान होने के कारण, वहीं निवास करने का सुझाव देते हैं।

चित्रकूट गिरि करहु निवासू । तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू ॥
सैलु सुहावन कानन चारू । करि केहरि मृग बिहग बिहारू ॥

(अ. का. दो 131, चौ. 2)

चित्रकूट के पक्षी, पशु, बेल, वृक्ष, तृण-अंकुरादि की सभी जातियाँ पुण्य की राशि हैं और *धन्य बिहग मृग काननचारी, कहते* हुए यहाँ के जंगलों में रहने वाले पक्षियों को धन्य कहा गया है जहाँ श्रीराम जी ने पग धरे थे –

चित्रकूट के बिहग मृग बेलि बिटप तृन जाति।
पुन्य पुंज सब धन्य अस कहहिं देव दिन राति ॥

(अ. का. दो 138)

नीलकंठ कलकंठ सुक चातक चक्क चकोर ।
भाँति भाँति बोलहिं बिहग श्रवन सुखद चित चोर ॥

(अ. का. दो 137)

इन जंगलों में नीलकण्ठ, कोयल, तोते, पपीहे, चकवे और चकोर आदि पक्षी कानों को सुख देनेवाली और चित्त को चुरानेवाली तरह-तरह की बोलियाँ बोलते हैं।

राम जी के वन में वास करने पर वहाँ की शोभा अवर्णनीय हो गई है। निःसहाय स्थिति में मनुष्य सहारे के लिए अकेले में बात भी करता है तो प्रकृति से प्रत्युत्तर की अपेक्षा न करते हुए भी उन से प्रश्न कर बैठता है, ऐसी ही स्थिति राम भी हमें देखने को मिलती है। वे सीता की खोज में पशु-पक्षी, भौरों से पूछते हैं –

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी । तुम्ह देखी सीता मृगनैनी ।।
खंजन सुक कपोत मृग मीना । मधुप निकर कोकिला प्रबीना ।।

(अर. का. दो. 29, चौ. 5)

रावण का तेज जब प्रभु के मुख में समा गया, श्रीराम को देख देवता हर्ष से पुष्प बरसा रहे थे और तमाल वृक्ष पर बैठीं ललमुनियाँ चिड़ियाँ सुख में मग्न निश्चल बैठी हैं –

जनु रायमुनीं तमाल पर बैठीं बिपुल सुख आपने ।।

(लं. का. दो. 102, छं. 2)

राम, सीता जब चौदह वर्षोपरांत अयोध्या वापस आ जाते हैं अयोध्यावासियों के साथ-साथ मोर, हंस, सारस और कबूतर भी घरों के ऊपर शोभा पा रहे हैं। पक्षी मणियों की दीवारों में और छत में, अपनी परछाईं देखकर, दूसरे पक्षी समझकर बहुत प्रकार से मधुर बोली बोलते और नृत्य करते दिखाई पड़ते हैं।

राम नाम की महिमा का गान करते हुए, उनके नाम को एक ओर परम पद दिलाने वाला तो दूसरी ओर पाप रूपी पक्षी समूह के लिए वधिक समान कहा गया है –

राम सकल नामन्ह ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका ।।

(अर. का. दो. 41, चौ. 4)

सुनिअ तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक ।।

(कि. का. दो. 30)

रामराज्य में पशु-पक्षी वैर भाव भुलाकर, प्रेम के साथ निर्भय होकर विचरण करते हैं –

कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा ।।
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा ।।

(उ. का. दो. 22, चौ. 2)

नाना खग बालकन्हि जिआए। बोलत मधुर उड़ात सुहाए ।।

(उ. का. दो. 27, चौ. 2)

बालकों ने बहुत-से पक्षी पाल रखे हैं, जो मधुर बोली बोलते हैं और उड़ने में सुन्दर लगते हैं -

मोर हंस सारस पारावत। भवननि पर सोभा अति पावत ।।
जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं। बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं ।।

(उ. का. दो. 27, चौ. 3)

ऋ. चातक / हंस - मार्ग में जाते हुए भरत जी सोच में पड़ गए कि इस जगत् में यश के पात्र चातक और मछली हैं जो नेम और प्रेम को सदा नया बनाए रखने में निपुण हैं। (अ. का. दो 233, चौ. 2)

चक चकोर चातक सुक पिक गन। कूजत मंजु मराल मुदित मन ।।

(अ. का. दो 235, चौ. 3)

चातक और हंस दोनों के गुणों की विशेषता की सराहना की गई है –

राम पेम भाजन भरतु बड़े न एहिं करतूति।
चातक हंस सराहिअत टेंक बिबेक बिभूति ।।

(अ. का. दो. 324)

अत्रि मुनि राम को भगवान शंकर के मनरूपी मानसरोवर का राजहंस संबोधित किया गया है।

पंपा सरोवर के किनारे की शोभा अवर्णनीय है, लगता है जैसे पग-पग पर सौंदर्य बिखरा पड़ा है, जलके मुर्गे और राजहंस बोल रहे हैं -

बोलत जलकुक्कुट कलहंसा।

(अर. का. दो. 39, चौ. 1)

सीता की खोज में निकले हनुमान की सहायता पंछी करते हुए प्रतीत होते हैं। एक पहाड़ की चोटी पर चढ़कर जब वे चारों ओर देखते हैं तो पाते हैं कि एक गुफा के ऊपर चकवा, बगुले, हंस उड़ते से दिखाई पड़ रहे थे –

चढ़ि गिरि सिखर चहूँ दिसि देखा। भूमि बिबर एक कौतुक पेखा ।।
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं। बहुतक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं ।।

(कि. का. दो. 23, चौ. 3)

सुमेरु पर्वत की उत्तर दिशा की ओर एक सुंदर नील पर्वत है जहाँ हंसगण मधुर स्वर से बोल रहे हैं –

कूजत कल रव हंस गन गुंजत मंजुल भृंग ।।

(उ. का. दो. 56)

तीतर और बटेर पैदल सिपाहियों के समान जान पड़ते हैं। कामदेव की सेना का वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता। पर्वतों की शिलाएँ रथ और जल के झरने नगाड़े समान प्रतीत होते हैं। पपीहे भाट हैं, जो विरदावली का वर्णन करते हैं।

ऊ. गीधराज - राजा दशरथ की दशा की विकलता का वर्णन गीधराज जटायु के भाई – संपाति की भाँति कहा गया है, जिसके पंख जल गए हैं।

रावण छद्म वेश धारण कर सीता का हरण कर लेता है तब गीधराज सीता जी को पहचान लेता है और रावण का नाश करने को तत्पर होता है।

गीधराज सुनि आरत अधम निसाचर लीन्हें बानी। रघुकुलतिलक नारि पहिचानी ।।
अधम निसाचर लान्हें जाई। जिमि मलेछ बस कपिला गाई ।।

(अर. का. दो. 28, चौ. 4)

गीधराज, सीता को ढाँढ़स बँधाते हुए रावण का नाश करने के लिए आगे बढ़ता है तो रावण यह नहीं समझ पाता कि यह मैनाक पर्वत है या बूढ़ा जटायु।

की मैनाक कि खगपति होई ।

(अर. का. दो. 28, चौ. 7)

क्रोध में आकर वह रावण पर कई बार प्रहार भी करता है पर रावण उसके पर काटने में सफल हो जाता है।

काटेसि पंख परा खग धरनी।

(अर. का. दो. 28, चौ. 11)

सीता को ढूँढ़ते- ढूँढ़ते जब राम वहाँ आते हैं तो गीधराज उन्हें सब कुछ बताता है और राम उसे परमपद प्रदान करते हैं।

गीध गयउ हरिधाम ।

(अर. का. दो. 32)

गोमाय गीध कराल खर रव स्वान बोलहिं अति घने ।

जनु कालदूत उलूक बोलहिं बचन परम भयावने।

(लं का. दो. 77, छं)

मृत्यु का संदेशा देते हुए भिन्न-भिन्न पशु-पक्षी विचित्र स्वर निकालते हैं। स्यार, गीध, गधा शब्द कर रहे हैं, कुत्ते भौंक रहे हैं, उल्लू भयानक शब्द कर रहे हैं, मानो काल के दूत हों। रावण की मृत्यु से पूर्व ये सभी वर्णन रोंगटे खड़े कर देने वाले प्रसंग हैं।

ए. चक्रवाक, बगुले - चक्रवाक, बगुले आदि पक्षी समूह का वर्णन नहीं किया सकता। उनकी बोली बड़ी सुहावनी है, वे रास्ते में जाते हुए पथिक को भी बुला लेती हैं।

चक्रबाक बक खग समुदाई। देखत बनई वरनि नहिं जाई।

सुंदर खग गन गिरा सुहाई। जात पथिक जनु लेत बोलाई।

(अर. का. दो. 39, चौ. 2)

देखिअत चक्रबाक खग नाहीं – कहते हुए राम, अचरज भी करते हैं कि चक्रवाक पक्षी क्यों नहीं दिखाई दे रहे हैं। पपीहा रट लगाये जान पड़ते हैं तो चकोर चंद्रमा को देख टकटकी लगाये हैं।

किष्किन्धाकाण्ड में आते-आते वर्षाकाल का आगमन हो जाता है, आकाश में छाये बादलों को देख राम पुलकित हो जाते हैं और भाई लक्ष्मण से कहते हैं –

लछिमन देखु मोर गन नाचत बारिद पेखि ।

(कि. का. दो. 13)

लंकाकाण्ड में हम इस बात को भी जानते हैं कि टिटिहिरी पक्षी पैर ऊपर कर सोता है, मानो आकाश को थामना चाहता है –

जिमि टिट्टिभ खद सूत उताना ।

(लं. का. दो. 39, चौ. 3)

रणभूमि से लौटे रावण को देख वानर समूह को बक का ध्यान हो आया, वे रावण के लिए कहते हैं –

रन ते निलज भाजि गृह आवा । इहाँ आइ बक ध्यान लगावा ।

(लं. का. दो. 84, चौ. 4)

उत्तरकाण्ड अधिकांशतः काकभुशुण्डि-गरुड़ संवाद में है। गरुड़ अनेक प्रश्न करते हुए भी चित्रित किए गए हैं, काकभुशुण्डि उनका उत्तर देते हुए समस्त रामकथा बताते हैं। गरुड़ जब यह जानना चाहते हैं तो वे उन्हें, कौए रूप में हरिभक्ति कैसे प्राप्त की, लोमश मुनि के शाप से उन्होंने कैसे कौए का रूप धारण किया और यह भी विस्तार से बताते हैं कि उन्हें यहाँ निवास करते हुए सत्ताईस कल्प बीत गये। काकभुशुण्डि गरुड़ जी से यह भी कहते पाते हैं कि मैं ने अपनी बुद्धि के अनुसार भय और दुःख को हरनेवाली राम कथा बताई है।

किलकारी मारते हुए राम जी के साथ काकभुशुण्डि तरह-तरह के खेल खेलते हैं, तो वे उन्हें पकड़ने दौड़ते होते हैं, तो काक उड़ जाता है, भगवान उन्हें पुआ दिखाते हैं। वे यह भी बताते हैं कि किस तरह वे जब उनके उदर में विचरण करने लगे तो वहाँ उन्होंने क्या-क्या देखा, उस समय का प्रसंग अद्वितीय है। करोड़ों ब्रह्मा, शिव, तारे, सीर्य, चंद्र, समुद्र, नदियाँ, वन, पर्वत, देवता, गंधर्व, मुनि, मनुष्य, किन्नर, भूत, प्रेत, राक्षस, पशु, पक्षी, पृथ्वी, तालाब, पर्वत, अद्भुत सृष्टि की अनुपम वस्तुएँ देखीं।

लोक लोक प्रति भिन्न बिधाता । भिन्न बिष्नु सिव मनु दिसित्राता ।।

नर गंधर्ब भूत बेताला । किंनर निसिचर पसु खग ब्याला ।।

(उ. का. दो. 80, चौ. 2)

काकभसुंडि मागु बर अति प्रसन्न मोहि जानि।
अनिमादिक सिधि अपर रिधि मोच्छ सकल सुख खानि ॥

(उ. का. दो. 83)

ग्यान बिबेक बिरति बिग्याना । मुनि दुर्लभ गुन जे जग नाना ॥
आजु देउँ सब संसय नाहीं। मागु जो तोहि भाव मन माहीं ॥

(उ. का. दो. 83, चौ.)

काकभुशुण्डि से प्रसन्न होकर राम ने वर माँगने को कहा, अणिमा आदि अष्ट सिद्धियाँ, ऋद्धियाँ और सम्पूर्ण सुखों की खान मोक्ष, ज्ञान, विवेक, वैराग्य, तत्त्वज्ञान और वे सभी गुण जो जगत में, मुनियों के लिये भी दुर्लभ हैं, वह सब उन्हें बिना संदेह देने की बात कहते हैं।

3. निष्कर्ष

रामचरितमानस में नाना पक्षी कलरव करते हुए दिखाई पड़ते हैं। वायस, कौए को एक तुच्छ, निम्न पक्षी माना जाता है, कहीं वह ज्ञान का एक दृष्टांत प्रतीत होता है। वही श्राद्ध पक्ष में पितरों का प्रतीक बन जाता है तो दूसरी तरफ वह वाचालों का और उनकी कर्कश ध्वनि से मनुष्य की घृणा का पात्र बनता है।

संस्कृत सूक्ति 'काकः कृष्णः पिक कृष्णः को भेदः पिरककाकयोः। वसंतकाले सम्प्राप्ते काकः काकः पिकः पिकः,' को स्मरण किए बिना हम नहीं रह सकते। जटायु रूप में वह जहाँ रावण पर प्रहार करता दिखाई पड़ता है, वहीं वह राम, लक्ष्मण, के लिए सहायता करता हुआ दिखाई पड़ता है। कौआ अधम पक्षी बनकर, माँसाहारी माना जाता है, वही दुर्लभपद की प्राप्ति करता हुआ दीख पड़ता है। कौए का काँव-काँव मन को किंचित भी नहीं भाता। कुत्तों का भौंकना किसी खतरे की पूर्व सूचना करता है तो पशुओं का, उल्लू का भयानक शब्द मृत्यु का संदेश देता है। तरह-तरह के पंछी अपनी उपस्थिति से मनुष्य के मन-मस्तिष्क पर अमिट छाप छोड़ देते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, संगी-साथियों के बिना उसका जीवन-यापन संभव नहीं है। प्रकृति के फल-फूल-पत्ते उसे मानसिक रूप से संतोष प्रदान करते हैं तो पशु-पक्षी के साथ वह हँस-बोल कर अपने तनाव को कम कर सकता है, इसलिए शायद आधुनिक युग में, एकल परिवारों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, वहाँ हर घर में पालतू पशु-पक्षियों की संख्या भी बढ़ती जा रही है।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस

Geographical Study of Places Described in Valmiki Rāmāyaṇa: A Critical Analysis from Bāla-kāṇḍa

Supriya Ashish Mahajan
Deccan College, Pune
(supriyamahajan210707@gmail.com)
Onkar Shamsundar Joshi
Vaidika Samshodhana Mandala, Pune
(onkarjoshi.87@gmail.com)
Nilesh Joshi
Indian Institute of Technology Bombay, Mumbai
(joshinilesh60@gmail.com)

The Valmiki Rāmāyaṇa, while a monumental work of poetry, serves as a complex repository of geographical knowledge. This study begins with the core toponyms of the Bāla-kāṇḍa—the Kosala kingdom with its capital Ayodhyā on the Sarayū, and the Videha/Mithilā region of King Janaka—evaluating their identifications through textual criticism, archaeological findings, and the persistence of pilgrimage culture. It then expands its scope to the forest and southern locales of the exile narrative, such as Citrakūṭa, Pañcavaṭī, and the Daṇḍakāraṇya, arguing that the epic's geography evolves from a historically-plausible Gangetic core to a more mythologized Deccan and Vindhyan frontier. The paper contends that places like the Aśrama network and Janasthāna function not only as narrative settings but also as markers of Brahmanical cultural expansion and the sanctification of wilderness. By employing an interdisciplinary framework and supporting it with maps and diagrams, this analysis distinguishes between sites with strong, continuous traditions (e.g., Ayodhyā), those with robust but contested identifications (e.g., Mithilā), and those that are likely literary constructs mapped onto later sacred geographies.

Scope and Objectives

This paper presents a critical examination of the principal geographical referents within the Valmiki Rāmāyaṇa, with a primary focus on the Bāla-kāṇḍa (Book of Childhood) and an extended analysis of significant locations from the Araṇya-kāṇḍa (Forest Book) and Kiṣkindhā-kāṇḍa (Book of Kiṣkindhā). It moves beyond mere cataloguing to interrogate the interplay between literary topography, historical memory, and ritual geography. The objective is to synthesize philological evidence, archaeological data, geomorphological studies, and pilgrimage traditions to construct a nuanced, multi-layered map of the epic's imagined and physical landscape, while highlighting the methodological perils inherent in such an enterprise. This study incorporates spatial visualizations to clarify relationships and trajectories central to the narrative.

1. Introduction: The Epic as a Geographical Palimpsest

Valmiki's Rāmāyaṇa is a palimpsest where mythic narrative, kṣatriya genealogy, and sacred geography are inseparably fused. The Bāla-kāṇḍa establishes the epic's primary political and ritual centers, grounding the narrative in the known world of the Gangetic plain. However, as Rāma's journey progresses into exile, the geography shifts into the "other" space of the forest (araṇya), a realm of ascetics, demons, and moral trials. This transition from the ordered kingdom of Kosala to the chaotic Daṇḍaka forest is not merely a plot device but a geographical articulation of a central theme: the confrontation between dharma and adharma (Goldman 1-15). Identifying these places, therefore, is not a simple exercise in cartography but an archaeological dig into layers of cultural memory, where historical toponyms are overlaid with ritual significance and poetic imagination (Singh, "Archaeology of the Epics" 42).

2. Theoretical and Methodological Framework

1. **Textual Philology and Critical Edition:** The primary source is the critical edition of the Valmiki Rāmāyaṇa, which helps mitigate recensional variations that often reflect localizing tendencies (Bhatt and Shah). All Sanskrit quotations are cross-referenced with this edition.
2. **Historical Geography and Archaeology:** This involves correlating textual descriptions with material culture evidence from archaeological sites (e.g., Northern Black Polished Ware for the Kosala-Videha region) and analyzing settlement patterns in the mid-Ganga plain (Erdosy 174-75).
3. **Geomorphology and Paleo-Hydrology:** The study of ancient river courses (paleo-channels) is crucial for verifying descriptions of riverine settings, such as the Sarayū near Ayodhyā or the Godāvarī near Pañcavaṭī (Rajagopalan).
4. **Pilgrimage (Tīrtha) Tradition and Sacred Geography:** The living tradition of pilgrimage provides a continuous, though often transforming, link to epic geography. Sites are analyzed as "memory places" (lieux de mémoire) that perpetuate and sometimes invent geographical associations (Singh, *The Discovery of Ancient India* 305).
5. **Spatial Visualization:** The use of maps and diagrams is employed to synthesize complex geographical relationships, plot narrative trajectories, and categorize the types of evidence supporting site identifications.

3. Geographical Analysis of Core Sites in Bāla-kāṇḍa

1. Ayodhyā (अयोध्या) and the Sarayū (सरयू): The Archetypal Capital

The identification of Ayodhyā is the most stable in the entire epic. The text consistently pairs the city with the Sarayū river: "*sāsarayūḥ...ayodhyāadhiśrita*" ("That Sarayū...supported Ayodhyā") (Valmiki Rāmāyaṇa 1.5.6-7). This is not a casual detail but a fundamental element of its identity, echoing the archetype of the sacred city on a holy river.

- **Archaeological Corroboration:** Excavations at modern Ayodhya reveal settlement continuity from the Northern Black Polished Ware (NBPW) period (c. 6th century BCE) onwards, aligning with the traditional chronology of the epic (Lal 215-16). While no inscription explicitly naming the epic Ayodhyā has been found from this early period, the occupational sequence supports its status as an important early historic city.
- **Geomorphological Evidence:** Studies of the Sarayu's paleo-channels confirm its proximity to the ancient settlement mound, validating the textual description of a riverine urban center (Rajagopalan 88).
- **Pilgrimage Continuity:** The network of ghāṭs (riverfront steps) and temples, particularly the contested Rāma Janmabhūmi site, demonstrates an unbroken tradition of Ayodhyā as a *tīrtha* intimately linked to Rāma's narrative, a process that intensified in the medieval period (Bakker 12-15).

2. Kosala (कोशल): The Political Heartland

Bāla-kāṇḍa presents Kosala as a powerful, settled kingdom (*janapada*) ruled by the Ikṣvāku dynasty. The epic describes it as prosperous and extensive, with Ayodhyā as its nerve center. Historical sources distinguish between Uttara Kosala (Northern Kosala), with its capital at Śrāvastī, and Dakṣiṇa Kosala (Southern Kosala), further south. The Rāmāyaṇa's Ayodhyā likely corresponds to the core of Uttara Kosala (Law 45-47). The text's geography reflects a memory of a pre-Buddish, Gangetic kingdom that was a major political and cultural force.

3. Videha / Mithilā: A Contested Janaka Homeland

The kingdom of Videha, with its capital Mithilā, is the setting for Sītā'ssvayaṃvara. The identification here is more complex and contested than for Ayodhyā.

- **Textual and Historical Context:** Vedic and post-Vedic literature places the Videha janapada in the eastern Gangetic plain, north of the Ganges, in present-day north Bihar and southeastern Nepal (Witzel 191). The Śatapatha Brāhmaṇa narrates the mythic eastward expansion of the fire god Agni and the sage Videgha Māthava, who established this kingdom.
- **Modern Claims**
- **Janakpur (Nepal):** This is the predominant pilgrimage center, home to the magnificent Janakī Mandir. Its claim is bolstered by a strong local Mithilā cultural tradition and its location within the historical Mithilā region. However, extensive archaeological remains of an early historic urban center comparable to Ayodhya are yet to be conclusively identified here (Mishra 33).
- **Sitamarhi (Bihar):** Traditionally claimed as Sītā's birthplace (*SītāKūḍ* or *SītāVāṭikā*), its claim is older in certain pilgrimage texts but is less developed in terms of monumental architecture.
- **Analysis:** The duality of claims exemplifies the process of "spatial syncretism," where a regional cultural entity (Mithilā) becomes focalized at multiple specific nodes through localized patronage and devotional competition (Schnepel 78). The epic's Mithilā is best understood as a regional capital of the Videha janapada, whose precise epicentric location remains archaeologically elusive.

The following map (Map 1) illustrates the core geographical context of the Bāla-kāṇḍa, showing the relationship between these key political centers and the major river systems.

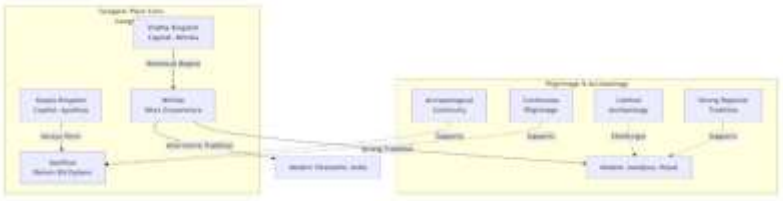

The Expanding Geography of Exile: Key Sites from the Araṇya and KiṣkindhāKāṇḍas

The trajectory of exile sees Rāma move from the Gangetic heartland into the Vindhyan highlands and the Deccan plateau, a journey that maps a Brahmanical worldview onto the physical landscape.

The flowchart below (Map 2) visualizes this southward narrative progression and the changing nature of the locations.

1. The Central Indian Cluster: From Citrakūṭa to the Daṇḍaka Forest

- **चित्रकूट: (Citrakūṭa):** Described as a picturesque mountain (*śailaḥśrīmān...citrakūṭaḥ*), it is Rāma's first major stop (Valmiki Rāmāyaṇa 2.56.1-3). Its identification with the modern Chitrakoot district (UP/MP) is exceptionally strong. The landscape matches the textual description, and it has been a major pilgrimage site for millennia, mentioned in the *Meghadūta* of Kālidāsa. The Kamadgiri hill and the Mandakini River form a perfect sacred complex that has absorbed the epic memory.
- **अत्रि-अनसूयाश्रम: (Atri-Anasūyāśrama):** The hermitage of sage Atri and Anasūyā, located in the Daṇḍaka forest. Its traditional location is near Chitrakoot, reinforcing the area's density of sacred geographies linked to sages and stability.
- **शरभङ्गाश्रम: (Śarabhaṅgāśrama):** The sage Śarabhaṅga immolates his earthly body here upon seeing Rāma. This site, also placed in the Chitrakoot region, represents the theme of the perfected sage transferring spiritual authority to the royal protector of dharma (Rāma).

2. The Deccan Frontier: The Aśrama Network and Rākṣasa Territory

- **सुतीक्ष्णाश्रम: (Sutīkṣṇāśrama):** Deeper in the Daṇḍaka forest, this hermitage marks a progression into a wilder, more dangerous realm. Its precise location is uncertain but is traditionally sought in the Nashik region, indicating the southward push of the narrative.
- **अगस्त्याश्रम: (Agastyāśrama):** This is a site of immense strategic and symbolic importance. The sage Agastya, a cultural hero associated with the Aryanization of the south, provides Rāma with celestial weapons (Valmiki Rāmāyaṇa 3.11-12). The location is heavily contested. Strong traditions place it in the Nashik district (e.g., at Agastyeshwar temple), while others, reflecting later southward expansions of the Rāma story, place it in Tamil Nadu (e.g., near the Pothigai hills). This variance demonstrates how the geography of the epic was stretched and re-interpreted as the story permeated the subcontinent.
- **पञ्चवटी (Pañcavaṭī):** The name means "a grove of five banyan trees." Rāma establishes his cottage here on the banks of the Godāvarī River, and it is the site of Sītā's abduction. The identification with the area around modern Nashik, Maharashtra, is one of the most secure for the Deccan region.
- **Evidence:** The presence of the Godāvarī, the SītāGuhā (cave), and the Kalaṁ means that the "five banyans" provides a perfect ritual and narrative setting that matches the text. Archaeological surveys in the region have identified early historic settlements, suggesting it was a known frontier zone (Sankalia 102).
- **जनस्थानम् (Janasthāna):** Literally "the place of people," this was a clearing or territory within the Daṇḍakāraṇya that had been occupied by rākṣasas under Khara and Śūrpaṇakhā. It was located near Pañcavaṭī. Its identification with the Nashik region is logical, as it represents the "colonized" or contested frontier land between the civilized world of the sages and the demonic wilderness.

3. The Kiṣkindhā Realm and Southern Geography

- **ऋष्यमूक पर्वत (Ṛṣyamūka Parvata):** The mountain where the exiled vānara king Sugrīva and his followers reside, fearing his brother Vāli. It is strongly and uniquely identified with a specific hill near Hampi, Karnataka, which bears the same name and fits the detailed geographical descriptions, including the presence of Lake Pampā nearby (Thapar, *Early India* 105).
- **किष्किन्धा (Kiṣkindhā):** The capital of the vānara kingdom. Its identification is also centered on the Hampi region, with the Aṇe-gondi area and the Malyavanta hill being key traditional sites. The entire Tungabhadra river basin around Hampi is a vast open-air museum of the Kiṣkindhākāṇḍa's geography.
- **स्वयंप्रभा गुहा (SvayaṃprabhāGuhā):** The self-illuminating cave where Sugrīva's retinue hides. Located near Kiṣkindhā, its traditional identification is with the famous Badami cave temples or a specific cave in the Aṇe-gondi area, though this is a case where a natural feature is later monumentalized with rock-cut temples.

4. Other Significant Toponyms

- **गोकर्ण: (Gokarṇa):** A premier Śaivatīrtha on the Karnataka coast. Its inclusion in the Rāmāyaṇa (as a place Rāvaṇa passes) reflects the epic's awareness of pan-Indian pilgrimage networks, even if it is not a primary setting.
- **पुष्करम् (Pushkara):** Located in Rajasthan, it is one of the most ancient tīrthas. Its mention situates the epic's geographical knowledge within a broader, subcontinental sacred geography.
- **वज्रस्थानम् (Vajrasthāna):** A less common name, possibly referring to a specific rocky or formidable location within the Vindhyas, its identification remains speculative.

Synthesis and Conclusion

The geography of the Valmiki Rāmāyaṇa is not a single, coherent map but a stratified cultural construct. The Bāla-kāṇḍa

presents a Gangetic world with strong historical foundations, where Ayodhyā and Mithilā, though not without contestation, are rooted in identifiable janapada geography. As the narrative moves into exile, the geography becomes a tool for myth-making and cultural appropriation. The journey from Citrakūṭa to Pañcavaṭī traces a path of Brahmanical sanctification of the Vindhyan and Deccan landscapes, transforming wilderness into a sacred landscape of hermitages (āśramas). The Kiṣkindhā kāṇḍa, with its remarkably specific identifications in the Hampi region, may reflect a later stratum of the epic that incorporated knowledge of the Deccan's southern periphery.

Ultimately, the pursuit of the epic's geography is a pursuit of its meaning. The movement from the ordered, horizontal space of Kosala to the vertical, chaotic, and demonic space of Laṅkā (itself a supreme geographical metaphor) is the spatial expression of Rāma's cosmic mission. To map the Rāmāyaṇa is to map the imagination of ancient India.

4. References

1. Bakker, Hans T. *Ayodhyā: Part 1*. Egbert Forsten, 1986. Print.
2. Bhatt, G. H., and U. P. Shah, editors. *The Vālmīki Rāmāyaṇa: Critical Edition*. 7 vols. Oriental Institute, 1960-1975. Print.
3. Erdosy, George. *Urbanisation in Early Historic India*. BAR International Series, 1988. Print.
4. Goldman, Robert P., translator. *The Rāmāyaṇa of Vālmīki: An Epic of Ancient India, Volume I: Bālakāṇḍa*. Princeton UP, 1984. Print.
5. Lal, B. B. "Excavations at Ayodhya." *Journal of the Indian Society of Oriental Art* New Series 5 (1975-76): 215-25. Print.
6. Law, Bimala Churn. *Historical Geography of Ancient India*. Société Asiatique de Paris, 1954. Print.
7. Mishra, Vijayakanta. *The Geography of the Rāmāyaṇa*. National Book Trust, 1969. Print.
8. Rajagopalan, C. "Paleo-Channels of the Sarayu River and the Location of Ayodhya." *Man and Environment* 30.2 (2005): 83-90. Print.
9. Sankalia, H. D. *The Ramayana in Historical Perspective*. Macmillan, 1982. Print.
10. Schnepel, Burkhard. *The Jungle Kings: Ethnohistorical Aspects of Politics and Ritual in Orissa*. Manohar, 2002. Print.
11. Singh, Upinder. "Archaeology of the Epics." *The Discovery of Ancient India: Early Archaeologists and the Beginnings of Archaeology*. Permanent Black, 2004. 288-331. Print.
12. ---. *The Discovery of Ancient India*. Permanent Black, 2004. Print.
13. Thapar, Romila. *Early India: From the Origins to AD 1300*. Penguin, 2002. Print.
14. *The Vālmīki Rāmāyaṇa*. Critical Edition. Ed. G. H. Bhatt and U. P. Shah. Oriental Institute, 1960-1975. Print.
15. Witzel, Michael. "The Vedas and the Epics: Some Comparative Notes on Persons, Lineages, Geography, and Grammar." *Epics, Khilas, and Puranas: Continuities and Ruptures*. Ed. Petteri Koskikallio. Dubrovnik International Conference, 2005. 21-80. Print.

“मानस के क्रम वैशिष्ट्य में अद्भुत प्राप्ति “विज्ञानभक्ति”: विज्ञान, भक्ति और इंजीनियरिंग के द्वारा सस्टेनिबिलिटी के विशिष्ट परिपेक्ष्य में”

मनीष दुबे
लेखक, प्रोफ़ेसर, कंसल्टेंट सिविल इंजिनियर
(dubey.manish42@yahoo.com)

संयुक्त राष्ट्र की जोहान्सबर्ग विश्व शिखर सम्मेलन घोषणा (2002) के अनुसार सस्टेनेबल विकास के सुदृढ़ स्तंभों में आर्थिक विकास, सामाजिक विकास और पर्यावरण संरक्षण का स्पष्ट उल्लेख है। इनमें आर्थिक और पर्यावरणीय क्षेत्र तो भौतिक संसाधनों से संबद्ध हैं, किन्तु सामाजिक विकास प्रमुखतः समाज के प्रत्येक मनुष्य के व्यवहार और गुणों पर आधारित है। आधुनिक विज्ञान-इंजीनियरिंग आधारित विकास प्रक्रिया में लगभग सारे प्रयास भौतिक उच्चता के केंद्रित तो देखे जाते हैं, लेकिन मानवीय गुणों की वृद्धि हेतु नियोजित साधन या प्रयास दृष्टिगत नहीं होता है। जबकि सस्टेनेबिलिटी के लिए मानवीय गुणों की उच्चता एक अनिवार्य तत्व है। इस जटिल स्थिति के लिए श्रीरामचरितमानस के अंतर्गत गोस्वामी तुलसीदासजी द्वारा,"पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं" (उत्तर काण्ड, श्लोक-2) में उल्लेखित ‘‘विज्ञान भक्ति’’ के रूप में "इंजीनियरिंग से संयुक्त मानवीय गुणों की उच्चता" का अद्भुत मॉडल प्रदान किया गया है। इसका विश्लेषण करने पर यह भी स्पष्ट होता है कि "विज्ञान भक्ति" गोस्वामीजी के मानस की परम उपलब्धि भी है और इस महान भक्ति ग्रंथ में उद्घोषित भक्ति, वस्तुतः विज्ञान से भी संबद्ध है। आधुनिक विज्ञान के युग में तो विज्ञान और मानस दोनों को ही समन्वयक दृष्टि से समझने के लिए भी गोस्वामीजी द्वारा प्रदत्त धारणा "विज्ञान-भक्ति" अत्यंत उपयोगी है।

1. प्रस्तावना

रामायण और गीता सहित लगभग सभी भारतीय ग्रंथों में 'ज्ञान' और 'भक्ति' की चर्चा तो बहुत व्यापकता से मिलती है। लेकिन गोस्वामी तुलसीदासजी तो श्रीरामचरित मानस की सर्वोत्तम फल श्रुति ,"पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं" (उत्तर काण्ड, श्लोक-*2*) के माध्यम से 'ज्ञान' और 'भक्ति' के मध्य "विज्ञान" को उपस्थित करते हुए एक अत्यंत अद्भुत धारणा सामने रख देते हैं, "विज्ञान भक्ति"।

महत्वपूर्ण यह भी है कि गोस्वामीजी के द्वारा मानस के बिलकुल अंतिम श्लोक में दी गयी फलश्रुति धारणा ‘‘विज्ञान भक्ति’’, सातों सोपानों के आरम्भिक श्लोकों से क्रमशः प्रतिपादित होकर आती दिखाई देती है। मानस के इन मंगलाचरण श्लोकों के विश्लेषण में, गोस्वामीजी द्वारा अभिव्यक्त एक "क्रम-वैशिष्ट्य" के दर्शन भी होते हैं!

इतने अधिक महत्व की यह अवधारणा विज्ञानभक्ति, आधुनिक इंजीनियरिंग से भी केवल समानता ही नहीं रखती है, बल्कि यह वर्तमान इंजीनियरिंग को सही दिशा में मोड़ने के लिए भी समर्थ है। साथ ही रामायण का आश्रय लेने पर यह भी देखा जा सकता है कि विज्ञानभक्ति अवधारणा वस्तुतः इंजीनियरिंग के माध्यम से सस्टेनेबल विकास के लक्ष्य की प्राप्ति में सबसे महत्वपूर्ण कारक भी है।

सस्टेनिबिलिटी को प्रायः कुछ मटेरियल्स या प्रोडक्ट्स की उपयोग अवधि बढ़ाने जैसे पर्यावरणीय या आर्थिक उपायों के रूप में जाना जाता है और इसीलिए सामान्य तौर पर इसे विज्ञान और इंजीनियरिंग जैसे विशुद्ध भौतिक क्षेत्रों से ही संबद्ध मान लिया जाता है। लेकिन संयुक्त राष्ट्र की जोहान्सबर्ग विश्व शिखर सम्मेलन घोषणा (*2002*) के बिंदु *5* के अनुसार आर्थिक विकास, सामाजिक विकास और पर्यावरण संरक्षण सस्टेनेबल विकास के सुदृढ़ स्तंभ हैं। इसी प्रकार विभिन्न वैश्विक व्याख्याओं के अनुसार सस्टेनिबिलिटी जीवन की गुणवत्ता एवं सामाजिक लाभ जैसे ‘मानवीय क्षेत्रों’ से भी अत्यधिक संबद्ध है।

वर्तमान विज्ञान-इंजीनियरिंग का सैद्धांतिक उद्देश्य तो ‘मानवीयता का लाभ’ होता है लेकिन व्यवहार में हम वर्तमान भौतिक विकास के साथ ही दुःख, क्रोध, चिंता, लोभ, प्रतिस्पर्धा, ईर्ष्या जैसी मानवीय और सामाजिक नकारात्मकताओं को निरंतर बढ़ते हुए ही देखते हैं।

इस परिदृश्य में आधुनिक विज्ञान-इंजीनियरिंग कितने ही विकसित हो जाएं, सस्टेनिबिलिटी का लक्ष्य अधूरा ही रह जाएगा। या फिर हमें मानवीय सद्गुणों कि वृद्धि के लिए विज्ञान- इंजीनियरिंग के अलावा दूसरे क्षेत्रों को ढूंढना होगा।

यहीं पर रामायण अत्यंत विलक्षण साधन के रूप में हमारे सामने है, जो विज्ञान- इंजीनियरिंग के माध्यम से ही मानवीय गुणवत्ता को भी सुनिश्चित करने का मार्ग दिखाती है।

रामायण ही वह एकमात्र साधन है, जिसके द्वारा भौतिक और मानवीय दोनों ही क्षेत्रों को समृद्ध कर हम वास्तविक सस्टेनिबिलिटी का लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। रामायण में आधुनिक इंजीनियरिंग के *100* से अधिक वर्णन समाविष्ट हैं (पुस्तक, 'रामायण में सिविल इंजीनियरिंग')। इनमें से अधिकांश उदाहरण जैसे इंफ्रास्टक्चर डेवलॅपमेंट, कम्युनिटी एयर कंडीशनिंग, गृह निर्माण, लक्ज़री सुविधाओं, नगर विन्यास इत्यादि संदर्भों में महत्वपूर्ण सस्टेनैबिलिटी के तत्व भी समाहित हैं।

इन पर प्रस्तुत शोध के आगे के क्रम में, इस शोधपत्र के अंतर्गत "विज्ञान-भक्ति" को विश्लेषित किया गया है। "विज्ञान-भक्ति" रामायण की परम उपलब्धि के रूप में भी परिलक्षित होती है और आधुनिक इंजीनियरिंग को सस्टेनिबिलिटी की दिशा भी दिखाती है।

इस शोधपत्र में पहले श्रीरामचरित मानस में वर्णित "विज्ञान भक्ति" को मानस की परम विशिष्ट उपलब्धि के रूप में विश्लेषित किया गया है फिर रामचरित मानस के आधार पर ही आधुनिक इंजीनियरिंग की अवधारणा को सामने रखा गया है। इस प्रक्रिया में विज्ञानभक्ति, इंजीनियरिंग से अद्भुत समानता रखते हुए आधुनिक विकास में सस्टेनिबिलिटी का सर्वश्रेष्ठ साधन स्थापित होती है।

2. विश्लेषण

किसी भी ग्रंथ से प्राप्त होने वाले उपयोगी तत्वों को किसी निष्कर्ष या फलश्रुति के रूप में, सामान्यतः उस ग्रंथ के अंतिम भाग में ही उल्लेखित किया जाता है। इस सामान्य परिपाटी के अनुसार भी श्रीरामचरित मानस के बिलकुल अंतिम श्लोक में,"पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं" (उत्तर काण्ड, श्लोक-*2*) के द्वारा हमें एक सर्वोत्तम वरदान स्वरुप "विज्ञानभक्ति" के दर्शन होते हैं।

इस सामान्य परिपाटी के साथ ही महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि गोस्वामीजी ने जिस विज्ञानभक्ति को मानस के अंत में उल्लेखित किया है उसकी अवधारणात्मक पृष्ठभूमि, मानस के आरम्भिक मंगलाचरण श्लोकों से ही प्रारम्भ हो जाती है और फिर विभिन्न सोपानों के मंगलाचरण श्लोकों के माध्यम से एक 'क्रम वैशिष्ट्य' द्वारा निरंतर आगे बढ़ती हुई अंतिम श्लोक में उद्घोषित होती है।

सामान्य रूप से ज्ञान और भक्ति को तो बहुत व्यापकता से जाना जाता है लेकिन ज्ञान और भक्ति के बीच में आने वाला 'विज्ञान' क्या है? "विज्ञान" शब्द का प्रयोग, क्या गोस्वामीजी ने ज्ञान के ही किसी विकल्प के रूप में किया है? या, इसे लगभग ज्ञान का ही समानार्थी मान लेना चाहिए? या फिर, विज्ञान शब्द पूर्णतः स्वतंत्र दृष्टि से देखे जाने की आवश्यकता है? "विज्ञानभक्ति" के संदर्भ में ये सभी प्रश्न बहुत विचारणीय हैं। इनके समाधान बहुत विस्तृत भी हैं लेकिन यहां इस आलेख की सीमाओं में इतना उल्लेख अवश्य ही ध्यान रखने योग्य है कि मानस की विज्ञानभक्ति में "विज्ञान का अर्थ 'साइंस' या किसी विशेष सीमित ज्ञान तक ही नहीं है बल्कि यह विज्ञान, एक बहुत व्यापक प्रक्रियात्मक धारणा है, 'साइंस' जिसका एक भाग या उदाहरण हो सकता है"।

मानस के सातों सोपानों के मंगलाचरण श्लोकों में विज्ञानभक्ति के सूत्र निहित हैं। उन सभी का विश्लेषण अत्यधिक विस्तारित हो जाएगा अतः एक उद्धरण के रूप में यहां सुंदर काण्ड का उल्लेख किया जा रहा हैं। सुंदरकांड के मंगलाचरण श्लोक में, "शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं" के माध्यम से उल्लेखित "निर्वाणशान्तिप्रदं" भी "विज्ञानभक्तिप्रदं" की ओर ही इंगित करता है।

निर्वाण या कहें कि आत्म भाव का सबसे बड़ा लक्षण माना जाता है 'सभी के प्रति समता का भाव आ जाना'। मानसमें ही सूत्र दिया गया है, "बिनु बिग्यान कि समता आवइ (*7/90*क */2*)" अर्थात क्या विज्ञान के बिना समभाव आ सकता है? अर्थात निर्वाण का संबंध विज्ञान से ही दिखाई देता है।

"निर्वाणशान्तिप्रदं" कि शान्ति को मानस के आधार पर ही देखें तो शान्ति की प्राप्ति का संबंध, भक्ति से ही है! "बिनु बिस्वास भगति नाहिं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु, राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लैह बिश्रामु" (*7/90*क) अर्थात शान्ति के लिए भक्ति आवश्यक है। ऐसे ही रुद्राष्टक में, "न यावद् उमानाथ पादारविन्दं, भजंतीह लोके परे वा नराणां, न तावत्सुखं शान्ति.." यही उद्घोष करता है कि श्रीपार्वती जी के पति को "भजने" के बिना इहलोक या परलोक में कहीं भी सुख और शान्ति नहीं मिल सकती है। स्पष्ट है कि शान्ति के लिए भक्ति की ही परम आवश्यकता है!

स्पष्ट है कि "निर्वाणशान्तिप्रदं" की अवधारणा भी विज्ञान भक्ति को प्रगटित करती है।

विज्ञानभक्ति की धारणा को आधुनिक इंजीनियरिंग तथा सस्टेनिबिलिटी के परिपेक्ष्य में समझने हेतु उत्तरकाण्ड के अंतिम श्लोक, "पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं, मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्" का आश्रय लेते हैं। इस श्लोक के दो पक्ष हैं। प्रथम पक्ष में गोस्वामीजी सीधे-सीधे उन प्रत्यक्ष उपलब्धियों को बता देते हैं जो श्रीरामचरित मानस से स्वतः ही प्राप्त हो जाती हैं।

बताया गया है कि यह ग्रंथ स्वतः ही "पापहरं", "सदा शिवकरं" तथा "मायामोहमलापहं" है अर्थात श्रीरामचरित मानस 'हमारे पापों का हरण कर लेता है, सदा कल्याण करता है और माया, मोह और मल का नाश करता है'! यह निश्चित ही एक उत्कृष्ट स्थिति है, लेकिन किसी कृपा के कारण मिली कुछ श्रेष्ठतम स्थितियां आगे हमारे जीवन में भी स्थिर रह पाएं, इस स्थिरता के लिए आवश्यक कौशल का उल्लेख गोस्वामीजी, श्लोक के दूसरे पक्ष में "विज्ञान भक्तिप्रदं" के माध्यम से करते हैं।

श्रीरामचरित मानस द्वारा प्रदत्त यह "विज्ञानभक्ति" क्या है? इसको गोस्वामीजी ने मानस के निष्कर्ष भाग में फलश्रुतियों के साथ इतने महत्वपूर्ण स्थान पर क्यों रखा है ? और आधुनिक युग में इसका महत्व क्यों है ? ऐसे सभी बिंदुओं को समझने के लिए आवश्यक है कि हम इस "विज्ञानभक्ति" के आशय या अर्थ को समझें।

'विज्ञानभक्ति' को पहले हम संयुक्त अक्षर के रूप में देखें तो 'विज्ञान रुपी भक्ति', 'विज्ञानयुक्त भक्ति' या 'विज्ञान आधारित भक्ति' जैसे आशय प्रतीत होते हैं।अर्थात भक्ति एक अपने से लगभग भिन्न सी अवधारणा अर्थात 'विज्ञान' के रूप में, या 'विज्ञान' के साथ अवलम्बित है।

लेकिन क्या "भक्ति के अवलम्बन के लिए" विज्ञान का प्रयोग हो सकता है?

इस प्रश्न का उत्तर अरण्यकाण्ड में श्रीराम द्वारा ही अपनी भक्ति के संबंध में सुस्पष्ट है,"सो सुतंत्र अवलंब न आना, तेहि आधीन ग्यान बिग्याना (*16/2*)"। अर्थात श्रीराम की भक्ति स्वतंत्र है और भक्ति को किसी दूसरे साधन अर्थात ज्ञान-विज्ञान का सहारा नहीं है। जब भगवान स्वयं ही यह स्पष्ट कर देते हैं कि उनकी भक्ति के साथ ज्ञान-विज्ञान जैसे अवलंब नहीं हैं और इस प्रकार भक्ति स्वतंत्र है, और तो और ज्ञान तथा विज्ञान भक्ति के अधीन हैं, तब तो यहाँ "विज्ञानभक्ति" में भी भक्ति को स्वतंत्र रखना ही उपर्युक्त जान पड़ता है!

ज्ञान तथा विज्ञान की धारणाओं को समझने में गीता का "ज्ञान विज्ञान योग" अर्थात सातवाँ अध्याय बहुत सहायक है। स्वामी रामसुखदासजी इस अध्याय के दूसरे श्लोक की टीका में विज्ञान के संदर्भ में बताते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण ने यहाँ जल, चन्द्र-सूर्य इत्यादि के द्वारा स्वयं को सम्पूर्ण भूतों का सनातन बीज कहा है। साथ ही सात्त्विक, राजस और तामस भाव मेरेसे ही होते हैं, ऐसा कहकर 'ज्ञान 'बताया है। और फिर- ये मेरे में और मैं इनमें नहीं हूँ, अर्थात् सब कुछ मैं-ही-मैं हूँ; क्योंकि इनकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है (*7/12*), ऐसा कहकर 'विज्ञान' बताया।

यहाँ स्पष्ट दिखाई देता है कि, "ज्ञान और विज्ञान की परिधि में आने वाली वस्तुओं की स्वतंत्र सत्ता नहीं होती है"।

इस प्रकार से रामायण और गीता दोनों के माध्यम से मिले भगवान् के उपदेशों से विज्ञान और भक्ति में यह एक महत्वपूर्ण अंतर् भी स्पष्ट है कि भक्ति जहाँ एक स्वतंत्र धारणा के रूप में स्थापित है, वहीँ विज्ञान स्वतंत्र सत्ता को इंगित नहीं करता है।

स्वामी रामसुखदासजी द्वारा इसी दूसरे श्लोक में उल्लेखित "ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं" अर्थात "ज्ञान सहित विज्ञान" की ही व्याख्या की टिप्पणी (*1*) में भी एक महत्वपूर्ण सिद्धांत मिलता है। इस व्याख्या के अनुसार यह संसार भगवान् से ही उत्पन्न होता है और भगवान में ही लीन होता है, ऐसा मानना "ज्ञान" है और सब कुछ भगवान ही हैं और भगवान ही सबकुछ बने हुए हैं, भगवान के सिवाय कुछ है ही नहीं, ऐसा अनुभव हो जाना "विज्ञान" है। इसमें ज्ञान सामान्य हुआ और विज्ञान विशेष हुआ।

इसी संदर्भ में गीता के छठवें अध्याय के आठवें श्लोक,"ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः"(*6/8*) की व्याख्या शंकरभाष्य के माध्यम से अत्यंत सटीक है। इसमें कहा गया है कि, "शास्त्रोक्त पदार्थों को समझने का नाम ज्ञान है और शास्त्र से समझे हुए भावों को वैसे ही अपने अन्तःकरण में प्रत्यक्ष अनुभव करने का नाम विज्ञान है"।

इन सभी विश्लेषणों से सूत्र मिलता है कि, किसी भी विषय या ज्ञेय को "जानना ज्ञान है" और "जाने हुए का अनुभव करना विज्ञान है'! अर्थात "ज्ञान की धारणा के परिपूर्णता से स्थापित होने और फिर अनुभूत होने की प्रक्रिया ही विज्ञान है"।

अब इससे एक चरण और आगे जाने पर ही भक्ति के दर्शन होते हैं!

भगवान के सिवाय कुछ है ही नहीं, यह "अनुभव हो जाना" वस्तुतः एक प्रक्रिया है जो मूलतः क्रिया को इंगित करती है। यह क्रिया और प्रक्रिया कोई परिणाम तो नहीं है। तो फिर इन क्रिया या प्रक्रिया का परिणाम क्या है?

निश्चित ही जब यह पता चल गया या कहें कि अनुभव ही हो गया कि सभी कुछ भगवान ही हैं तब मन में स्वतः ही जो प्रगट होगा वह भाव ही वस्तुतः भक्ति होगा!

अर्थात विज्ञान रुपी क्रिया की परिपूर्णता के साथ ही भक्ति प्रगट होती है। अतः भक्ति, विज्ञान से आगे की धारणा मानी जा सकती है। ध्यान से देखा जाए तो यहाँ विज्ञान के अनुभव को आगे स्थायी बनाये रखने का महत्वपूर्ण साधन भी भक्ति ही है ! विज्ञानभक्ति का यह बहुत ही अच्छा, सटीक और उपयोगी आपसी संबंध है।

अपने स्वरुप को मात्र "जान लेना तो ज्ञान है" लेकिन इसके एक कदम आगे की स्थिति, स्वरुप का अर्थात इसके 'ज्ञान का अनुभव हो जाना' और फिर 'उस अनुभव में स्थित रहना' विज्ञान है। ये निश्चित ही श्रेष्ठ अवस्थाएं हैं। लेकिन ये विशुद्ध व्यक्तिगत लाभ की अवस्थाएं हैं, इनसे किसी दूसरे का भला हो, यह अनिवार्य नहीं है। किन्तु जब यह ज्ञान और ज्ञान का अनुभव विज्ञान किसी व्यवहार में सुंदर ढंग से प्रगट हो, वह अवस्था भक्ति की है, जो भक्ति स्वयं के साथ कई और मनुष्यों का या फिर सारे विश्व का भी कल्याण करने में समर्थ होती है। काकभुशुण्डि जी से लेकर गोस्वामीजी तक के माध्यम से प्रगटित श्रीरामकथा इसी भक्ति का ही तो परिणाम है, जो युगों से कोटि कोटि मनुष्यों का कल्याण करती आयी है।

अब यह विज्ञानभक्ति, रामचरित मानस में इंजीनियरिंग से कैसे जुड़ती है आगे इसका दर्शन करते हैं।

रामायण में "विज्ञानभक्ति" की समानता में "इंजीनियरिंग" अवधारणा- विज्ञानभक्ति, रामायण के ही अंतर्गत इंजीनियरिंग से कैसे जुड़ती है, यह जानने के लिए हमें मानस के काकभुशुण्डि प्रसंग में इसी 'ज्ञान, विज्ञान और इंजीनियरिंग' के अत्यंत गूढ़ किन्तु सटीक और महत्वपूर्ण उल्लेख को देखना आवश्यक है।

रामायण के उत्तर काण्ड में वर्णन आता है कि भगवतमाया के अद्भुत दर्शनों के पश्चात कागभुशुण्डिजी की अत्यंत आर्त और प्रेमयुक्त वाणी सुनकर प्रभु श्रीराम उनसे कोई वर मांगने का कहते हैं, "काकभसुंडि मागु बर अति प्रसन्न मोहि जानि" (*83* ख)।

यहां प्रभु श्रीराम वर के रूप में भुशुण्डिजी के सामने विभिन्न विकल्प रखते हुए कहते हैं कि, "ग्यान बिबेक बिरति बिग्याना" अर्थात ज्ञान, विवेक, वैराग्य, विज्ञान, और अनेकों दुर्लभ गुण जो तेरे मन भावे, सो माँग ले (*84* क)!

प्रभु के यह वचन सुनकर भुशुण्डिजी बहुत ही प्रेम में भर गए किन्तु मन में ही यह भी सोचने लगे कि प्रभु ने सब सुखों के देने की बात कही, पर अपनी भक्ति देने की बात नहीं कही ! तब भुशुण्डिजी श्रीराम से अपनी भक्ति देने की प्रार्थना करते हैं। इस पर श्रीराम अत्यंत ही प्रसन्न होते हुए भुशुण्डिजी को जो वर देते हैं, उन वरों को विश्लेषित करें तो अत्यंत सटीकता से श्रीरामचरित मानस में आधुनिक इंजीनियरिंग के सुस्पष्ट दर्शन हो जाते हैं।

इसके लिए, संक्षेप में इंजीनियरिंग को समझना महत्वपूर्ण होगा। ।

इंजीनियरिंग- इंजीनियरिंग को मात्र विज्ञान ही नहीं बल्कि व्यवहारिक या एप्लाइड साइंस (*Applied science*) के रूप में विज्ञान का विस्तार, एप्लिकेशन पार्ट या विज्ञान का एक विभाग भी माना जाता है। आधुनिक परिपेक्ष्य में इंजीनियरिंग की परिभाषा के अनुसार "इंजीनियरिंग वस्तुतः ज्ञान की वह शाखा है, जिसमें विज्ञान का उपयोग करके, मानवता की भलाई के लिए, मनुष्यों के विभिन्न कार्यों में होने वाले कष्टों को दूर करने वाले सरलतम तरीके या साधन बनाये जाते हैं"।

उपरोक्त तथ्यों को संक्षेपित करें तो

1. ज्ञान,
2. विज्ञान,
3. ज्ञान, विज्ञान के विभिन्न वर्ग-विभाग और
4. मनुष्य के विभिन्न कार्यों के कष्टों को मिटाने वाला साधन

ये चारों इंजीनियरिंग के आवश्यक तत्व हैं।

अब यह देखना अत्यंत ही आश्चर्यजनक और अद्भुत है कि, रामायण में इंजीनियरिंग के बिलकुल इन्हीं सभी तत्वों को समाहित करते हुए भगवान श्रीराम के माध्यम से ही यही धारणा उल्लेखित है, जिसके अंतर्गत अक्षरक्षः यही वाक्यांश रामायण में कहा गया है!

श्रीराम, भुशुण्डिजी से कहते हैं कि,"भगति ग्यान बिग्यान बिरागा। जोग चरित्र रहस्य बिभागा (*85 क/4*)"।

अर्थात तू "ज्ञान-विज्ञान" को "समस्त रहस्य, विभाग तथा भेद सहित" जान जाएगा और फिर इनके एप्लिकेशन पार्ट के रूप में एक और विशेष बात कहते हैं कि, "मम प्रसाद नहिं साधन खेदा (*85 क/4*)" अर्थात "तुझे साधन का कष्ट भी नहीं होगा "!

स्पष्ट है कि ज्ञान विज्ञान के विभिन्न विभागों को पूर्णता से जानने के बाद की प्रणाली में, यदि "साधन का कष्ट ना हो" तो यही प्रक्रिया विभिन्न परिभाषाओं के अनुसार, इंजिनियरिंग ही है!

निश्चित ही भुशुण्डिजी के प्रसंग में यहां ज्ञान-विज्ञान, विशिष्ट परमात्म तत्व के संबंध में हैं, जिनको जानने के बाद साधन का कष्ट ना होने का उल्लेख, भक्ति की ही उपलब्धि है।

ठीक यही प्रक्रिया अपनाते हुए जब भौतिक ज्ञान- विज्ञान *(science)* को जानने के बाद, भवन, वाहन, कंप्यूटर इत्यादि जैसे विभिन्न 'साधन' निर्मित किये जाते हैं, जो मनुष्यों के तरह-तरह के कष्टों को समाप्त करते हैं, इसे ही इंजीनियरिंग कहते हैं।

इस तरह से आधुनिक इंजीनियरिंग प्रक्रिया, रामायण के माध्यम से अभिव्यक्त भक्ति की अवधारणा,से पूर्णतः समानता रखती है। सूत्र रूप में कहें तो,

परम ज्ञान-विज्ञान के साथ साधन का कष्ट मिटना - भक्ति

भौतिक पदार्थों के ज्ञान-विज्ञान के साथ मनुष्यों के साधन का कष्ट मिटना - इंजीनियरिंग

भगवान विषयक उच्चतम ज्ञान प्राप्त हो जाना मोक्ष या निर्वाण जैसी श्रेष्ठ अवस्था तो हो सकती है, लेकिन यह नितांत व्यक्तिगत होगी और इसमें सुख की अभिव्यक्ति या प्रसार भी सम्भव नहीं है। लेकिन जब इसी परम ज्ञान को व्यक्ति अपने अंदर सीमित ना कर दे बल्कि उस ज्ञान के अनुभव में रहे और ज्ञान का अनुभव व्यवहार में भी प्रगट हो, जिसका हम स्वयं भी आनंद लें और अन्यों का भी इससे भला हो सके यही सर्वोत्कृष्ट भक्ति है।

ज्ञान के अनुभव अर्थात विज्ञान में रह कर, लोकोपयोगी व्यवहार ही वस्तुतः विज्ञानभक्ति है। यही भक्ति की श्रेष्ठतम अवस्था है। यही अवस्था वस्तुतः स्वयं श्री काकभुशुण्डिजी की भी है, जिन्हें परमतत्व का प्रत्यक्ष ज्ञान भी है, और उस परमतत्व का अनुभव भी है। इन्हीं काकभुशुण्डिजी के माध्यम से प्रगटित भक्ति का अखंड भण्डार श्रीरामकथा, कई कल्पों और युगों से करोड़ों लोगों का भला करती हुई आ रही है। यह सस्टेनिबिलिटी का परम उदाहरण है।

उपरोक्त परिणामों से से यह स्थापित होता है कि श्रीरामचरित मानस की फलश्रुति के अंतर्गत परम उपलब्धि के रूप में वर्णित विज्ञानभक्ति सर्वाधिक व्यवहारिक एवं लोकोपयोगी धारणा है। इसके साथ ही भुशुण्डिजी को दिए गए वर के रूप में इसी विज्ञानभक्ति के दर्शन होते हैं जो भक्ति और इंजीनियरिंग की अवधारणा में विलक्षण समानता को इंगित करती है।

अब देखा जाए तो व्यवहारिक रूप से भक्ति मनुष्य के सद्गुणों से संबंधित है और इंजीनियरिंग विशुद्धतः भौतिक पदार्थों का क्षेत्र है। तब इस भक्ति और इंजीनियरिंग का तो लक्ष्य भिन्न हो जाएगा। लेकिन श्रीरामचरितमानस, इस संशय को भी एक महानतम उदाहरण के माध्यम से दूर कर देता है।

श्रीरामचरित मानस का यह अनुपम उदाहरण विशुद्ध विज्ञानभक्ति पर ही आधारित है वस्तुतः आधुनिक इंजीनियरिंग को भी जड़-चेतन के मध्य समन्वयनात्मक संबंध की नयी दृष्टि देता है।

आधुनिक इंजीनियरिंग में यह "जड़-चेतन के मध्य समन्वयनात्मक संबंध" ही सस्टेनिबिलिटी का सबसे बड़ा आधार बन सकता है। इस उदाहरण में रामचरित मानस, इंजीनियरिंग को ऐसे विकास का लक्ष्य देता है, जिसमें भौतिक संसाधनों के परिपेक्ष्य में ही व्यक्ति के मन से समस्त नकारात्मकताएं दूर हो जाएं और मानवीय गुणों की सर्वत्र स्थापना हो सके। मानस का यह उदाहरण, शोध के आरम्भ में उल्लेखित संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सस्टेनिबिलिटी के आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय लक्ष्यों की संयुक्त प्राप्ति का भी आवश्यक तत्व सिद्ध होता है।

रामायण में विज्ञानभक्ति का व्यवहारिक उदाहरण- व्यक्ति के निवास का स्थान याने कोई घर, उसके आसपास का क्षेत्र या फिर पूरा नगर निर्माण करना, विज्ञान के अनुप्रयोग से आधुनिक सिविल इंजीनियरिंग का एक महत्वपूर्ण विकास कार्य है। मानस में भुशुण्डिजी का आश्रम एक ऐसा ही निवास स्थान है। इसके संबंध में श्रीगरुड़ जी कहते हैं कि, "देखि परम पावन तव आश्रम, गयउ मोह संसय नाना भ्रम"। अर्थात भुशुण्डिजी के उस आश्रम को मात्र दूर से देख लेने से ही गरुड़ जी के मन से मोह ही नहीं, संशय और विभिन्न प्रकार के भ्रम तुरंत नष्ट हो जाते हैं।

चेतन अर्थात मानवीय मन के दुर्गुण दूर होने के लिए एक जड़ माने जाने वाले आश्रम का दर्शन भी सहायक हो सकता है, श्रीरामचरित मानस यह अवधारणा प्रस्तुत करती है!

विश्लेषण से यह भी ज्ञात होता है, कि रामायण में यह अवधारणा कोई चमत्कार के रूप में वर्णित नहीं है, बल्कि इस आश्रम की विशिष्टता के मूल में भी "विज्ञानभक्ति" ही है।

वर्तमान समय में हम ज्ञानविज्ञान की विभिन्न मानवीय एवं भौतिक शाखाओं को मिलाकर विज्ञानभक्ति परआधारित इंजीनियरिंग अर्थात अध्यात्म और विज्ञान का सही समन्वय कर के आगे बढ़ेंगे तब ही वास्तविक सस्टेनेबिलिटी का लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा।

3. निष्कर्ष

'ज्ञान' और ज्ञान का अनुभव 'विज्ञान' अत्यंत महत्वपूर्ण होने के बाद भी लगभग नीरस, व्यक्तिगत लाभ के साधन और अत्यंत सीमित प्रभाव के होते हैं।

श्रीरामचरित मानस में भगवान के विषय में सर्वोच्च ज्ञान और विज्ञान की भी यही स्थिति दिखती है। लेकिन भगवान के विषय में जब यही ज्ञान और विज्ञान व्यवहार में प्रगट होने लगते हैं तथा भगवान की कथा, नाम जप, सत्संग जैसे भक्ति के प्रतिनिधि साधनों के द्वारा अन्य लोगों की नकारात्मक प्रवृत्तियों को दूर करने का भी माध्यम बनते हैं तब यह प्रक्रिया विज्ञान और भक्ति को संयुक्त करते हुए 'विज्ञानभक्ति' कहलाती है।

यह 'विज्ञानभक्ति' श्रेष्ठतम अवधारणा इसलिए है क्योंकि इसमें ज्ञान और विज्ञान के साथ ही भक्ति के प्रभाव में प्रेम, प्रसन्नता, जड़चेतन के प्रति संवेदना जैसे लोकोपयोगी मानवीय गुणों का भी समावेश हो जाता है।

ऐसे में आधुनिक इंजीनियरिंग भी जब रामायण में भक्ति जैसी ही प्रक्रिया के रूप में स्पष्टता से वर्णित दिखाई देती है, तब यह इंजीनियरिंग भी विज्ञानभक्ति से प्रेरित हो सकती है।

इसी आधार पर आधुनिक इंजीनियरिंग भी जब स्वयं को मात्र रूखे ज्ञान और विज्ञान का ही विषय ना मानते हुए, इस विज्ञान के व्यवहार में प्रगट करने की प्रक्रिया के अंतर्गत यदि प्रेम, प्रसन्नता, जड़ चेतन के प्रति संवेदना जैसे मानवीय तत्वों को समावेशित कर लेती है, तब यह इंजीनियरिंग अधिक लोकोपयोगी होकर विज्ञानभक्ति के माध्यम से सस्टेनिबिलिटी की स्थापना में पूर्ण सहयोगी हो पाएगी।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. **"श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण"** महर्षि वाल्मीकि प्रणीत, गीताप्रेस गोरखपुर
2. **"श्रीरामचरितमानस"** गोस्वामी तुलसीदासजी रचित, गीताप्रेस गोरखपुर
3. **"रामायण में सिविल इंजीनियरिंग",** लेखक डॉ. मनीष दुबे, इंद्रा पब्लिकेशन हॉउस, 2020 Online-
4. United Nation https://www.un.org/esa/sustdev/documents/WSSD_POI_PD/English/POI_PD.htm
5. Gita- https://www.gitasupersite.iitk.ac.in/srimad/

मानस के प्रतिनायक दशानन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण : वाल्मीकि रामायण और आध्यात्म रामायण के तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में ..!

राजरानी शर्मा
सुभाष शर्मा
(rajranis@gmail.com)

रामचरितमानस कालजयी कृति है । कालजयी होने के लिये महाकाव्य में कथा चयन , पात्र चयन , शब्द चयन , छंद चयन के अतिरिक्त अन्य शताधिक युक्तियाँ प्रभावोत्पादक होती हैं । महाकाव्य के शास्त्रीय लक्षणों के अनुसार महाकाव्य का नायक धीरोदात्त और विश्व प्रसिद्ध होना चाहिए साथ ही उसके नायकत्व को चतुर्दिक उद्भासित करने के लिये चुने गये मार्मिक कथा प्रसंगों पर बल देने के साथ प्रतिनायक के चरित्र चित्रण में प्रयुक्त मनोवैज्ञानिक युक्तियाँ प्रयोग की जानी चाहिये क्योंकि ये युक्तियाँ महाकवि के प्रयोजन को न केवल सिद्ध करती हैं अपितु उसे अमरकृति बनाने और नायक की वर्चस्व कथा की विश्वप्रसिद्ध कीर्ति के लिये भी उत्तरदायी होती हैं । क्योंकि प्रतिनायक बनने के लिए आपको कहानी के मुख्य पात्रों में से एक को चुनना कथा प्रसंग की माँग है । कवि का सुचिन्तित व्यक्तित्व होने के बावजूद, प्रतिनायकों में उन अनेक गुणों, विशेषताओं या कथानक का अभाव होता है जिनकी पाठक एक सामान्य नायक से अपेक्षा करते हैं। कवि जिस तरह से अपने प्रतिनायक के चरित्र को महाकाव्य में प्रस्तुत करता है, वह महत्वपूर्ण है। दूसरे शब्दों में, वे एक स्पष्ट खलनायक या एक पारंपरिक नायक हो सकते हैं। विश्व साहित्य में कथानक को हर दिल अज़ीज़ बनाने में नायक प्रतिनायक का द्वन्द्व एक अद्भुत रस सृष्टि करता है , और महाकाव्य या एपिक को अंतिम ऊँचाई तक ले जाकर कालजयी बनाता है । साहित्य में सर्वश्रेष्ठ प्रतिनायक पात्रों पर विचार करते समय, हमें सबसे पहले यह परिभाषित करना होगा कि प्रतिनायक क्या है। सामान्यतः, यह एक ऐसा नायक होता है जिसमें पारंपरिक रूप से नायक में पाए जाने वाले सभी या कोई भी गुण नहीं होते—जैसे साहस, नैतिकता, या परोपकारिता , दूसरों को बचाने की कोशिश करने के बजाय, उनका मुख्य उद्देश्य बदला लेना, शक्ति, अपना अस्तित्व बचाना हो सकता है, या उनका कोई रहस्यमय या विध्वंसक नैतिक मूल्य हो सकते है।जैसे भारतीय महाकाव्यों के प्रतिनायक हिरण्यकशिपु , हिरण्याक्ष, मधु कैटभ , कंस और दुर्योधन , शिशुपाल और दंतवक्र आदि विध्वंसक , निडर , निर्दयी और तुलसी की भाषा में कहें " जे बिनु काज दाहिने बाँये " या चलत दसानन डोलत धरनी "जैसे अकारण भयाक्रान्त कर देने वाले होते हैं । कथा में चरमोत्कर्ष बिना प्रतिनायकों के नहीं आता । महाकाव्य की उदात्त चेतना में परस्पर विरोधाभासी तत्वों का एक साथ अस्तित्व प्रभावोत्पादकता बढ़ाता है ।

हालांकि वे अक्सर नैतिक रूप से अस्पष्ट या यहां तक कि अनैतिक होते हैं, सर्वश्रेष्ठ प्रतिनायक चरित्र खलनायक का पर्याय नहीं होते हैं। वास्तव में, जब किसी कथा को खलनायक के दृष्टिकोण से दोहराया जाता है, तो कथा का प्रतिपक्षी अक्सर प्रतिनायक बन जाता है। यों तो पुरातन से लेकर अधुनातन साहित्य तक प्रतिनायकों की अपनी जगह है । आजकल पॉप साहित्य या व्यस्क साहित्य में तो नयी युवा पीढ़ी प्रतिनायकों को नायकों से भी अधिक स्थान देती है क्योंकि उनके चरित्र में साहस है , निर्भीकता है और आतंकित करने की युक्तियाँ हैं । रहस्य रोमांच है और कल्पनाशीलता से भरी उदात्त फैंटेसियाँ हैं इसलिये साहित्य में प्रतिनायकों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है और आज की पीढ़ी को नकारात्मक पात्र और नकारात्मक हिंसा भरे प्रसंग परपीडक प्रसंग और दुराचारी प्रसंग और उनके पात्र पाठकों की रूचि में अधिक स्थान पा रहे हैं । यदि पश्चिम के कुछ प्रतिनायकों की चर्चा करें तो दोस्तोवस्की का प्रतिनायक - रोडियन रस्कोलनिकोव , फियोदोर दोस्तोवस्की की " क्राइम एंड पनिशमेंट " में एक गरीब छात्र, रस्कोलनिकोव, 19वीं सदी के सेंट पीटर्सबर्ग में दो बुज़ुर्ग महिलाओं की हत्या कर देता है। वह उपन्यास के बाकी हिस्से और अपनी पूरी ज़िंदगी अपने किए पर चिंतन करते हुए और प्रायश्चित करने में बिताता है। रस्कोलनिकोव इसलिए मनोरंजक है क्योंकि वह स्वयं को एक असाधारण व्यक्ति मानता है, जो कि एक मानसिक विडंबना ही है जो उसे निरंतर दोषी और दुखी बनाता है। दोस्तोवस्की के अन्य महत्वपूर्ण पात्रों की तरह, वह साहित्य में अभूतपूर्व तरीकों से दर्शन, धर्म और मनोविज्ञान की पड़ताल करता है।इसी प्रकार प्रतिनायक जीवन रूपी सिक्के का दूसरा पक्ष प्रस्तुत करके विभिन्न आयामों से चिन्तन को परिपुष्ट करते हैं । तुलसी प्रारंभ में ही लिखते हैं कि " संग्रह त्याग न बिनु पहचाने " अर्थात् तामसिक वृत्तियों , अन्याय , अपराध और शोषण , गो ब्राह्मण साधु संतों के अकारण शोषकों को भी विस्तार से जानने और उनका अंत उनकी पराजय से जीवन के मूल्यों का दर्शन समझने के लिये महाकाव्यों में प्रतिनायकों का चुनाव गंभीरता से किया जाता है क्योंकि उनके नकारात्मक चरित्र का सीधा प्रभाव नायक के धीरोदात्त और धीरोद्धत रूप पर पड़ता है । नायक का चरित्र नकारात्मक और विध्वंसक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में अधिक सक्रियता ा से कार्य कर सकता है । तुलसी ने अपने प्रतिनायक को इतना महत्वपूर्ण आयाम दिया कि राम जन्म से पहले रावण जन्म की कथा को विस्तार दिया । मानस से ही एक उदाहरण चुना जाये तो भरद्वाज ऋषि के आश्रम में जब भरत जी अपने अवधवासियों को लेकर पहुँचते हैं तो अनायास मुनि के मुख से निकल जाता है " मुनिहि सोच पाहुन बड़ नेवता । तस पूजा चाहिअ जस देवता ॥ " इसी प्रकार जितना बड़ा महानायक है उसकी टक्कर का ही

प्रतिनायक होना चाहिये। अपने प्रतिनायक का प्रथम परिचय देते हुए तुलसी लिखते हैं " दस सिर ताहि बीस भुज दंडा। रावण नाम वीर बरिबंडा॥ " (मानस बालकांड) अर्थात् आतंक का पर्याय दशानन ! दशानन की कहानी का रामचरितमानस में इतना एकतान विस्तार है कि प्रारंभ से अंत तक जहाँ राम के शर , मंदोदरी के आगे उसके दसों सीस और बीस भुजाओं को रखकर ही महागाथा की इति श्री करते हैं। महाकाव्य के प्रारंभ से अंत तक वर्णन किया गया है। महाकाव्य का मूल प्रयोजन इसमें संनिहित है इसलिये प्रतिनायक महाकाव्य के प्राण का ही एक आयाम है।

गोस्वामी तुलसीदास जी की अमर कृति रामचरितमानस के नायक श्रीराम- शक्ति , शील सौन्दर्य के स्वामी , "विग्रहवान धर्म " और लोकरक्षक हैं। रामचरितमानस का प्रतिनायक दशानन सुचिन्तित अभिनेता , प्रबुद्ध चरित्र और प्रयोजनानुसार योजना बनाकर कार्य करने वाला निपुण योद्धा है। प्रतिनायक (anti-hero) के रूप में रावण एक जटिल और संश्लिष्ट चरित्र है, जो अपनी असाधारण विद्वत्ता, शक्ति और शासन क्षमता के साथ-साथ अहंकार, क्रोध और वासना जैसे अवगुणों से ग्रस्त था, जिसके कारण उसका पतन हुआ और वह रामायण का

प्रमुख विरोधी बना। वह एक शक्तिशाली राजा, ज्ञानी ब्राह्मण, कुशल संगीतज्ञ और शिव का भक्त था, लेकिन सीता के अपहरण जैसे कृत्य ने उसे नायक राम का योग्य प्रतिद्वंद्वी बना दिया! प्रत्यक्ष में तो महाकवि तुलसी उसके मुख से अपनी पत्नी मंदोदरी के लिये कहलवाते हैं " सुनु तैं प्रिया वृथा भय माना। जग जोधा को मोहि समाना॥ "(मानस लंकाकांड) लेकिन परोक्ष रूप से मानो दशानन ये कहता है कि " जग भक्त को मोहि समाना " अर्थात् इस जग में मेरे समान अनोखी सी भक्ति करने वाला और कौन है ? रावण भक्त है ये बात अटपटी लग सकती है लेकिन राम के ईश्वर शिव का जगत्प्रसिद्ध और परम भक्त है रावण। मर्म को जानता है ! मननशील है , एकांतसेवी है , पौरुष का पर्याय है। पारिवारिक जीवन मूल्यों को जानने वाला है। भाइयों को साथ लेकर चलने वाला है। लेकिन उसका अनोखा चरित्र उसे राम का शत्रु प्रसिद्ध करना चाहता है। ये अनोखी सी राह उसने चुनी है। आधुनिक कवि के शब्दों में कहें " प्रभु के रहस्यमय जीवन की यह अलग जरा सी परिपाटी मेरे अनंत निर्भय मन की " कहकर रावण भक्ति की राह चुनता है जिसमें निहित है कि " बदनाम जो होंगे तो क्या नाम न होगा "

सामान्यतया प्रतिनायक युद्ध जीतने के लिये और राज्य हड़पने के लिये ही रणनीति बनाते रहे हैं लेकिन दशानन तो भक्ति रूपी सीता को हरण करके हठ पूर्वक और सुनियोजित रणनीति बनाकर अपना उद्धार श्रीराम के हाथों कराने को प्रतिबद्ध होता हैं और ऐसा दृढ़ संकल्प लेता है कि अंत तक अर्थात् लक्ष्य की प्राप्ति तक कोई भी उसे अपनी संकल्पनिष्ठा से डिगा नहीं पाता फिर चाहे मारीच मामा हो, उसकी पत्नी मंदोदरी हो या भाई विभीषण और कुंभकर्ण हो , पुत्र प्रहस्त हो या सचिव माल्यवंत हो , ऋषि पुलस्त्य का संदेश हो या सीता जी की मर्मभेदी प्रताड़ना हो ; हनुमान और अंगद का ज्ञान संदेश हो अनेक बाधाओं के बाबजूद दशानन अपने संकल्प रूपी परोक्ष भक्ति पर अडिग खड़ा है। तुलसी की महागाथा मानस का विश्वप्रसिद्ध प्रसंग जब अरण्यकांड की कथा में जब श्रीराम खर दूषण का वध कर देते हैं ….

"धुआँ देखि खर दूषन केरा। जाय सूपनखा रावण प्रेरा॥
करसि पान सोवसि दिनराती। सुधि नहीं तव सिर पर आराती॥

(अरण्यकांड मानस)प्रतिनायक के रूप में रावण जब शूर्पणखा को समझा कर अपने दरबार से घर आता है किन्तु …,

"सूपनखहि समुझाय करि बल बोलेसि बहु भाँति।
गयउ भवन अति सोचबस। नींद परी नहिं राति॥

अन्तर्द्वन्द्व और आत्मचिंतन में डूब जाता है ….. बहुत विचार करने के बाद क्या सोचता है ?

"खर दूषन मोहि सम बलवंता। तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता॥
सुररंजन भंजन महिभारा। जो भगवंत लीन्ह अवतारा॥

तौ मैं जाय बैर हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ॥(अरण्यकांड मानस)

साथ ही वह अपने निशाचर मन को भली भांति जानते हुए यह स्वीकारोक्ति भी देता है कि …

"होइहि भजन न तामस देहा। मन क्रम वचन मंत्र दृढ़ एहा॥ "(अरण्य कांड - मानस)

यह तुलसी के प्रतिनायक दशानन की अपनी निंजा शैली है प्रभु चरणों में समर्पण की और अपने प्रकार की निजी और परोक्ष भक्ति है जिसमें उसका लक्ष्य संधान भी हो जाय तथा प्रभु का मही का भार उतारने और देवताओं की रक्षा करने का संकल्प भी पूर्ण हो जाये। साथ ही प्रभु को उसका वध करने का ठोस कारण भी मिल जाये जिससे बाली की तरह उसे और पूरे संसार को श्रीराम से ये न कहना पड़े कि " मैं वैरी सुग्रीव पियारा। कारन कवन नाथ मोहि मारा " (किष्किन्धा कांड - मानस)प्रकारान्तर से रावण अपने भगवंत को ठो….

"जो नररूप भूप सुत कोऊ। हरिहऊँ नारि जीति रन दोऊ॥ "क्योंकि शूर्पणखा ने सूचना दी थी

"अतुलित बल प्रताप द्वौ भ्राता। खल वधरत सुर मुनि सुख दाता॥ सोभाधाम राम अस नामा। तिन्ह के संग नारि एक स्यामा॥ (मानस अरण्यकांड)

संकल्प लेते ही अपनी अद्भुत संकल्पना से प्रतिबद्ध होकर सुनियोजित योजना प्रारंभ करता है दशानन ! और मामा मारीच के पास जाता है उसे भली - भाँति ज्ञात है कि किससे क्या कार्य कराना है ? प्रतिनायक दशानन के दुर्दान्त चरित्र को बुनते हुए तुलसी ने बार - बार इस तथ्य को प्रकाश में लाया

है कि दशानन "जगदंबा सीता "को हर लाया है। यद्यपि अरण्यकांड में जैसे ही शूपर्णखा के विरूपीकरण के द्वारा " लछिमन अति लाघव कहँ नाक कान बिनु कीन्ह।

तेहि के कर रावण कहँ मनहु चुनौती दीन्ह ॥" के साथ ही श्रीराम सीता जी को अग्नि प्रवेश करने की आज्ञा बडे ही योजनाबद्ध तरीके से देते हैं

"सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला ।मैं कछु करब ललित नर लीला।
तुम पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करहु निसाचर नासा ॥ " (अरण्यकांड)

कहने का तात्पर्य यह कि रावण सीता जी को नहीं छाया सीता को ही हरण करके लाया।

एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जिस प्रकार राम नरलीला कर रहे हैं जिसमें मरण , बिछोह, हर्ष - विषाद , कमजोरी, आँसू , हार - जीत, आशा - निराशा और छल - कपट सब सहन कर रहे हैं। लेकिन पूरे वनवास काल में नर लीला करते हुए राम सतत सजग रह कर अपने ऐश्वर्यभाव को अपनी सहज मुस्कानों से माधुर्यमंडित करने का ध्यान रखते हैं। कभी ऐश्वर्य प्रकट नहीं होने देते। एक वर्ष से अधिक विरह सहन करते हैं। उसी प्रकार प्रतिनायक दशानन भी सदैव अपने प्रतिद्वंद्वी भाव को जाग्रत रखता है। ये महाकाव्य का एकतान विस्तार और तनाव है जो कथाक्रम को आकर्षित बनाता है। रावण सदा ही अपने भक्त और तत्वज्ञानी रूप को साभिप्राय सोद्देश्य छिपा कर रखता है। यही महाकाव्योचित विधान है जिसे नायक और प्रतिनायक के चरित्रों को सटीक व सजग चरित्र - चित्रण के द्वारा संश्लिष्ट रूप से बुना गया है। अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं जैसे रावण को अवश्य ज्ञात होगा कि —

- हनुमान अशोक वाटिका में हैं फिर भी नजर अंदाज करता है।

1. विभीषण को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है और प्रतिपक्षी का स्मरण करने की अनुमति देता है।
2. मंदोदरी के द्वारा स्वयं को खद्योत और राम को दिनकर बताने पर भी हिंसा नहीं करता अपितु बात को टालते हुए चार बार मंदोदरी को क्षमा करता है , आलिंगन करता है और एक बार तो कहता है कि " मैं तुम्हारी चतुराई जानता हूँ। शत्रु का प्रताप बता कर तुम मेरी व्याज स्तुति कर रही हो "
3. रावण कहता है " जग जोधा को मोहि समाना लेकिन मन ही मन भयभीत रहता है ।जब सुंदरकांड के अंत में शुक लक्ष्मण जी द्वारा दिया पत्र लेकर आता है तो तुलसी लिखते हैं - " सुनत सभय मन मुख मुसकाई " अंदर से भयभीत है ऊपर से मुस्कुराता है।
4. जो भी भक्ति रूपी सीता जी को लौटाने की बात कहता है

उसी को लात से प्रहार करता है फिर चाहे विभीषण हो या शुक हो किसी की बात नहीं मानता दशानन !

- बहुत महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि महाकाव्य में कुछ प्रसंगों को सकारात्मक और मार्मिक बना कर प्रस्तुत किया जाता है जैसे केवट के द्वारा राम के चरण प्रक्षालन का प्रसंग अमर हो गया क्योंकि उसमें केवट न केवल स्वयं बल्कि महाकवि के अनुसार" पद पखारि जल पान करि आप सहित परिवार। "
- पितरि पार कर प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लै पार ॥ (मानस अयोध्या कांड)

यहाँ यह रेखांकित किया गया है कि केवट ने पहले अपने परिवार और पितरों को भव सागर से पार कराया फिर स्वयं पार गया। यह विश्व विख्यात मार्मिक प्रसंग है ! लेकिन इसी योजना के अन्तर्गत प्रतिनायक दशानन ने पहले अपने पूरे परिवार एवं भाइयों सहित परिजन व पुरजन को श्रीराम के हाथों युद्ध में सुगति दिलाई और फिर अंत में आप स्वयं अपनी पूर्व योजनाबद्ध पद्धति से श्रीराम के हाथों परम गति प्राप्त करता है। गोस्वामी तुलसीदासजी प्रतिनायक का अंत इस प्रकार लिख कर कथा को अद्भुत गरिमा प्रदान करके लिखते हैं —

"डोली भूमि गिरत दसकंधर। छुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर!
धरनि परेउ द्वौ खंड बढ़ाई ।चापि भालु मर्कट समुदाई ॥
मंदोदरि आगें भुज सीसा। धरि सरि चले जहाँ जगदीसा ॥
प्रबिसे सब निषंग महँ जाई। देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाई ॥ "!(मानस लंकाकांड)

अब जो मुख्य उल्लेखनीय बिन्दु है …..

"तासु तेज समान प्रभु आनन। हरषे देख संभु चतुरानन ॥
जय जय धुनि पूरी ब्रह्मंडा। जय रघुबीर प्रबल भुजदंडा॥ "

कहने का तात्पर्य यह है कि पुत्र , भ्राता और परिजन मृत्यु का अथाह शोक सहन करके भी दशग्रीव ने पहले परिवार की मुक्ति सुनिश्चित की बाद में स्वयं की। क्योंकि पहले ही योजना थी कि " तौ मैं जाय बैर हठि करऊँ ॥प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ ॥" लेकिन नकारात्मक और प्रतिनायक होने के कारण रावण की इस योजना को अतिरिक्त प्रचार न मिला न ही श्रेय दिया गया। लेकिन यह बिल्कुल केवट जैसी ही योजना है इसमें कोई संदेह नहीं।

महाकवि तुलसी ने रावण के चरित्र में प्रतिनायकत्व की पराकाष्ठा का सुनियोजित और सुचिन्तित निर्वाह करते हुए उसमें दंभ , पाखंड , अतिशय आत्मविश्वास , क्रोध , दुर्व्यवहार, विलासिता , दुर्वचन , और दुर्व्यसनों का भंडार भर दिया है जिससे उसकी कर्मठता , उद्यमिता , भक्ति , समर्पण और तेज छिप गया है। उसके तमस से मन के उजास को पूर्णतया आच्छादित कर लिया है।

रामचरितमानस जैसे युग सापेक्ष और कालजयी काव्य के महान धीरोदात्त नायक राम के लिए एक शक्तिशाली और धीरोद्धत प्रतिनायक का होना आवश्यक था, इसीलिये महाकवि तुलसी ने दशानन जैसा प्रतिद्वन्द्वी दिया और उसको मनोवैज्ञानिक रूप अन्तर्द्वन्द्व प्रधान और परोक्ष रूप से मुक्तिकामी चित्रित किया। रावण ने जब तपस्या की तभी से उसे विष्णु के अवतार श्रीराम के हाथों प्राण त्यागने और परम गति मोक्ष पाने की मानो महत्वाकांक्षा पाल रखी थी , इसीलिये मानस में प्रतिनायक का चरित्र रचते हुए तुलसी का दशानन ब्रह्मा जी से वरदान भी इसी अर्थ का माँगता है -

" हम काहू के मरै न मारे। वानर मनुज जात दुइ वारे " यह वरदान या तो भावी वश माँगा था दशानन ने या उसे महाविष्णु को मनुज रूप में साक्षात् देखने की लालसा थी या उसका अभिमान इतना बड़ा था कि वह मानव और वानरों को अपना भोज्य समझता था। राम अवतार के बहुत से प्रयोजन में से एक प्रयोजन प्रतापभानु के रावण रूप में जन्म की कथा भी है। रावण की असाधारण शक्ति और बुद्धि ने उसे एक योग्य प्रतिद्वंद्वी बनाया। ऐसा प्रतिनायक जिसका अंत करने के लिये बार-बार भगवान को अवतार लेना पड़ता है। मनोवैज्ञानिक रूप से देखा जाय तो रावण के प्रतिनायकत्व में निम्नलिखित गुण हैं —

जटिलता और मानवीयता: रावण केवल बुराई का प्रतीक नहीं है; वह अच्छाई और बुराई का एक जटिल मिश्रण है, जो उसकी कहानी को और भी गहरा और विचारोत्तेजक बनाता है।

नैतिक शिक्षा - प्रतिनायक दशानन की कहानी अहंकार, इच्छाओं और नैतिक पतन के स्तरों की एक चेतावनी है, जो हमें आत्म-जागरूकता और विनम्रता का महत्व सिखाती है।

वाल्मीकि रामायण और प्रतिनायक दशानन ….

वाल्मीकि रामायण में भिन्न प्रयोजनों को सिद्ध करने के उद्देश्य से कथा क्रम में इतिवृतातत्मकता है अर्थात् यथार्थ परक और घटनाप्रधानता को वरीयता दी गयी है। महर्षि वाल्मीकि आदि

प्रतिनायकों के चरित्र नायक के चरित्र की अच्छाइयों को उजागर करने के लिये रचे जाते हैं। प्रतिनायक से यदि लोक को और पाठक को आत्यन्तिक घृणा होती है तो इसका अभिप्राय यह है कि कवि का प्रणयन और प्रतिनायक का चरित्र सफल है। कवि का प्रयोजन सिद्ध है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करें तो ऐसे अनेक प्रसंग हैं जहाँ दशानन को संवेदनशील भी बताया है लेकिन पहली बार पुत्र की मृत्यु का समाचार सुनकर भी एक पल को पिता दशानन भाव- विह्वल नहीं होता ये आत्यन्तिक अर्थात् अतिशय उक्ति है। या तो अतिरिक्त संयमी है या काठ मन है या शून्य चेतना है लेकिन रावण इनमें से कुछ नहीं है। यों रावण को मेघनाद जैसे इन्द्रजीत वीर पुत्र को भी अपने अंक में बैठाते हुए दिखाया गया है ! लेकिन उसका बाह्य और आंतरिक दोनों व्यवहार अलग हैं जैसे सीताजी को हरण करते समय मन ही मन प्रणाम करता है। सुषेण को लक्ष्मण जी के उपचार हेतु आज्ञा देना , राम को युद्ध की तैयारी हेतु पर्याप्त समय देता है आदि अनेक कार्य - व्यवहार उचित हैं और प्राकृतिक हैं। सभी जानते हैं कि दशानन संगीतज्ञ , कला रसिक और शंकर भक्त व काव्य प्रणेता हैं तो बिना संवेदनशील हृदय के ये समस्त कार्य संपादित नहीं किये जा सकते। उदाहरण के लिये और भी बहुत से घटनाक्रम व उदाहरण हैं जो जनश्रुति और परंपरा के कारण नकारात्मक ध्वनि देते हैं लेकिन यदि हम गंभीरता से विचार करें तो ये उदाहरण व प्रकरण आश्चर्य में डाल देते हैं जैसे - समुद्र पर सेतु बंध का समाचार सुनकर दशानन दस मुख से दस पर्यायवाची बोल कर आश्चर्य प्रकट करता है

"बाँध्यो बननिधि नीरनिधि, जलधि सिंधु बारीस।

सत्य तोयनिधि कंपति , उदधि पयोधि नदीस॥ "(मानस लंकाकांड) लेकिन इसका निहितार्थ यह भी है कि मन ही मन राम की प्रतीक्षा करता रावण ये समाचार सुनकर आश्वस्त हो जाता है कि सेतु बाँध लिया है , अर्थात् मुझ तक अवश्य आयेंगे ! यों रावण के दशसिर भी प्रतीकात्मक हैं। अपमान करना उसका व्यसन है तो अपमान सहना भी उसकी ताकत है —- संगीत सभा के भरे दरबार में जब राम के बाण रावण के चार मुकुट गिरा देते हैं तो प्रजा को ढाढस बँधाते हुए कहता है -

"सिरहु गिरे संतत सुभ जाहीं। मुकुट गिरे कस असगुन ताहीं " मानो उसको सब ज्ञात है कि मुकुट किसके बाणों से गिरे हैं और उनका क्या निहितार्थ है।

इसी प्रकार एक और प्रकरण रावण की परोक्ष भक्ति पर विश्वास दिलाता है जब शुक उससे आकर कहता है —

"मिला जाय जब अनुज तुम्हारा। जातहि राम तिलक तेहि सारा। "(मानस सुंदरकांड) दशानन इस समाचार से भी मन ही मन आश्वस्त होता है कि मेरी सद्गति सुनिश्चित है श्रीराम ने घोषणा कर दी है कि दशानन का अंत होगा और विभीषण राजा बनेगा! मानो प्रभु चरण में दशानन का एकतान ध्यान लगा है न कोई बात उसे विचलित करती है न अपने प्रण से डिगाती है न धीरज खोती है। प्रजा के सम्मुख अंत तक रक्षक की भूमिका का निर्वाह करता है। अन्तरद्वन्द्व की मथानी मन ही मन मथ रही है परंतु प्रत्यक्षत : रावण पूरे मनोयोग से वैर निर्वाह करता है ! क्योंकि विद्वान रावण

जानता है वैर ऐसा दृढ मनोभाव है कि व्यक्ति सोते - जगते उठते - बैठते खाते - पीते ही नहीं साँस लेते भी अपने वैरी को भूल नहीं पाता और यही उस प्रतिनायक का साध्य है कि वह तैलधारवत प्रभु को सुमिरन करे। अंतत: उसे सारूप्य मुक्ति पानी है और श्री प्रभु उनके स्वामी और रावण उनका शापग्रस्त द्वारपाल ही तो है। शरण जाये बिना निर्वाह कैसे होगा।

प्रकारान्तर से देखा जाय तो मनोवैज्ञानिक धरातल पर ये एक साहसिक कार्य है कि अपने सामने अपने ही अनुचर से शत्रु की प्रशंसा सुनना और राज्य धन धर्म सब जाते देखना। शुक यहाँ तक कहता है कि " नाथ कटक मँहु सो कपि नाहीं। जो न तुम्हहि जीतै रन माँही ॥ " संयम की पराकाष्ठा चाहिए अपने ही अनुचर से ये सुनने के लिए। कुंभकर्ण को जगाने जाता है तब कुंभकर्ण भी दशानन को धिक्कारता है " जगदंबा हर आनि सठ , अब चाहेसि कल्यान ॥ " मानो दशानन स्थितप्रज्ञ हो गया है।

इतने सारे अन्तर्विरोधों से जो भीषण अन्तर्द्वन्द्व रावण के मन में होता है उसे सहन करता हुआ त्रिभुवनपति राम का रण में सामना करता है यह बड़ी साहस की बात है। रावण भली - भाँति जानता है कि सारा देवलोक श्रीराम की ओर चौदह भुवन के पति हैं जब मंदादरी उसे सुनाती है प्रभु का विराट् रूप तो मानो रावण मन ही मन मुस्कुराता है कि "पद पाताल सीस अज धामा अखिल लोक दायक विस्रामा " ये सब किसे सुना रही है मौं तो उनका द्वरापाल रहा हूँ बरसों बरस ! सब जानता हूँ। लेकिन यहाँ यदि प्रभु नरलीला कर रहे हैं तो मैं भी वैरी का अभिनय कर रहा हूँ। रावण को किसी बात का अभिनिवेश यानी खो जाने का भय नहीं है न राज्य न पुत्र , न भ्राता न प्रजा। उसे ज्ञात है सब सिद्ध लक्ष्य की ओर ही जा रहे हैं।

दशानन अकेला है , निपट अकेला और से अकेलापन अपने चारों ओर मानो उसने प्रभु से सारूप्य भेंट

होने के लिए अपने चारों ओर स्वयं बुना है। स्वयं दशानन के इष्ट शंकर भी रामानुरागी हैं तो अब किसकी शरण ग्रहण करे ? इतनी विपरीत परिस्थितियों में भी दशानन सशक्त प्रतिपक्ष से अंत तक युद्ध करता है। नियति कहें या प्रारब्ध प्रतिनायक बनते - बनते यह दशानन का तीसरा जन्म है और सुगति परब्रह्म के हाथों होनी ही है जो नर लीला कर रहे हैं ऐसे में दशानन हार कर भी जीत जाता है अपने वैदुष्य के कारण अपनी योजना के कारण अपने तप के कारण और अपनी अर्जित शक्तियों के कारण। नकारात्मक शक्तियों , व्यसन , मदांधता और अतिशय अहंकार के दशानन के सारे गुण कौशल तप और संसाधन धूलिसात् हो जाते हैं। अंत में उसकी स्वयं की पत्नी रानी मंदोदरी ही कहती है कि . …

"राम विमुख अस हाल तुम्हारा। रहा न कुल कोऊ रोवनिहारा "॥

"काल बिबस पति कहा न माना। अग जग नाथ मनुज करि जाना "(मानस लंकाकांड)

लोक में भी शताधिक उक्तियाँ रावण के अहंकार को लेकर बनी हैं " इक लख पूत सवा लख नाती। ता रावण घर दिया न बाती ॥ "

- रावण अभिमान , अहंकार और सहस्रों दुर्गुणों के साथ अन्तर्द्वन्द्व , नैराश्य , एकाकीपन और अवसाद का शिकार है। उसकी मन: स्थिति उसे सैनिकों को लताड़ लगाने को प्रेरित करती है " समर भूमि भये वल्लभ प्राना !" कहकर सैनिकों को प्रताड़ित करना और परिवारजनों का अपमान करना जैसे माल्यवंत , विभीषण, मारीच और कालनेमि सभी को डराता धमकाता है। पत्नी को अनसुना करता है ये सब लक्षण उसे घोर प्रतिनायक बनाते हैं !
- वाल्मीकि रामायण का प्रतिनायक दशानन और मानस से तुलना ….!
- वाल्मीकि रामायण में भिन्न प्रयोजनों को सिद्ध करने के उद्देश्य से कथा क्रम में इतिवृतातत्मकता है अर्थात् यथार्थ परक और घटनाप्रधानता को वरीयता दी गयी है। महर्षि वाल्मीकि आदि कवि हैं। इतिहास प्रधान दृष्टिकोण होने के कारण वाल्मीकि का प्रतिनायक भिन्न स्वरूप

वालाविपुलैः दर्शनीयैः च रक्ष अक्षैः भीम दर्शनैः |

दीप्त तीक्ष्ण महादम्ष्ट्रैः प्रलम्ब दशनच् चदैः ||

शिरोभिः दशभिः वीरम् भ्राजमानम् महाओजसम् |

नाना व्याल समाकीर्णैः शिखरैः इव मन्दरम् ||

वाल्मीकि का रावण महाबलशाली है किन्तु सदैव चाटुकारों से घिरा रहता है। तुलसी के समान वाल्मीकि के यहां भी दशानन के दस शिरों के साथ विचित्र से स्वरूप का वर्णन है ! वाल्मीकि के यहाँ रावण संतत क्रोध में ही रहता है। रावण मारीच प्रसंग से एक संवाद देखने योग्य है : -

। न चेतकरोशि मारिच हनमि त्वमहामाद्य वै।

एतत्कार्यमवश्यं मे बलादपि करिष्यसि।

रजोणो हि प्रतिकुलस्थो न जातु सुखमेधते।3.40.26।।

हे मारीच! यदि तू ऐसा नहीं करेगा, तो मैं अभी तुझे मार डालूँगा। या फिर बलपूर्वक तुझसे यह काम करवाऊँगा। राजा के विरुद्ध जाने वाला कोई भी व्यक्ति सुख से नहीं रहता।

असद्य तं जीवितसंशयस्ते मृत्युर्ध्रुवो ह्यद्या मया विरुद्ध।

एतद्याथवत्प्रतिगृह्य बुद्धि यदात्र पथ्यं कुरु तत्तथा त्वम्।।3.40.27।।

युद्ध में राम का सामना करने के बाद तुम्हारा बचना संदिग्ध है। लेकिन यदि तुम अभी मेरा विरोध करोगे तो तुम्हारी मृत्यु निश्चित है। सोच-समझकर वर्तमान परिस्थितियों में जो भी तुम्हारे लिए वांछनीय हो, करो।

इत्यार्षे श्रीमद्रमायाणे वाल्मीकि आदिकाव्ये आरण्यकाण्डे चत्वारिणशस्सर्ग। ।

इस प्रकार ऋषि वाल्मीकि द्वारा रचित वाल्मीकि रामायण में वर्णित प्रतिनायक दशानन के चरित्र की बानगी देख सकते हैं !

- यों तो वाल्मीकि रामायण आदि काव्य है । ऐतिहासिक और इतिवृत्तात्मक है । वाल्मीकि रामायण का युग अलग है इसलिये महर्षि वाल्मीकि का महाकाव्य लिखने का प्रयोजन बिल्कुल पृथक है । वाल्मीकि जी का दशानन सभी कलाओं में पारंगत है । धन धान्य और समृद्धि का अथाह संचय और स्रोत है । दिग्गज और शनि उसके दास हैं काल और यम उसके बंदी हैं । रावण यहां भी मदांध व्यसनी और राम विमुख चित्रित किया गया है! रावण का वैभव त्रैलोक्य में दुर्लभ है लेकिन रावण के व्यसन सारे सारे निशाचरों वाले हैं । गर्व है , शोषण है निर्दयता है और है आतंक ! वाल्मीकि रामायण में रावण के बाह्य पक्ष को अधिक उजागर किया है और उसके आंतरिक पक्ष या अन्तर्द्वन्द्व को कम उजागर किया है । वाल्मीकि जी का अपना निहितार्थ है । उनका प्रतिनायक सजग तो है किन्तु समर्पित नहीं ।

आध्यात्म रामायण और प्रतिनायक दशानन ….

आध्यात्म रामायण में प्रसंगों की मार्मिक और आध्यात्मिक व्याख्या देखने को मिलती है । मानस के तरह का ही संकल्प आध्यात्म रामायण में भी आता है जब युद्ध कांड में दशानन मंदोदरी से वार्ता करते हुए कहता है ….

“आगमिष्यामि नो चेन्मां दारयिष्यति सायकै: ।

श्रीरामो वज्रकल्पैश्च ततो गच्छामि तत्पगम् ॥ “(आध्यात्मरामायण - युद्ध कांड)

साथ ही यह भी कहता है जो मानस के दशानन के विचार और संकल्प से मिलता भी है ….

“जानामि राघवं विष्णुं लक्ष्मीं जानामि जानकीम् ।

ज्ञात्वैव जानकी सीता , मयानीता वनाद्बलात् ॥ “

यहाँ भी योजनाबद्ध है सीता जी का अपहरण क्योंकि “ तौ मैँ जाय वैर हठि करऊँ “

का दृढ़ संकल्प है ….

“परानंदमयी शुद्धा सेव्यते या मुमुक्षुभि: ।

तां गति तु गमिष्यामि हतो रामेण संयुगे ॥ “

अर्थात् मुमुक्षु जन जिस परानंदमयी शुद्ध गति का सेवन करते हैं भगवान् श्रीराम के हाथों मर कर मैं उस गति को प्राप्त करूँगा । अर्थात् स्पष्ट है कि तुलसी का प्रतिनायक दशानन आध्यात्म रामायण से प्रेरित चरित्र है ।

रावण अतुलित ज्ञानी तथा बहु-विद्याओं का मर्मज्ञ था। एक कुशल राजनीतिज्ञ, सेनापति और वास्तुकला का मर्मज्ञ राष्ट्रनायक था।

अशोक वाटिका जैसा विराट बाग तथा नदियों पर बनवाए गए पुल प्रजा के प्रति उसकी कर्तव्यनिष्ठा के प्रमाण हैं। स्वयं हनुमानजी उसके धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र संबंधी ज्ञान का लोहा मानते थे। महान शिवभक्त होने के साथ-साथ उसने घोर तपस्या के द्वारा ब्रह्मा से भी अनेक वरदान प्राप्त किए थे। आकाशगामिनी विद्या तथा रूप परिवर्तन विद्या के अलावा पचपन विद्याओं के लिए रावण ने पृथक से तपस्याएँ की थीं। ऐसा शास्त्रों में स्पष्ट उल्लेख मिलता है ।

यत्र-तत्र फैली वैदिक ऋचाओं का कुशल संपादक रावण अंक-प्रकाश, इंद्रजाल, कुमार तंत्र, प्राकृत कामधेनु, प्राकृत लंकेश्वर, ऋग्वेद-भाष्य, रावणीयम (संगीत), नाड़ी-परीक्षा, अर्कप्रकाश, उड्डीश तंत्र, कामचाण्डाली, रावण भेंट आदि पुस्तकों का रचनाकार भी था। रावण ने शिव-तांडव स्तोत्र तथा अनेक शिव स्तोत्रों की रचना की। यह अद्भुत है कि जिस 'दुराचारी' क्रोधी रावण के तामसिक पक्ष को ही हम जानते हैं , उसी रावण ने लंका के प्रसिध्द आयुर्वेदाचार्य सुषेण द्वारा अनुमति माँगे जाने पर घायल लक्ष्मण की चिकित्सा करने की अनुमति सहर्ष प्रदान की थी।

सभी जानते हैं कि सीता जी को भक्ति स्वरूपा मानने के कारण भी संयमी रावण ने माता सीता को अंत:पुर में नहीं रखा, राम का वनवास-प्रण खंडित न हो, अतः अशोक वन में सीता को स्त्री-रक्षकों की पहरेदारी में रखा। सीता को बाहरी रूप से धमकाने वाले तथाकथित कामी रावण ने सीताजी द्वारा उपहास किए जाने के बावजूद, उन पर बलप्रयोग कदापि नहीं किया, यह उसकी सहनशीलता और संयमशीलता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। सीता जी से मिलने गया तो पत्नी के साथ गया । सीताहरण के पूर्व, शूर्पणखा के नाक-कान काटे जाने के प्रतिशोधरूप नीतिपालक रावण ने वनवासी राम पर आक्रमण नहीं किया, उन्हें अपनी सेना बनाने की, और अपने युद्ध में सहायक ढूँढने की पूरी कालावधि दी। रावण से रक्षा हेतु राम को अमोघआदित्य स्तोत्र का मंत्र देने वाले ऋषि अगस्त्य का यह कथन हमारे नेत्र खोल देने वाला होगा- “ हे राम! मैं अपनी संपूर्ण तपस्या की साक्षी देकर कहता हूँ कि जैसे कोई पुत्र अपनी बूढ़ी माता की देख-रेख करता है वैसे ही रावण ने सीता का पालन किया है।” (अध्यात्म- रामायण)

प्रतिनायक दशानन ने अपनी राज-सत्ता का विस्तार करते हुए अंगद्वीप, मलयद्वीप, वराहद्वीप, शंखद्वीप, कुशद्वीप, यवद्वीप और आंध्रालय को जीतकर अपने अधीन कर लिया था। अर्थात् आध्यात्म रामायण का प्रतिनायक रावण एक महान योद्धा के साथ भक्त भी था ! नारद जी ने देवताओं से कहा कि —-

"शृणुतान सुरा यूयं धर्मतत्वविचक्षण: ।

रावणो राघवद्वेषादभिषां हृदि भावयन् । (82 युद्धकांड आध्यात्म रामायण)

भृत्यै सह सदा रामचरितं द्वेष संयुत: ।

श्रुत्वा रामात्स्वनिधने भयात्सर्वत्र राघवम् ॥ (84 आ. रामायण युद्ध कांड)

देवताओं ने कहा यह रावण महातमोगुणी, ब्रह्म घाती, परस्त्री परायण, भगवद्विरोधी और तपस्वियों को पीड़ा देने वाला है ।परंतु सबके देखते देखते यह भगवान में लीन हो गया । इस प्रकार देवताओं के कहने पर नारद जी देवताओं को कारण समझाते हुए कहते हैं ….

पश्यन्नुदिनं स्वप्ने राममेवानुपश्यति ।

क्रोधोऽपि रावणस्याशु गुरुबोधाधिकोऽभवत् ॥ (85 . युद्ध कांड आध्यात्म रामायण)

हे देवताओं रावण वैर भाव के कारण अनुचरों सहित सोते जगते राम के ही ध्यान में रहता था ।इसलिये उसका वैर भी भक्ति से बड़ा हो गया ।

रामेण निहितश्चान्ते निर्धूताशेषकल्मष : ।

रामसीयुज्येवापि रावणो मुक्तबंधनम् ॥ (86 . युद्ध कांड आध्यात्म रामायण)

श्रीराम के द्वारा स्वयं मारे जाने के कारण रावण के समस्त पाप तत्क्षण नष्ट हो गये ।और बन्धन रहित होने के कारण उसने सायुज्य पद को प्राप्त किया । इस प्रकार आध्यात्म रामायण में अद्वैत वेदान्ती स्वरूप की चर्चा की गयी है । लेकिन तुलसी ने दोनों काव्यों आध्यात्म रामायण और वाल्मीकि रामायण से पृथक् प्रतिनायक की एक तार्किक मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक संरचना की है जो सुसंगत और वैज्ञानिक है तर्क संगत है ।

इतिहास ही नहीं कल्पना और इतिहास का कविकृत वृत्त अर्थात् चरित्र हृदय के संश्लिष्ट भावों को बुनते आये हैं । प्रत्येक महाकाव्य का शैलीचिह्नक या स्टायलमार्कर अलग होता है । प्रतिनायक महाकाव्यों की दिशा और दशा सुनिश्चित करते हैं । प्रतिनायक काव्य को ही नहीं महानायक को भी एक लक्ष्य , एक प्रयोजन देते हैं । उनके उदात्त अनुदात्त गुणों दुर्गुणों की चर्चा होती है , महाकाव्य की प्रत्येक घटना को नियंत्रित करते हैं । महानायक को महानायक सिद्ध करने में प्रतिनायकों की उत्कृष्ट भूमिका होती है । दशानन एक ऐसा ही प्रतिनायक है जिसने शत्रुभाव से हरि को देखा और हृदय में धारण किया । और मित्र भाव या कहें गुरु भाव से हर को देखा ! दशानन एक ऐसा प्रतिनायक है जिसका शत्रु भाव भी गुरु भाव भी अर्थात् सकारात्मक और नकारात्मक दोनों भाव अनोखे हैं । विश्व नियंताओं से सीधे संपर्क बना पाने के कारण यह प्रतिनायक इतिहास और पुराण दोनों में अप्रतिम है । दशानन ने अपने चरित्र से सिद्ध कर दिया कि निशाचर भी बनो तो द्वन्द्व में न रहो । अपनी भूमिका को दृढ़ता से निबाहो । "हरि अन्तरयामी सब जानी "। रावण जैसे प्रतिनायक की विराट् चेतना अद्भुत सेतुबंध बनाती है जो हरि और हर का मिलन कराती है । दोनों विराट तत्वों को मिलाती है और एक ऐसी कथा का निदर्शन करती है जिसका हर पात्र एक आयाम है और हर चौपाई में नव्यतम जीवन पाथेय देता है । मानस संजीवनी देता है । फिर प्रतिनायक का तो कहना ही क्या उसके दुर्गुण त्याज्य हैं और परोक्ष भक्ति संग्रहणीय एवं अनुकरणीय ! रावण ने जो मंदोदरी से कहा कि " जग जोधा को मोहि समाना " इसकी व्यंजना यह है कि मैं अपने वचन पर अडिग और लक्ष्य पर अटल रहूँगा । इसे इस रूप में देखें कि उसने अपना संकल्प सत्य कर लिया । हिरण्यगर्भ हरि को अपनी हिरण्यमयी लंका में साग्रह बुला लिया और सायुज्य मुक्ति का स्वप्न पूर्ण कर लिया । यदि आगे कोई महाकवि महाकाव्य रचे तो रचेगें कि गतांक से आगे दशानन सायुज्य मुक्ति पाकर वैकुंठ में हरि का सामीप्य सदा सदा के लिये पा गया और महाकवि तुलसी की इस उक्ति को सत्य सिद्ध कर गया कि " भायं कुभायं अनख आलसहू । नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ ॥

राम-कृष्ण के मध्य अद्वैतवाद

अलका प्रमोद
(pandeyalka@rediffmail.com)

श्री राम और श्री कृष्ण प्रत्यक्ष रूप से मानवीय दृष्टि में अवतरण काल, गुण एवं आचरण में भिन्न प्रतीत हो सकते हैं जिससे उनके मध्य द्वैतवाद का भ्रम उत्पन्न होता है परंतु गूढ़ विश्लेषण इस द्वैतवाद के भ्रम का पटाक्षेप कर उन दोनों के प्रकाश को एकाकार करता है। दोनों ही विष्णु का अवतरण हैं और समान उद्देश्य से त्रेता और द्वापर में अवतरित हुए जिनका लक्ष्य धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश है जो कृष्ण और राम के मध्य अद्वैतवाद को सिद्ध करता है।

1. प्रस्तावना

अद्वैतवाद का मूल अर्थ है एक ही तत्व के विभिन्न रूप। श्री राम और श्री कृष्ण सामान्य मानव के लिए भले ही दो नाम हैं, दो रूप हंै परन्तु वे एक ही ब्रह्म के दो रूप हैं।

यद्यपि दोनों के रूप द्वैत का आभास देते हैं एक भक्त वत्सल है तो दूसरा शरणागत वत्सल प्रतीत होते हैं। श्री राम ने अपने आचरण से शिक्षा दी तो श्री कृष्ण ने अपने उपदेशों से। मानव, समाज और देश के क्रमिक विकास में सृष्टि और मानव के हितार्थ त्रेता युग में श्री राम ने नैतिकता आदर्श के उत्कृष्ट मापदंड स्थापित किये कठिन से कठिन परिस्थिति में सत्य को अपनाने की सीख दी तो श्री कृष्ण ने विषम परिस्थितियों में संघर्ष करने की शिक्षा दी। श्री राम ने स्वयं दुख सह कर सत्य का प्रकाश दिया तो श्री कृष्ण ने गीता के उपदेश दे कर अंधेरे से निकलने की राह सुझाई। यदि बाह्य स्वरूप से परे उनके उद्देश्य, उनकी अलौकिकता पर अन्तर्मन में मनन करें तो दोनों को एकसार पायेंगे। यही नहीं पौराणिक ग्रंथ भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। कहना न होगा कि इस विश्लेषण से राम-कृष्ण के मध्य अद्वैतवाद सिद्ध होता है।

2. विस्तार

सर्वप्रथम देखते हैं कि अद्वैतवाद है क्या है? जैसा कि पूर्व में इंगित है अद्वैतवाद का मूल अर्थ है एकत्ववाद अर्थात एक होना। अद्वैतवाद का मानना है कि अस्तित्व में केवल एक ही परम सत्य है जो ब्रह्म है। जो भौतिक संसार में दृष्टिगत है, वह माया है। जीव और आत्मा एक है। 'अहम् ब्रह्मास्मि' इसका मूल मंत्र है अर्थात अपने शब्दिक अर्थ के अनुसार 'मैं ब्रह्म हूँ' यानि कि हम मात्र शरीर नहीं वरन् उस असीमित शक्ति का अंश हैं जिसे ब्रह्म कहा जाता है। वेदांत दर्शन के अनुसार ब्रह्मांड में एक ब्रह्म है जिसके विभिन्न रंग रूप है और जब वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति होती है तो इस भ्रम का निराकरण होता है और सिद्ध होता है कि समस्त अस्तित्व एकीकृत है शेष माया है, भ्रम है। अद्वैतवाद में मात्र सर्वोच्च ईश्वर है और एक है इसीलिए कहा जाता है कि ईश्वर सबमें विद्यमान है। इसे धर्मिक एवं आध्यात्मिक दोनों संदर्भों में मान्यता प्राप्त है।

जब ईश्वर एक है तो स्वाभाविक है कि श्री राम और श्री कृष्ण जो ईश्वर का ही अवतार हैं, एक ही हैं। यह तो दर्शन के सिद्धान्त पर सिद्ध होता है कि श्रीराम एवं श्री कृष्ण एक हैं परंतु इन सिद्धान्त से परे भी हम पुराणों का अवलोकन करें तथा दोनों के अवतरण, उनके उद्देश्यों का सूक्ष्म विश्लेषण करें तो श्री राम एवं श्री कृष्ण के मध्य अद्वैतवाद सिद्ध होगा यही नहीं दूसरे शब्दों में कहें तो इस तथ्य के विपरीत श्री राम और श्री कृष्ण का एक होना अद्वैतवाद के सिद्धान्त की भी पुष्टि करेगा।

सनातन धर्म के पौराणिक ग्रन्थ इस बात का समर्थन करते हैं। पौराणिक ग्रंथों में प्रस्तुत अद्वैत दर्शन में श्री राम, श्री कृष्ण आदि अवतारों की भक्ति को निराकार ब्रह्म तक पहुँचने का मार्ग बताया गया है। भक्त किसी भी एक आराध्य को अथवा सभी के प्रति सच्ची भक्ति की राह से परम सत्य को प्राप्त कर सकता है। यह सिद्ध करता है कि श्री राम और श्री कृष्ण में तात्विक एकता है अर्थात उनके मध्य अद्वैतवाद है अर्थात दोनों ही परमेश्वर का रूप हैं।

अध्यात्म रामायण में लिखा है कि रामायण की गाथा शिव जी ने पार्वती जी को सुनायी थी जो अध्यात्म रामायण के नाम से विख्यात है। जिसमें लिखा है कि-

को वा ज्ञातुं त्वामतिमानं गतमानं
मायासक्तो माधव शक्तो मुनिमान्यम्।
वृन्दारण्ये वन्दितवृन्दारकवृन्दं

वन्दे रामं भवमुखवन्द्यं सुखकन्दम्। 16।

-अध्यात्म रामायण युद्धकाण्ड सर्ग। 13 ।।

अर्थात ब्रह्मा जी कहते हैं -हे लक्ष्मीपते! आप प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से परे है ंऔर सर्वथा निर्मान (जिसका परिणाम या मान न हो)हैं। ऐसा कौन माया से आसक्त प्राणी है जो आपको जानने में समर्थ हो सकता है? आप महर्षियों के माननीय हैं और कृष्ण अवतार के समय वृन्दावन में अखिल देवसमूह की वन्दना करते हुए भी रामस्वरूप में शिव आदि देवताओं के स्वयं वन्दनीय हैं, मैं ऐसे आप आनन्दघन भगवान राम को प्रणाम करता हूँ। सनातन धर्म में मान्यता है कि युग पुनः आते हैं जैसे सतयुग त्रेता द्वापर और कलियुग के अंत के पश्चात पुनः वही युग आयेंगे और प्रत्येक त्रेता में श्री राम और द्वापर में श्री कृष्ण आयेंगे। इसीलिए ब्रह्मा जी

कृष्ण और राम दोनों के बारे में कहते हैं-

'नानाशास्त्रैर्वेदकदम्बैः प्रतिपाद्यं

नित्यानन्दं निर्विषयज्ञानमनादिम्।

मत्सेवार्थ मानुषभावं प्रतिपन्नं

वन्दे रामं मरकतवर्णं मथुरेशम्।17।

अध्यात्म रामायण याुद्धकाण्ड सर्ग ।। 13 ।।

ब्रह्मा जी कहते हैं-जो नाना शास्त्र एवं वेद समूह से प्रतिपादित नित्य आनंदस्वरूप निर्विकल्प ज्ञान स्वरूप और अनादि हैं तथा जिन्होंने मेरा कार्य करने के लिए मनुष्य रूप धारण किया है उन मरकतमणि के समान नीलवर्ण मथुरानाथ (श्री कृष्ण)भगवान राम को प्रणाम करता हूँ।

इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण में लिखा है कि-

'शाङगर्ुधन्वा हृषीकेशः पुरुषः पुरषोत्तमः।

अजितः शंख-घृग् विष्णुः कृष्णश्चैव बृहद्बलः।।'

श्री वाल्मीकि रामायण। 6.117.15 ।

अर्थात ब्रह्मा जी श्री राम से कहते हैं- आप ही शाङगर्ुधन्वा, हृषीकेश अन्मर्यामी पुरुष और पुरुषोत्तम हैं। आप अजित हैं, आप नन्दक नामक तलवार धारण करने वाले विष्णु एवं महाबली कृष्ण हैं।

'प्रभवश्चाप्यश्च त्वमुपेन्द्रो मधुसूदनः।। '

श्री वाल्मीकि रामायण। 6.117.16 ।

ब्रह्मा जी श्री राम से कहते हैं -आप ही जगत की उत्पत्ति और प्रलय का कारण हैं एवं आप ही मधुसदन हैं।

सीतालक्ष्मीर्भवान् विष्णुर्देवः कृष्णः प्रजापतिः।

श्री वाल्मीकि रामायण। 6.117.27 ।

ब्रह्मा जी श्री राम से कहते हैं - हे प्रभु! सीता साक्षात

लक्ष्मी हैं एवं आप विष्णु हैं। आप ही कृष्ण हैं एवं आप ही आदि प्रजापति हैं।

स्वयं श्री राधा ने कहा है कि श्री राम के नाम का जो अर्थ है वही श्री कृष्ण नाम का अर्थ है। हनुमान जी, जामवंत जी, भगवान शंकर जी सबके लिए श्री कृष्ण वहीं श्री राम हैं।

पुराणों के अतिरिक्त भी प्रथम दृष्टया श्री राम एवं श्री कृष्ण के मध्य तुलानात्मक अध्ययन करने पर निम्न तथ्य श्री राम एवं श्री कृष्ण के एक होने की पुष्टि करते हैं -

हिन्दू धर्म ग्रन्थों के अनुसार श्री राम एवं श्री कृष्ण एक ईश्वर अर्थात विष्णु जी के अवतार हैं जो अलग-अलग ईश्वर नहीं वरन एक ही निराकार सर्वव्यापी ईश्वर के दो रूप हैं जिन्होंने अलग-अलग युगों में उस युग की आवश्यकता के अनुसार मानवीय अवतार ग्रहण किया। त्रेता युग में अवतरित श्री राम धरती पर सातवें अवतार थे तो द्वापर युग में अवतरित श्री कृष्ण आठवें अवतार।

भले श्री राम के 12 कलाओं के ज्ञाता तथा श्री कृष्ण को 16 कलाओं का ज्ञाता माना जाता है परंतु उनका प्राकट्य समान था। उनकी लीलाएँ भिन्न थीं, आचरण भिन्न थे परंतु उद्देश्य तथा सार एक था। दोनों ही धर्म की स्थापना तथा अपने मानव के उद्धार हेतु अवतरित हुए थे।

यद्यपि उनके रूप एवं लीलाएँ सर्वथा मिन्न थीं, श्री राम ने आचरण से मर्यादित एवं नैतिक मूल्यों के लिए निज सब कुछ त्याग देने का उद्धरण प्रस्तुत किया और मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम कहलाये तथा श्री कृष्ण ने चंचल रासलीला करने वाले, माखन चोरी जैसी लीलाओं से चंचल, चतुर, सुजान छवि स्थापित की परंतु साथ ही महाभारत में धर्म के संरक्षण हेतु जिस प्रकार अपनी भूमिका का निर्वहन किया और अर्जुन को दिये उपदेशों में जीवन का सार बताया उसने उन्हें विषम संकट में उद्धारक का रूप प्रदान किया। श्री राम मर्यादा ने धरती पर नैतिकता आदर्श जीवन की शिक्षा दी, प्रत्येक संबंध प्रत्येक परिस्थिति में आचरण के उद्धरण अपने आचरण से प्रस्तुत किये जबकि श्रीकृष्ण ने कठिन परिस्थितियों का सामना करने में

बुद्धिमत्तापूर्ण युक्तियों को अपनाने तथा कर्म को बिना फल की इच्छा के सर्वोपरि रखने की शिक्षा दी। यह भिन्नता साधारण मानव बुद्धि को भ्रमित कर सकते हैं परंतु सच तो यह है कि दोनों ने धर्म की रक्षा के विभिन्न पक्षों की शिक्षा दे कर जीवन जीने की राह प्रशस्त की।

श्री राम और श्री कृष्ण दोनों ने धरती पर धर्म का संरक्षण किया दुष्टों को धरती से संहार किया। यदि श्री राम ने रावण, ताड़का, मारीच, सुबाहु, खर ,दूषण, लवणासुर, कुंभकरण, बाली आदि का नाश किया तो श्री कृष्ण ने कंस, पूतना, बकासुर, शिशुपाल आदि का संहार किया।

दोनों ही पीतांबर हैं।

ईश्वर भक्त वत्सल होते हैं। उनकी भक्त वत्सलता के लिए कहा गया है-

‘भक्तानाम अनुरूपात्मा-दर्शनम’’

अर्थात, भगवान भक्तों की इच्छानुसार अपने विविध रूपों को प्रकट करते हैं। श्री राम एवं श्री कृष्ण दोनों ही भक्त वत्सल रहे। श्री राम का हनुमान जी से बड़ा भक्त तो कोई हो नहीं सकता तथा यह श्री राम की भक्त वत्सलता ही तो थी कि आज श्री राम की कृपा से उनसे अधिक मंदिर उनके भक्त श्री हनुमान जी के हैं। श्री राम के अहिल्या उद्धार, शबरी के जूठे बेर और केवट को प्रेम देने की कथा कौन भूल सकता है। शबरी की भक्ति से प्रसन्न हो श्री राम ने नवधा भक्ति सूत्र दे कर उसका उद्धार कर दिया। उन्होंने जाति, धन आदि नहीं देखा बस उसकी भक्ति को महत्व दिया।

संत तुलसीदास लिखते हैं-

‘‘नवधा भगति कहौं तोहि पाहीं। सावधान सुनु धरु मन माहीं।।’’

अर्थात, श्री राम ने शबरी से कहा-‘हे भामिनी, अब तू सावधान होकर मेरी नौ प्रकार की भक्ति सुन और मन में धारण कर।’’

वहीं श्री कृष्ण का सुदामा प्रेम, द्रोपदी का उद्धार, अर्जुन की सहायता भक्त वत्सलता के आदर्श उद्धरण हैं। सूर ने सुदामा चरित में लिखा-

हरि बिनु कौन दरिद्र हरै।
कहत सुदामा सुनि सुंदरि, हरि मिलन न मन बिसरै।।
और मित्र ऐसी गति देखत, को पहिचान करै।
पति परैं कुसलात न बूझै, बात नहीं बिचरै।।
उठि भेंटे हरि तंदुल लीन्हें मोहि न बचन फुरै
सूरदास लछि दई कृपा करि, टारी निधि न टरै।

अर्थात भगवान के बिना कोई भी दरिद्रता को दूर नहीं कर सकता।

चाहे श्री राम हों अथवा श्री कृष्ण दोनांे शिव पार्वती जी के उपासक हैं। श्री राम ने लंका युद्ध से पूर्व शिव जी की पूजा की थी जहाँ आज रामेश्वरम है। शिव पुराण में वर्णित है कि कृष्ण जी ने शिव जी की पूजा की तथा गोपेश्वर मंदिर का निर्माण करवाया।

दोनों ही ने राजधर्म का पालन किया श्री राम अयोध्यापति हैं तो श्री कृष्ण द्वारिकाधीश हैं। इसके अतिरिक्त भी उनमें अनेक समानताएँ हैं। यथा दोनों ही ने भगवान परशुराम के दर्शन किये, दोनों को जामवंत का सहयोग मिला। कहते हैं जामवंत और श्री कृष्ण के मध्य स्यमंतक मणि के लिए युद्ध हुआ पर जामवंत को कृष्ण में श्री राम दिखे अतः उन्होंने युद्ध रोक दिया और उनकी शरण में गये। उन्होंने श्री कृष्ण को मणि भेंट की और अपनी पुत्री से विवाह हेतु अनुरोध किया। जामवंत ने श्री राम के युग में हनुमान जी की सीताजी को खोजने में सहायता की। वह लंका युद्ध में श्री राम की सेना में सेनापति थे।

दोनों को हनुमान जी ने युद्ध में सहयोग दिया। दोनों की सहधर्मिणी लक्ष्मी जी का अवतार थीं।

संभवतः यही कारण है कि हम दोनांे को एक मानते हुए प्रायः हरे रामा हरे कृष्णा के जाप करते हैं।

कृष्ण का अर्थ है सर्व आकर्षक व्यक्ति तथा राम का अर्थ है जग में प्रकाश यदि गूढ़ अर्थों में देखें तो सौन्दर्य अथवा प्रकाश का अर्थ यह स्थूल सौन्दर्य अथवा प्रकाश से नहीं है वरन जिसके पास ज्ञान हो सर्वशक्तिमान हो, जिसमें जग हित का सौन्दर्य, हो लोकमान्य हो तथा त्याग करने वाला पर हितकारी हो और दोनों ही इन गुणों से परिपूर्ण हैं, दोनों ही विश्व में प्रकाशमान करते हैं।

यह गुण मानव में भी होते हैं परंतु मानव के अंदर यह गुण अति अति सूक्ष्म मात्रा में एक बूँद के बराबर होते हैं और श्रीराम एवं श्री कृष्ण जो मानव रूप में अवतरित अवश्य हुए थे परंतु अपनी अलौकिक शक्ति के कारण उनके अंदर ये गुण चरम पर थे जिससे उन्होंने धरती पर मानव रूप में अवतरित हो कर भी ईश्वरत्व को प्राप्त किया। सम्पूर्ण भौतिक जगत जिसके भीतर हमारा ब्रह्मांड अध्यन्त सूक्ष्म कण के समान है उनकी ऊर्जा का अत्यंत सूक्ष्म अंश है।

3. निष्कर्ष

हनुमान जी जामवंत जी भगवान शंकर जी सबके लिए वही श्री कृष्ण, वही श्री राम हैं। अध्यात्म रामायण में वाल्मीकि रामायण में भी स्पष्ट कहा गया है कि स्वयं ब्रह्मा जी ने कहा कि श्री राम और श्री कृष्ण एक हैं यही नहीं उनकी अलौकिक शक्तियों उनके धरती पर अवतरण के उद्देश्य भी उनके मध्य अद्वैतवाद को सिद्ध करते है।

4. संदर्भ

1. वेब दुनिया
2. वाल्मीकि रामायण
3. अध्यात्म रामायण
4. डी एन ए हिन्दी-सुमन अग्रवाल
5. कृष्णा.ओ आर जी -मधुद्वीसा दासा
6. स्टडी.काॅम-कैटलिन स्टीफंस

From Development to Dharma: Reimagining Sustainability through the Ramayana

Prabhas Ranjan
Patna Women's College Autonomous,Patna
(nirbhayaprabhas@gmail.com)

The modern journey of development, born from the industrial urge to convert nature into resources and later softened by the idea of sustainability, reflects humanity's restless desire to reconcile comfort with conscience. Yet, both remain trapped in the illusion that humans stand apart from the world they inhabit. This paper turns to the Ramayana, not as mythology but as metaphysics, to reimagine sustainability through Dharma, the principle that holds together the rhythm of existence. Here, Rita (ऋत) becomes the pulse of the cosmos and Dharma its dynamic moral breath. Through the lens of three paradigms, Development, Sustainable Development, and Dharma, the study reveals the way the Ramayana transcends managerial ecology to envision a cosmocentric order grounded in Samyama (restraint), Daya (compassion), and Sahabhava (co-being). The forest life of Rama, the return of Sita to Earth, and the downfall of Ravana are read as civilizational metaphors of balance lost and rediscovered. The paper affirms that true sustainability arises not from external systems of control but from inner discipline, where reverence replaces exploitation and living itself becomes an act of worship toward the world that sustains us.

Keywords: *Dharma*, Sustainability, *Ramayana*, *Rita*, Ecological Ethics

1. Introduction: From the Logic of Growth to the Grammar of Dharma

The idea of development has become one of the most powerful and unquestioned words of our modern time. It appears that all societies must move forward along the same path of economic progress and technological growth. The modern concept of development was born out of the spirit of the Industrial Age and the Enlightenment, in which reason and science were regarded as the highest forms of knowledge. It is based on the belief that human life improves when there is increased production, greater comfort, and more control over nature. The natural world, in this view, is treated mainly as a storehouse of resources for the satisfaction of human needs.

However, this endless search for progress has also created the contradictions of our age. The very success of development has brought problems of ecological destruction, climate imbalance, and moral emptiness. In response to these difficulties, the concept of sustainable development emerged as a reform within the existing model. It tried to bring a balance between economy and ecology, between growth and preservation. The Brundtland Report (1987) gave its famous definition: "development which meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs." This idea appears ethical, but its foundation remains rooted in the same material worldview. The problem remains not only about the environment but also about the way of thinking. It is an epistemic difficulty, not merely a policy one.

It is at this deeper level that the Indian idea of *Dharma* gives a different understanding. The word *Dharma*, coming from the root *Dhri*, to hold or sustain, means that principle which upholds the entire order of life. *Dharma* is not merely about moral codes; it is about maintaining balance with the changing dynamics of existence, which connects the human, the natural, and the divine (Muniapan, 2010; Chauhan, 2025; Shrivastavaa, 2012).

The Ramayana, one of India's most revered epics, presents a vision of Dharmic sustainability through its life stories. In it, nature is not merely a backdrop but an active participant in the moral order. Through the lives of Rama, Sita, and the forest dwellers, the text presents the idea of living in balance with all beings, respecting every form of life as sacred.

Scholars such as Muniapan (2010) interpret *Valmiki's Ramayana* as a text that develops managerial effectiveness and ethical responsibility rooted in *Dharma*, while Chauhan (2025) argues that Rama's governance model (*Ram Rajya*) demonstrates a form of sustainable leadership where social, moral, and ecological orders coexist harmoniously. Similarly, Shrivastavaa (2012) emphasises that Indian management ethics, guided by *Dharma* and *Karma*, integrate moral purpose with pragmatic action, contrasting sharply with the utilitarian basis of Western sustainability paradigms. Thus, where development seeks to manage nature, *dharma* teaches coexistence with it, ensuring balance through internal awareness rather than external control.

Objective of the paper

This study aims to compare how the three frameworks, Development, Sustainable Development, and *Dharma*, conceive the relationship between humans, nature, and value. By examining their foundations through the insights of the *Ramayana*, this paper aims to demonstrate that dharma offers a more comprehensive and profound understanding of sustainability, one that transcends both economic and managerial perspectives, moving toward a cosmic harmony of existence.

2. Defining the Three Paradigms: Development, Sustainable Development, and Dharma

When we compare the modern idea of development with the later idea of sustainable development, and then with the older Indic principle of *Dharma*, we can see that each one carries its own worldview, its own sense of what is real, and its own image of the human being. These are not only different stages of policy thinking but different ways of imagining life itself (Muniapan, 2010; Shrivastavaa, 2012).

The modern idea of development *(Vikas)* emerged with industrial modernity. It primarily assesses progress through the lens of material growth, focusing on the extent to which production, income, or infrastructure can be created to enhance human life. In this approach, nature stands outside the human story, serving as a tool or resource that can be harnessed for utility. The more we use, the more we advance. This was the faith of modernity (Brundtland Commission, 1987; Chauhan, 2025).

When the ecological consequences of such growth became apparent, the world sought to correct its course through sustainable development. This approach accepted the same goals of progress but asked that they be achieved with more care. It introduced the concepts of "balance," "intergenerational equity," and "responsible management." Still, it remained reformist, adjusting the model without questioning its deeper structure. It continues to see nature as an external system to be managed wisely, and human beings as the central but mechanical agents of management. (Muniapan, 2010; Brundtland Commission, 1987; Shrivastavaa, 2012).

In contrast, the Indic vision of Dharma moves beyond both. It is not only a moral guideline but also an ontological frame, grounded in Rita *(ऋत)*, the cosmic order. *Dharma* views the world as an interdependent web, rather than a hierarchy. Humans are neither owners nor guardians, but participants in the rhythm of existence. To live in *Dharma* is to live in harmony, where economy, society, and nature are not separate sectors but parts of the same living cosmos. This comparison can be seen more clearly in Table 1

Table 1 *Defining the Three Paradigms*

Aspect	Development (Vikas)	Sustainable Development (SD)	Dharma (Indic Vision)
Ontological Basis	Materialist, anthropocentric	Materialist, anthropocentric but ecologically aware	Cosmocentric, *Rita-based (ऋत)*
Goal	Economic progress, modernisation	Inter-generational equity	Harmony with cosmic order
Ethical Core	Utility, efficiency, productivity	Prudence, balance	Duty, restraint, harmony
Human–Nature Relation	Instrumental: Nature as resource	Stewardship: Nature as managed asset	Participatory: Nature as kin
Temporal Orientation	Linear progress	Linear but precautionary	Cyclical renewal
Agency	State, market, technology	Institutions, global cooperation	Individual conscience, collective *dharma*
Crisis Point	Environmental degradation	Policy-based mitigation	Ignorance of *rita* (*adharma*)

3. Dharma in the Ramayana: Illustrations of a Sustainable Cosmos

The *Ramayana* is not only a saga of virtue and heroism. It is also a civilizational text that portrays the harmony between the human, natural, and divine orders. The narrative of Rama's life is an enactment of *rita*, the cosmic rhythm, and *Dharma*, the principle that sustains that rhythm. In this sense, the *Ramayana* can be read as one of the earliest ecological texts in the world, where moral order and natural balance are seen as a single continuum. Each of its major episodes reflects an aspect of sustainability that modern frameworks often seek to rediscover through fragmented disciplines.

Rama's Dharmic Kingship: The Trustee of Cosmic Order

In the *Ayodhya Kanda*, the reign of King Dasaratha is portrayed as an age of harmony between human life and nature. The text records that "the people were happy, prosperous, and virtuous; no one was sick or poor, nor did any creature suffer" (*Valmiki Ramayana*, I.6.15–18, trans. Shastri, 1953). This description of a kingdom where moral order and natural abundance coexist reflects an early understanding of what might be called ecological governance. It suggests that good kingship (*Rajaniti*) is measured not only by wealth and security but by the flourishing of all living beings.

Rama inherits and later restores this balance through his understanding of kingship as a sacred trust rather than possession. When he learns of his exile, he accepts it with calm conviction, declaring:

"I shall gladly go to the forest in obedience to my father's word; for the command of one's father must be obeyed." (*Valmiki Ramayana*, *II.18.28–30*, trans. Shastri, 1953)

Rama's vow is constitutional, not theatrical. By placing dharma above artha and kama, he treats the throne as a trust aligned to rita rather than a personal asset. Hence, his installation of the padukas for Bharata: sovereignty belongs to dharma; the ruler is only its trustee.

Exile becomes statecraft training. In forests and hermitages, Rama learns that a realm includes rivers, groves, and sentient communities. His defence of sages' habitats models rajadharma as ecological custodianship, protecting the enabling conditions of learning, livelihood, and spiritual pursuit.

Rama's justice follows breach, not borders. In the Vali episode, he asserts a duty to restrain adharma wherever it injures the innocent; legitimacy rests on justice, consent, and service, as seen in his restoration of Sugrīva and acceptance of Vibhishana.

Sita as the Principle of Earth and Renewal

Sita's identity in the *Ramayana* is deeply symbolic. She is not only the consort of Rama but the very embodiment of *Prithvi-tattva*, the principle of the Earth that nurtures and renews all life. Her birth is described in the *Bala Kanda*, when King Janaka finds her while ploughing a sacred field:

"While I was ploughing the field, a girl was born from the furrow. Because she arose from the earth, I have named her Sita." (*Valmiki Ramayana*, I.66.13, trans. Shastri 1953)

This episode firmly identifies her with *Bhumi* (Earth) herself, patient, fertile, and silently sustaining. In the epic's cosmology, Sita becomes the *Shakti* that binds life to its rhythmic balance. Her life mirrors the natural cycle of *Utpatti* (emergence), *Sthiti* (sustenance), and *Pralaya* (return). She is born of the soil, nourishes the world through her presence, and finally returns to it in her act of renunciation.

At the close of the *Uttara Kanda*, when Rama's doubt and the social order demand her proof once again, Sita invokes her mother, the Earth, to take her back. The text narrates:

"As soon as Sita uttered these words, the Earth split open, and a divine throne arose from the abyss. The goddess Earth seated Sita upon it and descended into the depths, while fragrant flowers rained from heaven." (*Valmiki Ramayana*, VII.88.11–12, trans. Gita Press)

Sita's return to the Earth is thus not an act of despair but of restoration. It completes the cycle of *Rita*, the eternal rhythm of emergence, sustenance, and dissolution. Throughout her life, the Ramayana presents a vision of ecological ethics in which the feminine principle is not subordinate but sustaining, embodying the patience and regenerative power of the Earth herself. Her descent signifies the withdrawal of vitality when the world forgets reverence and balance. In this sense, Sita stands as the eternal reminder that when humanity violates the sanctity of nature, the Earth reclaims her gifts, and when it lives in alignment with *Dharma*, she blossoms again.

The Vanavasa Episode: Ecological Initiation

Rama's life in the forest (*Aranya Kanda*) is often seen as an exile and suffering, but from a *Dharmic* perspective, it is an initiation into the cosmic harmony of nature. The *Aranya*, or the forest, occupies a sacred place in the *Ramayana*; it is not a wilderness to be conquered but a living organism, the very heart of the cosmos, where distinctions of species, class, and hierarchy dissolve.

When Rama leaves Ayodhya, the poet describes his reverence for the landscape and its sanctity:

"Having circumambulated the sacred city, Rama, with joined palms, saluted the gods, the Brahmanas, and all beings before entering the forest." (*Valmiki Ramayana*, II.40.14–16, trans. Shastri, 1953)

Within *Aranya Kanda*, the hermitages (*ashramas*) of sages such as Atri, Agastya, Sharabhanga, and Sutikshna are repeatedly portrayed as integrated ecological communities. Each *ashrama* functions as a microcosm of sustainable living, where ascetic discipline (*tapas*), regulated use of resources, and non-violence toward all beings are practised. The *Ramayana* provides explicit descriptions of these settings:

- At Sharabhanga's hermitage, Rama finds "deer, birds, and ascetics dwelling together without fear," and "trees heavy with fruit, water clear and abundant" (*Valmiki Ramayana*, III.5.12–16, trans. Gita Press).
- The hermitage of Atri and Anasuya is presented as an environment of mutual care and moral instruction. Anasuya offers Sita fruits, roots, and water from the forest and counsels her on chastity, devotion, and simplicity, virtues drawn directly from the natural order (*Valmiki Ramayana*, III.9.1–22).
- When Rama visits Agastya's hermitage, the sage instructs him in the ethics of protection and restraint, urging him to maintain justice without aggression and to respect the balance of the forest while defending the innocent (*Valmiki Ramayana*, III.11.21–26).

These episodes demonstrate that the forest in the Ramayana is not a place of isolation, but rather a structured moral and ecological order. The *ashramas* serve as nodes of interaction where ascetics, animals, and householders coexist, governed by principles of moderation and reverence.

At Chitrakuta, this harmony reaches its aesthetic and ethical culmination:

"The hill was filled with birds and deer, adorned with flowering trees and echoing with the voices of forest dwellers." *(Valmiki Ramayana, III.5.22–24, trans. Gita Press)*

Such descriptions are not ornamental but serve to indicate the state of balance that arises when human conduct aligns with *Dharma*.

The *Vanavasa*, therefore, signifies more than a narrative of exile; it represents the process of ecological initiation, in which the protagonists learn to live within the rhythms of *Prakriti*. Through their interactions with sages and landscapes, Rama and Sita internalise the principle that right living is inseparable from right relation with the natural world. The forest becomes both the field and the framework of *Dharma*, demonstrating that sustainability in the Indic vision begins with awareness, restraint, and respectful participation in the order of life.

Ravana's Fall: The Symbol of Adharmic Development

In the *Yuddha Kanda*, Ravana's city of Lanka is described as a marvel of material splendour, its fortifications, towers, and golden streets shining "like a city of the gods." The text says:

"Surrounded by golden ramparts, adorned with crystal stairways and banners, that city shone like the morning sun rising upon the eastern mountain." (*Valmiki Ramayana*, VI.4.44–46, trans. Gita Press)

Lanka represents the height of technological and sensual achievement, mechanised gates, aerial towers, and an abundance of wealth (6.4.52–54). Yet beneath this brilliance lies Ahankara, the pride of domination and possession. Ravana's abduction of Sita, who personifies *Prithvi* (the Earth principle), is not only an act of personal desire but a metaphysical transgression. By seizing the embodiment of *Shakti*, he attempts to possess what must only be revered. In doing so, he disturbs the balance of *Rita*, the moral and cosmic rhythm that sustains all life.

Ravana's empire, though mighty, is founded on exploitation and excess. As Hanuman observes during his reconnaissance of Lanka:

"Here are splendid mansions, radiant with gems; yet within them dwell men consumed by lust and greed." (*Valmiki Ramayana*, VI.3.22–24, trans. Shastri 1953)

Ravana's fall, therefore, dramatises the spiritual and ecological logic of the *Ramayana*. His burning city (VI.53–54) and final defeat (VI.97–99) symbolise the implosion of a culture detached from restraint and reverence. In modern language, it mirrors the crisis of unsustainable development, the arrogance of technology without wisdom, growth without balance, and desire without compassion.

Thus, Ravana is not merely a villain but a cautionary archetype: the image of civilisation unanchored from *Dharma*, dazzling yet doomed, powerful yet hollow. His downfall reminds us that when humanity claims ownership over nature and the divine, it loses both.

Return to Ayodhya: Restoration of Rita

When Rama returns to Ayodhya after the great war, the *Ramayana* presents it not only as the homecoming of a king but as the restoration of cosmic order. The world itself seems to rejoice in his coronation. The *Yuddha Kanda* describes the scene in luminous detail:

"The city of Ayodhya shone with festivity; the trees, laden with flowers, bent as if to salute him. Gentle rains fell at the proper time, and every creature was filled with joy." (*Valmiki Ramayana*, VI.128.98–101, trans. Gita Press)

This is not merely a poetic celebration; it is metaphysical symbolism. Nature's response mirrors the restoration of *Rita*, the cosmic rhythm disturbed by Ravana's *Adharma*. The rain, the flowering trees, and the joy of beings signify that when moral order (*Dharma*) is reinstated in human action, ecological harmony spontaneously follows. The natural and the ethical form a single continuum; balance in one sustains balance in the other.

In this moment, sustainability is not portrayed as an external act of repair, but as an inner realignment. The epic suggests that when self-control, truth, and compassion return to the heart of governance, the earth itself responds in equilibrium. Rama's *Rajya Abhisheka* (coronation) thus symbolises not political power but cosmic participation, the fusion of moral consciousness with natural law.

The journey from exile to coronation, from *adharma* to *Rita*, encapsulates the deeper movement that this paper calls "from development to Dharma." It is a passage from domination to harmony, from fragmentation to wholeness. In Rama's return, the *Ramayana* affirms that the true prosperity of a civilisation lies not in its wealth or technology, but in its fidelity to the order that sustains all life.

4. Dharmic Model of Sustainability

In the modern idea of development, nature appears as an external resource, something outside the human being, available for extraction and transformation. This worldview arises from a duality between man and matter, mind and nature. The idea of sustainable development emerged in modern times as a soft correction. In this view, nature becomes a managed ecosystem, one that humans must care for because their survival depends on it. It recognises interdependence but still places man at the centre as the rational guardian. Thus, it remains a managerial rather than a moral issue.

In contrast, the Dharmic vision re-centres *satya* and *rita* as the guiding coordinates of human life. *Satya* is truth, not only factual accuracy but alignment with reality; *rita* is the cosmic order, the rhythm that sustains existence. Together, they form the sacred foundation upon which Artha (material life) and Kama (desire) must stand, and ultimately lead to *Moksha* (liberation). Thus, the crisis of sustainability is not the failure of economics but the forgetting of sacredness, the loss of the sense that life itself is a divine participation, not a mechanical process.

In the Dharmic understanding, sustainability is internal before it is external. It is not primarily a policy objective, but rather an inner discipline of the mind. One cannot legislate balance if the mind itself remains restless and unrestrained. Hence, the *Ramayana* teaches that true harmony begins in the heart of the human being, through three virtues that together sustain the cosmos: *Samyama* (self-control), *Karuna* (compassion), and *Sahabhava* (co-existence).

- *Samyama* controls the impulses of greed and domination, bringing moderation in consumption and clarity of purpose. Rama's life in the forest is the symbol of this voluntary simplicity.
- *Karuna* awakens empathy for all forms of life. It is seen in Sita's gentle love for trees and animals, and in Rama's sorrow even for his enemies after battle.
- *Sahabhava* recognises the inter-being of all existence. The forest dwellers, sages, animals, and gods of the *Ramayana* live not as hierarchies but as partners in the same cosmic play.

Through these three pillars, *Dharma* transforms sustainability from the language of control to the language of communion. It replaces external governance with inner awakening. The goal is not merely to survive across generations, but to live in such

awareness that every act becomes part of the world's renewal. This Indic vision, as revealed through *Dharma* and illustrated in the *Ramayana*, adds a fourth dimension, transforming sustainability from a management approach into a mindfulness practice.

The Dharmic Model of Sustainability re-roots these dimensions in inner consciousness and ethical restraint. The economy is guided by *Mita-bhoga*, which means moderation in consumption and the ethical use of wealth. The social order is nourished by *Daya*, compassion that embraces all beings, human and non-human alike. The environment is governed by *Bhuta-daya*, reverence toward all elements as manifestations of the same cosmic consciousness. At its centre stands *Moksha*, harmony with *Rita* and self-realisation, where the well-being of the world (*Loka-sangraha*) and the liberation of the self are recognised as one movement of awareness.

Table 2 *Comparative Table*

Category	Development	Sustainable Development	Dharmic Perspective (Ramayana)
View of Nature	External resource	Managed ecosystem	Manifestation of *Prakriti*
Human Role	Producer/consumer	Guardian/manager	Co-participant in *Rita*
Motivation for Action	Profit, comfort, progress	Survival, inter-generational justice	*Svadharma* (righteous duty)
Means of Regulation	Policy, law, technology	Global agreements, education	Self-restraint (*Samyama*), *tyaga*
End Vision	Prosperity	Continuity	Cosmic harmony, liberation (*Moksha*)

Table 2 shows three ways of looking at human–nature relations, from control to companionship. In "Development," nature is an external resource, people act mainly as producers and consumers, rules come from policy and technology, and the aim is prosperity. In "Sustainable Development," nature is a managed ecosystem, humans work as guardians, regulation leans on global agreements and education, and the aim is continuity across generations. In the Ramayana's dharmic view, nature is Prakriti's manifestation; humans are co-participants in Rita (cosmic order). Action is driven by svadharma (righteous duty), and regulation begins with self-restraint (samyama) and tyaga (sacrifice). The ultimate vision is harmony with the cosmos, leading toward moksha.

Table 3 *Integrative Table of Three Models*

Dimension	Economic	Social	Environmental	Spiritual (Dharmic Addition)
Development Model	Maximum growth and accumulation	Welfare linked to consumption and comfort	Exploitation of nature for material ends	-
Sustainable Development	Inclusive growth and responsible production	Equity and collective well-being	Preservation through regulated consumption	-
Dharmic Sustainability	Moderated consumption (*Mita-bhoga*) and ethical economy	Compassion (*Daya*) and mutual upliftment	Reverential use of resources (*Bhuta-daya*)	Harmony with *Rita* and Self-realisation (*Moksha*)

In this philosophical shift, the *Ramayana* stands as a living text of sustainability, not because it speaks to the environment, but because it reveals a worldview in which being sustainable means being truthful to the rhythm of existence itself.

Table 3 tracks a shift from having more to being more. The Development model chases maximum growth, ties social welfare to comfort and consumption, and treats nature mainly as a resource to be exploited. Sustainable Development softens this by aiming for inclusive growth, fair access, and regulated use of resources so ecosystems last. The Dharmic approach goes further: it asks for moderated consumption (*mita-bhoga*) and an ethical economy, centres compassion and mutual uplift, treats nature with reverence (bhūta-dayā), and adds a spiritual axis: living in tune with *Rita* and orienting life toward self-realisation (*moksha*).

5. Conclusion

The journey from development to sustainable development and ultimately to *dharma* is not only a shift in vocabulary, but also a shift in vision. It moves the human being from control to cooperation, from consumption to contemplation, from progress to participation in *Rita*.

In the *Ramayana*, every return to balance, Rama's restoration of *rita*, Sita's reunion with the earth, and the joy of *Rama* Rajya, teach that true sustainability is the flowering of *Dharma*. The world is sustained not by technology or policy alone, but by the purity of human intention. When *Samyama*, *Daya*, and *Bhuta-daya* become the basis of life, sustainability ceases to be a project and becomes a way of being.

Thus, the Dharmic model invites us to see that the final goal of sustainability is not endless survival but awakened harmony, the realisation that to sustain the world is to maintain the self.

6. Reference

1. Brundtland Commission. (1987). Our Common Future: Report of the World Commission on Environment and

Development. Oxford University Press. Available at: https://sustainabledevelopment.un.org/content/documents/5987our-common-future.pdf

2. Chauhan, M. (2025). Leaders in Competitive Business Environment: Lessons from Ancient Text Ramayana. In Eighth International Ramayana Conference Proceedings (pp. 109–112). Xavier Institute of Management, Jabalpur. Available at: https://iba.ac.in/wp-content/uploads/2016/12/IBA_Journal_July_Dec_2016.pdf
3. Valmiki. (2018). Valmiki Ramayana (Sanskrit–Hindi Edition). Gorakhpur: Gita Press. Available online at https://www.valmikiramayan.net
4. Muniapan, B. (2010). Ancient Indian wisdom for managers: The relevance of Valmiki Ramayana in developing managerial effectiveness. International Journal of Indian Culture and Business Management, 3(6), 687–699. DOI: https://pureportal.bcu.ac.uk/en/publications/ancient-indian-wisdom-for-managers-the-relevance-of-valmiki-ramay/
5. Shrivastavaa, S. (2012, July). A new look of Dharma and Karma: Social & ethical sense of management. International Journal of Trade and Commerce-IIARTC, 1(1). Available at: https://docslib.org/doc/3376856/a-new-look-of-dharma-karma
6. Shastri, H. P. (Trans.). (1953). The Ramayana of Valmiki (Vol. 2: Ayodhya Kanda). London: Shanti Sadan. Retrieved from https://www.wisdomlib.org/hinduism/book/the-Ramayana-of-valmiki

आत्मतोष (आत्मज्ञान से उत्पन्न संतोष या आनंद)

ज्योत्सना सिंह
(singhjyotsana1968@gmail.com)

स्वास्थ्य और आनंद की कुंजी इसमें निहित है कि हम जीवन में अपने कार्य को किस तरह से लेते है? क्या हम उसे बोझ समझते है, या फिर उसमें ख़ुशी ढूँढते है? जीवन चक्र कहता है कि व्यस्त रहना ही जीवन को सार्थक करता है। जीवन में किसी भी कार्य को दवा की तरह लेना चाहिए पीसने वाली चक्की की तरह नहीं। क्योंकि जीवन एक आनंद है संघर्ष नहीं।

जैसा कि रामचरित मानस से सीखते है कि-

"जथा लाभ संतोष सुख,रघुवर चरन सनेह।
तुलसी जो मन खूँद सम, कानन बसहुँ कि गेह।"

यहाँ इस बात का मतलब यह बिल्कुल भी नहीं कि जीवन में चुनौतियां नहीं हैं। हैं और प्रति दिन है। बस उन चुनौतियों से पार पाना ही जीवन का सुघड़ मार्ग है। इस मार्ग पर चलते हुए ही अपनी सोच को इस तरह से दिशा देनी चाहिए-

"बिनु संतोष न काम नसाहीं, काम अछत सुख सपनेंहुँ नाहीं।"

जीवन में जो समस्याएं आती है उन समस्याओं को जीवन की सज़ा नहीं असल मज़ा समझना चाहिए। दरअसल ईश्वर का दिया यह वह कार्य है जिस पर चलकर हम आनंद की ऊँचायों पर पहुँचते हैं।

यह किसी भी तरह का बोझ नहीं होता है। यह ईश्वर का दिया आशीर्वाद जैसा होता है जो सभी क्षमताओं को जगाता है और जीवन को सुखमय करता है।

इस मार्ग पर चलने के लिए ही हमें राम को जानना चाहिए। राम के काम राम के मार्ग और उनमें आने वाली कठिनाइयों से हम सीख सकते है जीवन के सत्य को और सत्य की तलाश के लिए ध्यान सबसे पहली आवश्यकता है।

ध्यान के लिए उद्देश्य ज़रूरी है। उद्देश्य सत्य की खोज है। सत्य यानी कि 'राम'

जीवन के ध्येय को पाने के लिए यह ज़रूरी है कि हम तप करे। तप का यह अर्थ बिल्कुल भी नहीं है कि हम हिमालय पर चले जाए। सर्वप्रथम हमें जीवन को समझने के लिए और आत्मतोष को पाने के लिए कठोर तप करना है। यह हम तब ही प्राप्त कर सकते हैं जब हम मानवीय सामर्थ्य को समझे। मानवीय सामर्थ्य यथा मानव स्वरूप को निर्मित करने वाला प्रमुख तत्त्व और यह तत्व एक बूंद है। यह बूंद ही 'राम' है।हम उनसे ही उपजकर उनमें ही विलीन होते हैं।इस विलीन होने को हम सांसारिक चक्र भी कह सकते हैं। फिर वही कहना चाहूँगी कि कण-कण में राम हैं।

प्रकृति के हर रूप में जीवन का अंश देखें। यह करने के लिए हमें निरंतर प्रयासरत रहना चाहिए। निरंतर साधना और परिश्रम ही तो तप है। बिना तप के जीवन की सुंदरता को नहीं समझा जा सकता क्योंकि जो सुंदर है वही सत्य है और सत्य ही तो शिव है। बिना तप के तो पार्वती जी ने भी शिव को नहीं पाया था।तप के लिए उन्होंने सब कुछ त्याग दिया था। जैसा कि तुलसी बाबा कहते हैं-

"कछु दिन भोजन बारि बतासा। किए कठिन कछु दिन उपबासा।
बेल पाती महि परइ सुखाई।तीनि सहस संबत सोइ खाई।"

तब जाकर शिवत्व को जाना।

तप की महिमा में यदि मनु और सतरूपा के तप को न उद्धृत किया जाए तो रामजन्म का प्रसंग अधूरा रह जाएगा। जिन्होंने निरंतर प्रभु को आँखों से देखने की ही अभिलाषा रखी। निराहार रहकर जल वायु पर ही तपस्या की जब प्रभु ने उन्हें परख लिया और वर मंगाने को कहा-"सो तुम जानहु अंतरजामी। पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी।

सकुच बिहाइ मागु नृप मोही।मोरे नहिं अदेय कछु तोही।"

तब उन्होंने कहा कि मैं आपके समान पुत्र चाहता हूँ। प्रभु ने कहा अपने जैसा कहां से ले आऊँ? अतः स्वयं ही आऊँगा। जब सतरूपा जी से मंगाने को कहा तो उन्होंने अलौकिक ज्ञान चाहा जिसे प्रभु ने एवमस्तु कहकर पूर्ण किया।

दशरथ और कौशल्या के रूप में उन्होंने राम को पुत्र के रूप में पाया।

कठोर तप से ही यह सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ किंतु उन्होंने राम को सिर्फ़ अयोध्या के राम तक ही सीमित रखने की लालसा नहीं रखी और दशरथ जी ने राम को विश्वामित्र को सौंप दिया।

किसी चीज़ को प्राप्त कर लेना मात्र तप नहीं है। पार्वती जी ने जब

खुद को जड़ किया तब ही शिव को पाया। कठोर तपस्या से ही उद्देश्य फलीभूत होता है।

तप का मूल ही त्याग है।किसी चीज़ की अभिलाषा के लिए तप करना तप नहीं है। उससे तो लालसा का जन्म होता है। ललासा संग्रह को जन्म देगी और तप में संग्रह का कोई स्थान नहीं है। सूर्य अपने लिए तो प्रकाश नहीं फैलाता। यहाँ तक कि दीपक तक का प्रकाश उसके लिए नहीं होता वह तो जलता ही दूसरों को प्रकाश देने के लिए है। ऋतु परिवर्तित होती है तो उसका असर प्रकृति भी तो सहती है। घाम में धरती भी तपती है जाड़े में पेड़ भी शीतकर कुम्हला जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि तप का किंचित् भर भी असर पाना है तो अंह,लालसा और लोभ का त्याग करना पड़ेगा। जीवन की तपस्या सर्व लोक हिताय-सर्व जन सुखाय हो तब वह तप कहलाता है।

यदि इसे श्री राम के जीवन से जोड़कर देखें तो सांसारिक सुख का त्याग करके ही वह सर्व जन सुखाय का संदेश दे सके। शायद यही सच्चा आत्मतोष कहलाता है।

Marketing Strategy Reflected in the Valmiki Ramayana: A Study of the Bala Kanda

Rahul Sharadkumar Satghar
S.K.Somaiya Vinay Mandir Jr. College, Mumbai
(rahulsatghar45@gmail.com)

These days every product requires marketing either for the promotion or for the best sale in society. This research paper will try to find out some marketing skills of ancient India especially for the promotion of Valmiki Ramayana. As some poetics like Kavyaprakash has also mentioned काव्यं यशसे अर्थकृतेetc. It is a absolute necessity of research paper, what kind of strategy poet used in Bala kanda for the marketing of epic Ramayana.

1. Introduction

The **Vālmīki Rāmāyaṇa**, recognized as the **ādikāvya** (first epic), is not only a foundational text of Indian culture and philosophy but also a remarkable example of sophisticated strategic communication. While typically studied for its literary and spiritual depth, this paper examines the epic—specifically the initial four *sargas* (cantos) of the **Bala Kanda**—through the lens of contemporary **marketing and communication strategy**. The text's timeless appeal is, in part, a testament to the masterful way Valmiki introduced his "product" (the epic) and "brand ambassador" (Lord Rama) to the world [5]. Critical analysis confirms that the epic's initial books, including the *Bala Kanda*, function as a deliberate prologue. However, some scholars have debated whether portions constitute later interpolations or the *Mool Ramayan* (original text) [3].

This research posits that the creation, endorsement, and dissemination process of the *Ramayana* by figures like Narada, Brahma, Valmiki, and the twin singers, Kusha and Lava, are deeply aligned with modern marketing principles, including **product definition, target audience identification, message crafting, channel selection, and securing audience feedback**. The core objective of this study is to analyze how the text's opening sections execute a deliberate, multi-layered strategy to successfully "launch" the epic and its central hero, **Śrī Rāma**, ensuring its unparalleled and lasting fame. The application of the epic's teachings to **strategic management** in modern corporate settings further confirms the inherent strategic wisdom embedded in its structure and narrative [7].

The paper will proceed by defining the marketing concepts used, detailing the marketing communication process as reflected in the Bala Kanda, analyzing the character-building strategy for Lord Rama, and finally, examining the canto-wise structure as a promotional "teaser and trailer" framework.

2. Definition, Concept, and Measurement of Marketing in the Epic

2.1 Definition and Purpose

Advertising and marketing are defined as any forms of non-personal presentation and promotion, including informing potential customers about a product or, in this context, the **Epic Ramayana** and its central character, **Lord Rama** [1].

2.2 Concept of Marketing

The primary objective of marketing or advertising is to **influence consumer behavior by providing information**. In the *Ramayana*, the objective is to influence the listeners and readers by imparting the virtuous life and deeds of Lord Rama, thereby promoting *dharma* and the epic itself.

2.3 Impact and Measurement

Marketing impact is measured through metrics such as **reach, frequency, and engagement**.

- **Reach** refers to the number of people exposed to the marketing. In the *Ramayana*'s case, Lord Brahma's prophecy highlights the ultimate reach, establishing the product's **eternal success** [2]:यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले। तावद् रामायणकथा लोकेषु प्रचलिष्यति।। (2.36) *'As long as the mountains and rivers shall exist on the surface of the earth, so long shall the story of the Ramayana circulate in the world."*
- **Frequency** measures how often the audience sees or, in this case, reads or listens to the story. In the **Bala Kanda**, repetition (such as the three-fold singing by Kusha and Lava mentioned in Canto 4) is used frequently to **develop curiosity** and familiarize the audience with the story and its characters.

3. Marketing Communication Process: The Valmiki Model

The marketing communication process involves a series of steps aimed at effectively delivering a message to a target

audience [1].

3.1 Identifying the Target Audience

The initial step is to identify and understand the target audience. The communication flow for the *Ramayana* can be charted as a series of transmissions:

The ultimate target audience is **all four *varnas* (Chaturvarnya)**, as Valmiki intends for everyone in society to benefit from listening to the epic [2].

A key example of **demographic criteria** used to develop interest is the composition of the *shloka* **"Ma Nishada..."** Valmiki's utterance of this verse—motivated by Lord Brahma—and the immediate, repeated singing by his pupils, Kusha and Lava, (2.39) served as a compelling **demo verse metre**. This poetic innovation and its musical presentation developed the interest and confidence for the composition of the larger *Ramayana* [2]. The choice of the narrative style as a **long poem** further makes the epic unique and memorable [4].

3.2 Crafting the Message (Value Proposition)

Once the audience is identified, the next step is to develop a compelling message that clearly communicates the **value proposition** and benefits of the "product."

- **Value Proposition (The Product):** In **Bala Kanda, Canto 1, verses 90–97**, the importance of a King is highlighted through the example of Lord Rama, establishing him as the ideal product (hero).
- **Benefits (Phattanaphala): Verses 98–100** explicitly outline the benefits of learning and listening to the *Ramayana*, such as *sarvapāpaih pramucyate* (**freedom from all sins**) (1.98). Valmiki's main strategy was to ensure that **each and every one in society** read and listened to his epic, ensuring that the four *varnas* would be benefited.

3.3 Encoding the Message

Encoding involves converting the crafted message into a suitable format, which must be clear, concise, and easily understood.

- The overall message is encoded into a **poetic (written) and musical (audio)** format. The epic, composed in the **Anuṣṭup** meter (specifically designed for oral delivery), contains over 24,000 couplet verses divided into seven books [4, 6].
- **Brahma Deva \right arrow Valmiki** (Sarga 2): Divine instruction for composition.
- **Valmiki \rightarrow Kusha, Lava** (Sarga 4): Teaching the epic in a musical format.

3.4 Selecting Communication Channels (Shrāvya Mādhyama)

Choosing the right communication channels is crucial. In the case of the *Valmiki Ramayana*, one of the finest traditional mediums used was the **audio medium (Shrāvya Mādhyama)**, where the epic was sung aloud by the disciples, Kusha and Lava. This utilizes the power of performance and oral tradition, a key strategy for mass communication in ancient times.

3.5 Feedback

Feedback is the audience's response. In **Sarga 4**, the performance of Kusha and Lava garnered two key instances of feedback, demonstrating customer satisfaction:

1. The story was **loved by the sages** present at Valmiki's hermitage.
2. The subsequent singing of the story was **liked by the subjects of Ayodhya**.

The entire process, which involves understanding the audience, crafting a relevant message, selecting appropriate channels, and continuously measuring feedback, is a structured approach that effectively showcased the epic and achieved Valmiki's marketing target [1].

4. Communication Mix and Strategy in Bala Kanda

The **marketing communication mix** is an essential aspect of a company's promotional strategy. The *Valmiki Ramayana* utilizes these components through poetry and music.

4.1 Advertising (Out-Door Advertising)

The public and repeated performance of the *Ramayana* story by Kusha and Lava **in Ayodhya in front of the subjects** (Sarga 4) functions as **outdoor advertising**. This aims to:

- **Create awareness (Narada-Valmiki in Sarga 1, Brahma-Valmiki in Sarga 2).**
- **Build the "brand image" of Rama, who is presented as a leader of ethical governance [7].**
- **Encourage consumer behavior (listening/reading) by reaching a large audience quickly.**

4.2 Sales Promotion (Incentives)

Sales promotion involves short-term incentives to encourage consumption. The initial conversation between **Narada and Valmiki** (Sarga 1) serves as a **biography of King Rama**, acting as a compelling **teaser/incentive**. The explicit mention of the benefits (**Phattanaphala**) of listening to the epic acts as a powerful incentive to stimulate immediate consumption (listening/reading).

4.3 Public Relations (PR)

PR involves building a positive image among various publics. The very act of composing the epic based on a sage's (Narada)

counsel and a deity's (Brahma) blessing establishes a **highly credible and positive image** for the "product" (the epic). The fact that the epic cuts across "genres of different ages, caste, gender, income, etc." further demonstrates a successful PR strategy for mass adoption [7].

4.4 Direct Marketing (Personalized Targeting)

In **Sarga 4**, the direct feedback from the satisfied "customers"—**Sage Valmiki himself, the Sages in the hermitage, and the subjects of Ayodhya**—demonstrates precise targeting and direct relationship building before the final performance at the royal court.

4.5 Character Building Strategy: Marketing Lord Rama

A crucial element of the Bala Kanda is the **character-building strategy** for the "super hero," Lord Rama. Valmiki strategically presents a comprehensive list of Rama's unparalleled qualities at the very beginning of **Bala Kanda (Canto 1)** to build confidence and affection in the audience's mind [4]. Narada's detailed response to Valmiki's query in Sarga 1 acts as a powerful **value proposition list** for the hero [8].

Category	Sanskrit Term (Verse)	English Equivalent
Eternal/Spiritual Qualities	Ātmavān (1.4), Vashīkṛtāntahkaraṇah	Self-possessed, one with a controlled inner-self.
	Niyatātmā (1.8), Nigṛhītāntahkaraṇah	Disciplined, one with a restrained mind.
	Adīnātmā (1.15)	Not disheartened.
General/Aesthetic Qualities	Guṇavān (1.2), Sarvaguṇopetah (1.17)	Meritorious, endowed with all good qualities.
	Śubhalakṣaṇah (1.11), Jyeṣṭhaguṇairyuktah (1.20)	Possessed of auspicious marks, endowed with great virtues.
Controller/Temperament	Vaśī (1.8), Vashyaḥ (1.12), Jitakrodhah (1.4)	Controller, disciplined, conqueror of anger.
Knowledge of Righteousness (Dharmajñatā)	Dharmajñah (1.2, 12), Kṛtajñah (1.2), Śucih (1.12)	Knower of dharma, grateful, pure.
	Cāritryasampannah (1.3), Dṛḍhavratah (1.2)	Possessed of good character, firm in resolve.
Nationalism (Rāṣṭrīyavṛttih)	Rakṣitā Jīvalokasya... (1.13-14)	Protector of the world of living beings and dharma.

4.6 Canto-Wise Marketing (Teaser and Trailer)

The initial four cantos of the **Bala Kanda** function similarly to modern **teasers and trailers** for a cinematic product, utilizing **pictography (*Śabdacitra*)**—word-pictures—to generate audience interest.

- **Canto 1:** Provides the **information and character description** of Lord Rama, setting the stage (like a character reveal) through Narada's summary, often referred to as the ***Samkshepa Ramayana*** [8].
- **Canto 2:** Brahma teaches the *Ramayana* in brief to Valmiki, confirming the project's **divine endorsement** and establishing the epic's purpose.
- **Canto 4:** The **repeated singing** by Kusha and Lava serves as the **official teaser and trailer**, strategically developing curiosity before the detailed narration (the "full movie") begins later.

5. Conclusion

The marketing of the *Valmiki Ramayana* is a sophisticated example of ancient strategic communication. It encompasses the **marketing of the main character** (Lord Rama), the **marketing of the epic** (the first-ever *Mahākāvya*), and the **strategic use of feedback** before the main performance. This paper concludes that marketing plays a significant role in ancient and modern society alike, and the *Ramayana* provides a profound, early model of audience-centric promotional strategy. The lessons on leadership, ethics, and strategic planning derived from the epic continue to be relevant in contemporary management studies, confirming the timeless success of Valmiki's initial marketing groundwork [7].

6. References

1. Dhond, Saloni. *Advertising*. Google Drive (Lecturer Notes).
2. Satvalekar, Shripad Damodar (Ed.). *Shri Ramayan Mahakavya (Part 1) Bala Kanda*. First Edition 1941. Vishnu Damodarshastri Pandit (Publisher).
3. Singh, Neha, and Abhilasha Singh. "Interpolations in the Valmiki Ramayan and Rationality Behind It." *Dialogue: A Journal of Interdisciplinary Research in Humanities and Social Sciences*, vol. 18, no. 2, 2022.
4. Trikha, J.K. "Valmiki's The Ramayana: An Analytical and Critical Overview." *International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT)*, vol. 10, no. 3, 2022.
5. Shastri, Hari Prasad (Trans.). *The Ramayana of Valmiki*. London: Shanti Sadan, 1952.
6. Griffith, Ralph T. H. (Trans.). *The Rámáyan of Válmíki, translated into English verse*. London: Trübner and Co., 1870.
7. Patel, Nisha. "Management Lessons from Ramayana and its Relevance in 21st Century." *International Journal of Technology, Management and Social Sciences (IJTMSS)*, vol. 1, no. 1, 2022.
8. Valmiki Ramayana. "Bala Kanda - Sarga 1 - The Sage Narada Summarizes the Ramayana to Valmiki." *Sanskrit Documents*. [Online]. Available: https://sanskritdocuments.org/sites/valmikiramayan/baala/sarga1/balaitrans1.htm. Accessed 10 Nov 2025.

राम की नीतिनिष्ठा

मन्साराम गौड़
अध्यापक देहरादून उत्तराखंड
(mrgaur789@gmail.com)

राम नीति के प्रतीक है। वे नीतिनिष्ठा की स्थापना के लिए जन्मे और आजीवन उसका प्रशिक्षण अपने चरित्र द्वारा करते रहे। उन्हें सद्गुणों के खान कहा गया है । मर्यादा पालन और कर्त्पतव्य परायणता में सदा उन्होंने अपना अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया है। इन्हीं विशेषताओं के कारण उन्हें भगवान कहा जाता है और उनके जन्म जीवन को अवतार का सम्मानास्पद नाम दिया जाता है ।में 'ल्मीकि रामायणवा' -उल्लेख है

सत्यं दानं तपस् त्यागो शौचामार्जवम्। विद्या च गुरुसुश्रूषा धुवाण्येतानि राघवे।।

1. प्रस्तावना

"सत्य, दान, तप, त्याग,मित्रता, पवित्रता, सरलता,विद्या गुरुसुश्रूषा-ये सभी सद्गुण श्री राम में स्थिर,रूप से रहते हैं।"

राम की प्रीति अंधी भावुकता नहीं वरन् नीति पर आधारित है।उनका कोई मित्र नहीं, कोई शत्रु नहीं,वह नीति में प्रीति रखते हैं। अस्तु जहाँ नीति का जितना अंश होगा वहांॅ उनकी प्रीति भी सहज ही उस अनुपात से बढ़ेगी। महामानुभावों का उद्देश्य नीति की स्थापना और अनीति का उन्मूलन होता है। वे अपने संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी ही शिक्षा, प्रेरणा एवं सहायता देते हैं।राम की नीतिनिष्ठा और उसके प्रति उनकी सतत् चेष्टा का विवरण रामायण में जगह-जगह उपलब्ध है।

2. विस्तार

सामाजिकता का नियम है कि सभी लोग परस्पर प्रेम भाव रखें, स्वयं अपना कर्तव्य पाले और अपने स्वजनों को उसकी प्रेरणा दें। राम -कथा में यह श्रृंखला बराबर चलती है।"उत्तरकाण्ड" में उल्लेख है-

राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती।
नाना भाँति सिखावहिं नीती।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीति।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।

काकभुशुण्डि जी व्यक्ति से भी से भी घृणा न करके, उससे भी प्रेम करने के सामाजिक सिद्धांत को हितकारी बताते हैं -

पन्नगारि असि नीति,
श्रुति सम्मत सज्जन कहहिं।
अति नीचहु सन प्रीति,
करिअ जानि निज परम हित्।।

राम अपने पुरुषार्थ का बखान नहीं करते। सफलताओं की डींग नहीं हाँकते । वानरों को गुरु वसिष्ठ का परिचय कराते हुए कहते हैं कि इनकी कृपा से ही हम असुरों को मारने में समर्थ हुए।साथ ही वसिष्ठ जी को वानरों को परिचय देते हुए कहते हैं कि समर-सागर में इन्हीं ने बेड़ा बना कर हमें पार किया। ये लोग हमें भरत के समान प्रिय हैं। इस कथन में विनयशीलता , कृतज्ञता और सफलता का श्रेय दूसरों को दे कर अपनी निरहंकारिता का सुन्दर समन्वय है -

गुरु वसिष्ठ कुल पूज्य हमारे।
इन्ह की कृपा दुज रंन मारे ।।
ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे।
भए समर सागर कहँ वेरे।।
मम हित लाग जन्म हारे।
भरतहु ते मोहि अधिक पियारे।।

श्री राम यश कामना से दूर रहने तथा समाज में शेखीखोरी की प्रवृत्ति न पनपने देने को आवश्यक मानते हैं। रावण जब युद्ध भूमि में अपनी शक्ति का बखान करने लगता है तो वे उसे यही नीति सिखाते हुए कहते हैं -

नीतिवान व्यक्ति बकवास और शेखीखोरी में समय नहीं गँवाते और ढपोरशंख, शेखचिल्ली की तरह उपहासास्पद नहीं बनते। संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति हैं - (1) गुलाब (2) आम (3) कटहल के वृक्ष के समान।

इनमें से एक केवल फल देते हैं । दूसरे सुमन और फल दोनों देते हैं। तीसरे केवल फल ही फल देते हैं।अर्थात एक केवल कहते ही हैं करते नहीं। दूसरे कहते तो हैं पर करते भी हैं। तीसरे कहते तो नहीं, पर करने में रात दिन जुटे रहते हैं। क्रमश यह तीनों एक से दूसरा दूसरे से तीसरा अधिक सराहनीय है-

जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनि करहि छमा।
संसार में पुरुष त्रिविध पाटल रसाल पनस समा।।

सामाजिकता का नियम है कि उपेक्षित क्षेत्र की सेवा और व्यवस्था को अधिक महत्व दिया जाए। अधिकांश लोग शहरों को ही अपना क्षेत्र बना लेते हैं- श्री राम वनवास को अपेक्षाकृत अधिक बड़ा कार्यक्षेत्र मानते हैं। वे पिता के द्वारा दिये गये विशाल वन-राज्य पर बड़ा संतोष और हर्ष व्यक्त करते हैं। माता कौशल्या से कहते हैं कि पिता ने मुझे अयोध्या के छोटे राज्य की तुलना में कहीं अधिक वैभव प्रदान किया है। इस क्षेत्र की सेवा करके मैं अधिक सौभाग्यशाली बनूँगा-

पिता दीन्हा मोहि कानन राजू।
जहँ सब भाँति मोर बड़ काजू।।

श्री राम ने केवल यह कहा ही नहीं कर भी दिखाया ।ऋषि मुनियों से लेकर आदिवासी कोल-किरात सभी उनके सम्पर्क का लाभ उठाने को आतुर हो उठे। उनके आगमन को सुनकर ऋषि मुनि उनके पास आने लगे तब रघुकुल के चन्द्रमा राम जी ने सबको आदर सत्कार पूर्वक दंडवत प्रणाम किया-

चित्रकूट रघुनंदन छाए।
समाचार सुनि सुनि मुनि आए।।
आवत देखि मुदित मुनि वृन्दा।
कीन्ह दंडवत रघुकुल चंदा।।

सामाजिकता का नियम है कि अनीति का उचित प्रतिकार किया जाय। भगवान राम इस दृष्टि से भी आदर्श प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने अनीति को निरस्त करने के लिए बालि और रावण को मारा था, उनकी संपत्ति का लाभ लेने के लिए नहीं। स्वार्थ पूर्ति के लिए जो आक्रमण किया जाता है, वह हत्या की संज्ञा में आता है। किंतु अनीति से जूझने में यदि अपना या पराया प्राण जाता है तो उसकी परवाह न करना क्षत्रिय धर्म है।राम ने सदा क्षत्रिय धर्म निर्वाहा।बालि का राज्य उसके भाई को दिया और उसके पुत्र अंगद को युवराज बनाया।

बालि-वध के पश्चात् उन्होंने स्वयं नगर में प्रवेश भी नहीं किया। लक्ष्मण जी को निर्देश दिया कि राज्य के सच्चे और सचरित्र उत्तराधिकारियों को वह सौंप दिया जाए।लक्ष्मण जी ने उस आज्ञा का तुरंत पालन किया-

लछिमन तुरत बोलाए, पुरुजन विप्र समाज।
राज दीन्हा सुग्रीव कहँ, अंगद कहँ जुवराज।।

सामाजहित की दृष्टि से ही बालि का वध किया तथा समाज की सहमति से ही चरित्रवान शासक ने प्रदान कर दिया। बालि के पुत्र के अधिकार की भी रक्षा की।

लंका में भी रावण के वध के बाद विभीषण ने श्री राम से प्रार्थना की कि लंका में चलकर कोष- संपत्ति आदि देखकर इच्छानुसार वानरों में वितरित करें, तो उन्होंने विभीषण का मन रखते हुए कहकर कि "सब हमारा ही तो है, उपयोग तुम करो" बात डाल दी-

तोरकोष गृह मोर सब ,सत्य वचन सुन भ्रात।
भरत दसा सुमिरत मोहि, निमिष कल्प हम जाता।।

भारत का प्रसंग लाकर उन्होंने विषय ही बदल दिया, तब विभीषण पुष्पक विमान कै रत्नों और वस्त्रों से भरकर भगवान के पास ही ले आते हैं। भगवान स्वयं कुछ न लेकर रीछ वानरों पर उनकी वर्षा कर देने को कहते हैं -

चढि.विमान सुन सखा विभीषण।
गगन जाइ बरसुहु पटभूषन।।

3. निष्कर्ष

इस प्रकार श्री राम जी ने क्षत्रिय के नाते अपने सामाजिक दायित्व का पालन आदर्श ढंग से करके दिखाया। अपने पुरुषार्थ से सबकी समस्याओं का समाधान किया तथा किसी भी प्रकार के प्रतिदान के प्रति पूर्ण रुप से निस्पृह बने रहे।

4. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रामायण कि प्रगतिशील प्रेरणाएँ
2. लेखक -पंडित श्री राम शर्मा आचार्य वाड्.मय

रामायण में सतत विकास और जीवन-मूल्य आधारित शिक्षा: भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनर्पाठ

अनुभूति शर्मा
(itsanubhutisharma@gmail.com)

भारतीय ज्ञान परंपरा में सतत विकास, नैतिक आचरण और जीवन-मूल्य शिक्षा का आधार अत्यंत प्राचीन है। आधुनिक शिक्षा-दर्शन में जिस "सस्टेनेबिलिटी", "वैल्यू-एजुकेशन", "गुड गवर्नेंस", "इकोलॉजिकल बैलेंस", "सोशल हार्मनी" और "सर्वसम्मिलित विकास" की चर्चा होती है, वह अवधारणा रामायण में हजारों वर्ष पूर्व सुसंगठित रूप से उपस्थित है। रामायण केवल धार्मिक कथा नहीं, बल्कि एक संपूर्ण सांस्कृतिक संविधान है जो व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, पर्यावरणीय और आध्यात्मिक स्तर पर मानव को संतुलित जीवन जीने की शिक्षा देता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में रामायण—विशेषकर रामचरितमानस—के माध्यम से सतत विकास के आयामों का पुनर्पाठ किया गया है।

शोध में तीन प्रमुख बिंदुओं पर संवाद निर्मित किया गया है—

1. रामायण में नैतिक व जीवन-मूल्य आधारित शिक्षा,
2. पर्यावरण, प्रकृति-संरक्षण और मानवीय-संसाधनों का संतुलित उपयोग,
3. समाज और राजनीति में सतत विकास का आदर्श मॉडल।

शोध में तुलसीदास के ग्रंथ रामचरितमानस से प्रसंग लेकर यह सिद्ध किया गया है कि रामराज्य का मॉडल आधुनिक "सतत विकास" (SDGs) का भारतीय रूप है—जिसमें धर्म, नीति, उत्तरदायित्व, समानता, न्याय, करुणा, पर्यावरणीय संवेदनशीलता और सामुदायिक सद्भाव पूर्ण रूप से विद्यमान हैं।

यह अध्ययन दर्शाता है कि भारतीय ज्ञान परंपरा के पुनर्पाठ से आज की शिक्षा-व्यवस्था न केवल वैल्यू-ओरिएंटेड बन सकती है, बल्कि जलवायु परिवर्तन, सामाजिक असंतुलन और नैतिक अवनति की वैश्विक चुनौतियों से निपटने में भी सक्षम हो सकती है।

1. विस्तार

रामायण भारतीय संस्कृति, सभ्यता, समाजशास्त्र, नीति-दर्शन और मूल्य-शिक्षा का आधारस्तंभ है। "सतत विकास (Sustainable Development)" वर्तमान वैश्विक विमर्श का केंद्र है, परंतु इसका बीज भारतीय ग्रंथों में पहले से मौजूद है।

रामचरितमानस में श्रीराम — जो धर्म, दया, नीति, करुणा और उत्तरदायित्व के आदर्श हैं—के माध्यम से बताते हैं कि एक समाज कैसे संतुलन, शांति, समृद्धि और न्याय के आधार पर विकसित होता है।

सतत विकास = प्रकृति + समाज + अर्थव्यवस्था + नैतिकता

और रामायण इन चारों को एकसूत्र में बांधकर शिक्षा और शासन दोनों के लिए मॉडल तैयार करता है।

1. सतत विकास की भारतीय अवधारणा और रामायण

SDGs (Sustainable Development Goals) — गरीबी उन्मूलन, शिक्षा, लैंगिक समानता, शांति, संस्थागत न्याय, पर्यावरण संरक्षण, जिम्मेदार उपभोग, सद्भाव—ये सभी तत्व रामराज्य में स्पष्ट रूप से विद्यमान हैं।

तुलसीदास लिखते हैं:

"दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज नहिं काहुहि व्यापा॥"

यह पंक्ति स्पष्ट करती है कि रामराज्य में मानव-कल्याण, सुरक्षा और संतुलन का ऐसा स्तर था जो आधुनिक विकास की परिकल्पनाओं से भी श्रेष्ठ है।

2. शिक्षा का अर्थ: ज्ञान + नीति + जीवन-मूल्य

रामायण शिक्षा को केवल विद्या नहीं, बल्कि जीवन जीने की कला मानता है।

शिक्षा का उद्देश्य—

- चरित्र निर्माण
- कर्तव्य-निष्ठा

- अनुशासन
- सत्य और न्याय
- समाज व राष्ट्र के प्रति दायित्व
- प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता

राम स्वयं गुरु वशिष्ठ और विश्वामित्र से यही शिक्षा प्राप्त करते हैं।
"गुरु गृह गेहँ पढ़न लगि राजा।"
यह बताता है कि शिक्षा राजकुमार को भी विनम्र बनाती है और सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध है।
विश्वामित्र राम–लक्ष्मण को केवल अस्त्र-शस्त्र नहीं,
बल्कि —

- प्रकृति-संरक्षण
- पर्यावरण ज्ञान
- संयम
- नैतिकता
- राष्ट्र-सेवा

भी सिखाते हैं।

2. जीवन-मूल्य आधारित शिक्षा और रामायण

2.1. सत्य, धर्म और नैतिकता

राम का जीवन "धर्म" का पर्याय है। उनकी वनगमन की घोषणा आधुनिक नैतिक शिक्षा का सबसे बड़ा उदाहरण है —
"रघुकुल रीति सदा चली आई।
प्राण जाय पर वचन न जाई।।"

2.2. करुणा, अहिंसा और दया

सतत विकास मानता है कि समाज तभी स्थायी है जब उसमें करुणा हो।
रामचरितमानस में कहा गया—
"पर हित बस जिन्ह करि करणा।
ते नर तृन तुल्य देह धरना।।"
दया + न्याय + अहिंसा = सतत सामाजिक विकास

2.3. समानता और सामाजिक न्याय

राम शबरी और निषादराज को सम्मान देकर बताते हैं कि सच्चा विकास समावेशिता पर आधारित होता है।

2.4. स्त्री-सम्मान और शिक्षा

रामायण में स्त्री को शक्ति का रूप माना गया है।
"सीय सम नहिं कोमल जग माहीं।"

3. पर्यावरण-संरक्षण: रामायण का इको - सस्टेनेबिलिटी मॉडल

अरण्यकाण्ड प्रकृति-शिक्षा का सर्वोत्तम उदाहरण है।

3.1. वन और जैव विविधता संरक्षण
"सकल मुनि धन, बन उपवन, गिरि, गिरीकंदरा।"
= प्रकृति ही मानव का धन है।

3.2. नदियों का सम्मान
"जलज जीवन हरि बिमल बिहंगम।"
= जल जीवन है।

3.3. मनुष्य–प्रकृति संतुलन

राम द्वारा वन्य जीवों, पक्षियों, ऋषियों की रक्षा SDG 14–15 की भारतीय नींव है।

4. रामराज्य: सतत राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था

"बरषहिं जल जग मंगल होला।"

= मौसम संतुलन ⟶ कृषि समृद्धि ⟶ आर्थिक स्थिरता

"नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना।"

= SDG 1 (गरीबी उन्मूलन)

"सब नर करहि परस्पर प्रीति।"

= सामाजिक सद्भाव

5. रामायण में ESD (Education for Sustainable Development)

UNESCO–ESD बनाम तुलसी रामायण की समानताएँ—

Peace Education — अहिंसा

Gender Equality — सीता आदर्श

Environmental Awareness — वन-संरक्षण

Social Harmony — शबरी, निषादराज

Ethical Governance — रामराज्य

6. भारतीय ज्ञान परंपरा का पुनर्पाठ: आधुनिक शिक्षा के लिए मॉडल

रामायण शिक्षा के चारों स्तरों —

- व्यक्तिगत
- सामाजिक
- पर्यावरणीय
- राजनीतिक

— में सतत विकास का मॉडल प्रस्तुत करती है।

चरित्र आदर्श—

राम = न्याय, दया, नीति

सीता = धैर्य, शक्ति

भरत = सेवा

हनुमान = समर्पण, विनम्रता

रामराज्य = भारतीय SDG मॉडल

7. Conclusion (निष्कर्ष)

रामायण भारतीय ज्ञान परंपरा का सबसे मजबूत आधार है।

यह शिक्षित करता है कि सतत विकास तभी संभव है जब मनुष्य, प्रकृति और समाज एक संतुलित तंत्र की तरह काम करें।

आज की शिक्षा-व्यवस्था जब ESD मूल्यों की ओर बढ़ रही है, रामायण उन सभी लक्ष्यों का भारतीय मॉडल प्रदान करती है।

यह शोध सिद्ध करता है कि भारतीय परंपरा सदैव—

- सतत विकास
- नीति-धर्म
- जीवन-मूल्यों

— पर आधारित समाज निर्माण की दिशा में प्रयत्नशील रही है।

8. संदर्भ ग्रन्थ

1. तुलसीदास — रामचरितमानस (गीताप्रेस गोरखपुर)

2. रामचरित मानस में आध्यात्म एवं विज्ञान — प्रो. एस.पी. गौतम
3. अध्यात्म रामायण — गीता प्रेस
4. योगवासिष्ठ (राम–वशिष्ठ संवाद)
5. ओझा, सुधाकर — सतत विकास और भारतीय संस्कृति (अशोक पब्लिकेशन्स)

'महात्मा' बलसम्पन्नो रावणः': श्रीराम

लिना सुनील पांडे
नागपूर युनिव्हर्सिटी, नागपूर
(leenaspande@gmail.com)

श्री वाल्मीकीय रामायण को आदि - काव्य माना जाता है। इसकी संरचना सप्तकाण्ड के रूप में है और इसमें कुल श्लोकों की संख्या 24,445 है। राम इस काव्य के नायक है और रावण प्रतिनायक । राम नायक और रावण प्रतिनायक होते हुये भी राम, रावण के संदर्भ में 'महात्मा' बलसम्पन्नो रावणः' विशेषण का उपयोग करते है। युद्धकांड सर्ग 109 में रावण मारा गया । श्रीराम कृतकृत्य हो गये। शत्रुता का अंत हो गया । तब राम विभीषण से कहते है। 'मरणान्तानि वैराणि निवृत्तं नः प्रयोजनम्।' यह भारतीय संस्कृती की अत्यंत उत्कृष्ट शिक्षा है। और यही सबके सामने लाना मेरे शोधपत्रका मुख्य उद्देश है।

कूटशब्द - महात्मा, श्रीराम, विभीषण, रावण.

1. प्रस्तावना

'महात्माः बलसपन्नो रावणः': श्रीराम

युग-द्रष्टा महाकवि वाल्मीकि ने लोकमंगल की उदान्त भावना में परिचालित होकर ही महाकाव्य रामायण की सर्जना की है । फलतः रचना में उदात्त संस्कृति के साथ - साथ श्लोक - संस्कृति के तत्त्व अपने आप ही समाहित हो गये है । एक तरफ जहा उदात्त संस्कृति के अनुपम जीवन मूल्यों की स्थापना हुई हैं, वही दूसरी तरफ लोक संस्कृति जीवन की गहराई से समझने परखने का आधार प्रदान हो सका है। महाकवि ने अपनी रामायण में सामाजिक जीवन की व्यापक दृष्टि अपनायी है।

राम इस काव्य के नायक है और रावण प्रतिनायक। महाकवी वाल्मीकि ने प्रसंगानुसार दोनों का वर्णन करने के लिए अनेक श्लोकों की रचना की है। यदि हम उनके द्वारा दोनों के लिए प्रयुक्त विशेषणों पर भी गौर करें तो, हमें मानव स्वभाव का अच्छा खासा अंदाज हो जाता है । संपूर्ण रामायण संहिता में रावण से संबंधित 'महात्मा' विशेषण दो स्थानों पर आता है । वह भी वाल्मीकि ने अपने मतानुसार नहीं, बल्कि विभीषण और रामद्वारा रावण के संबंध में अलग - अलग स्थानों पर की गई चर्चा के संदर्भ में प्रयुक्त किया है। समग्र संदर्भ को देखते हुए सबके मन पर राम के विशाल हृदय एवं उदारता की छाप पडती है। महान लोगों का स्वभाव होता है कि वे अपने शत्रुओं की भी प्रशंसा करते है । अंतः यहा रावण की इस प्रशंसा को अनदेखा नही किया जा सकता । वे अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है।

1. **युद्धकांड सर्ग 71 -** कुंभकर्ण के वध के बाद रावण पक्ष का दुःखी होना स्वाभाविक था, उनका क्रोध और भी बढ़ गया। रावण का पुत्र मेघनाद (इंद्रजित) युद्ध के लिए आगे बढा। इंद्रजित तेजस्वी वीर और दर्शनीय था । राम को उसके बारे में पता नहीं था। अतः 'यह योद्धा कौन है जो युद्ध करने आ रहा है ?' श्रीराम ने स्वाभाविक रूप से विभीषण से पूछा । इस प्रकार की पृच्छा करते समय श्रीरामने इंद्रजित के रूप और रुबाब का सुंदर वर्णन किया, जो इस सर्ग के 12 से 25 श्लोकोंके बीच आता है । उसका परिचय देते हुए विभीषण कहते है।

दशग्रीवो महातेजा राजा वैश्रवणानुजः।
भीमकर्मा 'महात्मा' हि रावणो राक्षसेश्वरः॥
तस्यासीद्वीर्यवान्पुत्रो रावणप्रतिमो बले।
वृद्धसेवी श्रुतिधरः सर्वास्त्रविदुषां वरः॥
(युद्ध. सर्ग 71, श्लो.27, 28)

(भगवन् । जो कुबेर का छोटा भाई, महातेजस्वी, महाकाय, भयानक कर्म करने वाला तथा राक्षसों का स्वामी 'महात्मा' राजा रावण है, उसको एक बड़ा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ, जो बल में रावण के ही समान है। वह वृद्ध पूरूषों का सेवन करने वाला, वेदशास्त्रों का ज्ञाता तथा संपूर्ण अस्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ है।

विभीषण ने उसका और भी वर्णन किया है। यहॉ हमें उसकी आवश्यकता नहीं है । लेकिन इंद्रजीत का परिचय देते हुए विभीषण ने उसके पिता (रावण) के बारे में जो संक्षिप्त जानकारी दी है, उसमें 'महात्मा' विशेषण का प्रयोग हुआ है।

2. **युद्धकांड सर्ग 109** - रावण मारा गया। श्रीराम कृतकृत्य हो गय। शत्रुता समाप्त हो गयी। तब राम विभीषण से कहते है –

मरणान्तानि वैराणि निवृत्तं नः प्रयोजनम्।
क्रियतामस्य संस्कारों ममाप्येष यथा तव।।
(युद्ध. सर्ग -109, श्लोक - 25)

विभीषण, शत्रुता मरणान्तही होती है। अब शत्रुता का प्रयोजन समाप्त हो गया। अब उसका अंतीम संस्कार करो । अब (रावण) जैसा तुम्हारा वैसे अब मेरा भी (भाई) है।

बाद में रावण की पत्नियों आदि का विलाप समाप्त होने पर, राम पुनः विभीषण से कहते है - ये मन्दोदर्यादी स्त्रियाँ शोक से पिडित है। इन्हें सांत्वना दो और रावण के शरीर के अंतिम संस्कार की तत्काल व्यवस्था करो -

'संस्कारः क्रियतां भ्रातुः स्त्रीगणः परिसान्त्व्यताम्।:
(युद्ध. 109 - 92)

परन्तु विभीषण में राम के समान उदात्त संस्कार संस्कारित नहीं थे । वह रावण की दुष्टता को भुल नहीं सका, वह कहता है -

विमृश्य बुद्ध्या प्रश्रितं धर्मार्थसहितं हितम् ।
त्यक्तधर्मव्रतं क्रूरं नृशंसमनृतं तथा ।|
नाहमर्हामि संस्कर्तुं परदाराभिमर्शनम् ।
भ्रातृरूपो हि मे शत्रुः एष सर्वाहिते रतः।|
रावणो नार्हते पूजां पूज्योऽपिगुरूगौरवात्।
नृशंस इति मां राम वक्ष्यन्ति मनुजा भुवि ॥
(युद्ध. 111-93 ते 95)

(मै ऐसे व्यक्ति का अंतिम संस्कार नही करना चाहता जिसने धर्मार्थसहित कल्याण का विचार नही किया, जिसने धर्म का मार्ग त्याग दिया है, जो क्रूर, नृशंस, मिथ्याचारी है और जिसने पराई स्त्री का अपहरण करने का कृत्य किया है । यह जो सब प्रकार के अहित में उपस्थित रहता हैं, भातृरूप में मेरा शत्रु ही था । यद्यपि यह जेष्ठ भाई के रूप में पूजनीय और गुरू - महिमा का पात्र है, तथापि उपरोक्त दोष के कारण पूजनीय नही है। यदि मै इसका महिमामंडन करूँगा, तो इस संसार में लोग मुझे भी नृशंस समझेंगे।

राम ने विभीषण के इस अशिष्ट विचार को स्वीकार नही किया और उससे पुनः कहा-

अवश्यं तु क्षमं वाच्यों मया त्वं राक्षसेश्वर।
अधर्मानृतसंयुक्तः कामं त्वेष निशाचरः।।
तेजस्वी बालवाञ्छूरः सग्रामेषु च नित्यशः।
शतक्रतुमुखैर्देवैः श्रूयते न पराजितः।|
'महात्मा' बलसम्पन्नो रावणो लोकरावणः।
मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम्।।
क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव।
त्वत्सकाशान्महाबाहो संस्कारं विधिपूर्वकम्।।
(युद्ध. 111-98 ते 101)

(हे विभीषण! मै तुमसे पुनः कहता हूँ, सूनो, इसमें सन्देह नही है कि यह निशाचर, अधर्म, और अनृत से युक्त था । किन्तु वह तेजस्वी, बलवान और वीर था । ऐसा सुना गया है कि, वह इन्द्र आदि देवताओं से भी पराजित नही हुआ था। वह बलवान 'महात्मा' था, जिससे लोग भयभीत रहते थे। फिर भी, शत्रुता तो मृत्युपर्यन्तही निभानी चाहिए। हमारा शत्रुता का उद्देश समाप्त हो गया। अब इसका अंतिम संस्कार करो। अब यह जैसे तुम्हारा वैसा मेरा भी (भाई)है।

विभीषण समज गये और फिर उन्होंने रावण के शव का अंतिम संस्कार किया।

2. निष्कर्ष –

'मरणान्तानि वैराणि' भारतीय संस्कृति की एक अत्यंत उत्कृष्ट शिक्षा है। इतिहासकार जानते है कि इस संस्कृति को अपनाने वाले छत्रपति शिवाजी महाराज ने अफजलखान का अंतिम संस्कार कितने उचित ढंग से किया था । जब हम दुश्मनों के अवशेषों को खोदकर उन्हें फिर से फाँसी देने के कुछ पश्चिमी उदाहरणों पर नजर डालते हैं, तो यह अंतर स्पष्ट हो जाता है।

'महात्मा' बलासम्पन्नो रावणः यह भी भारतीय संस्कृति की एक अत्यंत उत्कृष्ट शिक्षा है, की वे अपने शत्रुओं की भी प्रशंसा करते है। कहा भी गया है कि, महान लोगों का स्वभाव होता है कि वे अपने शत्रुओं की भी प्रशंसा करते है।

वस्तुतः महर्षी वाल्मिकी के रामायण मे सामाजिक समरसता का जो उदात्त यथार्थ चित्रण वर्णित है, वह विश्व के किसी अन्य स्थानो पर प्राप्त नही होता | आज आवश्यकता है | की विश्व के जन- जन के कण्ठ कण्ठ में इसका रसास्वाद कराया जाय तभी आतंकवाद ,नस्लवाद आदी को समाप्त कर प्रेमभावना को भरा जा सकता है |

Bridging Ancient Wisdom and Modern Ecology: The Ramayana and Sustainable Development Goals (SDGs)

Sanjay Badoni
Subodh Saurabh Singh
Geeta Rana
Swami Rama Himalayan University, Dehradun
(badoni.sanjay123@gmail.com)
(Subodhsingh@srhu.edu.in)
(geetarana@srhu.edu.in)
Ashish Singh Chauhan
Uttaranchal University, Dehradun

The Ramayana teaches us valuable lessons about living in ways that respect nature, lead with honesty, and care for society. This paper examines how the values shown by Rama and other characters, such as doing the right thing (dharma), showing kindness, and practicing self-control, connect with today's ideas of sustainable living. By linking stories and verses from the Ramayana to modern goals such as the UN Sustainable Development Goals (SDGs), the study shows that the Ramayana is more than just a religious book; it also offers practical guidance for protecting the environment, leading responsibly, and preserving traditions in today's global context.

Keywords: Ramayana, Sustainable living, Ecological harmony, Ethical leadership, UN Sustainable Development Goals (SDGs)

1. Introduction

The *Ramayana* occupies a central position in India's cultural, philosophical, and ethical landscape. Beyond its narrative richness, the epic offers a sophisticated framework for understanding the relationship between human actions, social responsibility, and ecological harmony. In contemporary discourse, sustainable development has emerged as a global priority, emphasizing the need for societies to balance environmental protection, ethical governance, and community well-being. Interestingly, many of these modern principles resonate deeply with the values embedded in the *Ramayana*, particularly *dharma*, compassion, self-restraint, and responsible leadership.

The growing relevance of traditional knowledge systems in sustainability studies has prompted renewed academic interest in ancient Indian texts.

The *Ramayana* presents multiple episodes in which environmental stewardship, moral duty, and social justice are intricately woven into the story. Whether through Rama's ethical leadership, Sita's intimate connection with nature, or the harmonious coexistence depicted in forest hermitages, the text articulates a worldview grounded in balance, respect, and interconnectedness. These themes align closely with contemporary frameworks such as the United Nations Sustainable Development Goals (SDGs), which advocate for ecological preservation, institutional integrity, and inclusive development.

This paper builds upon these intersections by examining how the ethical and ecological ideals depicted in the *Ramayana* can inform present-day sustainability practices. By correlating select verses, narrative events, and character conduct with SDG pillars, the study highlights the continuing relevance of ancient wisdom in addressing modern challenges. In doing so, it positions the *Ramayana* not merely as a spiritual narrative but as a valuable resource for conceptualizing sustainable living, ethical governance, and cultural continuity in the 21st century.

2. Sustainability in Ancient Indian Thought

Sustainability, often perceived as a modern construct, has deep philosophical roots within ancient Indian knowledge systems. Classical texts consistently articulate a worldview where humans, nature, and the cosmos coexist in a delicate balance. This holistic understanding originates from the foundational principle of *ṛta* (ऋत), the natural order governing all existence, which later evolved into the ethical framework of dharma. Within this framework, environmental stewardship, social responsibility, and moral restraint are not optional values but obligatory duties.

The Vedic literature, particularly the *Rig Veda* and *Atharva Veda*, emphasizes respect for the natural world, portraying rivers, mountains, trees, and animals as embodiments of the divine. Hymns dedicated to *Prithvi* (Earth), *Agni* (Fire), and *Vayu* (Air) highlight the interdependence between humans and ecological forces. This sacred orientation toward nature is further reflected in the doctrine of *Pancha Mahabhuta*, which holds that all living beings are composed of the five elemental forces. Such a conception fosters an inherent ecological consciousness, encouraging individuals to consume responsibly and avoid environmental harm.

The *Upanishads* also contribute to this discourse. The Isha *Upanishad*, for instance, urges individuals to practice moderation and contentment, stating that the world's resources are meant for the benefit of all, and excessive consumption

disrupts universal harmony. These ideas parallel contemporary sustainability principles, particularly responsible consumption, equity, and long-term ecological resilience.

Moreover, ancient Indian society celebrated forests as spaces of knowledge, peace, and spiritual refinement. Texts like the *Aranyakas* highlight the sanctity of forest ecosystems and the need to protect them. Gurukula traditions, which often operated within forest environments, promoted minimalism, coexistence with wildlife, and sustainable living practices now considered essential for achieving ecological balance.

Overall, ancient Indian thought presents sustainability not merely as a policy agenda but as an ethical lifestyle rooted in harmony, moderation, and reverence for nature. This philosophical foundation provides essential context for understanding how the *Ramayana* internalizes and expands these principles within its narrative.

3. The Ramayana as a Model of Sustainable Ethics

The *Ramayana* presents a sophisticated ethical framework where moral conduct, environmental awareness, and social responsibility are inseparable. Through its characters, decisions, and settings, the epic illustrates how individual virtue directly contributes to collective harmony, an idea central to contemporary sustainability discourse. The principles of *dharma*, compassion, restraint, and balance are repeatedly emphasized, offering a culturally grounded model for sustainable living.

3.1 Rama's Ethical Leadership and Duty

Rama embodies *maryada* (principled conduct), consistently prioritizing duty over personal preference. His acceptance of exile to uphold familial harmony and constitutional order demonstrates an ethical stance that values societal stability over individual privilege. Such restraint and accountability resonate strongly with the modern idea of responsible leadership, which is essential for achieving sustainable governance. In the *Ayodhya Kanda*, Rama repeatedly affirms that a leader's foremost responsibility is to protect social equilibrium and ensure justice (Valmiki Ramayana, Ayodhya Kanda 20.1–20.5).

3.2 Sita's Ecological Sensitivity

Sita's character represents a deep, experiential connection with nature. During the forest exile, she expresses admiration for trees, rivers, animals, and the natural rhythms of the ecosystem. Her interactions reflect a worldview in which humans act as custodians rather than dominators of the environment. Sita's bond with the forest also symbolizes the nurturing and sustaining qualities of the natural world, aligning with modern concepts of ecological ethics and environmental mindfulness.

3.3 Lakshmana's Humility and Service

Lakshmana's unwavering service to Rama and Sita highlights values of humility, selflessness, and emotional discipline. His minimalistic lifestyle during exile, focused on duty, simplicity, and care, reflects a sustainable mode of living centered on moderation and collective well-being. Such attributes align with contemporary societal expectations of responsible citizenship and sustainable social behavior.

3.4 Hermitage Culture as a Model of Sustainable Living

The forest hermitages encountered throughout the *Ramayana*, such as those of Sage Bharadwaja and Sage Agastya, are depicted as self-sustaining ecological units. These spaces promote moderation, respect for biodiversity, and community-oriented living. The harmonious coexistence among sages, animals, and the natural surroundings illustrates a model in which spiritual development and ecological balance mutually reinforce one another.

Collectively, these ethical narratives demonstrate that sustainability in the *Ramayana* is not limited to environmental stewardship alone; it extends to moral leadership, social integrity, and emotional discipline. This holistic ethical framework remains relevant in discussions on sustainable development and responsible governance.

4. Ecological and Environmental Lessons from the Ramayana

The *Ramayana* presents a rich ecological narrative that highlights the centrality of nature in human life. The text's vivid descriptions of forests, rivers, mountains, and wildlife demonstrate an early understanding of environmental stewardship and the need for harmonious coexistence with the natural world. Through various episodes, the epic underscores ecological sensitivity, sustainable resource use, and the moral responsibility to protect the environment, principles deeply aligned with contemporary approaches to environmental sustainability.

4.1 Forest Ecosystems as Sacred Ecological Spaces

Forests such as *Chitrakoot, Panchavati*, and *Dandakaranya* are not merely backdrops but active participants in the narrative. These landscapes are depicted as vibrant ecosystems that support diverse flora and fauna. The reverence shown towards forest hermitages reflects an ecological ethos where nature is considered sacred, interconnected, and worthy of protection. The harmony between sages, wildlife, and natural elements illustrates a balanced ecological model that encourages preservation rather than exploitation.

4.2 Symbolism of Harmony and Ecological Balance

Many interactions in the forest highlight the need to maintain ecological equilibrium. Rama's respectful engagement with

hermit communities, Sita's appreciation for natural beauty, and Lakshmana's sustainable lifestyle all reinforce a minimalistic and nature-oriented ethic. The narratives subtly caution that disharmony with nature leads to suffering, while responsible engagement promotes peace and well-being.

4.3 Ethical Contrast: Rama and Ravana as Environmental Archetypes

Rama and Ravana can be viewed symbolically as contrasting environmental archetypes. Rama represents restraint, balance, and just action, qualities essential for sustainable environmental governance. Ravana, in contrast, embodies excessive consumption, unchecked ambition, and disregard for the environment. His actions, particularly the exploitation of natural and divine resources, serve as reminders of the consequences of unsustainable behavior. This contrast mirrors contemporary concerns about environmental degradation driven by unchecked development and material excess.

4.4 Alignment with Modern Environmental Goals

The environmental values embedded in the Ramayana closely align with several United Nations Sustainable Development Goals (SDGs):

DG 13: Climate Action: Principles of restraint, ecological mindfulness, and adaptive living.

SDG 15: Life on Land: Respect for biodiversity, forest protection, and coexistence with wildlife.

SDG 12: Responsible Consumption and Production: Emphasis on moderate living, minimal resource use, and ethical engagement with nature.

The epic's ecological lessons show that ancient cultural wisdom can significantly inform contemporary sustainability frameworks, strengthening the integration of ethical, artistic, and environmental dimensions of sustainable development.

5. Social and Governance Dimensions: Rama Rajya as Sustainable Governance

The governance model depicted in the *Ramayana*, commonly referred to as *Rama Rajya*, has long served as an aspirational ideal of justice, welfare, and ethical administration. While often celebrated for its moral clarity and compassionate leadership, *Rama Rajya* also reflects fundamental principles of sustainable governance. These principles emphasize social equity, institutional integrity, accountability, and community well-being—values that align closely with modern frameworks for sustainable development and effective public administration.

5.1 Justice, Fairness, and Institutional Integrity

At the core of *Rama Rajya* is a commitment to justice and fairness. The administration under Rama is characterized by transparent decision-making and impartial governance, where leaders prioritize public welfare over personal ambition. Rama's strict adherence to *dharma*, even when it demands personal sacrifice, illustrates a governance model grounded in ethical responsibility. This emphasis on accountable leadership aligns with contemporary expectations for strong institutions and the rule of law, as captured in SDG 16 (Peace, Justice, and Strong Institutions).

5.2 Welfare-Oriented and Inclusive Administration

Rama's governance emphasizes the welfare of all societal groups, including vulnerable and marginalized populations. The narratives describe a society in which economic stability, community support systems, and social harmony are actively promoted. People are said to live without fear, hunger, or excessive inequality, conditions that reflect not only ethical leadership but also principles of sustainable social development. These ideals resonate with SDG 10 (Reduced Inequalities) and SDG 11 (Sustainable Cities and Communities), underscoring the importance of inclusive growth.

5.3 Resource Management and Community Resilience

The descriptions of *Rama Rajya* also hint at effective management of natural and material resources. Governance is portrayed as development-oriented yet mindful of environmental balance. Agricultural prosperity, water availability, and community resilience are highlighted as outcomes of a well-managed and ethically governed state. This integrated approach reflects the modern understanding that sustainable governance requires balancing economic advancement, social welfare, and ecological responsibility.

5.4 Ethical Leadership as a Foundation for Sustainability

A key feature of Rama's leadership is the fusion of personal virtue with administrative competence. Rama exemplifies empathy, humility, and moral restraint, qualities essential for leadership in a sustainable society. Such ethical grounding fosters social trust, reduces conflict, and strengthens public participation in governance processes. In a contemporary context, this mirrors the paradigm of "ethical sustainability," where values-driven leadership enables long-term societal stability.

5.5 Relevance to Modern Sustainable Development Goals

The principles of *Rama Rajya* align with several SDGs, reinforcing its relevance in today's global governance discussions:

SDG 16: Strong Institutions, Peace, and Justice: Ethical leadership and transparent administration.

SDG 10: Reduced Inequalities: Inclusive governance and social welfare.

SDG 11: Sustainable Communities: Resilience, safety, and equitable development.

Through its portrayal of just leadership, social equity, and balanced development, the *Ramayana* offers a philosophical foundation for conceptualizing sustainable governance in the modern era.

6. Integrating Ramayana Principles with Sustainable Development Goals (SDGs)

The values depicted in the *Ramayana* offer a culturally rooted ethical framework that aligns well with modern global efforts to achieve sustainable development. Although composed centuries before contemporary policy structures, the epic reflects a nuanced understanding of ecological balance, responsible governance, social justice, and long-term societal well-being. These elements align with multiple dimensions of the United Nations Sustainable Development Goals (SDGs), demonstrating that ancient wisdom can meaningfully complement contemporary sustainability frameworks.

6.1 Ethical Dharma and SDG 16: Justice, Peace, and Strong Institutions

The emphasis on *dharma* throughout the Ramayana underscores the importance of moral responsibility, accountability, and fairness, core components of just and inclusive institutions. Rama's leadership, driven by ethical restraint and equitable decision-making, mirrors the modern requirement for transparent governance and trust-based public institutions. SDG 16 promotes peace, justice, and effective institutions, all of which closely parallel the administrative ideals embodied in Rama Rajya (as shown in Table 1).

6.2 Ecological Dharma and SDGs 12 & 15: Environmental Responsibility

The ecological values present in the epic reflect a deep respect for nature, aligning firmly with SDG 12 (Responsible Consumption and Production) and SDG 15 (Life on Land). Characters such as Sita, the hermit communities, and even Rama exhibit behaviors that demonstrate moderation, ecological mindfulness, and protection of natural resources. Forest ecosystems in the *Ramayana,* described as sacred, vibrant, and interconnected, reinforce the contemporary principle that protecting biodiversity is essential to sustaining human life and ecological stability (as shown in Table 1).

6.3 Social Dharma and SDGs 1, 5, and 10: Equality and Social Well-being

The social dimensions of the *Ramayana* emphasize fairness, compassion, and inclusivity. Rama's interactions with tribal communities (such as Guha and Shabari), his respect for diverse social groups, and the welfare-focused narratives of *Rama Rajya* reflect an ethos of equality and social upliftment. These principles align closely with SDG 1 (No Poverty), SDG 5 (Gender Equality), and SDG 10 (Reduced Inequalities), showing that the epic promotes a society where dignity, justice, and opportunity are universally accessible (as shown in Table 1).

6.4 Cultural Sustainability and SDG 4: Education and Lifelong Learning

The Ramayana also emphasizes the role of knowledge, character building, and ethical education. Hermitages serve as centers of learning where students develop discipline, environmental awareness, and moral clarity. This connects with SDG 4, which promotes inclusive and quality education that fosters values of peace, sustainability, and global citizenship. The emphasis on wisdom, reflection, and ethical upbringing underscores the crucial role of cultural knowledge systems in sustainable development (as shown in Table 1).

6.5 A Holistic Sustainability Model Inspired by the Ramayana

By synthesizing ecological, ethical, and social principles, the Ramayana offers a holistic model of sustainability that integrates cultural heritage with modern development needs. Unlike narrow economic models, the epic encourages a balanced approach that harmonizes material progress with environmental stewardship and ethical living. This integrated approach enriches the contemporary sustainability discourse, suggesting that long-term development requires both technological advancement and a strong moral foundation.

Table 1*Alignment between Ramayana Values and SDGs*

***Ramayana* Principle**	**Description**	**Relevant SDGs**
Dharma (Ethical Leadership)	Responsible governance, justice, and moral conduct	SDG 16
Ecological Responsibility	Respect for forests, minimal use, harmony with nature	SDG 12, SDG 15
Social Compassion	Equality, inclusion, and welfare values	SDG 1, SDG 5, SDG 10
Knowledge & Cultural Learning	Ethical education, lifelong learning	SDG 4

7. Conclusion

The *Ramayana* presents a sophisticated ethical and ecological worldview that remains highly relevant to contemporary discussions on sustainable development. Through its emphasis on dharma, compassion, social responsibility, and respect for nature, the epic offers principles that resonate strongly with modern sustainability frameworks, particularly the United Nations Sustainable Development Goals (SDGs). The narratives of Rama, Sita, Lakshmana, and the forest hermitage communities demonstrate that sustainable living is rooted not only in environmental stewardship but also in moral leadership, social harmony, and cultural continuity.

By examining select episodes and ethical constructs within the *Ramayana*, this paper highlights how ancient wisdom can meaningfully inform modern policy, governance, and environmental practices. The epic encourages a balanced approach in which ecological health, ethical governance, and community well-being serve as interconnected pillars of sustainable development. Such insights reinforce the value of integrating cultural and philosophical traditions into contemporary sustainability discourse.

Ultimately, the *Ramayana* serves not merely as a spiritual or literary text but as a timeless guide for fostering responsible citizenship, ethical leadership, and ecological balance. Its interdisciplinary relevance underscores the importance of drawing from traditional knowledge systems to create holistic, resilient, and culturally grounded development models for the future.

8. References

1. Atharva Veda. (1895). The Atharva Veda (R. T. H. Griffith, Trans.).
2. Banerjee, N. (2017). Ecology in the Ramayana. Indian Literature, 61(3), 145–158.
3. Bhargava, R. (2013). Ethics, governance, and the idea of Rama Rajya. Journal of Political Philosophy, 21(4), 415–430.
4. Bhattacharya, A. (2015). Ethics and ecology in ancient Indian epics. Journal of Indian Philosophy, 43(2–3), 253–270.
5. Chakrabarti, A. (2018). Indigenous knowledge and sustainability. Current Science, 115(9), 1683–1688.
6. Gadgil, M., & Guha, R. (1995). Ecology and equity: The use and abuse of nature in contemporary India. Penguin Books.
7. Goldman, R. P. (Ed.). (1984–2019). The Ramayana of Valmiki (Vols. 1–7). Princeton University Press.
8. Gupta, S. (2021). Sustainability and ecological ethics in Indian epics. Journal of Environmental Studies, 29(1), 54–66.
9. Isha Upanishad. (2003). In Swami Gambhirananda (Trans.), Eight Upanishads (Vol. 1). Advaita Ashrama.
10. Prasad, K. (2022). Cultural sustainability in Indian epics. Journal of Asian Studies, 81(2), 379–398.
11. Rig Veda. (1896). The Rig Veda (R. T. H. Griffith, Trans.).
12. Sharma, A. (2002). Environmental ethics in the Hindu tradition. Journal of Dharma, 27(3), 323–338.
13. Sharma, R. S. (1999). Early Indian social and political thought. Oxford University Press.
14. Singh, R. (2019). Environmental consciousness in the Ramayana. Journal of Indian Culture, 12(1), 89–102.
15. United Nations. (2015). Transforming our world: The 2030 Agenda for Sustainable Development. United Nations.
16. United Nations Development Programme (UNDP). (2024). Sustainable Development Goals Report.
17. Valmiki. (1960). Ramayana: Critical edition (H. Shastri, Ed.). Oriental Institute.
18. Verma, S. (2020). Rama Rajya and good governance: A philosophical reappraisal. Indian Journal of Public Administration, 66(4), 512–525.
19. Sivaramakrishnan, K. (2017). Ecological Traditions of India. India International Centre.

Dharma & Ideal Polity - Social Sustainability through Shri Rama Raajya

S. Vijaykrishnan
(svijaykrishnaniyer@gmail.com)

This paper aims to study the concept of Shri Rama Raajya in the Srimad Valmiki Ramayana as a paradigm of social sustainability rooted in dharma. Through episodes such as Shri Rama's counsel to Bharata, the Paaduka-Pattaabhisheka, Devi Shabari's devotion, and the Vibhishana-Sharanaagati, the study explores governance founded on justice, accountability, and compassion. It argues that Shri Rama's adherence to Dharma created a moral and administrative framework ensuring harmony, inclusion, and welfare for all beings.

1. Introduction

The Shri Rama Raajya has fascinated wise minds from time immemorial as a benchmark for a welfare state, founded on the principles of justice, inclusion, accountability, political parity and above all, institutional trust, i.e. even the Raja, or King who is the head of the institution, too is not above any boundaries. The reason for such a framework of social sustainability to be plausible is that it is rooted in Dharma. The paper therefore unfolds with a comprehensive description of Dharma, based on the Shruti and Smriti texts, as well as passages from the Dharmashastras to set the foundation for the rest of the paper. Rather than view Dharma as merely a guidepost to assess rights and wrongs, the paper tries to establish it as a two-tiered structure of Saamanya Dharma and Vishesha Dharma. These two dimensions of Dharma, one universal, and the other role-specific — work together to maintain social harmony and mutual responsibility. This relationship between Saamaanya-Dharma and Visheṣa-Dharma forms the foundation of social sustainability described in the Śrīmad Valmiki Ramayana. It also gives rise to the Shri Rama-Raajya—an order marked by equity, safety, health, trust, and ecological harmony. To substantiate this discussion on Dharma, the paper explores key sargas in the Ayodhya Kaanda, Aranya Kaanda, Kishkindha Kaanda and Yuddha Kaanda that outline some beautiful as well as valid concepts on governance and social sustainability. Moving on, the paper outlines and explores themes such as good governance, the need for rule-bound authority, lawful restraint in kingship, clemency, justice, inclusion & welfare, refugee policies, accountability, and refuge & reconciliation, all of which are from pillars of sustainability, making "Rama-Raajya", a plausible reality. Prominent instances from the Epic that the paper covers are – the dialogue between Shri Rama and Bharata in the Ayodhya Kaanda (Sarga 100), which on its own reads like a governance manual, Ethical leadership displayed in the Epic, apropos the promise to Raja Dasharatha, Bharata's Sharanaagati, and counsel to Vibhishana after the war. Moving on, we look at justice, inclusion and large-scale welfare through the examples of Guha, Shabari, the Rishis of Dandakaranya and even Jatayu Moksha. Lastly, we examine the relevance of justice being beyond personal affections and afflictions – as illustrated by the episodes of Mata Sita's Agni Pariksha and the much later separation of the Divya Dampati. To conclude the theoretical outline of this paper, we look at Shri Rama Raajya as an enduring example of social sustainability, in light of the benchmarks it displays even for modern society - Prosperity, no premature death; public safety; health (no epidemic disease); unity and trust, as Maharishi Valmiki beautifully brings out in this verses in the concluding sarga of the Yuddha Kaanda – "Every creature felt pleased. Everyone was intent on Dharma. Turning their eyes towards Rama alone, creatures did not kill one another." However, it is pertinent to note here the Rama Raajya is not just an utopian benchmark relevant Yugas ago, but a completely applicable administrative system that can be mapped and measured alongside current sustainability frameworks. Thus, the approach of this paper is two-fold - one, to comprehensively explore all the instances and contexts in the Srimad Valmiki Ramayana, relating to social sustainability and two, to apply and compare these findings to modern-day frameworks such as the United Nations' Sustainability Development Goals (SDGs). Apposite to social sustainability, the paper also explores environmental sustainability as an implicit sub-set of the paper's theme, to ensure that the study comes full circle - enabling it to conclude with a comprehensive, and applicable Environment, Social & Governance (ESG) framework, constructed in line with the UN SDGs, that measures the effectiveness of the Shri Rama Raajya vis-a-vis the preparedness of India and the world to usher in the ideals espoused by Prabhu Shri Ramachandra. Dharma, and more specifically, Raja-Dharma is the axis around which the paper revolves. "Dharma" here does not merely mean religion, duty, or a personal creed. As echoed in the timeless verses of Veda and Vedanta, **Dharma is balance, or in other words, sustainability.**

2. Dharma = Good Governance → Social Sustainability

The Shrutis and Smritis do not define Dharma as a solitary concept that is merely a guidebook of dos and don'ts that define what is right and what is wrong. The Rigveda and Dharma is an inseparable part of a triad, along with Rta (cosmic order) and Satya (Truth). Thus, in essence, Dharma is the very foundation that upholds and sustains creation. **(Ṛgveda 10.190: "Ṛtam Ca Satyaṃ Chaabhidhat…" (Order and Truth are the womb of creation)**. Similarly, The Shatapatha Braahmaṇa treats

Dharma as "that which upholds"—it is not merely law, but the power, the balance that upholds people, society, and the Universe. Taken together, Veda and Upanishads define dharma as a concept that sustains order and well-being — the very basis of social sustainability. In practice, Dharma takes on two dimensions for every creature, human or animal - *Saamaanya* and *Vishesha.* Saamaanya Dharma encompasses basic ethics that all beings have to follow, irrespective of their position or role in society, as the Manusmriti encapsulates it in **(10.63: "Ahiṃsa, Satya, Asteya, Shaucha, Indriyanigrahaha" (non-injury, truthfulness, non-stealing, purity, and control of the senses).** The Yaajnavalkya Smriti expands this a bit further - **Dayaa (compassion), Kshama (forbearance), Daana (giving), Shanti (Peace).** While Saamaanya Dharma sets the base for a sustainable society, *Vishesha Dharma* individualises it as per role and situation. These include function-based duties for various communities and groups (the dharma of teachers, rulers, agrarians, traders, householders, ascetics**, etc.) that demarcates responsibilities for everyone so as to ensure harmony in society.** Perhaps, no other verse explains the significance of Dharma better - the Hitopadesha says - **(Shloka 0.25 - आहारनिद्राभयमैथुनानि सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् । धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥ Ahaara-Nidraa-Bhaya-Maithunaṁ Ca Sāmānyam Etat Paśubhir Narāṇām | Dharmo Hi Teṣām Adhiko Viśeṣodharmeṇa Hīnāḥ Pashubhih Samaanaah|)** "Eating, sleeping, fearing, and mating—these on the part of humans are common with animals. Dharma is their [i.e., humans'] greater, distinguishing quality." In this backdrop, the Ramayana provides a clear outline of Raja-Dharma as an appropriate example of Vishesha Dharma and how it aids sustainability. Let us look at some glimpses of the dialogue between Shri Rama and Bharata in the 100th Sarga of the Ayodhya Kaanda.

Shri Rama's queries to Bharata cover a slew of aspects related to overall Rajya-Dharma, fair and timely wages, wise ministerial counsel, incorruptibility, role-fit for personnel chosen, agrarian welfare, food security, biodiversity, military security, resource management, cattle wealth, public safety and ecological balance. To get the essence of the comprehensive discussion, let us look at the seven limbs of the Raajya that Shri Rama outlines in this shloka - **(Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shloka 68 - दशपंचचतुर्वर्गान् सप्तवर्गं च तत्त्वतः | अष्टवर्गम् त्रिवर्गं च विद्यास्तिस्रश्च राघव).** The seven limbs (*Sapta-Vargas*) of the state described by Shri Rama are namely - The Raja, his ministers, friends, treasure, territory, forts and an army. No governance model can be successful in the absence of having the right people appointed in key roles and that the ministers are incorruptible and of a good lineage, or in modern parlance, those who possess a track record of good conduct **(Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shlokas 25-26 -कच्चिन् मुख्या महत्सु एव मध्यमेषु च मध्यमाः | जघन्याः च जघन्येषु भृत्याः कर्मसु योजिताः || अमात्यान् उपधा अतीतान् पितृ पैतामहान् शुचीन् | श्रेष्ठान् श्रेष्ठेषु कच्चित् त्वम् नियोजयसि कर्मसु ||).**

It logically follows that if you need well-qualified personnel, they also have to be paid fairly and on time. Shri Rama details the social disruption that could ensue if this is unfulfilled, quite an uncanny parallel to modern-day India, where large-scale strikes (politically motivated) by dissatisfied employees, industry groups or lobbies often lead to huge economic and productivity losses. Stable governance ensures that the welfare of the state is guaranteed and this is discussed, encapsulating the following parameters - food security, ecological balance, public safety, a strengthened agrarian economy, adequate public infrastructure and equitable distribution of economic and environmental resources. **(Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shlokas 40-53 - वीरैर् अध्युषिताम् पूर्वम् अस्माकम् तात पूर्वकैः— आयः ते विपुलः कच्चित् कच्चिद् अल्पतरो व्ययः | अपात्रेषु न ते कच्चित् कोशो गच्छति राघव ||)** While the verses cannot be reproduced in entirety for want of brevity, the key lesson we draw is that the welfare of the Praja, the people ensures in turn the welfare of both the Raja and the Raajya. Shri Rama also specifically mentions the need to minimise expenditure, even as the state's income is abundant, and that the treasury does not fill the pockets of undeserving people - sadly, as we see in modern Indian society, many of the welfare schemes announced by government bodies do not reach the intended beneficiaries but only fill the coffers of the powerful few. A credo of transparency and accountability is also underscored, in Shri Rama's instruction that any state undertaking should only bring maximum benefit to the people but at minimal cost, without unwarranted delays, a far cry from current times, where we see many infrastructure, public development projects languishing under bureaucratic red tape, work inefficiency and lack of political will. Simultaneously, Shri Rama also highlights the need for effective resource management in this verse - (**Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shloka 53- कच्चित् सर्वाणि दुर्गाणि धन धान्य आयुध उदकैः | यन्त्रैः च परिपूर्णानि तथा शिल्पि धनुर् धरैः ||** "I hope all your citadels are quite full of money, grain, weapons, water and mechanical contrivances as well as artisans and archers."

Shri Rama nicely sums up the essence of Rajya-Dharma in 10 points that a rightful king must deal with - (1) **Ten evils**; (2) **Five fortifications; (3)** Saama-Daana-Bheda-Danda; (4) Seven limbs of state; (5) Dharma-Artha-Kaama; (6) Three branches of learning; (7) Control of senses; (8) Six strategies versus enemies; (9) Act of God, or what we know today as *Force Majeure;* (10); Twenty types of monarchs who are not worth negotiating with. Put together, this guidebook still resonates with modern-day concepts such as cross-border diplomacy; personal integrity of leaders, conflict management, etc. To conclude, the kingdom and people are not protected merely by the ruler's show of power and authority, but by his righteousness, or in other words, ethical leadership.

3. Ethical Leadership

Shri Rama's giving up the throne to keep his father's word and be in exile is not just an act driven by filial love, but a deeply ethical decision driven by a lot of forethought as we will see. Bhagavan's extreme self-restraint, adherence to truth and the

need to create an example of social trust is reflected in his choice to move to the forest. It also shows an interesting interplay between the Saamaanya Dharma of following the paternal promise and the Vishesha Dharma of accepting the crown - something that reverses sharply later in the Uttara Kaanda, when Shri Rama once again stands between his *Raja-Dharma* and *Pati-Dharma*.

Shri Rama's vow to stick to Raja Dasharatha's promise transcends all personal choices, duties and preferences. There were many rightful reasons and justifications for Shri Rama to take back the throne – His brother Bharata's surrender, His Guru Vashishta's command, the queen-mothers' beseeching prayers, and above all, the call of the *Praja*, the very people for whose happiness, a Raja exists. Yet Shri Rama overcame them all to be steadfast to hold on to his vow. Shri Rama's steadfastness raises three questions – the first, did Shri Rama stay steadfast to achieve personal glory; second, was it only to follow of a set of rules; and third was it to display the virtues of *Vairaagya*? When we go through the verses in the Epic, it becomes clear that Bhagavan is not shrugging off his responsibilities, but merely upholding the rightful law and cosmic order as we have discussed before –

(Ayodhya Kaanda, Sarga 107, Shloka 3 - पुरा भ्रातः पिता नः स मातरम् ते समुद्वहन् | मातामहे समाश्रौषीद् राज्य शुल्कम् अनुत्तमम् || Puraa Bhraatah Pitaa Nah Sa Maataram Te Samudvahan | Maataamahe Samaashrausheed Raajya Shulkam Anuttamam ||).

"O, My brother! Long ago, when our father married your mother, he promised your maternal grandfather that he would confer his kingdom as an exceptional marriage-dowry."

Thus, it was not merely Raja Dasharatha's boons given to Queen Kaikeyi that Shri Rama fulfilled, but an accord that was created between two kingdoms by way of marital alliance.

Second, Shri Rama does not disregard his Guru, Maharishi Vashishta's words on a whim, but uphold to the timeless credo of Sanaatana Dharma, of *Pitru Devo Bhava* -

(Ayodhya Kaanda, Sarga 111, Shloka 9 - यन् मातापितरौ वृत्तम् तनये कुरुतः सदा | न सुप्रतिकरम् तत् तु मात्रा पित्रा च यत् कृतम् || Yan maataapitarau vrittam tanaye kurutah sadaa | Na supratikaram tat tu maatraa pitraa ca yat kritam ||).

"The good, which a father and mother do, by giving whatever they can, to their son constantly, by putting him to sleep, rubbing his body with oil etc, nay, by speaking kindly to him every moment, and even by nourishing him, can never be wholly requited."

Moreover, Shri Rama does not forsake his responsibility as King but merely delegates it to Bharata, for the period of the exile. As we repeatedly see in later episodes throughout the Epic, Shri Rama does indirectly discharge his responsibilities as a King in instances such as protection of the Sages in Dandakaranya, dispensing justice to Sugreeva by eliminating Vali, etc. The Rishis in Dandakaaranya proclaim–

(Aranya Kaanda, Sarga 1, Shloka 3 - ते वयं भवता रक्ष्या भवद्विषयवासिनः |नगरस्थो वनस्थोवा त्वं नो राजा जनेश्वरः || | Te Vayam Bhavataa Rakshyaa Bhavad Vishaya Vaasinah | Nagarastho Vanastho Vaa Tvam Nah Raajaa Janeshvarah ||)

"You alone have to protect us as we are the subjects living in your kingdom; may you be in the capital... or in the forest...you are our king..."

Therefore, it is in this context that Shri Rama passes on the kingdom and the responsibility of administering the kingdom in trust, through a symbol that Bharata requests – Shri Rama's Paadukas, which are then installed in Nandigraama, with Bharata administering the kingdom, under the guidance of the Paadukas and the advice of the ministers.

(Ayodhya Kaanda, Sarga 112, Shloka 23 - चतुर्दश हि वर्षाणि जटाचीरधरो ह्यहम् || फलमूलाशनो वीर भवेयम् रघुनंदन | Chaturdasha Hi Varshaani Jataacheeradharo Hyaham || Phalamuulaashano Veera Bhaveyam Raghunandana |).

"Bharata tells Shri Rama, "O Rama! For fourteen years, I shall wear matted locks and robes of bark, live on fruits and roots O Rama, and live outside the city, offering the ruling of the kingdom to your sandals."

(Ayodhya Kaanda, Sarga 115, Shlokas 26-27 - ततस्तु भरतः श्रीमानभिषिच्यार्यपादुके || तदधीनस्तदा राज्यम् कारयामास सर्वदा | स पादुकाभ्याम् प्रथमम् निवेद्य | चकार पश्चाद्भरतो यथावत् || Tatastu Bharatah Shreemaanabhishichyaaryapaaduke || Tadadheenastadaa Raajyam Kaarayaamaasa Sarvadaa | Sa Paadukaabhyaam Prathamam Nivedya | Chakaara Pashchaadbharato Yathaavat |).

"Coronating the wooden sandals of his elder brother, the illustrious Bharata thereafter carried out the state administration, always maintaining his subservience to them."

Yet another instance, of ethical leadership is shown in Shri Rama's restraint after the war and the slaying of Ravana. Bhagavan's insistence on justice without vengeance in his motivation to Vibhishana to perform the funerals of his brother, indicates that all enemity, even between kings and nations, ends with after death. Much of this will be explored in a later section on Refuge & Reconciliation.

(Yuddha Kaanda, Sarga 109, Shloka 18 - नैकान्तविजयो युद्धे भूतपूर्वः कदाचन | परैर्वा हन्यते वीरः परान्वा हन्ति संयुगे || Naikaantavijayo Yuddhe Bhuutapuurvah Kadaachana | Parairvaa Hanyate Veerah Paraanvaa Hanti Samyuge ||).

"Such is the destiny proclaimed as highly esteemed for a warrior. A warrior killed in battle, does not deserve to be mourned. Such is the ascertainment of the sacred scriptures."

(Yuddha Kaanda, Sarga 109, Shloka 25 - मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम् | क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव || Maranaantaani Vairaani Nirvrittam Nah Prayojanam | Kriyataamasya Samskaaro Mamaapyesha Yathaa Tava ||).

"Hostilities end with death. Our purpose has been accomplished. Let his funeral rites be performed. He is even as good mine, as yours."

Thus, in war victories too, kindness can be displayed, as Bhagavan says – "Ravana is as good as mine, as he is yours." displaying a kinship that transcends time, place and form. Shri Rama shows that an ethical leader does not need a ccrown a position, and mere authority to display the timeless values of justice with compassion.

4. Inclusion, Justice & Welfare

The notions of inclusion, justice and all-round welfare ever remain discussion points for humankind. In Srimad Valmiki Ramayana, Shri Rama extends the paradigm of inclusion to one and all – from his brothers, to Guha, Shabari, Hanuman and the Vanaras, and even Jatayu, the giant vulture, whom Shri Rama reveres akin to his father Raja Dasharatha. Guha, a tribal chieftain, and the ruler of Shringaverapura, is not merely treated as a vassal by Shri Rama, but as a dear friend, nay even a brother. Without any public fanfare as we in current day polity, Shri Rama, lifts Guha the Nishaada, as an equal ally on the path of Dharma. When they first meet, in the Ayodhya Kaanda, Guha offers Bhagavan food of various kinds, roots and tubers, why even his forest kingdom at Bhagavan's feet, Shri Rama says, "My dear Guha, I am satisfied to see you hale and hearty with all your relatives."

(Ayodhya Kaanda, Sarga 50, Shloka 42 - दिष्ट्या त्वाम् गुह पश्यामिअरोगम् सह बान्धवैः || अपि ते कूशलम् राष्ट्रे मित्रेषु च धनेषु च | Dishtyaa Tvaam Guha Pashyaamiarogam Saha Baandhavaih || Api Te Kuushalam Raashtre Mitreshu Ca Dhaneshu Ca||).

Under vow to not accept any assistance from anyone or reside in a city, Shri Rama redirects Guha to take care of the royal horses, saying this itself will please him.

The interaction between the two friends takes on a beautiful dimension in the words of the immortal poet Kamban, in his *Iraamaavataram*, where Bhagavan declares Guha to be the fifth of the brothers along with Lakshmana, Bharata and Shatrughna. Such is Shri Rama's inclusion. Though Guha presents himself as a lowly servant in Kamban's text, he is exalted by the grace of Shri Rama.

Rightfully so, Guha is not merely addressed by name by true Ramabhaktas, address the Nishaada King as "*Guhapperuman*", the "Lord Guha", an appellation not even applied to Shri Rama in Kamban's epic. In the Guha-Padalam in *Iraamavataaram*, the poet Kamban eulogises Guha as "Thaayin Nallaaan", meaning one who was even as a mother to Shri Rama, as he fetched Bhagavan, roots, tubers and fruits for his consumption, just as a mother would care for her child.

Shri Rama's inclusive compassion is also displayed in the incident of Devi Shabari and Jatayu later. Shabari, the disciple of Maharishi Matanga who awaits Shri Rama's coming. Though the character of Shabari and the incident of Bhagavan eating berries is dealt with differently by Sage Valmiki and Goswami Tulasidas Maharaj, the undercurrent is the same – The King equally views all strata of society in achieving a sustainable society.

Shri Rama's first words to the mendicant Shabari reflect this –

(Aranya Kaanda, Sarga 74, Shloka 8 - कच्चित् ते निर्जिता विघ्नाः कच्चित् ते वर्धते तपः | कच्चित् ते नियतः कोप आहारः च तपोधने || Kaccit Te Nirjitaa Vighnaah Kaccit Te Var.Hdhate Tapah | Kaccit Te Niyatah Kopa Aahaarah Ca Tapodhane ||).

"Oh, ascetically wealthy lady, are your deterrents in tapasya completely overcome, somehow... are your ascetic practises successful, someway... your annoyances and ailments are adjusted, somewhat... isn't it!"

Shabari's answer is equally evocative - **(Aranya Kaanda, Sarga 74, Shloka 11 - अद्य प्राप्ता तपः सिद्धिः तव संदर्शनात् मया | अद्य मे सफलम् जन्म गुरवः च सुपूजिताः || Adya Praaptaa Tapah Siddhih Tava Samdarshanaat Mayaa | Adya Me Saphalam Janma Guravah Ca Supuujitaah ||).**

"On your coming O Rama! My birth is fructified, and only now my service to my Gurus is meaningful." The answer is not just spiritually significant but also reminds us that when the justice and compassion of a Dharmic ruler reach all sections of his people, they feel fulfilled in all senses, feeling liberated in a true sense! For Devi Shabari, the liberation is literal too, as under the mere gaze of Shri Rama, she attains Moksha!

If in the examples of Guha and Shabari, we see inclusive compassion, for Jatayu and the Rishis of Dandakaranya, Shri Rama brings inclusive justice - by ensuring the end of Ravana and the evil Rakshasas. In the case of Jatayu, the moment is moving as well. Shri Rama's blessing "Gaccha Lokan Anuttaman" **(Aranya Kaanda, Sarga 68, Shloka 30 - मया त्वम् समनुज्ञातो गच्छ लोकान् अनुत्तमान् | गृध्र राज महा सत्त्व संस्कृतः च मया व्रज || Mayaa Tvam Samanujnaato Gacchha Lokaan Anuttamaan | Gridhra Raaja Mahaa Sattva Sanskritah Ca Mayaa Vraja||.)** — is explained by various commentators as a direct grant of Moksha — a rare moment where Shri Rama the Maanava reveals His supreme, liberating divinity, showing Him unmistakably as the Paramatma who alone can bestow the highest spiritual state. For the Rishis in Danadakaranya, Shri Rama is both Raja and Narayana and they evoke his responsibility to guard them as a parent does by eliminating the evil posed by the Rakshasas.

(Aranya Kaanda, Sarga 6, Shloka 12 - युंजानः स्वान् इव प्राणान् प्राणैः इष्टान् सुतान् इव | नित्य युक्तः सदा रक्षन् सर्वान् विषय वासिनः ||

प्राप्नोति शाश्वतीम् राम कीर्तिम् स बहु वार्षिकीम् | || Yunjaanah Svaan Iva Praanaan Praanaih Ishtaan Sutaan Iva | Nitya Yuktah Sadaa Rakshan Sarvaan Vishaya Vaasinah || Praapnoti Shaashvateem Raama Keertim Sa Bahu Vaarshikeem |.)

"A king shall treat all Prajaa as his own children, and protect them at the cost of his own life and he who will always be endeavouring in that manner will attain permanent renown lasting for many for many years to come."

Shri Rama also submits to the sages' request and states that his very exile at the word of his father is only a concomitant factor that has put him at the service of the Rishis. In this instance, Shri Rama displays selfless compassion *(Avyaaja Karuna)*, of a just ruler in dedicating himself to the welfare of the sages.

A final dimension of inclusion, of safeguarding the environment and retaining ecological balance, comes at this juncture. As Shri Rama moves deeper into the woods preparing to confront the Rakshasas, a word of caution and compassion comes from Mata Sita, as noted in an earlier research paper (A Comparative Study of Climate and Geography in Valmiki Ramayana and Current World with its impact on Culture, 2023), At the start of the Aranya Kaanda, after the sages in the forest request Shri Rama to end the menace of the Rakshasas and as He begins his sojourn in Dandakaranya, Mata Sita has a moving conversation with the Lord on not indiscriminately harming the animals and birds in the forest. Highlighting the ten desires that lead to the downfall of humans, Mata Sita says as hunting is one among them, Shri Rama might end up unintentionally harming offence-less creatures in the forest while fighting the Rakshasas. While it is true that in the times of the Ramayana, Kshatriyas were allowed to hunt for sustenance and sacrifices, Mata Sita's words highlight the need to maintain a balance.

(Aranya Kaanda, Chapter 9, Verses 24-25 - स्नेहात् च बहुमानात् च स्मारये त्वाम् न शिक्षये | न कथंचन सा कार्या गृहीत धनुषा त्वया ||

बुद्धिः वैरम् विना हन्तुम् राक्षसान् दण्डक आश्रितान् | अपराधम् विना हन्तुम् लोको वीर न कामये || Snehaat Ca Bahumaanaat Ca Smaaraye Tvaam Na Shikshaye. Na Kathamcana Saa Kaaryaa Griheeta Dhanushaa Tvayaa. Buddhih Vairam Vinaa Hantum Raakshasaan Dandaka Aashritaan. Aparaadham Vinaa Hantum Loko Veera Na Kaamaye.)

Thus, the protection of natural biodiversity is a consistent theme echoed across the Epic, which in fact has led to a lot of living links up to the current times. In the sections ahead, we shall see how this has had a lasting impact on the culture and festive observances in the land of Bharata.

In conclusion, in espousing the eternal values of inclusion and justice to ensure all-round welfare, the ruler must often put himself and his near ones at stake as well, as we will see in the discussion on accountability and transparency even at the cost of personal happiness, as we will see in the forthcoming section.

5. Accountability and Transparency

Accountability and transparency are oft-quoted terms in all social spheres – governance, trade, corporate operations and yet in practice, the modern world has to navigate a lot of grey areas in achieving these two pillars of sustainability. Here the Srimad Valmiki Ramayana presents a stellar benchmark through the incidences of Mata Sita's Agnipariksha and her later separation from Shri Rama in the Uttara Kaanda. I say "separation" and not separation/ abandonment, as is often viewed in modern contexts, rather incorrectly. If we were to see Mata Sita as just the consort of the "man" Shri Rama, then such a conclusion may seem valid, but if we should rightly view Shri Rama and Devi Sita as King and Queen, co-rulers both responsible for establishing Dharma and setting an example of public accountability, then both the episodes of the Mata Sita's Agnipariksha and her later separation will some only an unfortunate necessity on the path of Dharma and sustainability.

Classical commentators on the Valmiki Ramayana—such as Shri Govindaraja (Bhooshana), Shri Rama Pandita (Tilaka) and Shri Sivasahaya (Shiromani) — interpret Mata Sita's Agnipariksha not as a test born of (Shri Rama's) suspicion, but as a deliberate public demonstration to establish Mata Sita's exalted nature. We must also note that Mata Sita's Agni Pravesha is self-initiated, while simultaneously revealing Shri Rama's divine nature. This incident serves to protect the long-term integrity of social memory and communal trust by ensuring that no residual stain or ambiguity could remain regarding Sita's honour.

In the Uttara Kanda, the Bhaashyas explains the separation as arising from the severe demands of Raja Dharma rather than a second questioning of Sita. What many modern-day scholars rather conveniently ignore is the fact that Shri Rama painfully balances two responsibilities - the personal duty (*Saamaanya Dharma*) of a husband who in truth, knows his wife to be pure, and the public duty of a king who exists merely for the Praja, the subjects. Traditional commentators therefore read Mata Sita's separation as an act of personal renunciation undertaken to uphold systemic trust and societal unity. In this light, Sita's residence in Valmiki's hermitage, the birth of Lava and Kusha, and her final return to the earth are understood as dignified and divinely orchestrated events that preserve the sanctity of her character and the continuity of the royal lineage.

Seen through the lens of social sustainability, both the above episodes reflect an early narrative articulation of principles that support durable social order: public accountability of leadership, preservation of collective trust, institutional transparency, and the willingness of rulers to bear personal sacrifice for the larger good. The bhaashyas affirm that Rama and Sita remain entirely without blemish: Rama as the sovereign who upholds the stability and trustworthiness of society even at immense personal cost, and Sita as the embodiment of purity, resilience, and moral strength whose life becomes foundational to the ethical memory of the community. Far from signifying moral conflict, these episodes are shining examples of Dharma-teaching moments - thus, ensuring that the social, ethical, and spiritual sustainability of the community remains intact across generations.

6. Refuge, Reconciliation and Alliances

One of the key themes of the Srimad Ramayana is War – a War against Adharma and all that is evil and unjust that is personified by Ravana and his Rakshasas. Such a war becomes necessity to establish Dharma and achieve peace and sustainability. In any war, one must have allies as well and such allies that are ethically and morally suitable, not just the convenient ones. If Shri Rama wanted easy alliances, Vali was the natural choice. The King of the Vanaras, who had already subdued Ravana in the past would have been the logical choice. Why Vali himself raises this question in Sarga 16 of the Kishkindha Kaanda -

(Kishkindha Kaanda, Chapter 17, Verses 49 & 50 – Maam Eva Yadi Puurvam Tvam Etad Artham Acodayah. Maithilim Aham Eka Aahnaa Tava Ca Aaneetavaan Bhaveh. Raakshasam Ca Duraatmaanaam Tava Bhaarya Apahaarinam. Kanthe Baddhvaa Pradadyaam Te Anihatam Raavanam Rane).

Vali claims that if Shri Rama had chosen to be on his side, he would have bound the demon by his neck and fetched Mata Sita back. Yet, this possibility itself is illogical as Rama's approaching Vali for help would have meant breaking his word to Sugreeva to kill Vali. And this can never happen.

After Mata Sita was spotted by Hanuman and an expedition to Lanka becomes an eventuality, Shri Rama does not yet give up hope of peace, trying till the end through Angada to search for a peaceful resolution. Even prior to this, when Vibhishana approaches as a refugee, Shri Rama's treatment of the "enemy's brother" is interesting. It is noteworthy here that Shri Rama does not grant Vibhishana asylum out of mere political expediency or to gain an advantage in the impending conflict with Ravana. He declares that the credo of granting *Sharanaagati* is universal as is declared in his famous pledge that is also worshipped as the "charama" ultimate shloka in the Srivaishnava Sampradaaya -

(Yuddha Kaanda, Chapter 18, Verse 33 – सकृद् एव प्रपन्नाय तव अस्मि इति च याचते ||अभयम् सर्व भूतेभ्यो ददामि एतद् व्रतम् मम | Sakrid Eva Prapannaaya Tava Asmi Iti Ca Yaachate || Abhayam Sarva Bhuutebhyo Dadaami Etad Vratam Mama |)

"He who seeks refuge in me just once, telling – 'I am yours', I shall give him assurance of safety against all types of beings. This is my solemn pledge." Shri Rama affirms that even if the approaching person is Ravana himself, his vow of giving refuge to all creatures is unchanged.

Vibhishana did not seek mere political asylum for benefits. It was "sharanagati" an unconditional surrender and that is why Bhagavan offers him his friendship and Abhaya. All of Shri Rama's counsellors including Jambavan, Angada, Sugriva and even Lakshmana who warn of Danger. Shri Rama refutes them all and grants Vibhishana refuge.

Even at the point where Lakshmana says Vibheeshana may slay him, Shri Rama says "He is capable of killing all the Pisachas, Danavas and all Rakshasas with just the tip of his toe." This reflects that Shri Rama is genuinely capable of offering Sharanagati and Vibhishana's coming is not for a back-door diplomacy but full-hearted surrender. Herein is a valuable lesson for modern-day governments and diplomats - that true refuge and asylum are offered from a position of moral capability and strength and not just for political brownie points.

Another instance of reconciliation and non-vengeance comes from the Nepali Bhaanu-bhakta Ramayana and other non-canonical Ramakathas, which depict a post-war dialogue between Malyavaan - after the war and Rāvaṇa's death, Malyavān approaches Shri Rama on behalf of the surviving citizens of Lanka. Bhagavan replies that he had merely waged war to end the evil propagated by Ravana and his allies, and not to seize the dominions of Lanka – which he assures that Vibhishana will rule with righteousness, and promises protection to all who seek refuge in dharma.

7. Rama Raajya – A timeless ideal

The Valmiki Ramayana, as noted by Acharyas and commentators across the ages is a "Dharma Kaavya", where Shri Rama, the Maryada Purushottama, working within the dictates and boundaries of Dharma, ensures both cosmic sustainability - by achieving the goals of his Avatara through the slaying of Ravana and pleasing the celestials – to also enshrining social sustainability by establishing the Rama Raajya. In Devarishi Narada's summary at the start of the Bala Kaanda, the wandering sage proclaims –

(Baala Kaanda, Sarga 1, Verse 90-96 – प्रहृष्टमुदितो लोकस्तुष्टः पुष्टः सुधार्मिकः | निरामयो ह्यरोगश्च दुर्भिक्षभयवर्जितः ||…राजवंशान् शतगुणान् स्थापयिष्यति राघवः | चातुर्वर्ण्यं च लोकेऽस्मिन् स्वे स्वे धर्मे नियोक्ष्यति || Prahrishto Mudito Lokah Tushtah Pushtah Sudhaarmikah | Niraamayo Hi Arogah Ca Durbhiksha Bhaya Varjitah ||…Raaja Vamshaan Shata Gunaan Sthaapa Ishyati Raaghavah | Caatur Varnyam Ca Loke Asmin Sve Dharme Niyokshyati ||)

A portrait of an ideal world is painted, where all the people are steadfast in their Dharmas, are free of all diseases and ailments, are ever prosperous and live in abundance. Maharishi Valmiki elaborates the description in the final sarga of the Yuddha Kaanda, after Shri Rama Pattaabhisheka, where all creatures lived in mutual harmony without troubling each other, practicing perfect Ahimsa and intent on Dharma alone. Even nature rejoiced in Rama Raajya, with no climatic disturbances, absence of famines and natural disasters. All societal groups co-exist peacefully, carrying out their specific duties thus, ensuring a self-reliant and sustainable populace that could live free of external dependencies. Is the Rama Raajya world imaginable in current geopolitical circumstances? Probably difficult, but not impossible if all the countries of the world align to a Dharma-sustainability led order, seeking only the welfare of the world and its inhabitants. As observed at the start of the paper, the Rama Raajya is not a utopian ideal that is far from reality – in fact its principles are enshrined in every aspect of Bharatiya livelihood and even the Indian constitution. Yet, to give it a measurable form and correlate it to current global and

Indian realities, this paper aims to present an ESG matrix that holds the Shri Rama Raajya as an ideal benchmark across environmental, social and 12 governance factors and assesses the level at which Bharata and the world stand vis-à-vis that.

8. Rama Raajya – An applicable model of social sustainability

This paper takes the Rama Raajya to be a perfect benchmark with a value of "10", versus which both the world and Bharata are compared, identifying the gaps and deficits in current systems. While today's India and the world make technical progress, their ESG gap with dharmic sustainability remains large because external compliance cannot substitute for inner alignment with dharma. This paper believes that a revival of a Dharmic code - combining both Sāmānya-dharma (shared virtues) and Viśeṣa-dharma (contextual responsibility) would narrow this gap—restoring the balance between ethics, ecology, and governance that defined the divine Shri Rama-Raajya.

The ESG matrix and scores below have been developed using a Social Sustainability Model that draws from the United Nations' 17 Sustainable Development Goals (2025), Global ESG rating frameworks and other UNDP indicators. The next step was to merge the ideals of the Rama Raajya within this model for which the ideals of *Rta & Dharma* (Cosmic order & balance), *Nyaaya* (justice), *Dayaa* (compassion & welfare), *Samataa* (equilibrium), *Ahiṃsa* (non-violence), were mapped to modern ESG categories. Of the three ESG pillars, 4 sub-parameters have been considered for pillar, making it a total of 12 parameters to develop the ESG scoring matrix *(See Appendix for detailed tables on the social Sustainability model, the list of sub-parameters and the weights used for each parameter)*.

Shri Rama Raajya ESG Matrix (Rama Raajya Benchmark = 10)

ESG Pillar	Rāma-Rajya Benchmark	India's Score (2025)	Global Score (2025)
Environmental (E)	**10**	**3.88**	**2.88**
Social (S)	**10**	**4.25**	**4.50**
Governance (G)	**10**	**4.88**	**4.12**

The above scoring matrix concludes that overall, present-day systems hover at 40–45% of that ideal—adequate in institutions but deficient in inner virtue and moral accountability. Within the ESG framework, the greatest gaps are observed in the in the environmental pillar where both India and the world trail the Rama Raajya benchmark by 60-70%, whereas on the social and governance benchmarks the scores are 50-60% off the Rama Raajya benchmark. It is pertinent to note that as the world's largest functioning democracy, India scores better, close to the score of 5 on the governance pillar, with a better rule of law and freedom of speech, though corruption, and administrative delays widen the gap.

9. Conclusion

The Srimad Valmiki Ramayana presents a comprehensive social sustainability ecosystem, encompassing all the ideals that the current world India should aspire to. This paper shows that the environmental, social and governance vision of the Epic firmly grounded in Dharma, provides a coherent framework for social well-being built on truth, restraint, compassion, justice, and responsible and ethical leadership. To conclude, the ESG comparison highlights how modern India and the world significantly trail the Rama Raajya benchmark, particularly in social cohesion, ethical governance, and environmental balance. A practical solution would be to integrate Dharmic principles with contemporary policy — Strengthening community ethics, ensuring fair, non-corrupt institutions, promoting cooperative governance and embedding responsibility in consumption and public life. Such an approach would result in a sustainable, culturally rooted model for enduring social stability.

10. References

1. Srimad Valmiki Ramayana, translated and presented by Sri Desiraju Hanumanta Rao (Bala, Aranya and Kishkindha kanda), and by Sri K.M.K. Murthy (Ayodhya and Yuddha kanda) with contributions from Durga Naaga Devi and Vaasudeva Kishore (Sundara kanda) retrieved from http://www.valmikiramayan.net/.
2. https://www.valmiki.eetk.ac.in/
3. Srimad Valmiki Ramayana, Hindi Edition, Gita Press, Gorakhpur (2019)
4. Valmiki Ramayana, (Dharmalaya Edition of Ramayana Publishing House)
5. Shri Govindaraja's Bhooshana commentary on the Valmiki Ramayana (https://archive.org/details/valmiki-ramayana-with-govindarajas-commentary-sanskrit/)
6. UN Sustainable Development Goals – Official Portal (https://sdgs.un.org/goals)
7. UN SDG Index (https://sdgindex.org)

11. Appendix

Table 1 *ESG-based Social Sustainability Model*

Pillar / Parameter	Rama Raajya (benchmark)	Modern India (2025)	Global Average (2025)	Deviation / Observations
ENVIRONMENTAL (E)	**10**	**3.8 / 10**	**2.9 / 10**	*Rama Raajya*: Timely rains, pure air, abundant forests. → Modern India: mixed progress—renewables ↑ but pollution & deforestation persist. Global: severe climate imbalance.
Climate Stability	10	3	2	Seasonal regularity in Shri Rama's era vs. erratic monsoon / global warming. 13 gaps under SDG framework.
Air & Water Quality	10	4	3	Sarayu-like purity vs. pollution index > 70 AQI. Six gaps foud under SDG framework.
Biodiversity Protection	10	4	3	"No beasts harmed each other" (Yuddha 6.128.96) vs. modern species decline.
Resource Circularity	10	4	3	*Mādhukara-vṛtti* (non-exploitative use) vs. over-consumption economy.
SOCIAL (S)	**10**	**4.1 / 10**	**4.4 / 10**	*Rama Raajya*: No poverty / crime / widowhood; equality & virtue universal. Modern societies show partial progress but suffer inequality, alienation, and crime.
Poverty & Hunger	10	5	5	"Bereft of hunger or thirst" (*Yuddha 6.128.93*) vs. 9 % global undernourishment.
Health & Education	10	5	6	Disease-free longevity vs. mixed health indices; SDG 3 partially met.
Gender Equality & Inclusion	10	3.5	4	Women honoured versus persistent gender gaps in modern world.
Social Cohesion & Safety	10	3.5	3	"No thief, no liar" vs. urban crime & social fragmentation.
GOVERNANCE (G)	**10**	**4.9 / 10**	**4.0 / 10**	*Rama Raajya*: Truth-based rāja-dharma; incorruptible ministers; consultative rule. Modern systems strong institutionally but weak ethically.*
Rule of Law & Justice	10	5	5	Nyāya-based fairness vs. delayed justice / global inequity.
Corruption & Integrity	10	4	3	"Na kaścid anāryaḥ" vs. Transparency International Corruption Perceptions Index (CPI) avg of 43 / 100.
Participation & Voice	10	5	4	Shri Rama's civic counsel vs. electoral fatigue / policy alienation.
Alliances & Cooperation	10	6	4	Alliances with Sugrīva & Vibhishaṇa vs. fragmented global coordination.

EE. Structure of the ESG Model

- Each ESG pillar contains 4 sub-parameters, making 12 parameters total.
- Equal weight for each pillar
- Each sub-parameter = 25% of its pillar
- Equal weight across pillars
- Environmental = 1/3
- Social = 1/3
- Governance = 1/3

EEI. List of Parameters

A. Environmental Pillar (E)

1. Climate Stability
2. Air & Water Quality
3. Biodiversity Protection
4. Resource Use & Circularity

B. Social Pillar (S)

5. Poverty & Hunger
6. Health & Education
7. Gender Equality & Inclusion
8. Social Cohesion & Safety

C. Governance Pillar (G)

9. Rule of Law & Justice
10. Corruption & Integrity
11. Participation & Voice
12. Partnerships & Cooperation

हनुमान जी के आकाशगमन का वैज्ञानिक विश्लेषण

प्रशान्त

वैदिक गुरुकुल योग साधना एवं शोध संस्थान

(Aryaprashant@Hotmail.Com)

वाल्मीकि रामायण भगवान् राम के काल के विषय में जानने का एकमात्र प्रामाणिक ऐतिहासिक स्रोत है । यद्यपि वाल्मीकि रामायण साहित्य, इतिहास व नैतिकता का ग्रन्थ है किन्तु हनुमान जी आकाशगमन के प्रसंग में एक वैज्ञानिक वर्णन प्राप्त होता है । वाल्मीकि रामायण में हनुमान जी के उड़ने के दो प्रकार के वर्णन मिलते हैं। एक उनको वानर अवतार मानकर, दूसरा उनको योग सिद्धि या वायुयान सम्बन्धी तकनीकी ज्ञान युक्त मानकर। इन दो प्रकार के वर्णन का कारण वाल्मीकि रामायण की प्राचीनता ही है। सहस्रों वर्षों के दीर्घ काल में व्याख्याताओं के श्लोक मूल श्लोकों के साथ प्रक्षिप्त हो गए जिससे अतिश्योक्ति, पुनरावर्तन व अवतारवाद के श्लोकों की प्रधानता हो गई और मूल शुद्ध श्लोक प्रायः उपेक्षित हो गए । इस प्रकार के शुद्ध १४ श्लोकों का एक प्रकरण **वाल्मीकि रामायण के सुंदरकांड के सर्ग १ के श्लोक संख्या ५६ से लेकर ६९ तक** (गीता प्रेस संस्करण) उपलब्ध होता है, जिसमें हनुमान जी के उड़ने का विशेष वर्णन उपलब्ध होता है। यह वर्णन इतना वैज्ञानिक है, जिसकी आज के वायुयान से तुलना की जा सकती है। इस वर्णन से उस काल के तकनीकी विकास का भी अनुमान होता है । इन श्लोकों में दी गई उपमाएं भी विज्ञान के अनेक सिद्धांतों को प्रगट करती हैं । प्रत्येक श्लोक में कुछ नया मिलता है जिसे जोड़ने से एक पूरा चित्र सम्मुख आता है ।

अब इन श्लोकों का क्रमशः वैज्ञानिक विश्लेषण **(Scientific Interpretation)** करते हैं । प्रत्येक श्लोक का चार भागों में विश्लेषण किया गया हैं

1. मूल श्लोक व अर्थ (संक्षिप्त रूप में)
2. क्रिया/ विशेषण
3. उपमा / रूपक (Metaphor)
4. वैज्ञानिक व्याख्या (Scientific Explanation)

श्लोक १ तस्याम्बरगतौ बाहू ददृशाते प्रसारितौ । पर्वताग्राद् विनिष्क्रान्तौ पञ्चास्याविव पन्नगौ ॥५६॥

अर्थ: आकाशमें फैलायी गयी उनकी दोनों भुजाएँ ऐसी दिखायी देती थीं, मानो किसी पर्वतके शिखरसे पाँच फनवाले दो सर्प निकले हुए हों ॥ ५६ ॥

क्रिया: दोनों भुजाओं को फैलाना

उपमा: दोनों भुजाएँ पाँच-फन वाले सर्पों के समान फैलीं।

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***बाहू ददृशाते प्रसारितौ*** (हाथों को फैलाना) हनुमान जी की भुजाओं का विस्तार "एयरोडायनामिक विंग-स्ट्रक्चर" जैसा है। यह संकेत देता है कि उड़ान संतुलन के लिए दोनों ओर समान बल-वितरण हुआ — जैसे किसी आधुनिक जेट या ग्लाइडर के विंग्स।

२. ***पञ्चास्याविव पन्नगौ (***पांच फन वाले दो सर्प) : उनकी दोनों भुजाएं ऐसे दिखाई देती थीं जैसे पर्वत के शिखर पर दोनों भुजाओं के नीचे से पांच-पांच फन वाले दो सांप निकल आए अथवा भुजाएं ऐसे दिख रही है जैसे पांच-पांच फन वाले सर्प हैं उनकी भुजाओं में। यदि आप आधुनिक काल के जेट सूट्स देखेंगे, या हवाई जहाज को भी आप ऊपर से देखेंगे, तो उनके जो प्रोपेलर्स हैं, उनकी जो पंखड़ियों के नीचे लगे हुए हैं,वे दोनों ओर पांच पांच थे , जो ऊपर से सांप के फनों के सामान दिख रहे थे ।

३. ***पर्वताग्राद् विनिष्क्रान्तौ (***हाथों के नीचे से बाहर आना) : जो वह सांप निकले हैं बाहर, आप इसको ऐसे देखिए, पहले वह अंदर थे और फिर वह बाहर आए हैं। माने कोई चीज़ थी जो पहले बंद थी, वह खुल रही है वहां से। अनफोल्ड हो रही है । इसकी तुलना आजकल हवा में उड़ने वाले सुपर हीरोज जैसे सुपरमैन, आयरन मैन इत्यादि से भी की जा सकती है ।

श्लोक २ पिबन्निव बभौ चापि सोर्मिजालं महार्णवम् । पिपासुरिव चाकाशं ददृशे स महाकपिः ॥ ५७ ॥

अर्थ: उस समय महाकपि हनुमान् ऐसे प्रतीत होते थे, मानो तरङ्गमालाओं सहित महासागरको पी रहे हों। वे ऐसे दिखायी देते थे, मानो आकाशको भी पी जाना चाहते हों ॥५७॥

उपमा: ऐसा प्रतीत हुआ जैसे समुद्र की लहरें वह पी रहे हो। और मानो आकाश को भी पी जाना चाहते हों

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***पिबन्निव बभौ सोर्मिजालं (***समुद्र की लहरों को पीना) : महासागर की तरंगे अर्थात् वेव्स ही लहरें हैं । हनुमान जी उड़ते हुए समुद्र के ऊपर से जा रहे थे, तो ऐसा लग रहा था कि जैसे वे समुद्र को पी रहे हैं। जब भी कोई चीज़ समुद्र के ऊपर से बहुत तेज गति से गुजरती है, तो वहां पर एक 'वी' जैसा आकार बन जाता है । तो पीछे से समुद्र के पानी के ऊपर भी उसका दबाव काम करता है। आगे से छोटा सा है, पीछे से चौड़ा है, तो इससे लग रहा है कि हनुमान जी आ गए और वह पीछे से समुद्र को पी रहे हैं जैसे। तो माने, यह जो है, जो उसकी जो वेव्स थी, उसकी आकृति समुद्र में V जैसी लग रही है जिससे दूर से देखने में ऐसा लगता है, एक व्यक्ति उस सारे को पी रहा है। वह इतनी तीव्र गति से उड़ रहे थे कि जल के ऊपर भी इस प्रकार की एक आकृति बनी हुई है। इस बात की कल्पना कौन कर सकता है जिसने यह बात प्रत्यक्ष देखी है। क्योंकि अभी भी आप प्रत्यक्ष अथवा टीवी आदि में ऐसा देख सकते हैं कि यह ऐसी आकृति बन जाती है पानी के भीतर, कि जिससे ऐसा लगता है कि वो पी रहे हैं। वायु-दाब (air pressure) के पीछे की दिशा में उत्पन्न होने से लहरों का पीछे हटना दर्शाता है ।

२. ***पिपासुरिव चाकाशं*** (आकाश को पीना) – जब नीचे से ऊपर देखते हैं तो आकाश को पीते हुए दिखाई देते हैं । विभिन्न आयामों से हनुमान जी को दिखाया जा रहा है । यह वर्णन Jet Thrust द्वारा उत्पन्न Vacuum Effect, जैसा आधुनिक रॉकेट लॉन्च के समय होता है, को दर्शाता है ।

श्लोक ३ तस्य विद्युत्प्रभाकारे वायुमार्गानुसारिणः । नयने विप्रकाशेते पर्वतस्थाविवानलौ॥ ५८ ॥

अर्थ: वायुके मार्गका अनुसरण करनेवाले हनुमान जी के बिजली की-सी चमक पैदा करनेवाले दोनों नेत्र ऐसे प्रकाशित हो रहे थे, मानो पर्वत पर दो स्थानों में लगे हुए दावानल दहक रहे हों ॥ ५८ ॥

क्रिया : वायु मार्ग का अनुसरण**,** नेत्र विद्युत प्रकाश वाले थे।

उपमा: मानो पर्वत पर दूर से दो स्थानों पर अग्नि जलती हुई दिख रही है

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***वायु मार्गानुसारिणो***, वायु की जो गति थी उसके साथ में बह रहे हैं वो। उसको पता है वायु की गति कौन सी है। वायु की गति का भी ध्यान रखा जाता है हवाई जहाज की गति के साथ में। जो भी गतियां होती हैं उसके साथ में बहने से उसकी गति तीव्र हो जाती है। यदि उसे विपरीत गति में बहेंगे, तो उसकी गति धीमी हो जाती है। तो वहां पर स्पष्ट रूप से बताया कि विंड की जो डायरेक्शन है, वायु की जो दिशा है, उसका भी वह बेनिफिट ले रहे थे, लाभ ले रहे थे हनुमान जी। जिससे उनकी गति और तीव्र हो रही थी ।

२. ***विद्युतप्रभाकारे*** विद्युत की प्रभा है किसमें है? **नयने विप्रकाषेते**, उनकी जो आंखें हैं। किनकी आंखें? जो आंखें हैं हनुमान जी की, वह ऐसे चमक रही है जैसे विद्युत की प्रभा । अब विद्युत प्रभा कैसे होती है? विद्युत को अपने साहित्य के अंदर केवल जो आकाश वाली बिजली ही समझा जाता था । अभी तक लोग ऐसे ही समझते हैं प्रायः, परंतु विद्युत प्रभा अर्थात् विद्युत का प्रकाश । इलेक्ट्रिसिटी के माध्यम से जो प्रकाश, जो लाइट प्रोड्यूस होती है, उसके लिए शब्द दे दिया विद्युत प्रभाकार। माने ऐसी लाइट है कि जो इलेक्ट्रिसिटी से जनरेट हुई है और आंखें उससे चमक रही हैं। श्लोक में यहाँ तक कोई उपमा नहीं दी अर्थात् यह तो प्रत्यक्ष ही है । यहां विद्युत-प्रभा (electric luminosity) का वर्णन है। इससे Plasma Discharge या Ionization का संकेत मिलता है ,तेज़ गति से उड़ते पिंड के चारों ओर इलेक्ट्रॉनिक ऊर्जा क्षेत्र बनता है।

३. ***पर्वतस्थो इव अनलौ*** ऐसे चमक रही हैं जैसे पर्वत के ऊपर दो आग लगी हुई है। इसके बाद उपमा दी आँखों के प्रकाश की उस प्रकाश की शक्ति कितनी अधिक है । एक पर्वत विशाल चीज़ है, उसके ऊपर दो स्थानों आग लगी हुई है, जैसे अग्नि लग जाती है जंगल के अंदर पर्वतों में, तो दो आग ऐसी लपटें सी निकल रही हैं। तो इस प्रकार से आलंकारिक वर्णन किया। इससे भी यह सिद्ध होता है, कि वहां पर लाइट थी, और वह लाइट का फ्लैश निकला हुआ था। जैसे हवाई जहाज की भी लाइट, यह ऐसी कोई चीज़ है, जिससे प्रकाश बाहर निकल रहा था। और लाइट ऑन करके ही वह लैंड करता है। इनको लैंडिंग लाइट्स बोलते हैं हवाई जहाज की, एरोप्लेन में लैंडिंग लाइट्स हैं वो। जब वह उड़े हैं, तो उनके अंदर वह लाइटें जल रही हैं और वह प्रकाशित हो रही हैं। और वह लाइट कैसी दिख रही है? अगले श्लोक में बताया:

श्लोक ४ पिङ्गे पिङ्गाक्षमुख्यस्य बृहती परिमण्डले । चक्षुषी सम्प्रकाशेते चन्द्रसूर्याविव स्थितौ ॥ ५९ ॥

अर्थ:पिंगल नेत्रवाले वानरोंमें श्रेष्ठ हनुमान्जीकी दोनों गोल बड़ी-बड़ी और पीले रंगकी आँखें चन्द्रमा और सूर्यके समान प्रकाशित हो रही थीं ॥ ५९ ॥

क्रिया / विशेषण: नेत्र पीले रंग के , चारों और एक बड़ा घेरा

उपमा: नेत्र चंद्र और सूर्य के समान

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***पिंगल- पिंगाक्ष*** पीले-पीले रंग की है, पीले-पीले रंग की लाइट है। ऐसे उसके नेत्र हैं, पीले रंग के नेत्र हैं। तो इस पीले रंग के नेत्रों को बताने का यहां प्रयोजन क्या है? वह लाइट, लाइट इस प्रकार की, और कैसी है दो लाइटें? दोनों नेत्र प्रकाश स्रोत की तरह कार्य कर रहे थे — यह उच्च ऊर्जा (bioluminescent or energetic field) का द्योतक है,
जो नाइट-फ्लाइट की स्थिति में "twin optical emission" जैसा प्रभाव देता है।

२. ***बृहति परिमंडले***, इसके सामने से इस प्रकाश के कारण से एक परिमंडल जैसा बन गया है। एक बड़े परिमंडल के अंदर जो कोई चीज़ चल रही है, परिमंडल मतलब एक बड़ा घेरा दिख रहा है। कभी-कभी आपने चंद्रमा के चारों ओर, सूर्य के चारों ओर से एक घेरा देखा होगा, इसको प्रभामंडल या halo कहते हैं । तो ऐसा ही एक गोल घेरा भी उसका दिखाई दे रहा है, प्रकाशमान घेरा, जब वह चल रहे हैं । इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वह संध्या काल में उड़ रहे थे, और आकाश में एक घेरा भी बनाया हुआ था उन्होंने प्रकाश का।

३. ***चक्षुषी संप्रकाशेते चंद्रसूर्याविवस्थितौ ,*** चंद्रमा और सूर्य के समान गोल-गोल दिख रही है वह प्रकाशमान आँखें । जैसे चंद्रमा और सूर्य की आकृति प्रायः एक समान, एक जितनी बड़ी दिखती है हमारे को। इतनी दूरी है दोनों की, यद्यपि चंद्रमा छोटा है, परंतु निकट आने से वह बड़ा दिखता है, और सूर्य दूर है, तो दोनों की आकृति भूमि से देखते हैं तो लगभग एक जितनी सी ही दिखाई देती है।

श्लोक ५ मुखं नासिकया तस्य ताम्रया ताम्रमाबभौ । संध्यया समभिस्पृष्टं यथा स्यात् सूर्यमण्डलम् ॥ ६० ॥

अर्थ: लाल-लाल नासिकाके कारण उनका सारा मुँह लाली लिये हुए था, अतः वह संध्याकालसे संयुक्त सूर्यमण्डलके समान सुशोभित होता था ॥ ६० ॥

क्रिया / विशेषण: नासिका का वर्ण ताम्र होने के कारण सारा मुख ताम्र वर्ण का दीखता है

उपमा: वह मुख ऐसा लगता था जैसे संध्याकाल में सूर्यमण्डल सुशोभित होता है

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***तस्य ताम्रया***, रंग कैसा था उसका? ताम्रं आबभौ, कि ताम्र रंग था। ताम्र रंग का व्याख्याकार अर्थ लाल रंग कर देते हैं, पर ताम्र रंग तो होता है ताम्बे का, कॉपर जैसा, तपा हुआ सा रंग है वह। यह "थर्मल रेडिएशन" का परिणाम है — अत्यधिक वेग से घर्षण होने पर वायु में ऊष्मा उत्पन्न होती है, जिससे शरीर लाल-ताम्र दीप्त हो उठता है (जैसे रॉकेट या उल्का की सतह)।

२. ***ताम्रमाबभौ,*** पूरे मुख का रंग भी एक अलग प्रकार का रंग है, किसी मशीन के गर्म होने पर भी ऐसा रंग होता है, तो ऐसे रंग का वहां पर महर्षि वाल्मीकि जी ने विशेष वर्णन किया है।

३. ***यथा स्यात् सूर्यमण्डलम्*** संध्या काल का सूर्यमण्डल - उसकी तुलना कर दी सूर्यमंडल से कि जैसे सूर्य का मंडल चारों तरफ दिखता है, जैसे पिछले श्लोक में भी कहा था, इस श्लोक में स्पष्ट हो गई कि सूर्य के चारों तरफ एक प्रकाश का घेरा halo दिखाई देता है, उसी प्रकार का घेरा इनके भी, हनुमान जी के चारों तरफ दिख रहा है।

श्लोक ६ लाङ्गूलं च समाविद्धं प्लवमानस्य शोभते । अम्बरे वायुपुत्रस्य शक्रध्वज इवोच्छ्रितम् ॥ ६१ ॥

अर्थ: आकाशमें तैरते हुए पवनपुत्र हनुमान्की उठी हुई टेढ़ी पूँछ इन्द्रकी ऊँची ध्वजाके समान जान पड़ती थी ॥ ६१ ॥

क्रिया / विशेषण: वायु में तैरते हनुमान जी का लाँगूल सुंदर लग रहा था

उपमा: लाँगूल पुच्छ इंद्र के ध्वज की तरह ऊँची उठी।

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***प्लवमानस्य शोभते,*** (वायु में तैरना) उड़ते हुए शोभा दे रही थी**,** कह सकते हैं कि जैसे तैर रहे थे , उससे उड़ना शोभायमान या व्यवस्थित हो रहा था **,** अर्थात यहाँ पर उनकी उड़ान stable हो गई है और उनको aerodynamics का भी विशेष ज्ञान था ।

२. ***लांगूलं ,*** लांगूल का सभी प्रायः पूंछ अर्थ कर देते हैं । अभी हनुमान जी की पूंछ अथवा उस वायुयान की भी पूंछ जिसमें भी वह थे या जो भी उनके पास में यंत्र था । अभी भी यदि कोई कहे कि हवाई जहाज की पूंछ, अंग्रेजी में tail, तो वह टेल हर एक हवाई जहाज के पीछे कुछ उभरी हुई सी चीज़ होती है। उस टेल का मुख्य रूप दो कार्य होते हैं कि हवाई जहाज को स्टेबल करना, हिलने न देना, और उसको डायरेक्शन देना, दिशाएं बदलने के लिए भी वह टेल काम आती है। तो इस टेल के लिए उन्होंने बोला हनुमान जी की टेल के लिए वहां लांगूलं शब्द कहा, पुच्छ शब्द नहीं कहा ।

३. ***अम्बरे वायुपुत्रस्य शक्रध्वज इवोच्छ्रितम्*** - वह ऐसी उठी हुई पीछे से दिख रही थी जैसे इंद्र का ध्वज। इंद्र, शक्र माने इंद्र का ध्वज, ध्वज जैसा। हवाई जहाज की आज भी आप टेल देखना, वह ध्वज जैसी ही दिखती है। तो वह निश्चित रूप से उनको पता था कि ये पीछे पूंछ उठी हुई है वह । वह जो कोई चीज़ थी,वह इस प्रकार से उठी हुई थी कि वह वायु में को दिशा दे रही थी। उनको आगे बढ़ने में दिशा देने का कार्य कर रही थी। यह Tail Fin या Stabilizer की भाँति कार्य करता है उड़ान की दिशा और संतुलन को स्थिर रखता है। वायु प्रवाह में "पिछला स्थिरीकरण" (aft stabilization) आवश्यक होता है।

श्लोक ७ लाङ्गूलचक्रो हनुमान् शुक्लदंष्ट्रोऽनिलात्मजः। व्यरोचत महाप्राज्ञः परिवेषीव भास्करः ॥ ६२ ॥

अर्थ: महाबुद्धिमान् पवनपुत्र हनुमान्जीकी दाढ़ें सफेद थीं और पूँछ गोलाकार मुड़ी हुई थी। इसलिये वे परिधिसे घिरे हुए सूर्यमण्डलके समान जान पड़ते थे॥

क्रिया / विशेषण: घूमी हुई पूँछ, सफेद दाढ़ें

उपमा: आकाश में उड़ते हुए परिधिसे घिरे हुए सूर्य के समान जान पड़ते थे॥

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***लाङ्गूलचक्रः*** हनुमान जी की पूँछ वह केवल यूं सीधी उठी हुई नहीं थी, वह गोलाकार घूमकर के उठी हुई थी। गोलाकार घूमी हुई थी। आप कोई चित्र देखना हनुमान जी का, कुछ चित्रकारों ने बनाया है कि उस पूंछ के अंदर से सूर्य दिखाते हैं कहीं-कहीं। तो वह जो चित्र है, कुछ उस प्रकार का है कि वह जो पुच्छ भाग है, वह ऐसे गोलाकार भी है। वह केवल ऐसे सीधा नहीं है। कुछ नए हेलीकॉप्टर्स हैं, उनके अंदर पिछला हिस्सा ऐसे गोलाकार है पुच्छ भाग, उसके अंदर ही एक रोटर फैन लगा हुआ है कि जो उसको दिशा देता है जिससे इसकी तुलना की जा सकती है। वह गोल थी तो ऐसे गोलाई के कारण उसकी तुलना वहां सूर्य से भी कर दी।

२. ***शुक्लदंष्ट्रौ***, शुक्लदंष्ट्रौ माने सफेद रंग की उनकी दाढ़ें दिखाई दे रही है। जो बड़े वाले जो कैनाइन टीथ होते हैं बड़े वाले दांत , वह भी सफेद रंग के दिखाई देते हैं। अर्थात् उड़ते हुए कि सफेद चीज़ें भी कुछ बाहर दिखाई दे रही है निकली हुई। जैसे आप हवाई जहाज को अभी देखते हैं, तो आपको कई चीज़ें दिखती हैं हवाई जहाज में बाहर से। वह कोई और महत्त्वपूर्ण भाग है उस वायुयान से, उस यंत्र से संबंधित कि जो बाहर से दिखाई देती है। तो वहां पर हनुमान जी के यान में या यान स्वयं हनुमान जी हैं, उसके बाहर ये दो चीज़ें और दिख रही हैं, जो उनके लैंडिंग के लिए, ऊपर उठने के लिए या किसी प्रकार से उस वेग में सहायक है जैसे कि landing gears .

३. ***परिवेषीव भास्करः***, परिधिसे घिरे हुए सूर्य के समान - Plasma Sheath Formation —तेज़ घर्षण और ऊर्जा के कारण शरीर के चारों ओर आयनकृत प्रकाश मंडल बन गया (Combustion Glow)। यह वर्णन विशेष है तीन बार अब तक आया है ।

श्लोक ८ स्फिग्देशेनाताम्रेण रराज स महाकपिः । महता दारितेनेव गिरिर्गैरिकधातुना ॥ ६३॥

अर्थ : उनकी कमरके नीचेका भाग बहुत लाल था । इससे वे महाकपि हनुमान् फटे हुए गेरूसे युक्त विशाल पर्वतके समान शोभा पाते थे ॥ ६३ ॥

क्रिया / विशेषण: उनकी कमरके नीचेका भाग बहुत लाल था

उपमा: फटे हुए गेरूसे युक्त विशाल पर्वतके समान

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***अतिताम्र*** पिछले हिस्से के बारे में कहते हैं कि निचला जो हिस्सा है ना, वह बिल्कुल लाल है, लाल ताम्र वर्ण का है। ताम्र रंग चारों तरफ था ना उनके, पहले ताम्र वर्ण था। अब यहां पर भी यही कह रहे हैं कि जो निचला हिस्सा है वह भी ताम्र वर्ण का दिख रहा है उनका, तपा हुआ। यह High-Altitude Flight का संकेत है, जहाँ दृश्य स्पेक्ट्रम नीला-श्याम हो जाता है (Rayleigh Scattering Effect)।

२. ***महता दारितेनेव गिरिर्गैरिकधातुना*** (पर्वत के ऊपर गेरू) पीछे की ओर से फैलाव है गेरू रंग का निचले हिस्से का । उपमा दी गई और कैसे दिख रहे हैं, इससे वे हनुमान जी? एक पर्वत के ऊपर गेरू डाल दिया हो। गेरू का रंग भी कुछ-कुछ केसरिया, नारंगी जैसा होता है, और ताम्र वर्ण जैसा, एक पर्वत के ऊपर गेरू डाल दिया और वह ऐसे फैल गया हो। ऐसा रॉकेट आदि में होता है वह इसी प्रकार से, वह नीचे से फैला हुआ है । उसके अंदर ईंधन क्या है, उसकी वस्तुतः विधि क्या है उड़ने की इसकी सूचना नहीं मिलती ? साहित्यकार, इतिहासकार है वाल्मीकि जी, वैज्ञानिक नहीं है यहाँ पर । वह इतिहास का वर्णन करेंगे । जैसे अभी भी कोई वर्णन करेगा ना वायुयान का, साहित्य के अंदर, वह ये नहीं बताएगा कि इंजन कैसे स्टार्ट होगा। बोले, हवाई जहाज ऊपर उठा, उठते हुए ये दृश्य दिखे, ये दिखे। इसी प्रकार से उसका कितना विशेष वर्णन कर रहे हैं उड़ने का हनुमान जी का। एक-एक चीज़ को अच्छे से बता रहे हैं, तो नीचे से ऐसा दिखाई दिया होगा । जब हम रॉकेट की लांचिंग देखते हैं,जब वो रॉकेट हवा में काफी ऊपर उठ जाता है, तो उसका पिछला हिस्सा ही प्रकाशित दिखता है और कुछ दिखता ही नहीं है। इसी प्रकार वह ऐसा ही फैला हुआ गैरिक रंग दिख रहा है।

श्लोक ९ तस्य वानरसिंहस्य प्लवमानस्य सागरम् । कक्षान्तरगतो वायुर्जीमूत इव गर्जति ॥६४॥

अर्थ: ऊपर-ऊपरसे समुद्रको पार करते हुए वानरसिंह हनुमान्‌की काँखसे होकर निकली हुई वायु बादल के समान गरजती थी॥६४॥

क्रिया / विशेषण: समुद्र के उपर तैरते हुए उड़ना, बगल से वायु का निकलना

उपमा: बादल के गर्जन के जैसी वायु की ध्वनि

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***प्लवमानस्य सागरम्*** तो कहते हैं कि वह जो वानर सिंह थे, और वह आकाश में तैरते हुए जा रहे थे, प्लव करते हुए, उड़ते हुए जा रहे थे, श्लोक ६ में भी इसी शब्द का प्रयोग है किन्तु कैसे जा रहे थे? यह Sonic Boom का संकेत है — जब कोई वस्तु ध्वनि की गति (Mach 1) से तेज़ चलती है, तो Shockwave उत्पन्न होती है, जिससे "गर्जन" जैसी ध्वनि सुनाई देती है।

२. **कक्ष अन्तर्गतो वायु**: उनके कक्ष से अर्थात् बगल से, जो जो नीचे से वायु निकल रही थी,

३. **जीमूत इव गर्जति,** वह वायु, जैसे बादल गरजते हैं, ऐसी गरज रही थी। यह तो विशेष बात है । वह हवा बादलों जैसी कैसे गरजेगी ? इसके पीछे एक वैज्ञानिक सिद्धांत है। जब भी कोई चीज़ ध्वनि की गति से अधिक तीव्र गति से उड़ती है, तो वह वायु पर एक धक्का लगाती है, थ्रस्ट करती है उसको, प्रेस करती है बहुत जोर से। लगभग यह गति १२३६ किलोमीटर प्रति घंटा होती है। इस गति से अधिक गति से सोनिक बूम बोलते हैं इसको, तो वह बूम की ध्वनि आती है, गड़गड़ाने की। जैसे आपने कभी-कभी फाइटर जेट्स देखे होंगे, तो वह जो चलते हैं तो ऐसा लगता है जैसे बादल गरज रहे हैं। तो हनुमान जी की गति इससे भी तीव्र थी, और बादलों के गर्जन जैसी ध्वनि आ रही थी। यह ध्वनी भूमि पर चलने वाले किसी रथ से कभी नहीं आ सकती । यह आवाज़ तो साउंड बैरियर को क्रॉस करने के बाद ही आएगी। उससे पहले यह ध्वनी आ ही नहीं सकती। तो जिसने वो चीज़ देखी वही बताएगा। अर्थात यहां पर एक विज्ञान का इतना बड़ा सिद्धांत उनको पता है, यह पता चल रहा है। यदि वह कल्पना भी करेगा तो भी इस विज्ञान के सिद्धांत की तो स्थापना हो चुकी है वहां पर । अर्थात् वाल्मीकि जी को वायु में होने वाले सोनिक बूम का ज्ञान था और वहां पर निश्चित रूप से ऐसी वस्तुएं थीं कि जो साउंड बैरियर को क्रॉस करती थीं, इतनी तेजी से चलती थीं।

श्लोक १० खे यथा निपतत्युल्का उत्तरान्ताद् विनि:सृता ।दृश्यते सानुबन्धा च तथा स कपिकुञ्जरः ॥ ६५ ॥

अर्थ: जैसे ऊपरकी दिशासे प्रकट हुई पुच्छयुक्त उल्का आकाशमें जाती देखी जाती है, उसी प्रकार अपनी पूँछके कारण कपिश्रेष्ठ हनुमान जी भी दिखायी देते थे ॥ ६५ ॥

क्रिया / विशेषण: हनुमान जी का सानुबंध

उपमा: जैसे आकाश से उल्का गिरती है, एसे ही हनुमान जी सानुबंध के साथ दीखते हैं

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***खे यथा निपत्यत्युल्का,*** **खे** आकाश में जो उल्काएं, उल्कापिंड , मेट्योर्स गिरते हैं, तो क्या दिखता है? एक पीछे पूंछ सी दिखती है, आगे का हिस्सा दिखता ही नहीं है। और आपने यदि कोई वायुयान या रॉकेट देखा हो, उसका चित्र देखा हो, जब वह काफी ऊपर उठ जाता है तो ऐसा ही दिखता है। और थोड़ी देर में गायब हो जाता है।तो कहते हैं, इस प्रकार से जैसे उल्का आकाश में जा रही है, उसी प्रकार

२. ***दृश्यते सानुबन्धा च,*** हनुमान जी की जो सानुबन्ध, कोई चीज़ बंधी हुई है पीछे से जो चमकती हुई जा रही है। सानुबंध शब्द से स्पष्ट है कोई वस्तु जो हनुमान जी के शरीर का अंग नहीं है किन्तु उनसे बंधी हुई है । एक हनुमान जी के पीछे कोई प्रकाश की रेखा सी उल्कापिंड के समान बंधी हुई चल रही है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि वह वास्तव में उड़ रहे हैं और तीव्र गति से उड़ रहे हैं । दूर से भी देखने का वर्णन उन्होंने किया। इस telescopic view में यह Atmospheric Re-entry का चित्रण है। हनुमान जी के शरीर या जो भी यान था, के चारों ओर Plasma Envelope बना जिससे वे एक तेज़ रोशनी वाली वस्तु (Meteoric Glow) जैसे दिखे।

श्लोक ११ पतत्पतङ्गसंकाशो व्यायतः शुशुभे कपिः । प्रवृद्ध इव मातङ्गः कक्ष्यया बध्यमानया ॥ ६६॥

अर्थ: चलते हुए सूर्यके समान विशालकाय हनुमान् जी अपनी पूँछ के कारण ऐसी शोभा पा रहे थे, मानो कोई बड़ा गजराज अपनी कमर में बँधी हुई रस्सीसे सुशोभित हो रहा हो॥६६॥

उपमा: चलते हुए सूर्य के सामान विशाल हनुमान जी , जैसे हाथी के कमर में बंधी हुई सुशोभित रस्सी

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***पतत्पतङ्गसंकाशो व्यायतः,*** और कहते हैं कि हनुमान जी कैसे दिख रहे हैं, कैसी शोभा पा रहे हैं, कि जैसे, अब ऊपर तो वह बता दिया उन्होंने उल्का के समान।

२. ***मातङ्गः कक्ष्यया बध्यमानया*** ,पर उल्का तो दिखती नहीं, पीछे-पीछे दिखती है। बोले, नहीं, अगला श्लोक में और स्पष्ट कर दिया उस सानुबन्ध को। जैसे हाथी के कमर को कोई चीज़ बांध दे ना, ऐसा है। अगला जो हिस्सा है उनका वो काफी बड़ा है, पर वह दिख नहीं रहा है। मातंग हाथी को कहते हैं, हाथी से भी तुलना करके कहते हैं कि **कक्षया बद्धमानया**, कि उसकी कक्ष में, उसकी कमर के हिस्से के पीछे कोई ऐसी चमकदार चीज़ को बांध देते हैं, तो ऐसे वह चीज़ बंधी हुई जा रही है। इसको ऐसे भी कह सकते हैं जैसे वायुयान के पीछे धुएं की रेखा सी चलती जातीहै जैसे हाथी की पीठ से बंधी हुई कोई रस्सी झूलती या भूमि पर घिसटती हुई जा रही है ।

श्लोक १२ उपरिष्टाच्छरीरेण च्छायया चावगाढया । सागरे मारुताविष्टा नौरिवासीत् तदा कपिः ॥ ६७॥

अर्थ: हनुमान् जी का शरीर समुद्रसे ऊपर-ऊपर चल रहा था और उनकी परछाईं जलमें डूबी हुई-सी दिखायी देती थी। इस प्रकार शरीर और परछाईं दोनोंसे उपलक्षित हुए वे कपिवर हनुमान् समुद्रके जलमें पड़ी हुई उस नौकाके समान प्रतीत होते थे, जिसका ऊपरी भाग (पाल) वायुसे परिपूर्ण हो और निम्नभाग समुद्र जलसे लगा हुआ हो ॥ ६७ ॥

क्रिया / विशेषण: शरीर का समुद्र से ऊपर-ऊपर चलना,

उपमा: परछाई जल में डूबी हुई सी दिखाई देना , जैसे पाल में वायु भरी हुई नौका

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***शरीरेण,*** शरीर शब्द का प्रयोग किया। यहां पर जो ये शरीर बोला है, तो हनुमान जी उड़ रहे थे ये भी कह सकते थे, पर हनुमान जी जहां जा रहे थे ये नहीं बोला, उन्होंने कहा है कि तो शरीर जा रहा है ऊपर से, शरीर मतलब बॉडी है,

२. ***उपरिष्टाच्छरीरेण***, जो भी चीज़ उनके पास थी, उसकी बॉडी है, ऊपर वाला कवच है, जो भी कोई सूट धारण किया, क्या किया है, उसका हमें स्पष्टता से नहीं पता चलता, उसको हमें विचार करना ही पड़ेगा।

३. **च्छायया चावगाढया ,**तो कहते हैं, वह जब ऊपर से जा रहे थे, तो उसकी जो परछाई है जल में जहां-जहां से जा रही है, वहां-वहां से वह पानी भी अपनी जगह छोड़ रहा है। अर्थात वह जो प्रेशर से जा रहा था ना, तो वहां-वहां से वह लहरें भी अपना जगह छोड़ देती है। दूर से देखने से ऐसा लगता है कि हनुमान जी की परछाई की जगह बनी हुई है। परछाई की को भी जगह छोड़ दी। तो बोले, इसीलिए फिर बाद में कथा बनती है कि समुद्र ने रास्ता दे दिया। दबाव से वह रास्ता बनता हुआ दिख रहा है दूसरे व्यक्ति को। औरों के पास में यह तकनीकी उपलब्ध नहीं थी, परंतु जो पहली बार इस तकनीक को देखेगा तो वह यही कहेगा कि वह समुद्र ने भी स्थान छोड़ दिया, उसकी परछाई ने भी।

४. ***सागरे मारुताविष्टा नौरिवासीत्,*** उपमा दी गई कि वह ऊपर का भाग उनका ऐसा लग रहा है कि जैसे समुद्र में से कोई तीव्र गति से नौका जाती है, तो उसका अगला भाग ऊपर उठ जाता है, पिछला भाग टिका रहता है । तो ऐसे दिखाई दे रहा है कि हनुमान जी ऊपर से जा रहे हैं और पिछला भाग उनका टिका हुआ है और पीछे-पीछे समुद्र की तरंगें भी भाग रही हैं। इसको Surface Hovering और Steady Glide का उल्लेख भी समझ सकते हैं । हनुमान जी का उड़ान मार्ग बिल्कुल स्थिर और smooth था, जैसे जल पर तैरती नाव (Lift + Balance Control)

श्लोक १३ यं यं देशं समुद्रस्य जगाम स महाकपिः । स तु तस्याङ्गवेगेन सोन्माद इव लक्ष्यते ॥ ६८ ॥

अर्थ: वे समुद्रके जिस-जिस भागमें जाते थे, वहाँ वहाँ उनके अंगके वेगसे उत्ताल तरङ्गे उठने लगती थीं । अतः वह भाग उन्मत्त (विक्षुब्ध) सा दिखायी देता था॥६८॥

क्रिया / विशेषण: अंगों के वेग से समुद्र में तरंगों का उठाना,

उपमा: समुद्र की तरंग जैसे उन्मत्त (पागल) हो गई

वैज्ञानिक व्याख्या:

१. ***स तू तस्याङ्गवेगेन-*** यहाँ समुद्र के निकट उड़ने का वर्णन है

२. ***सोन्माद इव लक्ष्यते-*** जिस-जिस समुद्र के देश में, जगह पर वह जा रहे हैं, तो वह अपने अंगों के वेग से ऐसा लगता है, उन्मादित होकर के समुद्र को धकेल रहे हैं। इतनी तीव्र गति से वह चल रहे हैं। है Vortex Formation उड़ान के पीछे वायु-भंवर बने, जिससे समुद्र की सतह पर गोलाकार लहरें बनीं। यह Jet Stream या Pressure Vortex का संकेत है और अंतिम एक और श्लोक है, उपसंहार कर रहे हैं:

श्लोक १४ सागरस्योर्मिजालानामुरसा शैलवर्ष्मणाम् । अभिघ्नंस्तु महावेगः पुप्लुवे स महाकपिः ॥ ६९ ॥

अर्थ: महान् वेगशाली महाकपि हनुमान् पर्वतोंके समान ऊँची महासागरकी तरङ्गमालाओंको अपनी छाती से चूर-चूर करते हुए आगे बढ़ रहे थे ॥ ६९ ॥

क्रिया / विशेषण: ऊँची तरंगों से टकराना

उपमा: पर्वत के सामान तरंग माला

वैज्ञानिक व्याख्या:

अभिध्नंस्तु महावेग: पुप्लुवे- वेगशाली हनुमान जी इस प्रकार से पर्वत के समान जो बड़ी वस्तु जैसी विशाल समुद्र की तरंगों को अपनी छाती के वेग से तोड़ते हुए, धकेलते हुए आगे बढ़ रहे हैं तरंगों को, मतलब प्रेशर से वायु को भी और समुद्र को धकेलते हुए आगे बढ़ रहे हैं। यह उनकी वीरता का, योग्यता का वर्णन वहां पर कर रहे हैं । यह Shockwave Interaction है , तेज़ वेग से गुजरते पिंड के नीचे समुद्र का जल वायु-दाब से ऊपर उठता है (Surface Displacement Effect)। इस प्रकार हनुमान जी के उड़ने के नानाविध वर्णन किसी कुशल वायुयान चालक aerobatics वायु में करतब दिखाने के सामान पूरे हुए ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि

१. हनुमान जी के आकाशगमन का वर्णन एक **प्राचीन एयरोस्पेस डिमॉन्स्ट्रेशन** जैसा प्रतीत होता है। जिसमें Lift, Drag, Thrust, Balance, Sonic Boom, Plasma Glow, Trajectory जैसे अनेक तत्व उपलब्ध हैं। यह प्राचीन भारत के "विमान विज्ञान" (Aerospace Cognition) का अत्यंत प्रमाणिक उदाहरण है।

२. वाल्मीकि द्वारा प्रयुक्त उपमाएँ केवल काव्यात्मक नहीं हैं , *सर्प, सूर्य, चंद्र, विद्युत, गर्जन, उल्का, ध्वज, नौका* —सभी आधुनिक एयरोस्पेस विज्ञान के किसी-न-किसी सिद्धांत से मेल खाती हैं। यह न केवल काव्य की उत्कृष्टता दर्शाती है, बल्कि यह भी संकेत देती है कि उस युग में *आकाशगमन, ऊर्जा, वायु-दबाव और उड़ान की भौतिक समझ* विद्यमान थी।

३. इन श्लोकों में विभिन्न आयामों व दृष्टिकोणों से ही हनुमान जी के उड़ने की पूरी विधि स्पष्ट हो रही है। जब हम इन वर्णनों को वैज्ञानिक दृष्टि से समझेंगे, तब यह केवल कथा नहीं रहेगी — यह हमारी *वैज्ञानिक परंपरा* का प्रमाण बनेगी। हनुमान जी का यह वर्णन मान्त्रिक है, यान्त्रिक है, या कोई सिद्धि विभूति थी हनुमान जी को, या उनके पास में कोई यंत्र ही था? योग सूत्र ४.१ में पांच प्रकार की विभूतियाँ बताई हैं- जन्मौषधिमन्त्रतप: समाधिजा: सिद्धयः - जन्म से, औषधियों से, मन्त्र के जप से, तप से और समाधि से योगी में अनेक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं । इसका भी हमें स्पष्ट से नहीं पता, क्योंकि वह विद्या अब प्रकट नहीं है । परंतु जो वह कर रहे हैं, वह आधुनिक विमान से मेल खा रहा है और इस तुलना से यह स्पष्ट अवश्य हो रहा है कि यह कोरी कल्पना नहीं है और इसमें अवश्य कोई न कोई विशेष विज्ञान छिपा हुआ है।

इन्हीं तथ्यों पर और अधिक विचार की आवश्यकता है । इस वैज्ञानिक वर्णन से हमारे को सत्य इतिहास का बोध होता है । जब हमें इस बात का निश्चय होगा कि हनुमान जी ऐसे महाबुद्धिमान व महावीर थे जो आकाशगमन में कुशल थे, तो हम भी उनसे प्रेरणा प्राप्त करेंगे और ऋषियों के विज्ञान के प्रति सच्ची श्रद्धा से युक्त होंगे ।

रामायण में इन्द्रजीत मेघनाद और सती सुलोचना की कथा

राम मल्लिक
सरस्वती मल्लिक
(rammmallik@gmail.com)
(sarasmal@aol.com)

1. प्रस्तावना

इन्द्रजीत मेघनाद और सती सुलोचना रामकथा के महत्त्वपूर्ण पात्र हैं। मेघनाद लंकानरेश रावण का पुत्र था। इन्द्र को पराजित करने के कारण ब्रह्माजी ने इसका नाम इन्द्रजीत रखा था। यह ब्रह्मास्त्र, नारायणास्त्र और पशुपतास्त्र का धारक था। इसका नाम सर्वश्रेष्ठ योद्धाओं में लिया जाता है। मेघनाद का विवाह नागराज की पुत्री सुलोचना से हुआ था।सुलोचना को एक सती-साध्वी और पतिव्रता स्त्री के रूप में जाना जाता है। इनका चरित्र उनकी अटूट निष्ठा और धर्मपरायणता को दर्शाता है। मेघनाद पितृभक्त पुत्र था। यह जानने पर भी कि राम भगवान हैं पिता का साथ नहीं छोड़ा। मेघनाद की पितृभक्ति भगवान राम के समान अतुलनीय है। रामायण में मेघनाद का प्रवेश सुंदरकांड में होता है । सीता अन्वेषण में हनुमान लंका आते हैं और अशोक वाटिका में तहस नहस करते हैं और राव़ण के सैनिकों और राजकुमार अक्षय कुमार का बध करते हैं। मेघनाद उन्हें बॉंधकर रावणके दरवार में प्रस्तुत करते हैं। राम-रावण युद्ध में लक्ष्मण को अचेत कर देते हैं। हनुमान संजीवनी बूटी लाकर उनकी जान बचाते हैं। मेघनाद युद्धमें विजय के लिये माता निकुंभला का यद् करता है। विभीषण गुप्तचर से समाचार पाकर लक्ष्मण और सेना को गुप्त मार्ग से वहाँ ले जाता है। वहीं लक्ष्मण उसका बंध कर देते हैं। सुलोचना पति का कटा सिर गोद में लेकर सती हो जाती है। रामकथा के ग्रंथों में यह चरित्र विस्तार से वर्णित है। महान कवि माइकेल मधुसूदन दत्त ने मेघनाद बध नामक महाकाव्य लिखा जो बंगला भाषाका सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है।

2. विस्तार

मेघनाद और सुलोचना की पूर्व कथा

मेघनाद लंकानरेश रावण और रानी मंदोदरी का ज्येष्ठ पुत्र था। सुलोचना मेघनाद की पत्नी थी। वह नागराज शेषनाग के भाई बासुकी नाग की पुत्री थी। मेघनाद ने असुरों के गुरु शुक्राचार्य से शिक्षा पाई। थी। बारह वर्ष की किशोरावस्था में उसने अपनी कुल देवी निकुंभला के मंदिर मे अपने गुरु से दीक्षा लेकर कई सिद्धियाँ प्राप्त कर ली थी। उसने मौनव्रत धारण कर गुरु के पास अनुष्ठान किया।शिवजी ने उसे कई अस्त्र- शस्त्र , शक्तियाँ और सिद्धियाँ प्रदान की। वरदान पाने के वाद मेघनाद अपने गुरु के पास गया आगे के लिये आदेश मॉंग्।तब गुरु शुक्रा चार्य ने उसे सात महायज्ञों की दीक्षा दी जिसमें से एक महायज्ञ करना भी बहुत कठिन है । उसने वैष्णव यज्ञ भी किया जिसे कहा जाता है कि भगवान विष्णु के वाद मेघनाद ने ही यह यज्ञ किया था।

देवासुर संग्राम के समय रावण ने इन्द्र समेत देवताओं को बंदी बनाकर कारावास में बंद कर दिया था। कुछ समय बाद देवताओं मिलकर कारागार से भागने का निश्चय किया और रावण को सुप्त अवस्था में बंदी बनाकर अपने साथ ले गये ।मेघनाद ने पीछे से अदृश्य रूप में अपने रथ पर सवार होकर देवताओं पर आक्रमण किया।देवता के सेनापति कार्तिकेय देवताओं की रक्षा के लिए आ गये परंतु मेघनाद को रोक नहीं पाये।मेघनाद ने पिता का बंधन दिया और इन्द्र को बंदी बनाकर लंका ले आया। जब रावण जागा और सारी कथा का ज्ञान हुआ तो उसने मेघनाद के साथ निश्चय किया कि इन्द्र का अंत किया जाय। परन्तु उस समय ब्रह्माजी आये और मेघनाद को इन्द्र को छोड़ देने का आदेश दिया। मेघनाद ने कहा कि वह इन्द्र को तभी छोड़ेगा जब उसे अमरत्व का वरदान मिलेगा। ब्रह्माजी ने कहा कि यह प्रकृति के नियम के प्रतिकूल है। वह वरदान देते हैं कि आपातकाल में कुलदेवी निकुंभला का तांत्रिक यज्ञ करेगा तो उसे दिव्य रथ प्राप्त होगा। जब तक वह उस रथ पर रहेगा तबतक कोई भी उसे न परास्त कर पायगा न उसका बँध कर सकेगा। उन्होंने यह वरदान भी दिया कि आज से मेघनाद को इन्द्रजीत का ज़ाएगा। इन्द्रजीत इसके बाद पिता के राजकाज में सहायता करने में लग गया।

रामकथा में मेघनाद का योगदान

रामकथा में मेघनाद का प्रवेश हनुमान के सीता अन्वेषण में लंका आने के बाद प्रारंभ होता है। हनुमान ने अशोक वाटिका में सीता से भेंट किया और फि तहस नहस करना शुरू किया। उसने सैनिकों को मार दिया। रावण को पता लगा तो उसने सेनापति जंबूमाली और बाद में पुत्र अक्षय कुमार को भेजा।दोनों हीं वीरगति को प्राप्त हो गये। रावण ने तब मेघनाद को हनुमान को पकड़कर लाने अशोक वाटिका भेजा।

चला इन्द्रजित अतुलित जोधा। बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा। मानस का.५ दो.१९ चौ. २

इन्द्रजीत क्रोधित होकर अशोक बाटिका पहुँचा। उसने अपनी तांत्रिक विद्या और अस्त्र- शस्त्र का प्रयोग किया पर सब निष्फल रहे । तब उसने हनुमान पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया हनुमान को बाँधकर रावण के दरबार में ले गये ।

श्रीरामजी और लक्ष्मण का वानर सेना के साथ नवनिर्मित सेतु से लंका पहुँचे। कुछ दिन बाद युद्ध आरंभ महुआ । वानर क़िले परकोटे पर चढ़के उद्धम मचाने लगे। इन्द्रजीत क़िले से नीचे उतरा उतरा और वानर सेना पर आक्रमण किया। वे सब विकल होकर भागने लगे। हनुमान ने पहाड़ से इन्द्रजीत पर हमला किया । रथ को तोड़ दिया और सारथी को मार दिया और मेघनाद की छाती में लात मारी। दूसरा सारथी उसे रथ में डालकर घर ले आया। वानरों ने फिर से दुर्ग को घेर लिया। इन्द्रजीत नीचे उतरा और युद्ध करने लगा। इन्द्रजीत ने आकाश में चढ़ गया और माया करके वानर सेना को व्याकुल करने लगा। श्रीराम ने एक बाण से माया को काट दिया। लक्ष्मण अंगद आदि के साथ आकर इन्द्रजीत से युद्ध करने लगे। लक्ष्मण उसपर अनेक प्रकार से प्रहार करने लगे। इन्द्रजीत ने प्राण संकट में देखकर उसने लक्ष्मण पर वीरघातिनी शक्ति चलाई। वह तेजपूर्ण शक्ति लक्ष्मण जी की छाती में लगी। शक्ति लगने से उन्हें मुरझा आ गयी। हनुमान उसे बचाकर ले गये। उसके बाद सुषेण वैद्य के कहने पर हनुमान संजीवनी बूटी ले आये जिससे लक्ष्मण का उपचार हुआ और वे बच गये।

रावण ने कुंभकर्ण को जगाकर युद्ध में भेजा। वह श्रीराम के हाथ से वीरगति को प्राप्त हुआ। अब रावण के पास एक इन्द्रजीत ही बचा था। वह पिता के आदेश से युद्ध भूमि में आया।लक्ष्मण उसका सामना करने आये और दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। इन्द्रजीत ने सारे अस्त्र विफल होके देखकर अदृश्य होकर पीछे से सारी वान सेना और श्रीराम और लक्ष्मण पर नागपाश का प्रयोग किया। सब नागपाश के बंधन में बँध गये। गरुड़ ने आकर सबों को नागपाश के बंधन से मुक्त कर दिया।

इन्द्रजीत ने फिर से युद्ध में जाने पहले अजय होने का कुलदेवी निकुंभला के मंदिर में यज्ञ करने लगा। यह बात विभीषण को पता चला और उसने श्रीराम को बताया। विभीषण लक्ष्मण अंगद आदि को साथ लेकर पर्वत की गुफा मंदिर में गुप्त मार्ग से पहुँचे और यज्ञ विध्वंस कर दिया। लक्ष्मण के बाण से इन्द्रजीत वहीं वीरगति को प्राप्त हुआ। उसके शरीर को हनुमान लंका द्वार पर रख आये। उसके सिर को श्रीराम की गोद में फेंक दिया। सुलोचना विलाप करने लगी। उसने श्रीराम के पास जाकर अपने पति का सिर मांगा। उन्होंने सुलोचना की पवित्रता और पतिव्रता से प्रभावित होकर उसे अनुमति दे दी। सुलोचना पति के सिर को गोद लेकर उसकी चिता प्रवेश कर अपने प्राण त्याग दिये।

3. निष्कर्ष

इन्द्रजीत मेघनाद और सती सुलोचना का रामकथा में महत्त्वपूर्ण योग दान है। मेघनाद का पितृभक्ति ओर युद्धकौशल और सुलोचना की पति के प्रति प्रेम एक आदर्श है।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. श्री रामचरित मानस और टीकाएँ
2. वाल्मीकि रामायण
3. विकिपीडिया
4. विभिन्न लेख

रामराज्य की व्यावहारिक कार्यप्रणाली

आशीष कुमार दुबे
'कौत्सश्री'
VISARGA
(kautsa.shri@gmail.com)
(pranam@visarga.org)

विद्वानों द्वारा विभिन्न काल खण्डों में राम राज्य की अवधारणा को समझने के अनेक प्रयास हुए हैं जिसमें एक आदर्श शासन प्रणाली के रूप में रामराज्य को स्वीकृति मिली है। भारतीय राजनीति में रामराज्य का प्रयोग सुशासन के पर्याय के रूप में किया जाता है। क्या रामराज्य न्याय और नैतिक व्यवस्था का मात्र एक आदर्शलोक है अथवा उसकी व्यावहारिक परिणति भी संभव है? प्रस्तुत शोध पत्र रामचरितमानस और वाल्मीकीय रामायण में उपलब्ध संकेतों और सूत्रों के माध्यम से रामराज्य की विशिष्टताओं का अध्ययन करते हुए उसकी व्यावहारिक कार्यप्रणाली को समझने का प्रयास करेगा।

कुंजीशब्द: रामराज्य, सुशासन, व्यावहारिक कार्यप्रणाली, नैतिक व्यवस्था, रामचरितमानस, वाल्मीकीय रामायण

रामराज्य निःसंदेह एक बहुश्रुत एवं बहुचर्चित शब्द है। विद्वानों द्वारा विभिन्न काल खण्डों में राम राज्य की अवधारणा को समझने के अनेक प्रयास हुए हैं जिसमें एक आदर्श शासन प्रणाली के रूप में रामराज्य को सर्वथा स्वीकृति मिली है। भारतीय लोकमानस में रामराज्य इस प्रकार एक मुहावरे की तरह रच बस गया है कि उसे राजनीति के क्षेत्र में सुशासन के पर्याय के रूप में प्रयोग किया जाता है। भारतीय साहित्य में रामराज्य एक सांस्कृतिक और राजनीतिक आदर्श के शाश्वत बिम्ब के रूप में प्रस्तुत किया जाता है- एक ऐसी आदर्श सत्ता जो न्याय के उच्च मानदंडों को स्थापित करती है और जिसमें सम्पूर्ण समाज परस्पर सामंजस्य में रह कर धर्मपरायण जीवन का निर्वाह करता है। विलक्षण तथ्य एक यह भी है कि रामराज्य जहाँ एक ओर सुशासन के पर्याय के रूप में समझा जाता है वहीं समाज में उपस्थित घोर अराजक परिदृश्य को भी साहित्यिक कटाक्ष में रामराज्य शब्द से ही अभिहित किया जाता है।

इसलिए, यह प्रश्न सुसंगत है कि क्या रामराज्य न्याय और नैतिक व्यवस्था का मात्र एक आदर्शलोक है अथवा उसकी व्यावहारिक परिणति भी संभव है? अन्यथा, क्या रामराज्य मात्र आत्म प्रवंचना है? पुनश्च, यदि रामराज्य धरातल पर संभव है तो उसकी विशेषताएं क्या होंगी? उसकी व्यावहारिक कार्यप्रणाली क्या होगी? प्रचलित राज्य-विधानों से वह किन अंशों में और किस प्रकार अलग होगी?

प्रस्तुत शोधपत्र में वाल्मीकीय रामायण एवं रामचरितमानस के उपलब्ध सन्दर्भों एवं विभिन्न सुसंगत प्रसंगों के अन्तर्विश्लेषण से जो सूत्र और संकेत प्राप्त हुए हैं उनके आधार पर रामराज्य के तीन आवश्यक तत्त्वों को निर्धारित होते हैं। वह तत्त्व हैं- समदर्शिता, सम्पूरकता और समग्रता, जिनका विवेचन शोध पत्र में उपयुक्त स्थल पर किया गया है। अतएव, रामराज्य कोई आकाशकुसुम नहीं है जिसे प्राप्त करना दुष्कर हो। यदि किसी शासन प्रणाली में रामराज्य के आवश्यक तत्त्वों का समावेश हो तो रामराज्य को धरती पर उतारा जा सकता है। रामराज्य की दो केंद्रीय विशेषताएँ हैं- सहजता और अनुकूलता जिनको प्राप्त करने के लिए राजनीति में समदर्शिता, सम्पूरकता और समग्रता का समावेश आवश्यक है। प्रस्तुत शोधपत्र में यह संकेत भी किया गया है कि वर्तमान में प्रचलित समतामूलक चिंतन किस प्रकार अपने दृष्टिकोण में एकांगी और व्यवहार में दुर्गतिपूर्ण है, अस्तु, वास्तविक रामराज्य की स्थापना हेतु आगामी शोध की संभावनाओं पर बल दिया गया है।

आगामी विवेचन में गीताप्रेस द्वारा प्रकाशित श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण और रामचरितमानस में उपलब्ध रामराज्य विषयक विवरणों का सहारा लिया गया है। रामराज्य की पुस्तकीय अवधारणा को ग्रहण करने के उपरांत उन संकेतों और सूत्रों चिन्हित करने का प्रयास करेंगे जिनके आधार पर रामराज्य की व्यावहारिक कार्यप्रणाली सम्बन्धी मौलिक निष्कर्ष निकाला जा सके। साथ ही, प्रचलित शासन प्रणालियों और रामराज्य में मौलिक अंतर को भी रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

महर्षि वाल्मीकि कृत रामायण में युद्धकाण्ड के एक सौ अठाईसवें सर्ग में रामराज्य का विवरण इस प्रकार है-

न पर्यदेवन् विधवा न च व्यालकृतं भयम्।
न व्याधिजं भयं चासीद रामे राज्यं प्रशासति॥6.128.98॥
निर्दस्युरभवल्लोको नानर्थं कश्चिदस्पृशत्।
न च स्म वृद्धा बालानां प्रेतकार्याणि कुर्वते॥6.128.99॥
सर्व सुदितमेवासीत् सव धर्मपरोऽभवत्।

राममेवानुपश्यन्तो नाभ्यहिंसन् परस्परम् ॥6.128.100॥
आसन् वर्षसहस्राणि तथा पुत्रसहस्रिणः।
निरामया विशोकाश्च रामे राज्यं प्रशासति॥6.128.101॥
रामो रामो राम इति प्रजानामभवन् कथाः।
रामभूतं जगदभूद रामे राज्यं प्रशासति॥6.128.102॥
नित्यमूला नित्यफलास्तरवस्तत्र पुष्पिताः।
कामवर्षी च पर्जन्यः सुखम्पर्शश्च मारुतः॥6.128.103॥
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा लोभविवर्जिताः।
स्वकर्मसु प्रवर्तन्ते तुष्टाः स्वैरेव कर्मभिः॥6.128.104॥
आसन् प्रजा धर्मपरा रामे शासति नानृताः।
सर्व लक्षणसम्पन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः॥6.128.105॥
दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च।
भ्रातृभिः सहितः श्रीमान् रामो राज्यमकारयत्॥6.128.106॥

भावार्थ, श्रीराम के शासनकाल में विधवाओं का विलाप नहीं सुनायी पड़ता था। सर्प आदि का भय नहीं था और रोगों की भी आशंका नहीं थी। चोरों या लुटेरों का नाम भी नहीं सुना जाता था। कोई भी मनुष्य अनर्थकारी कार्यों में हाथ नहीं डालता था और बूढ़ों को बालकों के अन्त्येष्टि संस्कार नहीं करने पड़ते थे। सब लोग सदा प्रसन्न रहते थे। सभी धर्मपरायण थे और श्रीराम का ही निरंतर ध्यान करते हुए कभी एक-दूसरे को कष्ट नहीं पहुँचाते थे। श्रीराम के शासन में लोग सहस्रों वर्षों तक जीवित रहते थे, उनके सहस्रों पुत्र होते थे, बिना किसी रोग या शोक के राम का राज्य चलता था। रामराज्य में प्रजा के मध्य केवल राम, राम, राम की ही चर्चा होती थी। सारा जगत् श्रीराममय हो रहा था। श्रीराम के राज्य में वृक्ष अपनी जड़ों से सदैव पुष्ट रहकर फूलों और फलों से लदे रहते थे। बादल प्रजा की इच्छा और आवश्यकता के अनुसार ही बरसते थे। वायु का स्पर्श सुखकर था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र लोभरहित थे। स्वकर्म में प्रवृत्त थे और अपने कर्मों में ही तुष्टि प्राप्त करते थे। श्रीराम के शासन में प्रजा धर्म में तत्पर रहती, न कि अनृत (असत्य) में, इस प्रकार सब लोग लक्षणसम्पन्न और धर्मपरायण थे। भाइयों सहित श्रीमान् राम ने ग्यारह हजार वर्षों तक राज्य किया था।

गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस में दोहा संख्या १९ के अनन्तर रामराज्य का विवरण मिलता है।

राम राज बैठें त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका॥
बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप बिषमता खोई॥
दो०- बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग॥२०॥
दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती॥
चारिउ चरन धर्म जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं॥
राम भगति रत नर अरु नारी। सकल परम गति के अधिकारी॥
अल्पमृत्यु नहिं कवनिउ पीरा। सब सुंदर सब बिरुज सरीरा॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना॥
सब निर्दम्भ धर्मरत पुनी। नर अरु नारि चतुर सब गुनी॥
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी॥
दो०- राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं॥२१॥
भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला॥
भुअन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥
सो महिमा समुझत प्रभु केरी। यह बरनत हीनता घनेरी॥
सोउ महिमा खगेस जिन्ह जानी। फिरि एहिं चरित तिन्हहुँ रति मानी॥
सोउ जाने कर फल यह लीला। कहहिं महा मुनिबर दमसीला॥

राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा॥
सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी॥
एकनारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी॥
दो०- दंड जतिन्ह कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज।
जीतहु मनहि सुनिअ अस रामचंद्र के राज॥२२॥

भावार्थ, श्रीराम के राजा बनते ही तीनों लोक हर्षित हो गये, सब शोकरहित हो गए। कोई किसीसे वैर नहीं करता। राम के प्रताप से आन्तरिक भेदभाव समाप्त हो गया। वर्णाश्रम धर्म का पालन करते हुए प्रजा धर्ममें तत्पर रह वेदविहित मार्ग अपनाती है जिससे लोग सुखी हैं उन्हें भय, शोक या रोग नहीं है।रामराज्य में दैहिक, दैविक और भौतिक तापों का सर्वथा अभाव है। मनुष्य परस्पर प्रेम करते हैं और श्रुति की मर्यादा का निर्वाह करते हुए स्वधर्म का पालन करते हैं। धर्म, सत्य, शौच, दया और दानरूपी चारों पैरों से जगत् को आच्छादित कर रहा है, पाप तो स्वप्न में भी कहीं नहीं है। नरनारी रामभक्ति परायण और परमगति के अधिकारी हैं। न अकालमृत्यु होती है न ही किसी कोई कोई अन्य पीड़ा, सबके शरीर सुन्दर और नीरोग हैं। न कोई दरिद्र है, न दुखी है और न दीन ही है। न कोई मूर्ख है अथवा लक्षणहीन है। सभी दम्भरहित हैं, धर्मपरायण हैं और पुण्यात्मा हैं। पुरुष और स्त्री सभी चतुर और गुणवान् हैं। सभी गुणोंका आदर करनेवाले और पण्डित हैं तथा सभी ज्ञानी हैं। सभी उपकार मानने वाले और कपट-चतुराई से दूर हैं। काकभुशुण्डिजी, पक्षिराज गरुड़जी से कह रहे हैं कि रामराज्य में चराचर जगत काल, कर्म, स्वभाव और गुणजनित दुःख से विमुक्त है। सप्तसागरों की मेखला के एकमात्र राजा राम हैं जिनके प्रत्येक रोम में अनेक ब्रह्माण्ड हैं, अतः सप्तद्वीपमयी सत्ता उनके आगे कुछ नहीं है-ऐसा श्रेष्ठ मुनियों ने उनकी लीला जान कर कहा है। रामराज्य की सुख सम्पत्तिका वर्णन हजार फनों वाले शेषजी और सरस्वतीजी भी नहीं कर सकते। सभी नरनारी उदार और परोपकारी हैं, विप्रसेवक हैं, पुरुष एकपत्नीव्रती हैं, स्त्रियाँ मन, वचन और कर्मसे पतिका हित करनेवाली हैं। रामराज्य में कोई शत्रुता होती नहीं, इसलिये जीतना शब्द का प्रयोग केवल मन के सन्दर्भ में होता है। कोई अपराध करता ही नहीं, इसलिये दण्ड केवल संन्यासियों के हाथ की शोभामात्र है, सर्वानुकूलता के कारण भेदनीति की आवश्यकता ही नहीं, 'नर्तक समाज में सुर-ताल के भेद के विषय में यह शब्द प्रयोग में आता है।

आगे प्रकृति का उदाहरण देते हुए करते हुए गोस्वामीजी रामराज्य का वर्णन कर रहे हैं-

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन॥
खग मृग सहज बयरु बिसराई। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई॥
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा। अभय चरहिं बन करहिं अनंदा॥
सीतल सुरभि पवन बह मंदा। गुंजत अलि लै चलि मकरंदा॥
लता बिटप मागें मधु चवहीं। मनभावतो धेनु पय स्रवहीं॥
ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी॥
प्रगटीं गिरिन्ह बिबिधि मनि खानी। जगदातमा भूप जग जानी॥
सरिता सकल बहहिं बर बारी। सीतल अमल स्वाद सुखकारी॥
सागर निज मरजादाँ रहहीं। डारहिं रत्न तटन्हि नर लहहीं॥
सरसिज संकुल सकल तड़ागा। अति प्रसन्न दस दिसा बिभागा॥
दो०- बिधु महि पूर मयूखन्हि रबि तप जेतनेहि काज।
मागें बारिद देहिं जल रामचंद्र कें राज॥२३॥

भावार्थ, वनों में वृक्ष सदा फूलते और फलते हैं। हाथी और सिंह एक साथ रहते हैं। पक्षी और पशु स्वाभाविक वैर भूलकर प्रीति का व्यवहार करते हैं। पक्षी कूजते हैं, पशु निर्भय विचरते हैं। शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन दोलायमान रहता है। भौंरे फूलों का रस लेकर चलते हुए गुंजार करते जाते हैं। बेलें और वृक्ष माँगने से ही मधु टपका देते हैं। गौएँ मनचाहा दूध देती हैं। धरती सदा खेती से भरी रहती है। त्रेता में सत्ययुग जैसा अनुभव होता है। सर्वात्मरूप राजा के प्रभाव में पर्वत अनेक मणियों को प्रकट करते हैं, नदियाँ श्रेष्ठ, शीतल, निर्मल और सुखप्रद स्वादिष्ट जल बहाती हैं। समुद्र अपनी मर्यादा में रहते हैं। वे रत्नों को तट पर फेंक देते हैं जो मनुष्य पा जाते हैं। ताल कमलों से परिपूर्ण हैं। दसों दिशाएं अत्यन्त प्रसन्न हैं। श्रीरामचन्द्रजी के राज्य में चन्द्रमा किरणों से पृथ्वी को आप्लावित कर देता है, सूर्य उतना ही तपते हैं जितना आवश्यक हो और मेघ माँगने से जल देते हैं।

रामराज्य का वर्णन वाल्मीकीय रामायण और रामचरितमानस में लगभग एक जैसा ही है। यदि हम दोनों विवरणों की केंद्रीय विशेषताओं को खंगालने का प्रयास करें तो रामराज्य में 'सहजता' और 'अनुकूलता' का भाव अनायास हमारी दृष्टि में उभर कर आता है। प्रजा हो या प्रकृति, सबमें अन्तःप्रेरणा का प्राधान्य है और परस्पर अनुकूलता का संव्यवहार परिलक्षित होता है.

रामराज्य के लक्षणों को चिन्हित करने के उपरांत, रामराज्य स्थापित करने सम्बन्धी व्यावहारिक क्रियात्मक निर्देशों की खोज को केंद्र में रख कर वाल्मीकीय रामायण अथवा रामचरितमानस को खंगाला गया। यह पाया गया कि वाल्मीकीय रामायण में जब भरत जी अपने अग्रज श्रीराम से मिलने

के लिए चित्रकूट आते हैं तब प्रथम मिलन में कुशल-क्षेम पूछने के बहाने श्रीराम उन्हें राजनीति विषयक अन्यन्त विस्तृत उपदेश करते हैं। ऐसा ही राजनीति विषयक उपदेश रामचरितमानस में भी प्राप्त होता है किन्तु श्रीराम वह उपदेश भरत जी को चरणपादुका सौंपने के पूर्व दे रहे होते हैं। आगे दोनों क्रमशः दोनों ग्रंथों में उपलब्ध राजनीति विषयक महत्त्वपूर्ण टिप्पणियों का अवलोकन और विश्लेषण किया जाएगा-

वाल्मीकीय रामायण में राजनीति विषयक विस्तृत उपदेश में श्रीराम ने राजा के विभिन्न यज्ञानुष्ठान, गुरुजनों का यथोचित सम्मान आदि वैयक्तिक कर्तव्यों और गुणों की ओर संकेत के साथ-साथ मंत्रिमंडल के आकार, महत्त्व तथा संचालन, कार्यविभाजन, कर प्रणाली, गुप्त शत्रुओं, सैन्य संचालन, राजदूत, गुप्तचर विभाग, कृषक, गोपालक, वणिक, स्त्रियाँ, पशुधन, नगर दर्शन, कार्मिक नियंत्रण, शस्त्रागार, कोषागार, समुचित दण्ड विधान आदि विषयों पर गंभीर और विचारोत्तेजक उपदेश किये हैं, जो अयोध्याकांड के सौवें सर्ग में उपलब्ध हैं। उदाहरण के लिए, श्रीराम भरत से पूछते हैं-

कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दश पञ्च च ।
त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातैर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः॥2.100.36॥

भावार्थ, 'क्या तुम शत्रुपक्ष के अठारह और अपने पक्ष के पंद्रह तीर्थों की तीन-तीन अज्ञात गुप्तचरों द्वारा जाँच-पड़ताल करते रहते हो?, और भी गहन राजनीति विषयक वार्ता, जिसका अर्थ परम्परा से प्राप्त मनुस्मृति आदि ग्रंथों के सहयोग से ही सुलभ हो सकेगा, यथा-

दशपञ्चचतुर्वर्गान् सप्तवर्गं च तत्त्वतः।
अष्टवर्गं त्रिवर्गं च विद्यास्तिस्त्रश्च राघव॥2.100.68॥
इन्द्रियाणां जयं बुद्ध्वा षाड्गुण्यं दैवमानुषम् ।
कृत्यं विंशतिवर्गं च तथा प्रकृतिमण्डलम्॥2.100.69॥
यात्रादण्डविधानं च द्वियोनी संधिविग्रहौ ।
कच्चिदेतान् महाप्राज्ञ यथावदनुमन्यसे॥2.100.70॥

श्रीराम कहते हैं- 'महाप्राज्ञ भरत! दशवर्ग, पञ्चवर्ग, चतुर्वर्ग, सप्तवर्ग, अष्टवर्ग, त्रिवर्ग, तीन विद्या - बुद्धि के द्वारा इन्द्रियों को जीतना, छः गुण, दैवी और मानुषी बाधाएँ, राजा के नीतिपूर्ण कार्य, विंशतिवर्ग, प्रकृतिमण्डल, यात्रा, दण्डविधान तथा दो-दो गुणोंकी योनिभूत संधि और विग्रह–इन सबकी ओर तुम यथावत ध्यान देते हो न?

मनुस्मृति (जैसा कि वाल्मीकीय रामायण में उदधृत है) के अनुसार- अठारह तीर्थ, जिन पर राजाको दृष्टि रखनी चाहिये इस प्रकार हैं- शत्रुपक्ष के मन्त्री, पुरोहित, युवराज, सेनापति, द्वारपाल, अन्तःपुरका अध्यक्ष, कारागाराध्यक्ष, कोषाध्यक्ष, वित्त सचिव, सुरक्षा नियंत्रक, कोतवाल, शिल्पियों का अधीक्षक, धर्माध्यक्ष, सभाध्यक्ष, दण्डपाल, दुर्गपाल, राष्ट्र-सीमापाल तथा वनरक्षक। राजा को इन पर दृष्टि रखनी चाहिये। उपर्युक्त अठारह तीर्थों में से आरम्भ के तीन को छोड़कर शेष पंद्रह तीर्थ अपने पक्ष के भी सदैव दृष्टि रखने योग्य हैं।

इसी तरह- कामसे उत्पन्न होनेवाले दस दोषोंको दशवर्ग कहते हैं। ये राजाके लिये त्याज्य हैं। मनु ने उनके नाम इस प्रकार गिनाये हैं-आखेट, जुआ, दिनमें सोना, दूसरोंकी निन्दा करना, खीमें आसक्त होना, मद्यपान, नाचना, गाना, बाजा बजाना और व्यर्थ घूमना। जलदुर्ग, पर्वतदुर्ग, वृक्षदुर्ग, ईरिणदुर्ग और धन्वदुर्ग– ये पाँच प्रकारके दुर्ग पञ्चवर्ग कहलाते हैं। इनमें आरम्भ के तीन तो प्रसिद्ध ही हैं। ईरिण बंजर भूमि और धन्व रेतीली मरुभूमि कहते हैं जो ग्रीष्म ऋतु में शत्रुओं के लिये दुर्गम होती है। तात्पर्य यह कि इन सब दुर्गों का यथासमय उपयोग करके राजा को आत्मरक्षा करनी चाहिये। साम, दान, भेद और दण्ड इन चार प्रकार की नीति को चतुर्वर्ग कहते हैं।

श्रीराम ने उसी स्थल पर राजा के चौदह दोष भी गिनाए हैं-

नास्तिक्यमनृतं क्रोधं प्रमादं दीर्घसूत्रताम्।
अदर्शनं ज्ञानवतामालस्यं पञ्चवृत्तिताम्॥2.100.98॥
एकचिन्तनमर्थानामनर्थज्ञैश्च मन्त्रणम्।
निश्चितानामनारम्भं मन्त्रस्यापरिरक्षणम्॥2.100.66॥
मङ्गलाद्यप्रयोगं च प्रत्युत्थानं च सर्वतः।
कच्चित्वं वर्जयस्येतान्राजदोषांश्चतुर्दश॥2.100.67॥

भावार्थ, नास्तिकता, असत्य-भाषण, क्रोध, प्रमाद, विलम्ब से कार्य करना, ज्ञानी पुरुषों से दुराव, आलस्य, इन्द्रियोंके वशीभूत होना, राजकार्यों के विषयमें अकेले ही विचार करना, प्रयोजन को न समझने वाले मूर्खों से सलाह लेना, निश्चित किये हुए कार्यों का समय से अनुश्रवण न करना, गुप्त मन्त्रणा को प्रकट कर देना, मांगलिक कार्यों का अनुष्ठान न करना तथा सब शत्रुओं पर एक ही साथ आक्रमण- राजा के यह चौदह दोष हैं।

वाल्मीकीय रामायण के अयोध्याकांड के सौवें सर्ग में पाया जाने वाला राजनीतिक गुर राजकार्य का भलीभाँति चलाने में निश्चय ही उपयोगी हो सकता है किन्तु रामराज्य की आदर्श पृष्ठभूमि तैयार करने लिए क्या बस इतना ही पर्याप्त है? इस अतृप्ति के साथ रामचरितमानस के उस वार्ता-प्रसंग में

प्रवेश आवश्यक है जो श्रीराम द्वारा भरत जी को चरणपादुका देने से ठीक पूर्व की है। राम की वनवास अवधि के चौदह वर्षों में अयोध्या का शासन चलने में स्वयं को अक्षम अनुभव करनेवाले भरत जी के विनयपूर्ण अनुरोध पर श्रीराम उन्हें राजधर्म का अत्यंत मार्मिक उपदेश करते हैं। यह वार्ता अयोध्याकाण्ड के दोहा संख्या ३१३ से आगे उपलब्ध है। प्रसंग यह है कि भरत को अयोध्या का शासन चौदह वर्षों के लिए संभालना निश्चित हो गया है, भरत जी व्यग्र हैं। वह श्रीराम से कहते हैं-

दो०- जेहिं उपाय पुनि पाय जनु देखै दीनदयाल।
सो सिख देइअ अवधि लगि कोसलपाल कृपाल॥३१३॥
पुरजन परिजन प्रजा गोसाईं। सब सुचि सरस सनेहँ सगाईं।
राउर बदि भल भव दुख दाहू। प्रभु बिनु बादि परम पद लाहू॥
स्वामि सुजानु जानि सब ही की। रुचि लालसा रहनि जन जी की॥
प्रनतपालु पालिहि सब काहू। देउ दुहू दिसि ओर निबाहू॥
अस मोहि सब बिधि भूरि भरोसो। किएँ बिचारु न सोचु खरो सो॥
आरति मोर नाथ कर छोहू। दुहुँ मिलि कीन्ह ढीठु हठि मोहू॥
यह बड़ दोषु दूरि करि स्वामी। तजि सकोच सिखइअ अनुगामी॥
भरत बिनय सुनि सबहिं प्रसंसी। खीर नीर बिबरन गति हंसी॥

भावार्थ, भरत जी कहते हैं- हे दीनदयालु! जिस उपाय से यह दास पुनः आपके चरणों का दर्शन करे, चौदह वर्ष की अवधि भर के लिये मुझे वही शिक्षा दीजिये। अयोध्या की प्रजा का आप पर स्नेह है और आप उनके सगे हैं। आपके लिये दुःख में जलना भी भला है और आप के बिना परमपद भी व्यर्थ है। आप सबके मन की जानते हैं, इसलिए आप सबका ध्यान ही नहीं रखेंगे, अपितु, दोनों ओर से पूरा निबाहेंगे। ऐसा मुझे भरोसा है जिसमें तिनके भर डिगने की गुंजाईश नहीं है। मेरी दीनता और आपके वात्सल्य ने मुझे ढीठ बना दिया है। आप संकोच त्याग कर मुझे अनुगमन योग्य बनाइये। भरत के ऐसा कहने पर सभा में सबने भरत के नीरक्षीरविवेकयुक्त विनय की प्रशंसा की।

इस पर श्रीराम उचित प्रबोधन के साथ भरत जी को राजनीति के गुर सिखाते रहे हैं-

दो०- दीनबंधु सुनि बंधु के बचन दीन छलहीन।
देस काल अवसर सरिस बोले रामु प्रबीन॥३१४॥
तात तुम्हारि मोरि परिजन की। चिंता गुरहि नृपहि घर बन की॥
माथे पर गुर मुनि मिथिलेसू। हमहि तुम्हहि सपनेहुँ न कलेसू॥
मोर तुम्हार परम पुरुषारथु। स्वारथु सुजसु धरमु परमारथु॥
पितु आयसु पालिहिं दुहु भाईं। लोक बेद भल भूप भलाईं॥
गुर पितु मातु स्वामि सिख पालें। चलेहुँ कुमग पग परहिं न खालें॥
अस बिचारि सब सोच बिहाई। पालहु अवध अवधि भरि जाई॥
देसु कोसु परिजन परिवारू। गुर पद रजहिं लाग छरुभारू॥
तुम्ह मुनि मातु सचिव सिख मानी। पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी॥
दो०- मुखिआ मुख सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक॥३१५॥

भावार्थ, भरत जी की दीन और छलरहित वाणी सुनकर श्रीरामजी देश, काल और अवसर के अनुकूल बोले- हे तात! तुम्हारी, मेरी, परिवार की, घर की और वन की सारी चिन्ता गुरु वसिष्ठजी और महाराज जनक जी को है। हमारे माथे पर जब तक गुरुजी, मुनि विश्वामित्र जी और मिथिलापति जनक जी का हाथ है, तब तक हमें और तुम्हें स्वप्न में भी क्लेश नहीं है। मेरा और तुम्हारा तो परम पुरुषार्थ, स्वार्थ, सुयश, धर्म और परमार्थ इसी में है कि हम दोनों भाई पिताजी की आज्ञा का पालन करें। राजा की भलाई से लोक और वेद दोनों की भलाई है। गुरु, पिता, माता और स्वामी की शिक्षा के अनुसार चलने पर कुमार्ग पर भी पैर गड्ढे में नहीं पड़ता। ऐसा विचार कर सब चिंता त्याग कर अयोध्या का पालन करो। देश, खजाना, कुटुम्ब, परिवार आदि सबकी जिम्मेदारी तो गुरु की चरण-रजपर है। तुम मुनि वसिष्ठजी, माताओं और मन्त्रियों की सीख पर चलते हुए पृथ्वी, प्रजा और राजधानी का पालन करते रहना।

श्रीराम शरीर का दृष्टान्त देकर समझाते हैं कि मुखिया मुख के समान होना चाहिये, जो खाने-पीने में एक हो और विवेकपूर्वक सब अंगों का पालन-पोषण करता रहे। इसके बाद अगली चौपाई में राम एक अद्भुत घोषणा करते हैं-

राजधरम सरबसु एतनोई। जिमि मन माहँ मनोरथ गोई॥

भावार्थ, राजधर्म का सर्वस्व अर्थात सार इतना ही है ज्यों मन के भीतर मनोरथ छुपा हुआ हो। इस चौपाई में श्रीराम राजधर्म का सर्वस्व निचोड़ कर रख रहे हैं। इस दृष्टिकोण से यह चौपाई अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। 'जिमि मन माहँ मनोरथ गोई'- आगे इसी चौपाई के सटीक अर्थ को ग्रहण करने का प्रयास किया जायेगा।। मन के भीतर मनोरथ छुपे होने का अर्थ क्या है? क्या बस इतना ही कि राजा के मन का मनोरथ गुप्त होना चाहिए और कार्य का परिणाम आने से पहले अभिव्यक्त नहीं होना चाहिए? अथवा, ज्यों किसी विग्रह में उसमे प्रतिष्ठित देवता प्रतिभासित होता है वैसे ही राजा के व्यक्तित्व में उसकी नीति स्पष्ट झलकनी चाहिए-यह अर्थ है? आखिर वह कौन सा गूढ़ एवं अव्यक्त तत्त्व है जिसमें राजधर्म का सत्व समाया हुआ है- अगर इस गुत्थी को सुलझाया जा सके तो उस तत्त्व-विशेष को को चिन्हित किया जा सकता है जो रामराज्य को अन्य शासन-तंत्रों से अलग करता है, उस कसौटी को निर्धारित किया जा सकता है जिस पर रामराज्य को परखा जा सके और रामराज्य की व्यावहारिक कार्यप्रणाली को आकार देने की दिशा में आवश्यक सूत्र हाथ लग सकते हैं।

किसी कार्य के मनोरथ को उसका परिणाम सामने आने के पूर्व अभिव्यक्त न होने देना- वह गुण-विशेष है जो किसी भी योग्य शासक और न्यायाधीश में होना चाहिए। प्रतिपल विचारशील शासक में यह आवश्यक गुण होना ही चाहिए, किन्तु, क्या इतने से ही रामराज्य की स्थापना हो जाएगी? ऊपर वाल्मीकीय रामायण और रामचरितमानस के साहित्यिक विवरणों से रामराज्य की दो केंद्रीय विशेषताओं को निष्कर्ष के रूप में किया था- सहजता और अनुकूलता, क्या राजा द्वारा मनोरथ गोपन मात्र से सहजता और अनुकूलता दोनों विशेषताएँ सुनिश्चित हो सकेंगी? ऐसा प्रतीत होता है कि 'जिमि मन माहँ मनोरथ गोई' की अर्धाली में अभी और गहरे उतरने की आवश्यकता है।

राजा के व्यक्तित्व में उसकी नीति स्पष्ट झलकनी चाहिए, यदि ऐसा अर्थ लिया जाय तो वह राम के व्यक्तित्व के अधिक निकट है। वाल्मीकीय रामायण में उल्लेख है- रामो विग्रहवान धर्मः- राम धर्म की साक्षात् मूर्ति हैं। इसलिए यह अर्थ 'राम' तक तो निश्चय ही पहुंचा रहा है। अब प्रश्न यह है कि क्या 'राम' की सिद्धि से 'रामराज्य' की सिद्धि हो जाएगी? यदि ऐसा है तो रामराज्य की सार्वकालिकता पर प्रश्न चिन्ह लग जायेगा-अर्थात, सीधा सा निष्कर्ष जब राम आएंगे तो रामराज्य भी आएगा। फिर राजनीतिक आश्वासनों में रामराज्य के उल्लेख का भी कोई औचित्य नहीं रह जायेगा। अच्छा, रामराज्य, यदि राम की उपस्थिति-मात्र का परिणाम है, तो भी, राम और रामराज्य में उतना भेद तो अवश्य है जितना सूर्य और उसके प्रकाश में है। प्रकाश और अंधकार के बीच द्वंद्व है। दोनों परस्पर अपवर्जक (mutually exclusive) हैं। सूर्य का अंधकार से अनभिज्ञ होना क्या सूर्य की महिमा है अथवा उसकी विवशता है? बात उलझ रही है इसलिए ध्यान केवल अभी 'रामराज्य' पर संकेंद्रित रखते हैं। यहाँ 'रामराज्य' के संग एक और शब्द ध्यान में उभर कर आता है, वह है 'अयोध्या'।

रामराज्य और अयोध्या परस्पर संश्लिष्ट होने के साथ-साथ अंतर्वेशी भी हैं। गहन आध्यात्मिक अर्थों में जहाँ रामराज्य है वहाँ अयोध्या है, जहाँ अयोध्या है वहाँ रामराज्य है। क्यों न पहले अयोध्या के अर्थ को समझा जाए, शायद वहाँ से रामराज्य तक पहुंचने का कोई व्यावहारिक सूत्र मिल जाए? अयोध्या का अर्थ है जहाँ युद्ध असंभव हो। अंग्रेजी में इसे नो कनफ्लिक्ट जोन (No Conflict Zone) कह सकते हैं। प्रायः अयोध्या शब्द का अर्थ जिसे जीता न जा सके-ऐसा लगाया जाता है। किन्तु, प्रत्येक वह भूमि जहाँ युद्ध संभव है कभी न कभी जीती जा सकती है। अतएव, अयोध्या का सटीक और व्यावहारिक अर्थ यही होना चाहिए कि जहाँ युद्ध संभव न हो। वस्तुतः अयोध्या अंतर्विरोधों से परे की भावभूमि है। प्रकाश और अंधकार परस्पर अपवर्जक होकर भी जिस कोण पर कोटिसूर्य समप्रभः- जैसा दृश्य उपस्थित कर सके वह कोण वस्तुतः अनंतकोटि ब्रहमाण्डनायक मर्यादापुरुषोत्तम राम की कृपा कोर ही है- जो अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या- इस विशेषण से जगत में प्रतिष्ठित है।

कोई भी भावभूमि अंतर्विरोधों से परे तभी हो सकती है जब चीजें परस्पर अपवर्जक होकर भी सम्पूरक हों। ऐसा तभी संभव है जब चीजें टकराव में न होकर प्रवाह में हों। ध्यान रहे रामराज्य में टकराव नहीं प्रवाह है। प्रवाह में ही सहजता और अनुकूलता दोनों तत्त्व समाविष्ट हैं।

परस्पर सम्पूरक चीजें जब संपर्क में आती हैं तो उनकी उनकी ऊर्जा टकराव में नष्ट नहीं होती अपितु एक दूसरे की ऊर्जा में पूरी समग्रता से उछाल लाती हैं। आनंदातिरेक का यह सूत्र प्रचुरता के अर्थशास्त्र को जन्म देता है। राम जन्म के समय अयोध्यावासियों को जो उपहार मिल रहा था, वह आनंदातिरेक में स्वयं न रख कर दूसरों में बाँट रहे थे। सर्बस दान दीन्ह सब काहू। जेहिं पावा राखा नहिं ताहू। बालकाण्ड दोहा 193(4)। सम्पूरकता और समग्रता का यह उल्लास "राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा।।"- इस चौपाई को चरितार्थ करता है।

अगला प्रश्न उठता है कि परस्पर सम्पूरक चीजें संपर्क में किस तत्त्व की उपस्थिति में आती हैं? इसका उत्तर है- समदर्शिता जो अगली चौपाइयों में प्राप्त होता है। रामराज्य के उपलब्धि की प्रमुख कसौटी भी वही है।

रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड दोहा 5(3-4) में उस दृश्य का वर्णन है जब श्रीराम अयोध्या आगमन पर अयोध्यावासियों से मिल रहे हैं-

अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथा जोग मिले सबहि कृपाला।।
कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। किए सकल नर नारि बिसोकी।।
छन महिं सबहि मिले भगवाना। उमा मरम यह काहुँ न जाना।।
एहि बिधि सबहि सुखी करि रामा। आगें चले सील गुन धामा।।

भावार्थ, अयोध्यावासियों से मिलने के लिए कृपालु श्रीरामजी असंख्य रूपोंमें प्रकट हो गये और सबसे यथायोग्य मिले। श्रीरघुवीर ने कृपा की दृष्टि से देखकर सब नर-नारियों को शोक से रहित कर दिया। भगवान् क्षणमात्र में सबसे मिल लिये। शंकर जी यह प्रसंग उमा जी से कह रहे हैं- हे उमा! यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। इस प्रकार शील और गुणों के धाम श्रीरामजी सबको सुखी करके आगे बढ़े।

असंख्य रूप होकर सबसे एक साथ क्षणभर में यथायोग्य मिल लेना-ऐसा समदर्शिता से ही संभव है। जैसे सूर्य की परछाईं प्रत्येक जल से भरे हुए पात्र में एक साथ पड़ती है और प्रत्येक पात्र में उसमें भरे हुए जल के अनुरूप अलग-अलग छवियाँ उभरती हैं, उसी तरह श्रीराम को प्रत्येक अयोध्यावासी अपने संग में अपने अनुरूप पा रहा है। सबको समान रूप से दीखते हुए सबके स्वरुप में प्रकट हो जाना ही समदर्शी की पहचान है। समदर्शिता से तात्पर्य सबको एक ऑंख से न देख कर दोनों आँखों से सबकुछ ठीक-ठीक देखना है। "रामो रामो राम इति प्रजानामभवन् कथाः। रामभूतं जगदभूद रामे राज्यं प्रशासति"॥- ऐसा समदर्शिता की स्थिति में ही संभव है। जिस प्रकार मनुष्य के शरीर का तंत्रिकातंत्र अपने प्रत्येक अवयव के संपर्क में प्रतिक्षण रहता है, उसी भाँति राजा को प्रजा के संपर्क में होना चाहिए, रामराज्य की यही अपेक्षा है, और तभी- "मुखिआ मुख सो चाहिए खान पान कहुँ एक। पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक॥"- का मंतव्य फलित हो सकता है।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि समदर्शिता, सम्पूरकता और समग्रता रामराज्य के लाक्षणिक तत्त्व हैं। रामराज्य वहीं संभव है जहाँ राज्य का प्रत्येक नागरिक राममय अर्थात धर्मविग्रहराम की ही साक्षात् प्रतिमूर्ति हो। सहजता और अनुकूलता रामराज्य के आतंरिक गुण हैं। प्रवाह उसका अभीष्ट है और न्याय उसका स्वभाव। रामराज्य में न्यायाधीश बाहर हथौड़े लेकर नहीं बैठते अपितु हृदय में उपस्थित रहकर प्रतिक्षण मार्गदर्शन करते हैं।

'राजधरम सरबसु एतनोई। जिमि मन माहँ मनोरथ गोई॥'- इस चौपाई में रामराज्य का सर्वस्व कहा जा सकने वाला जो अलक्षित (गूढ़ और अव्यक्त) मनोरथ अर्थात- मन का रथ (vehicle) है, उसके दो घोड़े हैं सम्पूरकता और समग्रता- जिनकी रास समदर्शिता के हाथों में है।

रामराज्य को धरातल पर उतारने के लिए समदर्शिता, सम्पूरकता और समग्रता को व्यावहारिक रूप में समझना होगा। समदर्शिता रामराज्य का केंद्रीय तत्त्व है जो सम्पूरकता और समग्रता के सम्प्रयोग से गतिशील होकर सहजता और अनुकूलता का वातावरण निर्मित करता है। अतएव, रामराज्य की व्यवहारिक कसौटी निम्नवत निर्धारित कर सकते हैं-

1. क्या वह शासन सबके लिए समान रूप से उपलब्ध है? (समदर्शिता)- शासन का समान रूप से सबके लिए उपलब्ध हो पाना, शासन का अपने प्रत्येक अवयव के साथ यथोचित संपर्क और संव्यवहार रामराज्य की नींव तैयार करता है।
2. क्या उस शासन व्यवस्था में जरूरतों और संसाधनों के बीच उचित तालमेल है? (सम्पूरकता)- शासन में समदर्शिता का मानक पूरा कर पाने की स्थिति में समाज की जरूरतों और संसाधनों एवं अन्य सम्पूरक तत्त्वों का सहज एवं स्वाभाविक अनुकूलन संभव हो जाता है। परिणामस्वरूप समाज को स्वाभाविक रूप से तुष्टि और पुष्टि प्राप्त होती रहती है।
3. क्या उक्त शासन व्यवस्था में गतिरोधरहित एवं बुद्धिमत्तायुक विकेन्द्रीकरण के प्रति सारगर्भित, सार्थक और विधेयात्मक दृष्टिकोण है? (समग्रता)- समाज में सम्पूरक तत्त्वों का सहज एवं स्वाभाविक अनुकूलन उनके परस्पर अपवर्जक अथवा विजातीय प्रकृति का दोषहरण कर उनकी परस्पर ऊर्जा का उपयोग कर समाज में एक सचेतन-तंत्र का निर्माण करता है जो समाज में सद्प्रवृत्तियों को सहज ही आकर्षित करता है और दुष्प्रवृत्तियों को प्रतिकर्षित करता है।

वर्तमान में प्रचलित शासन प्रणालियाँ समता को अपना उच्चतम आदर्श मानती हैं। समतामूलक चिंतन ऊपर से अत्यंत उज्जवल आदर्श प्रतीत होता है किन्तु उसकी परिणति बंदरबाँट में होती है। अंत में, एक कहानी के साथ शोध-पत्र को पूरा करते हैं।

एक बार दो बिल्लियाँ (एक काली और एक सफ़ेद) कहीं से एक रोटी ले आती हैं। दोनों बिल्लियाँ रोटी को बाँटने लगती हैं। एक बिल्ली कहती है कि उसका हिस्सा बड़ा है, तो दूसरी कहती है कि उसका। वे दोनों मिलकर रोटी को बराबर नहीं बाँट पातीं और जोर-जोर से झगड़ने लगती हैं। उसी समय कहानी में बंदर का प्रवेश होता है। झगड़ते हुए बिल्लियों को देखकर उसे लालच आ जाता है। बंदर उन बिल्लियों से कहता है कि "तुम दोनों लड़ो मत, मैं तुम्हारी रोटी का सही-सही बँटवारा कर देता हूँ" बंदर एक तराजू लाता है। वह रोटी के दो टुकड़े करता है और उन्हें तराजू पर रखता है। जब एक पलड़ा भारी होता है, तो वह यह कहकर उसमें से एक टुकड़ा तोड़कर खा लेता है कि "यह टुकड़ा भारी है, इसे बराबर करने के लिए थोड़ा खाना पड़ेगा।" अब दूसरा पलड़ा भारी हो जाता है, तो वह वही बात दुहरा कर दूसरे टुकड़े से भी कुछ खा लेता है। बंदर यह नाटक तब तक जारी रखता है जब तक रोटी के टुकड़े इतने छोटे नहीं हो जाते कि तराजू पर रखने लायक न रहें। अंत में, जब रोटी का केवल एक छोटा सा अंश बचता है, तो बिल्लियाँ समझ जाती हैं कि उन्हें मूर्ख बनाया जा रहा है। वे अपनी गलती स्वीकार करते हुए कहती हैं कि "अब जो बचा है, वही हमें दे दो।" बंदर जवाब देता है, "नहीं! यह टुकड़ा तो मेरी मेहनताना है, यह कहकर वह बचा हुआ आखिरी टुकड़ा भी खा जाता है।

समतामूलक चिंतन की दुर्गति तब तक समाज को छलती रहेगी जब तक समदर्शिता, सम्पूरकता और समग्रता पर आधारित 'रामराज्य' जैसी कोई शासन प्रणाली समाज में अस्तित्व में नहीं आती। रामराज्य के धरती पर अवतरण हेतु क्या हमें पुनः 'रामावतार' की प्रतीक्षा करनी होगी? इस शोध पत्र का निष्कर्ष यह है कि समदर्शिता, सम्पूरकता और समग्रता की कसौटी पर खरा उतरने वाला कोई तंत्र रामराज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। यह आगामी शोध का विषय हो सकता है कि ऐसे तंत्र की रूपरेखा क्या होगी। क्या वह चिंतन अथवा व्यवहार में उपलब्ध है? यदि

उपलब्ध है तो उपर्युक्त कसौटियों पर उसका परिक्षण, यदि नहीं है तो उपर्युक्त तत्त्वों को केंद्र में रख कर रामराज्य जैसे किसी तंत्र को आकार देने की दिशा में प्रयास किया जा सकता है।

1. संदर्भ ग्रंथ

1. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, गीताप्रेस, संवत 2076 (चौवनवाँ पुनर्मुद्रण)
2. श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस, संवत 2080 (तीन सौ इकतालीसवाँ पुनर्मुद्रण)

मलयालम साहित्य में राम-कथा

वत्सला 'किरण'
(vatchu44@gmail.com)

मलयालम साहित्य का आरंभ ही राम कथा से माना जाता है। सबसे प्राचीन रचना "पाट्टु" माना जाता है। उपलब्ध सबसे प्राचीन 'पाट्टु' राम चरित्र है।प्राप्त जानकारी के अनुसार दूसरे चेर साम्राज्य के संस्थापक कुलशेखर आल्वार की रचना ' पेरुमाल तिरुमोषियों' (पदों) में संक्षिप्त रूप में रामायण कथा वर्णित है।सबसे प्राचीन पाट्टू कृति 'रामचरितम्' के रचयिता चीरामन(श्रीरामन् का तद्भव रूप) नामक कवि माने जाते हैं। संस्कृत साहित्य का प्रभाव मलयालम में सशक्त होने लगा तो कण्णश्श कवियों का रंग प्रवेश हुआ। उनकी रचना कण्णश्श रामायणम् है। इन का रचना काल चौदहवीं-पंद्रहवीं सदी के बीच माना जाता है।कण्णश्श रामायणम् के रचयिता राम पणिक्कर है। अरब देश से व्यापार के लिए भारत आए लोगों और केरलीय युवतियों के संबंध से एक नए समुदाय का आविर्भाव हुआ जिन्हें मापिल्लै कहते हैं ।यद्यपि ये इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं तो भी उन्होंने इंदु पुराणों के आधार पर काव्य रचना की ।इन का "माप्पिल्लै रामायणम् " उल्लेखनीय है जो राम कथा पर आधारित है। केरल के वातावरण को आध्यात्म ज्ञान से आलोकित करने का श्रेय श्री तुंजत्तुरामानुजन एषुत्तच्छन को है।उन्होंने जन साधारण केलिए सरल मलयालम भाषा में रामायण की रचना की।उन के द्वारा रचित आध्यात्म रामायणम् का पाठ आज केरलके हर आस्तिक घर में होता है ।एषुत्तच्छन के बाद केरल वर्मा ने 'केरलवर्मा रामायणम् 'तथा 'पाताल रामायणम्'की रचना की ।कोट्टारक्करा तंपुरान ने आट्ट कथा के रूप में राम चरित प्रस्तुत किया।उन का 'रामनाट्टम ' साहित्य कृति तथा नृत्य कला दोनों दृष्टियों सै उल्लेखनीय है। आधुनिक काल में कवित्रयों ने राम कथा पर खंड काव्य लिखे। वर्तमान समय में भी कवि गण राम कथा को विष बनाते हैं। राम कथा अनंत है,देश,काल सीमाओं के परे हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम का चरित्र मानव मात्र के लिए अनुकरणीय है।

बीज शब्द : मलयालम साहित्य -राम कथा - श्री तुंजत्तुरामानुजन एषुत्तच्छन का आध्यात्म रामायणम्- ।कोट्टारक्करा तंपुरान ने आट्ट कथा के रूप में राम चरित की प्रस्तुति - आधुनिक काल में कवित्रयों का खण्ड काव्य - मर्यादा पुरुषोत्तम का चरित्र मानव मात्र के लिए अनुकरणीय है।

अतुल्य प्रतिभा संपन्नकवीश्वरों की कमनीय रचनाएँ कालजयी होती हैं। भावी पीढ़ी उनसे प्रेरणा पाती है। उस श्रेणी में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त महत् ग्रन्थ है 'रामयण'। भारतीयों के जीवन को अन्य किसी ग्रन्थ ने रामायण के समान प्रभावित नहीं किया है। भाषा भेद या प्रान्त भेद के बिना भारत भर में राम कथा का प्रचार देखने को मिलता है। केरल के संबन्ध में भी यह बात लागू है। केरलीय साहित्य की हर विधा में राम-कथा मिलती है।

रामचरितमानस मलयालम साहित्य का उद्भव 'पाट्टु' साहित्य से माना जाता है। सबसे प्राचीन पाट्टु कृति 'रामचरितम्' है। अभी तक प्राप्त जानकारी के अनुसार दूसरे चेर साम्राज्य के स्थापक कुलशेखर आळवार की रचना 'पॆरुमाळ् तिरुमॊळि' ही केरल की प्रथम रामायण है। उन दिनों दक्षिण भारत चेर, चोल, पाण्ड्य राज्यों में विभक्त था और तीनों प्रदेशों की भाषा तमिळ् थी। तमिळ् में रचित उस कृति की अंतिम तीन मॊळियों (पदों) में संक्षिप्त रूप में रामायण कथा वर्णित है। इसके रचना काल के संबंध में विद्वानों में मत भेद है।

यह वीर रस प्रधान रचना है। खासकर युद्ध वर्णन है। उसके साथ-साथ भक्ति के निर्मल भाव की अभिव्यक्ति भी 'रामचरितम' में दर्शनीय है। कवि श्री रामचन्द्र के पूजनीय व्यक्तित्व का संपूर्ण चित्रण करता है। कहीं-कहीं कवि चीरामन वाल्मीकि तथा कंबन का भी अनुकरण करते हैं। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि कवि ने केवल अनुकरण मात्र न कर अपनी कल्पना की सुन्दर अभिव्यक्ति भी की है। विषय वस्तु, पद-सौकुमार्य, अलंकारों का प्रयोग, भावाभिव्यक्ति, वर्णन आदि की दृष्टि से यह एक अनुपम रचना है। इसकी भाषा शुद्ध तमिळ् (चेन्तमिळ) तथा संस्कृत तत्सम शब्द मिश्रित है।

कण्णश्श रामायणम्

संस्कृत साहित्य का प्रभाव मलयालम साहित्य में सशक्त होने लगा। ऐसे सन्दर्भ में कण्णश्श कवियों / निरणं कवियों का रंग प्रवेश हुआ। 'रामचरितम' से आरंभ हुई रामायण कथा ने कण्णश्श या निरणंम् कवियों की रचना 'कण्णश्श रामायणम' में पूर्णता प्राप्त की। इन दोनों रचनाओं के बीच काफी समय का अंतराल है। 'कण्णश्श रामायणम' के उपसंहार में इन कवियों के संबंध में कुछ विवरण पाया जाता है। इनका समय चौदहवीं-पंद्रहवीं शती के बीच माना जाता है। निरणम् कवियों में सर्वसमाराध्य है राम पणिक्कर। इनकी सबसे उत्कृष्ट रचना 'कण्णश्श रामायणम' है।

राम कथा पाट्टु

'रामकथा पाट्टु' एक गेय महाकाव्य है। अव्वाटुतुर अय्यापिळळ आशान् इसके रचयिता हैं। इसका रचना काल चौदहवीं शती के करीब माना जाता है। इसे मलयालम कि बृहत् राम- कथा कह सकते हैं। कण्णश्श रामायाणम् और रामकथा पाट्टु में सादृश्यवाली कई पंक्तियाँ मिलती हैं। मुख्य कथा रामायण कथा ही है। यह पाट्टु, साहित्य को अशान की अमूल्य देन है। इसकी भाषा चॆन्तमिळ् (शुद्ध तमिळ्) और संस्कृत तत्भव शब्दों से युक्त मिश्रित भाषा है। तमिळ् का माधुर्य, संस्कृत का आभिजात्य तथा प्रादेशिक पदों के लालित्य के मिलन से राम-कथा पाट्टु की भाषा मनोरम बन गई है। यह माना जाता है कि ये कवि कण्णश्श कवियों के पचास वर्ष पूर्व जीवित थे।

माप्पिळळ पाट्टु

अरब देश से व्यापार के लिए आये लोग तथा केरलीय युवतियों के संबंध से केरल में एक नये वर्ग का आविर्भाव हुआ जो माप्पिळळ नाम से जाना जाता है। ये लोग इस्लाम धर्मावलम्बी थे। इनका काल करीब 14वीं सदी से माना जाता है। उनके द्वारा रचित काव्य 'माप्पिळळ पाट्टु' नाम से जाना जाता है। मलयालम साहित्य को इनकी देन अमूल्य है। इनके रचयिता तथा रचना काल का पता उनके पाट्टु से ही मिलता है। उन दिनों धर्म के नाम पर विरोध की भावना नहीं थी। अत: इन लोगों ने हिंदू पौराणिक कथाओं के आधार पर भी काव्य रचना की है। कथा वस्तु भारतीय होने पर भी प्रस्तुतीकरण मुस्लीम शैली में है जैसे – शूर्पणखा बीबी, सुलतान राम, निकाह करने को आदि का प्रयोग है।

चंपु रचनाएँ

11वीं सदी में संस्कृत साहित्य के प्रभाव से मलयालम में भी चंपु काव्य रचना शुरू हुई। चंपु काव्य के द्वितीय पाद में याने 16वीं सदी में इस विधा की खूब उन्नति हुई। प्रारंभिक चंपु रचनाएँ गणिका प्रधान थीं। किन्तु द्वितीय पाद में विषय वस्तु तथा प्रस्तुतीकरण में परिवर्तन आया। पौराणिक कथाओं के पुनराख्यान को ही प्रधानता दी गयी है। प्राचीनता एवं आकार की दृष्टि से सबसे उल्लेखनीय चम्पु है 'रामायणम् चंपु'। राम के अवतार से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा का विस्तृत वर्णन बीस भागों में किया गया है। इसके रचयिता पुनं नंबूतिरि हैं।

तुंजत्तॆळुत्तच्छन् का अध्यात्म रामायणम:

केरल के वातावरण को अध्यात्म ज्ञान रूपी दीप के प्रकाश से आलोकित करने का श्रेय परमाचार्य तुंजत् रामानुजन ऎळुत्तच्छन को है। केरलीय जनता के मन में भक्ति भावना जाग्रत एवं सुद्रढ़ बनाने वाले उस महात्मा को केरल का प्रत्येक आस्तिक हिंदू सादर प्रणाम करता है।

संस्कृत भाषा जानने वालों के लिए आदि कवि वाल्मीकि कृत रामायणम, हिंदी भाषा- भाषियों के लिए तुलसी कृत राम चरित मानस तथा तमिळ् भाषियों के लिए कंबर कृत कम्बरामायण नित्य-पाठ के लिए उपलब्ध था। मलयालम में ऐसे ग्रन्थ की कमी न रहे, इसी उद्देश्य से केरलीयों के नित्य-पाठ के लिए उन्होंने संस्कृत के अध्यात्म रामायणम् का स्वतन्त्र विवर्तन किया। यह वाल्मीकि रामायण से भिन्न तथा संस्कृत में रचित अध्यात्म रामायणम का एक भाषान्तरण जैसा है। संस्कृत का अध्यात्म रामायणम, अठारह पुराणों में एक माना जाने वाले ब्रह्माण्ड पुराण के अंतर्गत माना जाता है। ऋषियों के लिए सूत रामकथा का वर्णन करता है, बीच-बीच में वाल्मीकि राम की महानता के बारे में कई प्रश्न पूछते हैं। माना जाता है कि उनकी शंका का निवारण करने के लिए व्यास मुनि ने अध्यात्म रामायण की रचना की।

ऎळुत्तच्छन् किळिप्पाट्टु शैली के उपज्ञाता के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं। यह मलयालम की सबसे उत्कृष्ट काव्य शैली है। इस शैली में तोते के द्वारा कथा कहलाते हैं। रामायण के आरंभ में ऎळुत्तच्छन तोते से कहते हैं-

"श्री राम नामम् पाटि वन्न-पैंकिळिप्पेण्णे
श्री राम चरितं नी चॊल्लीटु मटियाते।"

(श्री राम नाम गाती हुई आयी हे तोती! बिना संकोच के श्रीराम-चरित सुनाओ।)

यह सुनकर तोती सभी गुरुजनों की वन्दना करके राम-कथा सुनाने लगती है। किळीप्पाट्टु शैली की गानात्मकता एवं वैविध्य ने जनता का हृदय आकर्षित किया।भक्ति एवं अर्थ गांभीर्य के लिए अनुयोज्य केका, काकळी जैसे वृत्तों को ही उन्होंने अपनी रचना के लिए चुना। जहाँ तक शिल्प योजना की बात है ऎळुत्तच्छन् ने अपना एक अलग रास्ता ही चुना।

यहाँ इस बात का जिक्र करना आवश्यक है कि तमिळ् के कंबर, हिंदी के तुळसीदास या ऎळुत्तच्छन् ने मूल काव्य का पदानुपद अनुवाद नहीं किया। उन सबके लिए मूल अपनी रचना का केवल एक आधार मात्र है। कंबर और तुलसी ने आधार रुप में वाल्मीकि रामायण को अपनायातो ऎळुत्तच्छन् ने अध्यात्म रामायण को चुना।उन्होंने अपनी कृति को एक उत्तम कला-सृष्टि बनाने के लिए आवश्यक पूरी स्वतन्त्रता ली। जहाँ धर्म संबंधी सिद्धान्तों की बात है, वहाँ मूल का ज्यों का त्यों अनुकरण किया। अन्य जगहों पर मूल में वर्णित अप्रधान अंशों कोत्याग दिया, अनावश्यक विस्तार से वर्णित घटनाओं को संग्रहीत किया। धुंधले वर्णनों को प्रभावशाली बनाने के लिए अस्पष्ट घटनाओं का स्पष्टीकरण किया तथाअपनी कल्पना के आधार पर नई बातों को जोड़ा। इसतरह काव्य सौन्दर्य में जरा भी कमी आये बिना एक भाव पूर्ण स्वतन्त्र कृति के रूप में उन्होंने अध्यात्म रामायणम का विवर्तन किया। भाव-पूर्णता लाने तथा भिन्न भावों को सम्मेलित करके वैकारिक अनुभूति उत्पन्न करने की ओर खास ध्यान देने के कारण कई स्थानों में मूल से कोई साम्य लक्षित नहीं होता। भक्त कवि जब भगवान के रूप का वर्णन करते हैंतो उनकी भाषा में एक अनुपम आकर्षण

दिखाई देता है। यद्यपि यह पचहत्तर प्रतिशत संस्कृतके अध्यात्म रामायणम की परिभाषा है तो भी अन्य रामायणों में वर्णित बातों का समावेश भी इसमें है। मूलकृति का ज्यों का त्यों अनुकरण करना कवि का लक्ष्य नहीं है।उन्होंने मूल को केवल एक आधार शिला के रूप में ही माना है। राम की महानता को चरम सीमा तक पहुँचाकर उन्हें ईश्वर सिद्ध करना ही उनका लक्ष्य था। उसके लिए आवश्यक बाह्य तथा आंतरिक वस्तुओं को अपनी मेधा शक्ति से उन्होंने प्रस्तुत किया। अपने समय के अनुकूल समाज के पुन: क्रमीकरण के लिए आवश्यक नए सिद्धान्तों को भी उन्होंने जोड़ा। कला पौष्कल्य को नहीं, भक्ति को ही उन्होंने मुख्यत्व दिया। तत्वज्ञानी तथा ईश्वर भक्त ऐळुत्तच्छन को ही रामायणम में हम देख पाते हैं। उनकी काव्य भावना का स्वच्छंद विहरण सीता-स्वयंवर वर्णन में देख सकते हैं-

“इटि वेट्टीटुं वण्णं विल् मुऱिञ्ञॊच्चकेट्टु
नटुङी राजाक्कन्मारुरगङळॆप्पोले।
मैथिली मायिल्प्पेट पोले संतोपं पूण्टाळ्
कौतुकमुन्टाय्वन्नु चेतसि कौशिकनुं।”

(मेघ गर्जन के समान धनुष के टूटने की आवाज़ सुनकर राजा लोग उरगों (सांपों) के समान चौंक पड़े। मैथिली मोरनी के समान खुश हुई। कौशिक भी मन में बहुत प्रसन्न हुए)मेघ गर्जन, राजाओं का काँपना आदि वर्णन मूल में नहीं है।

वन यात्रा के समय सुमित्रा लक्ष्मण को जो उपदेश देती है वह भी संस्कृत की अध्यात्म रामायण में नहीं है। वाल्मीकि रामायण में इसका वर्णन है।

“रामं दशरथं विद्दि
मां विद्दि जनकात्मजां
अयोध्यामटवीं विद्दि
गच्छ तात यथा सुखम।”

इसी का भावार्थ है ऐळुत्तच्छन का वर्णन।

“रामने नित्यं दशरथ नेन्नुळिळ-
लामोदमोटु निरुपिच्चु कॊळळणम
ऐन्ने जनकात्मजयेन्नुरच्चुकॊळ्
पिन्ने अयोध्ययेन्नोर्तीटटविये।”

झोंपड़ी से लेकर राजमहल तक के लोगों के मन में वैकारिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक रूप में एकता की भावना उत्पन्न करने में सफल हुई एकमात्र रचना है ऐळुत्तच्छन का अध्यात्म रामायणम् शिक्षित लोगों ने स्वयं पढ़कर तथा अशिक्षितों ने श्रवण द्वारा इसका रसास्वादन किया। उन्होंने दिव्य मन्त्र के समान उसे कंठस्थ किया। रामायण ने उन्हें आत्मीय एवं मानसिक कुंठाओं से मुक्त किया।

भक्ति के महत्व का प्रचार एवं संकीर्तन अपना लक्ष्य होने के कारण ही उन्होंने अध्यात्म रामायणम् को अनुवाद कार्य के लिए चुना। मौका मिलते हि भगवान के नाम का आलापन एवं भगवान की लीला का प्रकीर्तन करने में वे लीन हो जाते हैं। भक्ति का महत्व दोहराते-दोहराते पाठकों को भी वे अभिभूत करते हैं।वे लोगों को समझाते हैं कि भक्ति, ज्ञान एवं मोक्ष की ओर ले जाने वाले सोपान हैं।

भगवान के नाम का उल्लेख करने का मौका एक बार मिलते ही वे विशेषणों एवं पर्यायों की झड़ी लगाते हैं। अयोध्या काण्ड का यह वर्णन देखिए-

“नारायणन नलिनायत लोचनन
नारी जन मनो मोहनन माधवन
नारद सेव्यन नलिनासनप्रियन
नारकारति नलिन शर गुरु
X X X X
व्यक्त नव्यक्त ननन्त ननामयन
शक्ति मुक्तन शरणागत वत्सलन।”

प्रतिपाद्य कथा की मधुरिमा तथा महिमा में आमग्न कवि ने जो गीत गाये उसेजनता ने हृदिस्थ किया। ये गीत सभी केरलीय गृहों में नित्य गाये जाने लगे।

ईश्वर भक्ति ही नहीं गुरु भक्ति, पुत्रवात्सल्य, भ्रातृस्नेह, पत्नी धर्म, दीनानुकंपा आदि स्वस्थ समाज की उन्नति के लिए आवश्यक अनेक धार्मिक मूल्यों का प्रचार भी उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा किया।

उदा:

"क्रोध मूलं मनस्तापमुण्टाय्वरुं
क्रोध मूलं नृणां संसार बंधनं
क्रोध मल्लो निजधर्म क्षयकरं
क्रोध परित्यजिक्केणं बुध जनं
क्रोध मल्लो यमनायतु निर्णये।"
(अयोध्या काण्ड)

यहाँ कवि क्रोध की बुराइयों पर प्रकाश डालकर क्रोध त्यागने का उपदेश देते हैं।

"जाति नामादिकळक्कल्ल गुण गण-
भेद मेन्नन्ने बुधन्मारुटे मतं।"
(युद्ध काण्ड)

यहाँ कवि कबीर के –

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान" वाली बात कहते हैं।

इनके कई पद जनता के बीच लोकोक्ति जैसे प्रचलितहो गये हैं। सारोपदेश वाक्य, लोकोक्तियाँ आदि के द्वारा ऎहुत्तच्छन् ने जो धर्म-बोध जनता में जाग्रत किया उससे प्राप्त नवचैतन्य केरलीय संस्कार की अन्तर्धारा के रूप में आज भी विद्यमान है।

ऎळुत्तच्छन् का राम अध्यात्म रामायणम् मूल में वर्णित राम से भिन्न है। उनका राम ईश्वर तथा मनुष्य दोनों के लिए एक आदर्श पुरुष हैं। उन्होंने राम-परशुराम संवाद का वर्णन वाल्मीकि रामायण तथा अध्यात्म रामायण से भिन्न तथा अति सुंदर ढंग से किया है। परशुराम का उपहास सुनकर वाल्मीकि का राम यत्न से अपनी जीभ काबू में रखते हैं। कोई कटु वचन नहीं बोलते। परशुराम के हाथ से चाप छीनते हैं। लेकिन ऎळुत्तच्छन का राम एक मुस्कान से परशुराम के ललकार का स्वागत करते हैं। राम जो कुछ बोलते हैंवे सब दयार्थ निष्ठ है। सुनने में स्तुति लगने पर भी वास्तवमें मार्के की भत्सना है।

'नवास के लिए प्रस्तुत राम कैकेयी से जो बातें करते हैं उसमें भी इसी तरह का द्वयार्थी परिहास मिलता है।

"दण्डमत्रे राज्य भारं वहिप्पतु
दण्डक वासत्तिन् ऎन्नुमेळुतल्लो
स्नेह मेन्ने क्कुरिच्चेरु मम्मक्कुमि-

देहमात्रं भऱिच्चीटेन्नु चोलकयाल।" (राज्य भार संभालना कठिन कार्य है। वनवास बहुत आसान है। माताजीको मुझसे बहुत अधिक प्यार है। इसीलिए उन्होंने मुझे आदेश दियाहै कि अपने शरीर की देख-भाल मात्र करना काफी है।) ऎळुत्तच्छन् के रामयणम् में शूर्पणखा की कथा के प्रसंग में भी इसी तरह का एक भिन्न पश्चात्तल है। लक्ष्मण ने ही शूर्पणखा का अंगच्छेद किया। लेकिन वाल्मीकि रामायण और संस्कृत के अध्यात्म रामायणम् में राम की आज्ञा से ही लक्ष्मण वह कार्य करता है। तुलसी का राम भी इशारे से लक्ष्मण को समझाता है। लेकिन ऎळुत्तच्छन् का राम न ऐसी कोई आज्ञा देते हैं, न इशारा करते हैं। सीता पर आक्रमण करने के लिए बढ़ती शूर्पणखा को राम ने रोका। भ्रातृ भक्त लक्ष्मण ने स्वेच्छा से शूर्पणका को ही दंड दिया। यह घटना मानव सहज कमजोरियों के प्रति ऎळुत्तच्छन् के राम के अनुभाव का सुंदर उदाहरण है। बालि-सुग्रीव कथा में भी कवि ने अपनी कल्पना मिलाई है। मायावी की कथा में उन्होंने एक अंश जोड़ा है। वह है गुफा से निकलने वाले दूध या खून की कथा। वाल्मीकि रामयण और अध्यात्म रामयण मूल में ऐसा कोई वर्णन नहीं है।दोनों भाई निरपराध होने के कारण उस शत्रुता में यहाँ शोकात्मकता की तीव्रता अधिक है।

अध्यात्म रामायण मूल में स्पष्ट बताया गया है कि बाली ने सुग्रीव कीपत्नी रुमा को अपना बनाया। लेकिन ऎळुत्तच्छन् उसके बारे में मौन साधते हैं। उनका राम केवल इतना कहते हैं कि बेटियाँ, बहनें, भ्रातृपत्नियाँ, पुत्र वधुएँ, आदि के साथ अत्याचार करने वाले दंड के योग्य हैं। अत: बालि दंडनीय है। मूल में बालि-सुग्रीव युद्ध छे पंक्तियों में वर्णित है। लेकिन ऎळुत्तच्छन् ने चौबीस पंक्तियों में एक विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है। उसी तरह उन्होंने अन्य युद्धों का वर्णन भी विस्तृत रुप से किया है। युद्ध काण्ड में इस तरह के कई वर्णन देखने को मिलते हैं।

राम के चरित्र की महानता का मकुटोदाहरण है रावण वध के बाद का उनका मनोभाव एवं व्यवहार। रावण राम का सबसे बड़ा शत्रु था तो भी मृत्यु के बाद उसकी महानता के प्रति राम बड़ा आदर प्रकट करते हैं। इस विषय में वे आदि कवि का अनुकरण करते हैं। मृत्यु के बाद शत्रुता बनाये रखना पुरुषोचित नहीं है। विजयाह्लाद के बीच भी मृत शत्रु के प्रति आदर दिखाना उनके आत्मसंस्कार के ओज का प्रतीक है। विभीषण को सांत्वना देते हुए राम कहते हैं। राम कहते हैं - यह मेरा सामना करके युद्ध में प्राण त्याज्ये हुए महान वीर है। उसकी मृत्यु पर शोक करना उसकी परलोक प्राप्ति के लिए अच्छा नहीं है। युद्ध में वीर मृत्यु प्राप्त करने का सौभाग्य केवल भाग्यशालियों को ही प्राप्त होता है। सारा दोष दूर हो गया है। तुम जल्दी क्रिया-कर्म की तैयारी करो ।

ऎळुत्तच्छन् का विश्वास है कि शत्रु भाव से हो या मित्र भाव से – किसी भी रूप में ईश्वर का सम्पर्क प्राप्त होने वालों को मोक्ष प्राप्त होगा। अत: रावण

भी मोक्ष का अधिकारी है। ऎळुत्तच्छन् के प्रस्तुतीकरण की सविशेषता ने इस संदर्भ के काव्यात्मक मूल्य में चार-चाँद लगा दिया है। ऎळुत्तच्छन् का अध्यात्म रामयण देश-काल की सीमाओं के परे हैं तथा सबके लिए अनुकरणीय है। जब तक भक्ति मार्ग एवं मलयालमा भाषा जीवित रहेगी तब तक उनकी कीर्ति अक्षुण्ण रहेगी। मलयालम भाषा को एक सुनिश्चित, सुन्दर रूप प्रदान करके उन्होंने भाषा को ही नहीं अपने नाम को भी अमर बना दिया।

केरल वर्मा

ऎळुत्तच्छन के बाद राम कथात्मक काव्य रचना करने वालों में केरलवर्मा का नाम उल्लेखनीय है। उनकी दो मुख्य रचनाएँ हैं। वे हैं-'केरलवर्मा रामायणम्' और 'पाताल रामायणम'। केरलवर्मा रामायणम् 'वाल्मीकि रामायणम् किळिप्पाट्टु' नाम से भी जाना जाता है। केरलवर्मा ने 'पाताल रामायणम' में ऎळुत्तच्छन की कुछ पंक्तियों का ज्यों का त्यों प्रयोग किया है।

आट्ट कथा

आट्ट कथा के रूप में रचित कोट्टारक्करातंपुरान का 'रामनाट्टम' साहित्य कृति के रूप में तथा नाट्य कला के रूप में विशेष उल्लेखनीय है। रामकथा के आठ प्रसंगों को आठ दिनों में प्रस्तुत करने योग्य पद्य रूप दिया गया है।

कथकली

कथकली केरल की एक प्रमुख दृश्य कला है। रामनाट्टम इसका पूर्व रूप है। केरल का और एक दृश्य-कला रूप है 'तुल्लल्'। श्री तुंजन नंबियार इसके प्रणयिता हैं। उन्होंने छे प्रमुख रामकथाओं को लेकर 'तुल्लल्' काव्य की रचना की। इसमें 'सीता स्वयंवरम्' विशेष उल्लेखनीय है। आधुनिक युग में रामकाव्य के स्वरूप में काफी परिवर्तन आया है। मलयालम रामकाव्य परंपरा में सभी लक्षणों से युक्त महाकाव्य के रूप में अळहत् पद्मनाभ कुरूप द्वारा रचित 'श्री रामचन्द्र विलासम्' उल्लेखनीय है। आधुनिक युगीन मलयालम पद्य साहित्य में खण्ड काव्यों के रूप में भी रामकथा की प्रतिष्ठा हुई है। मलयालम के प्रसिद्ध कवित्रयों में से वळळत्तोळ् नारायण मेनोन की 'कांचन सीता' और आशान की 'चिंताविष्टयाय सिता' इस श्रेणी में आते हैं। वयलार रामवर्मा का 'मानिषादा', उण्णिकृष्णन नायर का 'लक्ष्मण विषादं' आदि भी रामकथा के आधार पर रचित हैं। आधुनिक युगीन रामकाव्य की एक प्रमुख विशेषता यह है कि कवि गणों ने पौराणिक पात्र श्री रामचन्द्र जी को मानवीय पृष्ठ भूमि पर उतारकर अनेक काव्यों की रचना की है। इनमें एन.वी.कृष्ण वारियर का 'चिन्ताग्रस्त श्री राम', डॉ. तेन्नकल नारायणन् का 'राम विलापं', ओ.एन.वी.कुरूप की 'सरयू नदी की ओर' आदि उल्लेखनीय है।

रामकथा के अनेक प्रसंगों का आधुनीकरण इन रचनाओं का उद्देश्य है। पाट्टु, चंपु, किळिप्पाट्टु, आट्ट कथा, महाकाव्य, खण्ड काव्य आदि अनेक विधाओं में मलयालम का राम काव्य फैला हुआ है। 15वीं शती में रचित तथा 1997 में केरल विश्वविद्यालय, तिरुवनन्तपुरम से प्रकाशित 'चित्र रामायाणम्' केरल की रामायण परंपरा की रचनाओं में एक विलक्षण कृति है। इसके लेखक का नाम अज्ञात है। लेकिन प्रस्तुत कृति से लेखक के बारे में कुछ सूचनाएँ मिलती हैं। इसके रचयिता केरल के आलप्पुळा जिले के कोळिमुक्कु नामक स्थान के निवासी थे। उन्होंने अपने गुरू की आज्ञा से प्रेरित होकर इसका अंकन किया है। इनके गुरू एक ब्राह्मण कवि थे।

सन् 1943 में ताड़पत्रों में अंकित 'चित्र रामायणम' मलयालम की दुर्लभ तथा अनुपम रामकाव्य कृति है। इसमें कुल 318 चित्र हैं। संपूर्ण रामायण कथा चित्रों द्वारा अंकित है। अज्ञात लेखक ने आवश्यक संदर्भों एवं संकेतों सहित रामायण की पंक्तियाँ भी चित्रों के साथ उद्धृत किया है। वाल्मीकि रामायण तथा रामानन्द विरचित मूल संस्कृत 'अध्यात्म रामायणम्' , चित्र रामायणम् की रचना की स्रोत सामग्री रही होगी।

देश कालातीत महत्वपूर्ण कृति रामायण की प्रासंगिकता सर्वविदित है। वैश्विकता के संदर्भ में मानव को मानव बनाये रखने के लिए और मानवीय मूल्यों की सुरक्षा के लिए रामायण के अनेक प्रसंग याने श्री रामचन्द्र जी का संपूर्ण जीवन चरित महती भूमिका निभाती है। स्त्री सशक्तीकर्तण, दलित सम्वेदना, पर्यावरण जैसे बहु चर्चित विषयों के दृष्टिकोण से रामकथा की प्रासंगिकता तर्क रहित है। हाल ही में याने जुलाई 2010में मलयालम में प्रकाशित वी.टी.जयदेवन की लंबी कविता 'हरित रामायणम्' इक्कीसवीं सदी की केन्द्रीय समस्या पर्यावरण पर आधारित है। इक्यावन भागों में आबद्ध यह कविता प्रकृति के विभिन्न दृश्यों के मनोरम चित्रों द्वारारामकथा प्रसंगों को जन हृदय में अंकित करती है। अंत में राम पहचानते हैं कि सीता ही सरयू है।ऐसी सरयू की ओर लौटे बिना राम अन्यत्र कहाँ जा सकते हैं? यह कविता प्रकृति और पुरुष के संबंध की दार्शनिक अनिवार्यता भी उद्घोषित करती है। 'हरित रामायणम्' वस्तुत: स्मृतियों की क्रमबद्धपरंपरा है। कविता की प्रारम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार है-

"स्मृतियों का हरा रंग है
अनगिनत हरीतिमा
अयोध्या के पार्श्ववर्ती जंगल में
गुरुजी के साथ।"

'हरित रामायण' की सीता एक ग्राम वधु के समान नैसर्गिक मन से प्रसन्न थी। उसके लिए जंगल जन्म गृह है। 'हरित रामायणम्' पर्यावरण से सम्बद्ध अंतर्राष्ट्रीय समस्य्या की ओर संकेत करती है।

रामकथा अनन्त है। देश, काल, सीमाओं से परे हैं। मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र का चरित्र मानव मात्र के लिए अनुकरणीय है। रामकथा में सभी मानवीय संबंधों का आदर्श रूप प्रस्तुत है। राम कथा की प्रासंगिकता यह है कि त्रेतायुग में अवतरित राम का चरित्र कलियुग के मानव के लिए भी अनुकरणीय है। यही कारण है कि आज भी साहित्य सृजन करने वाले रामकथा के माध्यम से मानव समुदाय के मार्गदर्शन का प्रयास करते हैं। विज्ञान के इस युग में भी लोग बड़े चाव से रामकथा का श्रवण, पाठन तथा दर्शन करके अपने आप को कृतकृत्य अनुभव करते हैं। जब तक मानव समाज रहेगा तब तक रामकथा भी रहेगी। मानव मात्र को प्रेरणा एवं मार्गदर्शन देते हुए मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कथा अमर रहेगी।

जय श्रीराम! जय रामकथा!

1. संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अध्यात्म रामायणम - किलिप्पाट्टु , लेखकतुंजत्तु रामानुजन एषुत्तच्छन, प्रकाशक-गुरुवायूर देवस्वं, प्रथम संस्करण -2002.
2. रामायण-मानवता का महाकाव्य (अध्ययन). लेखक-गुणवंतशाह अनुवादक-बंसीधर, प्रकाशक भारतीय ज्ञान पीठ, प्रथमसंस्करण-2012.
3. रामायण का काव्य मर्म , लेखक - विद्या निवास मिश्र. प्रकाशक-प्रभात प्रकाशन , प्रथम संस्करण-2001.
4. रामायण के पात्र ,लेखक- दिनकर जोशी , अनुवादक -त्रिवेणी प्रसादशुक्ल, प्रज्ञा शुक्ल, प्रकाशक -ग्रंथ अकादमी,प्रथम संस्करण-2011.
5. राम साहित्य उत्पत्ति एवं विकास,अनुवादक अभयदेव केरल साहित्य अकादमी 1978
6. कंबरूड़े रामायणम कथा गद्यम् कुँजिरामन मेनन , मंगलोदयम 1992.
7. कोच्चू सीता ,वल्लततोल नारायण मैनन डी.सी बुक्स 1922
8. मलयालम साहित्य-कालघट्टङलिलूटे-लेखक -एरुमेलि परमेश्वरन पिल्लै,प्रथम संस्करण -1996 प्रकाशक-करन्ट बुक्स,कोट्टयम
9. मलयालम-ताय्वेरुकल् संपादक-पी एम गिरीश,सी जी राजेन्द्र बाबू प्रथम संस्करण-2015 प्रकाशक-दक्षिणा,चेन्नै ।

भारत का सतत विकसन: ऋषीमुनियोंकी कार्यपरंपरा

वृषली देवानंद जोशी
(vrushalivavade.30@gmail.com)

रत्नाकर धौतपदां हिमालय किरीटिनिम्|
ब्रह्मराजर्षि रत्नाढ्यां वंदे भारत मातरम्||

भारतीय राष्ट्रसंघ को सनातन ऋषीमुनियों की अतिप्राचीन परंपरा प्राप्त हुई है| सतयुग से लेकर कलियुग तक अनगिनत ऋषीं इनमे ऋषींपत्नि भी शामिल है| इन ऋषींमुनियोंको जाती का बंधन नहीं था, वे अपने ज्ञान- कर्म-तपोबल सें ऋषीं, महर्षि, ब्रह्मर्षि कहलाते थे| उनकी उपासना केवल पूजा-पाठ नहीं थी, उनकी यज्ञशालाएँ संरक्षित प्रयोगशालाएँ थी| अपने सामर्थ्य को मंत्रशक्ती कि जोड लगाकर इन प्रयोगशालाओं में अस्त्रनिर्माण का कार्य होता था| आवश्यकता आनेपर यह अस्त्र सक्षम व्यक्ती को प्रदान कीं जाती थी| ऐसे अनेको ऋषींमुनी हमे रामायण में दिखाई देते हैं| उनके आविष्कारों पर विश्व को गर्व हैं|

1. प्रस्तावना

गंगा पापं शशी तापं दैन्यं कल्पतरुस्तथा|
पापं तापं च दैन्यं च घ्नन्ति सन्तो महायशा:||

पंक्तियों उपरोक्त से ऋषीमुनियों कि महानता दिखाई देती है| गंगा अवतरण के समय भागीरथ कहते है, आपमे (गंगा) स्नान करनेसे लोगों के पाप धूल जाएंगे पर जब संत-महात्मा आपके जल मे स्नान करेंगे तब वह लोगों का संचित पाप जल जाएगा| रामराज्य में राजदंड यतियों के हाथ मे था। क्योंकि राजदंड के ऊपर धर्म की सत्ता थी। जब राजा सम्राट होता था,यज्ञ होता था, आखिर मे वह राजदंड हाथ मे लेके त्रिवार घोषणा करता था- **अदण्ड्योऽस्मि** .... **अदण्ड्योऽस्मि.... अदण्ड्योऽस्मि....** । इसका मतलब मै सम्राट हुआ, मुझे कोई शासन नहीं कर सकता। इसके पश्चात कुलगुरु हाथ में धर्मदण्ड लेकर त्रिवार घोषणा करते थे- राजा **धर्म दण्ड्योऽसि**.... **धर्म दण्ड्योऽसि**..... **धर्म दण्ड्योऽसि**.....अर्थात् आप (राजा) सम्राट हुए है फिर भी आपको धर्मबाह्य आचरण करना मना है। कर्तव्यच्युत होनेपर आपको भी दंड देने का अधिकार धर्मदण्ड मे है। मतलब यह अधिकार ऋषीमुनियों को था ।

राजा – ऋषि – समाज ये समाज के अर्थात संस्कृति के आधारस्तंभ थे। राजा- ऋषि और समाज का पालनकर्ता, ऋषि- उत्तम पुरुष निर्मिती, समाज- गृहस्थाश्रमी रहकर मनुष्य निर्मित करना यह इनके मुख्य कर्म थे। राजा और समाज को सांधन का काम ऋषियों का था। राजा ऋषियों को जमीन देता था,उसपर समाज के लिए कार्य जैसे- अस्त्रज्ञान, शस्त्रज्ञान, खेती होते थे। यहाँ चारों वर्णों के बच्चे समानता से शिक्षा ग्रहण करते थे, अपने गुण, योग्यता व रुचि के अनुसार पढ़ते थे। समान शिक्षण होने की वजह से उच्च-नीच भाव नहीं था। राजा ऋषियों को जमीट देता था मगर समजोपयोगी कार्य होते थे और जमीन के ऊपर भी ऋषियों का अधिकार नहीं होता था। इस तरह से कर्म करके अलिप्त रहना ऋषि-मुनि सिखाते थे। और इसलिए राम ने रावण का विनाश किया.. मगर कैसे किया, यह सोचे तो श्रीराम के जनम से लेके नजारे सामने आएंगे – राम जन्म से पहले की नियोजन बैठक, रामजन्म, शिक्षण होने के बाद विश्वामित्र का आगमन, विवाह, इस विवाह मे राजा दशरथ पिता होने के बावजूत आखिर मे आते है, फिर कैकई का राजकारण, वनवास और वनवास मे भी श्रीराम को योग्य मार्गक्रमित होने के लिए ऋषियों की मदद, सबसे आखिर मे भी रावण का अंत करने के लिए विशिष्ट बाण देना यह सब कार्य ऋषीमुनियों की सहायता के बिना हो ही नहीं पाता। कार्यसिद्धि के बाद भी उसका ढिंढोरा न पीटने वाले ऋषियों के बारे मे थोड़ा जान लेते है .....

महर्षी वसिष्ठ

यथा वायूं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्व जन्तवा:।
तथा गृहस्थमाश्रित्य आश्रयन्ते सर्वाश्रमा: ।।

महर्षि वासिष्ठ को यह पंक्तीया जचती है। गृहस्थधर्मी होने के साथ-साथ वे राजा दशरथ के मंत्रीमंडल में मुख्य ऋषि है। अयोध्या में ऋषियों का मंत्रीमंडल था और इसके प्रमुख है महर्षि वसिष्ठ और वामदेव। इनका मुख्य कार्य है गुरूजनो व विद्वज्जनों का उचित मान रखना व राजा को दांभिक स्तुतिपाठकों से दूर रखना। राजा दशरथ अतताई स्वभाव के थे, उनके इस स्वभाव से कुछ आपत्तीयाँ आ सकती थी। उनपर अंकुश रखने का काम ये ऋषि करते थे। महर्षि वसिष्ठ राज कुलगुरू थे, वसिष्ठी नदी के तट पर उनका आश्रम था, नहीं नहीं वह एक भव्य गुरुकुला था। सांठ हजार शिष्य वहाँ

पढ़ने थे। उनका भरण-पोषण समाज करता था और शिक्षण वहाँ के गुरू । उच्च-नीचता , वर्ण/जाती, या आर्थिकता ऐसी कोई भी विषमता इनके आश्रम मे नहीं थी ।

न राज्यं न च राजासीत न दंडों न च दंडिक:।
स्वधर्मेण प्रजास्तावत् रक्षन्ती स्म परस्परम् ॥

वसिष्ठ के आश्रम मे नंदिनी और विश्वामित्र के बीच भीषण संहार हुआ। यह हम प्रतिकात्मक रूप से सोचे तो नन्दिनी मतलब प्रजा और विश्वामित्र तो राजा थे ही। इसके ऊपर वसिष्ठ ने भरपूर आत्मचिंतन किया क्योंकि हानी होने के बाद विश्वामित्र तपश्चर्या के लिए निकल गए थे, और परशुराम ने 21 बार पृथ्वी नि:क्षत्रिय की थी। राजा दशरथ थे मगर वृद्ध हो चुके थे, अयोध्या सुरक्षित थी मात्र उसके बाहर जनस्थान, पंचवटी और लंका में राक्षस तांडवनृत्य कर रहे थे। इस परिस्थीतीपर काबू पाने के लिए सुनियंत्रित राजसत्ता और तेजस्वी बाह्मण्य दोनों की आवश्यकता थी। फिर पुत्रकामेष्ठी यज्ञ करना निश्चित हुआ, विभांडक पुत्र ऋष्यश्रृंग के निर्देशन मे यज्ञ विधीवत संपन्न हुआ।

श्रीराम का शिक्षण पूर्ण होने के पश्चात उनको तीर्थाटन करने की ईच्छा हुई वापस आनेपर उनको बड़ा औदासीन्य आया। वे एकाएक निस्तेज हो गए। तब महर्षि वसिष्ठ ने उनको योगवासिष्ठ का उपदेश किया व निस्तेज हुए श्रीराम मे पुन: क्षात्रतेज जगाया। राम को दशरथ बहुत संभालते थे, पर इससे राक्षसो का समूल नाश नहीं हो पाता इसलिये विश्वामित्र से मिलकर उन्होंने राम को वन में भेजा और फिर सोलवे साल की उम्र मे श्रीराम ने ताड़का को मारकर पहला पराक्रम किया। राम को वनवास भेजना सब ऋषीमुनियों का कैकयी के साथ मिलकर राजकारण था। वनवास गमन के पश्यात जब माँ सीता को भी वल्कल वस्त्र दिए गए तब वशिष्ठ बीच में आकर कहते है। रामस्य-**"आत्मेयामिति रामस्य पालयीष्यन्ति मेदिनीम्"**।अर्थात् अर्धांगिनी के नाते सीता राज्यकारभार करेगी। वह अयोध्या की बहु के नाते राजसी पहराव में ही वनवास गमन करेगी। श्रीराम के वनवास गमन के पश्चात राजा दशरथ का मृत्यू, भरत और शतृघ्न अपने ननिहाल में इस परिस्थीती में उन्होंने अयोध्या की सुरक्षितता को देखनहुए भरत और शत्रुघ्न को केवल अयोध्या आओ इतना ही सन्देश देते हैं। ऐसे अलौकीक विद्वत्ता संपन्न, चारित्र्यवान, ज्ञानवान महर्षि वसिष्ठ को **"नमो वै ब्रह्मनिधये वसिष्ठाय नमो नम:"**

विश्वामित्र

विश्वामित्र गाधी महाराज के सुपुत्र थे, वे उनके पश्चात् कन्याकुब्ज़ देश के अधिपती बने। उनका मूल नाम विश्वरथ । शूर राजा थे, एक दिन युद्ध से लौटते समय वसिष्ठ मुनीं के आश्रम में आए। उन्होंने उनके हजारों सैनिकोंका अच्छे से आगत-स्वागत किया। यह सब व्यवस्था कामधेनू की पुत्री शबला के कारण संभव हुआ। यह जानने पर उन्होंने शबला की मांग की। वसिक ने नम्रतापूर्वक मना कर दिया। बहोत याचना करने पर भी ऋषि माने नहीं तो विश्वामित्र ने उन्हे युद्ध के लिए ललकारा, तीन बार वह परास्त हुए। और फिर उन्होंने अपने पुत्र को राज्य सौंपकर क्षात्रधर्म का परित्याग कर ब्रह्म तेज अपनाया –

"धिक् बलं क्षत्रिय बलं ब्रह्मतेजो बलं बलम् ।
एकेन ब्रह्म दण्डेन, सर्वास्त्राणी हतानि में"॥
(वा. रा.1.56.23)

विश्वामित्र का मतलब है साक्षात् प्रयत्नवाद ! उन्होने तप करना प्रारंभ किया, तब देवराज इन्द्र ने नपस्या भंग करने के लिये मेनका को भेजा, तपस्या भंग हुयी, शकुंतला का जन्म हुआ जिसका वाच्च मुनी ने लालन-पालन किया। फिर से तपस्या शुरु की, फिर इंद्र ने रंभा को भेजा-'त्वं तावद् कदली भव' शापवाणी से तपोभंग हुआ। फिर से तप आरंभ किया। अनेक साल तपश्चर्या करने के पश्चात उन्होंने गायत्री मंत्र की रचना की-

ॐ भू: भुव: स्व । ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम् ।
भर्गो देवस्य धीमही । धियो योन: प्रचोदयात् ॥

इस मंत्र के पश्चात् उनकी योग्यता बहुत बढ़ी, उन्होंने नए नए अनुसंधान किए।

श्रीराम को राजकुमार से युवराज बनाने का महत्वपूर्ण कार्य महर्षि विश्वामित्र ने किया। यज्ञ की रक्षा के लिए वह राम को ले जाने के लिए आते है, तब दशरथ मान्यता नही देते। तब महर्षि वसिष्ठ राजा दशरथ को समझाने है, की विश्वामित्र सारे राक्षसोंका विनाश करने में स्वत: सक्षम है, अगर राम उनके साथ जाते है तो राम का ही लाभ है इसलिए आप व्यर्थ चिन्ता न करे। और फिर उन्होंने श्रीराम को भोग्य समय आनेपर महादेव से प्राप्त और स्यानिर्मित सभी 54 दिव्यास्त्र श्रीराम को और लक्ष्मण को दीए ।

"न श्रमो न ज्वरो वा ते न रूपस्य विपर्यय:"।

और

"न च सुप्तं प्रमत्तं वा धाय धर्षयिष्यन्ति नैर्ऋता:।"
(वाल्मिकी रामायण 1. 22. 13 /14)

इन शस्त्रास्त्रों को भी परखकर दिया है, ताड़का के वध के पश्चात उनकी परिक्षा लेकर दिए है।। मतलब जिस कार्य के लिए श्रीराम को चुना है वह पात्र है भी या नहीं, और फिर उन्हे दिव्यास्त्र प्रदान किए है। विश्वामित्र के मार्गदर्शन से श्रीराम ने सोलवे साल में पहला पराक्रम किया।

श्रीराम का जन्म विशिष्ट कार्यसिध्दी हेतु हुआ था, उन्हें उनके कार्य में तथा जीवन में साथ देनेवाली पत्नी आवश्यक थी, जिसकी सोच, चरित्र, स्वभाव साधारण न हो। इसिलिए विश्वामित्र ने जनककन्या सीताजी से उनका विवाह निश्चित किया। सारा भ्रमण इन्होंने महर्षि विश्वामित्र के साथ पदयात्रासे संपन्न किया। वे जानने थे की अगर युवराज रथो में भ्रमण करेंगे तो वे अच्छी तरह से जनता का दुख नहीं समझ पाएंगे। इसतरह वें नगरोंमें से, वनों में से मार्गोंपर पैदल यात्रा किए, भिक्षा मांगकर खाना खाया व रात्रौ समय भूमी की शय्या व आकाश का कम्बल ओढ़ के रहे। इस प्रकार से **'विनाशाय च दुष्कृताम्** ऐमा युवराज निर्माण किया। अहिल्या का उद्धार करके गलती का प्रायश्चित्त भुगतने वालों का समाजने स्वीकार करना है, यह सीख भी राम के हातों विश्वामित्र ने सीखायी। ऐसे प्रयत्नपूर्वक ब्रह्मर्षि बने विश्वामित्र को हम वंदन करते है।

"विश्यामित्रोऽपि धर्मात्मा लब्ध्वा ब्रह्मण्यमुत्तमम्।
पूजयामास ब्रह्मर्षि, वसिष्ठं जपतां वरम् ॥"

महर्षी गौतम

सामाजिक न्याय को महानता से तराशने वाले महर्षि गौतम, षड्दर्शनों में से एक 'न्यायदर्शन' इस वेदांग के प्रवर्तक, मिथिला नगरीके कुलगुरू तथा तर्कशास्त्र के भी उनत्तम अभ्यासक थे। मिथिला नगरीके पास के उनके आश्रम को विश्वभर में मान्यता थी। बड़े बड़े विद्वान देश विदेश से यहाँ आते थे। महर्षि दिन रात चिंतन में मग्न रहते थे ।

श्रीराम ने सुबाहु और ताड़का को मारकर अपना पराक्रम सिद्ध किया, फिर मिथिलानगरी के मार्ग पर श्रीराम को अत्यंत रमणीय मात्र निर्जन आश्रम दिखाई देता है। पृच्छा करने पर यह गौतम मुनी का आश्रम था बताकर सारी हकीकत सुनाते है।' **अहिल्या** ब्रह्मा की पहिली स्त्री निर्मिती थी। अनुपम सुंदरताधारी इस स्त्री को गौतम को अर्पित किया जाता है। इन्द्र पहले से ही अहल्या को वासना की दृष्टि से देखते थे। । विकृत वासना मन में धारण किये वह आश्रम में प्रवेश करता है। गौतम का वेश धारण कर उनके कुटीयाँ में भी प्रवेश करता है। अहल्या, उसको तुरन्त पहचानती है, मात्र साथ देनी है। यहाँ परअगर सोचे की अहल्या इन्द्र को पहचान न सकी तो भी उसीकीही गलती है, क्योकी स्त्री को अपने और पराए मर्द को पहचानना आनाही चाहीए। और उनके समागम के पश्चात्- '**कृतार्थास्मि सुरश्रेष्ठ! गच्छ शिघ्रमित: प्रभो। आत्मानं मां च देवेश सर्वथा रक्ष गौतमात्'॥** अहल्या की इन पंक्तियों से उसका दुर्वर्तन ही सिद्ध होता है ।

वास्तविक **अहल्या ब्रह्मा की प्रथम स्त्री-निर्मिती** थी वह इन्द्र से भ्रष्ट हों गई। । शायद इसिलिए व्यभिचार आज भी जीवीत है। यहा गौतम इंद्र का वृषण छाँट देते हैं। अहल्या को भी-तू अकेले ही कई सालों तक इस वन में निवास करोगी। और दशरथकुमार राम इस घोर वन में पदार्पण, करेंगे तब तु पवित्र होगी ऐसा उ:शाप भी दिया है ।

(वाल्मीकि रामायण 1.48.29-32)

यहाँ हम सोचे तों समज आता है, उन्होंने अहिल्या के दुराचार पर उसका त्याग नहीं किया.. और दूसरा विवाह भी नही किया, उन्होने अहल्या को दूर रख के खुद को भी शासन दिया है । क्योंकी अहल्या के मन में परपुरुष का विचार आना मतलब वे पट्टी के नाते उसको न्याय नही दे पाए। और फिर प्रायश्चित होने पर श्रीराम के माध्यम से उन्हें फिर से समाजमान्यता दिलाई है । मतलब समाज बहिष्कृत व्यक्ती को अगर प्रायश्चित्त हो तो समाज ने भी उसका पुनः स्वीकार करना है ।

महर्षी अगस्ती

महर्षि अगस्ति को कुंभोद्भव भी संबोधित किया जाता है। कुंभोद्भव का अर्थ कुम्भ से उत्पन्न हुए, मात्र अभ्यास के पश्चात पता चलता है की उन्होंने अगस्त्य संहिता लिखी है। विद्युत ऊर्जा निर्मिती के प्रकार ऋषि अगस्ति के कालखंड मे यानि 14^{th}AD मे ही संशोधित हुए है। उसके लिए उन्होंने शत-शत विद्युत घाटों का उपयोग किए, प्रयोग किए अत: वे कुंभोंद्भव अगस्त्य संबोधित होने लगे ।

संस्थाप्य मृण्मये पात्रे ताम्रपत्रं सुसंस्कृतम् ।
छादयेच्छिखिग्रिवेन चारद्राभि: काष्ठपांसुभी:।।
दस्तलोष्टोनिधातव्य: पारदाच्छादितस्तत:।
संयोगाज्जायते तेजो मित्रवरूणसंज्ञितम् ॥

अगस्त्य संहिता

यहाँ शिखिग्रीव का अर्थ मोर की गर्दन नहीं है उसके वर्ण का **'मोरचूद'** अर्थात **कॉपर सल्फेट** है । और भी-

अनेन जलभंगोस्ती प्राणोदानेषु वायुषु ।
एवं शतानां कुंभानां संयोगो कार्यकृत्स्मृत:॥
अगस्त्य संहिता

अगस्ती कहते है सौ (विद्युत) घाटों के शक्तिका पानीपर प्रयोग किया जानेपर पानी का रूप बदलके उसका प्राणवायू और उदानवायू (हायड्रोजन) में परावर्तन होता है। और सुदानबाधू प्रतियधक वस्त्र में बंदिस्त करनेचर बसक) उपयोग विज्ञानविधाके लिए होता है।

वायुबन्धकवस्त्रेण निबध्दो यान मस्तके।

अगस्त्यसं हिता शिक्षणशास्त्र सार

अगस्त्यसंहितामे कितने प्रकार से विद्युत उर्जा निर्मिती होती है, यह नामों के साथ बताया है। इसका अभ्यास करके श्री रावसाहब वझे ने उनके प्रकार व नाम बताए है।

1. तड़ित- रेशमी वस्त्रों के घर्षण से
2. सौदामिनी- रत्नों के घर्षण से
3. विद्युतु - बादलों से निर्मित
4. शतकुंभी - सौ घंटों के घर्षण से
5. हृदनी - साठविलेली?
6. अशनि - चुंबकीय दंडोके सहाय्यसे

अगस्तिसंहिता में इलेक्ट्रोप्लेटींग का उपयोग होता था। उससे विद्युतघट के सहाय्य से ताम्र या सोना और चांदी का पानी देने की पद्धत विकसित की अत: उनका उल्लेख 'कुभोद्भव' (बॅटरी बॉर्न) ऐसा करते है। ये है विज्ञान की प्रगती... संशोधक हमारे कुमोद्भव अगस्त्य! यह है हमारी दिव्य भारतीय वैज्ञानिक परंपरा..

वाल्मिकी

"सदूषणामपी निर्दोषा सखरापि च कोमला ।
नमस्तस्मै कृता येन रम्या रामायणी कथा॥"
-पंक से पंकज अर्थात् वाल्मिकी कथामृत

अर्थात्, जिसमें दूषण राक्षस का वर्णन है किन्तु स्वयं साहीत्य के दोषोंसे रहीत है, जिसमें खर नामक राक्षस का वर्णन है, किन्तु जो अत्यंत कोमल है। 'रामायण' की इस प्रकार की सुंदर कथा की रचना जिस वाल्मिकी ने की है, में उसे नमन करता हूँ।

महर्षी कश्यप और अदिति के नवम पुत्र वरुण से इनका जन्म हुआ, इसके बावजूद अगर संग बिगड़ गया तों क्या होता है, इसका उदाहरण स्वयं महर्षि वाल्मीकि है। आर्थिक अव्यवस्था के कारण उनका डाकुओं से संग हों जाता है,मात्र योग्य समयपर सप्तर्षि था नारद मुनी की कृपा से वे पुन: योग्य राह पर आते है। रामायण लेखन से पहले उनके मन मे शंका उत्पन्न हुई, उनका पूर्व जीवन चोरीं-चपेटीं मे व्यतीत हुआ है, अब इससे अवकाश लिया है मगर फिर भी उनसे लिखित ग्रंथ समजमान्य होगा? ब्रह्मा उनके प्रश्न का समाधान करते है, आप इसके पूर्व दो जनम मे भी निषिद्ध कर्म किए थे। उसीका दंड आपने इस जनम मे चुकाया है । मात्र अब सन्मार्ग पर आनेसे वेदोने भी ऐसे व्यक्ति को संस्कारित करनेकी आज्ञा की है ।

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः।
उतागश्च क्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः॥
-अथर्ववेद 4.3.1

और फिर महर्षि वाल्मीकि ने रामायण लेखन को प्रारंभ किया। वे लेखन को अभी प्रारंभ करेंगे ही, इतनेमे वार्ता आती है की शंख मुनी अपने भी को लेकर उनसे मिलने आए है.. यह सुनते ही उनको एकाएक सदमा लगा, क्योंकि शंख मुनी ने ही तों उनको पिछले जनम मे जब वे व्याध थे, उनको सही मार्ग पर लाया था। शंख मुनी के भी लिखित मुनी के हाथ दंड स्वरूप काट दिए गए थे और उनका पुन: रोपण करवाने के लिए वे दोनों ऋषि वाल्मीकि के आश्रम मे आए थे ।

चरितं हि वेरिवाच्छेदि पर्णमाजा खेलस्य परितकृम्यायां।
सद्यो जडघामार्यासि विश्वलायै धने हिते सर्तवे प्रत्यधत्तम्॥
ऋग्वेद 1.116.15

सप्तर्षियों ने दिशा देने के बाद वाल्मीकि ने तीर्थाटन किए, बड़े बड़े विद्वानों से विद्या ग्रहण की, शास्त्रचर्चा की उसके बाद वे एक निर्जन वन मे तपस्याधीन हुए। लग-भग तेरा साल एक ही स्थान पर समाधि लगाए बैठे रहने के कारण उनके शरीर पर दीमकों ने घर बना लिया। दीमकों ने बनाए टीले को वाल्मिक कहते है। एक दिन तमसापूर की राजकुमारी मृदा अभ्यास के लिए वन में टहल रही थी, चिकनी मिट्टी, बलुई मिट्टी, लाल मिट्टी, दोमट मिट्टी इ. मे किस प्रकार हम अनाज उत्पन्न कर सकते है इसका परिक्षण चल रहा था। वह टहलते हुए समाधी(बॉबी) के पास आ गई पसैने कोकी यो बिद्रों में से सद्भून प्रकाश आ की उस बॉबी की यो रहा है, उसे जिकामावर) उसने पास पडी मकड़ी उठाकर विना सोन्चे उस छिद्रों में अल दी घुसेड दी। उसने देम्वा ऐसा करते हैंमैं जहाँ से प्रकाश भा-रखा था, खन की धारा बहने लगी और महली वाल्मिकी बॉबी से क दर्द से कराहते हुए

कह खडे हुरी नयनतारी की जिज्ञासा ने ऋषि की आंखे फोड़ दी थी। अक्सने अपने किए की क्षमायाचना करी, वाल्मिकीने उसे माफ कर दिया। उस लकीन उसने प्रण लिया की मेरी वजह से अनुरण आ आप दूष्टीहीन हुए है तो मैं मेरी आँखे निकालकर आपको दूंगी तब तक अन्न-जल प्राशन नहीं करूंगी। उसने अपना प्रण पूरा किया सम्मकी कर्म पूरा हुआ। फिर वाल्मिकी ने संकल्प किया, की में प्रयोगशाला में आँखों का निर्माण कर नयनतारा की पुला दूष्टी इंगा तबकतक अनुसंधान करता रहूँगा।

और फिर प्रयोगशाला में किसी भी जीप की प्रतिमूर्ती (क्लोन) बनाने में सिद्धता हासिल कर ली गई। इसी सिन्हांत पर **द्रव्यशरीरं नरकस्वर्णमपार अम्ल** (डीआक्सीराइबो न्यूक्लिक अम्ल) से प्रयोगशाला में आँखे विकसित करने में भी सफलता मिल गई। दुनिया में केवल महर्षि वाल्मिकी की प्रयोगशाला ही ऐसी थी जिसमे सबसे पहले जीव की प्रतिमूर्ती (क्लोन) और आँखे विकसित करने में सफलता पाई थी। ऋग्वेद में भी मृत व्यक्ती की आँखे निकालकर चक्षुहीन को लगाने का वर्णन है।

"तस्मा अक्षी ना सत्या विचक्ष आधत्तं दस्ताभिषजावनर्वन्।"

ऋग्वेद 1.116.16

सीतात्याग के पश्यात् सीता महर्षि वाल्मिकी के आश्रम में वनदेवी बनकर रहने लगी। उसने लव नामक पुत्र को जन्म दिया। लव दो मास का हो गया तब श्राद्ध मास शुरू हो गया। सिताजी ने अपने श्वसुर स्वर्गीय महाराज दशरथजी का विधीवत् श्राद्ध करने का संकल्प किया वह सारी तैय्यारी करके लव को महर्षी वाल्मिकी के पास छोड़ तमसा नदी के तट पर चल पड़ी, किन्तु उसने सोचा की उनके पोते के हातों तर्पण कराएगी। वापस आई तो वाल्मिकी की आँखे बंद थी उसने चुपचाप लव को उठाया और चली गई , आँख खुलने पर महर्षि ने देखा की लव नहीं है, वे बड़े चिंतित हुए और सीधे जीव विज्ञान अनुसंधान शाला में पहुचे, वहा उनका शिष्य भारद्वाज कुछ प्रयोग कर रहा था। उन्होंने आतेही शिष्य को लव का रक्तबिन्दु लाने का आदेश दिया, उनको लव की प्रतिमूर्ती बनानी थी, पर उसे बननेमे 270 दिन की आवश्यकता थी, मात्र वे महर्षि वाल्मीकि थे, दो घंटे में उनको यह कार्य करना था। उन्होंने भारद्वाज को कुश घास की लुगदी तैयार करने को कहा और, परखनली शिशु (टेस्ट ट्युब बेबी) की जो रासायनिक प्रक्रीया 270 दिनों मे होनी थी, यंत्रो के माध्यम में एक घंटे में संपन्न करा दी गयी। उसके बाद महर्षि ने आत्मा का आवाहन किया तों लव की प्रतिमूर्ति में आत्मा विराजमान हुई और उनके अनुसंधानशाला में नन्हा परखनली शिशु रोने लगा। महर्षि वाल्मिकी ने अपनी सर्वश्रेष्ठ बुद्धि का परिचय देकर असंभव को संभव कर दिखाया था इसलिए उनको देवोद्वारा ब्रह्मऋषि के पद पर गौरवान्वित किया गया।

मनसैव ब्रह्मा ब्रह्मत्वं करोति।

(गो 1.211)

और भी अनेको ऋषीं जैसे **महर्षी भारद्वाज** इन्होने **विमानशास्त्र** का अनुसंधान किया। विमान शास्त्र ग्रंथ पर बोधायन ने टीका लिखी हैं|

निर्मथ्य तद्वेदाम्बुद्धी भरद्वाजो महामुनी।
नवनीतं समुद्धृत्य यंत्र सर्वस्व रूपकम ||
प्रायच्छत् सर्व लोकानामीप्सितार्थ फलप्रदम्।

उनके विमानशास्त्र में कुल 32 प्रकार की विमान रहस्य बताई गई है। इन विमानो में एक स्थान से दुसरे स्थान पर जाने वाले, एक देश से दुसरे देश मे जाने वाले और एक ग्रह से दुसरे ग्रह पर जाने वाले विमान-यान का भी वर्णन है| शत्रु का आक्रमण होने पर तुरंत मुडनें वाला विमान, शत्रू से घिर जाने के पश्चात् विशिष्ट धुवां छोडकर अदृश्य होने वाला विमान, हमारे विमान मे बैठकर शत्रु के विमान के अंदर का दृश्य दिखाने वाले विमान ऐसे कुल 31 यंत्र, उनका निश्चित स्थान व उनका निश्चित कार्य इसका वर्णन है।

दशरथ राजा के जमाई **ऋष्यश्रृंग** पुत्रकामेष्ठी यज्ञ के लिये आमंत्रीत किया था। यज्ञ की संपन्नता के बाद राजा दशरथ को आशिर्वाद देते हुए भविष्यवाणी की- युगंधर पुरुषोत्तम के अवतार के लिए दशरथ के माध्यम से काल ही प्रयत्नशील था। संकल्प बताया व आशिर्वाद दिया- ***कुल चलानेवाले 4 पुत्र तुझे होंगे***। आगे उनकी बात सच हुई।

महर्षि सुतीक्ष्ण...वनवास गमन के पश्चात उनके आश्रम में आने के बाद श्रीराम को छोटे-मोटे ऋषिमुनीओं की तकलीफ समझ आयी। क्योंकी जैसे जैसे राम आगे बढ़ने गए, राक्षसोने नादान ऋषिओं को सुनाना शुरू किया। ये ऋषिमुनी समाजव्यवस्था, शिक्षणव्यवस्था संभाल रहे थे और वे ही असुरक्षीत थे। और फिर श्रीराम उनके आश्रम में प्रतिज्ञा करते है की ***जब तक राक्षसों का समूल नाश नहीं***

अत्री और अनसूया दोनों ही ऋषि दम्पती इन्होने संपूर्ण वनवास में **गृहस्थधर्म** का पालन कैसे करना है ? इसकी महत्वपूर्ण शिक्षा दी। क्योकी दोनों ही साथ में रहनेवाले थे। तो एक दूसरे को अनुरूप कैसे रहना है? तथा एक दूसरे का खयाल कैसे रखना है? इसका मार्गदर्शन किया, इसलिये राम-सीता का वनवास भी अच्छी तरह से कट गया।

इसप्रकार भारत को निर्लेप जीवन वीनेवाले अधिमुनी प्राप्त हुए है अतः भारत का सतत विकसन हो रहा है।

2. संदर्भ ग्रंथ

1. रामेण रामदासेन लिखितं वाल्मीकि रामयणम्।

2. पंक से पंकज , अर्थात श्री वाल्मीकि कथमृत
3. वास्तव रामायण , डॉ. प. वि. वर्तक
4. वाल्मिकीय रामायण , गिताप्रेस गोरखपुर
5. श्री वाल्मीकि रामायण दर्शन
6. विश्वामित्र , सुधाकर शुक्ल
7. श्रीराम-कथामृत, स्वामी गोविंददेव गिरी(आचार्य किशोर व्यास)

महाकाव्य संकल्पना और वाल्मीकि रामायण: एक शोधपरक अध्ययन

शरद कुबेर
(sharadkuber.satara@gmail.com)

महाकाव्य संस्कृत साहित्य की एक प्रमुख एवं गौरवशाली विधा है। यह शोध पत्र 'महाकाव्य' की सैद्धांतिक संकल्पना और वाल्मीकि कृत रामायण के यथार्थ के बीच के अंतर्संबंधों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य यह स्थापित करना है कि किस प्रकार वाल्मीकि रामायण ने परवर्ती संस्कृत काव्यशास्त्र में प्रतिपादित महाकाव्य के लक्षणों को न केवल आदर्श रूप प्रदान किया, बल्कि उनमें कई नवीन आयाम भी जोड़े। शोध में दृष्टिकोण के रूप में ग्रंथावलोकन एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। आचार्यों द्वारा निर्धारित महाकाव्य के लक्षणों, जैसे- सर्गबद्ध रचना, दिव्य एवं मानवीय चरित्रों का समन्वय, प्रकरण की विशालता, नायक की महानता, अलंकारों की सहज योजना आदि का वाल्मीकि रामायण के संदर्भ में सूक्ष्म अध्ययन किया गया है। निष्कर्षतः, यह पत्र इस तथ्य को रेखांकित करता है कि वाल्मीकि रामायण केवल एक साहित्यिक ग्रंथ मात्र नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति, दर्शन, समाजशास्त्र और काव्यशास्त्र का एक जीवंत महाकाव्य है, जिसने भारतीय मानस को सहस्राब्दियों से प्रभावित किया है।

1. प्राक्कथन

मेरे पूर्व संचित पुण्य एवं श्री गुरु की कृपा से, मुझे विश्वविख्यात हस्तलिखन शोध संस्था, धुले स्थित श्री समर्थ वाग्देवता मंदिर में पचास वर्षों तक समर्थ साहित्य का सान्निध्य प्राप्त हुआ। समर्थ हृदय शंकर श्रीकृष्ण देव ने आजीवन संपूर्ण भारत के श्री समर्थ के ११०० मठों में उपलब्ध हस्तलिखितों की खोज करके, उनका एक सुव्यवस्थित एवं शास्त्रीय मानदंडों पर आधारित संग्रह तैयार किया और यह समस्त संग्रह अध्येताओं के लिए श्री समर्थ वाग्देवता मंदिर संस्थान में सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रूप से सुरक्षित रखा गया है।

यहाँ उपलब्ध 'रामेण रामदासेन लिखितम् वाल्मिकि रामायणम्' नामक हस्तलिखित पोथी, निज़ाम के राज्य में स्थित बीड के श्री समर्थ परंपरा के गिरीधर स्वामी के मठ से प्राप्त हुई है। यह पोथी श्री समर्थ रामदास स्वामी द्वारा शक संवत् १५४४ (ईस्वी सन् १६२२) में, अपनी तपश्चर्या के काल के दौरान, टाकळी (नासिक) में उनके १४ वें वर्ष की आयु में स्वहस्ते लिखित वाल्मीकि रामायण है।

कौस्तुभ मणि के समान महत्व रखने वाले श्री समर्थ वाग्देवता मंदिर में स्थित इस हस्तलिखित के अध्ययन, शोध एवं प्रकाशन परियोजना की शुरुआत सन् २०१० ईस्वी में, मंदिर के ७५वें वर्ष में हुई। इस दीर्घकालिक और चुनौतीपूर्ण यात्रा के दौरान अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, जिनमें वित्तीय संसाधनों की कमी और विशेष रूप से, मेरे लिए एक गैर-संस्कृतज्ञ होने के बावजूद संस्कृत के पंडितों के साथ कार्य करने की चुनौती प्रमुख थी। किंतु, दयासिंधु श्री समर्थ की कृपा से अनुप्राणित होकर, २०१५ से २०२३ की अवधि में क्रमशः सभी आठों खंड (बालकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड, अरण्यकाण्ड, द्विखंडीत युद्धकाण्ड एवं अंततः उत्तरकाण्ड) प्रकाश में आए। दिनांक ५ अप्रैल, २०२३ को माननीय सरसंघचालक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कर-कमलों द्वारा समस्त खंडों का राष्ट्रार्पण एक ऐतिहासिक क्षण था।

यह समस्त उपलब्धि इसलिए संभव हो सकी क्योंकि यह विषय रामायण के चिंतन से संबंधित है। यह काल की सभी सीमाओं को अतिक्रमित करके संपूर्ण विश्व के मानव-हृदय पर अपना आधिपत्य स्थापित करने वाले एक महाकाव्य का अध्ययन है। यह महर्षि वाल्मीकि की उच्चकोटि की प्रतिभा को ब्रह्मदेव के आशीर्वाद तथा नारद मुनि के प्राक्कथन के फलस्वरूप, एक शोकांतिका से उद्भूत छंदोबद्ध रचना का श्लोकबद्ध अविष्कार है। वैदिक काल से ही काव्य में 'सत्यं, शिवं, सुंदरम्' का उत्कृष्ट समन्वय एक आदर्श के रूप में मान्य रहा है, जो आनंदप्रद भी है और महाकाव्य में यह आदर्श विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है।

2. प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य के इतिहास में महाकाव्य का स्थान अत्यंत ही उच्च और महत्त्वपूर्ण है। यह मानवीय अनुभूतियों, सामाजिक मूल्यों, ऐतिहासिक घटनाओं और दार्शनिक चिंतन को कलात्मक एवं शिल्पगत उत्कृष्टता के साथ प्रस्तुत करने वाली विधा है। संस्कृत काव्यशास्त्र में आचार्य भामह, दंडी, विश्वनाथ आदि ने महाकाव्य के जो लक्षण निर्धारित किए हैं, वे परवर्ती काल के अधिकांश महाकाव्यों के लिए मानदंड बने।

किंतु, इन सभी महाकाव्यों के मूल में 'आदिकवि' महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित 'रामायण' है। रामायण को 'आदिकाव्य' और श्रीराम को 'आदिनायक' की संज्ञा दी गई है। वाल्मीकि से पूर्व इस प्रकार के विशाल, मार्मिक और शिल्पविधि से परिपूर्ण काव्य का उदाहरण उपलब्ध नहीं है। अतः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि वाल्मीकि रामायण ने ही महाकाव्य विधा की नींव रखी और उसे एक ठोस स्वरूप प्रदान किया।

इस शोध पत्र का केंद्रीय विषय यह पड़ताल करना है कि किस प्रकार वाल्मीकि रामायण, सैद्धांतिक रूप से परिभाषित 'महाकाव्य' की अवधारणा को पूर्णतः चरितार्थ करती है और साथ ही उससे कहीं आगे भी जाती है। क्या वाल्मीकि ने केवल एक काव्यात्मक कथा लिखी थी या उन्होंने एक ऐसी सर्जनात्मक ऊर्जा को जन्म दिया था जिसने एक सम्पूर्ण सभ्यता के नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदर्शों को परिभाषित किया? यह प्रश्न इस शोध की मूल प्रेरणा है।

3. अनुसंधान की समस्या

हालाँकि वाल्मीकि रामायण को सार्वभौमिक रूप से प्रथम महाकाव्य माना जाता है, किंतु एक शोधपरक प्रश्न यह उठता है कि क्या परवर्ती काव्यशास्त्रीय लक्षण वास्तव में रामायण के काव्य-सौंदर्य और उसकी संरचनात्मक जटिलता को पूर्णतः समेट पाते हैं? क्या महाकाव्य की परिभाषा को केवल तकनीकी लक्षणों तक सीमित करके देखना रामायण जैसे ग्रंथ की विशालता के साथ न्याय कर पाएगा? इस शोध का लक्ष्य इसी अंतराल का विश्लेषण करना है।

3.1 अनुसंधान उद्देश्य

1. संस्कृत काव्यशास्त्र में वर्णित महाकाव्य के सैद्धांतिक लक्षणों का संकलन एवं विवेचन करना।
2. वाल्मीकि रामायण का विश्लेषण करते हुए यह सिद्ध करना कि यह ग्रंथ उक्त लक्षणों पर किस सीमा तक खरा उतरता है।
3. उन पहलुओं को चिन्हित करना जिनमें रामायण महाकाव्य की परंपरागत परिभाषा से आगे जाकर एक 'धर्मग्रंथ', 'इतिहास' और 'जीवन-दर्शन' का दर्जा प्राप्त करती है।
4. वाल्मीकि रामायण के महाकाव्यत्व में निहित उसकी सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

3.2 अनुसंधान पद्धति

यह शोध मुख्यतः **गुणात्मक अनुसंधान (Qualitative Research)** पर आधारित है। इसमें निम्नलिखित पद्धतियों का उपयोग किया गया है:

1. **ग्रंथावलोकन विधि (Textual Review Method):** इस शोध के लिए प्राथमिक स्रोत के रूप में 'रामेण रामदासेन लिखितम् वाल्मिकि रामायणम्' के हस्तलिखित एवं इसके संशोधित प्रकाशनों का अध्ययन किया गया है। साथ ही, द्वितीयक स्रोतों के रूप में आचार्य दंडी का 'काव्यादर्श', विश्वनाथ का 'साहित्यदर्पण' तथा रामायण पर लिखित आधुनिक विद्वानों की समीक्षात्मक कृतियों का अवलोकन किया गया है।
2. **विश्लेषणात्मक पद्धति (Analytical Method):** प्राप्त सामग्री का तार्किक एवं गहन विश्लेषण करते हुए, महाकाव्य के सिद्धांत और रामायण के व्यवहार के बीच तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।
3. **व्याख्यात्मक पद्धति (Hermeneutic Method):** रामायण के श्लोकों, प्रसंगों और चरित्र-चित्रण की व्याख्या करते हुए उनमें निहित काव्यात्मक, नैतिक और दार्शनिक अर्थों को उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है।

4. विवेचन एवं विश्लेषण (Discussion and Analysis)

4.1 महाकाव्य की सैद्धांतिक संकल्पना एवं लक्षण

भारतीय काव्यशास्त्र में महाकाव्य के विशिष्ट लक्षण निर्धारित किए गए हैं। वाल्मीकि रामायण के संदर्भ में उपलब्ध पाठ के अनुसार महाकाव्य के चार प्रमुख मूल तत्व माने जा सकते हैं: कथा-वस्तु (कथानक), पात्र (नायक), प्रयोजन (उद्देश्य) और शैली (रचना-विधान)।

4.2 वाल्मीकि रामायण: सैद्धांतिक लक्षणों के परिप्रेक्ष्य में

4.2.1 कथा-वस्तु (कथानक)

- **विशालता एवं सर्गबद्धता:** महाकाव्य का कथानक विशाल और व्यापक जीवन चित्रण करने वाला होता है। 'सर्गबंधो महाकाव्यम्' – अर्थात सर्गों में बँधी हुई रचना ही महाकाव्य है। वाल्मीकि रामायण सात कांडों (बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुन्दर, लंका, उत्तर) और लगभग ५०० सर्गों (कुछ संस्करणों में ६४०) में विभक्त है, जो आवश्यक आठ सर्गों की शर्त से कहीं अधिक है। इसमें कुल २४,००० श्लोक हैं, इसीलिए इसे 'चतुर्विंशति साहस्र संहिता' भी कहते हैं। यह एक सुसूत्रित, सुगठित वास्तुशिल्प है जिसमें प्रभु श्रीराम जैसे व्यक्तित्व सर्वत्र विचरण करते हैं।
- **ऐतिहासिकता:** महाकाव्य की कथा शुद्ध ऐतिहासिक होनी चाहिए, न कि काल्पनिक। रामकथा वाल्मीकि रामायण का आत्मा है और इसे शुद्ध इतिहास माना गया है। इसमें इक्ष्वाकु कुल की बयालीस पीढ़ियों का वृत्तांत, निमि का वंश-वृक्ष, वानर कुल का विस्तार, राक्षस कुल की उत्पत्ति, ऋषि-मुनियों का इतिहास, सृष्टि निर्मिति के टप्पे, नगरों के वास्तुशिल्प आदि अनेक तथ्य अंतर्भूत हैं।
- **व्यापक जीवन चित्रण:** कथा का वास्तु-पटल विशाल होना चाहिए। रामायण में अयोध्या का राजसी जीवन, मिथिला की संस्कृति, दंडकारण्य का वनवास, किष्किंधा की वानर-सभ्यता और लंका के ऐश्वर्य का विस्तृत भौगोलिक और सामाजिक चित्रण उपलब्ध है।

4.2.2 पात्र (नायक)

- **नायक के गुण:** महाकाव्य का नायक इतिहास-प्रसिद्ध, उदात्त, महान, उच्चतम चरित्र वाला, धीरोदात्त और आदर्श गुण-संपन्न होना चाहिए। वह वैभवशाली, भद्र, कुलीन और यशस्वी हो। भगवान श्री राम का चरित्र त्याग, मर्यादा, वीरता और धर्मपरायणता का प्रतीक है, जो इन सभी लक्षणों को पूर्ण करता है।
- **व्यापक चित्रण:** नायक का संपूर्ण जीवन-चित्रण होना चाहिए। वाल्मीकि रामायण में केवल नायक ही नहीं, बल्कि कथा में गुंथे हुए समस्त पात्र एक से बढ़कर एक भारदस्त व्यक्तित्व के धनी हैं और उनकी भूमिका किसी भी दृष्टि से गौण नहीं है।

4.2.3 प्रयोजन (उद्देश्य)

- **महाकाव्य का स्वरूप:** महाकाव्य निर्दोष शब्दार्थ, समयोचित अलंकारों से समृद्ध और सद्वस्तु-चिंतन कराने वाला होता है।
- **पंच संधि:** महाकाव्य में विचार-विमर्श, दूत, प्रयाण, युद्ध और नायक का अभ्युदय – इन पंच संधियों का होना आवश्यक है। वाल्मीकि रामायण में इन सभी संधियों का स्पष्ट प्रत्यय मिलता है।
- **चतुर्वर्ग फलप्राप्ति:** महाकाव्य का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष (चतुर्वर्ग) में से कम से कम एक की सांगोपांग प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करना होता है। रामायण का मुख्य उद्देश्य धर्म की स्थापना, कर्तव्य का पालन और मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग दिखाना है। यह आत्मचिंतन की ओर भी प्रेरित करती है।

4.2.4 शैली (रचना-विधान)

- **रस की प्रधानता:** रचना नवरसात्मक होनी चाहिए। वाल्मीकि रामायण में सभी रसों का समावेश है, किंतु जन-स्वभाव और प्रसंगानुसार करुण एवं शृंगार रस का प्रभाव अधिक स्थायी है।
- **छंद और भाषा:** रामायण में मुख्य रूप से अनुष्टुप छंद (श्लोक) का प्रयोग किया गया है। इसकी शैली प्रसन्नता देने वाली और प्रासादिक है।
- **अन्य लक्षण:** महाकाव्य का आरंभ नमन से होना चाहिए। सज्जनों के गुणों का वर्णन और दुर्जनों की निंदा होनी चाहिए, जिसका वाल्मीकि रामायण में स्पष्टतया पालन हुआ है। सर्ग के अंत में आगे की कथा का सूत्रोवाच होता है। जीवन के विविध अंगों का समृद्ध चित्रण है। कथानक धारावाहिक एवं मार्मिक है। यद्यपि युद्ध जैसे प्रसंग हैं, तथापि नायक का वध नहीं होता। रामायण का अंत राम के अभ्युदय और आदर्श रामराज्य की स्थापना के साथ होता है, जो एक आदर्श समापन है।

4.3 वाल्मीकि रामायण का आदि-काव्यत्व

वाल्मीकि रामायण को 'आदिकाव्य' इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह लौकिक संस्कृत साहित्य की प्रथम महाकाव्य रचना है। महाकाव्य की उत्पत्ति ही एक शोकांतिका (क्रौंच पक्षी के जोड़े का वियोग) से हुई, जब महर्षि वाल्मीकि के मुख से अनायास ही अनुष्टुप छंद में पहला श्लोक फूटा:

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

(हे निषाद, तुझे चिरकाल तक प्रतिष्ठा न मिले, क्योंकि तूने काममोहित एक क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक को मार डाला है।)

इस 'श्लोक' के रूप में अभिव्यक्त इस घटना ने छंदोबद्ध रचना को जन्म दिया और काव्यशास्त्र के लिए एक मानक स्थापित किया। यहीं से काव्य की औपचारिक शुरुआत मानी जाती है।

4.4 परंपरागत लक्षणों से परे: रामायण का विशिष्ट महाकाव्यत्व

वाल्मीकि रामायण की महानता केवल तकनीकी लक्षणों को पूरा करने में नहीं, बल्कि उससे आगे बढ़कर है:

- **आदर्शों का प्रतिपादन:** यह ग्रंथ मर्यादा पुरुषोत्तम राम, आदर्श पत्नी सीता, आदर्श भाई लक्ष्मण और आदर्श भक्त हनुमान के चरित्रों के माध्यम से मानव जीवन के लिए आदर्श प्रस्तुत करता है। यह 'धर्म' की स्थापना का महाकाव्य है।
- **सामाजिक दर्शन:** इसमें राजधर्म, पितृधर्म, पत्नीधर्म, मित्रधर्म आदि का विस्तृत विवेचन है।
- **मनोवैज्ञानिक गहराई:** रामायण के पात्र जटिल मनोभावों से युक्त हैं। कैकेयी का अंधा प्रेम, रावण का अहंकार और ज्ञान, सीता की आंतरिक पीड़ा – ये सभी चित्रण काव्य को मानवीय अनुभूति की गहराई प्रदान करते हैं।
- **सांस्कृतिक एकता का प्रतीक:** रामायण ने समस्त भारतीय उपमहाद्वीप को एक सांस्कृतिक सूत्र में बाँधने का कार्य किया है। रामकथा आज भी अनेकानेक देशों के कोने-कोने में विविध रूपों में जीवित है।
- **सृजनशील साहित्य का बीज:** वाल्मीकि रामायण भविष्य में आकार पाने वाले अनेक संस्कृत एवं भारतीय भाषाओं के महाकाव्यों एवं रचनाओं (जैसे रघुवंश, रामचरितमानस, एकनाथी भावार्थ रामायण, गीत रामायण आदि) के लिए बीजभूत है। यह केवल एक ग्रंथ नहीं, बल्कि एक सजीव साहित्यिक परंपरा का आरंभ है।

5. निष्कर्ष

ऐसा प्रतीत होता है कि रामायण महाकाव्य के अभ्यास से ही काव्यशास्त्र के सिद्धांतों का विकास हुआ। अभ्यास के लिए रामायण-महाभारत जैसे महाकाव्य समक्ष थे, इसलिए महाकाव्य की व्याख्या संभव हो सकी। इनमें भी वाल्मीकि रामायण एक सर्वांगीण आदर्श महाकाव्य है, इसीलिए इसकी उत्तमोत्तम संकल्पनाओं को ही महाकाव्य की कसौटी के लिए प्रमाणभूत स्वीकार किया गया।

इस शोध अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वाल्मीकि रामायण महाकाव्य विधा का न केवल आदि बिंदु है, बल्कि एक ऐसा सम्पूर्ण और जीवंत उदाहरण है जिसने इस विधा के लिए मानदंड स्थापित किए। यह ग्रंथ कथा-वस्तु, पात्र-चरित्र, उद्देश्य और शैली—महाकाव्य के चारों मूल तत्वों को अभूतपूर्व उत्कृष्टता के साथ प्रस्तुत करता है।

किंतु, इसकी सच्ची महत्ता इसके काव्यशास्त्रीय ढाँचे से आगे, उस जीवन-दर्शन में निहित है जिसे इसमें प्रतिपादित किया गया है। वाल्मीकि रामायण एक महाकाव्य होने के साथ-साथ एक धर्मशास्त्र, एक इतिहास, एक दर्शन ग्रंथ और भारतीय सभ्यता का सांस्कृतिक कोश भी है। यह केवल एक कथा नहीं, बल्कि भारतीय जनमानस की चेतना में रचा-बसा एक ऐसा महाकाव्य है जो प्रत्येक युग में नए अर्थ देता रहता है और मानवता को धर्म, न्याय और मर्यादा का मार्ग दिखाता रहता है।

अन्य साहित्य रचना के लिए महाकाव्य की उपजीव्यता (The Mahakavya as a Sustaining Source): वाल्मीकि रामायण की सर्वाधिक विशिष्टता इसकी **उपजीव्यता** अर्थात अन्य साहित्यिक रचनाओं के लिए एक जीवंत आधार प्रदान करने की क्षमता में निहित है। यह केवल एक स्व-निहित रचना नहीं, बल्कि एक साहित्यिक-सांस्कृतिक पारिस्थितिकी तंत्र का केंद्रबिंदु है। इसने असंख्य ग्रंथों, काव्यों, नाटकों, टीकाओं और क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य के लिए आधार का कार्य किया है। संस्कृत में ही कालिदास का 'रघुवंश', भवभूति का 'महावीरचरितम्', प्राचीन तमिल 'कम्ब रामायणम्', हिंदी में तुलसीदास का 'रामचरितमानस', मराठी में एकनाथ का 'भावार्थ रामायण' और आधुनिक युग में 'गीत रामायण' जैसी रचनाएँ सीधे तौर पर वाल्मीकि रामायण की इसी उपजीव्य शक्ति की सन्तान हैं। इस प्रकार, यह महाकाव्य एक 'सृजनात्मक मूल-स्रोत' (Creative Ur-text) के रूप में स्थापित होता है, जो साहित्य की विविध धाराओं को सतत पोषण प्रदान करता रहा है।

एक अत्यंत समयोचित उदाहरण प्रस्तुत करते हुए – वर्तमान में 'वंदे मातरम्' गीत की शताब्दी-अर्धशती मनाई जा रही है, जिसका उगम सीधे वाल्मीकि रामायण में ही निहित है – यह विवेचन श्रीरामचरणों में अर्पित है।

जय जय रघुवीर समर्थ।

6. ग्रंथ-सूची

1. रामेण रामदासेन लिखितं वाल्मिकी रामायणम्, मूळ हस्तलिखित संहिता, श्री समर्थ वाग्देवता मंदिर, धुळे।
2. रामेण रामदासेन लिखितं वाल्मिकी रामायणम्, संशोधन आवृत्ती (आठ बृहद् खंड), श्री समर्थ वाग्देवता मंदिर, धुळे प्रकाशन, ई. स. २०२३।
3. रामदासी संशोधन खंड, द्वितीय खंड, सत्कार्योत्तेजक सभा प्रकाशन (सं. समर्थ-हृदय शं. श्री. देव), ई. स. १९२८ (बाड़ क्रमांक ६५३, ६५४) तथा अन्य रामायण की पाण्डुलिपि मूल दस्तावेज।
4. वाल्मिकी रामायणम् (लाहोर, बडोदा संस्करण); त्रिटीका (परिमल प्रकाशन); निर्णय सागर (समग्र तिलक-टीका, ई. स. १९१८ आवृत्ति)।
5. वाल्मीकि रामायण (मूल संस्कृत), गीताप्रेस गोरखपुर।
6. वाल्मिकी रामायण, संशोधित पाठावृत्ती (सं. अमरेंद्र गाडगीळ), पुणे।
7. Altekar, Dr. G.S. *Studies on Valmiki Ramayana*. BORI, Pune Publication, 1987.
8. दंडी, आचार्य। काव्यादर्श। (सं. एवं अनु. डॉ. श्रीधर भास्कर वरुण)। चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
9. विश्वनाथ, आचार्य। साहित्यदर्पण। (सं. डॉ. जयदेव शुक्ल)। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
10. गोयनका, डॉ. शिवाजी सिंह। संस्कृत साहित्य का इतिहास। प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली।
11. पांडेय, डॉ. रामअवतार। वाल्मीकि रामायण: एक समीक्षा। लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

A Critical Study of the Lineage of Rāma in the Ayodhya Kāṇḍa: A Textual Analysis across Recensions of the Vālmīki Rāmāyaṇa

Nilesh Joshi
Indian Institute of Technology Bombay
(nileshjoshi@iitb.ac.in)

Vaishnavi Pai
Amrita VishwaVidhyapeetam, Amritapuri
(vaishnavipai09@gmail.com)

This paper presents a critical textual analysis of the genealogy of Rāma (the Raghava-vaṃśa) as presented in the Ayodhyā Kāṇḍa of the Vālmīki Rāmāyaṇa. Utilizing a comparative methodological framework, this study collates the lineage from Brahmā to Rāma across four major recensions: the Southern Recension (SR), the North-Western Recension (NWR), the Eastern Recension (ER), and the Critical Edition (CE). The analysis, supported by detailed comparative tables, reveals profound and systematic variations in the genealogical account, including the insertion and omission of kings, transposition of sequences, and phonetic corruption of names. The study concludes that the Raghava-vaṃśa is not a fixed historical record but a fluid narrative element. Its stability is maintained for core, narrative-significant kings, while the connective generations demonstrate significant alteration. These variations are attributed to oral transmission, scribal errors, and deliberate redaction to align with Purāṇic and other regional traditions. The Critical Edition, by presenting a shorter, less harmonized version, provides a foundational text for understanding this evolutionary process.

1. Introduction

The Vālmīki Rāmāyaṇa stands as a cornerstone of Indian literature, its transmission over millennia resulting in a complex tapestry of textual variations. The existence of multiple recensions—regional versions with significant divergences—challenges the perception of a monolithic epic. The Ayodhyā Kāṇḍa, which details the events in Ayodhya leading to Rāma's exile, contains a pivotal genealogical section where the sage Vasiṣṭha recounts the illustrious lineage of the Ikṣvāku dynasty to King Daśaratha. This Raghava-vaṃśa serves to legitimize Rāma's status and connect him to a divine and heroic past.

However, a preliminary examination reveals startling discrepancies in this genealogy across different published versions. This study moves beyond a theoretical discussion to provide a granular, data-driven analysis of these variations. By comparing the genealogical lists from the Southern Recension (Nirṇaya Sāgar), the North-Western Recension (DAV, Lahore), the Eastern Recension (Bengali Version), and the Baroda Critical Edition, this research answers a central question: What are the specific patterns and nature of the variations in the genealogical account, and what do they reveal about the text's transmission history? We hypothesize that the genealogy evolved through identifiable processes of textual criticism, with its fluidity concentrated in generations not central to the epic's core narrative.

2. Methodology and Recessional Overview

This research employs a philological and comparative textual analysis methodology.

1. Source Selection: The primary sources are the aforementioned printed editions, representing the major recensional families.
2. Data Extraction: The genealogical lists from Ayodhyā Kāṇḍa sargas 102/110 were extracted verbatim.
3. Collation and Tabulation: The lists were collated into a comparative table, placing each king's name in his sequential position across recensions. This allowed for the identification of omissions, insertions, transpositions, and onomastic variations.
4. Pattern Analysis: The tabulated data was analyzed to identify patterns of stability and fluidity, correlating them with narrative significance and potential causes of variation.

The recensions themselves have distinct characteristics

1. Southern Recension (SR): Known for its expansive, elaborate nature.
2. North-Western Recension (NWR): A representative of the Northern tradition.
3. Eastern Recension (ER): The Bengali version, edited by Gorresio, known for its poetic fluency and representing the Eastern tradition.
4. Baroda Critical Edition (CE): A reconstructed text aiming for the earliest attainable form by applying textual critical principles to hundreds of manuscripts.

3. Comparative Analysis: A Data-Driven Examination

The comparative table (see Appendix) forms the empirical backbone of this study. The analysis reveals several categories of variation.

1. Major Divergences in Early Ancestry

The lineage's very foundation shows significant disagreement. The CE lists अङ्गिरस् (Angiras) and प्रचेतस् (Pracetas) between Kaśyapa and Manu, a sequence entirely absent in the SR, NWR, and ER, which move directly from Kaśyapa to Vivasvān and then Manu. This indicates fundamentally different traditions regarding the theological and mythical connection of the Ikṣvāku line to the primordial progenitors.

2. Patterns of Insertion and Omission

A clear pattern of expansion is evident. The SR inserts a unique king, पुष्यः (Pushya), not found in any other recension at that location. This is a classic example of the SR's expansive tendency. Furthermore, the number of kings between Ikṣvāku and Daśaratha varies significantly, with the SR being the longest and the CE the shortest, confirming a historical trend of genealogical inflation.

3. Onomastic Variation and Phonetic Corruption

Many variations stem from the substitution of names, likely due to oral transmission and scribal error.

- Substitution: At the same generational level, we find बाणः (Bāṇa, in CE/ER) versus रेणुः (Reṇu, in SR). Later, a critical divergence occurs with ययातिः (Yayāti, in CE) versus नाभागः (Nābhāga, in SR/NWR/ER). Yayāti's presence is significant as he is a major Purāṇic king, suggesting a cross-traditional integration in the CE's lineage source.
- Phonetic Corruption: The sequence of names प्रसुस्तकः (CE), प्रशुश्रुवः (SR), प्रशुश्रुकः (NWR/ER) clearly demonstrates phonetic shift (confusion between 't' and 'ś', 'v' and 'k'), a common feature in manuscript traditions.

4. Scribal Error and Transposition

The NWR lists धुन्धुमारः (Dundhumāra) twice in succession, omitting युवनाश्वः (Yuvanāśva) entirely. This is a textbook example of a scribal error (parablepsis), where a copyist's eye likely skipped from one line to another with a similar ending.

5. Synonym Usage and Core Stability

Despite the variations, a core of narratively crucial kings remains perfectly stable across all recensions: Ikṣvāku, Sagar, Bhagīratha, Dilīpa, Raghu, Aja, Daśaratha, and Rāma. These figures, around whom major myths and stories are woven, form the immutable anchors of the lineage. For instance, सौदासः (Saudāsa, in CE) is a recognized synonym for कल्माषपादः (Kalmāṣapāda, in SR/NWR/ER), showing different traditions preferring different names for the same king.

4. Interpreting the Fluid Lineage

The data robustly supports the hypothesis that the Raghava-vaṃśa was a dynamic, evolving construct. The variations are not arbitrary but reveal the mechanisms of textual transmission in a pre-print culture.

1. The Malleable Connective Tissue

The stability of core kings versus the fluidity of others indicates that the genealogical list was not memorized as a whole. The "connective tissue" between major narrative anchors was flexible, allowing for local variation, incorporation of regional heroes, or alignment with other king-lists.

2. Purāṇic Integration

The inclusion of Yayāti in the CE is a stark example of how the Rāmāyaṇa's genealogy was not isolated. Redactors consciously or unconsciously integrated figures from the Mahābhārata and Purāṇic traditions to create a more comprehensive and unified "history."

3. The Critical Edition as a Baseline

The CE's shorter list and its unique readings (Angiras, Pracetas, Yayati) often place it at odds with the consolidated readings of the major regional recensions. This supports the critical editors' conclusion that the regional recensions often represent a later, harmonized, and expanded stage of the text. The CE offers a plausible earlier, and less inflated, version of the lineage.

5. Conclusion

This critical study, grounded in a detailed comparative table, conclusively demonstrates that the lineage of Rāma in the Ayodhyā Kāṇḍa is a palimpsest of India's textual history. The genealogical list functioned as a living tradition, preserving its core narrative identity through iconic kings while allowing for significant variation in its peripheral elements. The patterns of insertion, omission, substitution, and phonetic change provide a clear window into the processes of oral and scribal transmission over centuries. The Raghava-vaṃśa, therefore, cannot be treated as a single, authoritative chronology. It is a constellation of related traditions, each a valid testament to the epic's enduring, dynamic, and multi-faceted life across the

Indian subcontinent. This analysis underscores the necessity of a critical edition for scholarly study and opens avenues for further research into the sectarian and regional motivations behind specific genealogical variations.

6. References

1. Bhatt, G. H., and U. P. Shah, eds. The Vālmīki-Rāmāyaṇa: Critical Edition. 7 vols. Oriental Institute, 1960-1975.
2. Gorresio, Gaspare, ed. and trans. Ramayana: Poema Indiano di Valmici. 10 vols. Stamperia Reale, 1843-1858. (Based on the Eastern [Bengali] Recension).
3. Shastri, Hari Prasad, trans. The Ramayana of Valmiki. 3 vols. Shanti Sadan, 1952. (Based on the Eastern [Bengali] Recension).
4. Valmiki Ramayan (Hindi Translation). Edited by Pandit Ramnarayan Gopal 'Vidyabhushan'. Nirnay Sagar Press, 1930. (Based on the Southern Recension).
5. Valmikiya Ramayana. Edited by T. R. Krishnacharya. D.A.V. College Publishing Department, 1911-1913. (Based on the North-Western Recension).

7. Appendix

Comparative Table of the Lineage of Rāma

Baroda Critical Edition (CE)	Southern Recension (SR)	North-Western Recension (NWR)	Eastern Recension (ER)	Critical Observations
ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	**Universal Beginning.**
मरीचिः	मरीचिः	मरीचिः	मरीचिः	**Constant Saptarishi.**
कश्यपः	कश्यपः	कश्यपः	कश्यपः	**Constant Progenitor.**
अङ्गिरस्	विवस्वान्	विवस्वान्	विवस्वान्	**Major Divergence 1:** Different theological link.
प्रचेतस्				**Unique Ancestor** in CE.
मनुः	मनुः	मनुः	मनुः	**Constant First Man.**
इक्ष्वाकु	इक्ष्वाकु	इक्ष्वाकु	इक्ष्वाकु	**Constant Dynasty Founder.**
कुक्षिः	कुक्षिः	कुक्षिः	कुक्षिः	
विकुक्षिः	विकुक्षिः	विकुक्षिः	विकुक्षिः	
बाणः	**रेणुः**	बाणः	बाणः	**Variation/Substitution.**
	पुष्यः			**Southern Expansion 1.**
अनरण्यः	अनरण्यः	अनरण्यः	अनरण्यः	
पृथुः	पृथुः	पृथुः	पृथुः	
त्रिशङ्कुः	त्रिशङ्कुः	त्रिशङ्कुः	त्रिशङ्कुः	
धुन्धुमारः	धुन्धुमारः	धुन्धुमारः	धुन्धुमारः	
युवनाश्वः	युवनाश्वः	**धुन्धुमारः**	युवनाश्वः	**Scribal Error** in NWR.
मान्धाता	मान्धाता	मान्धाता	मान्धाता	**Key Emperor.**
सुसन्धिः	सुसन्धिः	सुसन्धिः	सुसन्धिः	
ध्रुवसन्धिः	**प्रसेनजित्**	**धृतसन्धिः**	**प्रसेनजित्**	**Major Divergence 2:** Unstable tradition.
भरतः	भरतः	भरतः	भरतः	
असितः	असितः	असितः	असितः	
सगरः	सगरः	सगरः	सगरः	**Core Ancestor.**
असमञ्जस्	असमञ्जस्	असमञ्जस्	असमञ्जस्	
अंशुमान्	अंशुमान्	अंशुमान्	अंशुमान्	
दिलीपः	दिलीपः	दिलीपः	दिलीपः	
भगीरथः	भगीरथः	भगीरथः	भगीरथः	**Core Ancestor.**
ककुत्स्थः	ककुत्स्थः	ककुत्स्थः	ककुत्स्थः	
रघुः	रघुः	रघुः	रघुः	**Eponymous Ancestor.**
सौदासः	**कल्माषपादः**	**कल्माषपादः**	**कल्माषपादः**	**Synonym Usage.**
खड्गी	**खनित्रः**	**शङ्खणः**	**शङ्खणः**	**Major Divergence 3:** Extreme fluidity.

Baroda Critical Edition (CE)	Southern Recension (SR)	North-Western Recension (NWR)	Eastern Recension (ER)	Critical Observations
सुदर्शनः	सुदर्शनः	सुदर्शनः	सुदर्शनः	
अग्निवर्णः	अग्निवर्णः	अग्निवर्णः	अग्निवर्णः	
शीघ्रगः	शीघ्रगः	शीघ्रगः	शीघ्रगः	
मनुः	**मरुः**	**मरुः**	**मरुः**	**Variation.**
प्रसुस्तकः	**प्रशुश्रुवः**	**प्रशुश्रुकः**	**प्रशुश्रुकः**	**Phonetic Corruption.**
अम्बरीषः	अम्बरीषः	अम्बरीषः	अम्बरीषः	
नहुषः	नहुषः	नहुषः	नहुषः	
ययातिः	**नाभागः**	**नाभागः**	**नाभागः**	**Major Divergence 4:** Puranic Integration in CE.
अजः	अजः	अजः	अजः	
दशरथः	दशरथः	दशरथः	दशरथः	
रामः	रामः	रामः	रामः	**The Hero - Universal.**

रामायण में हनुमान की भूमिका: दैवीय वायुगतिकी तथा भक्ति, श्रद्धा, शक्ति और ब्रह्मांडीय चेतना में छिपा वैदिक विज्ञान

भरत राज सिंह
प्रमोद कुमार सिंह
आशा कुलश्रेष्ठ
Vedic Science Centre, School of Management Sciences, Lucknow
(brsingh@smslucknow.ac.in)

एक रामायण में हनुमान जी का चरित्र केवल भक्ति और शक्ति का प्रतीक नहीं, बल्कि दैवीय वायुगतिकी, ऊर्जा विज्ञान तथा ब्रह्मांडीय चेतना का अद्भुत संगम प्रस्तुत करता है। वे योगशक्ति और प्राण ऊर्जा के माध्यम से भौतिक सीमाओं को लांघने वाले वैदिक विज्ञान के सजीव प्रतीक हैं। बाल्यावस्था में सूर्य को निगलने का प्रयास "सौर ऊर्जा अवशोषण" का संकेत देता है, जबकि लंका-दहन "दहन-ऊर्जा" के वैदिक रूप को दर्शाता है। समुद्र पार की उड़ान योग में वर्णित "उदान वायु" नियंत्रण का उदाहरण है। गदा का प्रयोग कोणीय संवेग व ऊर्जा-संतुलन के सिद्धांतों को प्रकट करता है। हनुमान जी का जीवन इस तथ्य का प्रमाण है कि भक्ति, श्रद्धा और सेवा केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि वैज्ञानिक ऊर्जा-रूपांतरण की प्रक्रियाएँ हैं। वे मानव चेतना के उस स्तर का प्रतीक हैं जहाँ विज्ञान, योग और भक्ति एकीकृत होकर "दैवीय वायुगतिकी" की सजीव व्याख्या करते हैं।

1. प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में *रामायण* केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन, नीति, विज्ञान और अध्यात्म का समन्वित महाकाव्य है। इसके प्रत्येक पात्र में किसी न किसी सार्वभौमिक तत्व का प्रतीकात्मक अर्थ निहित है। विशेषतः हनुमान का चरित्र ऐसा आयाम प्रस्तुत करता है, जो *भक्ति, शक्ति और सेवा* का अद्भुत संयोग है। वे न केवल एक सेवक या भक्त हैं, बल्कि "दैवीय वायुगतिकी" (Divine Aerodynamics) के प्रथम प्रतीक के रूप में उभरते हैं। हनुमान जी का जीवन और कर्म मानव चेतना की उन ऊँचाइयों का संकेत देता है, जहाँ भक्ति केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि ऊर्जा और चेतना के वैज्ञानिक रूपांतरण का माध्यम बन जाती है। बाल्यकाल में सूर्य को निगलने का प्रयास, लंका दहन, समुद्र लांघना, संजीवनी पर्वत उठाना, अहिरावण का वध और अंततः अयोध्या वापसी — ये प्रसंग केवल पौराणिक आस्था नहीं, बल्कि वैदिक ऊर्जा-विज्ञान और ब्रह्मांडीय गति के प्रतीक हैं।आधुनिक युग में, जब मानव एयरोस्पेस, क्वांटम फिजिक्स, और बायो-एनर्जी के क्षेत्रों में नए क्षितिज खोज रहा है, तब हनुमान का चरित्र प्राचीन वैदिक विज्ञान और आधुनिक वैज्ञानिक सोच के बीच एक सेतु के रूप में दिखाई देता है (Singh & Kulshreshtha, 2023)।

1.1 हनुमान जन्म व पौराणिक प्रसंग

हनुमान जी की उत्पत्ति ब्रह्मांडीय तत्वों और दैवीय इच्छा के संगम पर आधारित है। वाल्मीकि रामायण (किष्किंधा कांड 4.65) के अनुसार, वायुदेव ने भगवान शिव की दिव्य अग्नि ऊर्जा का एक अंश वानर कुल की तपस्विनी अंजना के गर्भ में प्रवाहित किया। इस प्रकार हनुमान जी का जन्म हुआ—जो संयम द्वारा नियंत्रित शक्ति के अवतार हैं। वे ऐसी दिव्य सत्ता हैं जिनकी प्राणशक्ति स्वयं वायुमंडल की गतिशील शक्तियों का प्रतिरूप है।

उनके जन्म की कथा कई प्रतीकात्मक अर्थों को प्रकट करती है। वायु गति का प्रतीक है, अंजना ज्ञान और चेतना की धारणा का; और इन दोनों का मिलन चेतना के जागरण का द्योतक है। हनुमान नाम का अर्थ—"जिसका जबड़ा विकृत हुआ"—को केवल शारीरिक घटना के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि यह उनके उस अनुभव का प्रतीक है जब उन्होंने सूर्य को फल समझकर निगलने का प्रयास किया। यह घटना मानव बुद्धि की उस जिज्ञासा का रूपक है जो प्रकाश (ज्ञान) के स्रोत को प्राप्त करना चाहती है।

शास्त्रों में वर्णन है कि बालक हनुमान ने उदयमान सूर्य की ओर छलांग लगाई, उसे फल समझकर पकड़ने का प्रयास किया। देवताओं के प्रहार से जब वे रोके गए, तब वह क्षण उस दिव्य ऊर्जा के आत्मसंयम में रूपांतर का प्रतीक बन गया—जब अनियंत्रित शक्ति स्वयं अनुशासित होती है। उसी क्षण से उनकी शक्ति धर्म (नियम), भक्ति और ज्ञान के अधीन रहने लगी।

योगिक दृष्टिकोण से हनुमान मूलाधार से सहस्रार तक कुण्डलिनी जागरण के प्रतीक हैं—जहाँ स्थूल जीवनशक्ति दिव्य सेवा में रूपांतरित होती है। भौतिक रूप से वे असीम सामर्थ्य के प्रतीक हैं, जबकि नैतिक रूप से वे आत्मसंयम के आदर्श हैं। उनके प्रत्येक दिव्य गुण—उड़ने की क्षमता, रूप परिवर्तन, अथाह बल—धर्म के नियंत्रण में कार्य करते हैं। इस प्रकार वे न केवल आध्यात्मिक, बल्कि नैतिक अभियंत्रण (moral engineering) के ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जिसका समकक्ष आधुनिक सुपरह्यूमन कथाओं में भी दुर्लभ है।

1.2 वैदिक परिप्रेक्ष्य में हनुमान का स्वरूप

वेदों में "वायु" को प्राण का रूप माना गया है —

"वायुरनिलममृतमथेदं भस्मांतं शरीरम्" (ईशोपनिषद् 17)

यहाँ "वायु" केवल हवा नहीं, बल्कि *प्राण शक्ति* का प्रतीक है, जो समस्त सृष्टि को गतिशील रखती है। हनुमान, वायु के पुत्र होने के कारण, उसी प्राण-ऊर्जा के साक्षात् मूर्त रूप हैं। उनका नाम ही "हनुमान"— अर्थात् "जो अहं (Ego) का हनन करे"— उनके चरित्र की दार्शनिक गहराई को दर्शाता है।

वैदिक दृष्टि से देखा जाए तो *वायुगतिकी* का मूल सिद्धांत— *गति और संतुलन*— हवा की दिशा, वेग, और दाब के बीच सामंजस्य पर आधारित है। हनुमान इस सिद्धांत के जीवंत उदाहरण हैं। उनके प्रत्येक कार्य में ऊर्जा का सटीक नियमन, दिशा-संवेदन और भौतिक प्रतिरोध पर नियंत्रण स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है (Ramaswamy, 2018)।

1.3 रामायण में हनुमान की वैज्ञानिक भूमिका का परिचय

वाल्मीकि *रामायण* और *रामचरितमानस* में वर्णित हनुमान के कार्य आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से अद्भुत प्रतीत होते हैं। कुछ प्रमुख उदाहरण—

1. सौर ऊर्जा अवशोषण: बाल्यावस्था में सूर्य को निगलने की कथा *Solar Absorption* और ऊर्जा संतुलन के सिद्धांत की ओर संकेत करती है।
2. वायुगतिक गति: समुद्र पार करना और मैनाक पर्वत को पाताल में भेजना *Anti-gravity Thrust* और हाइड्रोडायनमिक रेजिस्टेंस नियंत्रण का प्रतीक है।
3. ऊर्जा प्रबंधन: लंका दहन में अग्नि का नियंत्रित उपयोग *Thermal Regulation* और ऊर्जा प्रबंधन का अद्भुत उदाहरण है।
4. औषधीय विज्ञान: संजीवनी बूटी द्वारा लक्ष्मण को पुनर्जीवित करना *Regenerative Medicine* का प्रतीक है।
5. टेलीपैथिक संचार: हनुमान द्वारा सीता से वार्ता और संदेश प्रेषण *Telepathic Transmission* अथवा *Quantum Entanglement* की अवधारणा को दर्शाता है (Sharma, 2020)।

इन सभी घटनाओं का गहन विश्लेषण बताता है कि रामायण में हनुमान का चरित्र धार्मिक आस्था के परे जाकर एक वैदिक वैज्ञानिक चेतना का वाहक है।

1.4 दैवीय वायुगतिकी का वैचारिक आधार

"वायुगतिकी" आधुनिक विज्ञान की वह शाखा है जो वायु या गैसों में गतिशील वस्तुओं के व्यवहार का अध्ययन करती है। किंतु जब इसे "दैवीय" कहा जाता है, तो यह केवल भौतिक गति नहीं, बल्कि *चेतन गति* (Conscious Motion) की अवधारणा बन जाती है।

हनुमान जी की उड़ान भौतिक पंखों से नहीं, बल्कि प्राण-ऊर्जा और मानसिक आवेग से संभव थी। तुलसीदास जी ने लिखा—

"मनोजवं मारुततुल्यवेगं, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।"

यहाँ "मनोजव" (मन की गति) और "मारुततुल्यवेग" (वायु के समान वेग) शब्द उनकी चेतन ऊर्जा और वायुगतिक बल के वैज्ञानिक संगम को इंगित करते हैं। यह वह स्थिति है जहाँ मानसिक तरंगें और वायु-ऊर्जा एकीकृत होकर "प्राण-चेतना गति" उत्पन्न करती हैं, जिसे आधुनिक युग में *Psychic Aerodynamics* कहा जा सकता है (Mukherjee, 2017)।

1.5 भक्ति और विज्ञान का समन्वय

हनुमान जी का चरित्र यह सिद्ध करता है कि भक्ति और विज्ञान परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे के पूरक हैं। उनकी असाधारण शक्ति भक्ति से उत्पन्न होती है—

"रामदूत अतुलित बलधामा।"

यह समर्पण उनकी चेतना को "Conscious Energy Activation" के स्तर तक ले जाता है। जब मनुष्य अहंकार त्यागकर भक्ति में लीन होता है, तब उसके भीतर की *Bio-Electromagnetic Energy* सक्रिय होकर अद्भुत शक्ति प्रदान करती है।

हनुमान चालीसा की पंक्ति—

"संकट से हनुमान छुड़ावे, मन क्रम वचन ध्यान जो लावे।"

मानव चेतना के तीन स्तर— मन, कर्म और वचन— के संतुलन द्वारा ऊर्जा के एकाग्रण का सूत्र देती है (Tripathi, 2019)।

1.6 हनुमान का चरित्र: ब्रह्मांडीय सेवा का आदर्श

हनुमान का प्रत्येक कार्य केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय है।

- सीता की खोज *सत्य की पुनर्स्थापना* का प्रतीक है।

- लंका दहन *असत्य और अधर्म के दहन* का प्रतीक है।
- संजीवनी लाना *जीवन-ऊर्जा पुनर्संचार* का द्योतक है।

उनकी प्रत्येक क्रिया "Cosmic Duty" की अवधारणा को पुष्ट करती है। वे केवल राम के सेवक नहीं, बल्कि समस्त सृष्टि में संतुलन के रक्षक हैं। यह विचार वैदिक दृष्टि में "ऋत" — अर्थात् ब्रह्मांडीय व्यवस्था — के अनुरूप है (Aurobindo, 1939/2005)।

1.7 आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से हनुमान का अध्ययन क्यों आवश्यक है

21वीं सदी का विज्ञान वायुयान, रॉकेट, कृत्रिम उपग्रह और ऊर्जा-स्रोतों की सीमाएँ छू चुका है, परंतु *चेतन ऊर्जा* के रहस्य अब भी उसके लिए अनसुलझे हैं। हनुमान जी का चरित्र इन रहस्यों का वैदिक समाधान प्रस्तुत करता है।

उनकी "गदा" केवल शस्त्र नहीं, बल्कि *वैदिक इंजीनियरिंग* का प्रतीक है। यह *Angular Momentum* और *Gyroscopic Stability* जैसे सिद्धांतों का मूर्त रूप है। इसी प्रकार उनकी उड़ान *Anti-Gravity Propulsion* का वैदिक उदाहरण प्रतीत होती है।

जब आधुनिक भौतिकी "Quantum Energy Field" और "Telepathic Connectivity" पर प्रयोग कर रही है, हनुमान का चरित्र इन सिद्धांतों का प्राचीन पूर्वाभास प्रस्तुत करता है (Joshi, 2022)।

1.8 अनुसंधान का उद्देश्य और कार्यपद्धति

इस शोध का उद्देश्य रामायण में हनुमान के चरित्र में निहित वैदिक वैज्ञानिक तत्वों की खोज और उनकी आधुनिक व्याख्या करना है।

मुख्य उद्देश्य

1. हनुमान के पौराणिक प्रसंगों का वैज्ञानिक विश्लेषण।
2. वैदिक ग्रंथों में वायु, प्राण और चेतना के सिद्धांतों का अध्ययन।
3. आधुनिक एयरोडायनमिक्स और योग-ऊर्जा के तुलनात्मक आयाम।
4. गदा, उड़ान और संचार जैसे प्रसंगों में तकनीकी प्रतीकवाद की खोज।

कार्यपद्धति

इस शोध में *सांस्कृतिक-वैज्ञानिक विश्लेषण पद्धति* (Cultural-Scientific Interpretation) अपनाई गई है। प्राथमिक स्रोतों में *वाल्मीकि रामायण*, *रामचरितमानस*, *हनुमान चालीसा*, *अष्टक*, और *उपनिषदों* का उपयोग किया गया है, जबकि द्वितीयक स्रोतों में आधुनिक वैज्ञानिक पत्र, ऊर्जा और चेतना विज्ञान पर आधारित अनुसंधान लेख शामिल किए गए हैं।

1.9 खंडवार संरचना

यह शोध तीन खंडों में विभाजित है—

1. प्रस्तावना
2. विस्तारित अध्ययन
   2.1. बाल्यकाल के ऊर्जा प्रसंग
   2.2. किष्किन्धाकाण्ड में कूटनीति और ऊर्जा संतुलन
   2.3. सुन्दरकाण्ड में दैवीय वायुगतिकी
   2.4. लंकाकाण्ड और औषधीय विज्ञान
   2.5. पाताल यात्रा और क्वांटम ऊर्जा
   2.6. गदा और मिसाइल प्रतीक
   2.7. चालीसा-अष्टक के वैज्ञानिक सूत्र
   2.8. टेलीपैथिक संचार
3. निष्कर्ष और आधुनिक प्रासंगिकता

इस संरचना के माध्यम से हनुमान जी के चरित्र की वैज्ञानिक व्याख्या यह स्पष्ट करती है कि भक्ति और विज्ञान का संगम भारतीय सभ्यता की आत्मा में रचा-बसा है। वेदों में वर्णित *प्राण*, *वायु*, *ओजस* और *तेजस* की अवधारणाएँ रामायण में हनुमान के रूप में जीवंत होती हैं। हनुमान जी का चरित्र दर्शाता है कि जब मानव अपनी चेतना को श्रद्धा, सेवा और निष्ठा में समर्पित करता है, तब वह दैवीय ऊर्जा से जुड़कर असंभव को संभव बना सकता है। यही *दैवीय वायुगतिकी* का सार है — जहाँ विज्ञान, योग और भक्ति एक ही सूत्र में गुंथे हुए हैं।

2. विस्तारित अध्ययन

हनुमान जी का चरित्र विज्ञान, ऊर्जा और चेतना का अद्भुत संगम है। बाल्यकाल में सूर्यग्रहण प्रसंग सौर ऊर्जा-संवेदन का प्रतीक है; किष्किन्धाकाण्ड

में कूटनीति ऊर्जा-संतुलन दर्शाती है; सुन्दरकाण्ड में दैवी वायुगतिकी प्रकट होती है; लंकाकाण्ड में औषधीय विज्ञान झलकता है। पाताल यात्रा क्वांटम ऊर्जा का रूपक है; गदा मिसाइल-प्रतीक; चालीसा ध्वनि-विज्ञान; और टेलीपैथी चेतना-संपर्क की सिद्धि — सब मिलकर हनुमान को जीवंत विज्ञान-दर्शन का प्रतीक बनाते हैं।

2.1 बाल्यकाल के ऊर्जा प्रसंग

हनुमान जी का बाल्यकाल ऊर्जा, जिज्ञासा और दैवी चेतना का अनूठा संगम है। वाल्मीकि रामायण (सुन्दरकाण्ड, बालकाण्ड) में वर्णित है कि बालक हनुमान ने बाल्य अवस्था में ही सूर्य को पकड़ने का प्रयास किया क्योंकि उन्हें वह फल के समान प्रतीत हुआ [**चित्र– 1: (अ)**]। यह प्रसंग केवल पौराणिक कल्पना नहीं, बल्कि *दैवी ऊर्जा और क्वांटम चेतना के विकास* का प्रतीक है।

(अ) **(ब)** **(स)**

चित्र–1: (अ)- बाल्य अवस्था में ही सूर्य को पकड़ना; **(ब)-**मैनाक पर्वत पर पैर रख कर छलांग और **(स)-**अति सूक्ष्म रूप में माता सीता से वरदान

वैज्ञानिक व्याख्या

सूर्य की ओर बढ़ने का प्रसंग *मानव में अंतर्निहित सौर-ऊर्जा आकर्षण* का रूपक है। सूर्य जीवन ऊर्जा (प्राण) का प्रमुख स्रोत है, और बाल हनुमान का यह प्रयास दर्शाता है कि कैसे उनकी *बायोएनर्जेटिक प्रणाली (Bioenergetic System)* सौर ऊर्जा से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी थी (Rao, 2016)। आधुनिक विज्ञान के अनुसार, प्रत्येक जीव में *माइटोकॉन्ड्रियल ऊर्जा उत्पादन* सूर्य से प्राप्त प्रकाश-ऊर्जा से अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है। हनुमान जी का यह कृत्य इसी ऊर्जा तंत्र का दैवी रूपक है — जब चेतना का स्तर अत्यधिक उच्च हो जाता है, तब वह ***सूर्य-प्राण शक्ति*** के साथ समस्वर हो जाती है।

आध्यात्मिक विश्लेषण

हनुमान का सूर्यग्रहण प्रयास यह भी दर्शाता है ***कि बाल्यकाल की निश्चलता और साहस*** में असाधारण संभावनाएँ निहित होती हैं। हनुमान केवल शक्ति के प्रतीक नहीं, बल्कि उस *प्रकृतिप्रदत्त ऊर्जा-तंत्र* के प्रतीक हैं जो व्यक्ति के भीतर जन्मजात रूप में विद्यमान है (Singh & Sharma, 2020)। बाल्यकाल में उनकी अपार जिज्ञासा और ऊर्जा यह सिखाती है कि जब मन की सीमाएँ हट जाती हैं, तब भौतिक सीमाएँ भी अप्रासंगिक हो जाती हैं — यही *दैवी वायुगतिकी* की मूल प्रस्तावना है।

दर्शनिक निष्कर्ष

बाल हनुमान की यह घटना मानव विकास के एक गहरे सत्य को उद्घाटित करती है —

"ऊर्जा न केवल शरीर में प्रवाहित होती है, बल्कि चेतना के साथ विकसित होती है।"

इस दृष्टि से हनुमान बाल्यकाल से ही *ऊर्जा का मानवीकरण (Embodiment of Energy)* बन जाते हैं, जहाँ उनका शरीर और मन ब्रह्मांडीय ऊर्जा के साथ पूर्ण समरसता में कार्य करता है।

2.2 किष्किन्धाकाण्ड में कूटनीति और ऊर्जा संतुलन

हनुमान जी का दूसरा बड़ा रूप किष्किन्धाकाण्ड में उभरता है — जब वे राम-लक्ष्मण से प्रथम बार मिलते हैं। यह प्रसंग *कूटनीति, संयम और मानसिक ऊर्जा-संतुलन* का उदाहरण है।

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

किष्किन्धा पर्वत क्षेत्र में सुग्रीव और वाली के बीच संघर्ष चल रहा था। इस जटिल स्थिति में हनुमान, जो सुग्रीव के विश्वस्त मंत्री थे, *राजनैतिक मध्यस्थता और बौद्धिक* **विवेक** के साथ कार्य करते हैं। उन्होंने राम और लक्ष्मण से विनम्रता के साथ संवाद स्थापित किया, जिससे न केवल राजनैतिक गठबंधन हुआ बल्कि धर्म और नीति का संतुलन भी बना।

वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि

कूटनीति का सार केवल शब्दों में नहीं, बल्कि **ऊर्जा के संतुलन** में निहित है। आधुनिक मनोविज्ञान (Psychophysiology) के अनुसार, मनुष्य की सफलता उसके *सहानुभूतिक (Sympathetic)* और *पैरासिम्पेथेटिक (Parasympathetic)* नर्वस सिस्टम के संतुलन पर निर्भर करती है (Deshpande, 2019)।

हनुमान जी इस संतुलन के परम उदाहरण हैं — वे न तो आक्रोश में प्रतिक्रिया करते हैं, न ही भय में संकुचित होते हैं। उनका प्रत्येक संवाद **बौद्धिक-ऊर्जा नियंत्रण (Cognitive Energy Regulation)** का आदर्श उदाहरण है।

कूटनीति का ऊर्जा-सिद्धांत

राम–सुग्रीव गठबंधन का सूत्रपात केवल राजनीति नहीं, बल्कि *ऊर्जा-संलयन* (Energy Synchronization) का प्रतीक है। यहाँ राम की *सौर चेतना* और हनुमान की *वायवीय चेतना* का संगम होता है — जिससे नयी सामूहिक शक्ति उत्पन्न होती है।

यह संलयन, आधुनिक भौतिकी के **रेज़ोनेंस सिद्धांत (Resonance Principle)** जैसा है, जहाँ दो कम्पनशील शक्तियाँ समान आवृत्ति पर एक-दूसरे को प्रबल करती हैं (Joshi, 2017)।

आध्यात्मिक निहितार्थ

हनुमान का यह व्यवहार दर्शाता है कि *सच्चा कूटनीतिज्ञ वही है जो अपनी आंतरिक ऊर्जा को नियंत्रित रखते हुए परिस्थिति की दिशा बदल सके।* उन्होंने दिखाया कि बुद्धि (Energy of Intellect) और भक्ति (Energy of Emotion) का संतुलन ही सफलता का रहस्य है।

दर्शनिक निष्कर्ष

किष्किन्धाकाण्ड में हनुमान जी का चरित्र सिखाता है कि

"ऊर्जा का सर्वोच्च रूप वह नहीं जो विस्फोट करे, बल्कि वह जो दिशा बदले।"

यही उनका वास्तविक कूटनीतिक बल था — *प्रज्ञा और प्राण का संतुलन।*

2.3 सुन्दरकाण्ड में दैवीय वायुगतिकी

हनुमान जी का सबसे विलक्षण और वैज्ञानिक रूप सुन्दरकाण्ड में उभरता है। यह वह चरण है जब हनुमान अपनी दैवी क्षमता का पूर्ण प्रयोग करते हुए मैनाक पर्वत पर पैर से छलाँग लगाकर समुद्र पार करते हैं, लंका पहुँचते हैं [**चित्र– 1: (ब)]** और सीता माता का पता लगाते हैं। यह पूरा प्रसंग *दैवीय वायुगतिकी (Divine Aerodynamics)* का उत्कृष्ट उदाहरण है।

वैज्ञानिक पृष्ठभूमि

वाल्मीकि रामायण में वर्णन मिलता है कि जब जाम्बवान ने उन्हें उनकी शक्ति का स्मरण कराया, तब हनुमान पर्वत की चोटी पर चढ़कर आकाश में उड़ान भरते हैं। यह उड़ान केवल कल्पनात्मक नहीं, बल्कि *ऊर्जा परिवर्तन (Energy Transformation)* और *वायुगतिकीय सिद्धांतों* के प्रतीक रूप में व्याख्यायित की जा सकती है।

आधुनिक वायुगतिकी के अनुसार, उड़ान के लिए तीन प्रमुख बल आवश्यक हैं —

1. **लिफ्ट (Lift)** – ऊपर उठाने वाला बल
2. **थ्रस्ट (Thrust)** – आगे बढ़ाने वाला बल
3. **ड्रैग (Drag)** – प्रतिरोध बल
4. **वजन (Weight)** – गुरुत्वाकर्षण का बल

हनुमान जी के उड़ान प्रसंग में इन सभी बलों का प्रतीकात्मक संतुलन दिखाई देता है। जब वे अपने शरीर को पर्वत के समान विशाल करते हैं, तो वह *वायुगतिकीय क्षेत्र में थ्रस्ट और लिफ्ट* की समन्वित क्रिया का द्योतक है (Sharma, 2018)।

दैवीय ऊर्जा और चेतना की उड़ान

हनुमान जी का समुद्र लांघना भौतिक उड़ान से अधिक *चेतन उड़ान* है। उनकी यह उड़ान दर्शाती है कि जब मानसिक और प्राणिक ऊर्जा एक साथ सक्रिय होती है, तब मानव अपनी भौतिक सीमाओं को लांघ सकता है।

यह स्थिति *कुंडलिनी योग* के छठे और सातवें चक्र — आज्ञा और सहस्रार — के सक्रिय होने की ओर संकेत करती है, जहाँ साधक की चेतना पृथ्वी-आकर्षण से मुक्त होकर ब्रह्मांडीय तरंगों से जुड़ जाती है (Radhakrishnan, 2021)।

वायुगतिकी और प्राणशक्ति का एकत्व

हनुमान जी की उड़ान में प्राणवायु का नियंत्रण सर्वोच्च स्तर पर था। उनका नाम ही "हनुमान" 'हन्' (नाश करने वाला) और 'मान' (अहं का) से बना है — अर्थात् वह जो अहंकार को समाप्त कर प्राणशक्ति को नियंत्रित करता है।

यह *दैवी वायुगतिकी* वास्तव में "*वायु तत्व का ब्रह्म से एकत्व*" है, जिसमें भौतिक बलों की सीमाएँ चेतना की गति के अधीन हो जाती हैं।

दर्शनिक सार

"जहाँ विश्वास का वेग और प्राण का नियंत्रण एक हो जाते हैं, वहीं दैवी वायुगतिकी की शुरुआत होती है।"

हनुमान जी का सुन्दरकाण्ड यह सिखाता है कि मानव के भीतर छिपा *असीम ऊर्जा तंत्र* सक्रिय होकर उसे किसी भी सीमा के पार पहुँचा सकता है — चाहे वह समुद्र हो या ब्रह्मांड।

2.4 लंकाकाण्ड और औषधीय विज्ञान

हनुमान जी का अगला रूप लंकाकाण्ड में दिखाई देता है, जब वे युद्ध के मध्य औषधियों को हिमालय से लाकर लंका पहुँचाना, यहाँ उनका स्वरूप केवल एक योद्धा का नहीं, बल्कि प्राकृतिक औषध-विज्ञान (Herbal and Biomedical Science) के किसी सीमा तक ज्ञाता होने का है।

(द) **(य)** **(र)**

चित्र– 2: (द)- विजेथुआ महावीरन व मकरीकुंड; **(य)-** संपूर्ण द्रोणागिरी पर्वत को उठा लाना और **(र)-**अहिरावण से राम-लक्षमण मुक्ति

- **औषधीय विज्ञान की पृष्ठभूमि**

जब लक्ष्मण को शक्तिवाण लगने पर वह मूर्छित होते हैं, तब हनुमान जी को हिमालय से *संजीवनी बूटी* लाने का आदेश दिया जाता है। वह सुसेन वैद्य के कहने पर संजीवनी बूटी हेतु जब हिमालय की यात्रामें थे, तब मायावी राछस कालनेमि रास्ते में व्यवधान डाला और वह विजेथुआ महावीरन की जमीन पर उतरे तथा मकरीकुंड स्नान के लिए भेजने और भेद खुलने पर उसको मारना, **[चित्र– 2(द)]**, जो *उड्डयन गति रोकना (कण्ट्रोल लैंडिंग)* दर्शाता है और द्रोणागिरी पर्वत को संपूर्ण उठा लाने के समय भरत द्वारा बाण से गिराए जाने के उपरांत पुनः मुरुछा से जीवंत होकर लंका पहुँचना **[चित्र– 2(य)]** —यह पृथ्वी के चुंबकीय संतुलन, औषधीय विज्ञान और गुरुत्वाकर्षण-प्रतिरोध के प्रतीकात्मक उदाहरण हैं। यह प्रसंग न केवल पौराणिक, बल्कि *औषधीय विज्ञान के गूढ़ ज्ञान* का प्रमाण है। 'संजीवनी' कोई एक वनस्पति नहीं, बल्कि जीवन पुनर्स्थापन करने वाली ऊर्जा का प्रतीक है।

आधुनिक विज्ञान में कुछ औषधियाँ जैसे *Echinacea*, *Ashwagandha*, *Panax Ginseng* आदि इम्यूनो-मॉड्युलेटरी प्रभाव उत्पन्न करती हैं — जो शरीर के भीतर *प्राण ऊर्जा (vital energy)* को सक्रिय करती हैं (Kumar & Bhatnagar, 2020)। संजीवनी बूटी इसी *Bioenergetic Restoration* का दैवी रूपक हो सकती है।

- **हनुमान का औषध-ज्ञान**

हनुमान जी ने औषधि-विज्ञान को केवल शरीर तक सीमित नहीं रखा। वे औषधि को *जीवन-संवेदन* का माध्यम मानते हैं। जब वे संजीवनी नहीं पहचान पाए, तो पूरा पर्वत उठा लाए - यह संकेत करता है कि *प्रकृति की प्रत्येक वनस्पति में जीवनदायी ऊर्जा* होती है। यह दार्शनिक रूप से आधुनिक *Phytochemical Holism* से मेल खाता है, जहाँ माना जाता है कि प्रत्येक पौधे की समग्र ऊर्जा शरीर के विभिन्न तंत्रों को पुनर्संतुलित कर सकती है (Mehta, 2019)।

- **ऊर्जा-औषध और मनोवैज्ञानिक उपचार**

हनुमान जी द्वारा लाए गए औषधीय पर्वत के प्रभाव से लक्ष्मण का पुनर्जीवन केवल शारीरिक पुनर्स्थापन नहीं, बल्कि *मनो-ऊर्जा पुनर्जीवन* भी था। आधुनिक *Quantum Biology* यह दर्शाती है कि जीवित कोशिकाओं में ऊर्जा का प्रवाह **क्वांटम कोहेरेंस (Quantum Coherence)** के रूप में होता है (Patel, 2021)।

हनुमान जी की यह क्रिया उस *क्वांटम ऊर्जा पुनर्संयोजन* की प्रतीक है, जहाँ जीवन की लय पुनः स्थापित होती है।

- **पर्यावरणीय और औषधीय संकेत**

हनुमान द्वारा पर्वत उठाना यह भी इंगित करता है कि उन्होंने *पारिस्थितिक संतुलन* का गहरा अर्थ समझा। पर्वत का वह भाग, जिसमें विविध औषधियाँ पनपती थीं, वास्तव में *बायोडायवर्सिटी का भंडार* था।

यह घटना आज के पर्यावरण विज्ञान के दृष्टिकोण से *Ecosystem Healing Principle* के समान है — कि प्रकृति में प्रत्येक तत्व जीवन की पुनर्स्थापना का भाग है।

- **दर्शनिक निष्कर्ष**

"औषधि केवल पत्तियों में नहीं, बल्कि प्रकृति की सामूहिक चेतना में निहित होती है।"

हनुमान जी का यह कार्य यह सिखाता है कि विज्ञान और भक्ति दोनों का उद्देश्य जीवन की पुनर्संरचना है — एक शरीर के स्तर पर, दूसरा चेतना के स्तर पर।

2.5 पाताल यात्रा और क्वांटम ऊर्जा

हनुमान जी की पाताल यात्रा का प्रसंग उनके असीम बल, चेतना और ऊर्जा के तीसरे आयाम — *क्वांटम ऊर्जा (Quantum Energy)* — से जुड़ा हुआ है। यह प्रसंग "रामायण" के विभिन्न उत्तरकाण्डीय उल्लेखों में मिलता है, जहाँ हनुमान पाताल लोक में प्रवेश कर राक्षसों का संहार करते हुए, अहिरावण का वध कर राम-लक्ष्मण की रक्षा करना और वासुकि नाग की सहायता करना [**चित्र– 2: (र)]**—यह उनकी '*दैवीय सेवा' (Cosmic Duty)* का प्रत्यक्ष उदाहरण है।

- **पौराणिक और दार्शनिक पृष्ठभूमि**

पाताल लोक केवल भूमिगत स्थान नहीं, बल्कि *अचेतन जगत* या *सुप्त ऊर्जा क्षेत्र* का प्रतीक है। यह मानव मन के भीतर स्थित उस गहराई का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ ऊर्जा सुप्त रूप में विद्यमान रहती है। हनुमान जी का पाताल में प्रवेश वास्तव में ***अवचेतन चेतना में उतरने*** और वहाँ से ऊर्जा को सक्रिय करने का रूपक है (Vivekananda, 2018)।

क्वांटम ऊर्जा की अवधारणा

आधुनिक भौतिकी के अनुसार, क्वांटम स्तर पर ऊर्जा निरंतर गति और परिवर्तनशीलता में होती है। यह सूक्ष्म कण स्तर पर कार्य करती है, जहाँ समय और स्थान की सीमाएँ लुप्त हो जाती हैं (Bohm, 1980)।

हनुमान जी की पाताल यात्रा इस सिद्धांत से साम्य रखती है — जब वे भौतिक सीमाओं को लांघकर पृथ्वी के भीतर प्रवेश करते हैं, तो वे उसी *क्वांटम सुपरपोजिशन* स्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं जहाँ भौतिक और दैवी दोनों अस्तित्व एक हो जाते हैं।

- **आध्यात्मिक दृष्टि**

पाताल यात्रा का गूढ़ अर्थ है — *कुंडलिनी ऊर्जा का अवरोहण और पुनः आरोहण*।

हनुमान जी जब पाताल में उतरते हैं, तो वे मूलाधार चक्र की सुप्त ऊर्जा को जाग्रत करते हैं। यह यात्रा "ऊर्जा का शुद्धिकरण" भी है, क्योंकि वहाँ वे अंधकारमय शक्तियों (नकारात्मक ऊर्जा) को परास्त करते हैं।

क्वांटम दृष्टि से यह एक प्रकार की *एंट्रॉपी से एनर्जी रिस्टोरेशन (Entropy to Order Transformation)* प्रक्रिया है, जिसमें ऊर्जा पुनः संतुलित अवस्था में आती है (Nanda, 2020)।

- **विज्ञान और दर्शन का संगम**

हनुमान जी की यह यात्रा दर्शाती है कि चेतना का सबसे गहरा स्तर भी ऊर्जा के रूप में सक्रिय किया जा सकता है। पाताल, ब्रह्मांड की "*अदृश्य परत" (Subspace Realm)* का प्रतीक है, जो आधुनिक विज्ञान में *डार्क एनर्जी* और *क्वांटम फील्ड* के समान है। इस प्रकार, हनुमान की यह यात्रा केवल पौराणिक कथा नहीं, बल्कि *क्वांटम ऊर्जा के अस्तित्व और उपयोग की दार्शनिक परिकल्पना* है।

- **दर्शनिक निष्कर्ष**

"जो चेतना के अंधकार में प्रवेश कर वहां से प्रकाश निकाल लाए, वही वास्तविक क्वांटम साधक है।"

हनुमान जी इस दृष्टि से *क्वांटम योगी* हैं — जो सूक्ष्म और स्थूल दोनों जगतों में समान रूप से गति कर सकते हैं।

2.6 गदा - मिसाइल का प्रतीक

हनुमान जी की गदा केवल एक शस्त्र नहीं, बल्कि **ऊर्जा संकेन्द्रण और दैवी प्रक्षेपण** का प्रतीक है। यह प्रसंग उन्हें *दैवीय अभियंता* और *ऊर्जा-प्रक्षेपक (Energy Propulsionist)* के रूप में प्रस्तुत करता है।

- **पौराणिक और तकनीकी पृष्ठभूमि**

हनुमान की गदा का वर्णन रामायण और महाभारत दोनों में मिलता है। यह स्वर्ण या तेजोमय धातु से बनी बताई गई है, जो *प्रकाश ऊर्जा का संकेन्द्रण* करती है। पौराणिक दृष्टि से यह "ब्रह्मदत्त अस्त्र" के समान एक शस्त्र है जो केवल इच्छा-शक्ति और प्राणशक्ति से सक्रिय होता है (Sastry, 2017)।

- **गदा का वायुगतिकीय और मिसाइल तुल्य स्वरूप**

यदि वैज्ञानिक दृष्टि से देखें, तो हनुमान की गदा *काइनेटिक एनर्जी वेपन* जैसी प्रतीत होती है।
जब हनुमान युद्ध में इसका प्रयोग करते हैं, तो उसमें तीनों का संगम होता है।

1. **प्रक्षेपण बल (Thrust Force)**
2. **घूर्णन गति (Angular Momentum)**
3. **ध्वनि ऊर्जा (Sonic Impact)**

यह आधुनिक मिसाइल की तरह कार्य करता है, जिसमें प्रक्षेपण और लक्ष्य-भेदन दोनों ही ऊर्जा-समन्वित प्रणाली से संपन्न होते हैं। वायुगतिकीय विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि गदा का गोलाकार अग्रभाग और सघन दंड-आकार इसे *Aerodynamic Stability* प्रदान करता है, जिससे इसका प्रभाव अधिकतम होता है (Tripathi & Singh, 2022)।

- **गदा का ऊर्जा-सिद्धांत**

गदा ऊर्जा का संकेन्द्रण प्रतीक है — "संग्रह से प्रक्षेप तक"।
हनुमान की गदा उनके भीतर स्थित प्राणिक ऊर्जा का बाह्य विस्तार है। आधुनिक भौतिकी में इसे *Energy Transduction System* कहा जा सकता है, जिसमें मानसिक तरंगें भौतिक प्रभाव उत्पन्न करती हैं (Raina, 2018)।

हनुमान जब गदा उठाते हैं, तो वह केवल भौतिक शक्ति का प्रयोग नहीं, बल्कि *ट्रांसड्यूस्ड एनर्जी वेक्टर* का उपयोग है — जहाँ इच्छा (Intention) भौतिक वेग (Momentum) में परिवर्तित होती है।

- **गदा का प्रतीकात्मक महत्व**

गदा का शीर्ष भाग 'सत्य' का प्रतिनिधित्व करता है और उसका दंड भाग 'धर्म' का। यह संयोजन *नीति और बल* के संतुलन का प्रतीक है। आधुनिक दार्शनिक दृष्टि से यह **Ethical Kinetics** का सिद्धांत है — कि हर ऊर्जा-प्रक्षेपक को नैतिक दिशा चाहिए, अन्यथा वह विनाशक बन जाती है।

- **दर्शनिक निष्कर्ष**

"गदा केवल शस्त्र नहीं, सत्य का प्रक्षेपक है।"
हनुमान की गदा इस तथ्य की याद दिलाती है कि प्राणशक्ति जब धर्म के नियंत्रण में हो, तभी वह रक्षा का साधन बनती है, अन्यथा विनाश का।

2.7 चालीसा–अष्टक के वैज्ञानिक सूत्र

हनुमान चालीसा और हनुमान अष्टक केवल भक्ति-गीत नहीं, बल्कि *ध्वन्यात्मक ऊर्जा विज्ञान (Phonetic Energy Science)* के अद्भुत ग्रंथ हैं। तुलसीदासजी ने इन रचनाओं में ऐसे ध्वनि-संयोजन और लयात्मक सूत्रों का प्रयोग किया है जो *न्यूरो-वाइब्रेशनल थेरेपी* के समान कार्य करते हैं।

- **ध्वनि और तरंग का विज्ञान**

ध्वनि (Sound) एक ऊर्जा रूप है जो तरंगों (waves) के रूप में संचरित होती है। प्रत्येक ध्वनि का शरीर और मस्तिष्क पर विशिष्ट प्रभाव पड़ता है।
हनुमान चालीसा में प्रयुक्त शब्द जैसे — "जय हनुमान ज्ञान गुन सागर", "राम दूत अतुलित बलधामा", "संकट ते हनुमान छुड़ावे" — इनकी लयबद्ध पुनरावृत्ति *अल्फा ब्रेन वेव्स* (8–12 Hz) को सक्रिय करती है (Tandon, 2019), जो ध्यानावस्था और मानसिक स्थिरता उत्पन्न करती है।

- **चालीसा के 40 छंदों की ऊर्जा-गणना**

चालीसा के 40 छंद *मानव शरीर के 40 ऊर्जा केन्द्रों* (नाड़ी संयोजनों) का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रत्येक छंद एक विशिष्ट आवृत्ति (frequency) उत्पन्न करता है जो शरीर के एक नाड़ी समूह को सक्रिय करता है।
यह सिद्धांत योग-शास्त्र में "*नाद-योग*" के रूप में जाना जाता है, जिसमें ध्वनि के कंपन से *प्राण शक्ति का संचार* होता है (Dwivedi, 2018)।

- **हनुमान अष्टक का ब्रेन–हार्ट कोहेरेंस**

हनुमान अष्टक के श्लोक — "*मनोजवं मारुततुल्यवेगं*" आदि — में प्रयुक्त ध्वनि-संयोजन *हृदय और मस्तिष्क के तालमेल (Heart–Brain Coherence)* को सक्रिय करता है।

आधुनिक न्यूरोकार्डियोलॉजी बताती है कि जब मस्तिष्क और हृदय की विद्युत तरंगें एक समान पैटर्न में आती हैं, तब व्यक्ति में *भावनात्मक संतुलन और आत्मविश्वास* बढ़ता है (McCraty, 2021)।

हनुमान अष्टक का नियमित पाठ यह संतुलन स्थापित करता है, जिससे व्यक्ति के भीतर भय, उदासी और अस्थिरता का नाश होता है।

- **विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय**

तुलसीदासजी ने यह चालीसा उस युग में लिखी जब ध्वनि के चिकित्सीय प्रभावों पर वैज्ञानिक शोध नहीं थे, परंतु उन्होंने *अनुभवजन्य विज्ञान* के माध्यम से यह सिद्ध किया कि *भक्ति और विज्ञान का केंद्र एक ही — तरंग और ऊर्जा का संतुलन* है।

- **दर्शनिक निष्कर्ष**

"चालीसा के छंद और अष्टक के श्लोक केवल भक्ति नहीं, ध्वनि के माध्यम से आत्मा की चिकित्सा हैं।"
हनुमान चालीसा एक *विज्ञानमय साधना* है जो मानव ऊर्जा को संतुलित कर *दैवी चेतना* से जोड़ती है।

2.8 टेलीपैथिक संचार

हनुमान जी की एक अद्भुत क्षमता थी — ***टेलीपैथिक कम्युनिकेशन (Telepathic Communication)***, अर्थात बिना बोले, बिना किसी माध्यम के, *चेतन-चेतन संवाद।*

- **पौराणिक उदाहरण**

जब वे लंका में सीता माता से मिलते हैं, तब संवाद केवल शब्दों तक सीमित नहीं रहता। सीता माता उनके हृदय में *राम नाम अंकित* देखकर तुरंत विश्वास करती हैं। यह एक *सहज चेतन संवाद* है — जहाँ तरंगें विचारों के स्तर पर मिलती हैं।
इसी प्रकार, राम जी युद्ध के समय दूर से हनुमान को स्मरण करते हैं और वह तुरंत उनकी इच्छा को जान लेते हैं। यह घटना *टेलीपैथिक रिसेप्शन* का सर्वोच्च उदाहरण है।

- **वैज्ञानिक दृष्टिकोण**

आधुनिक न्यूरोसाइंस में टेलीपैथी को *माइक्रो इलेक्ट्रोमैग्नेटिक ब्रेन वेव्स इंटरफेरेंस* के रूप में व्याख्यायित किया जाता है (Persinger, 2010)। मानव मस्तिष्क की तरंगें 0.5–40 Hz तक की आवृत्तियों पर कार्य करती हैं। जब दो व्यक्तियों की मस्तिष्क तरंगें एक समान फेज में आती हैं, तब विचार या भावनाएँ बिना शब्दों के स्थानांतरित हो सकती हैं।
हनुमान जी के लिए यह संभव था क्योंकि उनकी चेतना "वायु तत्व" से नियंत्रित थी, और वायु ही *सूचना संचार का दैवी माध्यम* है।

- **योग और टेलीपैथी**

राजयोग और ध्यान की गहन अवस्थाओं में साधक "प्रत्याहार" और "धारण" के माध्यम से अपने मस्तिष्कीय तरंगों को नियंत्रित करता है।
हनुमान जी इस योगिक सिद्धि के सर्वोच्च साधक थे — उनका मन पूर्णतः निर्विचार (thoughtless) था, जिससे उनकी *चेतन तरंगें अन्य चेतनाओं से तुरंत संप्रेषित हो जाती थीं* (Ramakrishna Mission, 2017)।

- **क्वांटम संचार दृष्टि**

क्वांटम फिजिक्स में *Quantum Entanglement* नामक सिद्धांत बताता है कि दो कणों के बीच, दूरी चाहे कितनी भी हो, सूचना तुरंत संचारित हो सकती है।
हनुमान जी की टेलीपैथिक क्षमता इसी "***क्वांटम एंटैंगलमेंट ऑफ कॉन्शियसनेस***" की दैवी अभिव्यक्ति थी — एक ऐसा ऊर्जा–संपर्क जिसमें *राम की चेतना* और *हनुमान की चेतना* एक ही तरंग पर जुड़ी हुई थी।

- **दर्शनिक निष्कर्ष**

"जहाँ वाणी मौन हो और चेतना एक हो जाए, वहीं टेलीपैथी संभव है।"
हनुमान जी यह दर्शाते हैं कि जब मन पूर्णतः शुद्ध हो जाता है, तब वह ***दैवी संकेतों का माध्यम*** बन जाता है — शब्दों से परे, परंतु सत्य के अत्यंत निकट।

अतः उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि , हनुमान चरित्र केवल एक पौराणिक कथा नहीं, बल्कि ***ऊर्जा, चेतना और विज्ञान का जीवंत प्रतीक*** है। बाल्यकाल से लेकर पाताल यात्रा तक, हनुमान जी की प्रत्येक लीला मनुष्य की आंतरिक शक्ति और चेतना-विस्तार की यात्रा का रूपक है।
उनमें हम देखते हैं —

- **सौर ऊर्जा का आत्मसात** (बाल्यकाल),
- **मानसिक संतुलन और कूटनीति का विज्ञान** (किष्किन्धाकाण्ड)

- **दैवी वायुगतिकी और प्राण नियंत्रण** (सुन्दरकाण्ड),
- **औषधीय पुनर्जनन और पारिस्थितिक संवेदना** (लंकाकाण्ड)
- **क्वांटम ऊर्जा का उपयोग** (पाताल यात्रा),
- **ऊर्जा-संकेन्द्रण का प्रतीक शस्त्र** (गदा),
- **ध्वनि-विज्ञान आधारित भक्ति सूत्र** (चालीसा-अष्टक)
- **टेलीपैथिक चेतना-संचार** (दैवी संप्रेषण)।

हनुमान जी का समग्र चरित्र हमें यह संदेश देता है कि *विज्ञान और अध्यात्म विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं* । जब मानव अपने भीतर की चेतना को जागृत करता है, तब वह भी "दैवी वायुगतिकी" में उड़ सकता है — सीमाओं से परे, ऊर्जा के साथ एकाकार होकर ।

3. निष्कर्ष

रामायण में हनुमान जी का चरित्र केवल भक्ति, वीरता और सेवा का प्रतीक नहीं, बल्कि वह प्राचीन वैदिक विज्ञान और आधुनिक ऊर्जा सिद्धांतों के बीच एक अद्भुत सेतु है। उनका सम्पूर्ण जीवन मानव चेतना के उस उच्चतम स्तर का उदाहरण प्रस्तुत करता है, जहाँ भौतिकता और अध्यात्म, विज्ञान और योग, भक्ति और ऊर्जा—सभी एकीकृत होकर ब्रह्मांडीय संतुलन का निर्माण करते हैं।

हनुमान जी के बाल्यकाल से लेकर पाताल यात्रा तक के प्रत्येक प्रसंग में ऊर्जा-विज्ञान के गूढ़ संकेत निहित हैं। सूर्य को निगलने का प्रयास सौर ऊर्जा के प्रति आकर्षण का प्रतीक है, जो दर्शाता है कि चेतना प्रकाश स्रोत से एकात्म हो सकती है। समुद्र पार की उड़ान प्राण-वायु के नियंत्रण द्वारा प्राप्त "दैवीय वायुगतिकी" की परिणति है—जहाँ शरीर, मन और प्राण एक लय में संचालित होते हैं। लंका-दहन दहन-ऊर्जा के वैदिक प्रयोग का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि संजीवनी पर्वत का उठाना औषधीय और जैव-ऊर्जा पुनर्संयोजन का उदाहरण है।

गदा का प्रयोग हनुमान जी के चरित्र में विज्ञान और धर्म के एकीकृत रूप को उजागर करता है। यह केवल शस्त्र नहीं, बल्कि Angular Momentum और Gyroscopic Stability का प्रतीक है, जो यह दर्शाता है कि बल तभी सार्थक है जब वह धर्म द्वारा नियंत्रित हो। इसी प्रकार हनुमान चालीसा और अष्टक में निहित ध्वनि-सूत्र "फोनेटिक एनर्जी ट्रांसफॉर्मेशन" के सिद्धांत को सशक्त बनाते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भक्ति और विज्ञान दोनों ही तरंगों और आवृत्तियों के नियमन पर आधारित हैं।

पाताल यात्रा में हनुमान जी का प्रवेश मानव चेतना के क्वांटम आयाम का प्रतीक है—जहाँ वे अवचेतन की गहराइयों से सुप्त ऊर्जा को पुनः सक्रिय करते हैं। यह प्रक्रिया क्वांटम ऊर्जा पुनर्संतुलन (Quantum Energy Rebalancing) की आधुनिक अवधारणा के समान है, जिसमें अराजकता से पुनः व्यवस्था की उत्पत्ति होती है। इस दृष्टि से हनुमान जी न केवल देवता, बल्कि "क्वांटम योगी" भी हैं—जो चेतना के स्थूल और सूक्ष्म स्तरों में समान गति कर सकते हैं।

समग्र रूप से, हनुमान जी का चरित्र यह दर्शाता है कि भक्ति केवल आस्था नहीं, बल्कि ऊर्जा रूपांतरण की वैज्ञानिक प्रक्रिया है। जब मन, वचन और कर्म एकाग्र होकर भक्ति में समर्पित होते हैं, तब उनमें "Conscious Energy Activation" की स्थिति उत्पन्न होती है, जो व्यक्ति को असंभव प्रतीत होने वाले कार्यों को संपन्न करने की सामर्थ्य देती है। यही दैवीय वायुगतिकी का वास्तविक अर्थ है—जहाँ चेतना और वायु, श्रद्धा और शक्ति, विज्ञान और अध्यात्म—सभी एक ही सूत्र में बंधकर दैवी गति (Divine Motion) का निर्माण करते हैं।

आधुनिक युग में, जब मानवता ऊर्जा संकट, मानसिक असंतुलन और पारिस्थितिक अस्थिरता का सामना कर रही है, तब हनुमान जी का चरित्र मार्गदर्शक बनकर सामने आता है। उनका जीवन हमें सिखाता है कि सच्चा विज्ञान वही है जो प्रकृति और चेतना के साथ सामंजस्य स्थापित करे। यदि मनुष्य हनुमान की भांति अपनी प्राणशक्ति को धर्म, नीति और सेवा के नियंत्रण में रखे, तो वह न केवल व्यक्तिगत उत्थान बल्कि ब्रह्मांडीय संतुलन का भी साधक बन सकता है।

इस शोध का निष्कर्ष स्पष्ट करता है कि हनुमान जी का चरित्र "दैवीय वायुगतिकी" का सजीव प्रतीक है—जहाँ प्राण, वायु, और चेतना का समन्वय विज्ञान की सर्वोच्च उपलब्धि बन जाता है। वे इस सत्य के प्रमाण हैं कि जब भक्ति में विज्ञान और विज्ञान में भक्ति का समावेश होता है, तब मानव स्वयं "दैवी ऊर्जा का संवाहक" बन जाता है।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. Aurobindo, S. (2005). *The Life Divine.* Pondicherry: Sri Aurobindo Ashram. (Original work published 1939)
2. Bohm, D. (1980). *Wholeness and the Implicate Order*. London: Routledge.
3. Deshpande, P. (2019). *Psychophysiology and Energy Regulation in Human Behaviour*. New Delhi: Sage.
4. Dwivedi, S. (2018). *Nada Yoga and the Science of Sound Healing*. Varanasi: Motilal Banarsidass.
5. Joshi, P. (2022). *Ancient Indian Aerodynamics and the Myth of Hanuman.* Indian Journal of Vedic Science, 14(2), 115–128.

6. Joshi, R. (2017). *Resonance Principles in Indian Epics*. Journal of Indic Science, 5(2), 56–68.
7. Kumar, V., & Bhatnagar, A. (2020). *Medicinal Herbs and Immune Modulation: A Review*. Indian Journal of Ayurveda Research, 12(3), 201–210.
8. McCraty, R. (2021). *Heart-Brain Coherence and Emotional Balance*. HeartMath Institute Publications.
9. Mehta, R. (2019). *Phytochemical Holism and Energy Restoration*. Journal of Ethnobotany, 9(1), 44–53.
10. Mukherjee, R. (2017). *Psychic Aerodynamics in Vedic Philosophy.* Journal of Indic Studies, 9(3), 54–67.
11. Nanda, A. (2020). *Entropy and Energy Balance in Conscious Systems*. Indian Journal of Quantum Studies, 4(1), 13–27.
12. Patel, J. (2021). *Quantum Coherence in Biological Systems*. Springer Nature.
13. Persinger, M. A. (2010). *Telepathic Brain Wave Synchronization: Electromagnetic Models*. Neuroscience and Consciousness Review, 8(4), 155–169.
14. Radhakrishnan, S. (2021). *Yoga and Energy Flow through Chakras*. Chennai: Adyar Publications.
15. Raina, R. (2018). *Energy Transduction and Human Willpower*. Journal of Conscious Energy, 2(1), 9–18.
16. Ramakrishna Mission. (2017). *Yoga Sutras and Psychic Communication*. Kolkata: RM Institute.
17. Ramaswamy, K. (2018). *The Science of Prana and Conscious Energy.* Delhi: Motilal Banarsidass.
18. Rao, M. (2016). *Solar Bioenergetics in Ancient Indian Texts*. Indian Science Heritage Review, 3(2), 77–85.
19. Sastry, P. (2017). *Weapons of Energy in Ramayana and Mahabharata*. Delhi: Bharatiya Vidya Prakashan.
20. Sharma, V. (2018). *Aerodynamics and Mythic Flights in Vedic Texts*. Journal of Ancient Aeronautics, 6(3), 89–105.
21. Sharma, V. (2020). *Telepathic Traditions in Hindu Epics.* Indian Review of Science & Culture, 12(4), 201–219.
22. Singh, B. R., & Kulshreshtha, A. (2023). *Divine Aerodynamics: A Vedic Interpretation of Hanuman's Character in Ramayana.* SMS Vedic Science Centre, Lucknow.
23. Singh, B. R., & Sharma, N. (2020). *Symbolism of Energy in Hanuman's Character*. Lucknow Journal of Indic Studies, 2(4), 101–118.
24. Tandon, A. (2019). *Vibrational Healing and the Hanuman Chalisa Effect*. Journal of Spiritual Neuroscience, 1(1), 22–34.
25. Tripathi, M., & Singh, B. (2022). *Kinetic Analysis of Traditional Weapons: The Case of Gada*. Journal of Mechanical Heritage, 10(2), 47–62.
26. Tripathi, N. (2019). *Bhakti and Bio-Energy in Yogic Psychology.* Journal of Consciousness Studies, 7(1), 33–48.
27. Vivekananda, S. (2018). *Spiritual Energy and Subconscious Depths*. Advaita Press.

आधुनिक युग में तुलसीदास के राम की प्रासंगिकता

एन. लावण्या
एतिराज महिला महाविद्यालय
(lavanyavarsha76@gmail.com)

तुलसीदास भक्तिकाल के सगुण भक्ति धारा के राम भक्ति शाखा के प्रख्यात कवि है। तुलसी ने रामचरितमानस के ज़रिए भगवान राम की भक्ति को घर-घर तक पहुँचाया है। तुलसीदास ने अपने काव्य में भक्ति-भावना, समन्वयत्मकता, भ्रातृत्व, विषय की व्यापकता, तत्कालीन समाज का चित्रण, युगबोध आदि विषयों पर साहित्य केंद्रित है । तुलसीदास ने राम के प्रति अनन्य भक्ति-भावना व्यक्त किया है ।भगवान श्री राम को अपना आराध्य मानकर अनन्य भाव की भक्ति तुलसी ने की थी जो उनके गीतावली एवं कवितावली में देख सकते हैं । राम वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व के नेताओं और जनता का सपना बना हुआ है। हम इन्हीं ग्रंथों की महिमा के आधार पर तुलसी के साहित्य की प्रासंगिकता पर प्रकाश डाल सकते हैं। राम वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व के नेताओं और जनता का सपना बना हुआ है। समस्त भारत देश में इन दिनों भावनात्मक एकता की कमी महसूस की रही है जिसके कारण तुलसी के राम की प्रासंगिकता और बढ़ गयी है। इस महान कवि ने राम राज की कल्पना द्वारा 'ना ही दरिद्र कोई दुखी ना दीना' (उत्तरकाण्ड) का आदर्श प्रस्तुत किया गया। सभी प्रकार के दुखों से मुक्ति का तुलसी के रामराज्य में गंभीर रचनात्मक आश्वासन है।

बीज शब्द: तुलसीदास- समस्त दोषों से मुक्ति— आदर्श – राम की प्रासंगिकता – रामचरितमानस - स्नेह आत्मीयता, भक्त वत्सलता, सद्भाव और प्रेम की ''अद्भुत मिसाल हैं - राम' ।

तुलसीदास भक्तिकाल के सगुण भक्ति धारा के राम भक्ति शाखा के प्रख्यात कवि है। तुलसी ने रामचरितमानस के ज़रिए भगवान राम की भक्ति को घर-घर तक पहुँचाया है। तुलसी का साहित्य भक्ति-भावना को जागृत करते हुए सामाजिक चेतना का भी प्रसार करता है। कवि तुलसीदास का काव्य और दृष्टिकोण आज भी उतना ही लोकप्रिय और प्रासंगिक है जितना तत्कालीन समय में था । तुलसीदास की सामाजिक और लोकवादी दृष्टि भक्तिकाल के अन्य कवियों से अधिक व्यापक और गहरी है । तुलसीदास ने अपने काव्य में भक्ति-भावना, समन्वयत्मकता, भ्रातृत्व, विषय की व्यापकता, तत्कालीन समाज का चित्रण, युगबोध आदि विषयों को दर्शाया है । तुलसीदास ने राम के प्रति अनन्य भक्ति-भावना व्यक्त किया है ।भगवान श्री राम को अपना आराध्य मानकर अनन्य भाव की भक्ति तुलसी ने की थी जो उनके गीतावली एवं कवितावली में देख सकते हैं । हम इन्हीं ग्रंथों की महिमा के आधार पर तुलसी के साहित्य की प्रासंगिकता पर प्रकाश डाल सकते हैं। राम वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व के नेताओं और जनता का सपना बना हुआ है। समस्त भारत देश में इन दिनों भावनात्मक एकता की कमी महसूस की रही है जिसके कारण तुलसी के राम की प्रासंगिकता और बढ़ गयी है। इस महान कवि ने राम राज की कल्पना द्वारा 'ना ही दरिद्र कोई दुखी ना दीना' (उत्तरकाण्ड) का आदर्श प्रस्तुत किया गया। सभी प्रकार के दुखों से मुक्ति का तुलसी के रामराज्य में गंभीर रचनात्मक आश्वासन है।

लोक कल्याणकारी कथा के रूप में राम चरित्र-गाथा का बखान करने वाली यह रचना अपने रचनाकाल के 500 वर्षों के पश्चात् भी सतत् लोकप्रिय बनी हुई है निश्चय ही यह साधारण कवि की साधारण काव्य नहीं है । राम के लोक रंजक मर्यादा पुरुषोत्तम रूप का प्रस्तुत करने में तुलसी का कोई सानी नहीं। राम भक्ति से सरोबार तुलसी के लिये-

भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप
किए चरित्र पावन परम, प्रकृत नर अनुरूप

अर्थात् राम अपनी भक्तों की रक्षा के लिए न जाने किस किस रूप में अवतरित होते हैं उनका चरित संसार को सुख प्रदान करने वाला है, कलियुग के समस्त दोषों से मुक्ति प्रदान करने वाला है। स्नेह आत्मीयता, भक्त वत्सलता, सद्भाव और प्रेम की ''अद्भुत मिसाल हैं - राम' ।

आज के मानव समाज जिन विसगतियाँ और विडंबनाओं का सामना कर रहा है उनसे मुक्त पाने के लिए तुलसी का काव्य रामचरित मानस विशेष रुप से प्रासंगिक है। समाज अनेक वर्गो और वर्णो में विभाजित है। मानव-मानव के बीच विषमता शिखर पर पहुँच गयी है।समस्त भारत देश में इन दिनों भावनात्मक एकता की कमी महसूस की रही है जिसके कारण तुलसी के राम की प्रासंगिता और बढ़ गयी है। इस महान कवि ने राम राज की

कल्पना द्वारा ’ना ही दरिद्र कोई दुखी ना दीना’ (उत्तरकाण्ड) का आदर्श प्रस्तुत किया गया। सभी प्रकार के दुखों से मुक्ति का तुलसी के रामराज्य में गंभीर रचनात्मक आश्वासन है। आज पूरे विश्व में इस महान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मानवसंघर्ष से तीव्र होता जा रहा है।

तुलसी ने लिखा है- ‘जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी, सोई नृप अवसि नरक अधिकारी।‘। (अयोध्याकांड) अर्थात जिस राजा के राज्य में प्रजा दुखी है, अभावग्रस्त जीवन व्यतीत कर रही है, वह राजा निश्चय ही नरक का अधिकारी है। तुलसी की यह पंक्तियाँ आज के शासक वर्ग को पूरे मनोयोग से पढ़ने और समझने की आवश्यकता है।

आधुनिक समाज में, महाभारत और रामायण जैसे पुराने महाकाव्यों की आधुनिक लोगों के कम्प्यूटरीकृत जीवन को बदलने के लिए असीमित प्रासंगिकता है। हमारा जीवन व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति में बसा हुआ है और हमारा रूप कभी भी हमारे व्यक्तिगत लक्ष्यों से आगे नहीं जाता है। यहां हमें भगवान राम या भगवान कृष्ण जैसे महान लोगों के दिशानिर्देशों की आवश्यकता है। भगवान राम भौतिकवाद के बवंडर में खोई हुई वर्तमान पीढ़ी के लिए महान आदर्श हैं, जो अराजकता और भ्रांतियों की ओर ले जाती है।

मर्यादा पुरूषोत्तम की अवधारणा“ऋषियों के गीतों में त्याग का महान स्वर है। और यह बलिदान दो प्रकार का है, (i) मानस का बलिदान, अर्थात्, निचले मन का संयम ,गणना और विवेक की क्षमता; (ii) मानसिक प्रकृति या इच्छा सिद्धांत का त्याग। इस दोहरे त्याग का अर्थ है "अहंकार का त्याग", "व्यक्तित्व" का त्याग। समस्त व्यक्तित्व के पीछे महापुरुष खड़ा है। भगवान राम की रोशनी, कृष्ण की रोशनी, मसीह की रोशनी, महिमा में चमकती है, जब "अहंकार" के पर्दे हटा दिए जाते हैं तब भगवान राम का व्यक्तित्व उनके आचरण की मर्यादा में मर्यादा पुरूषोत्तम की पंक्ति से घिरा है, जो पुरुषों में अद्वितीय है। उनका व्यक्तित्व उन्नत शारीरिक शक्तियों, महान मानसिक संतुलन, मानव जाति की सीमा से ऊपर आध्यात्मिक शक्तियों से युक्त है, जो समय के भंवर में हर व्यक्ति के लिए आदर्श है और मानव जाति में सर्वश्रेष्ठ की इच्छा रखता है। भगवान राम में सभी स्तरों पर उन्नति है - शारीरिक शक्ति की उन्नति, नैतिक आधार पर मानसिक उन्नति, एक बेटे के रूप में, एक भाई के रूप में, एक पति के रूप में, बुराई से लड़ने के लिए एक शासक के रूप में भक्ति और ईमानदारी के साथ पारिवारिक मानदंडों की सेवा करना। समाज को आनंद और खुशहाली से परिपूर्ण बनाने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए। वह व्यक्ति, परिवार और समग्र रूप से समाज की वृत्ताकार, रैखिक और सर्पिल प्रगति का पूर्ण अवतार हैं।

तुलसी के राम एक ऐसे राजा का आदर्श प्रस्तुत करते हैं जो परम उदार हैं, परदुःखकातर हैं। प्रजा वत्सल हैं, बिना कुछ लिए ही दीनों के प्रति सहानुभूति दिखाते हैं, उनका उद्धार करते है। शासक के रुप में ऐसे राजा राम की अनिवार्यता हर युग को रहेगी। सनातन काल तक मानव समाज राम जैसे शासक की प्रतीक्षा करता रहेगा। तुलसी काव्य की प्रासंगिकता आज के मानव समाज में इस दृष्टि से भी है कि वह धार्मिकता के सच्चे स्वरुप को उजागर करता है, विशेषतः हिन्दु समाज जो अनेक कुरीतियों को प्राश्रय दे रहा है। तुलसी कृत रामचरित मानस में वर्णित मानवीय संबंधों से परिचित होकर संभव है कुछ आत्म परिष्कार कर सकें। तुलसीदास की ही यह पंक्ति है –

‘कन्द मूल फल सुरस अति, दिए राम कहुँ आनि ।
प्रेम सहित प्रभु खाए, बारंबार बखानि‘।। (अरण्यकाण्ड)

जहाँ श्रीरामचन्द्र की उदात्तता प्रकट होती है। राम की यही उदात्तता हमें और हमारे समाज में फैले उँच-नीच, जाति-पाति के भेद को मिटाने के लिए तत्पर रहेगा।

भगवान राम का विशाल व्यक्तित्व रामायण के सभी पात्रों पर भारी पड़ता है। रामायण में हनुमान आस्था के विकास के प्रतीक हैं। "जब भगवान राम हनुमान से पूछते हैं, 'तुम मुझे कैसे देखते हो?' महान वानर तीन भागों में उत्तर देता है, 'जब मैं मानता हूं कि मैं शरीर हूं, तो मैं आपका वफादार सेवक हूं। जब मैं जानता हूं कि मैं आत्मा हूं, तो मैं जानता हूं कि मैं आपके शाश्वत प्रकाश की एक चिंगारी हूं। और जब मुझे सत्य का दर्शन होता है, तो आप और मैं, मेरे प्रभु, एक ही होते हैं।'इस उत्तर के साथ वह हमें तीन अवस्थाएँ दिखाते हैं जिनसे हम अपनी आध्यात्मिक खोज में गुजरते हैं। कई बार हम उस व्यक्ति, शरीर-मन-अहंकार से अपनी पहचान बना लेते हैं जिसके बारे में हम सोचते हैं कि हम वही हैं। उस समय हम महसूस कर सकते हैं कि हम यहां भगवान का काम करने के लिए, अपने और हर चीज में मौजूद उस उच्च स्व की सेवा करने के लिए हैं। यह कर्म योग की नींव है, सेवा का योग है।’’

यह अकारण नहीं है कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने गोस्वामी तुलसीदास को गौतम बुद्ध के बाद भारत का सबसे बड़ा लोकनायक कहा था। लोकनायक वह होता है जो समन्वय कर सके। हमारा समाज अनेक वर्णो और वर्गो में बटा हुआ एक विखंडित समाज बन गया है। इसमे ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, शासक-शासित का भेद बढ़ता ही जा रहा है। अनेकता की प्रवृतियाँ स्वाभाविक हैं। किन्तु अनेकता में एकता ही किसी सबल और सक्रिय जाति और देश की पहचान होती है। आज के विषम परिवेश में तुलसी कृत रामचरित मानस के अनुशीलन से अनेकता में एकता के तत्वों को पहचाना जा सकता है। और विखंडित समाज को अखंड भारत के आदर्श से जोड़ा जा सकता है।तुलसी ने जिस राम का आदर्श सामने रखा है, वह विशिष्ट है। शासन सूत्र, सम्बन्धों से घिरे हुए क्षुद्र मनुष्य के हाथों में पड़ कर समाज को पतनशीलता की ओर ले जाता है। राम सब प्रकार की क्षुद्रताओं से मुक्त स्वार्थ संबधों से उपर उठे हुए आदर्श का नाम है। उनके बारे में तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में लिखा है- ’ऐसों को उदार जग माही बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ‘।।

तुलसी और उनकी रामचरितमानस मनुष्य के उत्कर्ष का गान है। प्रत्येक काण्ड का अपना वैशिष्ट्य है। ज्ञानी पुरुष इनके आध्यात्मिक महात्म्य को बताते हैं। स्वयं तुलसीदास बार बार राम कथा को मानव-उद्धार की प्रेरक गाथा मान कर मोक्ष प्राप्ति का अनमोल साधन मानते हैं।राम कथा सत्कर्मों की ओर ले जाती है, भक्ति का भाव जगाती है। मानव जीवन का आदर्श रूप क्या हो सकता है। इसका विचार जगाती है, धर्म का उदात्ता स्वरूप क्या है? इसकी प्रेरणा देती है। अयोध्या अर्थात जहां युद्ध नहीं; स्वार्थ भावना नहीं, विषमता नहीं वहीं अयोध्या है। कैकेयी के मन में विषम जावों के जागृत होने पर स्वार्थ भाव पनपने की दशा में राम अयोध्या से गमन कर जाते हैं। कलह बैर क्लेश अशांतिपूर्ण वातावरण से दूर राम मनुष्य को वैर मुक्त होकर शांतिपूर्ण जीवन जीने और दूसरों के सुख के लिये अपने सुखों का त्याग करने की सीख प्रदान करता है।

राम कथा को आध्यात्मिक अर्थों में भी यदि हमारा आधुनिक मन ग्रहण न करे तो उसके साधारण अर्थ भी उतने ही श्रेष्ठ हैं। राम को विष्णु अवतार न मान कर यदि उन्हे एक साधारण मानव के रूप में स्वीकृत कर इस पूरी कथा के निहितार्थ आज के समय में अभी भी प्रासंगिक माने जा सकते हैं! आधुनिक जीवन में टूटते परिवार, आपसी कलह, भाईयों के विद्वेष पूर्ण सम्बन्ध, प्रतिस्पर्धा ने न चाहते हुए भी अनेक समस्याओं को जनम दिया है। मानसिक क्लेश, सम्बन्धों में दरार, पारस्परिक सौहार्द के अभाव में हम सब आहत हैं। भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व-पारिवारिक एकता, समरसता, परोपकार संतोष और धर्म परायणता' न जाने कब से दिव्य स्वप्न बन चुके हैं।

रामचरितमानस के माध्यम से तुलसी ने वासनाओं के शमन का मार्ग सुझाया है। राम को राज्य का लोभ नहीं! भाई के हितों की पूर्ति के लिये सौतेली मां के वचन की खातिर वे वनगमन की ओर प्रस्थान करते हैं। पिता से प्राप्त राज्य कैकेयी पुत्र भरत को अभीष्ट नहीं उनका मानना है- ''यह राज्य मेरे भाई का है। मैं तो उनका सेवक हूं।'' लक्ष्मण स्वयं राम के साथ अयोध्या का त्याग कर देते हैं राम के चरणों की प्रतीति और सीता की सेवा उन्हें सबसे प्रिय है। वन में राम प्रसन्न हैं, गूह राजा अपना राज्य राम के चरणों में अर्पित करते हैं पर राम स्वीकार नहीं करते ऐसे भाव धारण करने की प्रेरणा निश्चय ही मन में स्फुर्ति और संस्कार पैदा करने की क्षमता रखती है। वासनाओं का नाश आवश्यक है, अज्ञान से मुक्ति अपेक्षित है। ज्ञान शक्ति के विकास के लिये, सात्विक जीवन जीने की संजीवनी तुलसी प्रदान करते हैं।

विषम परिस्थितियों में कुंठाओं, तनाव पूर्ण माहौल में सार्थक जीवन कैसे जिया जाए - रामचरितमानस इसका प्रेरक साहित्य हैं। प्रकृति और जीवन की समरसता को स्थापित करने का आधार हैं राम! लोक चेतना उन्मुख करने में इसका कोई सानी नहीं। रामकथा को सम्पूर्ण समाज के लिये ग्राह्य बना कर तुलसी अमर हो गए। स्वान्त्सुखाय से समष्टि तक विस्तार देते हुए तुलसी ने इसे 'बहता नीर' बनाया है। आप ध्यान रखिएगा राम आराध्य तब तक नहीं बने जब तक वे अयोध्या में रहें, राम को तब आदर्श माना गया जब वे पिता की आज्ञा मानकर अपने भविष्य से अनभिज्ञ होकर वन को निकल पडे थे। राम जब तक अयोध्या में रहे राजकुमार राम ही रहे, वे 14 वर्ष वनवास में रहे तो मर्यादा पुरुषोत्तम राम बन गये।

आज कोई भी व्यक्ति अपने परिवार से अलग रहकर 1 साल नौकरी नहीं कर सकता, खासकर ऐसे क्षेत्र में स्थानांतरण हो जाये जहाँ सुविधाएं अल्प मात्रा में हो। स्थानांतरण की सूचना लगने मात्र से व्यक्ति के विचारों में विरान वातावरण सा छा जाता है, उसे ऐसा लगने लगता है कि जीवन ने स्थायित्व ग्रहण कर लिया हो। अत: ऐसे समय में हमें श्रीराम के चरित्र से प्रेरणा लेनी चाहिए और अपने कार्यो का कर्तव्यनिष्ठा से पालन करना चाहिए, तब तुलसी का श्रीराम वाला पात्र वास्तविक मायनों में एक आदर्श व्यक्तित्व बनाने में सफल सिद्ध होगा।

श्रीराम का चरित्र हमें सदैव सकारात्मक दृष्टिकोण रखने की सीख देता है। सकारात्मक दृष्टिकोण हमें सकारात्मक ऊर्जा तो प्रदान करता ही है, साथ ही साथ सफलता प्राप्ति में भी अहम भूमिका निभाता है। जब हमारी सोच सकारात्मक होगी तो विपरीत परिस्थितियाँ भी हमें एक सकारात्मक संबल प्रदान करेगी।अति संक्षेप में हम कह सकते हैं कि आज के मानव समाज में तुलसी का काव्य अधिकांश रुप में प्रासंगिक है।

सामाजिक न्याय, नारी की प्रतिष्ठा, समाज को मुख्यधारा में लाने का प्रयत्न अधिक से अधिक रचनात्मक हो सके एवं शान्ति व स्नेह के साथ हमारा समाज प्रगति के पथ पर निर्भय हो कर आगे बढ़े इसके लिए तुलसी कृत रामचरित मानस का अध्ययन अनिवार्य ही नहीं अपरिहार्य है। अत: कहा जा सकता है कि स्वयं तुलसी और उनकी रामचरितमानस वर्तमान में प्रासंगिकता लिये हुए है व नवीन पीढी का सभी क्षेत्रों में मार्गप्रशस्त कर रही है और करती रहेगी।

1. संदर्भ ग्रंथ सूची

1. रामचरितमानस में वर्णित यज्ञ की वर्तमान में प्रासंगिकता Singh, D., & Bhardwaj, M. (2022): Present relevance of Yagya described in Ramcharitmanas. Interdisciplinary Journal of Yagya Research, 5(1), 39-43. https://doi.org/10.36018/ijyr.v5i1.76
2. श्रीरामचरितमानस - टीकाकार (हनुमान प्रसाद पोद्दार)।
3. श्रीरामचरितमानस सप्तम सोपान योगेन्द्र प्रताप सिंह (लोकभारती प्रकाशन)।
4. तुलसी साहित्य में रामराज्य की कल्पना डा० नरेश कुमार सिहाग
5. डॉ. मधु लोमेश, एसोसिएट प्रोफेसर, अदिति महाविद्यालय,दिल्ली विश्वविद्यालय अपनी माटी(ISSN 2322-0724 Apni Maati) वर्ष-4,अंक-27 तुलसीदास विशेषांक (अप्रैल- जून,2018)

6. International Journal of Scientific & Innovative Research Studies ISSN: 2347-7660 (Print) | ISSN: 2454-1818 (Online)वर्तमान परिप्रेक्ष्य में रामचरित मानस की प्रासंगिकता जगपाल सिंह यादव।
7. मेघ) रमेश कुंतल,1967(,तुलसीभारतीज्ञानपीठ,दिल्ली ,आधुनिक वातायन से : प्रकाशन -पृष्ठसंख्या,116
8. पाण्डेय ,मैनेजर)2011 (,"भक्ति काव्य और हिंदी आलोचना",-.पृष्ठ सं ,नेशनल बुक ट्रस्ट ,नयी दिल्ली ,मधुरेश ०संपा ,संकलित निबंध ' 18

मंदोदरी और तारा का रामकथा में योगदान

सरस्वती मल्लिक
राम मल्लिक
(rammmallik@gmail.com)

1. प्रस्तावना

हिंदू धर्मग्रंथों में मंदोदरी और तारा दोनों की गणना पंचकन्याओं में होती है। ये नारियों में सर्वश्रेष्ठ और पूजनीय मानी जाती हैं। इनको प्रतिदिन स्मरण करने से बड़े पाप भी नष्ट हो जाते हैं।

अहल्या द्रौपदी तारा कुंती मंदोदरी तथा।
पंचकन्या: स्मरेन्नित्य महापातकनाशनम्।।

रामकथा में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। मंदोदरी लंकानरेश रावण की पटरानी थी और राक्षसराज मय और अप्सरा हेमा की पुत्री थी। मंदोदरी बहुत सुंदर थी। हनुमान जब सीता की खोज में लंका पहुँचे तो उसे देखकर सीता होने का भ्रन हो गया। वह नीति में अति निपुण और ज्ञानी स्त्री थी। वह रावण के बल और पराक्रम से पूर्णतया परिचित थी और राज काज में उसकी सहायिका भी थी। वह हमेशा रावण को सन्मार्ग पर चलने की सलाह देती थी। मंदोदरी के तीन पुत्र थे मेघनाद, अक्षकुमार और अचिंत्य। राम के साथ संघर्ष के समय मंदोदरी ने रावण के साथ अनेको संवाद किये और राम की महिमा और वास्तविक स्वरूप बताकर सीता को वापस करने और युद्ध रोककर राम से मैत्री करने को कह। वह नहीं माना और मारा गया। विभीषण लंका का राजा बन गया। रामकथा की तारा किष्किंधा की रानी और वानरों के राजा बालि की पत्नी थी। समुद्र मंथन के दौरान उत्पन्न हुई थी। तारा को उनकी तीव्र बुद्धि और राजनीतिक सोच के लिये जाना जाता है। अंगद तारा का पुत्र था। सुग्रीव-बाली के द्वितीय द्वंद के पहले बाली को चेतावनी दी।

राजस्थान के जोधपुर जिले में मंडोर नामक एक स्थान है जिसका नाम मंदोदरी पर ही पड़ा है और मंदोदरी वहॉ की कुलदेवी मानी जाती है। उनकी मान्यता है कि इसी स्थान पर रावण और मंदोदरी का विवाह हुआ था।

2. विस्तार

मंदोदरी की पूर्वकथा

मंदोदरी के पिता का नाम मयासुर था और माता हेमा नामक अप्सरा थी। उसका विवाह लंका नरेश रावण से हुआ था। मंदोदरी के तीन पुत्र थे मेघनाद, अक्षयकुमार और अतिकाय।रा वण का मंदोदरी से बहुत प्रेम और परस्पर विश्वास था। वह रावण के बल और पराक्रम से पूर्णतया परिचित थी राजनीति में निपुण थी और राज-काज में सहायिका भी थी।रावण को समय समय पर परमर्श देती रहती थी। रावण के पास एक जादू का वाण था ।रावण केवल इसी से मारा जा सकता था। यह मंदोदरी के शयनकक्ष में या उसके विस्तर के नीचे छिपा था। राम-रावण के अन्तिम द्वन्द्व युद्ध में राम रावण को मारने में पूर्णतया असफल रहे। विभीषण ने उन्हें दिव्य बांण के वारे में बताया जिससे रावण का बंध संभव था।हनुमान साधु के क्षद्मवेश में मन्दोदरी के कक्ष मे पहुँचे, बातों से मंदोदरी का विश्वास जीत लिया और उनसे वाण का गुप्त स्थान पता कर लिया और छीन कर राम को दे दिया। इस वाण से रावण की मृत्यु हो गई।

कुछ कहानियों में सीता को मंदोदरी की पुत्री बताया गया है। विवाह के बाद ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की उसकी पहली संतान रावण की मृत्यु का कारण बनेगी। इसलिये संतान होने पर उसे खेत में फेंक दिया गया जो बाद राजा जनक यज्ञ मे हल जोतते समय मिला था।

तारा की पूर्व कथा

एक कथा के अनुसार समुद्र मंथन के दौरान अप्सरा सब के साथ तारा प्रकट हुई ।भगवान विष्णु के फ़ैसले से तारा का विवाह किष्किन्धा के वानर राजा बाली से हुआ।तारा की बुद्धिमत्ता और साहस तथा पति के प्रति कर्तव्यनिष्ठा की सराहना पौराणिक ग्रंथों में की गई है । उसका पुत्र अंगद था।

राक्षस दुंदुभी का बाली ने बंध किया और उसका भाई मायावी प्रतिशोध लेने आया। बाली उससे लड़ने गया। सुग्रीव भी साथ गया। मायावी डर से भागकर एक गुफा में छुप गया। बाली अंदर युद्ध करने गया। सुग्रीव गुफा द्वार पर खड़ा रहा। एक साल के बाद गुफा से रक्त निकलता दिखाई पड़ा। सुग्रीव ने सोचा कि बाली मारा गया । वह गुफा के द्वार को पत्थर से बंद कर किष्किन्धा आ गया जहॉ उसका राज्याभिषेक कर दिया गया।बाली मरा नहीं था। वह लौट के आ गया ।सुग्रीव को राजा बना देख वह क्रोधित हुआ और सुग्रीव को मारने का प्रयास किया। सुग्रीव भाग कर ऋष्यमूक पर्वत चला गया । हनुमानजी भी उसके साथ थे । तारा ने बाली को सुग्रीव को क्षमा कर देने का सुझाव दिया पर बाली ने नहीं माना।

राम कथा में मंदोदरी और तारा के विषय में वर्णन

तारा के विषय में वर्णन

१. बाली को सुग्रीव से युद्ध करने से रोकना

राम से मित्रता और सहायता का बचन के बाद सुग्रीव किष्किन्धा पहुँचा और बाली को युद्ध के ललकारा। तारा ने बाली को समझाया कि अकस्मात् निर्भय होकर सुग्रीव विना कारण आपके समक्ष नहीं आ सकता है और उसे युद्ध में जाने से मना किया। बाली नहीं माना। सुग्रीव हारकर भागा परन्तु राम के समझाने से दूसरी बार युद्ध के लिये आया।तारा समझ गई कि कोई बाहरी व्यक्ति सुग्रीव की सहायता कर रहा है । कंब रामायण के अनुसार तारा ने कहा कि सुग्रा ीव की सहायता श्री राम कर रहे हैं । बाली ने कहा कि श्रीराम धर्मात्मा हैं और मेरे और सुग्रीव के युद्ध के बीच उसपर प्रहार नहीं करेंगे । तारा ने बाली को समझाया कि वह युद्ध में नहीं जाये पर बाली नहीं माना।बाली युद्ध में गया और श्रीराम के हाथों से मारा गया।

२. बाली की मृत्यु के पश्चात तारा का विलाप और श्रीराम से संवाद

बाली श्रीराम के बाण से घायल होकर मृत्यु के निकट था। श्रीराम ने उसे उसके पापों के बारे में बताया। तब तारा और अंगद वहॉ आये और विलाप करने लगे। हनुमान ने उन्हें सांत्वना दी कि अंगद के भविष्य के बारे में सोचें। बाली ने तारा और अंगद को संरक्षण प्रदान करने को कहा और देह त्याग दिया। श्रीराम ने तारा को उपदेश दिया।आत्मा को अमर और देह को नश्वर बताया और सांत्वना दी।

राम चरित मानस में इसका विस्तृत वर्णन है।(४ दोहा११ चौ.३,४)

तारा बिकल देखि रघुराया।दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया।।
छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित यह अधम सरीरा।।
प्रगट सो तनु तव आगे सोवा ।जीव नित्य तेहि लगि तुम्ह रोवा।।
उपजा ज्ञान चरन तब लागी। लीन्हेसि परम भगति बर मागी।।

अध्यात्म रामायण के अनुसार तारा ने राम को श्राप दिया कि अगले जन्म बाली उनकी मृत्यु का कारण बनेगा। जिस प्रकार आपके बाण से बाली हताहत है उसी प्रकार अगले जन्म में आप बाली के बाण से हताहत होंगे।इसी कारण श्रीकृष्ण अवतार में बाली ने बहेलिये के रूप में जन्म लेकर उन्हें बाण मारा।। बाण लगने के बाद श्रीकृष्ण ने निर्वाण लिया।द

लक्ष्मण के क्रोध को शान्त करना

राजा बनने के बाद सुग्रीव भोग- विलास में लिप्त हो गया और सीता अन्वेषण के लिये श्रीराम के दिये वचन को भूल गया। श्रीराम को क्रोध आया और लक्ष्मण को सुग्रीव के पास भेजा। लक्ष्मण के क्रोध को देखकर सुग्रीव बहुत भयभीत हो गया। लगता था लक्ष्मण समस्त किष्किंधा का नाश कर देंगे। तब उसने तारा से अनुरोध किया कि वह लक्ष्मण को किसी प्रकार समझाये। तारा ने अपने कूटनीतिक कौशल से कोमल स्वर में लक्ष्मण को समझाया। लक्ष्मण का क्रोध शांत हो गया और उन्होंने अपने क्रोध के लिये क्षमा भी मांगी।

तारा का सुग्रीव से विवाह

बाली की मृत्यु के बाद तारा ने सुग्रीव से विवाह कर लिया।इसका स्पष्ट विवरण रामायण में नहीं है। कुछ ग्रंथों में कहा गया है कि सुग्रीव को तारा से विवाह का सुझाव श्रीराम ने दिया था। महाभारत के अरण्य कांड में भी इस बात का वर्णन है।

राम कथा में मंदोदरी का वर्णन

१. रामकथा में मंदोदरी का प्रवेश

रामकथा में मंदोदरी का प्रवेश शूर्पणखा के राम लक्ष्मण द्वारा अपमानित और नाक कान कटने बाद रावण के दरबार में आकर अपनी दुख भरी कहानी सुनाने के बाद होती है । मंदोदरी ने उसे सांत्वना दी। किन्तु जब शूर्पणखा ने सीता हरण का सुझाव दिया तब मंदोदरी ने इसका विरोध किया। जब रावण सीता का हरण कर लाया तब मंदोदरी ने ही रावण को सुझाव दिया कि उन्हें राज महल की जगह अशोक वाटिका में रखें।

२. रावण के क्रोध से सीता के प्राण की रक्षा और सहायता

रावण मंदोदरी और अन्य रानियों के साथ अशोक वाटिका में सीता के पास आया और उससे विवाह करने के लिये प्रलोभन देने लगा।सीता के मना करने पर उसे धमकी देने लगा।सीता ने भी उसे समुचित प्रत्युत्तर देकर अपमानित किया । रावण क्रोध से सीता की हत्या करने को आगे बढ़ा । मंदोदरी ने उसका हाथ पकड़ कर रोक लिया ओर समझा बुझाकर उसे ऐसा करने से मना कर दिया। श्रीराम की अवज्ञा कर सीता को श्रीराम को लौटाने का विभीषण के प्रस्ताव का समर्थन किया।

३. श्रीराम का सेना सहित समुद्र पार कर लंका पहुँचने और राम रावण युद्ध तक मंदोदरी का चरित्र

मंदोदरी राम की पृष्ट भूमि और शूर वीरता से परिचित थी और वह रावण को राम की महिमा बताती है।

अति बल मधु कैटभ जेहि मारे। महावीर दितिसुत सँवारे।।

जेहि बलि बॉधि सहसभुज मारा। सोई अवतरेउ हरण महि भारा।।

वह कहती है कि राम का विरोध नहीं कीजिये। सीता को राम को सौंप दीजिये, पुत्र को राज दे दीजिये और आप राम का भजन कीजिये। ऐसे ही उद्गार मंदोदरी ने कितने अन्य अवसरों पर भी प्रकट किये। रावण ने उसकी बात नहीं मानी। बार बार सीता को लौटाने और राम की शरण में जाने की बात करने पर रावण उससे क्रुद्ध होकर उसे स्त्रियों के के आठ अवगुणों के बारे में बताया । मंदोदरी ने हारकर और कहना छोड़ दिया।

नाना विधि तेहि कहसि वुझाई।सभॉ बहोरि बैठ सो जाई।।

मंदोदरी हृदय अस जाना। काल बस्य उपजा अभिमानी।।

पुत्र मेघनाद, भाई कुंभकर्ण और समस्त राक्षस सेना का नास हो गया। अंत में विभीषण के कहने पर हनुमान ने वो दिव्य बाण मंदोदरी के पास से चुरा लिया जिससे अंतत: श्रीराम ने राम का बंध किया।

४. रावण के निधन के बाद मंदोदरी का चरित्र

रावण के निधन के बाद मंदोदरी करुण विलाप करने लगी। वो रावण क साथ होने वाली थी किन्तु श्रीराम के समझाने पर उसने विचार त्याग दिया। विभीषण के राज्याभिषेक के बाद श्रीराम के सुझाव पर मंदोदरी ने विभीषण से विवाह कर लिया।

3. निष्कर्ष

मंदोदरी और तारा का रामकथा में महत्त्वपूर्ण योगदान है। उनका पतिप्रेम, कर्तव्यनिष्ठा और वुद्धिमत्ता नारियों के लिये आदर्श है।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. श्री राम चरित मानस और टीकाएँ
2. वाल्मीकि रामायण
3. विकिपीडिया
4. धर्म संसार में लेख

Ramayana Documents Chandagupta-2 of Guptas

Ramprasad Soghal MS
Credible Indian History fb Group, Bengaluru
(soghal@gmail.com)

Ramayana has been an epic text in a number of ways. But there is a key question on its historicity. Often people raise this question. ***"Is Ramayana real and was it an Historical event?"****. My research exposes a new phase on Ramayana and tries to answer this important question. the "historicity of Ramayana". This paper documents the research findings.*

1. Introduction

Ramayana is an Epic. That is an English definition. Most of the Bharatiyas know it as "Ithihasa". Ithihasa means "That happened". So, by category, Ramayana has been earmarked as an "Historical account". That answers the "Historicity question". But, where is the physical evidence? Many attempted to extract clues from Ramayana. Like geological indicators (place name etc), spatial indicators (like time markers, chronology of king, archeo-astronomy), Social indicators (People and peoples living style etc) to find suitable place and time to excavate physical proof. But all these attempts have largely failed. Starting from Rama's horoscope to date Ramayana, top rated simulation softwares like stellarium has been used to zero in on the timeline of Ramayana. State of the art NASA/ISRO satellites have been deployed to scan the topography to hunt geographical evidence. Archeology excavations starting in Ayodhya, Saketa, Nasik, Kishkinda, Rameshwaram, Ramsetu to Srilanka, have been tried out for evidence for Ramayana. But none has yielded any positive results.
Then **how come Ramayana is an Ithihasa**? This is the Question selected for my research.

2. About Ramayana

Ramayana has always been a source of spiritual, sociological, political, cultural and artistic inspiration for the Indian people as well as to people of South East Asian countries like Cambodia, Indonesia, Thailand, Malaysia etc. Apart from supplementing the national literature, it has been a source of reference in art forms like dance, music, painting and sculpture. In **Thailand** it is referred to as "**Ramakein**"; "**Serat Rama**" in **Indonesia**; "**Yama Zatdaw"** in **Myanmar**; "**Maharadia Lawana"** in the **Philippines**; "**Hikayat Seri Rama**" in **Malaysia**; "**Reamker**" in **Cambodia**; "**Phra Lak Phra Lam**" in **Laos**; "**Truyện Dạ Xoa Vương**" in **Vietnam**. Apart from local versions. "***Dashratha Jataka"*** *the Buddhist version is studied as Buddhist text in countries like* ***Bhutan, Srilanka, China, Japan*** *etc.*

With **Ram Rajya** standing as a model for **Good governance**, it offers useful tips on statecraft, politics, values and ethics. This epic comprehends the great heroic life of an ideal person "Lord Rama" who acted as an ideal king, ideal student, ideal husband, ideal friend and most of all an ideal enemy standing to all embodiments of Dharma.

Ramayana has been divided into seven Kanda's/sections. The first Kanda/section i.e "Bala Kanda" relates to the divine birth of Sri Rama and his brothers. It is about his childhood being an ideal student and then going to marry Sita thus narrating the qualities of an ideal Husband. The second kanda/section "Ayodhya Kanda" speaks of the coronation of Sri Rama going to become an ideal king and his exile to Ayodhya. The third kanda/section " Aranya Kanda" dwells into the forest life of Sri Rama, Sita and Lakshmana. While in forest scenarios surrounding the kidnapping of Sita by Ravana. Fourth Kanda/section "Kishkinda Kanda" relates to the meeting of Hanuman and Sugriva with Sri Rama where they form a strategic alliance to crown Sugriva as the king of Kishkinda by killing Sugriva's brother Vaali. Hereafter they start searching for Sita and the role of Vanars (monkeys) in assisting Sri Rama in his search. The Fifth Kanda/section " Sundara Kanda" illustrates the adventures of Hanuman in crossing the ocean to find Sita, his meeting with Ravana and warning him of the dreadful consequences. The Sixth Kanda/section "Yuddha Kanda" portrays the battle between Ravana and Rama. After the war, the victorious return of Rama to Ayodhya on completion of his 14 year exile period. The seventh Kanda/Section "Uttara Kanda" speaks of Rama's sons "Kusha and Lava", born to Sita and her eventual remorseful merging with mother earth due to her banishment.

3. Methodology

I had worked on a paper called Archeological evidence supporting "Devi Chandraguptam". My paper was presented in the IHAR conference at the inaugural conference of IHAR association, USA at IGNCA, New Delhi in Feb 2019. We Indologists have long suspected that Alexander came to India during Gupta rule rather than during Mauryan rule. At the concluding discussions, it is felt that establishing a credible sheet anchor based on Mahabharata or Buddha or Adi Shankara or Imperial Guptas is very important to prove Indic Chronology. I have selected Gupta for evaluation, as it is the lower end of the spectrum for further research.

Indian puranas stop their chronology of Imperial Magadha with the end of Satavahana rule. They neither account Guptas or Alexander. There are no cross verifiable points to establish a sheet anchor. So fresh study into primary materials like inscriptions, numismatics, texts (Indian, Greek and Iranian sources like puranas, Ithihasa etc) were undertaken to look for new clues and evidence. I have built my case for Indian history and chronology due to this long study. One part of this research explored Ramayana for Historicity. So, various Gupta era information was correlated with Ramayana. This correlation, the churning produced new perspective, data and research findings. These are produced in this paper.

4. Research Elaborations

Western historians were born and brought up in a Christian society and therefore, faithful to the Biblical conception of the creation of the world in 4004 BCE. They knew the fact that the antiquity of Greece and other European countries were not older than 1000BCE. When they encountered the fact that the antiquity of Indian civilization could be greater than 4000 BCE, they could not swallow it. Therefore, they started distorting the History and Chronology of ancient India. Western historians were fascinated with the history of Alexander from their childhood. They started searching for the footprints of Alexander's invasion in India, as Alexander went after India after conquering Iran. Interestingly, there is no reference of Alexander's invasion in Indian literary sources. So, it was initially disappointing. But they found Greek king names in Asoka's inscription. That was fascinating for them. So, they started equating Alexander with Mauryans.

It was William Jones, who first conspired on Indian history by equating Sandrocottus mentioned in Greek sources as the Indian king of Alexander time as Chandragupta Maurya. But Puranas and Ithihasas propose a different timeline that does not match with this equation. To cover up his distortion, Jones declared that the Puranic account of Indian history, Ramayana and Mahabharata, The "Ithihasas" are mythological accounts and unreliable. Then western historians categorised the events described in the Indian texts as partly "historical" and partly "Mythological". They declared that It is difficult to filter out the part that is "an historical account" and to extract it as true history. So, they limited the texts as secondary evidence to validate primary evidence obtained by archeology. Thus, Mauryans, Shungas, Kanva, Satavahana,Guptas became historical accounts (as their inscriptions were found) while others like Pradyotas, Bharatas (Mahabharata Kings), Suryavanshi kings of Ramayana etc became mythological accounts. Rama and Krishna were declared as "Mythological characters".

From this western concoction, following question were raised on Ramayana for its historicity

- Lack of Archeological evidence to validate the Ramayana story line
- Ramayana at best suite the definition of a "Janapada/People's lore"
- Religious belief make Indians believe Ramayana as an historical account
- Srilanka was known as Sinhala to locals and not as Ravana's Lanka (to Tamilians and Srilankanns). Astronomers like Aryabhata's account locate Ravana's lanka on Ujjain's Latitude. Srilanka does not match this description.
- No evidence of any floating bridge at "Ramsetu". The distance between India and Srilanka is not 100 yojanas.
- Spoked Wheel and iron required for the kind of battle described in Ramayana. Sanauli excavations dateable to around 2000 BCE show usage of solid wheel horse cart and copper alloy weapons. So, Ramayana dating before 2000 BCE, not tenable.
- Excavations at purana quila at Indraprasta (old Delhi) could take the carbon dateable period to 900 BCE. Mahabharata and Ramayana dates arrived from Archeo-astronomy becomes questionable due to these findings.
- No evidence for Rama, Krishna temples before Gupta period. Sankarshana and Vasudeva are mentioned by Satavahanas before Guptas. But Sankarshana and Vasudeva could mean different things in that time than today's equation to Balarama and Krishna.
- Mention of Foreign tribes like Yavana, Pahlava, Saka, Barbara, Khamboja, Kirata, Huna along with Pallava, Satyaputra, Keralaputra etc in Mahabharata, Ramayana and Puranas. These tribes come at different time periods in chronology. Combining them indicates a consolidation after all of them were known.
- The language of Ramayana and Mahabharata is classical Sanskrit. Sanskrit takes prominence during gupta rule. Before that we see Prakrit.

So, for the question, "**how come Ramayana is an Ithihasa**?" needs an out of the box approach. Ramayana should be approached with a different perspective to decode and prove it as an "Historical event".

The central theme or core part of Ramayana revolves around two things.

1. What Dharma Says (or how to make judgement), when a rightful ascension to throne for a prince is converted into an exile to forest, that too for 14 years. 14 years was the time limit rule set in "dharma" for claiming the right to the throne. A committee headed by King Janaka and other intellectuals dwells into this question before Rama decides to go on with the exile. This is an important question for statecraft.
2. Abduction of Sita. How an Husband, that too a kshatriya sworn on "oath to protect pamaras" has to behave. The question comes for Vali, who had kidnapped Sugriva's wife. The same applies to Ravana.

So, Ramayana was establishing important morals in the society.

I was working on DeviChadragupam and I found out that the "Abduction of Sita" resonates with "DeviChandraguptam". The centrality of the play, DeviChadraguptam is the same. Behaviour of King/Kshatriya on oath to protect pamaras. The Morality of this question comes up on "Rama" Gupta, just like it falls on Rama. In DeviChadraguptam, Chandragupta-2 fights foreign kidnappers "Sakas" and terminates their rule, just like the way Rama ends Ravana's rule. This hints that, in reality, the historicity of Ramayana builds on the events that happened during Gupta rule. **Ramayana Documents "Chandragupta2" of Guptas**. Ramayana is another narration of DeviChandraguptam. However Ramayana works on several

goals. Consolidation of various other texts into Ramayana to make it an epic. It is like creating one encyclopedia to preserve various knowledge gathered so far. This consolidation serves for the propagation, preservation etc. Most probably a university full of scholars and experts could have worked in the consolidation and composition of the text. Sumtotal of this effort was probably attributed to Maharshi Valmiki.

But apart from hypothesis and guess work, do we have any evidence? Yes there is multiple evidence in support of my argument.

1. Guptas adopt Garuda as their Royal standard and Vishnu as prime deity. So, Vishnu, Krishna, Rama avataras seem to be creations during Gupta period to give a larger than life image for Gupta kings.
2. Ramagupta's name was used as an alibi for building Lord Ram's character. Ramagupta actually gets a "Rakshasa demand" of handing over the queen to gain his freedom. The Queen was treated as "Rajyalakshmi" in Indian Society. It was not just the wife in question, but the honour of the entire state. Sakas were depicted as Rakshas (Puranas call them Mlechhas). The name and events are so coincidental.
3. Gupta's built the first Dasavatara Temple at Deogarh/Dev Garh. It proves, Dashavatara character creation happened during Gupta rule.
4. Puranas like Bhagavatha document Hiranyaksha, Hiranyakashipu, his son Prahlada (=Narasimha), his grandson Virochana and great grandson Mahabali. Mahabali fights "Vamana". So, Hiranyakashipu to Mahabali is just four generations of opponents. Between these four generations of opponents, Vishnu comes as Varaha (fights Hiranyaksha), Narasimha (fights Hiranyakashipu), Parashurama (fights all Kshatriyas), Rama (fights Ravana and Kumbhakarna), Krishna (fights Narakasura and Kamsa) and Vamana (Fights Mahabali). Then comes Kalki (to fight demons and re-establish Dharma). This resonates with Gupta Kings

- Chandragupta-1 drives away Alexander. This is analogous to "**Varaha**" Saving Earth. Alexander wanted to become narendra or ultimate monarch of earth.
- Samudragupta takes a long march around India and subdues all Kings. Killing of kshatriyas is analogous to "**Parashurama**", establishing Gupta monarchy over world with Ashvamedha is analogous to "**Narasimha**")
- Chandragupta-2 rescues "Rajyalakshmi". Before that, He was put on exile by elevating Ramgupta as the king. Chadragupta-2 rescues Rajyalakshmi, establishes the morality of "Purushottama" and gets crowned as king. His account is analogous to "**Rama**" and "**Krishna**". Droupadi marrying five pandavas is derived from Chandragupta-2 rescuing his brother Ramagupta's wife, marrying her to become the king. This fight between Ramagupta and Chandragupta-2 is depicted as the Kaurava-Pandava fight within the family for the purpose of becoming a monarch.
- Kumaragupta achieves epitome of Gupta rule. His rule is praised as the rule extended to all three worlds/Lokas. So, Trivikrama avatara of Vishnu gets conceptualised. This is analogous to "**Vamana**" / Trivikrama.
- Skandagupta faces fresh challenges from Hunas. Skandagupta defeating Hunas is analogous to "**Kalki**". Re-covering lost territories and Re-establishing Dharmic or civilian rules is the story of Kalki.
- Two kings, Ghatotkacha and Sri Gupta pre-dates Chadragupta-1 rule. Since the chronology of Gupta Kings starts from Sri Gupta, "**Matsya**" and "**Kurma**" are depicted as Avataras of Vishnu before "Varaha". The great floods story (Matsya) and the great volcano eruption (Indonesian volcano spewing ash to cover the earth = Halahala during samudra manthan) were culturally remembered as great destructions, vishnu avataras rescuing the life on earth is conceptualised as "Matsya" and "Kurma" avataras. Irrespective of events, Rama gupta was crowned and was ruling between Samudragupta and Chadragupta-2 as a gupta monarch. So, the set of Imperial Gupta kings are Ten. Hence, "**Dasavatara"** was conceptualised.

1. Gupta Coins show the Parallel of these Avataras.

- During Alexander's conquest we see Greek coins with Zeus holding a nike in his hands. This iconography influenced the creation of "**Varaha**" lifting "Bhoodevi". Chandragupta-1 coins depict Chandragupta-1 and Kumaradevi on the obverse. On the reverse side, we see Lakshmi iconography with the text "**Sri Vikrama**". Sri devi and Bhoo devi are indications of Varaha.
- Vishnu as Narasimha is the epitome of power. Actually, "Narasimha" depicts the win over Alexander. Alexander had won Greece, Egypt and Iran. Alexander's defeat (run away is a defeat) attributes Gupta becoming the ultimate monarch of the world. Samudragupta seals this by defeating the Greek king Seleucus Nicator. Samudragupta then Performs Ashvamedha. Samudragupta releases "**Simha Vikrama**" or "**Simha Parakrama**" coins to depict this.
- Samudragupta's conquest around the whole of India depicts "**Parashurama**". Samudragupta releases "**Kritanta Parashu**" coins with battleaxe to symbolise this.
- Chadragupta2 releases "**Archer type**" coins with bow and arrow to symbolise "**Rama**". Releases "**Parama Bhagavatha**" coins to symbolise "**Krishna**".
- Kumaragupta releases "**Mahendraditya**" coins to symbolise "Indra" or "Tivikrama". It is analogous to "**Vamana**".
- Skandagupta releases "**Kramaditya**" coins to symbolise "**Kalki**". Krama = To bring back order.

2. Actually Guptas start with "Sankarshana" and "Vasudeva". Sankarshana is protector/saviour. Vasudeva is "Lord of the earth". The duo of Chadragupta-1 and Samudragupta are depicted as Sankarshana and Vasudeva. The "**conch**" (=samudra) in the hands of Vasudeva symbolises "Samudragupta". Hala (=earth) in the hands of Sankarshana symbolises

"Chandragupta-1". Sankarshana Vasudeva later takes the form of Chaturmukha vishnu. Where, Vishnu has left side Varaha and right side Narasimha. Then other avataras evolve as explained above.

3. Kondamottu Vrishni relief now housed in Hyderabad museum is interpreted as statues depicting five Vrishni heroes, Saṃkarṣaṇa, Vāsudeva, Pradyumna, Samba, Aniruddha standing around enthroned Narasimha. But the presence of Narasimha as a central figure to Vrishni heroes is unexplainable. The relief actually depicts Gupta emperors.

- First figure with Raja Danda (not hala) depicts Chandragupta 1
- Second figure with conch depicts Samudragupta
- Third figure is Narasimha = Gupta Empire
- Fourth figure with Long bow depicts Chadraguta2 (note the kodanda of Rama iconography)
- Fifth figure with wine glass (=booming foreign trade with greeks) depicts Kumaragupta
- Sixth figure with sword and shield depicts Skandagupta (note kalki iconography)

5. Conclusions

The paper establishes that

- Ramayana builds on the real Gupta event. Hence it is an "Historical event"
- Ramayana has to be interpreted with the background of Gupta empire for "Historicity"
- Several archeological evidences presented in support of the hypothesis that, **Ramayana documents Chandragupta-2 of Imperial Guptas**.
- Ramayana is a presentation of "DeviChandraguptam" in another perspective.
- This interpretation answers several questions.
- Why was Ramayana classified as Ithihasa?
- Why was Ramayana so popular as a moral document?
- Why was Ramayana told and retold generations after generations to establish "Dharma"?
- Why was Ramayana an epic?
- Why was Ramayana very dear to Indian kings and they depict it as a major theme on several temples?
- Why was Ramayana adopted by several countries although it is from a foreign land?

6. Important Gupta Inscriptions

1. Eran stone inscription of Samudragupta, Gupta Samvat not mentioned, Earlier to Gupta Samvat (My chronology dating 310 BCE)
2. Allahabad Pillar Inscription of Samudragupta, Gupta Samvat not mentioned, Earlier to Gupta Samvat (My chronology dating 302-303 BCE)
3. The Nalanda grant of Samudragupta is the earliest inscription dated in Gupta Samvat 5 (My chronology dating 292-293 BCE).
4. The Gaya grant of Samudragupta, dated in Gupta Samvat 9 (My chronology dating 288-289 BCE)
5. Mathura pillar Inscription of Chandragupta2, dated in Gupta Samvat 61 (My chronology dating 217-216 BCE)
6. Udayagiri Cave Inscription of Chandragupta2, dated in Gupta Samvat 82 (My chronology dating 236-237 BCE)
7. The Bilsad inscriptions of Kumaragupta, dated in Gupta Samvat 96 (My chronology dating 201-202 BCE)
8. Junagarh Rock inscription of Skandagupta, dated in Gupta Samvat 138 (My chronology dating 159-160 BCE)
9. The Sarnath inscriptions of Budhagupta, dated in Gupta Samvat 159 (My chronology dating 138-139 BCE)
10. Damodarpur grant of Visnugupta, dated in Gupta Samvat 224 (My chronology dating 73-74 BCE).

7. References

1. Valmiki Ramayana, Critical edition, Oriental Institute, Baroda, 1960
2. The Plot in Indian Chronology, Pandit Kota Venkatachelam, Vijayawada, 1953
3. The Chronology of Ancient India, Victim of concoctions and distortions, Vedveer Arya, Aryabhata Publications, Hyderabad, 2015
4. The Indica Of Arrian, J.W. McCrindle, Bombay, 1876
5. Ancient India as described by Megasthanese and Arrian, J.W. McCrindle, Bombay, 1877
6. The Geography of Strabo, published in Vol. VII, of the Loeb Classical Library edition, 1932
7. The Anabasis of Alexander, Arrian The Nicomedian, translated by E.J. Chinnock, Dumfries Academy, 1883
8. Alberuni's India, Vol 1&2, Dr. Edward C. Sachau, London, 1910
9. Ancient India in a New Light, K.D. Sethna, Pondicherry, 1989
10. Inscriptions of the Early Gupta Kings and their Successors, Ram Swaroop Mishra, Varanasi, 1971
11. Archeological Evidence supporting Devi Chandraguptam, Ramprasad Soghal, IHAR Conference, IGNCA, New Delhi, 2019

Bee and Gardener Economic Sustainability Frameworks in the Vālmīki Ramayana

Sriraman Chandramouli
S. Vijaykrishnan
(sriramancva@gmail.com)
(svijaykrishnaniyer@gmail.com)

This paper undertakes a critical examination of economic sustainability as articulated in the Vālmīki Ramayana, focusing on fiscal prudence, ethical resource management, and livelihood regulation grounded in dharma. Through a close textual analysis of episodes such as Rāma's counsel to Bharata, the stewardship of elephant forests, agrarian welfare, and Guha's riverine economy, the study elucidates an early Indic paradigm of balanced prosperity. Interpreting these episodes through the frameworks of Madhukara Vritti (bee-like, non-injurious collection) and Maalaakara Vritti (gardener-like cultivation), the paper argues that the Ramayana envisions an ethical, regenerative economy in which wealth circulates harmoniously, sustaining both community and environment.

1. Introduction

The Baratha Varsham (India), once upon a time was filled with Rishi's and Muni's and their Various Ashramas. An Ashrama is a place where every living being, be it Humans, Animals (even wild animals at times), and plants co-existed, without harming each other's progress, taking out whatever they needed to sustain, but at the same time ensuring they do not disturb the ecosystem.

The Greatest of the Kings who graced this holy land ran their nations with Caution. They ensured that all subjects got whatever they needed but also ensured that it was not by unfair practices / means. The subjects were taxed a maximum of 1/6th of their earnings.

The Honeybee Gathers only a tiny amount of nectar from each flower, ensuring the flower is not harmed and can continue to produce nectar. Whereas a Gardener ensures that he plucks flowers and fruits from his garden, while not destroying the plant itself. This is the concept of economics and sustainability, that guided our great sages and Kings. "Madhukara Vritti" and "Malakara Vritti".

Mahatma Gandhi Ji, once famously said, "*The World has everything in abundance for every Man's need – Not for every man's greed"*. And that quote, we believe, was based on his understanding of economics and Artha shastra.

2. Frameworks

Generally, Economics is the measure of success of a country in the current world. It is not only about the present. Even in the past, economics has played a significant role in shaping civilizations. Was it not the reason that various races from around the world searched and reached out to Barath and try to conquer it over thousands of years.

Chanakya as part of his arthashastra, has taken some semblance from the upanishads to define how a king should be taxing his subjects – like a bee which would take honey from the flowers without hurting the flowers. That is Madhuakar Vritti an economic framework from the past. Below are 3 economic frameworks and we will be further discussing Madhukara Vritti and Malakara Vritti and How they were practiced in Ramayana and how they would be useful today.

Madhukara Vritti

The concept of economic sustainability as per Madhukara Vritti is centered on a philosophy of minimalistic, non-exploitative resource utilization and self-sufficiency.

The term Madhukara Vritti literally means the "livelihood/conduct of a honeybee."

The Practitioner (in economics): Should derive their livelihood by taking only what is necessary from the world (resources, capital, labor) without damaging or exhausting the source.

In the context of modern economic sustainability, Madhukara Vritti implies the principles of ***Non-Exploitation:*** Using renewable resources at a rate that allows them to regenerate and using non-renewable resources minimally and efficiently. It avoids excessive consumption and extraction that depletes the environment. It also ensures, earning a living without exploiting laborers, the poor, or other businesses.

The economic agent (individual or enterprise) takes just enough to sustain their life or operation and avoids hoarding wealth or resources beyond necessary requirements. This promotes distribution over concentration of wealth.

Historically, this concept was applied to ascetics or students collecting alms from multiple houses in small measures (like a bee visiting many flowers). In an economic sense, this promotes decentralized dependence—avoiding dependence on a single large entity or market, which builds resilience.

In The Kamba Ramayana, you can see Kambans introduction to Ayodhya, where he claims, there was no rich man in Ayodhya – Reason, you could not call anyone to be poor, to highlight someone else to be rich. In All our Ithihasas and Puranas, all our great rishis exemplified this concept of Madhukara Vritti.

Vasishta had with him the holy Nandini - The Cow that can give you whatever you ask it. But he used it solely for only his daily needs. Nothing more. By this, he ensured he did not exploit that animal.

In the Holy Mathanga Rishi's Ashrama, all the rishi's and Shabari were sustaining on the roots and fruits that were falling down from the trees, not even picking them directly from the trees.

In Ayodhya, as Kamban highlights, everyone ensured they did not enjoy what was not rightfully theirs – which ensures economic sustainability with people not going beyond their basic needs, and even for their basic needs, not taking the system for granted and living by the rules, directly exemplifying Madhukara Vritti.

In Modern Times, Mahatma Gandhi, as quoted in the intro, tried to create Settlements across the world like the Sabarmathi Ashrama in Gujarat, India and the Pheonix Settlement in Kwazulu Natal South Africa, where he ensured people lived within their means and the settlements were self sustaining.

The Amish villages we see today in the US are of a similar concept. All ensuring that, even the flower is not disturbed when the honey is sucked, and regeneration is possible.

Long-Term Viability: Since the flower (the resource base) is not destroyed, the system is self-sustaining and intergenerational. It directly aligns with the modern definition of sustainability: meeting present needs without compromising the ability of future generations to meet theirs.

In essence, Madhukara Vritti advocates an economic model based on balance, restraint, and reverence for the source of one's livelihood.

Malakara Vritti

While Madhukara Vritti (the conduct of the honeybee) is widely recognized as a concept promoting minimalistic and non-exploitative economic sustainability, the Malakara Vritti (often interpreted as the conduct of a gardener) offers a slightly different, though still sustainable, perspective.

A gardener doesn't just take the flowers; they nurture the plant, water it, prune it, and protect it, ensuring it yields more flowers in the future. This suggests an active form of sustainability. The economic agent (business or individual) invests in the resource base (the 'plant')—be it human capital, environmental resources, or infrastructure—to enhance its productivity and long-term viability. It is about sustainable wealth creation through investment and care.

The Subjects can thrive on minimum sustenance. But Minimum Sustenance dose not amount to economic growth. It will be a stagnant economy. A Ruler cannot allow a stagnant economy, as in the long term, it will hamper the subjects. Hence he has to ensure a controlled growth and that is where Malakara Vritti comes into play.

The gardener harvests the flowers when they are mature and only in a quantity that does not kill the plant or prevent future blooms. This relates to optimal utilization and controlled consumption. The economic activity is not purely minimal (like the honeybee) but is maximally efficient and timed to maximize yield while preserving the principal resource.

All the Kings in the Ramayana exemplify this principle. Be it Dasharathas Ayodhya, Vali's Kishkinda or even Ravana's Lanka, they ensured economic growth, at the same time they ensured that the people do not suffer. When Baratha was the defacto ruler in the absence of Rama, and he wants to go to the forest, to meet Rama, we can see how he plans development across the stretches that he travels in the kingdom. Roads were laid in to the Jungles to support travel by thousands of people, but for every tree that was fell, 10 more were planted. In every probable vicinity, water tanks and lakes were dug. Any lakes / tanks that was closed for the sake of development was compensated by having many new ponds around. And Rama ensures that Baratha does not tax the people more than $1/6^{th}$ of their income, dose treat the teachers and women in the society with respect and that enemies are under check.

Every Country in the modern world wants to live this way. They want to give economically sustainable growth while not culling the source. But the real question is, "*are we able to see such a utopian city anywhere?"*

Hahakara Vritti

This leads us to the 3rd concept described in our epics and Artha shastra. "*Burn The Forest for the sake of Coal"*. That is called Hahakara Vritti.

In the Ramayana – we can find only 2 examples of places that followed this. The first one was Tataka Vanam – where the entire place was destroyed due to the anger and lust of a single family - that of Tataka's and in Dandakaranya, where Khara and Dhushana ruled, without care or empathy towards his subjects, by exploiting them and culling anyone who questions their authority and literally killing and eating anyone who was practicing Madhukara Vritti.

In the current world though, unfortunately, every business and every ruler seem to be attracted to Hahakara Vritti. Destroy the source for a short-term gain and don't care about the Future.

3. Methodology

In this paper, we have made comparative model of economic sustainability, using the ESG Benchmark Model, the United Nations' 17-SDG Comparative Index, and the Economic Sustainability Matrix comparing Shri Rama Rajya, Modern India, and the world. The methodology rests on three foundations – Dharma-based sustainability principles derived from the vast

corpus of Sanatana Dharma - *Ṛta* (cosmic order); *Dharma* (ethical order); *Nyaaya*; (justice); *Ahimsa* (restraint); *Samataa* (equilibrium); *Sahakaara* (cooperation) and lastly the theories of *Madhukara-Vritti* and *Maalakaara-Vriṛtti* that cover economic ethics.

The methodology combines India's ancient Dharmic Arthashastra concepts, a textual analysis of the key events in the Ramayana pertaining to economic sustainability and contemporary sustainability measurement frameworks, particularly United Nations' SDGs, and World Bank Governance Indicators.

The benchmark for our scoring model is the Shri Rama Raajya with a value of 10 for all parameters. Why is this so? Even if we impartially study the depictions in the Ramayana, we find that a benchmark score is justified because the Epic explicitly depicts - perfect environmental balance (timely rains, pure breeze, fertile trees); perfect social justice (no crime, no disease, no hunger, no inequality); perfect governance (truthful rule, fair wages, cooperation, ethical ministers), thus creating a holistic sustainability framework covering all pillars of the ESG model.

The scriptural basis for our methodology arises from two key passages in the Epic - Ayodhya Kanda, Sarga 100, Shlokas 32–50 and Yuddha Kanda, Sarga 128, Shlokas 91–106. The former is a comprehensive dialogue between Shri Rama and Bharata covering all aspects of Raajya and Raja-Dharma, from which we have considered specific economic parameters including - on economic and administrative duties; this section contains the earliest structured articulation of fair wages, labour ethics, agricultural centrality, resource management, and urban–rural balance. The latter is a description of the actual Rama Raajya where Sage Valmiki portrays an ideal economic well-being framework covering themes such as general prosperity and abundance, absence of climatic disturbances and natural disasters.

Let us look some of the key verses in the above two Sargas –

(Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shlokas 32-33 - कच्चिद् बलस्य भक्तं च वेतनं च यथोचितम् । सम्प्राप्तकालं दातव्यं ददासि न विलम्बसे॥ Kaccit Balasya Bhaktam Cha Vetanam Cha Yathocitam Sampraaptakaalam Daatavyam Dadasi Na Vilambase)

"Do you give food and wages to the army and workers at the proper time, without delay?" – This relates to the UN SDG on wage justice.

Yet another verse - **(Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shloka 47 - कच्चित् ते दयिताः सर्वे कृषिगोरक्षजीविनः । Kaccit Te Dayitah Sarve Krishi-Goraksha-Jivinah)**

"Are those who depend on agriculture and cattle protection dear to you?" – This correlates with SDG 2 (Zero Hunger) and agricultural sustainability.

(Ayodhya Kaanda, Sarga 100, Shloka 47 - कच्चिन्नागवनं गुप्तं कच्चित्ते सन्ति धेनुकाः। Kaccin Nagavanam Guptam Kaccit Te Santi Dhenukah)

"Is the elephant-forest protected? Are your herds safe?" – This compares with SDG 12 (wise consumption) and resource protection.

The next step was to tie the essence of the above shlokas to specific UN SDGs, World Bank governance & economic indicators. While the actual SDG framework follows a 100-point scale, we converted it to a 10-point scale, in line with the Rama Raajya benchmark of 10. Within the UN SDG framework, particularly SDGs 1, 2, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 17 pertain to economic sustainability, for each of which we have assigned an equal weightage.

Finally, the formula for the score was computed using a 30% adjustment for ethical-behavioural deviations, based on– 1) Ethical consumption versus overconsumption; 2) social harmony versus fragmentation; 3) just wages versus labour exploitation; 4) ecological balance versus an extractive economic model and lastly, 5) cooperative alliances versus geopolitical distrust and a 70% adjustment for an empirical score that comes directly from the UN SDG index values. This gave a formula of –

$$0.7 \times \text{Empirical Score} + 0.3 \times \text{Dharmic Alignment Score}$$

4. Analysis

This analysis examines the principles of economic sustainability as integrated into the societal structures and daily lives depicted in the Ramayana and identifies crucial elements lacking in contemporary practices.

4.1 Revenue Design & Fiscal Conduct

Rama's fiscal wisdom, detailed in Ayodhya Kanda, Chapter 100 of the valmiki Ramayana, (the *Raja Dharma* section), is a powerful lesson on revenue surplus and efficient governance, encapsulated in his counsel to Bharata. He directly mandates financial prudence by asking: "I hope your income is abundant and expenditure, minimum?" (This concept is often summarized from verses like Ayodhya\ Kanda\ 100.70 or surrounding slokas). Rama emphasizes that sound fiscal health requires the king to ensure maximal benefit with minimal cost in all undertakings, avoiding delays and unproductive spending on self-indulgent pleasures. A key tenet of his advice is the integrity of state payroll: "Delay in giving daily provisions and suitable salary to servants and the army causes them to become incensed against their master and become corrupt..." (summarized from verses like Ayodhya\ Kanda\ 100.32-33), warning that failing to maintain timely payments leads to

discontent and systemic corruption, thereby highlighting that avoiding a revenue deficit and ensuring timely, ethical expenditure is paramount for stability and national security.

Rama's fiscal conduct, stands in sharp contrast to modern fiscal prudence primarily in its rejection of the revenue deficit. While Rama's ideal mandates a perpetual revenue surplus ("income is abundant and expenditure, minimum") as the bedrock of righteous and stable governance, viewing debt as a moral failure, modern prudence views a managed deficit (or fiscal deficit) as an acceptable and often necessary tool to stimulate economic growth or fund essential development.

We can note that following the principles suggested by Rama, Bharatha in the Yuddhakanda says he has increased the treasury surplus by 10 times, showcasing the importance of a strong treasury.

Furthermore, Rama's focus was on ethical expenditure—linking timely payroll to the army and servants directly to the prevention of corruption and state stability—whereas modern policy, though prioritizing efficiency, often grapples with bureaucratic inefficiencies and political spending, frequently accruing large debt burdens that compromise long-term solvency for the sake of short-term economic or political gains. Again a direct example of how bureaucracy was efficiently managed in the Ramayana can be viewed in the Yuddhakanda where Shatrugna personally oversees arrangements for coronation and while doing that he ensures the ministers do their job right and even the comonnera right from the person who builds roads to people who spray water on roads so that the heat during the summer can be reduced and even to the barber who would be taking care of beautifying individuals getting ready for the event.

Rama's fiscal model seems to be superior because it mandated a revenue surplus, demanding income be "abundant and expenditure, minimum," thereby ensuring perpetual state solvency and eliminating debt. This contrasts with modern prudence, which normalizes borrowing and deficits. Furthermore, Rama directly linked timely, ethical expenditure (like paying the army) to the prevention of corruption and state stability, establishing financial integrity as an inseparable moral and governance imperative that supersedes today's often short-sighted, politically driven spending.

4.2 Resource Extraction, Animal & Forest Stewardship

Ramayanas model of environmental stewardship is also superior to the current global paradigm because it fused ecological integrity with moral duty (Dharma), whereas today's approach is driven largely by regulation and economic necessity. The Ramayana's very birth stems from an act of animal compassion, with Valmiki's anguished curse against the hunter for killing a Krauncha bird: "Maa Nishada..." (Bala\ Kanda\ 2.15), which demanded non-cruelty and established the preservation of life as a sacred concern. This contrasts sharply with the modern world, where animal protection is achieved through complex international treaties and national laws that often struggle with enforcement and ethical lapses (as seen in issues like illegal wildlife trade). Furthermore, the epic's Forest Stewardship exemplified by Rama's subsistence-level use of roots, fruits, and berries in the Vana, views the forest as an intrinsic sanctuary; this is starkly different from current global resource extraction, which, despite sustainability standards (like those of the FSC), prioritizes large-scale commercial logging, mining, and deforestation that "render forests fallow," a destructive action associated with Adharma in the Ramayana. In essence, the ancient model was based on an internalized reverence for nature—a cultural prerequisite for survival—while the modern model is primarily a reactive, regulatory attempt to mitigate damage caused by an economy dedicated to growth and maximal exploitation.

The ecological model found in the Valmiki Ramayana is critically important to modern economics because it addresses the concept of sustainable development and the externality problem, which are two of the biggest failures of current fiscal policy.

1. **Internalizing Environmental Costs (Ending the Externality Problem):** The core economic significance of Rama's model is its inherent ability to internalize environmental costs. The Modern Problem: In conventional economics, pollution, resource depletion, and deforestation are often treated as negative externalities—costs borne by society and the environment, but not by the producers or consumers who cause them. This leads to an over-exploitation of resources because they are perceived as "free" inputs. The Ramayana Solution: Rama's model, rooted in Dharma, makes ecological health a moral and political imperative and the association of environmental destruction with Adharma effectively assigns an infinite moral cost to destructive resource use. This framework mandates that the ruler (and by extension, the economy) cannot profit by destroying the environment, thereby internalizing the environmental cost directly into the governance structure.

2. **Promoting True Intergenerational Equity:** Ramayanas approach ensures true intergenerational equity better than modern regulations. Modern Regulation: Current sustainability efforts rely on market mechanisms (like carbon taxes) or laws (like protected areas) that can be revoked or circumvented. These systems often fail to preserve resources for the distant future because the immediate economic pressure is too high. The Ramayana Principle: By adopting subsistence-level extraction (using roots, fruits, and berries) and viewing the forest as a sanctuary, the ancient model prioritized the long-term carrying capacity of the land over short-term gain. This ensures that resources remain available for future generations not just legally, but culturally and morally, which is a deeper form of sustainability.

In short, the economic relevance of the Ramayana's model lies in its ability to solve the fundamental contradiction in modern economics: how to maintain economic activity without destroying the natural capital that sustains all life. It offers a cultural and moral solution to what is currently treated as a technical, regulatory problem.

4.3 Water, Food & Campaign Provisioning (Low-waste logistics)

The modern economy suffers from the "tyranny of convenience," where the massive waste generated by packaging, single-use items, and long supply chains is accepted as a necessary cost of doing business. Rama's logistic system, being based on direct interaction with and minimal impact on the ecosystem, was intrinsically circular and regenerative, leading to zero externalities of pollution and waste, which is the foundational goal the world's economy is currently struggling to achieve.

Even a 100 years ago, people relied on what was available in their neighborhood to allow them to live and do things effectively instead of importing things from miles away and to top it wasting them. When Indians moved to Southern hemisphere in the 19th century, they started using lavender trees instead of neem which was not available in southern hemisphere then.

Ramayana again sets an example for us.

"chaturdasha hi varshaani vatsyaami vijane vane |
Madhu Moola Phalair jeevan hithva munivadh Aamisham ||" (Ayodhya Kanda – 20.29)

Rama decides to live only on Fruits/ Roots and products that he will directly and easily get in the forest, rather than taking the food that he wants into the forests. This ensured that costs were not wated on transport / packaging based on need of an individual, benefitting the economy hugely as wastage will also reduce by avoiding transportation of highly perishable goods over long distances. This also ensured that the costs of the products would remain controlled in the country as you dont get extra through exports.

Rama while raising an army also did not fly his army from Ayodhya. Rather, he chose to use army that was locally available. Adding to the advantage of avoiding travel for the army, it also ensured that the locals who did not need acclimatization could further easily sustain on the food that was available in those parts of the country.

Also while building the bridge, we can find that they ensured they followed precision. We can see that they ensured they had threads to measure perfect lengths and made rocks to equal sizes reducing as much wastage as possible while building and completing the task in 5 days, showing the perfect planning that they had.

4.4 Transport, Trade, Labour & Inclusive Livelihoods

The highest ideal of the Rama Rajya was founded on Dharma (righteousness), which guaranteed the well-being and security of all subjects, regardless of their Position. This state of universal prosperity meant that poverty, hunger, and crime were virtually non-existent, implying that the livelihoods of all citizens were protected and ensured.

The list of professionals who accompany Bharata to meet Rama includes: Lapidaries (mainakaras), Potters (Kumbars), Carpenters, Manufacturers of Arms, Goldsmiths, Physicians, washermen and tailors (Ayodhya Kanda, Sarga 83). This extensive list confirms a complex and inclusive economic structure where many trades secured a livelihood.

The economy of Rama's Kingdom, as described in the epic, was better than today's global trade because it was founded on moral law and fairness, ensuring every person was cared for, which meant there was virtually no poverty or suffering. Unlike modern trade, which often leads to huge gaps between the rich and poor due to a drive for maximum profit, Rama's government acted as a good caretaker, collecting taxes lightly only to reinvest in the people's welfare. A critical difference was in labor and compensation: Rama ensured that all workers, including the army and government servants, were given their daily provisions and full wages on time. The epic warns that delaying pay causes workers to become angry and corrupt—a vital lesson that ethical, timely compensation prevents societal breakdown and ensures everyone's livelihood is secure. Today, many systems fail to guarantee this basic security, leading to greater instability than what was seen in the prosperous and contented kingdom of Rama.

The Rāmāyaṇa's economic vision sustains the producer base (farmers, herders, ferrymen, craftsmen; even elephant stocks), keeps logistics light, and designs revenue with restraint—a durable sustainability framework embedded in the Epic.

5. Lessons from Ramayana for modern-day SDGs

The Srimad Valmiki Ramayana is often celebrated as a Dharma Kaavya and rightfully so, but the economic and governance insights therein offer powerful lessons for modern sustainability frameworks, both from an Indian and global perspective. By studying the principles underlying Shri Rama's Raajya and aligning them with the UN Sustainable Development Goals (SDGs), this paper highlights how ancient Dharmic models can present a beacon for contemporary development challenges. The Economic Sustainability Scoring Model shown below provides a structured basis for this comparison, allowing a system to map of Ramayana-derived principles to SDG categories such as food systems, decent work-wages, industry & infrastructure, ecological balance, and institutional integrity.

The model highlights that modern societies function at only half the effectiveness of the Ramayana ideal—revealing both the scale of the challenge and the relevance of ancient wisdom.

Let us delve into the Ramayana Economic Sustainability Model –

SDG & Theme	Rama Raajya (Benchmark)	India Score (2025)	Global Score (2025)	Ramayana Reference Points
SDG 1 – No Poverty - Economic stability, secure livelihoods	**10**	**5**	**5**	*Yuddha 6.128.99–106*: No hunger, no deprivation; universal prosperity.
SDG 2 – Zero Hunger- Food systems, agricultural abundance	**10**	**5**	**5**	*Ayodhya 2.100.47*: Agriculture, cattle care prioritized; *"lokaḥ saṃśritaḥ vārtāyām"*.
SDG 7 – Clean Energy Access - Energy availability, renewability	**10**	**6**	**6**	Rama Raajya runs on Dharmic, non-extractive resource cycles (*Madhukara Vritti* logic).
SDG 8 – Decent Work & Economic Growth - Labour wages, employment, economic justice	**10**	**5**	**5**	*Ayodhya 2.100.32–33*: Timely wages; no exploitation; occupational harmony.
SDG 9 – Industry, Innovation, Infrastructure - Urban design, connectivity, public works	**10**	**6**	**6**	*Ayodhya 2.100.40–42*: Strong cities, roads, waterworks, temples, civic networks.
SDG 10 – Reduced Inequalities - Economic equity across groups	**10**	**4**	**4**	*Yuddha 6.128.105*: People free of greed; **moral equality** = economic stability.
SDG 11 – Sustainable Cities & Communities - Urban-rural equilibrium	**10**	**6**	**6**	Ayodhya description: safety, planning, no predators, thriving countryside.
SDG 12 – Responsible Consumption & Production - Resource management, waste minimisation	**10**	**3.5**	**2.5**	Rama Raajya uses *Mālākara-vṛtti* (nurturing ecosystem) and *Madhukara Vritti* (non-extractive use).
SDG 17 – Partnerships - Alliances, trade, economic cooperation	**10**	**5**	**4**	Sugriva–Vibhishana alliances = ancient cross-regional cooperation model.

Based on the above model, we arrive at the below scores –

Entity	Composite Economic Sustainability Score (0–10)	Gap
Rama Raajya (benchmark)	**10**	0%
Modern India (2025)	**5.06**	~49% below Dharmic ideal
Global Average (2025)	**4.83**	~52% below Dharmic ideal

In comparison to the Rama Raajya's economic sustainability benchmarks, India currently scores about 5.06—showing progress in infrastructure and poverty reduction but continuing challenges in fair wages, social equity and sustainable and equitable consumption. The global average, at 4.83, reflects strong innovation as is again reflected by the wave of technological development and the rapid march of Artificial Intelligence, but is weakened by rising inequalities, overuse and abuse of ecological systems and recurring economic shocks, led by geopolitical conflicts and trade wars. Overall, both India and the world operate at only half the economic sustainability of the Ramayana ideal, highlighting major areas for improvement. By integrating Dharmic economic principles with contemporary SDGs, policymakers can move toward a holistic development paradigm that promotes balance, responsibility, and long-term prosperity.

6. Conclusion

This paper demonstrates that the economic vision embedded in the Valmiki Ramayana offers a coherent, balanced, and sustainable framework rooted in fairness, ecological reciprocity, and responsible governance. Through Rama's counsel to Bharata in Ayodhya Kanda and the descriptive benchmarks of Rama Rajya in Yuddha Kanda, the epic outlines an economic system centered on timely wages, agricultural primacy, resource stewardship, ethical consumption, and the protection of livelihoods. When these Dharmic ideals are used as a benchmark, the comparative ESG–SDG analysis shows that both modern India and the global community perform at roughly half the economic sustainability of the Rama Rajya ideal, with the largest gaps appearing in responsible consumption, social equity, and ecological balance. The study highlights that economic well-being cannot be separated from ethical governance, community cohesion, and environmental stability. A practical path forward requires integrating Dharmic economic values—the principles of moderation, fairness, non-extraction, and cooperative governance—into contemporary policy frameworks. Such a combination bridges ancient insight with modern development challenges and offers a culturally grounded model for long-term economic resilience and sustainable prosperity.
Thus, a key lesson from the Valmiki Ramayana is that the superiority of Rama rajyas economy as per madhukara vritti and malakara vritti lay in its leadership's adherence to Dharma. Unlike today's profit-first economies, which often neglect equitable distribution, Rama's administration acted as an ethical steward, collecting taxes benignly (like the sun absorbing moisture) only to return them as public welfare, thereby guaranteeing a society free of poverty and distress. This commitment to equitable, non-oppressive resource management secured the livelihoods of all specialized laborers and guilds, a system of

inclusive trade far better than the current model, which frequently struggles with social marginalization and the failure to translate wealth into universal security and contentment.

7. References

1. Srimad Valmiki Ramayana, translated and presented by Sri Desiraju Hanumanta Rao (Bala, Aranya and Kishkindha kanda), and by Sri K.M.K. Murthy (Ayodhya and Yuddha kanda) with contributions from Durga Naaga Devi and Vaasudeva Kishore (Sundara kanda) retrieved from http://www.valmikiramayan.net/.
2. https://www.valmiki.eetk.ac.in/
3. Srimad Valmiki Ramayana, Hindi Edition, Gita Press, Gorakhpur (2019)
4. Valmiki Ramayana, (Dharmalaya Edition of Ramayana Publishing House)
5. Shri Govindaraja's Bhooshana commentary on the Valmiki Ramayana
6. The Ramayanam in Tamil by "Kamban"
7. UN Sustainable Development Goals – Official Portal (https://sdgs.un.org/goals)
8. UN SDG Index (https://sdgindex.org)

The Timeless Characters of the Ramayana: Symbols of *Dharma*, Devotion, and Ideal Conduct

Bharti Sharma
SSDPC Girls (PG) College, Roorkee
(drbharatis@yahoo.com)

*The Ramayana endures as a foundational text of Indian civilization, not only as an epic narrative but as a philosophical guide to human conduct and governance. This paper explores the timeless character of Rama, whose presence in Indian thought and culture remains deeply rooted in both scripture and social consciousness. Early references in the Rigveda's tenth mandala to names such as Rama and Sita attest to the antiquity and continuity of this moral tradition. Valmiki presents Rama as the embodiment of righteousness, declaring, "**Rāmo vigrahavān dharmaḥ**"—"Rama is the very embodiment of dharma" (Valmiki Ramayana, Ayodhyakanda 1.18). This verse captures the essence of his character, portraying him not merely as a hero but as Puruṣarṣabha, the best among men, who harmonizes personal virtue with social responsibility. His decisions, whether as son, king, or exile, illustrate the delicate balance between duty and emotion that continues to resonate across ages. Through textual and cultural analysis, the paper highlights how the Ramayana functions as a living source of dharma, inspiring leadership, justice, and compassion in modern society. The epic's philosophical depth extends to ethical, judicial, and administrative ideals that form the moral framework of Indian civilization. In essence, the Ramayana's enduring relevance lies in its integration of philosophical reflection, moral order, and human aspiration—qualities that make its characters truly timeless.*

Keywords: Ramayana, Rama, Dharma, Ethics, Vedic Tradition, Leadership, Timeless Character, Indian Philosophy

1. Introduction

The Ramayana holds a unique position in world literature as both a narrative and ethical scripture. Its characters do not merely inhabit an ancient story; they shape moral consciousness, social behavior and political ideals across centuries. Rama, Sita, and Lakshmana stand at the intersection of myth, philosophy and lived cultural practice. Their actions, dilemmas and virtues continue to guide individuals and institutions in contemporary India. Valmiki frames the epic as an inquiry into the "best among men," describing Rama as Puruṣarṣabha, the ideal human whose life demonstrates the seamless integration of duty and compassion (Valmiki Ayodhyakanda 1.18). This paper situates the epic within this living moral tradition and analyzes how its characters remain timeless symbols of dharma.

2. Literature Review

Scholarly engagement with the Ramayana spans disciplines—from philology to anthropology. A. K. Ramanujan highlights the "many Ramayanas," emphasizing the epic's adaptability across regions and cultures. Robert P. Goldman's translation of Valmiki underscores the text's ethical intricacy, especially in moments of crisis where Rama negotiates conflicting duties. Paula Richman's work demonstrates how communities interpret these characters to articulate contemporary social values.

On the devotional side, scholars such as F. S. Growse and Philip Lutgendorf read Tulsidas not merely as a poet but as a theologian who reshaped the epic for public reception. Lutgendorf argues that the Ramcharitmanas democratizes the Ram narrative, translating metaphysical concepts into accessible poetic idioms.

These studies collectively show that the Ramayana is simultaneously historical, philosophical and living. Its characters endure because they belong to a continuous interpretive tradition that accommodates both devotion and critical reflection.

3. Theoretical Framework

This paper draws on three frameworks

1. Dharmic Ethics

Based on texts such as the Manusmriti and Mahabharata, dharma is understood as situational, context-sensitive and relational. Rama's decisions are read not as rigid rules but as calibrated moral responses.

2. Narrative Hermeneutics

The characters are analyzed as narrative constructs whose development reveals moral ideals. Paul Ricoeur's idea of narrative identity informs this approach: characters embody values through their stories.

3. Cultural Semiotics

The epic is treated as a semiotic system in which characters serve as symbols. Rama signifies justice, Sita purity and strength, while Lakshmana represents loyalty and self-control.

These frameworks allow a multidimensional reading of both Valmiki and Tulsidas.

Rama as the Embodiment of Dharma

Valmiki's characterization of Rama rests on the assertion "Rāmo vigrahavān dharmaḥ," meaning Rama is the living form of dharma. This identity is textual rather than abstract. When Rama agrees to exile, he demonstrates a priority of social harmony over personal gain. His decision is ethically grounded: maintaining the integrity of his father's promise supersedes the emotional cost to himself and Sita (Ayodhyakanda).

Such moments illustrate situational ethics—dharma is not static, but requires discernment. Rama's role as king further exemplifies this flexibility. His rule, celebrated as Rāmarājya, becomes a model for governance emphasizing justice, welfare and compassion.

Sita as the Ideal of Strength, Purity, and Endurance

Sita's portrayal has often been flattened into passivity, yet the textual record reveals profound strength. Her decision to join Rama in exile—"नाथ सहित रहुँ बनवारी"—is an assertion of agency, not submission. She refuses comfort over companionship, prioritizing moral partnership over individual ease.

Tulsidas elevates her further in the famous chaupai:

"मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी॥"

Here she becomes the power that dispels inauspiciousness. Textually, the movement from "mangal" to "amangal hāri" positions her as the cosmic restorer of purity and balance. Sita symbolizes resilience, moral clarity and dignified suffering.

Lakshmana as the Ideal of Devotion and Restraint

Lakshmana's steadfast devotion represents an ethical extreme: total commitment to service. His readiness to abandon comfort, privilege and even his wife's company reveals the weight he places on fraternal duty. His vigilance during exile, especially in guarding Sita, embodies the dharmic ideal of niṣṭhā, or unwavering discipline.

Tulsidas deepens this portrayal using the image:

"बालक राम लखन दोउ भाई।
जुगल तनु मनु भावहि साई॥"

The childlike innocence attributed to them highlights their divine-human nature. It shows Lakshmana not only as a warrior but as a figure of tenderness and purity.

Textual Analysis of Selected Chaupais from Ramcharitmanas

The Guru as the Source of Illumination

"बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि…"

This chaupai sets the epistemic foundation of the text. Tulsidas positions the Guru as the remover of ignorance through the metaphor of sun rays dispelling darkness. The lotus feet symbolize purity and guidance. The verse shows that devotion begins with humility and learning.

Divinity as Immanent

"सियाराममय सब जग जानी…"

This line introduces an inclusive theology. Seeing Rama and Sita in all beings dissolves ego and hierarchy, encouraging compassion. The simple rhythm and syntax reinforce the universality of the message.

Harmonizing Saguna and Nirguna

"राम सगुन भएँ तपसिन ताही…"

Tulsidas reconciles saguna and nirguna traditions by suggesting that the divine appears in form for devotees but remains infinite in essence. This verse demonstrates philosophical integration rather than division.

Humanizing the Divine

"**बालक राम लखन दोउ भाई…**"

By portraying Rama and Lakshmana as children, Tulsidas makes the divine relatable. The narrative evokes tenderness and emotional engagement, enriching devotional experience.

The Ramayana as a Living Ethical Text

The Ramayana remains relevant because it addresses universal ethical dilemmas: duty versus desire, justice versus attachment, personal emotion versus public responsibility. Its teachings extend into judicial and administrative ideals. Rama's governance becomes a political archetype. Sita's endurance becomes a symbol of moral resistance. Lakshmana's discipline influences codes of loyalty and service.

The epic's endurance lies not in myth but in its layered integration of ethical reflection, narrative appeal and philosophical depth.

4. Conclusion

The timelessness of the Ramayana is rooted in its characters, who embody ideals that remain significant across centuries. Rama represents justice and moral clarity; Sita symbolizes strength and purity; Lakshmana exemplifies devotion and restraint. Through the combined contributions of Valmiki and Tulsidas, these characters take on multidimensional identities—ethical, emotional, cultural and spiritual.

The epic survives not because it is ancient, but because it continues to illuminate the questions that shape human life. Its characters serve as enduring symbols of leadership, compassion, justice and dharma. As Indian society confronts new challenges, the Ramayana remains a living guide that harmonizes philosophical thought with human aspiration.

5. Works Cited

1. Goldman, Robert P., trans. The Ramayana of Valmiki. Princeton UP, 1984–2019.
2. Lutgendorf, Philip. The Life of a Text: Performing the Ramcharitmanas. U of California P, 1991.
3. Ramanujan, A. K. "Three Hundred Ramayanas." In Many Ramayanas, edited by Paula Richman, U of California P, 1991.
4. Richman, Paula, editor. Many Ramayanas: The Diversity of a Narrative Tradition in South Asia. U of California P, 1991.
5. Tulsidas. Ramcharitmanas. Gita Press, Gorakhpur, revised edition.

रामायण कालीन वानस्पतिक औषधिया

संगम बाजपेयी
भुवनेश्वरी भारद्वाज
लखनऊ विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश
(Sangambajpai94@gmail.com)
मयंक जिंदल
छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर
(Mayankjindal.512@gmail.com)

रामायण कालीन वानस्पतिक औषधियाँ भारतीय चिकित्सा परंपरा की आधारशिला रही हैं। उस युग में रोग निवारण और आरोग्य संरक्षण के लिए प्राकृतिक जड़ी-बूटियों का व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता था। वाल्मीकि रामायण में संजीवनी बूटी, विशल्यकरणी, संधानीकरणी, सुवर्णकर्णी और मृतसंजीवनी जैसी औषधियों का उल्लेख मिलता है, जिनका उपयोग जीवन रक्षा एवं उपचार हेतु किया गया। आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान में इन औषधियों की पहचान Selaginella bryopteris, Achyranthes aspera, Cissus quadrangularis, Calotropis gigantea तथा Tinospora cordifolia (गिलोय) के रूप में की गई है। ये औषधियाँ आज भी आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली में प्रभावी रूप से प्रयुक्त हो रही हैं। तथापि, पर्यावरणीय असंतुलन, वनों की कटाई और जैव विविधता में कमी के कारण इनकी प्राकृतिक उपलब्धता घटती जा रही है। यह वनस्पतियाँ वर्तमान समय में भी उपलब्ध हैं तथा वैज्ञानिक शोध के माध्यम से इनका उपयोग विभिन्न रोगों और व्याधियों पर विजय प्राप्त करने हेतु किया जा सकता है। ये औषधियाँ जैविक, आनुवंशिक, मानसिक एवं राजसिक रोगों के साथ-साथ मधुमेह (शुगर) और उच्च रक्तचाप (ब्लड प्रेशर) जैसे रोगों पर भी नियंत्रण स्थापित करने में सहायक सिद्ध हो सकती हैं। रामायण कालीन वनस्पतियों की औषधियों का उपयोग उपचार के माध्यम से लोगों के रोगों के निवारण और स्वास्थ्य लाभ के लिए किया जाता रहा है।

1. प्रस्तावना

रामायण और रामायण काल की वानस्पतिक औषधियाँ भारतीय संस्कृति के प्राचीनतम और समृद्ध चिकित्सा-ज्ञान का जीवंत उदाहरण हैं, जिनमें न केवल धार्मिक और सांस्कृतिक महत्त्व निहित है बल्कि प्राचीन आयुर्वैदिक विज्ञान की गहराइयों की झलक भी मिलती है। वाल्मीकि रामायण में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जहाँ वनस्पतियों, औषधियों और जड़ी-बूटियों का अत्यंत सटीक व वैज्ञानिक ढंग से उल्लेख मिलता है, जिससे यह प्रमाणित होता है कि रामायण काल में चिकित्सा-विज्ञान और औषध-निर्माण की परंपरा अत्यंत विकसित और संगठित थी। राम, लक्ष्मण और सीता की वन-यात्रा से लेकर रावण के विरुद्ध युद्ध तक पूरे काव्य में वनस्पतियों का अद्भुत वैदिक- आयुर्वैदिक उपयोग वर्णित है। विशेष रूप से दंडकारण्य, चित्रकूट, पंचवटी, ऋष्यमूक, किष्किंधा और हिमालय जैसे क्षेत्रों में विविध औषधीय वनस्पतियों की प्रचुरता थी, जिन्हें ऋषि-मुनि, वैद्य और साधु चिकित्सकीय प्रयोजन हेतु प्रयोग करते थे। रामायण में सबसे प्रसिद्ध औषधि "संजीवनी बूटी" है, जिसे हिमालय से लाने का कार्य हनुमान द्वारा किया गया। यह औषधि ‘मृत-संजीवनी’ मानी जाती थी, अर्थात ऐसी जड़ी-बूटी जो मृतप्राय शरीर में पुनः प्राणशक्ति भर सके। सुशेण वैद्य ने इसके बारे में सटीक मार्गदर्शन दिया था और इसके द्वारा लक्ष्मण का जीवन बचाया गया, जो यह संकेत देता है कि उस समय औषधियों का वर्गीकरण, पहचान, गुणधर्म और उपयोग के प्रति अत्यंत उन्नत ज्ञान विद्यमान था। संजीवनी के अतिरिक्त रामायण में चार और दिव्य औषधियों का उल्लेख मिलता है विशल्या-करणी, संधान-करणी, सौम्य-करणी, और सुवर्ण-करणी। विशल्या-करणी तीर और भाले जैसे शस्त्रों से हुए घावों में फंसे शल्य को निकालने तथा रक्तस्राव को तुरंत रोकने में प्रभावी थी, जबकि संधान-करणी हड्डियों और शरीर के कटे हुए हिस्सों को जोड़ने की क्षमता रखती थी, जो आधुनिक 'टिश्यू रीजनरेशन' और 'सेल ग्रोथ' जैसी अवधारणाओं से मेल खाती है। सौम्यकरणी और सुवर्णकरणी घाव शांत करने, दर्द कम करने, त्वचा को पुनर्जीवित करने और बल-वृद्धि में सहायक बताई जाती हैं। इन औषधियों के प्रयोग से घायल वानरों और योद्धाओं की चिकित्सा तुरंत संभव होती थी, जिससे युद्ध कौशल के साथ-साथ चिकित्सकीय दक्षता भी स्पष्ट होती है। इसके अलावा, सुग्रीव द्वारा बताए गए हिमालय के उत्तर भाग में स्थित विशिष्ट पर्वतों पर दिव्यौषधियों के उपलब्ध होने का उल्लेख मिलता है, जिससे प्रतीत होता है कि उस समय के वैद्य भौगोलिक वनस्पति-विज्ञान (Geobotany) की गहरी समझ रखते थे और क्षेत्र-विशेष की जड़ी-बूटियों की पहचान में निपुण थे। रामायण काल में केवल युद्ध-चिकित्सा ही नहीं, बल्कि दैनिक जीवन में भी वनस्पतियों का व्यापक उपयोग होता था। दंडकारण्य में सीता द्वारा प्रयुक्त सुगंधित पुष्प, द्रव्य और जड़ी-बूटियाँ स्त्री-स्वास्थ्य, सौंदर्य-चिकित्सा और घरेलू उपचारों का संकेत देती हैं। जंगल में रहने के दौरान ऋषियों और साधुओं द्वारा फल, मूल, कंद, पत्ते, वनस्पति-रस और औषधीय कषाय का सेवन सामान्य बात थी, जो यह बताता है कि वे प्राकृतिक चिकित्सा तथा स्व-उपचार प्रणालियों में पारंगत थे। आयुर्वेदिक ग्रंथों के अनुसार दंडकारण्य, जहां राम ने अपने 14 वर्ष बिताए, आज के मध्य भारत और दक्षिण भारत के विशाल वन क्षेत्रों

से मेल खाता है, जो अशोक, नीम, अर्जुन, बेल, शाल, तिलस्मी वनस्पतियों, गुग्गुल, हल्दी, चिरायता, नागरमोथा, अपामार्ग आदि समृद्ध औषधियों से भरा हुआ था। इसी प्रकार, चित्रकूट पर्वत आयुर्वैदिक जड़ी-बूटियों का समृद्ध केंद्र माना जाता है, जहाँ ऋषि अत्रि और अनसूया का आश्रम था। पंचवटी में जटायु के घायल होने पर राम ने औषधीय पत्तियों और लेप का उपयोग किया, जो तत्कालिक उपचार के रूप में प्रयुक्त हुआ। इन सब प्रसंगों से स्पष्ट है कि रामायण काल में वनस्पतियों का चिकित्सीय उपयोग वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित था तथा औषधियों का प्रभाव तत्काल और परिणामकारी माना जाता था। रामायण काल में 'औषधि-विज्ञान' केवल युद्धकालीन उपचार तक सीमित नहीं था, बल्कि मानसिक, आध्यात्मिक और शारीरिक संतुलन के लिए भी वनस्पतियों का उपयोग किया जाता था। ऋषि-मुनि ध्यान, जप, उपवास, यज्ञ और हवन में विशिष्ट औषधीय वनस्पतियों जैसे समिधा, गुग्गुल, लोध्र, अगुरु, चंदन, तुलसी, कुटज, ब्राह्मी का उपयोग करते थे। इन यज्ञों से पैदा होने वाला औषधीय धुआँ स्वास्थ्य-लाभकारी माना जाता था, तथा वातावरण को शुद्ध करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। औषधियों के उपयोग में उस काल के लोगों की सूक्ष्म दृष्टि और गहन निरीक्षण क्षमता झलकती है। वे केवल पौधों की आकृति, रंग-रूप और स्वाद ही नहीं, बल्कि उनके रस, गुण, वीर्य, विपाक और प्रभाव जैसे आयुर्वैदिक सिद्धांतों को भली प्रकार समझते थे। यह ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से संरक्षित और परिष्कृत होता गया, जिसका संकलन आगे चलकर चरक संहिता, सुश्रुत संहिता और अष्टांग हृदयम् जैसे ग्रंथों में हुआ। यह मानना अनुचित नहीं होगा कि इन आयुर्वैदिक ग्रंथों की नींव रामायण काल में व्याप्त वनस्पतिक परंपरा पर ही स्थापित हुई थी। रामायण काल की औषधियों का एक और उल्लेखनीय पहलू यह है कि चिकित्सा केवल पुरुष वैद्यों के हाथ में नहीं थी, बल्कि महिला ऋषिकाएँ और गृहिणियाँ भी औषधियों के ज्ञान में दक्ष थीं। यह ज्ञान घरेलू उपचार, रसोई-औषधियों और वन-जड़ी-बूटियों के माध्यम से समाज में समन्वित था। रामायण में "औषधि पर्वत" को उठाकर लाने की कथा, चाहे प्रतीकात्मक मानी जाए या वास्तविक, यह संदेश अवश्य देती है कि औषधीय वनस्पतियाँ उस युग की जीवन-रेखा थीं। दिव्यौषधियों का उल्लेख यह भी दर्शाता है कि वनस्पतियों को केवल भौतिक ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक शक्ति का भी स्रोत माना जाता था। कुल मिलाकर, रामायण और रामायण काल की वानस्पतिक औषधियाँ भारतीय चिकित्सा-परंपरा की व्यापकता, वैज्ञानिक दृष्टि, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और वनस्पति-विज्ञान की उत्कृष्ट समझ का प्रमाण हैं। रामायण का औषधीय ज्ञान आज भी आधुनिक हर्बल साइंस, आयुर्वेद, प्राकृतिक चिकित्सा और वनस्पति शोध के लिए प्रेरणा-स्रोत है।

2. साहित्य समीक्षा

(Sikarwar, 2024; Patil & Pandey, 2025) भारतीय संस्कृति में *रामायण* केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि उस युग की सामाजिक, पर्यावरणीय और औषधीय जानकारी का भी प्रमुख स्रोत है। *वाल्मीकि रामायण* में अनेक ऐसे वृक्षों, लताओं, झाड़ियों और जड़ी-बूटियों का उल्लेख मिलता है जो उस काल में चिकित्सा एवं जीवनोपयोगी उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त होती थीं। आधुनिक शोधों ने इस बात की पुष्टि की है कि इन पौधों में से अधिकांश आज भी पारंपरिक औषधियों में उपयोग किए जाते हैं ।

(Sikarwar, 2024) सिकारवार (2024) के अनुसार *श्रीमद् वाल्मीकि रामायण* में लगभग 150 वनस्पतियों का उल्लेख मिलता है, जो लगभग 117 वंशों और 60 कुलों से संबंधित हैं। इनमें वृक्षों की संख्या सर्वाधिक पाई गई है। संस्कृत नामों का आधुनिक वनस्पति विज्ञान के नामों से तुलनात्मक अध्ययन कर यह बताया गया है कि रामायण में वर्णित अधिकांश पौधे वास्तविक रूप से भारतीय उपमहाद्वीप में आज भी विद्यमान हैं।

(Patil & Pandey, 2025) पाटिल और पांडे (2025) ने आगे बताया कि इन पौधों में से कई आज भी औषधीय दृष्टि से उपयोगी हैं तथा आयुर्वेदिक चिकित्सा में उनका महत्त्व बना हुआ है। उनका कहना है कि *रामायण* जैसे प्राचीन ग्रंथ केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि औषध विज्ञान की प्राचीन परंपरा के जीवित दस्तावेज हैं।

(Sharma, 2023) *रामायण* में *संजीवनी, ब्राह्मी (Bacopa monnieri), अश्वगंधा (Withania somnifera), तुलसी (Ocimum sanctum)* जैसे पौधों का उल्लेख उनके उपचारात्मक गुणों के कारण किया गया है। ये औषधियाँ स्मृतिवर्धक, घाव भरने वाली, सूजन कम करने वाली और बलवर्धक बताई गई हैं। शर्मा (2023) के अनुसार ये पौधे आज भी लोकचिकित्सा और आयुर्वेद में प्रचलित हैं, जो दर्शाता है कि रामायण कालीन औषधीय ज्ञान की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है।

(Kumar et al., 2022; Verma & Singh, 2023) आधुनिक अनुसंधानों ने इन पौधों के औषधीय गुणों की वैज्ञानिक पुष्टि की है। कुमार, मेहता और तिवारी (2022) के अनुसार *ब्राह्मी* में स्मृति-वर्धक और न्यूरो-प्रोटेक्टिव तत्व पाए गए हैं, जबकि *अश्वगंधा* में तनाव-रोधी एवं सूजन-रोधी गुण सिद्ध किए गए हैं। इसी प्रकार *तुलसी* में एंटीऑक्सीडेंट और जीवाणुरोधी गुण पाए जाते हैं, जिनका उपयोग आधुनिक औषधि उद्योग में किया जा रहा है (Verma & Singh, 2023)।

(Joshi, 2023; Patil & Pandey, 2025) *रामायण* में उल्लिखित अनेक पौधे जैसे *चंदन (Santalum album)*, *अशोक (Saraca asoca)*, *हल्दी (Curcuma longa)* आदि आज भी सामान्य रूप से उपलब्ध हैं। किन्तु कुछ पौधे जैसे *पिटरोकर्पस (Pterocarpus santalinus)*, *अगर (Aquilaria agallocha)* इत्यादि अत्यधिक दोहन एवं वनों के क्षय के कारण दुर्लभ हो गए हैं (Joshi, 2023)। इसके अतिरिक्त *संजीवनी बूटी* जैसे पौधों की पहचान आज भी विवादास्पद है क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग पौधों को इस नाम से जाना जाता है (Patil & Pandey, 2025)।

(Verma & Singh, 2023) वर्तमान में अधिकांश शोध केवल ग्रंथों से पौधों की सूचीकरण और औषधीय गुणों की चर्चा तक सीमित हैं। परंतु इन पौधों की **वास्तविक भौगोलिक उपलब्धता**, **संरक्षण स्थिति**, तथा **विपणन श्रृंखला (supply chain)** पर कम कार्य हुआ है। इसके अतिरिक्त संस्कृत नामों की बहुलता के कारण कई बार सही वनस्पति की पहचान करना कठिन हो जाता है। वर्मा और सिंह (2023) का मत है कि इन ग्रंथों में वर्णित पौधों के आधुनिक वैज्ञानिक सत्यापन और संरक्षण के लिए बहु-विषयक (interdisciplinary) दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

3. उद्देश्य

रामायण ग्रंथ में वर्णित वानस्पतिक औषधियों का मूल पाठ-संदर्भों सहित अध्ययन करना तथा उनके औषधीय गुणों को प्राचीन आयुर्वैदिक विवरणों के आधार पर विश्लेषित करना।

4. विषयवस्तु

श्री राम लक्ष्मण जी अयोध्या नगरी से वनवास के लिए प्रस्थान कर रहे हैं श्रृंगवेरपुर श्री गंगा जी के तट पर लक्ष्मण और सुमंत्र तथा सीता राम जी इंगुदी वृक्ष के समीप गए (31 श्लोक, 50 वनसर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

भारद्वाज आश्रम के समीप यमुना तट पर विशाल वृक्ष जिसके नीचे अनेक सिद्ध निवास करते हैं इसे श्याम वट कहते हैं (6- 7 श्लोक, 55 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

गजकंद का गूदा लेकर देवताओं का पूजन करना । का अर्थ है गजकंद नामक कंद विशेष का गूदा (56 सर्ग, 22 श्लोक, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

रक्त विकार का नाश करने वाले उसे गजकंद को भली भांति पका हुआ जानकर लक्ष्मण जी ने पुरुष सिंह श्री रघुनाथ जी से कहा| छिन्न शोणितम की व्युत्पत्ति इस प्रकार है। छिन्नं शोणितं रक्तविकाररूपं रोगजातं येन स: तम् । गजकंद रक्त विकार का नाशक है यह वैदिक में प्रसिद्ध है मदनपाल निघण्टु के षडदोषादिकुष्टहंता आदि वचन से भी यह क्षरण दोष तथा कुष्ठ आदि रक्त विकार का नाशक सिद्ध होता है। (27 श्लोक 56 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

लक्ष्मण जी कहते हैं कि यह काले छिलके वाला गजकंद जो बिगड़े हुए सभी अंगों को ठीक करने वाला है समस्तांग: की व्युत्पत्ति समझनी चाहिए। सम्यक् भवन्ति अस्तानि अंगानि येन स: । (28 श्लोक, 56 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

भरत जी श्री राम जी से मिलने के लिए वन में रात्रि विश्राम के बाद प्रातः उठे तो उन्होंने कदम्ब के वनो की सुंदरता को निहारा (13 श्लोक 71 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

भारद्वाज मुनि के आश्रम के वर्णन में बेल कथा कटहल वाला बिजोरा तथा आम के वृक्ष लगे जो फलों से लगे हैं (30 श्लोक, 91 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

श्री राम जी कहते हैं चित्रकूट पर्वत की शोभा अति कमनीय है इस पर वृक्ष आम, जामुन ,असन, लोध, प्रियाल, कटहल, धव ,अंकोल, भव्य, तिनिस, बेल, तिंदुक,बांस, काश्मरी, बेर , आंवला , कदंब, बेत, धन्वन (इंद्र जौं) बीजक(अनार) आदि घनीछाया वाले वृक्षों से जो फूलों फलों से लदे थे । यह पर्वत अनुपम पोषण एवं शोभा का विस्तार कर रहा था । (8, 9, 10 श्लोक, 94 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

रात में इस पर्वत राज के ऊपर लगी हुई सहस्त्रों औषधियां अपनी प्रभा संपत्ति से प्रकाशित होती हुई अग्नि शिखा के समान उद्भाषित होती हैं । (12 श्लोक, 94 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

कई स्थानों पर चंपा मलती आदि फूलों की शोभा दिखाई देती है। (22 श्लोक, 94 सर्ग, अयोध्या कांड, रामायण, गीता प्रेस)

गजपुष्पी लता श्री राम कहते हैं हे सुग्रीव वेशभूषा कद और चाल ढाल से तुम और बाली दोनों एक दूसरे से मिलते जुलते हो इस स्थिति में मेरा बाण चलाना बालोचित सफलता और मूढ़ता सिद्ध होती लक्ष्मण यह उत्तम लक्षणों से युक्त गजब पुष्पी लता फूल रही है इसे उखाड़ कर तुम महामना सुग्रीव के गले में पहना दो यह आज्ञा पाकर लक्ष्मण ने पर्वत के किनारे उत्पन्न हुई फूलों से भारी वह गज पुष्पी लता उखाड़ कर सुग्रीव के गले में डाल दिया गले में पड़ी हुई उसे लता से श्रीमान सुग्रीव बक पंक्ति से अलंकृत संध्या काल के मेघ के समान शोभा पाने लागे (40 श्लोक, 39 सर्ग, किष्किंधा कांड, रामायण, गीता प्रेस) तथा केले के वनों का वर्णन पर्वत के चारो तरफ मिलता है (14 श्लोक, 13 सर्ग, किष्किंधा कांड, रामायण, गीता प्रेस)

मन्त्रग्राम गृहाण त्वं बलामतिबला तथा। न श्रमो न ज्वरो वा ते न रूपस्य विपर्यय:। ऋषि विश्वामित्र राजा दशरथ के यहां पधार कर, राजा से कहा अपने बालको को मुझे दो इन्हें गुरुकुल में शिक्षा-दीक्षा प्रदान करना है। 14 विद्याओं तथा 64 कलाओं को श्री राम सहित चारों भाइयों को देना है। श्रीराम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न को बुलाकर मिले तथा राम और लक्ष्मण को बला और अतिबला नामर दो औषधियां प्रदान की। इन रोगों औषधियों को अभिमन्त्रित किया तथा अभिमन्त्रण की शिक्षा प्रदान की। इन औषधियों के प्रभाव से शरीर में व्याप्त श्रम (थकान) नहीं रहता और न ही ज्वर व्याप्त होता है। इन औषधियों के प्रभाव से शरीर की कान्ति कभी नष्ट नहीं होती अर्थात जरा (बुढ़ापा (ढलती आयु के चिह्न) का असर नहीं होता। (12 श्लोक, 22 सर्ग, बालकाण्ड, , रामायण, रामनारायण लाल)

न च सुप्तं प्रमत्तम् वा धर्षयिष्यन्ति नैक्रिताः । न बाहोः सदृशो वीर्ये पृथिव्यामस्ति कश्चन । इन औषधियों और मन्त्रों के प्रभाव से राक्षस लोग सोते हुए भी अशुद्ध अवस्था में भी तुम्हारा कुछ भी नहीं' बिगाड़ पायेंगे। संसार भर में कोई भी तुम्हारे बाहुबल की समानता न कर पायेगा। (13 श्लोक, 22 सर्ग, बालकाण्ड, रामायण, रामनारायण लाल)

बला चातिबला चैव सर्वज्ञानस्य मातरौ । क्षुत्पिपासे न ते राम भविस्ये ते नरोत्तम | हे पुरुषोत्तम राम सब विद्याओं और औषधियों की माताएं उन बला अतिबला नाम्नी विद्याओं के प्रभाव से तुमको भूख और प्यास कभी भी सतायेगी नहीं' और ना ही भूख तथा प्यास के प्रभाव से शरीर में शक्ति की कमी लगेगी । (16 श्लोक, 22 सर्ग, बालकाण्ड, रामायण, रामनारायण लाल)

बलामतिबलाम् चैव पठतस्तव राघव ।विद्याद्वयमधीमाने यशश्चाप्यतुलं त्वयि ।

हे राघव इन दो विद्यायें बला और अतिबला के पढ़ लेने से धारण करने से तुम्हारा अतुल यश, बल सर्वत्र फैल जायेगा। (17 श्लोक, 22सर्ग, बालकाण्ड, रामायण, रामनारायण लाल)

पितामह सुते ह्येते विधे तेजः समन्विते ।प्रदातुं तव काकुत्स्थ सदृशस्त्वम् हि धार्मिक ।

यह दोनों विद्यायें पितामह अर्थात ब्रह्मा जी की पुत्रि है। हम तुम्हें इसे प्रदान कर रहे हैं, तुम इन्हें धारण करो। ऐसी विद्यायों दिव्य औषधियों के लिए हे राम तुम ही पात्र हो। पलहे स्नान करके आओ किर आचमन करो, शुद्ध तथा पवित्र शरीर को करो तथा प्राणायाम करके चित्त को शुद्ध करो फिर यह दोनों विधाएं प्रदान करता हूँ। (18 श्लोक, 22सर्ग, बालकाण्ड, रामायण, रामनारायण लाल)

गिरिस्प्रस्थास्तु सौमित्रे सर्वतः संप्रपुष्यिते । निष्पत्रैः सर्वतो रम्यै : प्रदीप्ता इव किन्शुकै, ॥ श्रीराम जी लक्ष्मन से कहते है इस पर्वत के चारो ओर फूले (पुष्पित) टेशू (पलाश) के पेड़ों से युक्त ऐसे जान पड़ते हैं मानो पर्वत के चारों ओर आग लग गई है सरोवर पड़ते हैं। पम्पा सरोवर अतिरमणीय है । सरोवर के चारों ओर अनेक वृक्ष, पौधे, औषधियाँ तथा लतायें लगी है। है अहि गहन और सुन्दर पम्पा सरोवर मन को हरने वाला है।वनस्पतियों का वर्णन इस प्रकार मिलता है। (75 श्लोक , 1 सर्ग, किष्किन्धाकाण्ड, रामायण, रामनारायण लाल)

पम्पातीररुहाश्चेमे संसक्ता मधुगन्धिनः । मालतीमल्लिकाषण्डाः करवीराश्च पुष्पिताः ॥ ७६ ॥
केतक्यः सिन्धुवाराश्च वासन्त्यश्च सुपुष्पिताः । माधव्यो गन्धपूर्णाश्च कुन्दगुल्माश्च सर्वशः ॥ ७७ ॥
चिरिबिल्वा मधूकाश्च वञ्जुला वकुलास्तथा । चम्पकास्तिलकाश्चैव नागवृक्षाः सुपुष्पिताः ॥ ७८ ॥
नीपाश्च वरणाश्चैव खर्जूराश्च सुपुष्पिताः । पद्मकाश्चोपशोभन्ते नीलाशोकाश्च पुष्पिताः ॥ ७९ ॥
लोध्राश्च गिरिपृष्ठेषु सिंहकेसरपिञ्जराः । अङ्कोलाश्च कुरण्टाश्च पूर्णकाः पारिभद्रकाः ॥ ८० ॥
चूताः पाटलयश्चैव कोविदाराश्च पुष्पिताः । मुचुलिन्दार्जुनाश्चैव दृश्यन्ते गिरिसानुषु ॥ ८१ ॥
केतकोद्दालकाश्चैव शिरीषाः शिंशुपा धवाः । शाल्मल्यः किंशुकाश्चैव रक्ताः कुरवकास्तथा ॥ ८२ ॥
तिनिशा नक्तमालाश्च चन्दनाः स्पन्दनास्तथा । पुष्पितान्पुष्पितग्राभिर्लताभिः परिवेष्टितान् ॥ ८३

पम्पा सरोवर के तरुवर पम्पा सरोवर ही के जल से सींचे हुए । मधुर गन्धयुक्त ये जुही, विजौरा, नीबू, कुन्द के गुच्छे, चिल-विल, महुआ, वेंत, मौलसिरी, चंपा, तिलक, नागकेसर, पद्मक, नीम, अशोक, लोध, अकोल, कोरैया, चूर्णक, मदार, आम, गुलाब, कचनार, मुचकुन्द, केवड़ा, लसोड़ा, सिरसा, सीसों, धव, सेमर, टेशू लाल कौरैया, तिमिश, करञ्ज, चन्दन, स्यन्दन आदि के वृत्त फूल रहे हैं और फूली हुई लताओं से युक्त है

हे लक्ष्मण पम्पा के तट पर पेड लतायें हवाओं के झोकों से उसी प्रकार आलिंगन कर रही है जैसे मद से मतवाली सुंदरियां अपने पतियों का आलिंगन करती है। कोई कोई पेड कलियों से युक्त श्याम वर्ण हो शोभायमान हो रहे हैं। ये फूल मीठे हैं । यह स्वादिष्ट है ।॥, प्रथम सर्ग किष्किन्धाकाण्ड (76, 77, 78, 79, 80, 81, 82, 83 श्लोक , 1 सर्ग, किष्किन्धाकाण्ड, रामायण, रामनारायण लाल)

"प्रकाशमान औषधियाँ": पर्वतीय बायोल्यूमिनेसेंस का संकेत: चित्रकूट पर्वत के वर्णन में वाल्मीकि लिखते हैं "रात्रौ सहस्त्रशः औषधयः स्वप्रभया प्रकाशन्ते… ज्वालाशिखा इव।" (12 श्लोक 94 सर्ग अयोध्याकाण्ड). यह पंक्ति संकेत करती है कि पर्वतीय क्षेत्रों में ऐसे लाइकेन, शैवाल या फॉस्फोरेसेंट वनस्पति-तत्व विद्यमान थे जो रात में हल्की चमक उत्पन्न करते थे। आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान से ज्ञात हुआ है कि हिमालय क्षेत्र में कुछ जैवदीप्ति काई प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जो रामायण के इस विवरण से मेल खाती हैं।

5. निष्कर्ष

रामायण कालीन वानस्पतिक औषधियों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि उस युग में चिकित्सा-विज्ञान केवल अनुभवजन्य नहीं, बल्कि अत्यंत वैज्ञानिक, संगठित और समृद्ध था। रामायण में वर्णित वनस्पतियों, जड़ी-बूटियों और औषधीय प्रक्रियाओं से यह प्रमाण मिलता है कि उस काल के ऋषि-मुनि, वैद्य और साधारण जन भी प्रकृति एवं वनस्पति-विज्ञान के अद्भुत ज्ञाता थे।

संजीवनी, बला-अतिबला, विशल्यकरणी, संधानकरणी, सौम्यकरणी, सुवर्णकरणी जैसी दिव्य औषधियाँ जहाँ चिकित्सा-शक्ति के अत्यंत उन्नत स्वरूप का संकेत देती हैं, वहीं गजकंद, बेल, अशोक, अर्जुन, लोध्र, चंदन, नीम, तिंदुक, तिनिस, कदंब, जामुन, प्रियाल आदि वनस्पतियों का संदर्भ यह दर्शाता है कि रामायण काल का वन्य-पर्यावरण विविध औषधीय गुणों से परिपूर्ण था।

वाल्मीकि द्वारा चित्रकूट, पंचवटी, दंडकारण्य, किष्किंधा, पम्पा सरोवर और हिमालय के औषधि-समृद्ध पर्वतों का वर्णन यह सिद्ध करता है कि भौगोलिक वनस्पति-विज्ञान (Geo-Botany) का ज्ञान अत्यंत विकसित था। औषधियों की पहचान, उनके रस, गुण, वीर्य, विपाक और प्रभाव (Pharmacodynamics & Pharmacognosy) जैसी अवधारणाएँ उस समय व्यवहार में थीं, जिन्हें बाद में चरक-सुश्रुत जैसे आचार्यों ने शास्त्रीय रूप दिया।

प्रकाशमान औषधियों का वर्णन (जैसे "रात्रौ सहस्रशः औषधयः स्वप्रभया प्रकाशिताः") आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से पर्वतीय जैवदीप्ति (Bioluminescence) या विशेष काई-शैवाल प्रजातियों की ओर संकेत करता है, जो यह दर्शाता है कि वाल्मीकि ने प्रकृति का अत्यंत सूक्ष्म और वैज्ञानिक निरीक्षण किया था।

दैनिक जीवन, वनवास, युद्ध और आध्यात्मिक आचरण—इन सभी में वनस्पतियों का बहुआयामी उपयोग यह प्रमाणित करता है कि रामायण काल का समाज न केवल प्रकृति के साथ तादात्म्य रखता था, बल्कि औषधियों को जीवन-रक्षक, पोषक, रोगनाशक और आध्यात्मिक शक्ति-स्रोत के रूप में स्वीकार करता था।

अतः समग्र रूप में कहा जा सकता है कि रामायण काल की वानस्पतिक औषधियाँ भारतीय परंपरा की चिकित्सा-परिपक्वता, वैज्ञानिक दृष्टि, पर्यावरणीय ज्ञान और औषधीय समृद्धि का अद्वितीय साक्ष्य हैं। यह विरासत आज भी आयुर्वेद, हर्बल साइंस, प्राकृतिक चिकित्सा और आधुनिक वनस्पति अनुसंधानों के लिए प्रेरणा का अक्षय स्रोत बनी हुई है।

6. संदर्भ सूची

1. जोशी, ए. (2023). भारतीय महाकाव्यों *में उल्लिखित औषधीय पौधों की संरक्षण स्थिति*. *जर्नल ऑफ एनवायर्नमेंटल बोटनी*, 15(2), 101–112.
2. कुमार, आर., मेहता, एस., एवं तिवारी, पी. (2022). *प्राचीन ग्रंथों में वर्णित औषधीय पौधों का फाइटोकैमिकल और फार्माकोलॉजिकल अध्ययन*. *जर्नल ऑफ फार्माकोग्नोसी एंड फाइटोथैरेपी*, 14(4), 88–97.
3. पाटिल, डी. एन., एवं पांडे, पी. ओ. (2025). *रामायण में वर्णित औषधीय पौधों का अध्ययन – एक समीक्षा*. *अफ्रीकन जर्नल ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च*, 28(1), 33–41.
4. शर्मा, के. (2023). *प्राचीन भारतीय ग्रंथों में औषधीय वनस्पतियों का एथ्नोफार्माकोलॉजिकल अध्ययन (रामायण के संदर्भ में)*. *इंडियन जर्नल ऑफ आयुर्वेद रिसर्च*, 9(3), 55–68.
5. सिकारवार, आर. एल. एस. (2024). *श्रीमद् वाल्मीकि रामायण में वर्णित वनस्पतियाँ: एक वानस्पतिक विश्लेषण*. *जर्नल ऑफ एथ्नोबोटनी*, 20(4), 45–58.
6. वर्मा, एन., एवं सिंह, पी. (2023). *प्राचीन साहित्य में आयुर्वेदिक पौधों के औषधीय गुण: एक तुलनात्मक विश्लेषण*. *जर्नल ऑफ इंटीग्रेटिव मेडिसिन एंड हेल्थ*, 17(5), 76–88.
7. चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा (अनुवादक)। (1927)। *श्रीमद् वाल्मीकि रामायण*। रामनारायण लाल, इलाहाबाद।
8. गीता प्रेस। *श्रीमद् वाल्मीकि रामायण*। गीता प्रेस, गोरखपुर।

पूर्ण नारीत्व के रूप में सीता मां का चित्रण

Vandana Nohria
Pt. J.L.N. Government College, Faridabad, Haryana
(vnohria1@yahoo.co.in)

माता सीता का नाम केवल भारत में ही नहीं परन्तु संपूर्ण विश्व में आदर के साथ एक आदर्श भारतीय नारी के रूप में आज भी लिया जाता है। सीता माता को धरती पुत्री कहा जाता है। इसलिए माता सीता धरती के ही तरह त्याग,बलिदान, प्रेम,अपनत्व,दया आदि गुणों से परिपूर्ण थी।राजा जनक क्षत्रिय होने के साथ ही एक ब्राह्मण भी थे। इसलिए माता सीता में भी अपने पिता की तरह ज्ञान,शौर्य, तेजस्वी आदि गुण थे।सीता माता को आज भी एक आदर्श नारी के रूप में जाना जाता है। इस शोध पत्र में मैं एक पूर्ण नारीत्व के रूप में सीता माता के चरित्र को प्रस्तुत कर रही हूँ। एक आदर्श नारी किस प्रकार अपने मार्ग में आए सभी बाधाओं को शान्त रहकर दूर कर सकती है। । इस प्रकार सीता माता एक नारी के रूप मे मानवता को उत्कृष्ट रूप प्रदान करती है।

1. सम्पूर्ण लेख

सीता मिथिला के राजा जनक की ज्येष्ठ पुत्री व अयोध्या के नरेश दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र राम की पत्नी थी जिन्हे देवी लक्ष्मी का अवतार भी कहा गया है।

ऋषि वाल्मिकी द्वारा रचित रामायण के अनुसार मिथिला के राजा जनक का हल जोतते समय खेतों में एक घडा में सीता माता को पाया था। धरती में पाये जाने के कारण इन्हे *धरती पुत्री* भी कहा जाता है। राम व लक्ष्मण के साथ उन्होंने चित्रकूट पर्वत स्थित मन्दाकिनी तट पर वनवास किया।जो उनके त्याग का परिचायक है। इसके बाद गोदावरी नदी के तट पर प्रचवटी में वास किया। राम व लक्ष्मण की अनुपस्थिति में रावण ने सीता का अपहरण किया। रावण ने सीता को लंका के अशोक वाटिका में रखा और त्रिजटा के नेतृत्व में कुछ राक्षसियों को उसकी देख-रेख का भार दिया।यह सीता मॉ की सहनशीलता का परिचायक है।

हनुमानजी सीता जी की खोज मे समुद्र लाँघकर लंका की अशोकवाटिका पहुँचे। वहाँ राक्षसियों के बीच एक तेजस्विनी स्वरूप सीताजी को पहचाना । रावण ने सीता से विवाह का प्रस्ताव रखा। सीता ने घास के एक टुकड़े से राम और सीता के अटूट बन्धन को स्पष्ट किया। और कहा कि तुम्हारे इस दुस्साहस से लंका का विनाश निश्चित है। यह उनकी निष्ठा व साहस का परिचायक है। उसके पश्चात राम ने रावण से माता सीता को मुक्त कराया और लंका का विनाश हुआ। वन में निर्वासित होने के बाद उन्होंने राम के तेजस्वी पुत्रों कुश और लव को जन्म दिया।जो उनकी ग्रहणशीलता को दिखाता है। वह एक पत्नी, बेटी और माँ की आदर्श मूर्ति हैं। इसके बाद माता सीता ने राज्य की महारानी का कर्तव्य निभाते हुए धरती में समा गई और अपना राज्य धर्म भी निभाया। सीता माता ने अपने जीवन में हर अवस्था में कठिनाइयों का सामना किया और हमेशा विजय प्राप्त की। उनका जन्मदिन सीता नवमी के रूप में मनाया जाता है। उनका कठिनाइयों से भरा जीवन शक्ति और साहस का परिचायक है। सीता माता को कृषि और उर्वरता की देवी के रूप में भी पूजा जाता है। तथा उनकी पूजा भरपूर फसल के लिए भी की जाती है।

इसके अतिरिक्त सीता माता देवी लक्ष्मी का अवतार होने के कारण उनमें दैवीय गुण भी थे। जैसे एक राजमहल की पुत्री तथा रानी होने के बावजूद उन्होंने विवाह के बाद वनवास जाकर अपने वैराग्य का परिचय दिया। जो एक मानवीय गुण को सुशोभित करता है। रावण की अशोक वाटिका में रहते हुए भी वह हमेशा राम भक्ति में लीन रहती थी जो उनके भक्त होने का परिचय देता है। साथ ही वह अल्प भोजन और कंदमूल खाकर अपना जीवन व्यतीत करती थी जो उनके अस्वाद होने का परिचय देता है। वह राक्षसियो के साथ सहज व्यवहार करती थी जो उनके सरलता का परिचय देता है। राम की रावण पर विजय प्राप्त करने के बाद उन्होंने अग्नि परीक्षा दी जो उनके सतीत्व को दर्शाता है।

माता सीता वास्तव में एक आदर्श नारी थी, और उनमें वे सभी अच्छे गुण हैं जो एक नारी में होने की अपेक्षा की जाती है। और मानवता को गौरव करती है।

एक पूर्ण नारी में सहनशीलता, त्याग, करुणा, निष्ठा, साहस और सहानुभूति होता हैं। ये गुण महिलाओं को जीवन की बाधाओ का सामना करने मे मदद करते हैं। इसके अतिरिक्त ग्रहणशीलता, प्रेम भी नारीत्व के महत्वपूर्ण गुण हैं। माता सीता ने अपने जीवन काल मे समय-समय पर इन गुणो का परिचय देकर नारी को पूजनीय बनाया है।

2. निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि सीता माता में नारीत्व होने के साथ-साथ सभी मानवीय और दैवीय गुण थे।जिसके आधार पर राक्षसीय गुण पराजित हो गया। भूमिपुत्री होने के कारण उनमें भू (धरती) के सभी गुण विदमान थे। एक तरफ जहॉ रामायण में रामचंद्र जी के क्षत्रिय गुणो का पता चलता है। वही सीता माता के नारीत्व का परिचय मिलता है अगर आज के युग में भी लोग सीता माता जैसे गुणो कोअपने स्वभाव मेंबढ़ाते जाएंगे तो वह जीवन में आ रही सभी बाधाओ को सीता माता की तरह पार कर लेगे और वैभव को प्राप्त करेंगे।

ऋग्लेद मे माता सीता के बारे मे कुछ श्लोक है। जैसे-

"शुभ सीता, आप निकट आइए: हम आपकी पूजा और आराधना करते हैं कि आप हमें आशीर्वाद दें और समृद्ध करें और हमें प्रचुर मात्रा में फल प्रदान करें।" (ऋग्वेद 4.56.6)

"श्री राम की प्रिय पत्नी सीता को प्रणाम है, जो सृष्टि की रचना, पालन और प्रलय के लिए उत्तरदायी हैं, क्लेशों को दूर करती हैं और समस्त मंगलों को प्रदान करती हैं। "(रामचरित्रमानस, बालखण्ड,मॉगलाचरण)

3. सन्दर्भ

1. (ऋग्वेद 4.56.6)
2. (रामचरित्रमानस, बालखण्ड,मॉगलाचरण)

मर्यादा से करुणा तक: विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में 'रामचरित' की पारिस्थितिकीय ज्ञान-मीमांसा और धारणीय विकास

हेम कुमार गहतोड़ी
हिंदी विभाग हेमवती नंदन बहुगुणा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खटीमा
(hem.gahtori15@gmail.com)

धारणीय विकास की वैश्विक विवशता, उपभोगवादी ज्ञान की अपूर्णता का प्रमाण है, जिसने प्रकृति को हृदय से विलग कर दिया है। यह शोध पारिस्थितिकीय आलोचनात्मक पद्धति से आचार्य विद्यानिवास मिश्र के निबंधों में, रामचरित के शाश्वत आलोक में, समाधान खोजता है। मिश्र जी ने नैतिक अनुशासन (मर्यादा) को सृष्टि के प्रति आत्मिक अनुराग (करुणा) में उत्कर्ष दिया है। उनका मार्मिक उद्घोष—"मेरे राम का मुकुट भीग रहा है"—सिद्ध करता है कि पर्यावरणीय संकट आदर्शों का ही संताप है। यह अध्ययन स्थापित करता है कि सच्चा पारिस्थितिकीय ज्ञान नियमों की शुष्कता में नहीं, अपितु संवेदना की आर्द्रता में निहित है। यह करुणा-केंद्रित भारतीय प्रतिमान, वैश्विक विकास के लिए एक जीवन-मूलक और शाश्वत मार्ग प्रस्तुत करता है।

बीज शब्द (मुख्य शब्द) : विद्यानिवास मिश्र, धारणीय विकास**,** रामचरित**,** पारिस्थितिकीय ज्ञान-मीमांसा**,** मर्यादा और करुणा**,** भारतीय प्रतिमान

1. प्रस्तावना

प्रकृति और पुरुष के बीच का शाश्वत संवाद ही भारतीय ज्ञान-मीमांसा का मूल आधार रहा है। आज जब धारणीय विकास केवल तकनीकी सुधार की विवशता बनकर रह गया है, तो हमें सभ्यतामूलक स्रोतों की ओर उन्मुख होना अनिवार्य है। रामचरित, जो भारतीय संस्कृति का अखंड जीवन-सूत्र है, कोई साधारण कथा नहीं, बल्कि पर्यावरण-सम्मत जीवन-शैली का एक आदर्श आलेख है।

आचार्य विद्यानिवास मिश्र, जो संस्कृत परंपरा और लोक-संवेदना के महान व्याख्याकार हैं, अपने निबंधों की साहित्यिक प्रज्ञा से इस रामचरित की प्रज्ञा को पुनर्जीवित करते हैं। यह शोध-प्रबंध मिश्र जी के निबंधों में अंतर्निहित 'मर्यादा' (नैतिक नियम) और 'करुणा' (भावनात्मक बोध) के वैचारिक अद्वैत का उद्घाटन करता है।

शोध प्रश्न: मिश्र जी की 'करुणा-जनित दृष्टि' किस प्रकार 'रामचरित' की 'मर्यादा' को समकालीन बनाती है, और यह भावनात्मक रूपांतरण किस प्रकार 'धारणीय विकास' के लिए आवश्यक 'पारिस्थितिकीय ज्ञान-मीमांसा' का निर्माण करता है?

2. शोध-प्रणाली (Research Methodology)

इस शोध में साहित्यिक आलोचनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। आचार्य मिश्र के निबंधों (*मेरे राम का मुकुट भीग रहा है*, *छितवन की छाँह*, *राम का अयन वन* आदि) का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर उनके पारिस्थितिकीय प्रतीकों और सांस्कृतिक दर्शन को उद्घाटित किया गया है। तुलनात्मक विश्लेषण के लिए रामचरितमानस (तुलसीदास) के मर्यादावादी सिद्धांतों को मिश्र जी की संवेदनात्मक दृष्टि के साथ संवाद कराते हुए धारणीय विकास के वैश्विक लक्ष्यों से जोड़ा गया है।

सैद्धांतिक विमर्श: मर्यादा और करुणा का दार्शनिक अंतर्संबंध : भारतीय दर्शन में, विकास की संकल्पना पश्चिमी 'भौतिक वृद्धि' की अवधारणा से मौलिक रूप से भिन्न है। यहाँ धर्म और पर्यावरण का संबंध अविभाज्य है।

3. मर्यादा

त्याग की अर्थनीति का नैतिक कोड 'मर्यादा' रामचरित का मूल सिद्धांत है, जो स्वेच्छा से स्वीकृत नैतिक सीमा है। गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस में, वनवास का प्रसंग अपरिग्रह और संयम की अर्थनीति सिखाता है। तुलसीदास की उद्घोषणा, **"सियाराम मय सब जग जानी,"** [1] प्रकृति को केवल वस्तु नहीं, बल्कि आत्मा का विस्तार मानने की मर्यादा स्थापित करती है। यह ज्ञान-मीमांसा हमें सिखाती है कि प्रकृति का संरक्षण एक अकाट्य नैतिक कर्तव्य है।

4. करुणा

मर्यादा का भावनात्मक विस्तार आचार्य विद्यानिवास मिश्र इस बौद्धिक मर्यादा को लोक-हृदय की आर्द्रता से सिक्त करते हैं। उनकी 'करुणा' केवल दया नहीं, बल्कि 'भूत-दया' और सृष्टि के प्रति आत्मिक अनुराग है। मिश्र जी सौंदर्य की नैतिकता पर बल देते हुए कहते हैं, **"अखंड जीवन और**

अखंड जीवन-दृष्टि की तलाश सौंदर्य की नैतिकता में है।" [2] यह कथन स्पष्ट करता है कि करुणा ही हमें वह आंतरिक बोध देती है जिससे हम प्रकृति की क्षति को अपनी निज-पीड़ा मानते हैं। यह प्रेम-जनित अनुशासन है, जो मर्यादा के कर्तव्य-भार को हल्का कर देता है।

निबंधों में वैचारिक रूपांतरण का साहित्यिक विश्लेषण : मिश्र जी का निबंध-शिल्प इस मर्यादा से करुणा के रूपांतरण को उत्कृष्ट प्रतीकात्मकता और साहित्यिक साक्ष्य द्वारा चरितार्थ करता है। 'भीगता मुकुट' और पारिस्थितिकीय संताप का मार्मिक प्रतीक मिश्र जी का कालजयी निबंध 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है' इस शोध का केंद्रीय प्रमाण है । 'मुकुट का भीगना' सांस्कृतिक आदर्शों पर आया पारिस्थितिकीय संकट है। मिश्र जी लिखते हैं: **"जाने कब से मेरे राम भीग रहे हैं, बादल है कि बरसता ही जा रहा है।"** [3] यह कथन राम की व्यक्तिगत पीड़ा को प्रकृति की उपेक्षा से उपजी समकालीन करुणा में बदल देता है। यह सिद्ध करता है कि विकास तभी टिकाऊ होगा जब वह हृदय के आर्द्र भाव से प्रेरित हो।

प्रकृति में चैतन्य और 'वन-संस्कृति' की प्रज्ञा का प्रमाण मिश्र जी के निबंधों में, प्रकृति किसी निर्जन पृष्ठभूमि के रूप में नहीं आती, अपितु संस्कृति के जीवंत उपादान के रूप में आती है। वे 'राम का अयन वन' निबंध में वन-संस्कृति की महिमा का गुणगान करते हैं। इस संस्कृति में वन केवल संसाधन नहीं, बल्कि ज्ञान और तपस्या का स्थल है।

मिश्र जी के निबंधों की करुणा विशिष्ट वृक्षों और ऋतुओं से प्रकट होती है। *छितवन की छाँह* जैसे निबंधों में, वृक्ष मनुष्य के सुख-दुःख के साक्षी बनते हैं । मिश्र जी स्पष्ट करते हैं कि **"इस मिट्टी में सनना... जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य है।"** [4] यह करुणा-जनित दृष्टि हमें विकास की प्रक्रिया में प्रकृति को समान भागीदार मानने की प्रज्ञा देती है।

'भूमि-संबंध' और पारिस्थितिकीय ज्ञान का उद्भव मिश्र जी का लेखन 'भूमि-संबंध' (जमीन के साथ आत्मिक जुड़ाव) की गहनता को स्थापित करता है। रामचरित में राम का भूमि और वनवासियों के प्रति अनुराग, संसाधनों के समतामूलक वितरण का आदर्श प्रस्तुत करता है। आचार्य मिश्र, डॉ. श्रीराम परिहार के मत का समर्थन करते हुए, "परजन्यता" को महत्व देते हैं ।

धारणीय विकास का करुणा-केंद्रित भारतीय प्रतिमान: यह शोध स्थापित करता है कि आचार्य विद्यानिवास मिश्र के निबंधों से उद्भूत रामचरित की पारिस्थितिकीय ज्ञान-मीमांसा, धारणीय विकास के लिए एक अद्वितीय भारतीय प्रतिमान प्रदान करती है, जो दो आयामों पर कार्य करता है:

ज्ञान का वैचारिक वि-केंद्रीकरण और समता: यह प्रतिमान उस आर्थिक प्रभुत्व को नकारता है जो केवल लाभ को ज्ञान मानता है। मिश्र जी के अनुसार, सच्चा ज्ञान वह है जो लोक-संवेदना और सांस्कृतिक निरंतरता को सम्मान दे। करुणा, यहाँ ज्ञान का स्रोत बन जाती है। डॉ. आर.पी. सिंह जैसे विचारक भी मानते हैं कि धारणीय विकास को भारतीय दर्शन के समग्र दृष्टिकोण से ही समझा जा सकता है । यह वैचारिक स्वतंत्रता ही धारणीय विकास को केवल एक तकनीकी लक्ष्य से हटाकर मानवीय मूल्य के केंद्र में स्थापित करती है।

लोक-कसौटी और अनिवार्य सामंजस्य: धारणीय विकास की सफलता के लिए मिश्र जी की करुणा एक लोक-कसौटी (आधारभूत मापदंड) प्रदान करती है। यह कसौटी है: क्या विकास की प्रक्रिया मनुष्य और प्रकृति के बीच के आत्मिक अनुराग को बढ़ा रही है या भौतिक अलगाव को? विकास की यह कसौटी हमें उस मर्यादा का पालन करने के लिए प्रेरित करती है जो करुणा से पोषित है। इस प्रकार, मर्यादा हमें भौतिक सीमाएं देती है, और करुणा हमें इन सीमाओं का पालन करने के लिए आत्मिक प्रेरणा देती है।

5. निष्कर्ष

निष्कर्षतः, आचार्य विद्यानिवास मिश्र के निबंध साहित्यिक सौंदर्य और दार्शनिक गहराई के अद्भुत संगम हैं। वे 'रामचरित' की मर्यादा को समकालीन करुणा का उत्स बनाकर, धारणीय विकास के लिए एक शाश्वत दर्शन प्रदान करते हैं। यह वैचारिक यात्रा सिद्ध करती है कि पर्यावरण का संरक्षण केवल कानूनी दायित्व नहीं, बल्कि आत्मिक अनिवार्यता है। मर्यादा से करुणा तक की यह ज्ञान-मीमांसीय यात्रा वैश्विक सभ्यता को जीवन के प्रति समग्र दृष्टिकोण और अनुराग की महत्ता का स्मरण कराती है। मिश्र जी का यह करुणा-केंद्रित भारतीय प्रतिमान ही उस स्थायी समाधान की कुंजी है, जिसकी तलाश आज संपूर्ण विश्व कर रहा है।

6. संदर्भ सूची

1. गोस्वामी, तुलसीदास. *श्रीरामचरितमानस*. गीता प्रेस, 2019, पृ. 34-35.
2. झा, डॉ. के.सी. *हिंदी साहित्य में पारिस्थितिकीय आलोचना*. साहित्य संचार, 2017, पृ. 50.
3. मिश्र, विद्यानिवास. *मेरे राम का मुकुट भीग रहा है*. प्रभात प्रकाशन, 2018, पृ. 15.
4. झा, डॉ. के.सी. *हिंदी साहित्य में पारिस्थितिकीय आलोचना*. साहित्य संचार, 2017, पृ. 45.

आधार ग्रंथ

5. मिश्र, विद्यानिवास. *राम का अयन वन* , 1998.
6. सिंह, डॉ. आर.पी. *धारणीय विकास और भारतीय दर्शन*. राष्ट्रीय प्रकाशन संस्थान, 2020.
7. वर्मा, डॉ. अलका. *विद्यानिवास मिश्र के सांस्कृतिक निबंध: पर्यावरणीय चेतना*. साहित्य अकादेमी, 2021.

रामराज्य आदर्श शासन का भारतीय दृष्टिकोण

राजीव मिश्र

T.G.T (संस्कृत)

(rajeevmishra09@gmail.com)

1. प्रस्तावना

"रामराज्य" भारतीय परंपरा में आदर्श शासन की वह अवधारणा है, जिसमे शासन का उदेश्य केवल सत्ता संचालन नहीं, अपितु समाज के प्रत्येक वर्ग की सुख-सुरक्षा और नैतिक उन्नति है। यह संकल्पना न केवल धार्मिक ग्रन्थ " रामायण" में वर्णित है, बल्कि भारतीय राजनैतिक विचारधारा का मूल भी बन चुकी है।

भारतीय राजनैतिक और सांस्कृतिक परंपरा में 'रामराज्य ' एक ऐसे आदर्श शासन की संकल्पना है, जहाँ राजा, प्रजा, प्रशासन और समाज-सभी धर्म,न्याय,करुणा,और कर्तव्यपरायणता पर आधारित होते है। रामराज्य केवल एक पौराणिक कल्पना नहीं, बल्कि भारतीय शासन- दर्शन की वह आदर्श परिभाषा है, जो आज भी नीतिनिर्माण , राजनीति और समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

भारतीय सभ्यता में शासन केवल प्रशासनिक तंत्र नहीं, अपितु लोककल्याण की व्यवस्था रही है। कौटिल्य अर्थशास्त्र के प्रथम अधिकरण में वर्णित इस आदर्श शासन का प्रतीक है, जहाँ राजा "राजा" नहीं अपितु "जनसेवक" के रूप में कार्य करता है। प्रजा के सुख में ही राजा का सुख निहित है –

प्रजासूखे सुखं राज्ञ: प्रजानं च हिते हितम।
नात्मप्रियं प्रियं राज्ञ: प्रजानां तू प्रियं प्रियं II

प्रस्तुत शोधपत्र में रामराज्य की मूल भावना, उसके शासन तत्त्व, दार्शनिक आधार तथा आधुनिक लोकतांत्रिक शासन से उसकी तुलना का अध्ययन किया गया है I

1. रामराज्य की परिकल्पना

रामराज्य का उल्लेख वाल्मीकि रामायण , रामचरितमानस तथा अनेक ग्रंथों में मिलता है I रामराज्य का आधार धर्म पर टिका है - जहाँ शासन का प्रत्येक निर्णय नैतिकता, न्याय और समानता से प्रेरित होता है I

मुख्या विशेषताएँ :-

धर्मनिष्ठ शासन

रामराज्य में शासन धर्मनिरपेक्ष अर्थ में "धर्म" पर आधारित था - अर्थात सत्य अहिंसा ,दया, न्याय और कर्तव्य। राम स्वयं इन मूल्यों पर चलते थे, जिससे पूरी प्रजा प्रेरित होती थी।

सब निर्दम्भ धर्मरत पुनी। नर अरु नारी चतुर सब गुनी।।
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी। सब कृतग्य नहिं कपट सयानी।।

रामराज्य में सभी दम्भरहित हैं, धर्मपरायण हैं और पुण्यात्मा हैं। पुरुष और स्त्री सभी चतुर और गुणवान तथा सभी ज्ञानी है। सभी कृतज्ञ हैं, कपट (धूर्तता)किसी में भी नहीं है। सब लोग अपने-अपने वर्ण और आश्रम के अनुकूल धर्म में तत्पर हुए सदा वेद मार्ग पर चलते हैं और सुख पाते हैं। उन्हें न किसी बात का भय है , न शोक है और न कोई रोग ही सताता है।

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।।(उत्तरकाण्ड दोहा - 20)

नैतिक अनुशासन

रामराज्य में नैतिक मूल्यों एवं अनुशासन की पराकाष्ठा देखने को मिलती है जिससे समाज में अपराध, अन्याय और भय का अभाव है |

2. रामराज्य के मूल्य और उनका सामाजिक प्रभाव

शान्ति और सुरक्षा - गोस्वामी तुलसीदास द्वारा विरचित श्रीरामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में वर्णित रामराज्य एक ऐसे समाज को चित्रित करता है जो अपराध, रोग, अकाल आदि दैहिक, दैविक और भौतिक तीनो ही तापों (कष्टों) से विमुक्त है। सभी प्राणी एक दूसरे से परस्पर प्रीति करते हैं। यहाँ तक कि हाथी और सिंह (वैर भूलकर) एक साथ रहते हैं। पक्षी और पशु सभी ने स्वाभाविक वैर भुलाकर आपस में प्रेम करते हैं।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि व्यापा ॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती ॥(उत्तरकांड-20/01)
फूलहिं फरहिं सदा तरू कानन। रहहिं एक सँग गज पंचानन ॥
खग मृग सहज वयरु बिसराई। सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई ॥(उत्तरकांड-22-01)

स्त्री और सामाजिक प्रतिष्ठा

रामराज्य में सभी वर्गों को समान महत्व दिया जाता है। सामाजिक संतुलन, न्यायिक निष्पक्षता और अवसर की समानता इस शासन की नींव है। तथापि समाज में स्त्री को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। उनकी सुरक्षा, आजादी एवं सम्मान का भी विशेष ध्यान रखा जाता था। स्त्रियों को समाज में एक सम्मानित पद प्राप्त था। गोस्वामी जी श्रीरामचरितमानस में लिखते हैं-

पनिघट परम मनोहर नाना। तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना ॥(उ.का--28/01)

अयोध्या नगर के उत्तर दिशा में श्रीसरयू जी बह रही हैं। कुछ दूरीपर सुन्दर-सुन्दर अनेक घाट हैं। जिस घाट पर बहुत स्त्रियाँ पानी भरती हैं, उस घाट पर पुरुषों का जाना निषिद्ध था। इससे स्पष्ट होता है कि. समाज नारी सुरक्षा के लिए एक सकारात्मक दृष्टिकोण रखता था।

आर्थिक नीती एवं सम्मृद्धि - "नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना" समाज में

आर्थिक समानता का संकेत देता है। समृद्धि केवल आर्थिक नहीं अपितु सांस्कृतिक रूप से भी समाज अत्यन्त समृद्ध था।

रामराज्य में आर्थिक नीतियाँ अत्यंत प्रासंगिक, एवं उदार थीं। प्रजाओं पर कभी भी अनावश्यक कर (Tax) का बोझ नहीं लादा जाता था।

कर (Tax) प्रणाली प्रत्यक्ष न हो कर प्रायः अप्रत्यक्ष करप्रणाली था। जैसा कि स्पष्ट है-

बरषत हरषत लोग सब करषत लखै न कोई।
तुलसी प्रजा सुभाग ते भूप भानु सम होई ॥(दोहावली -तुलसीकृत)

प्रस्तुत दोहे में गोस्वामी जी ने भूप (राजा) को भानु (सूर्य) के समान बतलाया है। जिस प्रकार सूर्य जब शुभ वृष्टि करते हैं तो चराचर जगत हर्षित होता है, परंतु उसी वृष्टि के निमित्त जब जल कर्षण करते हैं तो उसे कोई नहीं देख पाता। प्रस्तुत दोहा राजा के लिए उपमान है। राजा अपने राज्य में प्रजाओं से कर (Tax) उसी प्रकार ले जैसे सूर्य, और फिर उसे जनकल्याणकारी योजनाओं के द्वारा उसी प्रकार लौटाए जैसे सूर्य-वन, पर्वत, नदी, नगर इत्यादि में समान रूप से बरसता है। अर्थात् योजनाएँ सभी के लिए आवश्यकता एवं क्षमता के अनुसार बिना किसी भेद-भाव की हो।

2. शिक्षा एवं स्वास्थ्य

'नर अरु नारि चतुर सब गुनी "सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी" इससे स्पष्ट है कि, रामराज्य में सभी वर्णों के मनुष्यमात्र के लिए आवश्यकता एवं क्षमता के अनुरूप शिक्षा सुलभ थी। स्वास्थ्य के विषय में गोस्वामीजी लिखते हैं -

अल्पमृत्यु नहिं कवनिउ पीरा।
सब सुंदर सब बिरुज सरीरा || (उ.का.- 20-03)

रामराज्य में कभी किसी की अल्पआयु में मृत्यु नहीं होती, न किसी को कोई पीड़ा होती है। सभी के शरीर सुन्दर और नीरोग हैं। इससे स्पष्ट है कि रामराज्य में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की सुविधा सभी के लिए सुलभ थी।

तत्व	रामराज्य	आधुनिक लोकतंत्र
शासन का आधा	धर्म और नैतिकता	संविधान और विधि
उद्देश्य	लोककल्याण	संवैधानिक अधिकारों की रक्षा एवं जनसुरक्ष
शासक की भूमिव	सेवक और रक्षक	जनप्रतिनिधि
प्रशासनिकदृष्टि	न्यायप्रियता और करुण	नीतिगत संरचना और नियम

3. रामराज्य और आधुनिक शासन की तुलना

आलोचनात्मक विवेचन –

यद्यपि रामराज्य को आदर्श माना जाता है, परंतु आधुनिक संदर्भ में इसकी कुछ अवधारणाओं का प्रत्यक्ष अनुप्रयोग चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

आधुनिक राज्य का स्वरूप अधिक जटिल और बहुस्तरीय है।

धार्मिकपौराणिक- आदर्शों को आधुनिक संवैधानिक ढाँचे में रूपांतरित करते समय सतर्कता आवश्यक है।

आज लोकतंत्र शक्ति-वितरण पर आधारित है, जबकि प्राचीन काल में यह केंद्रीकृत राजतंत्र था |

फिर भी, रामराज्य के मूलभूत मूल्य सार्वभौमिक और लोकतांत्रिक शासन के लिए एक उत्कृष्ट दशा और दिशा निर्धारित कर सकती है।

4. निष्कर्ष

रामराज्य कोई कल्पना मात्र नहीं, अपितु शासन की वह भारतीय संकल्पना है जो नैतिकता, न्याय और लोककल्याण पर आधारित है। आधुनिक युग में जब शासन तंत्र अनेक चुनौतियों से जूझ रहा है, तब रामराज्य की मूल भावना -"जनहित सर्वोपरि" हमारे लोकतंत्र को नैतिक दिशा प्रदान कर सकती है।

5. सन्दर्भ(reference)

1. श्रीरामचरितमानस (उत्तरकाण्ड)
2. वाल्मीकिरामायण
3. कौटिल्य-अर्थशास्त्र

रामराज्य और आधुनिक सुशासन

राहुल कुलकर्णी
B.P. Arts, S.M.A. Science and K.K.C. Commerce College, Chalisgaon
(prof.rahulkulkarni@gmail.com)
मंदार कुलकर्णी
Smt. S.M. Agrawal Institute of Management, Chalisgaon
(mandarkulkarni1989@gmail.com)

भारतीय संस्कृति में रामराज्य आदर्श शासन व्यवस्था का प्रतीक है। भगवान श्रीराम को धर्म का साक्षात् रूप कहा गया है। उन्होंने ऐसा शासन चलाया जिसमें न्याय, समानता, नैतिकता और लोककल्याण सर्वोपरि थे। आज के युग में सुशासन की अवधारणा विश्वस्तर पर स्वीकार की जा रही है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार सुशासन का अर्थ है पारदर्शी, उत्तरदायी, न्यायपूर्ण और लोकहितकेंद्रित शासन। रामराज्य और आधुनिक सुशासन की मूल भावना समान है। दोनों ही जनकल्याण, नैतिक उत्तरदायित्व और न्याय पर आधारित हैं। अतः कहा जा सकता है कि रामराज्य भारत में सुशासन का आदर्श रूप है। यह शोधपत्र रामायण और रामचरितमानस के सन्दर्भों के आधार पर रामराज्य और आधुनिक सुशासन के तुलनात्मक विश्लेषण को प्रस्तुत करता है।

1. प्रस्तावना

भारतीय सभ्यता का विकास धर्म, नीति और नैतिक मूल्यों के आधार पर हुआ है। रामराज्य केवल एक धार्मिक या पौराणिक आदर्श नहीं, बल्कि शासन की ऐसी संरचना का प्रतीक है जिसमें राजा और प्रजा दोनों के कर्तव्य स्पष्ट रूप से परिभाषित हैं। वाल्मीकि रामायण तथा गोस्वामी तुलसीदासकृत रामचरितमानस में रामराज्य का वर्णन एक ऐसे शासन के रूप में हुआ है , जहाँ प्रजा सुखी, भयमुक्त और समृद्ध थी। दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज नहिं काहूहि व्यापा (रामचरितमानस, उत्तरकांड)। यह आदर्श स्थिति आज के युग में सुशासन के सिद्धांतोंसे मेल खाती है। सुशासन का उद्देश्य केवल प्रशासनिक दक्षता नहीं, बल्कि मानवता, पारदर्शिता, न्याय और समान अवसर सुनिश्चित करना भी है।

2. विस्तार

रामराज्य के मूल तत्व

रामराज्य के मूल सिद्धांत शासन के सर्वांगीन विकास और जनकल्याण पर आधारित थे। प्रथम दृष्टया, यह शासन न्याय और समता की भावना से ओतप्रोत था। श्रीराम ने कभी भी जाति, वर्ग या सम्प्रदाय के आधार पर भेदभाव नहीं किया। उन्होंने निषादराज गुह को अपनाया, विभीषण को आश्रय दिया और शबरी के प्रेम को सम्मानित किया। यह व्यवहार सामाजिक समरसता और समान अवसर की भावना का परिचायक है। रामराज्य का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व उत्तरदायित्व और लोककल्याण की भावना थी। श्रीराम ने प्रजा की भावनाओं का आदर करते हुए स्वयं सीता माता को वनवास भेजा, जो व्यक्तिगत दृष्टि से अत्यंत वेदनादायक था, परंतु राज्य की मर्यादा के पालन के लिए आवश्यक था। यह निर्णय आज के लोकतांत्रिक शासन में 'पब्लिक अकाउंटेबिलिटी' की सर्वोच्च मिसाल के रूप में देखा जा सकता है। रामराज्य का तीसरा तत्व नैतिकता और पारदर्शिता था। शासन में कोई कार्य निजी स्वार्थ से प्रेरित नहीं था; सभी निर्णय लोकहित को केंद्र में रखकर लिए जाते थे। धर्म और शासन के बीच संतुलन बनाए रखना भी रामराज्य की विशेषता थी। यहाँ धर्म का अर्थ कर्मनिष्ठा और न्यायप्रियता से था, न कि किसी विशेष धार्मिक मत से।

आधुनिक सुशासन के सिद्धांत

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम ने सुशासन के आठ प्रमुख सिद्धांत निर्धारित किए है। उत्तरदायित्व, पारदर्शिता, कानून का शासन, उत्तरदायी शासन, सहमति आधारित निर्णय, समानता और सहभागिता, दक्षता एवं परिणामशीलता तथा जनसहभागिता। इन सिद्धांतों का उद्देश्य शासन प्रणाली को ऐसा बनाना है जो जनता के प्रति संवेदनशील, न्यायसंगत और पारदर्शी हो। यदि इन सिद्धांतों की तुलना रामराज्य की व्यवस्थाओं से की जाए, तो स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि श्रीराम के शासन में ये सभी तत्व विद्यमान थे। रामराज्य को इस दृष्टि से गुड गव्हार्नंस मॉडेल अर्थात सुशासन का भारतीय स्वरूप कहा जा सकता है।

रामराज्य और लोकतांत्रिक शासन की समानता

रामराज्य और आधुनिक लोकतंत्र दोनों की नींव जनकेंद्रित शासन प्रणाली पर टिकी हुई है। रामराज्य में राजा केवल शासक नहीं, बल्कि प्रजा का सेवक और रक्षक था। आधुनिक लोकतंत्र भी इसी सिद्धांत को प्रतिपादित करता है। शासन अर्थात लोगोद्वारा , लोगोके लिये चलाया गया राज्य ।रामराज्य में न्याय के निर्णय धर्म और नीति पर आधारित थे, न कि व्यक्तिगत भावनाओं पर। समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान करना और सामाजिक न्याय की स्थापना करना, रामराज्य का केंद्रीय उद्देश्य था। यह समावेशी दृष्टिकोण आज के लोकतांत्रिक शासन की आत्मा से पूर्णतः

मेल खाता है। रामराज्य में भय, अन्याय और भ्रष्टाचार से मुक्त समाज की कल्पना की गई थी। यह विचार आज भी एक आदर्श शासन व्यवस्था के रूप में प्रासंगिक है।

रामराज्य से सुशासन के लिए प्रेरणाएँ

रामराज्य आधुनिक शासन को अनेक प्रेरणाएँ प्रदान करता है। सबसे पहले, यह नैतिक नेतृत्व का आदर्श प्रस्तुत करता है। रामराज्य में शक्ति के साथ संयम और दया का संतुलन दिखाई देता है, जो आज के नेतृत्व के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। दूसरे, लोकहित की भावना को सर्वोच्च मान्यता प्राप्त थी। रामराज्य में शासन का प्रत्येक निर्णय जनकल्याण के उद्देश्य से लिया जाता था। तीसरे, सामाजिक न्याय और समानता की भावना शासन की नींव थी। समाज के प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान और अवसर प्राप्त था। चौथे, नागरिकों की शिक्षा, जागरूकता और उत्तरदायित्व को राज्य के विकास का आवश्यक अंग माना गया था। इन सभी तत्वों का समावेश किसी भी सुशासन प्रणाली को सुदृढ़ और प्रभावशाली बनाता है।

3. निष्कर्ष

रामराज्य केवल धार्मिक कल्पना नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक शासन-सिद्धांत है, जो आज भी शासन विज्ञान, प्रशासन और लोकनीति के लिए प्रेरणास्रोत है। आधुनिक सुशासन की जो अवधारणा संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रतिपादित की गई है, वह भारतीय परंपरा में पहले से ही निहित थी। श्रीराम के शासन में पारदर्शिता, न्याय, समानता, उत्तरदायित्व और नैतिकता जैसे सभी तत्व दृष्टिगोचर होते हैं। रामराज्य का स्वरूप इस बात का प्रमाण है कि शासन तभी सफल होता है जब उसमें मानवीय संवेदनाएँ और धर्मनिष्ठा का समन्वय हो। अतः कहा जा सकता है कि रामराज्य आधुनिक सुशासन का भारतीय आदर्श स्वरूप है। यदि आज के शासक वर्ग और नागरिक इन सिद्धांतों को आत्मसात करें, तो भारत पुनः उस 'रामराज्य' की ओर अग्रसर हो सकता है, जिसकी कल्पना महात्मा गांधी ने भी की थी।

4. संदर्भ ग्रंथ

1. वाल्मीकि रामायण
2. गोस्वामी तुलसीदास, रामचरितमानस
3. United Nations Development Programme (UNDP), Governance Report, 1997
4. गांधी, एम.के. — Young India, Navjivan
5. The Collected Works of Mahatma Gandhi (CWMG)
6. नारायणस्वामी, के.एस., Gandhiji's Concept of Value-Based Living
7. भारत का संविधान, 1950
8. विश्व बैंक, Good Governance and Development Framework, 2003

Examining the influence of Buddhism on the Rāma-Rāvaṇa Duel from the Reamker with Reference to Vālmīkīrāmāyaṇa

Udit Kulkarni
K. J. Somaiya Institute of Dharma Studies
(udit.k@somaiya.edu)

The Cambodian version of Rāmāyaṇa is known as Reamker since 16th century. It has a significant place in its culture and history. Scholars have noted the Buddhist influence on it. This paper examines the Rāma-Rāvaṇa dual of the Cambodian version of Rāmāyaṇa (Reamker) with reference to Vālmīkīrāmāyaṇa and attempts to analyse the differences between them, the reasons for the variations and re-investigates the evidence of the claim.

1. *Introduction*

The Reamker (also known as *Rāmakerti*) is the Cambodian national epic and the Khmer version of the Indian epic *Rāmāyaṇā*. The name *Rāma-kerṭi*, nowadays pronounced *rīamker*, literally translates to "The fame or glory of Rāma". This unique name is comprehensive, covering all forms of artistic expression, including fine arts, literature, and performance related to the story. The *Reamker* belongs to the group of *Rāmāyaṇā*s prevalent throughout Southeast Asia.

Arrival and Period of the *Rāmāyaṇā* in Cambodia
The influence of the *Rāmāyaṇā* in Cambodia is ancient, dating back over a millennium.

Period of Arrival (Pre-Angkorian and Angkorian Eras)
The story was known to the Khmer community since at least the 6th century A.D.. Epigraphical evidence confirms its early presence; a 7th-century Sanskrit inscription [K. 359] found at Veal Kantal, Stung Treng, specifically mentions the daily recitations of the *Rāmāyaṇā*.

The story was also well-known during the subsequent Angkorian period (9th to 13th centuries A.D.). Carved narrative reliefs depicting elements of the epic are widespread across major temples, including the Bakong, Banteay Srei, Baphuon, Phimai, Thommanon, and Banteay Samre. Notably, the bas-reliefs at Angkor Wat vividly illustrate the climax of the story, particularly the battle at Lanka.

Period of Literary Composition (Middle Khmer Era):
The literary text known as the classical *Rāmakerti* (*Rk. I*) was written during the Middle period of Khmer literature. The first composition, which is incomplete, likely dates from the 16th to the 17th century.

Why the Buddhist Influence on the *Reamker*?
The *Rāmakerti* was fundamentally influenced by the teachings of the Buddha because the authors intentionally re-shaped the text with a mentality strongly imbued with Buddhist culture.

This transition coincides with the shift in religious priorities in Cambodia following the collapse of the Angkorian civilization, where Theravāda Buddhism achieved dominance. The *Rāmakerti* allowed the Hindu epic narrative (the "Vālmīkian warp") to persist by weaving in "weft-yarns drawn from their Buddhist culture".

Key Aspects of Buddhist Assimilation:

1. **Rām as a Bodhisattva:** Rāma is no longer solely an incarnation of Viṣṇu. He is **assimilated to the Buddha**, being frequently referred to as a **bodhisattva**. He is called the "bud of the Buddha" (*Buddha¢kùr*) and belongs to the lineage of the *tathàgatas*.
2. **Ideal Buddhist Ruler:** Rām is portrayed as a *cakravartin* (righteous ruler) who upholds *dharma*. He holds the highest political supremacy over lesser rulers and adheres strictly to *dharma*. He is endowed with the supreme Buddhist virtues known as the *brahmavihàra* (sublime abiding): loving-kindness (*mettà*), compassion (*karuṇā*), sympathetic joy (*muditā*), and equanimity (*upekkhā*).
3. **Non-Violence and Spiritual Power:** Rām, as the ideal bodhisattva-king, must **stand above physical struggle** and is "always reluctant to take violent actions". He uses **spiritual power** (*tejaf*) or performs miracles and resorts only to moral argument and persuasion. If fighting is necessary, his brother Laks and the monkey allies fight in his stead.

4. **Buddhist Cosmology:** The demons in the tale are often referred to as *māras* (enemies of Buddhism). The cosmological setting is fully aligned with Theravāda teachings, emphasizing the ultimate dissolution of all conditioned things by the logic of impermanence (birth, old age, suffering, and death).

Differences from the *Rāmāyaṇā* as a Form of Literature

The Cambodian *Reamker* differs from the Indian Vālmīki's *Rāmāyaṇā* both thematically and structurally.

Thematic Differences (Buddhist & Cultural Influence)

- **Rām's Identity:** As noted above, Rām is fundamentally changed from a Hindu god-king to a **Buddhist bodhisattva-king**.
- **Narrative Conclusion:** Unlike the Sanskrit *Rāmāyaṇā*, the *Reamker* concludes on a **happy note**, with Rām and Setā reunited.
- **Setā's Origin:** In the Cambodian version, Setā is discovered by King Janaka as she sails down the River Yamuna on a raft, unlike the Indian version where she emerges from the earth furrow (*sītā*). The Khmer spelling of her name, *Setà*, is linked to the Pali term *seta*, meaning **"purity,"** rather than the Sanskrit term for "furrow".
- **Kinship Dynamics:** The Cambodian pronunciation of Rāma as *riem* (meaning "elder brother") transformed the relationship between Rām and Laks (his younger brother) into **"one of the most revered themes in the Khmer people's mind"**.
- **The *Reamker* avoids lengthy accounts of genealogies and unnecessary descriptive passages** found in the Indian epic.

Literary and Performative Form

- **Original Purpose:** The literary text of the *Reamker* was originally intended as the **libretto to a masked dance drama** (*lkhon khol*), performed exclusively by men.
- **Theater:** The text remains the exclusive narrative used for the large leather puppets (*spaek thom*) associated with traditional shadow theater.
- **Structure:** The surviving literary *Reamker* text consists of two separate and incomplete compositions in verse. The first is written in a variety of traditional meters, and the second is in one meter and is generally more verbose. The classical *Rāmakerti I* is essentially an epic poem of **5,034 strophes**.

2. Methodology

This study adopts a comparative textual analysis to examine the *Rāma–Rāvaṇa duel* as portrayed in the Indian *Vālmīki Rāmāyaṇa* and the Cambodian *Reamker*. The Sanskrit source text is drawn from the IIT Kanpur edition of the *Vālmīki Rāmāyaṇa*, focusing specifically on Yuddha Kāṇḍa sargas 105 to 111, with the exception of sarga 107, which is absent from this version. These chapters encompass the major dramatic turns of the final battle: Rāvaṇa's retreat and reproach of his charioteer, the appearance of ominous portents, the Aditya Hridaya episode, and the final slaying of Rāvaṇa.

The *Reamker* material is taken from Judith M. Jacob's English translation of the first composition, with particular attention to parts 9 and 10. While the *Reamker* presents a compressed and culturally adapted version of the epic, these sections most closely parallel the final combat sequence in the *Vālmīki* text. Given the substantial variation in sarga numbering across major editions of the *Rāmāyaṇa*—including the Critical Edition, H. M. P. Shastri's version, Gita Press, and others—this study maintains consistent reference to the IIT Kanpur format for clarity. This alignment ensures a clear and precise framework for comparing the narrative flow, thematic interpretation, and philosophical orientation of both texts.

Theoretical Framework

1. What Does Buddhist Influence Mean?

Buddhist influence in the *Reamker* refers to the profound assimilation and reshaping of the original Hindu epic's framework by the dominant **Theravāda Buddhist worldview** that emerged in Cambodia following the collapse of the Angkorian civilization.

This process involved weaving elements of Buddhist culture ("weft-yarns") into the original Hindu story ("Vālmīkian warp"). The core goal of this transformation was to grant the epic narrative spiritual and moral authority within the new Buddhist ethical system.

Key Aspects of Buddhist Assimilation

1. **Rām as Bodhisattva:** In the *Reamker*, Rāma (Rām) is fundamentally redefined. He is no longer solely an incarnation of the Hindu deity Viṣṇu but is assimilated to the Buddha. He is regularly referred to as a **bodhisattva** (a being striving toward enlightenment), and called the **"bud of the Buddha"** (*Buddha¢kùr*) or a figure who belongs to the lineage of the *tathàgatas*.
2. **Upholder of *Dhamma***: Rām is portrayed as a **righteous king (*dhammaràja*)** and a *cakravartin* (universal monarch) who holds and upholds *dharma*. He embodies the four sublime virtues (*brahmavihàra*): loving-kindness (*mettà*), compassion (*karuṇā*), sympathetic joy (*muditā*), and equanimity (*upekkhā*).

3. **Ultimate Goal:** Rām's purpose is spiritually elevated; he tells Setā he intends to lead her to the knowledge of **"supreme nirvà¢a"**. The cosmological setting itself is aligned with Theravāda teachings, emphasizing the eventual dissolution of all conditioned things by the logic of impermanence (birth, old age, suffering, and death).

Buddhist Ideologies Regarding Violence

The emphasis on Rām as a Buddhist bodhisattva dictates a strict adherence to non-violence in the Khmer narrative:

- **Rām stands above conflict:** Rām, as the embodiment of the ideal Buddhist bodhisattva-king, **must stand above physical struggle** and is always reluctant to take violent actions.
- **Spiritual Power over Force:** When faced with an enemy, Rām manages to channel his fiery energy (*tejaf*) in **nonviolent directions** by performing miracles and using skillful moral arguments and persuasion.
- **Delegated Combat:** If physical fighting is necessary, it is his brother **Laks and the monkey allies who fight in his stead**.
- **Demons as *Māras***: The enemies in the *Reamker* narrative, such as Ràb (Ràva¢a), are frequently referred to as *māras*, the traditional enemies of Buddhism.

2. The *Vālmīki Rāmāyaṇā*'s Narrative/Way of Portrayal

The *Vālmīki Rāmāyaṇā* (VR) portrays its protagonist, Rāma, primarily within the context of **Hindu heroism, royal duty, and righteous warfare**.

Narrative Aspect	Vālmīki Rāmāyaṇā Portrayal
Rāma's Role	Rāma is the **valiant warrior** and mighty-armed king, focused on confronting evil through overwhelming, direct force. He is tasked with maintaining universal order as an **Apollonian deity** (Viṣṇu).
Action and Violence	The narrative details Rāma's **personal involvement in fierce combat**. He is described as being "very angry" and stretching his bow to return a blow to Ravana. He aims arrows at Ravana's flag post and engages in exchanges of arrow flows.
The Climax	The final confrontation is highly kinetic and destructive. Rāma, described as "mighty" and "strong", fits his excellent arrow to the bow, terrifying all beings and causing the earth to shake. He stretches his bow to full length in **furious preparation** and releases the arrow on Ravana, which is "capable of tearing into the vital parts". This arrow pierces and **splits Ravana's heart** and ends his life.
Moral Justification	The narrative justifies the war by painting Rāvaṇa as a "shameless" one who has transgressed morality (*bhinnamaryàda*) and traditional practice (*càritra*).

3. The *Reamker*'s Narrative/Way of Portrayal

The *Reamker* (Rk. I) minimizes Rāma's martial heroism and maximizes his **spiritual and moral supremacy**, reflecting the dominant Buddhist culture of its time.

Narrative Aspect	Reamker Portrayal
Rām's Agency/Power	Rām is elevated as a **divine person** (*Nàràỳ(n)*) with "abundant merit and virtue," standing above ordinary beings. He is served by outstanding military chiefs who fight on his behalf.
Depiction of Conflict	Rām avoids physical combat. His conflicts are resolved through displays of supernatural, non-destructive power (*tejaf*). For example, when Ràm needs to cross the sea to Lanka, he **shoots an arrow that causes the sea to dry up**, demonstrating his essential power (*own power should be manifested*).
Character Traits	Rām is a human prince belonging to Khmer society and is **not a replication of an Indian *kṣatriya***. He retains many virtues found in Vālmīki, such as uprightness, generosity, and self-control, but is specifically imbued with **supreme Buddhist virtues**.
Thematic Focus	The narrative strongly emphasizes the importance of *dharma* over *kāma* (desire or pleasure), reflecting the Theravāda influence which has "wiped out of the Khmer mind the concept of *kāma* with all its implications". The authors incorporate themes of **individual responsibility through *karma***.
Literary Form	The Rk. is a **highly compressed version** of the story compared to Vālmīki's narrative, lacking the luxuriance of the Indian epic. It was originally conceived as the libretto for a masked dance drama (*lkhon khol*).

Synthesis: The Role of Transformation

The ideological differences stem from the fact that the VR portrays an **Avatar of Viṣṇu** carrying out a divine mission through heroic action, whereas the *Reamker* portrays a **Bodhisattva-King** embodying moral perfection and using spiritual *tejaf* (power) to bring about righteous governance (*dhammaràja*) in a Buddhist context.

If the *Vālmīki Rāmāyaṇā* is a narrative engine running on the fuel of glorious, righteous war to restore cosmic order, the *Rāmakerṭi* is that same vehicle retrofitted with a *dharma*-powered engine, where the appearance of violent conflict is largely relegated to secondary characters, ensuring the hero himself remains spiritually untarnished, like a mirror reflecting only moral perfection.

Comparative Analysis

The **Vālmīki Rāmāyaṇā (VR)** and the **Cambodian Rāmakerṭi (Rk./Reamker)** may share a common narrative spine, but the worlds that produced them shaped the story in profoundly different ways. One stands firmly in the Brahmanical-Hindu imagination, seeing Rāma as a divine warrior who restores order through righteous violence. The other is deeply rooted in Cambodia's Theravāda Buddhist tradition, where Rām becomes a moral exemplar, a bodhisattva-king whose strength lies not in striking down enemies but in his spiritual authority, restraint, and compassion. These differences ripple through every part of the story: how characters behave, how conflicts are justified, how battles unfold, and even how the epic ultimately ends.

1. Narrative Portrayal: How the Same Story Becomes Two Stories

The VR presents conflict with physical intensity. Rāma fights directly, reacts emotionally, and takes on Rāvaṇa in a fierce duel. His anger is openly acknowledged, and his weapons—especially the Brahmāstra—are described in deadly detail. The Cambodian Rāmakerṭi, however, reframes the entire mood. A bodhisattva-king cannot act out of fury or desire. Rām avoids violence and prefers persuasion, miracle-working, and spiritual radiance. When combat becomes unavoidable, Laks and the monkey allies take over. Even the way Setā/Setà enters the story is reimagined to suit Khmer symbolism.

Aspect	Vālmīki Rāmāyaṇā	Rāmakerṭi
Protagonist's Role	Divine warrior, personally fights.	Bodhisattva-king, avoids combat.
Tone of Conflict	Fierce, emotional, physical.	Restrained, spiritual, symbolic.
Narrative Style	Expansive, ornate, genealogical.	Condensed, performance-based.
Origin of Sītā/Setà	Born from earth.	Drifts on the Yamuna, symbol of purity.

2. Ethical Foundations: Dharma vs. Dhamma

Once we look at the deeper "thought-world" of each epic, the differences become even clearer. The VR operates within Hindu political and moral philosophy. Rāma must punish transgression, uphold dharma, and restore order. Anger fits into this framework as righteous indignation.

The Cambodian Rāmakerṭi rewrites the entire ethical foundation. Rām is built on the four Buddhist sublime virtues:

mettā (loving-kindness)
karuṇā (compassion)
muditā (joy)
upekkhā (equanimity)

His actions cannot come from passion, so **kāma** disappears from his character. Violence becomes a last resort, and even then it is handled carefully: the text often explains negative events through **karma**, not through the hero's choices. That is why Bāli's death is assigned to his past misdeeds, not to Rām's arrow.

Ethical Theme	VR Interpretation	Rk. Interpretation
Moral Justification	Upholding dharma through force.	Upholding dhamma through compassion.
Emotion	Rāma shows anger.	Rām remains calm; passion removed.
Cause of Conflict	Divine duty and justice.	Karma and moral consequences.
Rām's Status	Viṣṇu's incarnation.	Human prince embodying Buddhist virtues.

3. Different Visions of How the Story Should End

The ending of each epic reveals what each culture valued most. The VR finishes with Rāvaṇa's death, followed by grief, reflection, and political consolidation. Its focus is justice, royal duty, and cosmic order.

The Rāmakerṭi moves in a different direction. It ends with Rām and Setà reunited in peace, and the entire narrative becomes a metaphor for spiritual progress. Rām's promise to lead Setà to "supreme nirvāṇa" lifts the story out of historical time and places it firmly in the Buddhist path of liberation.

Aspect	VR	Rāmakerṭi
Tone of Ending	Serious, heavy, political.	Joyful, resolved, spiritual.
Purpose	Restore order and punish evil.	Guide beings toward nirvāṇa.
Interpretation	Heroic myth.	Buddhist allegory.

4. How Theravāda Buddhism Redefined Rām

Theravāda Buddhism reshaped Khmer culture beginning in the 13th century, and the Rāmakerṭi is a clear product of that shift. Rām becomes a human ideal rather than a divine incarnation. He reflects characteristics admired in Khmer society: uprightness, loyalty, self-control, and generosity. Although he is sometimes called buddhaṅkūr, the term is metaphorical, meant to show his closeness to Buddhist virtues rather than any prophetic destiny.

This transformation also introduced a more austere mood into the narrative. Rām's authority becomes moral rather than celestial. He guides his subjects, including monkeys, through ethical teaching rather than divine command. His purity and restraint anchor the entire epic.

5. Dharma, Ethics, and Responsibility in the Khmer Imagination

The Cambodian version reconfigures dharma into **dhaṁ**, a more explicitly moral and psychological concept. It emphasizes truthfulness, obedience, goodness, and the avoidance of **verā**, the harmful impulse of revenge or hatred. Karma is not just a law—it becomes the engine behind every major plot turn. A character's downfall is a natural result of their own choices, making the story feel less like a divine drama and more like a moral landscape where beings reap what they sow.

This shift makes the epic feel deeply introspective. Instead of focusing on divine victories, the Rāmakerṭi highlights self-control, personal responsibility, and the long-term consequences of one's intentions.

6. The Battlefield as a Stage for Two Philosophies

The battle between Rām and Ràb is where the contrast between the epics is most visible. In the VR, the fight is direct and violent: Rāma wounds Rāvaṇa repeatedly, cuts off his many heads, and finally fires the Brahmāstra into his chest. Descriptions of arrows tearing into vital parts create a sense of raw force.

The Rāmakerṭi transforms this completely. A bodhisattva must not be soaked in blood. Rām avoids physical fighting from start to finish. He can dry up the sea with one arrow—not as an act of destruction, but as a display of spiritual merit. Laks and the monkey troops take the battlefield role. Some Khmer versions even warn Rām not to fight Ràb directly because it would tarnish his dignity. The final victory often takes on a symbolic or meditative meaning rather than a physical one.

Battle Aspect	VR	Rāmakerṭi
Rāma's Role	Fights directly, kills Rāvaṇa.	Avoids battle; others fight for him.
Weapons	Arrows, Brahmāstra, violent force.	Miracles, spiritual power (tejaḥ).
Crossing the Sea	Begs Sea God.	Dries the sea with merit-charged arrow.
Tone of Final Fight	Brutal, graphic, physical.	Softened, symbolic, non-violent emphasis.
Enemies	Rākṣasas (demons).	Māras (Buddhist forces of delusion).

7. Supporting Characters Take on New Lives

Laks becomes far more central in the Cambodian tradition. He takes on most of the physical fighting and is praised for virtue and courage. His temperament contrasts with Rām's calmness, making him the ideal stand-in during moments where violence is unavoidable.

Kumbhakàr's story also undergoes a major shift. In the VR, he dies in battle, slain by Rāma. Cambodian versions add new layers: he fights Indrajit first, and finally dies in meditation, an image that fits seamlessly into Buddhist monastic ideals. This alone shows how deeply Buddhist thought penetrated the Khmer retelling.

3. Conclusion

In the Cambodian Reamker, the epic clash between Rāma and Rāvaṇa is transformed by Theravāda Buddhist ideals into something far more introspective than a mere swordfight. Rāma (Preah Ream) is no longer celebrated merely as a divine warrior avatar; he is portrayed more like a bodhisattva-king embodying wisdom and compassion. He is explicitly described with Buddhist epithets – "bodhisattva," "omniscient," the "bud of a Buddha" – and drawn as a lofty, dispassionate prince gentle even to enemies. In fact, although he is understood to be an incarnation of Vishnu, Khmer storytellers emphasize his human side: his strengths and weaknesses are treated as those of any mortal king. This recasting casts Rāma's power in moral terms; his true authority comes from **karuṇā** (compassion), **mettā** (lovingkindness) and the other *brahmavihāra* virtues, rather than from the might of his bow.

The nature of the battle itself is reimagined through this Buddhist lens. Rāma's first response to conflict is counsel, not bloodshed: he offers "tactful arguments, even moral counsels" to dissuade Ravana's pride. Only when the demon king will not relent does Rāma reluctantly engage, and even then it is in a "kind of non-violent way." His own spiritual **tejah** (inner "fiery power" of merit) neutralizes Ravana's weapons as if through miracle. In one telling, Rāma himself remains almost above the fray – it is the devoted Lakṣmaṇa (Preah Leak) and Rāma's monkey allies who "volunteered to take on the demons and fight in his place," since they regard Rāma as a Buddha-king "above battles and struggles". Lakṣmaṇa's unwavering loyalty and self-sacrifice underscore this theme: a true war hero in the Reamker is one who fights for Rāma's ideals rather than for personal glory.

This shift from heroic valor to spiritual leadership recasts the entire conflict as an allegory of inner ethics and karma. Ravana (Krong Reap) becomes less a boisterous tyrant and more a symbol of pride, greed, and other moral failings. Rāma's victory is thus framed as the triumph of dharma (duty and righteousness) over desire. As Saveros Pou observes, Rāma's character is imbued with the four sublime virtues (**mettā**, **karuṇā**, **muditā**, **upekkhā**) – the *brahmavihāra* – and Theravāda influence "took care of the epic characters… and rid them of those passionate, disorderly…violent features" typical of ordinary humans. In practical terms, the battle scenes in the Reamker become tests of resolve and virtue rather than carnage: obstacles are overcome "in a smooth and skillful way"and the demons' fate is sealed by their own unwholesome actions as much as by Rāma's sword. The outcome feels as much like the natural unfolding of karma as the climax of a war.

Ultimately, these narrative changes reflect core Khmer values and Buddhist cosmology. The Reamker reinforces loyalty, compassion, and ethical responsibility — ideals deeply woven into Cambodian culture. Rāma's non-aggressive stance and moral authority mirror the notion of a *dhammarāja* or cakravartin — a righteous "wheel-turning" king who governs by virtue. Lakṣmaṇa and Hanuman exemplify the faithful disciple who serves such a king, while even Rāvaṇa's defeat carries a tinge of melancholy rather than triumphalism. In tying the threads together, the conclusion of the Reamker (like its enactment in dance and temple art) leaves the audience with a reflective harmony rather than the clangor of victory. The war has ended not merely with the downfall of a foe, but with the affirmation of cosmic justice and inner peace: a reminder that in the Cambodian Ramayana, true victory belongs to those who conquer the self, guided by compassion and the inexorable law of karma.

4. References

Book

1. Chakravarti, A. (1982). *Royal succession in ancient Cambodia* (Monograph Series Vol. 26). The Asiatic Society.
2. Harris, I. (2005). *Cambodian Buddhism: History and practice*. University of Hawai'i Press.
3. Jacob, J. M. (Trans.). (1986). *Reamker (Rāmākerti): The Cambodian version of the Rāmāyaṇa*. The Royal Asiatic Society. (Oriental Translation Fund, New Series, Vol. 45).
4. Valmiki. (1932). *The Rāmāyaṇa of Vālmīki* (H. P. Shastri, Trans.; Vol. 3). Shanti Sadan.

Journal Article

5. Briggs, L. P. (1947). A sketch of Cambodian History. *The Far Eastern Quarterly*, *6*(4), 345–363. http://www.jstor.org/stable/2049431

Academic Module/Paper

6. Pou, S. (n.d.). From Vālmīki to Theravāda Buddhism: The example of the Khmer classical Rāmākeriti. [Article, pp. 268–275].
7. Silodi, M. P. (n.d.). *Concept of Nirvaana in Buddhism* (Paper 11, Module 25). [Source context unavailable beyond module details].

Vision, Mission, and Values in the Ramayana: A Blueprint for Modern Management

Gauri Kulkarni
SRM Institute of Science and Technology
(gaurikulkarni.email@gmail.com)

The Ramayana presents a lucid vision, a clearly defined mission, and enduring values that serve as a timeless framework for contemporary management. This paper explores how Lord Rama's commitment to Dharma influenced his vision and mission, and how these ethical foundations inspired collective action and value-based governance. The epic demonstrates how Ayodhya's administration and the Lanka expedition were aligned through shared purpose, strategic planning, and moral leadership. By connecting these insights with modern management frameworks such as vision–mission statements, value-driven leadership, and stakeholder alignment the study illustrates how clarity of purpose, commitment to ethical goals, and consistent adherence to values create sustainable success. The Ramayana thus emerges as a living guide for purposeful, ethical, and human-centered management.

Keywords: Ramayana, Vision, Mission, Values, Leadership, Dharma, Ethical Management, Strategic Alignment

1. Introduction

In a rapidly transforming corporate landscape marked by technological disruption and ethical uncertainty, organizations are re-examining their foundations of purpose, mission, and values. Contemporary management theory emphasizes the importance of a shared vision and mission to guide strategy and culture. Yet, these principles are not new they are deeply embedded in India's civilizational ethos and classical literature.

Among these ancient texts, *Valmiki's Ramayana* stands out not merely as a spiritual epic but as a timeless treatise on management and governance. Lord Rama's life embodies the highest ideals of leadership, decision-making, and moral responsibility. His *vision* was rooted in *Dharma* (righteousness), his *mission* was to uphold justice and harmony, and his *values* guided every action and decision. This triad provides a profound model for organizational leadership in the 21st century.

2. The Ramayana as a Management Framework

The *Ramayana* outlines a complete model of value-based administration and leadership. Its lessons transcend myth and can be read as strategic frameworks for managing organizations and nations. From succession planning in Ayodhya to the coalition-building for the Lanka war, each event in the *Ramayana* reflects a rational, ethical, and goal-oriented system.

- **Vision:** Establishing *Ram Rajya*, a state of justice, prosperity, and harmony.
- **Mission:** Upholding *Dharma* through rightful action and service.
- **Values**: Truth, compassion, loyalty, discipline, humility, and fairness.

This triad mirrors the modern management process where Vision defines the "future state," Mission expresses the "purpose," and Values represent the "belief system" that guides behavior.

3. Vision: A Future Guided by Dharma

Vision is the mental blueprint of the desired future. In management, it represents an aspirational statement that defines the long-term direction of the organization. Lord Rama's vision, rooted in *Dharma*, transcended personal goals and symbolized collective welfare. His leadership envisioned a world where justice, compassion, and order prevailed.

3.1 Clarity of Vision

When exiled, Rama's acceptance of his fate demonstrated the clarity and steadiness of his vision, service to truth and righteousness, regardless of circumstances. This resilience reflects modern leaders' need for strategic focus under uncertainty. *"Na ca asya mahatiim laksmiim raajya naasho apakarsati"* — which means the loss of the kingdom could not diminish Rama's radiance or virtue. *(Ayodhya Kanda, 19:32)*

His long-term vision was *Ram Rajya* a sustainable model of good governance emphasizing equity, ecological harmony, and ethical conduct. Modern management parallels this in the concept of Corporate Vision Statements, such as Tata Group's aim "to improve the quality of life of the communities we serve."

4. Mission: Duty-Oriented Action and Strategic Leadership

A mission defines the organization's purpose and operational path to realize its vision. Rama's mission was not conquest but restoration of *Dharma*, achieving justice through rightful means. His leadership during the Lanka expedition exemplifies mission-driven strategy.

4.1 Strategic Planning and Collaboration

Rama's alliance with Sugriva and Hanuman was a classic example of stakeholder collaboration and shared purpose. He empowered his team, respected their counsel, and delegated effectively, hallmarks of participative leadership.

"Mantro vijaya moolam hi raajnaam bhavati raaghava" — (Sound counsel is the root of a king's victory.) *(Ayodhya Kanda, 100:16)*

This participative approach resembles today's **Strategic Leadership Models**, emphasizing teamwork, communication, and consultation. Rama's mission-driven actions illustrate how ethical purpose fuels organizational alignment and motivation.

5. Values: The Ethical Foundation of Management

Values are the non-negotiable moral principles guiding behavior and decision-making. For Rama, *Satya* (truth), *Seva* (service), and *Samatva* (equanimity) were intrinsic values.

5.1 Ethical Leadership

Rama upheld integrity even under adversity. When offered shortcuts or unethical choices, he refused them. His ethical stance during the exile and the war against Ravana demonstrated value-based governance, comparable to modern **Corporate Governance Ethics**.

"Dharma eva hato hanti, dharmo rakṣati rakṣitaḥ" — (When Dharma is destroyed, it destroys; when protected, it protects.)

Modern management frameworks such as **Servant Leadership** and **Transformational Leadership** draw parallels with Rama's selfless service and ethical influence.

5.2 Values in Action

- **Transparency:** Rama's open dialogue with his citizens before exile mirrors participative communication.
- **Accountability:** Accepting responsibility for collective welfare.
- **Empathy:** Deep respect for all beings, including adversaries.
- **Fairness:** Treating allies and enemies alike within the bounds of justice.

Organizations that integrate such value systems like Infosys and Tata demonstrate long-term sustainability and trust, embodying what *Ramayana* calls *Lokasangraha* ensuring welfare of all.

6. Integrating Ramayana Principles with Modern Management

Ramayana Principle	Modern Equivalent	Application Example
Dharma (Righteousness)	Corporate Governance	Ethics committees, CSR
Seva (Service)	Servant Leadership	Employee empowerment
Samatva (Balance)	Emotional Intelligence	Conflict resolution
Vision of Ram Rajya	Strategic Vision	Nation-building, SDGs
Team Collaboration	Participative Management	Agile leadership teams

Rama's leadership reflects the **Balanced Scorecard** concept aligning purpose (vision), strategy (mission), and performance (values-driven actions). The Lanka campaign represents a project management model combining delegation, communication, and motivation under ethical constraints.

7. Discussion: The Contemporary Relevance of Ramayana Management

In a global environment often driven by profit-maximization and short-term gains, the *Ramayana* reintroduces the idea of Purposeful Capitalism profit integrated with ethics and social welfare. Rama's governance underscores that sustainability lies in *values-based decision-making.*

Leadership scholars such as Balakrishnan Muniapan (2010) argue that Indian epics like *Ramayana* are early texts of organizational behavior, offering enduring lessons on motivation, teamwork, and moral authority. Rama's inclusive approach mirrors the Theory Z model (Ouchi, 1981), which emphasizes trust, loyalty, and collective responsibility.

8. Conclusion

The *Ramayana* serves as a living document of strategic management and leadership excellence. Lord Rama's clarity of vision,

steadfast mission, and enduring values provide a framework that resonates with modern management's focus on ethics, sustainability, and human development. His governance transformed Ayodhya into a model of prosperity and peace, an archetype of a value-driven organization.

In the modern context, organizations that emulate this triad Vision for long-term purpose, Mission for actionable goals, and Values for ethical alignment create lasting impact beyond profitability. The *Ramayana* thus remains not merely a religious text but a timeless managerial manual for cultivating responsible, resilient, and visionary leaders.

9. References

1. Muniapan, B. (2010). *Ancient Indian Wisdom for Managers: The Relevance of Valmiki Ramayana in Developing Managerial Effectiveness*. International Journal of Indian Culture and Business Management, 3(6).
2. Chauhan, M. (2018). *Leaders in Competitive Business Environment: Lessons from Ancient Text Ramayana*. Proceedings of the Eighth International Ramayana Conference.
3. Robbins, S. P., & Judge, T. A. (2009). *Organizational Behavior*. Pearson Prentice Hall.
4. Sharma, S. (2003). *Towards Corporate Veda: Indian Ethos and Corporate Development*. Journal of Human Values.
5. Pandey, S. K., & Warner, O. (2010). *Management Lessons from Indian Epics in Context to Theory Z*. Journal of Human Values.
6. Goel, A., & Singh, S. S. (2014). *Recruiting Professionals with the Mindset of Hanuman*. Journal of Economics, Business and Management, 2(3).
7. Rosen, J. S. (2002). *The Hidden Glory of India*. Bhaktivedanta Book Trust.

A Comparative Analysis of the 17 UN Sustainable Development Goals and the Ideal of Ram Rajya in Shri Ramcharitmanas by Goswami Tulasidas

Ashutosh Mishra
Akshay Dvivedi
Pradeep Kumar
Indian Institute of Technology Roorkee
(ashutosh_m@me.iitr.ac.in)

This study systematically maps the 17 UN Sustainable Development Goals (SDGs) against the socio-governance model of Ram Rajya, as detailed in Goswami Tulsidas's Ramcharitmanas. Findings reveal a profound alignment across the five pillars (People, Planet, Prosperity, Peace, Partnership). Ram Rajya's principles—including the eradication of poverty, hunger, disease, and the ensuring of ecological harmony where even predators coexist peacefully—demonstrate a holistic ideal achieved through righteous conduct (Dharma) and ethical leadership. The study concludes that this ancient blueprint offers a timeless moral framework for integrated sustainable development and resilient governance, highly relevant to achieving the 2030 Agenda.

1. Introduction

The global community's commitment to the 17 Sustainable Development Goals (SDGs), articulated in the 2030 Agenda, represents humanity's most comprehensive effort to harmonize social equity, economic prosperity, and planetary health. These goals, often categorized under the five P's: People, Planet, Prosperity, Peace, and Partnership, require not only technological innovation but, crucially, a radical shift toward ethical governance and collective responsibility. (The Sustainable Development Goals - United Nations Sustainable Development)

In the pursuit of these modern imperatives, ancient wisdom traditions, particularly the Indic frameworks of statecraft, provide profoundly relevant resources.(Deepak et al., 2025) The concept of Ram Rajya, the idealized rule of Lord Rama, formalized by Tulsidas in his medieval epic, the Ramcharitmanas (especially the Uttara Kand), is universally regarded as the "gold-standard" of good governance. This vision, popularized in modern times by Mahatma Gandhi as the ideal of true democracy centered on righteousness and swift justice for the marginalized, functions as a systemic blueprint for ideal societal operation" (Vijayasimha, 2025).

1.1. The Global Sustainability Imperative and the 2030 Agenda

Modern implementation of the SDGs faces structural challenges, primarily the tendency to compartmentalize sustainability as a secondary corrective policy applied to inherently extractive economic systems.(Deepak et al., 2025; The Sustainable Development Goals - United Nations Sustainable Development). The necessity of exploring non-Western, holistic models that integrate ethical mandates directly into the operational structure of a society becomes paramount. (Kumar Rawat & Vashishtha, 2019)

1.2. Defining the Ideal of Ram Rajya in Tulsidas's Ramcharitmanas

Ram Rajya is not merely a political regime but a comprehensive vision of moral sovereignty centered on the unwavering adherence to Dharma (righteousness).(Kumar, 2024) Tulsidas dedicates the Uttara Kand to elaborating this utopian state, defining it fundamentally as a state that eliminates all forms of physical, spiritual, and bodily suffering (Tapa).(Kumar Rawat & Vashishtha, 2019) The essence of this ideal is famously summarized by the absence of fear, sorrow, and disease (Bhay, Sok, Rog). Lord Rama, as the ideal ruler, governs with fairness, embodying ethical leadership and consistently prioritizing the collective welfare of his people (Praja) above personal gain.8 This establishes Dharma as the functional framework guaranteeing holistic sustainability.

1.3. Methodology: Comparative Textual Analysis of Dharma and Global Goals

This study employs a comparative textual analysis methodology, examining the descriptive verses (dohas and chaupais) of Ram Rajya in the Uttara Kand of the Ramcharitmanas and systematically mapping their implicit and explicit outcomes against the 17 SDGs (*Environmental Ethics in Ancient Indian Texts - Curriculture*, n.d.)

The central hypothesis guiding this analysis is that the pervasive ethical foundation of Ram Rajya inherently and explicitly fulfills all 17 SDGs through its integrated, moral governance structure. The investigation demonstrates how the societal commitment to Dharma—righteousness, purity, compassion, and charity (Sharma & Saxena, 2024) operates as the fundamental mechanism for achieving socio-economic equity, ecological balance, and enduring peace—the core goals articulated by the modern sustainability agenda. (View of Ram Rajya: A Vision of Ideal Governance and Social Harmony, n.d.) The Foundational Pillar: Peace, Justice, and Strong Institutions (SDG 16)

The entire edifice of Ram Rajya, ensuring the success of all other SDGs, rests on the moral authority and integrity of its governing institutions, directly corresponding to SDG 16 (Peace, Justice, and Strong Institutions).

1.4. Governance by Moral Sovereignty: The Rule of Dharma

Ram Rajya provides a blueprint for a state where institutional strength is directly proportional to the moral integrity of its leadership and citizenry (Gupta, 2025). Lord Rama exemplifies ethical leadership, characterized by compassion, transparency, and accountability, aligning strongly with the demand for effective and accountable institutions (SDG 16). The commitment to the rule of law is defined by unwavering adherence to Dharma.(Kumar, 2024)

Tulsidas summarizes the functional prerequisite for Ram Rajya in a pivotal Doha (Uttarkand Doha 20(*Ramcharitmanas*, n.d.)):

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग ।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहि भय सोक न रोग ॥

This verse translates to: "When everyone lives according to the Dharma of their Varan and Ashram... When there is no fear, no sorrows, and no diseases—it is the essence of Ram Rajya." The text confirms that universal happiness (Sukha) is the direct, systemic product of a society where the citizens are virtuous and constantly engaged in righteous conduct.(Kumar, 2024)

1.5. Accountability and the Absence of Coercion: The Symbol of the Dand

The strength of Ram Rajya's institutions is reflected in the near-total self-discipline of the populace.(Kumar, 2024; *Ramcharitmanas*, n.d.) Tulsidas notes a powerful symbol of the state's ethical restraint: the Dand (staff of punishment), symbolizing the state's enforcing authority, is seen only in the hands of Yogis, where it serves as a resting aid during meditation. This signifies a pervasive societal self-discipline and a near-zero crime rate, eliminating the need for top-down enforcement against violence (SDG 16.1) and corruption (SDG 16.5).(*Ramcharitmanas*, n.d.) Furthermore, justice is described as swift and fair, available instantly to the rich and the poor alike.(Sharma & Saxena, 2024) This commitment to fairness and accessibility fulfills the critical mandate of promoting the rule of law and ensuring equal access to justice (SDG 16.3) .

2. Aligning Social Equity Goals (SDGs 1, 2, 3, 4, 5, 10)

The People pillar of the SDGs aims to resolve fundamental human challenges by ensuring health, education, and equality for all. Ram Rajya is characterized by the complete elimination of deprivation, suffering, and discrimination.(*UN-SDGs*, n.d.)

2.1. Eliminating Poverty, Hunger, and Suffering: Textual Guarantees (SDGs 1, 2, 3)

The textual evidence confirms universal economic security and sufficiency, directly addressing SDG 1 (No Poverty) and SDG 2 (Zero Hunger). The declaration of universal well-being is encapsulated in the verse: (Uttarkand Doha 20-21) (Ramcharitmanas, n.d.)

नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना ।
नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना ॥

This Chaupai ensures that "No one is poor, sad or pitiable". The eradication of destitution is achieved through ethical stewardship where the king looks after his subjects instead of accumulating personal wealth.(*Ramcharitmanas*, n.d.) This governance model guarantees resource abundance, with plentiful crops and clean water, channeled equitably to the populace.(Gupta, 2025) This material sufficiency extends naturally to public health, fulfilling SDG 3 (Good Health and Well-being). The repeated textual emphasis on the elimination of disease (Rog) and sorrow (Sok) suggests a holistic approach. (*Ramcharitmanas*, n.d.) Tulsidas describes a state where the people are free of sickness, possessing a "lovely, disease-free physique," and "No one dies young". By addressing the political and emotional determinants of health—such as stress, insecurity, and instability, Ram Rajya establishes the foundation for complete physical and mental well-being.(Kumar, 2024)

2.2. Universal Knowledge and Social Equity (SDGs 4, 5, 10)

The ideal society of Ram Rajya is marked by pervasive knowledge and fairness. The continuation of the verse cited above "nor is anyone ignorant (Abudh)" (View of Ram Rajya, n.d.)—reinforces SDG 4 (Quality Education) by mandating universal intellectual development and a societal respect for knowledge. In relation to SDG 10 (Reduced Inequalities), Ram Rajya guarantees the absence of discrimination among people.8 The text describes a society where justice is available to everyone, regardless of socio-economic status.(View of Ram Rajya, n.d.) Furthermore, Tulsidas notes that all citizens "followed their prescribed work and duties, content with their task and free of avarice".(Kumar, 2024) This universal contentment and focus on duty rather than greed mitigate the social stratification and exploitation that fuel modern inequality. Regarding SDG 5 (Gender Equality), the text states there was "gender balance across the board" and that all men and women were "smart and

talented". While operating within a traditional social framework, the crucial principle is the institutional guarantee of respect, dignity, and protection for all, mitigating the worst effects of gender-based discrimination and violence (Kumar, 2024).

3. The Planet Pillar: Ecological Integration and Stewardship (SDGs 6, 13, 14, 15)

The Planet pillar addresses the conservation of natural resources and climate action. Ram Rajya describes an ecological consciousness where the environment is not merely a resource but an integral, sentient part of moral order.

3.1. Biodiversity and Perfect Ecological Harmony (SDG 15)

The state of Ram Rajya is characterized by an astonishing degree of ecological harmony, directly achieving SDG 15 (Life on Land). Tulsidas details a world where the flora and fauna flourish, with forests perpetually blossoming and bearing fruit. The most profound textual evidence for this ecological stability is the description of animals coexisting without animosity, demonstrating a profound spiritual non-violence (Ahimsa) that extends to the natural world. This is captured in the verse (Ayodhyakand Doha 137.) (*Ramcharitmanas*, n.d.):

करि के हर कप कोल कंगा।
बगतबैर बचरह सब संगा

This Chaupai describes the harmonious forest where "Elephants, lions, monkeys, boars and deer, all sported together, free from animosity".6 This resolution of the predator-prey relationship signifies that human virtue creates a benign, harmonized natural order, achieving the highest possible target of ecological restoration.(Kumar Rawat & Vashishtha, 2019)

3.2. Purity of Elements and Climate Stability (SDGs 6, 13, 14)

The Ram Rajya guarantees the availability and sustainable management of water (SDG 6). The descriptions confirm that rivers are full of cool, clean, and delightful water.(*Environmental Ethics in Ancient Indian Texts - Curriculture*, n.d.) Beyond functionality, reverence for the Pancha Bhutas (earth, water, air, fire, ether) establishes a cultural conservation strategy that naturally prevents pollution and over-exploitation, directly supporting the health of aquatic ecosystems (SDG 14, Life Below Water). The atmosphere is described as filled with a "mild, pleasant, and aromatic wind", serving as a clear indicator of clean air and climate stability. Since human activity in Ram Rajya is strictly regulated by Dharma, the "ruthless exploitation of natural resources by man," which causes environmental degradation, is precluded.(Kumar Rawat & Vashishtha, 2019) Consequently, Ram Rajya achieves climate resilience (SDG 13, Climate Action) through inherent structural prevention, where ecological balance is the default state of a morally governed land.(*View of Ramrajya*, n.d.)".

4. The Prosperity Pillar: Ethical Economics and Sustainable Growth (SDGs 7, 8, 9, 11, 12)

The Prosperity pillar demands inclusive economic growth, resilient infrastructure, and responsible resource use. Ram Rajya addresses this through an ethical economy founded on restraint, contentment, and duty.

4.1. Contentment (Santosha) and Responsible Consumption (SDGs 8, 12)

The Ram Rajya model replaces relentless material accumulation with Contentment (Santosha) as the ultimate sustainable economic indicator.(*View of Ramrajya*, n.d.) This ethical restraint is key to achieving SDG 8 (Decent Work and Economic Growth), ensuring that work is dignified and economic activity is purposeful.(Gupta, 2025) The economy operates by rejecting the five key social transgressions, including "wealth without work" and "pleasure without conscience".(Sharma & Saxena, 2024) This principle governs consumption, naturally fulfilling SDG 12 (Responsible Consumption and Production).23 The emphasis on duty and non-greed removes the pressure for exponential, resource-intensive growth, thereby promoting sustainable production practices.(Deepak et al., 2025) Furthermore, historical and philosophical analyses suggest lifestyles conducive to SDG 12, including minimalist living, the use of locally sourced goods, and effective systems of recycling and composting.(*View of Ramrajya*, n.d.)

4.2. Resilient Infrastructure and Sustainable Settlements (SDGs 7, 9, 11)

The descriptions of Ayodhya as having "beautiful gates, streets, crossroads, and markets" imply a high degree of organizational efficiency and resilience, aligning with SDG 9 (Industry, Innovation, and Infrastructure). This infrastructure supports a functioning, sustainable community, fulfilling SDG 11 (Sustainable Cities and Communities). (Ramcharitmanas, n.d.) The urban environment is integrated with nature, such as gardens full of perpetually blossoming flora, demonstrating a planning paradigm that prioritizes environmental coexistence. The holistic sustainability of Ram Rajya, defined by clean air and water, necessarily implies that the energy consumption and infrastructure framework must be clean and localized, supporting the spirit of SDG 7 (Affordable and Clean Energy).(Sharma & Saxena, 2024) The moral integrity of governance (SDG 16) ensures that infrastructure development is long-term, resilient, and free from the corruption that often compromises quality in modern settings.(Kumar, 2024).

5. The Partnership Pillar: Global Cooperation and Ethical Framework (SDG 17)

SDG 17 emphasizes revitalizing global partnerships for sustainable development based on trust and shared ethical goals. Ram Rajya provides the ideal internal and external model for this partnership. Tulsidas highlights profound societal cohesion: "All citizens loved each other and everyone lives in harmony with affection towards each other". This universal affection and adherence to prescribed duties create an internally self-regulating system, fulfilling the spirit of partnership by ensuring decentralized responsibility and a unified commitment to the common good.(Kumar, 2024) Externally, the concept of Ram Rajya, with its focus on transparency, compassion, and accountability, offers an exportable blueprint for governance.(Kumar, 2024) Mahatma Gandhi's adaptation of the vision into the philosophy of non-violent resistance (Satyagraha) has successfully influenced global movements, demonstrating the model's potential for ethical international relations and partnerships. By institutionalizing moral conviction and *Lokasangraha* (welfare for all), Ram Rajya offers a sustainable foundation for effective global cooperation (SDG 17 targets).(Vijayasimha, 2025).

6. Comprehensive SDG Alignment Matrix: Textual and Conceptual Links

This matrix systematically aligns all 17 goals with the specific textual and conceptual evidence found in Tulsidas's Ramcharitmanas.

SDG Goal	Ram Rajya Principle (Derived from Ramcharitmanas)	Key Concept/Chaupai Reference (Uttara Kand)
SDG 1 & 2 (Poverty & Hunger)	Universal economic sufficiency; eradication of deprivation and hunger.	Absence of poverty and grief: *"नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना..."* (No one is poor, sad or pitiable) (*Ramcharitmanas*, n.d.)
SDG 3 (Good Health & Well-being)	Elimination of physical disease (*Rog*), sorrow (*Sok*), and early death; universal longevity.	Absence of disease and early death: "Everyone has a beautiful body free of diseases. No one dies young"
SDG 4 (Quality Education)	Universal knowledge, talent, and respect for learned persons; absence of ignorance (*Abudh*).	Absence of ignorance: *"नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना ॥"* (Nor is anyone ignorant)(*Ramcharitmanas*, n.d.)
SDG 5 (Gender Equality)	Mutual respect, dignity, and talent utilization for all men and women.	"All men and women are smart and talented"; gender balance across the board
SDG 6 (Clean Water)	Sanctity and preservation of water resources (*Pancha Bhuta*); rivers full of clean water.	Rivers full of cool, clean water; ethical mandate: "do not harm the water and the flora" (*Ramcharitmanas*, n.d.)
SDG 7 (Clean Energy)	Sustainable settlements require non-polluting and integrated infrastructure.	Implied by pure environment and city planning that is clean and functional (*Environmental Ethics in Ancient Indian Texts - Curriculture*, n.d.)
SDG 8 (Decent Work/Growth)	Contentment (*Santosha*) defining productivity; ethical duty replacing greed.	All citizens "content with their task and free of avarice"; wealth for collective good (*Ramcharitmanas*, n.d.)
SDG 9 (Industry/Infrastructure)	Resilient, functional, and well-planned infrastructure integrated with nature.	Ayodhya with "beautiful gates, streets, markets" (signifying advanced, stable systems)
SDG 10 (Reduced Inequalities)	Absence of discrimination; equal rights and accessible justice for all citizens.	Justice is "swift and available to everyone, rich or poor" (Kumar Rawat & Vashishtha, 2019)
SDG 11 (Sustainable Cities)	Harmony between urban life and surrounding nature; resilient, well-planned settlements.	City integrated with gardens and perpetual flora; cleanliness and order
SDG 12 (Responsible Consumption)	Non-exploitative economy guided by ethical restraint and contentment.	Rejection of "wealth without work" and "pleasure without conscience" (*Ramcharitmanas*, n.d.)
SDG 13 (Climate Action)	Cosmic harmony reflects moral order; absence of environmental degradation.	Mild, pleasant, aromatic wind (clean air); climate stability as default
SDG 14 (Life Below Water)	Preservation of all aquatic ecosystems; reverence for water bodies.	Rivers as sacred energy; tranquility be to the waters
SDG 15 (Life on Land)	Perfect ecological *Ahimsa*; coexistence of all species; fertile earth.	*"बगतबैर बचरह सब संगा"* (Animals free from animosity); forests perpetually blossoming (*Ramcharitmanas*, n.d.)
SDG 16 (Peace/Justice/Institutions)	Rule of *Dharma*; moral authority replacing coercive power; accountability.	*Dand* (staff) only in hands of Yogis; justice is swift; rule of law based on *Dharma* 1
SDG 17 (Partnerships)	Exportable ethical governance model; pervasive internal social cohesion and affection.	"All citizens loved each other"; model inspiring global ethical movements (*Satyagraha Foundation » Blog Archive » Ahimsa: The Way of Nonviolence*, n.d.)

7. Discussion, Conclusion, and Policy Relevance

The comparative analysis of the 17 Sustainable Development Goals with the principles of Ram Rajya, as articulated in Tulsidas's Ramcharitmanas, confirms a profound and systemic convergence. Ram Rajya stands as a civilizational deep resource for contemporary sustainability debates, demonstrating that the comprehensive pursuit of welfare, justice, and ecological balance is a value embedded in humanity's oldest ethical texts.(*Environmental Ethics in Ancient Indian Texts - Curriculture*, n.d.; Kumar Rawat & Vashishtha, 2019; Kumar, 2024)

7.1. Synthesis of Holistic Sustainability: Ram Rajya as an Integrated Moral Framework

The core conceptual strength of Ram Rajya lies in its insistence on integrated sustainability.(Gupta, 2025) The analysis establishes a clear causal hierarchy: The adherence to Dharma leads directly to the formation of Peace, Justice, and Strong Institutions (SDG 16). It is these ethical institutions that, by prohibiting greed, ensuring equity, and guaranteeing dignity, serve as the functional mechanism for the Holistic Fulfillment of all other SDGs, manifesting in the eradication of poverty, disease, and the achievement of ecological harmony. Ram Rajya offers a model where sustainability is the intrinsic outcome of moral conduct and just governance, rather than a fragmented, corrective external policy. (View of Ramrajya, n.d.)

7.2. Policy Implications and Future Research Directions

The enduring relevance of Ram Rajya offers significant, actionable policy implications, particularly in areas where modern policy struggles to enforce environmental and social standards against powerful economic interests.

1. **Prioritizing Ethical Infrastructure (SDG 16):** Governance must integrate the ethical principles of Ram Rajya, particularly accountability, compassion, and non-avarice—into public policy.2 This means treating transparency and accountability not merely as legal requirements, but as moral imperatives, ensuring institutions are effective because they are rooted in Satya and Shaucha (Truth and Purity).
2. **Cultivating Contentment and Restraint (SDGs 8, 12):** Economic policy should actively promote sufficiency (Santosha) and discourage unsustainable consumption patterns.23 This involves framing economic success not as boundless material growth, but as the stable, ethical meeting of genuine needs.
3. **Institutionalizing Ecological Duty (SDGs 13, 15):** Environmental policy should move beyond cost-benefit analyses to embrace an ecological ethic of reverence for the Pancha Bhutas and the principle of Ahimsa. The description of peaceful coexistence among species suggests that a fundamental shift in human ethical behavior is the ultimate path to achieving ecological balance.

By drawing upon the timeless wisdom of Tulsidas's Ramcharitmanas, modern policy frameworks can foster governance models that balance moral integrity with practical needs, inspiring leaders to build truly equitable, just, and sustainable societies in the 21st century.

8. References

1. Deepak, Anoop, & Jayesh. (2025). The Principles of Dharma and Sustainable Development: Lessons from the Srimad Bhagavad Gita. 7(2). www.ijfmr.com
2. Environmental Ethics in Ancient Indian Texts - Curriculture. (n.d.). Retrieved November 15, 2025, from https://curriculture.in/blogs-environmental-ethics-in-ancient-indian-texts/
3. Gupta, K. (2025). The vision of Ramrajya and its reflection in Modern Indian Constitutional Governance. Electronic Journal of Social and Strategic Studies. https://doi.org/10.47362/EJSSS.2025.6605
4. Kumar Rawat, S., & Vashishtha, A. (2019). Philosophy of some hymns of vedas and purans in relation to environmental status. ~ 222 ~ International Journal of Advanced Academic Studies, 1(1). https://doi.org/10.33545/27068919.2019.v1.i1a.648
5. Kumar, V. (2024). THE CONCEPT OF RAM-RAJYA IN RAMAYANA: AN ANALYSIS.
6. Satyagraha Foundation » Blog Archive » Ahimsa: The Way of Nonviolence. (n.d.). Retrieved November 15, 2025, from https://www.satyagrahafoundation.org/ahimsa-the-way-of-nonviolence/
7. Sharma, R., & Saxena, A. (2024). Sustainable Economy and Business: A Retro Analysis from the Lens of Shri Ramcharitmanas. Journal of Business Thought, 111–120. https://doi.org/10.18311/JBT/2024/46262
8. UN-SDGs. (n.d.). Retrieved November 15, 2025, from https://www.un.org/sustainabledevelopment/development-goals/
9. View of Ramrajya. (n.d.). Retrieved November 15, 2025, from https://nepjol.info/index.php/jrbc/article/view/78060/59806
10. Vijayasimha, N. (2025). International Journal of Research Publication and Reviews Vedic Bhūmi Sūkta and International Norms: A Comparative Framework. *International Journal of Research Publication and Reviews*, *6*, 3768–3782. https://doi.org/10.55248/gengpi.6.0825.3081
11. *Ramcharitmanas*. (n.d.). Retrieved November 16, 2025, from https://archive.org/details/ramcharitmanas_202204

From Sevaka to Sadguru: The Unfolding of Guru-Tattva through Lakshmana in Valmiki Ramayana

Dhananjay Vashistha
(Affiliated to Mumbai University), Mumbai
(connect@dhananjayvashistha.com)

This paper explores Lakshmana's role in Valmiki's Ramayana as the embodiment of Guru-Tattva, the principle of the spiritual preceptor. While Lakshmana is traditionally revered as the ideal servant and brother of Lord Rama, this study highlights his deeper theological identity as an expansion of Balarama and a representative of the Guru Parampara. Through selected episodes from Kishkindha Kanda, the paper analyzes moments when Lakshmana assumes the role of mentor and guide, offering counsel that revitalizes Rama's purpose, thereby exemplifying the transformative power of divine guidance.

Scriptural Basis for Guru-Tattva

The concept of *Guru-Tattva* is central to Vedic and Vaishnava theology, where the guru is the conduit for transcendental knowledge.

evaṁ paramparā-prāptam
imaṁ rājarṣayo viduḥ
sa kāleneha mahatā
yogo naṣṭaḥ paran-tapa

This supreme science was thus received through the chain of disciplic succession, and the saintly kings understood it in that way. But in course of time the succession was broken, and therefore the science as it is appears to be lost.

The above Bhagavad Gita verse (4.2) states the *guru-parampara* as the authorized medium for preserving and transmitting wisdom.

ācāryaṁ māṁ vijānīyān
navamanyeta karhicit
na martya-buddhyāsūyeta
sarva-deva-mayo guruḥ

One should know the ācārya as Myself and never disrespect him in any way. One should not envy him, thinking him an ordinary man, for he is the representative of all the demigods.

Similarly, the above verse from Srimad Bhagavatam (11.17.27) establish *Guru-Tattva* as non-different from the Divine, functioning through humility and service.

Lakshmana as the Incarnation of Balarama

Lakshmana is identified as an incarnation (*avatāra*) of Balarama, Krishna's elder brother and the source of spiritual potency. The Padma Purana, Adhyatma Ramayana and Chaitanya Charitamrita state that Balarama incarnated as Lakshmana to serve Rama.

Balarama is revered as the *ādi-guru*, the original spiritual master. In the Gaudiya Vaishnava tradition, he is the fountainhead of the *guru-parampara*, empowering devotees with knowledge and strength. As Balarama's expansion, Lakshmana inherits this role, manifesting *Guru-Tattva* through fraternal service rather than overt instruction.

Lakshmana as Representative of Guru Parampara

Symbolically, Lakshmana walks behind Rama, embodying humility and service (*sevā*), yet his words guide the path forward. This duality reflects *Guru-Tattva*: the preceptor appears subordinate but wields authoritative wisdom. As Balarama's expansion, Lakshmana inherits this role, manifesting Guru-Tattva through fraternal service rather than overt instruction.

Lakshmana's Mentorship in Valmiki Ramayana

saṃstambha rāma bhadraṃ tē
mā śucaḥ puruṣōttama ।
nēdṛśānāṃ matirmandā
bhavatyakaluṣātmanām ॥

O Rāma! O foremost of spirited beings! May all bode well for you! Steady yourself, you must not grieve! Wisdom shall not betray the likes of you, whose hearts are serene!-VR 4.1.115

So here, the word mateir Manda is very important so Lakshman Ji is taking a role of spiritual master or a mentor in this shloka, although he is a small younger brother, but now he is taking the spiritual master's role and spiritual master's main duty is not to hesitate while correcting the disciple. Although the younger brother, he is directly pointing out to Lord Ram, he's using the word matathianda manda means slowed slowing down or less decreased reduced and mir means intellect so he's directly pointing out to his elder brother, lord Ram that lord Ram right now you are because of your sorrow, because of your suffering , because of your distress, your intellect has reduced your intellect has slowed down although he respects slow Ram like anything, but now here, he's taking a role of mentor and clearly he's pointing out the flaw in Lord Ram's behaviour, which he's seeing here, which he's showing here in this first chapter of Kishkindaand where, after seeing the beauty of the nature, Lord Ram is missing Sita and he has become distressed and he's crying, weeping and missing Sita and at this time Lakshman takes the role off guru and he's clearly pointing out the flaw in his elder brother itself.

tyajya kāma vṛttatvam
śokam sam nyasya pṛṣṭataḥ |
mahātmānam kṛtātmānam
ātmānam na avabudhyase || 4-1-123

Passion for love should be set aside. Grief should be left behind. You do not realize that you are a Mahātma, with complete control of yourself.

Lakshman is right in front of Lord Ram and he is going straight to the point with Lord Ram.

He is stating it clearly without being hesitant.

Because he is a younger brother, there is a great significance to the use of the term K Vritatum in this isloka, and therefore Lakshan Ji is telling Lord Ram Oh Lord Ram stop acting like someone who has an excessive amount of lust, stop acting like someone who is completely insane from the overwhelming feeling of calm or the intense desire for your loved one, and do not act in that way.

Let go of that calmness let go of that intense desire, and act as a Mahhatma so and he says you are a Mahhatma.

Although he is a Sevak, he behaves like a Sak (servant).

He is a servant, however in this specific episode Lakshman is playing the role of Saduru and he is directly helping, directly pointing out the flaws or directly pointing out the problems in Lord Rams behavior, and without hesitation, he is helping Lord Ram.

evam saṃbodhitaḥ tena
śokopahata cetanaḥ |
tyjya śokam ca moham ca
rāmo dhairyam upāgamat || 4-1-124

Thus addressed by Lakshmana, then Rama whose conscience is marred by emotions, got rid of pity and fondness, and acquired courage, to perform the deed demanded of his incarnation. [4-1-124]

Now that he has heard the direct words of Laxmanji, it is very clear now to Lord Ram about what he has to do; He can now be sure and he can now see the way and now his heart has changed with the new words of Laxmanji and in this sloka there are two very important words Tja Shokam Chamuhamcha Tjokam which means now Lord Ram will leave aside the Shoka, the anxiety the distress and he will leave aside the Moha or the distraction and now Lord Ram will go ahead and get the Theare or the patients, and it was those words directly from Lakshman, Lord Ram's younger brother at this time acting as a sad guru that changed Lord Ram's heart, and now he is ready and prepared for the next big adventure of looking for Sita. Now that we have heard the direct words of Laxmanji, it is very clear now to Lord Ram about what he has to do; He can now be sure and he can now see the way and now his heart has changed with the new words of Laxmanji and in this sloka there are two very important words Tja Shokam Chamuhamcha Tjokam which means now Lord Ram will leave aside the Shoka, the anxiety the distress and he will leave aside the Moha or the distraction and now Lord Ram will go ahead and get the Theare or the patients, and it was those words directly from Lakshman, Lord Ram's younger brother at this time acting as a sad guru that changed Lord Ram's heart, and now he is ready and prepared for the next big adventure of looking for Sita.

References

Valmiki Ramayan by Gita Press Gorakhpur
Srimad Bhagavatam by The Bhaktivedanta Book Trust
Bhagavad Gita

The Dynamics of Counsel: Upadeśa in the Rāmāyaṇa

Gouri Desai
K. J. Somaiya Institute of Dharma Studies, Mumbai
(gouri.desai@somaiya.edu)

Through the Ramayana, managerial thought is provided with long-term solutions. the Upadesa, the training of conduct and thought. The epic presents various types of counsel, which as Mammata would describe include kanta-sammita, prabhu-sammita and suhrd-sammita through which people behave and make moral decisions. It puts emphasis on the strength of communal discussion, the sight of justifiable authority and the profound compassion of friendship. These Upadesas are not merely prescriptive; they are aesthetic exemplifications of dharma and moral meditation, demonstrating the way wisdom, sympathy and restraint can collaborate in ruling oneself and the society.

1. Introduction

Few works in world literature weave together aesthetic refinement and ethical inquiry as seamlessly as the Rāmāyaṇa. Though celebrated as an epic of devotion, heroism, and divine incarnation, Valmīki's text is equally a sophisticated treatise on upadeśa, on how humans speak, advise, negotiate, and fail each other in moments where dharma is at stake. In the Rāmāyaṇa, no conversation is accidental: every exchange becomes a moral experiment in relational communication.

Classical Sanskrit poetics, particularly Mammaṭa's Kāvyaprakāśa, offers a subtle lens through which this dynamic can be understood. Mammaṭa identifies three modes of counsel,prabhu-sammita (authoritative), suhṛd-sammita (well-wishing), and kānta-sammita (affectionate). These are not merely categories of speech; they are emotional postures, ethical frameworks, and relational strategies. Each mode frames the nature of truth spoken, the manner of persuasion employed, and the possibility of that truth being received.

When these modes are applied to the Rāmāyaṇa, a striking pattern emerges: Valmīki differentiates counsel not merely to move the plot, but to reveal how dharma becomes visible only in relationship. Rāma's injunction to Bharata (prabhu-sammita) succeeds because obedience aligns with righteousness; Tārā's intimate persuasion of Vāli (kānta-sammita) fails because ego interrupts affection; Marīca and Vibhīṣaṇa's truthful warnings (suhṛd-sammita) are rejected because desire overwhelms wisdom. The style of counsel becomes predictive of moral outcome.

This paper therefore reads the Rāmāyaṇa not only as an ethical narrative but as a poetics of communication, a text in which speech acts are aesthetic, emotional, and profoundly consequential. By situating six major episodes of counsel within Mammaṭa's tripartite framework, the study aims to show that upadeśa in the Rāmāyaṇa is not didactic moralizing, but a dialogic process where dharma is tested, negotiated, affirmed, or tragically ignored.

In short, this paper proposes that the Rāmāyaṇa is a study in how people listen, or fail to.

And in that failure, the epic reveals the ethical architecture of human relationships.

2. Theoretical Framework: Mammaṭa's Concept of Upadeśa

Mammaṭa's *Kāvyaprakāśa* is often read as a technical manual of poetics, but its real sophistication lies in how it links aesthetics to psychology. His classification of *upadeśa* is not merely about "giving advice"; it is a taxonomy of relational speech,of how truth travels between people. In the *Rāmāyaṇa*, where every ethical crisis begins in dialogue, this framework becomes particularly illuminating.

Mammaṭa identifies **three modes of counsel**, each marked by a distinct emotional texture and communicative posture:

2.1 Prabhu-sammita Upadeśa (Authoritative Counsel)

This mode arises from hierarchy,speech issued from the one who possesses **adhikāra**, received by the one bound to obey. Its tone is directive, its authority explicit. Mammaṭa states: "Counsel arising from authority is called *prabhu-sammita*."

In this form, the counsellor does not persuade; they **instruct**. Yet, in Sanskrit ethics, authority is never mere domination. Even imperative speech is framed as protective duty (*rakṣaṇa-dharma*).

In the *Rāmāyaṇa*, Rāma's injunction to Bharata during the Chitrakūṭa meeting exemplifies this mode: obedience to the father's word becomes non-negotiable, and truth is spoken **as law rather than opinion**.

2.3 Suhṛd-sammita Upadeśa (Counsel of a Well-Wisher)

This form emerges among equals,friends, brothers, and companions,where hierarchy dissolves and sincerity replaces command. The defining features are goodwill (*hita*), empathy, and truth that may be "unpleasant but beneficial" (*apriyasya pathyasya*).

It is the mode of dialogue that **tries to save someone from themselves**.
This is why Marīca's warnings, Vibhīṣaṇa's persistent appeals, and Jāmbavān's gentle encouragement fall into this category. These counsellors do not hold authority; they hold affection and clarity.
Their speech is persuasive not by force, but because it emerges from *anurāga*,a genuine concern for the other's welfare.

2.2 Kānta-sammita Upadeśa (Affectionate Counsel)

The most emotionally charged category, *kānta-sammita* arises in contexts of intimacy,between spouses or beloved companions,where persuasion is achieved through tenderness, emotional resonance, and gentle coaxing.
Truth is softened, not diluted; advice is offered not from power or logic, but from love.
This form is aesthetically rich and ethically fragile: affection can guide, but it can also blind.
Tārā's plea to Vāli to step back from Sugrīva's challenge is the classical example. So is the distorted version found in Mantharā's manipulation of Kaikeyī,where affectionate tone is weaponised for destructive ends.
In both cases, *kānta-sammita* reveals its double edge: intimacy can enlighten, but it can also mislead.

2.4 Why This Framework Matters for Reading the Rāmāyaṇa

Mammaṭa's categories are not abstract poetic devices; they explain why certain advice succeeds and other advice catastrophically fails. The *Rāmāyaṇa* uses these modes to dramatize how dharma becomes accessible,
not through rules, but through relationships.

- *Prabhu-sammita* reveals dharma as an obligation.
- *Suhṛd-sammita* reveals dharma as concern.
- *Kānta-sammita* reveals dharma as intimacy.
- Together, they form a relational map of speech that structures the entire epic.

3. Classification of Upadeśa in the Rāmāyaṇa

The present study employs a qualitative hermeneutic method grounded in Sanskrit poetic theory, using Mammaṭa's tripartite classification of *upadeśa* as an analytical lens for interpreting key episodes of counsel in the *Rāmāyaṇa*. Rather than examining the epic through a purely moralistic or historicist approach, this methodology foregrounds *speech itself*,its relational texture, emotional tonality, and rhetorical stance,as the primary site where dharma becomes intelligible.

3.1 Textual Corpus and Selection of Episodes

The analysis focuses on six representative episodes drawn from the *Ayodhyā-*, *Araṇya-*, *Kiṣkindhā-*, and *Yuddha-kāṇḍas*. These episodes were selected because each contains an explicit moment where a character offers counsel,accepted, rejected, or distorted,and where the mode of counsel shapes the narrative outcome. The chosen incidences correspond structurally to Mammaṭa's three categories:

- **Prabhu-sammita:** Rāma's authoritative injunction to Bharata.
- **Suhṛd-sammita:** The welfare-driven counsel of Marīca, Vibhīṣaṇa, and Jāmbavān.
- **Kānta-sammita:** The affection-based persuasion of Tārā, as well as the distorted form represented by Mantharā.

3.2 Analytical Procedure

Each episode is interpreted in a three-step process:

- **Contextualization:** Establishing the narrative moment, emotional setting, and relational dynamics between speaker and listener.
- **Discourse Analysis:** Examining key Sanskrit phrases, metaphors, character gestures, and emotional cues that mark the mode of counsel.
- **Classification and Interpretation:** Identifying the specific upadeśa-category (prabhu, suhṛd, kānta) and analyzing how that communicative mode influences the reception, success, or failure of the counsel.

This method avoids moral reductionism by attending to *how* characters speak,not merely *what* they say. It assumes that meaning emerges not only from content but from relational configuration and aesthetic texture.

3.3 Interpretive Assumptions

The methodology rests on three working assumptions:
Dharma is relational: Ethical clarity arises through dialogue; characters understand duty in conversation, not isolation.

Counsel is Performative: The mode of speaking, authoritative, friendly, or affectionate, produces different ethical effects within the narrative.

Failure of counsel is narratively meaningful: Rejected advice is not a plot device but a poetic mechanism illustrating how ego, fear, or emotional distortion obstructs dharma.

3.4 Purpose of This Approach

By applying Mammaṭa's categories to narrative analysis, the study aims to: reveal the *Rāmāyaṇa* as a text structured by differentiated voices, demonstrate how relational communication shapes moral destiny, reinterpret key conflicts (Rāvaṇa's downfall, Vāli's death, Kaikeyī's error, Bharata's anguish) through the lens of their failed or successful counsel.
In this way, the methodology bridges śāstric theory and epic narrative, showing that Valmīki's poetics of dialogue is inseparable from the epic's moral architecture.

4.

4.1 Tārā's Counsel to Vāli as Kānta-sammita Upadeśa

(Kiṣkindhākāṇḍa, Sarga 15)
Tārā's counsel to Vāli during Sugrīva's renewed challenge stands as one of the most refined illustrations of kānta-sammita upadeśa in the *Rāmāyaṇa*. In Mammaṭa's framework, kānta-sammita refers to a mode of advice marked by emotional intimacy, affectionate persuasion, and relational tenderness,counsel that arises not from authority (prabhu-sammita) nor from the stern benevolence of a well-wisher (suhṛd-sammita), but from the persuasive sweetness (*mādhurya*) characteristic of a beloved partner.

This atmosphere is established from the outset. Vāli, inflamed by Sugrīva's thunderous roar (निनादं सर्वभूतप्रकम्पनम्), is consumed by fury: his golden radiance dims (कनकप्रभः… निष्प्रभतां गतः), his eyes blaze like fire (दीप्ताग्निसन्निभः), and he rushes out "as though tearing the earth" (दारयन्निव मेदिनीम्). At this decisive moment, Tārā intervenes not as a strategist but as a devoted wife,*trastasaṃbhrāntā*, fearful yet affectionate. She embraces him (स्नेहात्), gazes at him with tenderness (दर्शितसौहृदा), and initiates a register of speech grounded in emotional restraint.

Her first strategy is gentle dissuasion. She compares his anger to a dangerous flood (नदीवेग इव) and urges him to cast it aside "like a discarded garland" (भुक्तामिव स्रजम्). Asking him to postpone the duel until morning (काल्यम्), she reassures him that delay will not diminish his heroism (फल्गुता न विद्यते). Her remark,"सहसा निष्क्रामो मम न रोचते" ("Your sudden rushing forth does not please me"),captures the essence of kānta-sammita: counsel softened by affection rather than confrontation.

Tārā proceeds with gentle reasoning, offering emotional insight instead of rebuke. She notes that Sugrīva,previously defeated and humiliated,would not return without external support; his renewed determination (व्यवसायः), arrogance (दर्पः), and fierce roar (निनादः) signal the presence of a powerful ally. "असहायम् अहं न मन्ये सुग्रीवम्",she asserts, not to challenge Vāli's pride but to protect him from rashness.

Her counsel then turns to the real danger: Rāma. Drawing on intelligence from Aṅgada, Tārā describes Rāma and Lakṣmaṇa as Ikṣvāku princes of invincible prowess (समरदुर्जयौ), destroyers of formidable foes like Khara, protectors of the virtuous (साधूनां निवासवृक्षः), and refuge of the distressed (आर्तानां संश्रयः). Her warning,"अप्रमेयः स रामो न क्षमं तेन विरोधः",is spoken with care, not severity. It carries the anxious tone of a beloved fearful for her husband's life.

Finally, Tārā offers constructive counsel rooted in reconciliation. She urges him to abandon hostility (वैरम् उत्सृज्य), make friendship with Rāma (तेन रामेण सौहृदम्), and restore harmony with Sugrīva (सुग्रीवेण सम्प्रीतिं कुरु). She recommends appointing Sugrīva as Yuvarāja (यौवराज्येन सुग्रीवम् अभिषेचय), emphasizing that he is the younger brother (यवीयान् भ्राता), deserving of protection (लालनीयः), and unmatched as a relative (न हि तेन समं बन्धुं). Her closing plea,"Hear me, for I speak what is beneficial",blends tenderness with urgency, perfectly encapsulating kānta-sammita upadeśa.

Yet despite the affection and clarity in her speech, Vāli rejects the counsel. The text states that he was kālābhipannaḥ,seized by the force of Time,highlighting a recurring pattern in kānta-sammita episodes: the beloved's gentle truth is tragically powerless against destiny.

4.2 Mantharā's Manipulative Counsel to Kaikeyī as a Distorted Kānta-sammita Upadeśa

Mantharā's persuasion of Kaikeyī in the *Ayodhyākāṇḍa* (Sargas 7–9) illustrates a profoundly distorted form of kānta-sammita upadeśa, wherein emotional intimacy and coaxing,traits typical of the beloved's counsel,are weaponized for manipulation rather than welfare. Seeing Ayodhyā celebrate Rāma's impending coronation, Mantharā approaches Kaikeyī with calculated emotional incitement: calling her "mūḍhe," warning that she is "floating in a sea of perils," and predicting "unending ruin" (त्वद्विनाशनम्) should Rāma be crowned.

When Kaikeyī responds with joy and even gifts Mantharā an ornament, Mantharā escalates her tactics,dramatically discarding the ornament and implanting fear and jealousy. She likens Kausalyā's prosperity to death (मृत्योरिव), predicts Kaikeyī's servitude (दासीवत्), Bharata's subordination (प्रेष्यभावम्), or even exile or death (देशान्तरं वा… लोकान्तरम् वा). She flatters Kaikeyī with "kalyāṇi," masking manipulation as affection.

When Kaikeyī becomes inflamed (क्रोधेन ज्वलिताननā), Mantharā recalls her heroic past in the Deva–Asura war (शस्त्रैः शकलीकृतः) and the unclaimed boons (द्वौ वरौ), reinforcing entitlement. She choreographs Kaikeyī's emotional performance in the krodhāgāra,soiled garments (मलिनवासिनी), lying on the ground (भूमौ),to evoke Daśaratha's guilt. Finally, she articulates the demands: Bharata's coronation and Rāma's exile (वनम् प्रव्राजनम् चतुर्दश वर्षाणि), framing them as necessary for Bharata's stability (कृतमूलः, रूढः).

The text labels her counsel as अनर्थमर्थरूपेण,evil posed as good, capturing its corrupted nature. Though devoid of authority (prabhu) or sincerity (suhṛd), Mantharā employs the structural sweetness and psychological intimacy typical of kānta-sammita, making this one of the epic's most striking inversions of affectionate counsel.

4.3 Marīca's Counsel to Rāvaṇa as a Foundational Example of Suhṛd-sammita Upadeśa

(Aranyakāṇḍa, Sargas 35–41)

Marīca's extended advice to Rāvaṇa stands as one of the most exemplary manifestations of suhṛd-sammita upadeśa in the *Rāmāyaṇa*, for it embodies exactly what Mammaṭa describes: the well-wisher's willingness to speak unpleasant but beneficial truth (अप्रियस्य पथ्यस्य) solely for the other's welfare. Upon hearing Rāma's name, Marīca is overwhelmed by terror and immediately offers what he calls "हितं तत्त्वं वाक्यम्," prefacing his counsel with the assertion that while flatterers are plentiful,"प्रियवादिनः सर्वत्र भवन्ति",those who speak and those who accept wholesome truth are "rare indeed" (वक्ता श्रोता च दुर्लभौ). He warns that a king driven by passion (कामवृत्तः), poor judgment (दुश्शीलः), or wicked counsel (पापमन्त्रितः) inevitably destroys himself and his kingdom, urging Rāvaṇa to listen instead to ministers grounded in dharma, such as Vibhīṣaṇa.

Marīca then turns to Rāma, correcting the king's misconceptions with affectionate frankness. Rāma, he insists, is "विग्रहवान् धर्मः",the very embodiment of Dharma,not harsh (कर्कशः न), not ignorant (अविद्वान् न), nor susceptible to impulse. Sītā, he explains, is protected by her own brilliance (स्वेन तेजसा रक्षिता); abducting her would be as impossible as "separating the radiance from the sun" (कः प्रभाम् विवस्वतः पृथक् करोति?). She is like the flame of blazing fire (दीप्तस्य हुताशस्य शिखा इव): touch her, and destruction follows.

Marīca therefore advises peace: "मा कृथा रामविप्रियम्",do not provoke Rāma,and instead enjoy your own wives (स्वदारनिरतः भव) and preserve the lineage (स्वकुलं रक्ष). But Rāvaṇa rejects this as "एष बीजम् ऊषरे उप्तम्",seed sown in barren ground,and threatens Marīca's life. Even then, Marīca continues speaking for Rāvaṇa's welfare, describing his own encounters with Rāma's immeasurable power (अप्रमेयम् तेजः): being hurled a hundred yojanas by a single arrow during Viśvāmitra's yajña, and later being struck by three sharp arrows in Daṇḍaka, leaving him bewildered (समुद्भ्रान्तः) while his companions lay slain.

His recollections transform into prophecy. Marīca now sees Rāma "in every tree" (वृक्षे वृक्षे च पश्यामि), like Yama with noose in hand (पाशहस्तमिव अन्तकम्), and warns that if Rāvaṇa dares violate Sītā (धर्षयिष्यसि), he and his kin will reach Yama's abode (सबान्धवः यमक्षयम्), and Laṅkā will be destroyed for her sake (मैथिलीकृते विनष्टा). The Rākṣasas, he predicts, will perish like "fish in a serpent-filled lake" (मत्स्या नागह्रदे यथा).

Marīca's final words, accepting death at Rāma's hand rather than Rāvaṇa's , capture the tragic integrity of his counsel. Every part of his speech displays the characteristics of suhṛd-sammita: truth without authority, affection without flattery, persistence without fear, and sincere concern uncorrupted by self-interest, ignored only because Rāvaṇa is blinded by ego and fate.

4.4 Vibhīṣaṇa's Counsel to Rāvaṇa as a Supreme Example of Suhṛd-sammita Upadeśa

(Yuddhakāṇḍa, Sargas 9–16)

Vibhīṣaṇa's repeated admonitions to Rāvaṇa, spanning multiple councils and private dialogues, constitute one of the most sustained and ethically luminous examples of suhṛd-sammita upadeśa in the epic. His counsel is grounded entirely in affection (anurāga), truthful warning (satyam), and concern for the welfare of both the king and the Rākṣasa race (hitam). Unlike ministers who flatter out of fear, Vibhīṣaṇa speaks the painful truth with unwavering loyalty.

Identifying the abduction of Sītā as the root of impending ruin, he describes her not as an object of desire but as a source of catastrophe: "सीतामहाहिः","Sītā is a great serpent",whose gentle smile hides sharp fangs (सुस्मिततीक्ष्णदंष्ट्रः) and whose presence contains the poison of anxiety (चिन्ताविषः). He questions Rāvaṇa's hostility,"किं पूर्वं कृतवान् रामः?",and reminds him

that Khara's death occurred because "अतिवृत्तः," not through any injustice. He urges the king: "कोपम् आशु त्यज",abandon anger,and "रतिकीर्तिवर्धनं धर्मं भजस्व",pursue dharma that enhances fame, not destroys it.

In a private morning audience (मन्त्रिसन्निधौ), Vibhīṣaṇa gently interprets the ominous signs plaguing Laṅkā: smoke-tainted sacred fires (धूमलेशावशेषिताः), serpents invading ritual enclosures, dried udders of cows, distressed elephants and horses. These are not accusations but compassionate warnings from nature itself. His conclusion is simple and dharmic: "वैदेही राघवाय प्रदीयताम्",restore Sītā to Rāma.

As war approaches, his counsel becomes more urgent. He warns of the vanara army "mountain-like in size" (पर्वतकूटमात्राः) and of Rāma's arrows,"अमोघान्," "वज्रोसमाः," "वायुसमानवेगाः",which no Rākṣasa, not even Kumbhakarṇa or Indrajit, can withstand ("स्थातुं न शक्ता युधि राघवस्य"). He foresees annihilation: "लङ्कापुरी नश्यति" and "सर्वे च राक्षसाः." His metaphor of Rāvaṇa as a man ensnared by a serpent, whom wise ministers must "उत्क्षिप्य विमोचयन्तु," reveals both compassion and desperation.

Even when accused of treachery and humiliated, Vibhīṣaṇa remains gentle: "प्रसीद",be pacified,"सपुत्रबान्धवाः जीवेम",let us live happily with our families. Finally, he departs with the heartbreaking blessing: "स्वस्ति तेऽस्तु गमिष्यामि, सुखी भव मया विना," lamenting that good counsel cannot reach one "गतायुषः," already seized by Time ("कालस्य वशम्").

Thus, Vibhīṣaṇa's counsel is the purest embodiment of suhṛd-sammita: truthful, compassionate, loyal, unafraid, and entirely oriented toward the other's welfare.

4.5 Jāmbavān's Counsel to Hanumān as a Prototypical Suhṛt-sammita Upadeśa

(Yuddhakāṇḍa, Sarga 74)

Jāmbavān's instruction to Hanumān after Indrajit's Brahmāstra assault is a quintessential example of suhṛt-sammita upadeśa,counsel arising from affection, goodwill, and deep trust. The battlefield lies devastated: Rāma, Lakṣmaṇa, and the Vānara army lie unconscious (सादितयोः मुमोह सैन्यम्), and Jāmbavān, pierced with "hundreds of arrows" (शरशतैश्चितम्), cannot see (न पश्यामि चक्षुषा). Yet his first concern is not his own suffering but Hanumān's life: "हतमप्यहतं बलम्",even if the army is destroyed, it stands unbroken if Hanumān survives.

Upon hearing Hanumān's voice, Jāmbavān clasps his feet in reverent affection and utters the pivotal line, "त्वत्पराक्रमकालोऽयम्","This is the moment for your valour." This is the very texture of suhṛt-sammita: encouragement, not command; trust, not authority. He gently guides Hanumān through the journey to the Himalayas (सागरम् उपर्युपरि परमम् अध्वानम्), describing the Ṛṣabha mountain, the peak of Kailāsa, and between them the radiant herb-mountain (प्रदीप्तम् अतुलप्रभम् ओषधिपर्वतम्).

He names the four life-restoring herbs that illuminate the ten directions (दीपयन्त्यो दिशो दश): Mṛta-sañjīvanī, Viśalyakaraṇī, Suvarṇakaraṇī, and Sandhānī, urging "ताः सर्वा गृह्य",spoken with tender reliance rather than command. He instructs Hanumān to return swiftly (क्षिप्रम् आगन्तुम् अर्हसि) to "प्राणैः योज्य आश्वसय",reunite the army with life and reassurance.

Inspired by this affectionate counsel, Hanumān's strength rises like an ocean filled by wind (बलोद्धर्षैः आपूर्यत), and he departs with tremendous speed (निचण्डवेगः). When the herbs conceal themselves, he uproots the entire peak (शृङ्गम् उन्ममाथ), restores Rāma and Lakṣmaṇa instantly (क्षणेन विशल्याः), and revives the Vānaras (स्वप्नादिवोत्थिताः). Every dimension of the episode exemplifies suhṛt-sammita: no command, only trust; no hierarchy, only affection; no self-interest, only welfare.

4.6 Rāma's Counsel to Bharata as the Definitive Example of Prabhu-sammita Upadeśa

(Ayodhyākāṇḍa, Sargas 104 –107)

Rāma's counsel to Bharata in the forest is the clearest example of prabhu-sammita upadeśa, defined by Mammaṭa as instruction grounded in hierarchy, duty, and legitimate moral authority. Bharata, grief-stricken after Daśaratha's death, arrives wearing matted locks and bark garments, repudiates the throne, and implores Rāma to return and rule. His plea is emotional, dharma-based, and humble, but Rāma's response shifts the exchange entirely into the register of sovereign obligation.

Rāma recounts Daśaratha's vow and the irrevocable division of roles: Bharata received the kingdom, Rāma the forest. To violate this would destroy the cosmic "bridge of truth" (सेतुं सत्यम्) on which moral order rests. He invokes *putra-dharma*, reminding Bharata of the Vedic dictum that a son must "deliver the father from the hell called Put" (पुन्नाम्नो नरकात्), instructing him to "release the king from his debt" (ऋणात् मोचय) by fulfilling his final command.

Rāma's language is unmistakably imperative,bhava, mā bhūt, upabhoktum arhasi,and unlike in suhṛd- or kānta-sammita counsel, he does not persuade, coax, or negotiate. He speaks as the moral heir of Daśaratha's authority, issuing binding instructions grounded in dharma itself. Bharata's emotional appeals collapse before this unyielding prabhu-sammita assertion of duty.

Thus, this episode represents prabhu-sammita in its purest form: authoritative, directive, hierarchical, and ethically non-negotiable.

5. A Concise Original Thesis: The Poetics of Counsel in the Rāmāyaṇa

Towards a Poetics of Upadeśa: An Interpretive Framework

The six incidents examined across the Rāmāyaṇa reveal that upadeśa is not merely a narrative device but a structural principle in Vālmīki's ethical and aesthetic design. The epic differentiates voices,beloved, well-wisher, and authoritative,not for ornamentation but to indicate the moral weight of relationships and the narrative consequences of listening or failing to listen. This section synthesizes these findings into four interpretive observations that constitute the paper's original contribution.

5.1 Relational Voice as an Index of Moral Outcome

In every episode, the *type* of upadeśa predicts the *result*:

Kānta-sammita (Tārā) is emotionally persuasive but tragically ignored.
Distorted kānta-sammita (Mantharā) succeeds precisely because it weaponizes intimacy.
Suhṛt-sammita (Marīca, Vibhīṣaṇa, Jāmbavān) is ethically pure but accepted only when the listener possesses humility.
Prabhu-sammita (Rāma) is irresistible, not because of force but because it aligns with dharma.

Thus, Vālmīki encodes a simple moral law:
the capacity to *receive* counsel reflects the listener's inner dharma.
Those governed by ego (Vāli, Rāvaṇa) reject suhṛt-sammita.
Those governed by righteousness (Hanumān, Bharata) obey immediately.
Upadeśa therefore becomes a diagnostic tool for character.

5.2 Failed Counsel as a Deliberate Poetic Device

The epic repeatedly stages the *failure* of good counsel (Tārā, Marīca, Vibhīṣaṇa) not to depict futility but to underscore tragic inevitability (kāla).
Vālmīki uses rejected upadeśa to heighten rasa:

- Vāli's rejection deepens the pathos of his downfall.
- Rāvaṇa's refusal foregrounds the epic's moral architecture.
- Kaikeyī's susceptibility to Mantharā demonstrates the fragility of human judgment.
- Thus, failed upadeśa is not incidental, it is a structural aesthetic device used to dramatize the collision between free will and fate.

5.3 Upadeśa as the Vehicle of Dharma

Across the epic, upadeśa is the gateway through which dharma is articulated, transferred, and tested.

- Rāma articulates rāja-dharma through prabhu-sammita.
- Jāmbavān transmits yuddha-dharma through suhṛt-sammita.
- Tārā embodies gṛhastha-dharma through kānta-sammita.
- Upadeśa is therefore not a peripheral motif; it is the medium through which Vālmīki expresses the epic's ethical philosophy.

5.4 Emotional Intimacy and Ethical Vulnerability

One striking pattern emerges:
The closer the emotional bond, the greater the vulnerability to influence, positive or negative.

- Tārā's affectionate counsel fails because Vāli's ego overrides intimacy.
- Mantharā's false affection succeeds because Kaikeyī's trust blinds her.
- Jāmbavān's affection empowers Hanumān because virtue aligns with trust.

Thus, Vālmīki portrays emotional intimacy as a double-edged sword:
it can elevate dharma or destroy it, depending on the listener's moral foundation.
This interpretive framework demonstrates that upadeśa in the Rāmāyaṇa is not merely dialogue,it is a narrative engine shaped by relationship, dharma, and destiny. By classifying counsel through Mammaṭa's categories, we gain insight not only into rhetorical modes but into Vālmīki's ethical dramaturgy:
characters rise or fall not by fate alone, but by the voices they choose to heed or silence.

6. Conclusion

This study has shown that the Rāmāyaṇa is not merely an epic of heroic action but a text fundamentally shaped by the

dynamics of counsel. Through Mammaṭa's tripartite framework of *prabhu-sammita*, *suhṛd-sammita*, and *kānta-sammita* upadeśa, the epic reveals a sophisticated ethics of speech, in which relationships, emotions, and moral obligations determine the nature and impact of communication. Each category of upadeśa illuminates how characters negotiate dharma not through abstract doctrine but through lived dialogue: the authority of Rāma, the affectionate persuasion of Tārā, the manipulative intimacy of Mantharā, the honest warnings of Marīca, the fraternal truth-telling of Vibhīṣaṇa, and the supportive encouragement of Jāmbavān. These episodes collectively demonstrate that counsel in the Rāmāyaṇa is never a neutral exchange; it is an ethically charged interaction in which intention, hierarchy, and emotional proximity shape both the form of speech and its consequences.

What emerges from this analysis is that Valmīki presents dharma as something communicated, tested, and embodied through relationships. The acceptance or rejection of counsel becomes a decisive moment for each character, marking the boundaries between wisdom and folly, stability and ruin. By reading these episodes through the lens of Sanskrit poetics, the paper highlights how Valmīki integrates ethical instruction into aesthetic form,where speech becomes the medium through which duty is understood, resisted, or fulfilled. Thus, the Rāmāyaṇa may be read as a sustained meditation on the moral force of language itself: how words guide action, illuminate values, and ultimately shape destiny. In grounding narrative choices within the poetics of upadeśa, the epic affirms that communication is both a literary device and a moral instrument, central to the unfolding of dharma in human life.

7. References

1. Vālmīki. (1960–1975). *The Vālmīki Rāmāyaṇa* (Critical ed., G. H. Bhatt et al., Eds.; 7 vols.). Oriental Institute, Baroda.
2. Vālmīki. (n.d.). *Vālmīki Rāmāyaṇa* (Sanskrit e-text). Indian Institute of Technology Kanpur. https://www.valmiki.iitk.ac.in
3. Mammaṭa. (2007). *Kāvyaprakāśa* (G. Jha, Trans.). Motilal Banarsidass.

भारत और विश्व के लिए रामराज्य की मौलिकता

महर्षि सुभाष
IIT Roorkee, Uttarakhand
(phimachaerospace@gmail.com)

*इस शोध पत्र में **"राम चरित मानस"** और कवि वाल्मीकि जी द्वारा रचित **"रामायण "** काव्य के सन्दर्भ से यह समझने और एक नया दृष्टान्त देने की कोशिश की गयी है। श्रीराम ने उत्तर से दक्षिण तक और पूरब से पश्चिम तक पूरे भारत को एक सूत्र में बाँधने के लिए अपने १४ वर्ष का समय दिया। वे लोकतंत्र के पहले नायक हैं।''राम राज्य'' शासन व्यवस्था के संचालन का ऐसा आदर्श मॉडल है, जो न्याय, नीति, समानता और सेवा पर आधारित है।आज की शासन व्यवस्था के लिए भी यह एक दृष्टान्त हो सकता है। इस शोधपत्र में इसी बात को विभिन्न सांस्कृतिक, दार्शनिक और राजनीतिक सन्दर्भों के साथ प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है। लेखक इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ''राम राज्य'' आज के भारत और विश्व के लिए शासन व्यवस्था का एक मौलिक दृष्टान्त प्रस्तुत करता है। भारत और विश्व को इससे शासन, नैतिकता, और मानवीयता की नई प्रेरणा प्राप्त हो सकती है।*

1. प्रस्तावना

भारत की सभ्यता में शासन को केवल सत्ता या शक्ति का प्रदर्शन नहीं, बल्कि धर्म का पालन माना गया है। भारतीय परंपरा में राजा वह नहीं जो बल से शासन करे, बल्कि वह जो नीति, मर्यादा और न्याय से समाज को दिशा दे। यही कारण है कि भारतीय राज्य-दर्शन का केंद्र सदैव "धर्मराज्य" की अवधारणा रही है। इस परंपरा का सर्वोच्च रूप "रामराज्य" में देखा जाता है — जहाँ शासन, नीति और करुणा एक-दूसरे के पूरक हैं।

वाल्मीकि रामायण और गोस्वामी तुलसीदास की रामचरितमानस दोनों में श्रीराम को **"मर्यादा पुरुषोत्तम"** कहा गया है। यह केवल एक उपाधि नहीं, बल्कि एक दर्शन है — जो बताता है कि शासन मर्यादाओं में रहकर किया जाना चाहिए। श्रीराम का जीवन इस बात का साक्षात उदाहरण है कि एक शासक के लिए व्यक्तिगत इच्छाएँ गौण होती हैं और लोकहित सर्वोपरि। उन्होंने अपने सुख, परिवार, यहाँ तक कि अपने राज्य का भी त्याग कर दिया, ताकि धर्म और न्याय की प्रतिष्ठा बनी रहे। यही त्याग उन्हें **"आदर्श शासक"** का प्रतीक बनाता है।

तुलसीदास जी ने लिखा —

"दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज नहिं काहुहि व्यापा।"

यह पंक्ति केवल काव्यात्मक कल्पना नहीं, बल्कि उस आदर्श शासन व्यवस्था की व्याख्या है जहाँ न कोई दुःख था, न अन्याय, न असमानता। **"दैहिक"** पीड़ा का अर्थ शारीरिक कष्ट से है, **"दैविक"** से तात्पर्य प्राकृतिक विपत्ति से, और **"भौतिक"** का आशय आर्थिक-सामाजिक कठिनाइयों से है। तुलसीदास का कहना है कि रामराज्य में इन तीनों प्रकार की पीड़ाएँ समाप्त थीं — क्योंकि वहाँ शासन धर्म और नीति पर आधारित था, न कि लालच, अहंकार या शक्ति पर।

रामराज्य का आदर्श यह सिखाता है कि शासन का मूल उद्देश्य राज्य चलाना नहीं, बल्कि जनकल्याण करना होना चाहिए। यह ऐसी व्यवस्था थी जिसमें हर व्यक्ति, चाहे वह राजा हो या साधारण नागरिक, अपने कर्तव्य (स्वधर्म) का पालन करता था। शासन में न्याय सर्वोपरि था और नीति करुणा से युक्त थी। किसी वर्ग या समुदाय के साथ भेदभाव नहीं था; सबको समान अवसर और सम्मान प्राप्त था।

श्रीराम का शासन इस बात का साक्षी था कि धर्म का अर्थ केवल पूजा या आस्था नहीं, बल्कि कर्तव्य, सत्य और न्याय का पालन है। वे स्वयं कहते हैं — "राजधर्म सबसे बड़ा धर्म है।" राजधर्म का अर्थ है कि राजा या शासक को अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख से ऊपर उठकर समाज के समग्र कल्याण के लिए निर्णय लेना चाहिए। इसीलिए उन्होंने सीता त्याग जैसा कठिन निर्णय भी लोकमत और राज्य की मर्यादा के अनुरूप लिया।

रामराज्य की यह व्यवस्था धर्म, नीति और करुणा के त्रिसूत्री सिद्धांत पर आधारित थी। वहाँ शासन दंड का नहीं, संवेदना और उत्तरदायित्व का माध्यम था। यह शासन व्यवस्था व्यक्ति को केवल नागरिक नहीं, बल्कि समाज का सहभागी बनाती थी। यही कारण है कि रामराज्य में कोई भी असंतुष्ट या उपेक्षित नहीं था।

अंततः, रामराज्य इस बात का प्रतीक है कि जब शासन धर्म के अधीन होता है, तब समाज में शांति, न्याय और समरसता स्वाभाविक रूप से स्थापित होती है। यह भारतीय शासनदर्शन की आत्मा है, जो आज भी हमें यह सिखाती है कि सच्चे नेतृत्व की पहचान उसकी शक्ति नहीं, बल्कि उसकी मर्यादा और सेवा भावना में निहित होती है।

2. राम राज्य की वैदिक और सांस्कृतिक जड़ें

रामराज्य की अवधारणा वैदिक युग की 'ऋत' परंपरा से उत्पन्न हुई है। 'ऋत' का अर्थ केवल सत्य नहीं, बल्कि वह सार्वभौमिक व्यवस्था है जो सृष्टि के संतुलन और नैतिक नियमों को बनाए रखती है। वैदिक दर्शन में माना गया है कि जब राजा या शासक 'ऋत' — अर्थात् धर्म और सत्य — के मार्ग पर चलता है, तभी समाज में स्थिरता और शांति बनी रहती है। इसीलिए ऋग्वेद में कहा गया है —

"जनस्य रक्षणं धर्मः।"

अर्थात्, राज्य का प्रथम और सर्वोच्च कर्तव्य है प्रजा की रक्षा, सुख और कल्याण सुनिश्चित करना।

श्रीराम इसी 'ऋत' और 'धर्म' के साकार रूप हैं। उन्होंने शासन को सत्ता या बल के प्रदर्शन के रूप में नहीं देखा, बल्कि एक नैतिक दायित्व माना। वाल्मीकि रामायण में कहा गया है —

"रामो विग्रहवान् धर्मः।"

अर्थात्, श्रीराम स्वयं धर्म का मूर्त स्वरूप हैं। उनके निर्णय, उनके व्यवहार, और उनके शासन की नीति — सभी धर्म और न्याय पर आधारित थे। उन्होंने हर परिस्थिति में नीति और धर्म के बीच संतुलन बनाए रखा, चाहे वह व्यक्तिगत जीवन का निर्णय हो या शासन से जुड़ा कोई दायित्व।

रामराज्य इस वैदिक आदर्श का व्यावहारिक स्वरूप है, जिसमें शासन का केंद्र 'धर्म' है, न कि केवल सत्ता या शक्ति। धर्म यहाँ धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि न्याय, मर्यादा और लोककल्याण की वह व्यवस्था है जो समाज को नैतिक रूप से एकजुट रखती है। यही कारण है कि रामराज्य में सत्ता कभी स्वार्थ का साधन नहीं बनी, बल्कि सेवा का माध्यम रही।

सांस्कृतिक दृष्टि से, रामायण ने भारत की विविधताओं को एक सूत्र में बाँधा। उत्तर में अयोध्या, दक्षिण में रामेश्वरम्, पूर्व में मिथिला और पश्चिम में पंचवटी — इन चारों दिशाओं की यात्रा केवल एक ऐतिहासिक कथा नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है। श्रीराम की यह यात्रा बताती है कि भारत भले ही भौगोलिक रूप से विशाल और विविधतापूर्ण हो, लेकिन उसका सांस्कृतिक जीवन एक ही सूत्र में पिरोया गया है — वह सूत्र है धर्म और कर्तव्य की भावना।

इस प्रकार, रामराज्य केवल किसी आदर्श शासन की कल्पना नहीं, बल्कि एक ऐसी शासन व्यवस्था है जो वैदिक **'ऋत'** — सत्य, नियम और धर्म — के सिद्धांतों पर आधारित है। यह हमें सिखाता है कि सच्चा शासन वही है जो शक्ति से नहीं, बल्कि नैतिकता और करुणा से संचालित होता है।

3. शासन दर्शन और मर्यादा पुरुषोत्तम का आदर्श

श्रीराम केवल एक आदर्श पुत्र, भाई या पति नहीं हैं, बल्कि वे एक आदर्श शासक और राजधर्म के मूर्त रूप भी हैं। उनका शासन दर्शन केवल प्रशासनिक या राजनीतिक व्यवस्था नहीं, बल्कि एक नैतिक और दार्शनिक दृष्टिकोण है जो **"मर्यादा"** और **"नीति"** के सिद्धांतों पर आधारित है। "**मर्यादा पुरुषोत्तम"** की उपाधि इस तथ्य को रेखांकित करती है कि श्रीराम ने अपने जीवन के हर निर्णय में कर्तव्य, धर्म और लोककल्याण को व्यक्तिगत भावनाओं और स्वार्थ से ऊपर रखा।

उनकी **"मर्यादा"** का अर्थ सीमितता नहीं, बल्कि आत्म-नियंत्रण और अनुशासन है। श्रीराम के लिए मर्यादा का अर्थ था — अपने कर्तव्य के प्रति पूर्ण समर्पण और समाज के प्रति उत्तरदायित्व। उन्होंने हमेशा यह माना कि शासक का जीवन सार्वजनिक होता है; उसे अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख से ऊपर उठकर जनहित में कार्य करना चाहिए। यही भावना उनके शासन की नींव थी।

वाल्मीकि रामायण में राजा दशरथ अपने पुत्र राम को उपदेश देते हैं —

"राजा प्रजासुखे हेतुः, प्रजाः राजा सुखे रतः।"

अर्थात्, राजा का सुख प्रजा के सुख में निहित है, और प्रजा का सुख राजा के सुख में।

श्रीराम ने इस सिद्धांत को अपने आचरण में पूर्ण रूप से आत्मसात किया। वे स्वयं को राज्य का स्वामी नहीं, बल्कि **"जनसेवक"** मानते थे। उनके शासन में **"सत्ता"** नहीं, बल्कि **"सेवा"** सर्वोच्च थी। यही कारण है कि उनके राज्य में न कोई अन्याय था, न असमानता।

राम का शासन **"लोकशाही"** की भावना का प्रारंभिक और उत्कृष्ट उदाहरण है। उन्होंने प्रजा की आवाज़ को शासन का आधार बनाया। जब भी कोई निर्णय लेना होता, वे लोकमत और धर्म के संतुलन पर विचार करते। यह सिद्धांत आज के लोकतंत्र के "**Public Participation"** और **"Accountability"** के समान है।

सीता की अग्निपरीक्षा और त्याग जैसे प्रसंग, जिन्हें कभी-कभी आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाता है, वस्तुतः राम की राजधर्म निष्ठा का प्रमाण हैं। इन प्रसंगों में वे एक पति के रूप में नहीं, बल्कि एक राजा के रूप में कार्य करते हैं। उन्होंने अपने निजी जीवन को भी समाज की नैतिक व्यवस्था और लोकविश्वास के अधीन रखा। यह दिखाता है कि उनके लिए शासन का अर्थ सत्ता भोग नहीं, बल्कि नैतिक उत्तरदायित्व था।

रामराज्य में नीति और धर्म का अद्भुत संतुलन था। श्रीराम ने यह दिखाया कि राज्य तभी सफल होता है जब उसका आधार न्याय, करुणा और नीति पर हो। वे न केवल न्यायप्रिय थे, बल्कि **"सुनने वाले शासक"** भी थे — वे जनता की पीड़ा को समझते थे और निष्पक्ष निर्णय लेते थे। यही कारण है कि तुलसीदास जी ने रामराज्य की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा —

"दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज नहिं काहुहि व्यापा।"

यह उस सामाजिक संतुलन की अभिव्यक्ति है जिसमें शासक और प्रजा के बीच पूर्ण विश्वास था।

राम का शासन दर्शन आधुनिक प्रशासनिक सिद्धांतों के अनुरूप भी है। आज जिस **"Good Governance"** की चर्चा होती है — जिसमें पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, समानता और जनसहभागिता पर बल दिया जाता है — उसका मूल स्वरूप रामराज्य में ही निहित था। राम का नेतृत्व **"Participatory Leadership"** का प्राचीन उदाहरण है, जहाँ शासक स्वयं को जनता के बराबर मानता है।

राम के शासन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू था — कर्तव्य का आदर्श। उन्होंने यह सिद्ध किया कि सच्चा शासक वही है जो व्यक्तिगत सुख, परिवार या लाभ की चिंता किए बिना अपने राजधर्म का पालन करे। वे स्वयं के लिए नहीं, समाज के लिए जीते थे। यही कारण है कि उनके शासन को युगों से **"आदर्श शासन"** कहा जाता है।

अंततः, श्रीराम का शासन दर्शन एक ऐसी समग्र व्यवस्था है जिसमें धर्म, नीति, न्याय और लोकसेवा एक ही धारा में प्रवाहित होते हैं। रामराज्य का यही आदर्श भारत के शासन-दर्शन का मूल तत्व बन गया। यह आदर्श आज भी हमें यह सिखाता है कि जब शासक मर्यादा, नीति और सेवा भावना को सर्वोपरि रखता है, तभी समाज में सच्चा सुख और स्थिरता स्थापित होती है।

4. भारतीय समाज और राम राज्य की एकता दृष्टि

रामराज्य भारतीय समाज की विविधता में एकता का सर्वोत्तम प्रतीक है। यह केवल शासन की एक व्यवस्था नहीं, बल्कि सांस्कृतिक समरसता और सामाजिक न्याय का जीवंत दर्शन है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में, जहाँ भिन्न जातियाँ, भाषाएँ, परंपराएँ और विश्वास विद्यमान हैं, वहाँ एक ऐसा शासन मॉडल आवश्यक था जो सबको समान सम्मान और अवसर प्रदान करे। श्रीराम ने अपने जीवन और व्यवहार से यह सिद्ध किया कि सच्चा शासन वही है जो समाज के प्रत्येक वर्ग को जोड़ता है, न कि विभाजित करता है।

वनवास के समय श्रीराम का जीवन इसी एकता दृष्टि का प्रतीक है। उन्होंने वनवास के चौदह वर्षों में अनेक समुदायों से संपर्क किया — वनवासी, आदिवासी, निषाद, वानर, भिल, और राक्षस तक। उन्होंने किसी के प्रति भी उच्च-नीच का भाव नहीं रखा। उनके लिए हर व्यक्ति, चाहे वह सामाजिक रूप से ऊँचा हो या नीचा, समान रूप से सम्माननीय था। यही कारण है कि वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस दोनों में श्रीराम का चरित्र समरसता और समानता का जीवंत उदाहरण बनकर उभरता है।

निषादराज गुह के साथ उनका स्नेहपूर्ण संबंध इस आदर्श का पहला उदाहरण है। जब श्रीराम अयोध्या छोड़कर वनवास जा रहे थे, तब निषादराज ने उन्हें अपने समान मित्र माना। श्रीराम ने भी इस प्रेम को बिना किसी भेदभाव के स्वीकार किया। यह प्रसंग बताता है कि **"रामराज्य"** में जाति या जन्म से नहीं, बल्कि भावना और कर्म से मनुष्य का मूल्य तय होता है।

इसी तरह, शबरी का प्रसंग सामाजिक समानता की मिसाल है। शबरी, जो एक वृद्ध वनवासी महिला थीं, ने वर्षों तक श्रीराम की प्रतीक्षा की और जब उन्होंने प्रेमपूर्वक अपने जूठे बेर अर्पित किए, तो श्रीराम ने बिना किसी संकोच के उन्हें ग्रहण किया। यह केवल करुणा का नहीं, बल्कि समानता और सम्मान का प्रतीक था — कि ईश्वर और राजा दोनों के लिए हर भक्त, हर नागरिक समान है।

केवट का उदाहरण भी यही संदेश देता है। केवट, जो एक नाविक था, श्रीराम के चरण धोकर उन्हें नाव में बैठाने का आग्रह करता है। श्रीराम ने इस श्रम और समर्पण का आदर किया। यह दृश्य समाज के श्रमिक वर्ग की प्रतिष्ठा का उद्घोष है। रामराज्य का यह भाव बताता है कि शासन में केवल राजा या मंत्रियों की नहीं, बल्कि हर सामान्य व्यक्ति की भी भूमिका है।

हनुमान, सुग्रीव, और विभीषण जैसे सहयोगियों के साथ श्रीराम के संबंध इस एकता को और सुदृढ़ करते हैं। उन्होंने वानरों और राक्षसों जैसे भिन्न समुदायों को भी धर्म और सेवा के सूत्र में बाँध दिया। यह उस समय की सामाजिक समावेशिता का अभूतपूर्व उदाहरण था — जहाँ युद्ध में भी उद्देश्य था धर्म की स्थापना, न कि किसी जाति या वर्ग का वर्चस्व।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो श्रीराम का यह दृष्टिकोण **"Inclusive Governance"** का सबसे प्राचीन और सफल उदाहरण है। आज जिस समावेशी शासन **(Inclusive Democracy)** की चर्चा होती है — जहाँ शासन सबकी भागीदारी और समान अवसरों पर आधारित हो — उसकी जड़ें रामराज्य में ही निहित हैं।

रामराज्य की सामाजिक दृष्टि यह संदेश देती है कि शासन तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक वह समाज के अंतिम व्यक्ति तक नहीं पहुँचे। महात्मा गांधी ने इसी आदर्श को **"अंत्योदय"** कहा — अर्थात् समाज के सबसे नीचे के व्यक्ति का उत्थान। गांधीजी ने स्पष्ट कहा था —

"मेरे स्वराज में रामराज्य की झलक होगी, जहाँ हर व्यक्ति को न्याय और सम्मान मिलेगा।"

रामराज्य की यही एकता दृष्टि भारत के सामाजिक ताने-बाने को एक सूत्र में बाँधती है। यह हमें यह भी सिखाती है कि समाज की विविधता उसकी शक्ति है, विभाजन नहीं। जब शासन का आधार सेवा, सम्मान और सहयोग हो — तब समाज में न केवल समानता, बल्कि सच्ची एकता भी स्थापित होती है।

इस प्रकार, रामराज्य केवल धार्मिक या पौराणिक कल्पना नहीं, बल्कि एक ऐसा सामाजिक दर्शन है जिसमें हर वर्ग, हर समुदाय और हर व्यक्ति की

आवाज़ को समान महत्व दिया गया है। यही कारण है कि आज भी रामराज्य का आदर्श **"सबका साथ, सबका विकास"** की भावना में जीवित है — जो भारत की आत्मा को परिभाषित करता है।

5. राम राज्य का आर्थिक और सामाजिक दृष्टिकोण

रामराज्य की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था संतुलन, समानता और लोककल्याण पर आधारित थी। यह ऐसा राज्य था जहाँ न कोई भूखा था, न असुरक्षित, और न ही किसी के साथ अन्याय होता था। समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्य का पालन करते हुए संतुष्ट और सुरक्षित जीवन जीता था। यही कारण है कि तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में लिखा —

"बरनाश्रम निज-निज धरम निरत श्रुति मर्यादा।"

अर्थात्, समाज का हर व्यक्ति अपने धर्म, कर्तव्य और मर्यादा का पालन करता था तथा अपने कर्म में आनंद पाता था।

रामराज्य में आर्थिक नीति का केंद्र **"सामूहिक समृद्धि"** था, न कि व्यक्तिगत लाभ। राज्य का उद्देश्य था कि किसी के पास अत्यधिक संपत्ति न हो और कोई दरिद्र या वंचित न रहे। इस दृष्टि से रामराज्य एक संतुलित अर्थव्यवस्था का आदर्श प्रस्तुत करता है, जिसमें संपत्ति का समान वितरण और श्रम का सम्मान दोनों साथ-साथ चलते हैं।

राज्य की नीतियाँ इस प्रकार बनाई गई थीं कि किसी भी वर्ग का शोषण न हो। हर व्यक्ति को अपनी क्षमता के अनुसार कार्य करने और जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त साधन प्राप्त होते थे। समाज के सभी वर्ग — किसान, व्यापारी, सैनिक, शिल्पी, और विद्वान — एक-दूसरे पर निर्भर थे, जिससे समाज में परस्पर सहयोग की भावना बनी रहती थी। इस समरसता ने रामराज्य को आत्मनिर्भर **(self-sustaining)** समाज का रूप दिया।

कृषि रामराज्य की अर्थव्यवस्था की रीढ़ थी। किसान का श्रम सर्वोच्च माना जाता था क्योंकि वही अन्नदाता था। व्यापार और उद्योग भी समान रूप से सम्मानित पेशे थे। श्रम को केवल दैहिक कार्य नहीं, बल्कि सामाजिक योगदान का माध्यम समझा जाता था। राज्य स्वयं इस बात की निगरानी करता था कि किसी का परिश्रम व्यर्थ न जाए और किसी को अपने श्रम का उचित प्रतिफल मिले।

आधुनिक दृष्टि से देखें तो रामराज्य की यह व्यवस्था **Welfare State** — अर्थात् **"कल्याणकारी राज्य"** — की संकल्पना के अनुरूप है। इसमें सरकार की भूमिका केवल प्रशासन तक सीमित नहीं, बल्कि नागरिकों के समग्र विकास और सुरक्षा तक विस्तारित थी। शिक्षा, न्याय, और स्वास्थ्य जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की व्यवस्था राज्य की जिम्मेदारी मानी जाती थी।

इस प्रकार, रामराज्य की अर्थनीति का मूल सिद्धांत यह था कि आर्थिक समृद्धि केवल कुछ लोगों की नहीं, बल्कि समूचे समाज की हो। यह विचार आज के **inclusive growth** और **equitable economy** जैसे आधुनिक आर्थिक सिद्धांतों की नींव है। रामराज्य हमें यह सिखाता है कि सच्ची प्रगति वही है जो सबके लिए समान अवसर, सम्मान और सुरक्षा सुनिश्चित करे।

6. न्याय, नीति और लोककल्याण की अवधारणा

रामराज्य की आत्मा न्याय और नीति में निहित है। यह शासन व्यवस्था इस सिद्धांत पर आधारित थी कि राज्य का सर्वोच्च कर्तव्य है— समाज में नैतिक संतुलन बनाए रखना और हर व्यक्ति को न्याय दिलाना। श्रीराम के शासन में न्याय केवल दंड या विधिक प्रक्रिया का विषय नहीं था, बल्कि यह एक नैतिक मूल्य था, जो करुणा, समानता और नीति से जुड़ा हुआ था।

श्रीराम स्वयं **"धर्म के साक्षात रूप"** माने गए हैं। वे अपने निर्णयों में कभी व्यक्तिगत भावनाओं या पारिवारिक हितों को शासन से ऊपर नहीं रखते। उनका प्रत्येक निर्णय लोकहित और धर्मसम्मत था। यह उनकी राजधर्म के प्रति निष्ठा को दर्शाता है।

सीता की अग्निपरीक्षा और उनके बाद का त्याग, जिन्हें प्रायः विवादास्पद घटनाओं के रूप में देखा जाता है, वस्तुतः श्रीराम की न्याय दृष्टि और सामाजिक उत्तरदायित्व के उदाहरण हैं। एक पति के रूप में वे सीता से गहरा प्रेम करते थे, किंतु एक राजा के रूप में उन्हें अपने राज्य की जनता की भावनाओं और समाज की नैतिकता का भी ध्यान रखना था। उस समय की सामाजिक संरचना में राजा को नैतिक आदर्श के रूप में देखा जाता था; इसलिए लोकविश्वास को बनाए रखना उनके लिए अनिवार्य था। यह दर्शाता है कि श्रीराम ने व्यक्तिगत सुख से अधिक सामूहिक नैतिक व्यवस्था को प्राथमिकता दी।

इसी प्रकार, शंबूक वध का प्रसंग भी उनके न्यायबोध का उदाहरण है। यद्यपि आधुनिक दृष्टि से इसे आलोचनात्मक रूप से देखा जा सकता है, परंतु उस युग की सामाजिक व्यवस्था में यह निर्णय "धर्म व्यवस्था" के संतुलन को बनाए रखने के उद्देश्य से लिया गया था। श्रीराम का लक्ष्य कभी व्यक्ति का दमन नहीं, बल्कि समाज की समग्र स्थिरता बनाए रखना था।

रामराज्य में न्याय केवल विधिक व्यवस्था नहीं था, बल्कि शासन का नैतिक आधार था। वहाँ राजा स्वयं कानून से ऊपर नहीं था, बल्कि धर्म और नीति के अधीन था। इसी कारण प्रजा में शासन के प्रति विश्वास और सुरक्षा की भावना थी।

आधुनिक दृष्टि से देखें तो श्रीराम का न्याय दर्शन **"Ethical Governance"** और **"Moral Responsibility"** के सिद्धांतों से मेल खाता है। उनका शासन हमें यह सिखाता है कि न्याय का वास्तविक अर्थ केवल दंड देना नहीं, बल्कि समाज में संतुलन, करुणा और नैतिकता स्थापित करना है।

इस प्रकार, रामराज्य की न्याय व्यवस्था यह संदेश देती है कि जब शासक अपने व्यक्तिगत हितों को त्यागकर सामूहिक कल्याण और धर्म के अनुरूप शासन करता है, तभी राज्य में सच्चा सुख और स्थायित्व स्थापित होता है।

7. आधुनिक लोकतंत्र के साथ तुलनात्मक अध्ययन

रामराज्य और आधुनिक लोकतंत्र दोनों का मूल उद्देश्य एक ही है — जनता का कल्याण और समाज में न्याय, समानता तथा शांति की स्थापना। यद्यपि दोनों की संरचना और समयकाल भिन्न हैं, परंतु उनके मूलभूत सिद्धांतों में अद्भुत समानता पाई जाती है। रामराज्य का दर्शन यह सिखाता है कि शासन का सार शक्ति या अधिकार में नहीं, बल्कि कर्तव्य, नीति और लोकसेवा में निहित है। यही विचार आज के लोकतांत्रिक मूल्यों की भी नींव है।

रामराज्य में शासन का केंद्र **'धर्म'** था, जबकि आधुनिक लोकतंत्र में यह भूमिका **'संविधान'** निभाता है। दोनों का उद्देश्य एक ही है — सत्ता को मर्यादित रखना, उसे अनुशासित करना, और उसे जनता के प्रति उत्तरदायी बनाना। जिस प्रकार आधुनिक संविधान यह सुनिश्चित करता है कि शासन निरंकुश न हो, उसी प्रकार रामराज्य का धर्म यह सुनिश्चित करता था कि राजा अपने अधिकारों का दुरुपयोग न करे। इस दृष्टि से, 'धर्म' और 'संविधान' दोनों ही शासन के नैतिक नियंत्रण तंत्र हैं।

श्रीराम का शासन आधुनिक लोकतंत्र के सिद्धांतों का आदर्श पूर्वरूप कहा जा सकता है। उनके शासन में जनता की आवाज़ सुनी जाती थी, निर्णय न्यायसंगत होते थे, और शासन में पारदर्शिता **(transparency)** तथा जवाबदेही **(accountability)** विद्यमान थी। जब भी कोई निर्णय लिया जाता, उसमें व्यक्तिगत हित नहीं, बल्कि लोकहित सर्वोपरि रहता। यह वही सिद्धांत है जिसे आज की राजनीतिक भाषा में **"ethical democracy"** कहा जाता है — यानी ऐसा लोकतंत्र जो नैतिक मूल्यों पर आधारित हो।

रामराज्य में शासन का प्रत्येक अंग धर्म के अधीन था। राजा, मंत्री, या सामान्य नागरिक — सबके लिए समान आचार-संहिता लागू थी। यह **"Rule of Law"** की अवधारणा का प्रारंभिक रूप था, जिसे आधुनिक लोकतंत्र ने विधिक ढाँचे के रूप में स्वीकार किया। श्रीराम के शासन में न कोई विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग था, न कोई असमानता। सभी को समान अवसर और सम्मान प्राप्त था।

आज के संदर्भ में देखें तो **transparency, accountability,** और **justice** जैसे सिद्धांत रामराज्य के ही आधुनिक रूप हैं। जिस "जनकल्याण" की बात आज लोकतंत्र करता है, वह अवधारणा रामराज्य में पहले से मौजूद थी। फर्क केवल यह है कि वहाँ नैतिकता शासन का आधार थी, जबकि आज इसे कानून और संस्थाओं के माध्यम से लागू किया जाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि आधुनिक लोकतंत्र की नैतिक जड़ें भारतीय परंपरा में, विशेषकर रामराज्य के दर्शन में, गहराई से निहित हैं। यदि आज का लोकतंत्र उस नैतिक आत्मा को पुनः अपनाए — जहाँ सत्ता सेवा का माध्यम हो — तो वह न केवल अधिक न्यायसंगत, बल्कि अधिक मानवीय भी बन सकता है।

8. 21वीं सदी के भारत के लिए राम राज्य की प्रासंगिकता

21वीं सदी का भारत तीव्र आर्थिक, तकनीकी और सामाजिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। विकास की यह गति जहाँ नए अवसर ला रही है, वहीं मूल्य-संकट, सामाजिक असमानता और नैतिक गिरावट जैसी चुनौतियाँ भी प्रस्तुत कर रही है। ऐसे समय में रामराज्य का आदर्श केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक नैतिक दिशा-निर्देशक बन जाता है।

रामराज्य हमें यह सिखाता है कि सच्चा विकास केवल भौतिक या आर्थिक प्रगति से नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक उत्थान से संभव है। जब शासन की नीतियाँ धर्म, न्याय और करुणा पर आधारित हों, तभी समाज में स्थायी समृद्धि और शांति स्थापित होती है। श्रीराम का शासन इस बात का उदाहरण है कि राज्य की सफलता का मापदंड केवल धन या शक्ति नहीं, बल्कि नागरिकों का सुख, सुरक्षा और सम्मान होना चाहिए।

आधुनिक भारत की अनेक नीतियों में रामराज्य की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। ग्राम स्वराज, डिजिटल सशक्तिकरण, स्वच्छ भारत अभियान और सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखाय जैसे कार्यक्रम उसी लोककल्याण की भावना को आगे बढ़ाते हैं, जो रामराज्य का मूल सिद्धांत था। इन योजनाओं में सामाजिक न्याय, पारदर्शिता और समावेशिता को सर्वोपरि रखा गया है — जो रामराज्य की ही आधुनिक व्याख्या है।

रामराज्य का आदर्श यह संदेश देता है कि शासन तभी सफल है जब वह सेवा, समानता और नैतिकता पर आधारित हो। आज के भारत के लिए यह एक प्रेरणास्रोत है, जो हमें यह याद दिलाता है कि तकनीकी या आर्थिक प्रगति का वास्तविक अर्थ तभी है जब वह हर व्यक्ति के जीवन में सम्मान, अवसर और सुख लेकर आए।

9. विश्व शासन व्यवस्था और वैश्विक नैतिकता में योगदान

रामराज्य की अवधारणा केवल भारत तक सीमित नहीं है; यह संपूर्ण विश्व के लिए एक नैतिक शासन मॉडल प्रस्तुत करती है। जब आधुनिक राजनीति स्वार्थ, शक्ति संघर्ष, हिंसा और विभाजन की प्रवृत्तियों से ग्रस्त दिखाई देती है, तब रामराज्य का **"धर्माधारित शासन"** विश्व को संतुलन, शांति और सहयोग की दिशा प्रदान कर सकता है।

रामराज्य का दर्शन **"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः"** की भावना पर आधारित है — अर्थात् सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की

कामना। यह सिद्धांत आज के वैश्विक शासन में समानता, करुणा और सामूहिक उत्तरदायित्व के रूप में लागू किया जा सकता है। जहाँ पश्चिमी शासन मॉडल अधिकतर आर्थिक या राजनीतिक स्थिरता पर केंद्रित हैं, वहीं रामराज्य मानवता की आंतरिक एकता और नैतिक जिम्मेदारी पर बल देता है।

इस दृष्टि से, रामराज्य वैश्विक नैतिकता **(Global Ethics)** के निर्माण में भारतीय योगदान का प्रतीक है। यह हमें यह सिखाता है कि सच्ची विश्वशांति तब संभव है जब शासन शक्ति या लाभ पर नहीं, बल्कि धर्म, न्याय और मानव कल्याण पर आधारित हो। रामराज्य की यह सार्वभौमिक भावना आधुनिक विश्व व्यवस्था के लिए एक स्थायी प्रेरणा बन सकती है।

10. राम राज्य के समकालीन उदाहरण

आधुनिक भारत के शासन तंत्र में रामराज्य की भावना अनेक नीतियों और योजनाओं के माध्यम से सजीव रूप में दिखाई देती है। यद्यपि आज का शासन लोकतांत्रिक और संवैधानिक ढांचे में संचालित है, फिर भी इसके मूल में लोककल्याण, समानता और न्याय जैसे वही मूल्य निहित हैं जिन पर रामराज्य की अवधारणा आधारित थी।

भारत के कई राज्यों और संस्थानों ने शासन में पारदर्शिता, ई-गवर्नेंस और ग्राम विकास की दिशा में जो प्रयास किए हैं, वे रामराज्य के सिद्धांतों के आधुनिक रूप हैं। **"ई-गवर्नेंस"** के माध्यम से नागरिकों तक सेवाओं की सीधी पहुँच सुनिश्चित की जा रही है, जो श्रीराम के उस आदर्श से मेल खाती है जहाँ शासक और प्रजा के बीच कोई दूरी नहीं थी। इसी प्रकार, ग्राम स्वराज और ग्रामीण सशक्तिकरण योजनाएँ उस विकेन्द्रीकृत शासन की भावना को पुनर्जीवित करती हैं, जहाँ निर्णय जनता के हित में और जनता की भागीदारी से लिए जाते हैं।

स्वच्छ भारत अभियान, बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ, और **आयुष्मान भारत** जैसी योजनाएँ आधुनिक भारत में रामराज्य के **"लोककल्याण"** सिद्धांत की प्रतिध्वनि हैं। स्वच्छ भारत अभियान समाज में स्वच्छता और नागरिक जिम्मेदारी की भावना उत्पन्न करता है, जबकि बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ अभियान समानता और सम्मान का संदेश देता है। इसी प्रकार, आयुष्मान भारत योजना स्वास्थ्य सेवाओं को सभी तक पहुँचाकर **"सर्वजन सुखाय"** की भावना को मूर्त रूप देती है।

इन पहलों से यह स्पष्ट होता है कि रामराज्य का आदर्श केवल धार्मिक या पौराणिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक और कालजयी है। भारत जब आधुनिक विकास की ओर बढ़ रहा है, तब इन नीतियों के माध्यम से वह अपने प्राचीन नैतिक दर्शन को नये युग की भाषा में पुनः अभिव्यक्त कर रहा है। इस प्रकार, आज का भारत तकनीकी प्रगति के साथ-साथ रामराज्य के मूल्यों — सेवा, समानता और न्याय — को पुनः स्थापित करने की दिशा में अग्रसर है।

11. निष्कर्ष

"रामराज्य" केवल एक धार्मिक या पौराणिक कल्पना नहीं है, बल्कि यह एक गहन दार्शनिक, सामाजिक और राजनीतिक दृष्टान्त है। यह ऐसी शासन व्यवस्था की कल्पना प्रस्तुत करता है जिसमें धर्म, नीति, न्याय और मानवता का संतुलित समन्वय हो। श्रीराम का शासन इस बात का उदाहरण है कि राज्य का वास्तविक उद्देश्य केवल सत्ता संचालन नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति के सुख, सुरक्षा और सम्मान की सुनिश्चितता है।

रामराज्य का दर्शन हमें यह सिखाता है कि शासन तभी सफल होता है जब वह नैतिकता और लोककल्याण को अपने केंद्र में रखे। यह व्यवस्था न्यायपूर्ण, समानतापूर्ण और करुणामय शासन की प्रतीक है — जहाँ शासक स्वयं को प्रजा का सेवक मानता है, स्वामी नहीं। इसीलिए रामराज्य में शासन दंड पर नहीं, बल्कि नीति और करुणा पर आधारित था।

आज के संदर्भ में, जब शासन तंत्र आर्थिक विकास और शक्ति प्रदर्शन पर केंद्रित होता जा रहा है, तब रामराज्य का आदर्श हमें यह याद दिलाता है कि वास्तविक प्रगति वह है जो हर नागरिक तक सुख और समानता पहुँचाए। यह न केवल भारत के लिए, बल्कि पूरे विश्व के लिए धर्माधारित शासन का एक नैतिक मॉडल है।

अंततः, **"रामराज्य"** इस सत्य का प्रतीक है कि सच्चे शासन का उद्देश्य राज्य को चलाना नहीं, बल्कि जनकल्याण करना है — और यही भावना मानवता की शाश्वत शांति और न्याय की आधारशिला बन सकती है।

12. संदर्भ ग्रंथ

1. **वाल्मीकि**, "**रामायण**" — **अयोध्या काण्ड**, **उत्तर काण्ड**
2. **गोस्वामी तुलसीदास**, "**राम चरित मानस**" — **बालकाण्ड से उत्तरकाण्ड तक**
3. **अरविंद शर्मा**, "Hindu Political Philosophy and Governance"
4. **पी.वी. काणे**, "History of Dharmasastra"
5. **आर. के. मुखर्जी**, "The Fundamental Unity of India"
6. **राधाकृष्णन**, "Indian Philosophy"

Aditya Hrudayam – An Elixir for Getting out of Depression

Uma Shankar
Bharatiya Vidya Bhavan, Mumbai
(jayuma70@gmail.com)

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ॥
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे । रघुनाथाय नाथाय सीतायः पतये नमः. ||
सदाशिव समारम्भाम् शंकराचार्य मध्यमाम् अस्मद् आचार्य पर्यन्ताम् वंदे गुरु परम्पराम् ||

1. Introduction

As per World Health Organisation, Depressive Disorder (Depression)

- Is a common mental disorder.
- Globally, an estimated 5.7% of adults suffer from depression.
- More women than men are affected by depression.
- Depression can lead to suicide.
- There is effective treatment for mild, moderate and severe depression.

An estimated 4% of the population experience depression, including 5.7% of adults (4.6% among men and 6.9% among women), and 5.9% of adults aged 70 years and older. Approximately 332 million people in the world have depression. Depression is about 1.5 times more common among women than among men. Worldwide, more than 10% of pregnant women and women who have just given birth experience depression. In 2021, an estimated 727,000 people lost their lives to suicide. Suicide is the third leading cause of death in 15–29 year-olds as per the statistics published by World Health Organisation as late as August 2025.

In high-income countries, only about one third of people with depression receive mental health treatment.

Barriers to effective care include a lack of investment in mental health care, lack of trained health-care providers and social stigma associated with mental disorders.

Social stigma associated with treatment to this disorder is one big barrier for effective treatment. Almost all of us might know someone in our family and friends circle who needs treatment for mental health, but we would be hesitant to state that or encourage that family to go ahead with treatment.

Under such circumstances, what if there is a proven way to come out of depressive disorder by reciting some mantras as given by Sage Agastya and as narrated by Sage Valmiki in Srimad Valmiki Ramayana? It is a question of faith. If faith can move mountains why not use it to treat some mental disorders?

Aditya Hrudayam is one of the Sargas in Srimad Valmiki Ramayana, the Adikavya which tells the story of Rama and Sita. The story of Rama and Sita is told by Maharshi Valmiki in Sanskrit and it has been retold in so many languages across our country and also in the languages of many other countries. Kamba Ramayanam is the retelling of Valmiki Ramayana in Tamil by poet Kambar.

In the introductory poem, Kamban says that his efforts to narrate the story of the flawless and victorious Rama can be compared to the efforts of a cat reaching the shores of the ocean of milk and saying that he can drink it all up. My efforts in trying to write the glory of Aditya Hrudayam, especially in the context of treating depressive mental disorder, can also be termed the same as I am neither a specialist in psychology nor in the Sanskrit language. One thing I can say that I have is my personal experience with Aditya Hrudayam, which I will narrate later. This article is an attempt to compile the thoughts of many scholars who have written and talked about Aditya Hrudayam. I have listened to the lectures of great scholars like Ubaya Vedantacharya Karunakara Swamiji, Sri Dushyanth Sridhar, Sri Nanduri Srinivas and many other scholars in Tamil, Telugu and English and have read the sayings of Sage of Kanchi, popularly called as The Walking Saint MahaPeriyava. This is a compilation of what great scholars have said about Aditya Hrudayam and its potency to treat depression.

2. Itihasas – Ramayana and Mahabharata

Ramayana, the great epic containing the story of Rama and Sita as the main characters is considered as an Itihasa along with Mahabharata. Ramayana's theme is to teach "how to live" whereas Mahabharata tells "how not to live" for the rulers, citizens and the common householders through the lives of the characters in these Itihasas. The word Itihasa means History or The Past happenings and hence we believe that Rama and Sita walked on our earth as common human beings and went through happy and not-so-happy situations while they lived amongst the common people.

Rama and Sita – are they Gods or Human beings?

As we are discussing treatment of depressive disorder of people, one can wonder why we are talking about Rama and Sita who are considered as God and Goddess. It is Hanumanji who for the first time elevates Rama and Sita to the level of Gods in the famous Shloka in the 13th Chapter of Sundara Kanda in Srimad Valmiki Ramayana. He prays to them when He was in a mild depressed state of mind when He could not find Sita in spite of looking for Her in every nook and corner of Lanka after having crossed the ocean using all His energy. He prays to them saying

नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै ।
नमोऽस्तु रुद्रेन्द्रयमानिलेभ्यो नमोऽस्तु चन्द्रार्कमरुद्गणेभ्यः ॥

Though Bharata, Lakshmana and Shatrugna the brothers of Rama literally worshipped Rama, it was an act of veneration to an elder brother. It is Hanumanji who deitified Rama Lakshmana and Sita by praying to them thus equating them to the other Devas like Rudra, Indra, Yama, Vayu, The Sun, The Moon and the Maruts through this Shloka.

Do Gods get Depressed?

So, we may wonder whether Gods get depressed? Do they go through common emotions like human beings? The answer is given by Rama Himself when He repeatedly says in Srimad Valmiki Ramayana that He is a human being born as son of Dasaratha

"आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् ||".

As a human being, Rama had emotions. Sita, Lakshmana and all other major and minor characters had different emotions like happiness, sadness, fear, anger, surprise, disgust and also feelings like contempt, shame, and pride which made them have mood swings. We see Bharata scolding his mother; crying in front of Rama; Lakshmana getting angry and Sita suspecting Lakshmana and using harsh words. Rama Himself was terribly sad when He realised that He had lost Sita and lamented. He pulls up Himself and starts the search when Lakshmana consoles Him. Sita and Hanuman too felt depressed as per Valmiki Ramayana. Hence, we see that almost all the characters in Ramayana had human emotions which include depression.

3. Hanumanji's Depression

किम् वा वक्ष्यति सुग्रीवो हरयो व समागताः ||
किष्किन्धाम् समनुप्राप्तौ तौ वा दशरथ आत्मजौ |

The hero of Sundara Kanda, Hanumanji who is so valiant to cross the ocean and change his form to his desire, after having searched all through Lanka, wonders what reply He can give to Sugriva, Angada and other Vanaras if He returns without seeing Sita. This is when He has not yet seen Ashokavan. He talks like any common man who is constantly worried about what others would think about his success or failure.

गत्वा तु यदि काकुत्स्थम् वक्ष्यामि परम् अप्रियम् ||
न दृष्टा इति मया सीता ततः त्यक्ष्यन्ति जीवितम् ||
परुषम् दारुणम् क्रूरम् तीक्ष्णम् इन्द्रिय तापनम् ||
सीता निमित्तम् दुर्वाक्यम् श्रुत्वा स न भविष्यति ||

He goes on and on worrying and thinks of what the result of failure of his mission would be. His failure would result in the death of Rama, Lakshmana, Bharata, Shatrugna, their mothers Kausalya, Sumitra, and Kaikeyi. He adds that such situation would prompt Rama's friend Sugriva and his wives and children and the citizens of Ayodhya and Kishkinda also to die due to grief. He elaborates as to how the vanaras would feel and die on hearing about the death of their King Sugriva. Then He concludes that He will become single handedly responsible for the destruction of Ikshvaaku dynasty and the vanaras!

Then he wonders what if he does not return to Kishkinda with news of his failure. He thinks of living near the ocean eating whatever comes on hand, or enter fire, or drown into the ocean or live in hiding as a hermit. These are definitely depression induced thinking. But He is disciple of Aditya, Suryadeva and the seeds sown by Aditya in Him gives Him energy to pull up Himself. He says in 10th verse of Sarga 12 of Sundarakanda,

अनिर्वेदः श्रियो मूलम् अनिर्वेदः परम् सुखम् | अनिर्वेदो हि सततम् सर्व अर्थेषु प्रवर्तकः ||

Not getting depressed is the root of Shreyas – auspiciousness or prosperity. Absence of despondency is the greatest

comfort.

He then goes ahead saying He would rather live and take revenge on Ravana by carrying him to Rama. Then He sees Ashokavan and decides to search there. Before entering Ashokavan He prays by uttering the famous verses as mark of reverence and prayer to those He considers as Gods.

नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै ।
नमोऽस्तु रुद्रेन्द्रयमानिलेभ्यो नमोऽस्तु चन्द्रार्कमरुद्गणेभ्यः ॥

Once He spots the beautiful Ashokavan and sees Sita He gives hope and pulls Her out of depression. Let us see now Sita's depression as seen by Hanumanji and as narrated by Valmiki.

4. Sita's Depression

In the 28th Chapter of The Sundara Kanda, Sita when She realises that She has just two more months before Ravana would kill Her, laments and goes to the extent of strangling Herself using Her long hair. Such suicidal thoughts are expected in a person who is going through depressive disorder.

As per World Health Organisation, people going through depression would have feelings of low self-worth, thoughts about dying and hopelessness about the future. People who have lived through abuse, severe losses or other adverse events are more likely to develop depression.

Sita was tormented by Ravana, and the Rakshasis who were surrounding and threatening Her. Already ten months have passed with no news on whereabouts of Rama and Lakshmana and She had lost hopes of seeing them or being rescued from Ravana. She had no way of escaping the strongly fortified Lanka with Her own efforts.

सुखाद्विहीनं बहुदुःखपूर्ण | मिदं तु नूनं हृदयं स्थिरं मे |
विशीर्यते यन्न सहस्रधाद्य | वज्राहतं शृङ्गमिवाचलस्य ||

"Though devoid of happiness and frequently full of sorrow, my heart must be hard indeed, in that it does not break into a thousand pieces today like a mountaintop struck by lightning" is what She says in the 4th verse of 28th Chapter of Sundara Kanda. She laments about Rama and Her love for Him and His valour but finding Herself in a hopeless situation amongst the Rakshasis who are the servants of Ravana,

सा शोकतप्ता बहुधा विचिन्त्य | सीताथ वेण्युद्ग्रथनं गृहीत्वा |
उद्बध्य वेण्युद्ग्रथनेन श्रीघ्र | महं गमिष्यामि यमस्य मूलम् ||

"I shall go to the presence of Yama the God of Death by tying my neck quickly with my braid of hair looking like a hanging rope."

She senses some good omens like her left eye twitching, and She hears Hanumanji singing the praise of Rama in a soft voice and stops her suicidal attempt. Timely intrusion by Hanumanji by singing the praise of Her beloved Rama stops her from suicidal attempt.

Let us move to the theme of this article – that of how Aditya Hrudayam helped Rama come out of His depression.

Rama's Depression and Sage Agastya

Aditya Hrudayam, the 105th Chapter of Yuddha Kandam in Srimad Valmiki Ramayana is a set of verses that give hope, and make the person get back determination and oozes with positive energy. This chapter has 31 verses and contains the advice as given by Sage Agastya to Sri Ramachandra. The whole Sarga except for the last 4 verses is direct sayings of Sage Agastya and Valmiki had just compiled them.

These 31 auspicious verses of this Chapter of Ramayana are recited by many devotees on a daily basis, and this is the only Chapter that so many Rama devotees would religiously chant from memory, though the verses praise Aditya and not Sri Rama directly.

Let us see the circumstances under which these verses were given by Sage Agastya to SriRama.

Rama has reached Lanka with the goal of rescuing Sita by waging war with Ravana who had abducted her. The first arrow is shot by Ravana's army, and both the sides fight vigorously. Both the armies experience moments of victory and loss. On Ravana's side very capable demons like Dhumraksha, Vajradamstra, Akampana, Prahasta, and the valiant Indrajit and Kumbhakarna bring heavy losses to the vanara sena of Rama. Lakshmana almost dies and Hanumanji brings Sanjeevani mountain with life giving herbs. Indrajit shoots Nagastra thrice and Hanumanji brings the healing herbs twice and Garuda comes once to get the Nagastra removed.

Chapters 99, 100, 102, 103 and 104 describe in detail the fight between Rama and Ravana. All Gods, Devas, Rishis, Yaks has, Kinnaras and such other celestial beings gather to witness this Rama Ravana Yuddha. Ravana's charioteer takes him back

when Ravana is badly hurt and tired. But Ravana engulfed by lust, Kama, has the urge of winning this war as his only goal is to get Sita at any cost – even at the cost of losing all his brothers, his sons, his army chieftains, and almost all his people. He does not want to give up. In fact, in 104th Chapter of Yuddha Kanda, Ravana abuses his charioteer for taking his chariot back from the battlefield. The Charioteer explains why he did that. But impelled by force of Destiny and with his red eyes showing his anger due to infatuation, Ravana scolded his charioteer and approached Rama determined to kill Rama.

Aditya Hrudayam

On one side Ravana is determined to fight with Rama though he is injured and tired and his own charioteer feels that it is not wise to continue the war that day.

On the other side our hero, Rama is worried and standing with confused thoughts.

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम् |
रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ||

Samare Chintayasthitham – Rama is standing with worrisome thoughts on the battlefield.

He has seen Lakshmana almost on the deathbed and so many vanaras dying for him; He has lamented seeing the valiant Lakshmana bathed in a stream of blood, when struck down in battle with a spear by the mighty Ravana. Rama had gone to the extent of saying that there is no meaning in continuing the war or winning if He has to lose Lakshmana in the war. He says that the way Lakshmana followed Him to the forest, He will also follow Lakshmana if he goes to the abode of Yama.

यथैव मां वनं यान्तमनुयाति महाद्युतिः |
अहमप्युपयास्यामि तथैवैनं यमक्षयम् ||

He considers killing Himself in case Lakshmana dies in the war. With such depressing thoughts, Rama is standing in the battlefield is the first verse of 105th chapter of Yuddha Kanda – which is titled as Aditya Hrudayam.

Sage Agastya who came to see the war spoke the following words.

दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् |
उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्यो भगवान् ऋषिः ||

Why did Agastya come in person whereas all other Rishis, Munis, celestials have gathered on the sky to witness the war? The reason as explained by learned scholars is that, when the mind is clouded, personal advice given face to face works much better and gives instant energy and Rama needed such personal advice at that time. Sensing this Agastya had come in person at the right time.

In the Aranya Kanda, Chapter 12 talks of the meeting between Sage Agastya and Rama. Rama had visited Agastya's Ashram along with Lakshmana and Sita and the Sage had given Rama some celestial weapons that would come handy during the war. Though Rama visited Agastya along with Sita, the Sage knew the ultimate purpose for which Rama has taken this birth and hence, he had given him suitable weapons. What is the use of weapons if the mind of the person who has to use those weapons is depressed?

So, Agastya literally rushes to the battlefield and reminds Rama to venerate his Kuladevata Surya. Rama, though called as Rama CHANDRA, is from Raghu Vamsa which has Dinakara, the Sun God as the deity of His dynasty. One of Rama's names is Dinakarakula Thilaka.

Here I am reminded of the Sage of Kanchi, popularly called as MahaPeriyava, the 68th Peetadhipathi of Kanchi Kamakoti Mutt. Once a man, looking really distressed and in very poor condition with nothing in hand to offer to the Sage visited Him with tears in his eyes. He prostrated before the Sage and said that he had lost all his wealth though he worked hard and is very sincere and never commits any unethical or immoral activities. He told the Sage that just before taking the final step of killing himself, as a last resort he thought of seeing the Sage though he feels that there is no hope for him or for his family. The Sage quietly asked him to take bath and eat food in the mutt and come back. Once he came back, he was asked to name his Kuladevata. He had no answer as he did not know who his Kuladevata is. The Sage told him to find out from his relatives the temple of his Kuladevata and make a visit to that God / Goddess and then come back. The poor man with tears streaming down his eyes went back and through some enquiry he found out that a particular God in a small village is his Kuladevata. He found that small temple in bad condition and he painstakingly cleaned up the place and lit some lamps. He started going there once a week and did small pooja and started lighting lamp there and offering some fruits to that God. His business slowly improved, and, in a few months, his financial condition stabilised and in some more months he became reasonably rich. He went again to have darshan of the Sage carrying fruits and flowers and with lots of happiness which was visible in his body language. He prostrated in front of the Sage and said that The Sage had saved him from dying. The Sage replied that it is not He who saved him, but the man's Kuladevata whom he had neglected all along, and once he started worshipping his

Kuladevata, that God had taken care of him, as his own child and had saved him. The Sage always used to insist that Kuladevata worship is necessary for everyone.
Agastya says

राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम् |
येन सर्वानरीन्वत्स समरे विजयिष्यसे ||

"O Rama, the mighty armed! Hear the following eternal secret, by which you can conquer all the enemies in battle, my child!"

Modern psychologists say that the words we utter to the person in depression are very important either to pull them up or to push them further into depression. Here Agastya uses the word Mahabaho by calling Rama twice saying that he is a Mahabahu, meaning that he is very valiant. Thus, Agastya reminds Rama that He has the requisite physical valour to win the war. He tells Rama to listen to an ancient secret that would give victory in the war. The way the Sage calls Rama as "Vatsa" meaning child, is very endearing. When the affection and the concern is shown to the person in depression, they start coming back to normalcy when they sense the affection in the words of the person speaking to them.

Almost all Shlokas on Gods, will have a final part which is called as Phala Shruti. This part tells what can be achieved / attained by reciting the particular Shloka. In case of Aditya Hrudayam, it starts and ends with Phala Shruti.

Yena Sarvan Ari – Ari means enemies; Sarvan Ari – All the enemies – this includes internal and external enemies. Thus, it is said that by this eternal secret revealed by Agastya ALL enemies can be won over. The first sentence itself is full of hope and makes one sit up to listen further.

आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम् | जयावहं जपेन्नित्यमक्षय्यं परमं शिवम् ||
सर्वमङ्गलमङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम् | चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ||

The Phala Shruti or the list of fruits that can be attained by reciting the verses continues in the words of the Sage.
"Sarvan Ari Samare Vijaya" – winning over all enemies has been said in the very first verse. Now he says, "Sarva Shatru Vinashanam" – meaning almost the same – All enemies can be destroyed. Thus emphasising the result and making Rama feel that it is possible to win over Ravana and there is no need for despondency.

Optimistic thoughts are to be repeated to bring energy into the mind of the person in depression. The sage says, "Jayavaham" – meaning, bestow victory, which is another way of saying winning over the enemies. He says that Aditya Hrudaya is to be recited daily to get never ending supreme prosperity – "Akshayyam Paramam Shivam".

The Phala Shruti continues as the Sage goes on listing out the result of reciting Aditya Hrudayam on a daily basis. Is Agastya giving it to Rama only? Rama was just enacting the role of a human being and was making Agastya give this eternal secret to us for our use.

"Sarva mangala Mangalyam Sarva Papa Pranashanam" – Brings forth auspiciousness of all auspiciousness and destroys all sins. Once sins are removed, auspiciousness comes automatically.

"**Chintha Shoka Prashamanam Ayur Vardhanam Uttamam" –** Sad worrisome thoughts will go, and longevity will increase in an excellent way. Worry can cause diseases and reduce the life term and when worry is removed, life term increases with good physical and mental health. The Sage is saying all these positive optimistic words to Rama and through Him to all of us to enable us to fight the battle of life with hope and positive thoughts.

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम् | पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम् ||

Agastya now starts saying about the God that Rama has to propitiate. In fact, many scholars consider that from this verse onwards, Agastya is giving different names of Sun God which in the bhakti tradition is called as Namavali, a garland of Names of the God. 108 names of Sun are stated here, thus making it an Ashtotharasatha Namavali. Most of us would be familiar that to worship Ganesha, Lakshmi or Rama or Krishna, we do Ashtothara Satha Namavali pooja. If flowers are offered while reciting these verses SuryaNarayana Pooja is done is the belief.

Rashmimantham - Worship the one with the rays,
Samudyantham - that raises from the horizon,
Devasuranamaskrutham - revered by Devas and Asuras,
Poojayasya Vivasvantham - the one who brings light to the world.
Bhaskaram - shines brighter than all other lights
Bhuvaneswaram - the ruler of the world.

सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः |
एष देवासुरगणान् लोकान् पाति गभस्तिभिः

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः |
महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपांपतिः ||
पितरो वसवः साध्या अश्विनौ मरुतो मनुः |
वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः ||

Sarvadevathmako isha - He is the embodiment of all gods,
Tejasvi - full of glory

Rashmibhavana - the reflector of rays.
He protects the multitude of gods and demons as well as their worlds by his rays.
After listing out the benefits derived by venerating Aditya, the Sage recites the glories of Surya in the next few verses.
Then Agastya gives the Mantras to chant for worship of Suryadeva. MahaPeriyava, the Sage of Kanchi has said that these Mantras when chanted with faith, have the effect of curing physical and mental ailments. Many devotees have experienced the effect of chanting Aditya Hrudayam.

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः |
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ||
जयाय जयभद्राय हर्याश्वाय नमो नमः |
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ||
नम उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः |
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ||
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूर्यायादित्यवर्चसे |
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः || ६-१०५-१९
तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने |
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ||
तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे |
नमस्तमोभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ||
नाशयत्येष वै भूतं तदेव सृजति प्रभुः |
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ||
एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः |
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम् ||
देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च |
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ||

Thus the Sage concludes his advice to Rama. In the words of Agastya, no one who worships Aditya comes to grief in the times of peril. Such positive words would give hope and energy to anyone.

अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं |
मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः |
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा |
सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ||

Aditya, Suryadeva who Himself is standing amongst the celestials tells Rama “Tvarethi” – hasten – Arise Awake Stop not in other words.

Medical Science says that Sunlight is the main source of Vitamin D. Research has shown that Vitamin D’s importance goes beyond calcium absorption for bone growth. To maintain the calcium balance throughout the body, Vitamin D acts on our intestines, parathyroid glands, kidneys, and bones. Its receptors are also found in our cardiovascular systems, pancreas, lungs, skeletal muscles and skin. [1]

Vitamin D receptors are widespread in brain tissue, and its form which is biologically active in the body has neuroprotective effects. In research conducted on a group of people above 60 who suffered from dementia, it was found that Vitamin D helps in redeveloping cognitive health. [2]

Rama sips water and chants the Mantras as taught by Sage Agastya and feels revitalised and with a smile on His face gets ready to counter Ravana. We all know that He killed Ravana and took back Sita to Ayodhya. He had his coronation in Ayodhya in the presence of all His mothers, Gurus, other Kings and the citizens of Ayodhya.

In conclusion, let me give my personal experience connected to Aditya Hrudayam. It was year 1980 when I had just graduated from a college in Madurai. Hailing from a middle-class family I had to start earning just after graduation and there were not many opportunities those days. I was worried and spoke to my grandfather who is really my Guru. He told me to recite Kanakadhara Stuthi and Aditya Hrudayam daily and be patient and blessed me that I will get something good. I gave competitive exams to join Public Sector Banks and got employed with State Bank of India. I was chanting Aditya Hrudayam daily not knowing the meaning of it, but with the faith that if my grandfather has said something, it will be correct. In due course I left Bank job and started my own business, and I am grateful to my grandfather and to Sage Agastya and Aditya, that since 1991, I have given employment to more than 1000 people and the number is growing. All I wanted was a job for me, but the power of the Mantras is such that it gave me more than what I had asked for. It gave me hope, patience and prosperity. Let me conclude with

य: कर्णाञ्जलिसम्पुटैरहरह: सम्यक् पिबत्यादराद्
वाल्मीकेर्वदनारविन्दगलितं रामयणाख्यं मधु |
जन्मव्याधिजराविपत्तिनिधनै: अत्यन्तसोपद्रवं
संसारं स विहाय गच्छति पुमान् विष्णो: पदं शाश्वतम् ||

The name Rama, and the epic Ramayana are sure to deliver us to Moksha.

5. References

1. Gratefully acknowledge referring www.valmikiramayan.net for word to word meaning of shlokas.
2. https://www.truebasics.com/blog/vitamin-d-and-its-essential-benefits-for-your-immunity/ by Saurabh published on July 18, 2020.
3. “Association between vitamin D deficiency and cognitive….” 21 Feb. 2020, https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC7034713/. Accessed 5 Jul. 2020.

Duties of the Ruler – Applicability of Rajadharma in Today's Global Context

Shankar Venkatanarayanan
Bharatiya Vidya Bhavan, Mumbai
(vshankar1809@gmail.com)

Valmiki Ramayana is not just a chronicle of Lord Rama's life, but an exposition of Sanatana Dharma principles. This Itihasa describes Rama as a personification of Dharma: रामो विग्रहवान् धर्मः" The duties of the king (Rajadharma) have been elaborated in Ramayana in Ayodhya Kanda (Sarga 100). The tenets of Rajadharma appear as advice given by Rama to Bharata, when the latter pleads with Rama at Chitrakuta forest to return to Ayodhya to take up the reigns of the kingdom. In Kishkinda Kanda too, Rama enunciates the principles of Rajadharma to the monkey king Vali. This paper examines the relevance of Rajadharma in today's global context[1].

1. Introduction: Ramayana's Influence Remains Undimmed

Ramayana is one of the two Itihasas (epics), the other being Mahabharata, that continues to have a profound influence on the lives and ways of people in India even today, although several centuries have passed since the epic was written. These epics have captured the imagination of the people for various reasons. Ramayana, especially, is considered as a guide for individuals to lead a peaceful and happy life with other humans, living creatures and nature. The moral values enshrined in Ramayana, such as obedience, sacrifice, devotion, dedication, charity and humanity, are relevant as much today as at the time the episodes described in the book took place in Bharatvarsha more than seven millennia ago. Further, this Itihasa is also an excellent treatise on the political thought, economic practices and judicial systems that prevailed in this land during those times. Principles illustrated in the text reflect the ethos of those times as much as they find resonance in the social, political and economic thought even in the modern age.

Aadikavi Valmiki's purpose in producing this *magnum opus* appears to be not only to highlight human perfection, that is, the most exalted form of human existence, but also to describe the principles of an ideal state, good governance, diplomacy, war and peace. Rama is epitomized as Maryadapurush, endowed with sixteen noble qualities, and therefore not surprisingly, serves to act as a timeless icon for all humans. In the same breath, Valmiki propounds the essential characteristics of an ideal state or polity, one marked by the king being considered as the custodian of all Dharma (righteousness). Rama is depicted as a model king, placing the interests of his subjects ahead of his own personal interests. This righteous way of governance is called Ramarajya or Dharmarajya and comprises Rajadharma as well as Prajadharma. Rajadharma focusses on ethical governance, predicated on maintaining happiness and harmony in the social sphere, and expanding the values of morality, peace, justice and prosperity in the public sphere. Rajadharma also lays stress on the sanctity of institutions, from family to the state.

Chakravarti Rajagopalachari, popularly known as Rajaji, statesman, writer, lawyer and Indian independence activist, who held office as the last Governor-General of India before it became a republic in 1950, produced easy-to-understand translations of Ramayana and Mahabharata in English. These books became popular among a large populace, especially children, and helped them understand the astounding depth of the two masterpieces created by Aadikavi Valmiki (Ramayana) and Vedavyasa (Mahabharata). In his own inimitable way, Rajaji philosophized thus, "There is no country which can be governed more easily than India. You have only to appeal to traditions. All the great old kings of the past, Janaka and Shri Rama, are still alive and governing our hearts. I am not the Governor-General, Shri Rama is".

Basic Tenets of Rajadharma

In the Ramayana, the duties of the king pivot around a set of tenets referred to as Rajadharma. Rajadharma lays prime emphasis on the king upholding dharma (righteousness), protecting the subjects from fear and maintaining law and order. The king is expected to be vigilant against enemies, ensure a fair and efficient administration and lead the army to protect the kingdom. Importantly, the king was accountable not only for his own actions, but also for the actions of his subjects, and therefore, he acquired the good karmas as well as the bad karmas of his subjects.

Rama's Advice to Bharata on Rajadharma

Rama espouses Rajadharma as a series of questions he poses to Bharata, when the latter visits Rama at Chitrakuta forests requesting Rama to reconsider his decision to go on exile for fourteen years. This episode occurs in Sarga 100 of the Ayodhya

[1] *References to kings, rulers and individuals in the masculine gender at various places in this paper are made only for convenience and the feminine form may be assumed, where appropriate.*

Kanda. Rama refuses to return to Ayodhya until he has served out the full banishment period and instead, urges Bharata to rule the kingdom in an able manner.

An illustrative sample of the questions raised by Rama relating to governance is listed below.

- Whether all was well in Ayodhya? Are the people living peacefully, showing due respect to the king and following the king's order dutifully?
- Does Bharata prefer one learned man over many less experienced persons in his council of ministers? Does Bharata have too many learned people in his council (and hence, facing an issue of manageability)?
- Does Bharata have a handful of ministers and others officials whose ability and loyalty were unquestionable?
- Do the ministers and advisors appointed by Bharata maintain harmonious relations with the public?
- Whether the general and other key military personnel appointed by Bharata have passed the test of loyalty and honesty? Whether they have been selected from families that have always been loyal to the Ikshvaku lineage?
- Whether labour relations were maintained well and whether salaries were disbursed equitably and on time?
- Were the women in the nation duly protected?
- Were the forests maintained well and were the elephants taken care of well?
- What was the financial position of the kingdom and was it stable?
- What was the situation relating to law and order, incidents of crime and whether punishments were meted to those found guilty?
- Were the elders and teachers treated with respect and were the religious activities carried out in the most appropriate manner?
- Was Bharata aware of the evil habits that kings might end up indulging in, including anger, procrastination and excessive sensual pleasures?

From these questions, one can divine the essence of Rajadharma as regards the core duties of a king, the qualities of an ideal king and the notion of kingship and state.

Main Duties of the King

- **Protecting the Subjects, Flora and Fauna in the Kingdom:** The king's main duty was to provide complete protection to his subjects from all forms of fear and ensure welfare of his people.
- **Upholding Dharma:** A king was expected to adhere to spiritual, religious and ethical principles always and govern the kingdom according to righteousness.
- **Ensuring Justice:** Dispensation of justice in a fair manner and meting out of punishment to those who deserved it was another kingly duty.
- **Maintaining Administration:** It was expected that the king would maintain a high standard of administration and ensure proper law and order throughout the kingdom.
- **Leading in Battle:** It was incumbent upon the king to lead the army in the battle to defend his kingdom.
- **Accountability:** The king had a vicarious responsibility for the actions of his subjects and shared the karmic merits of their good deeds, while at the same time, shared a part of their bad karmas in case he failed to govern effectively.

Qualities of an Ideal King

- **Wisdom and Discernment:** A king had to be wise, intelligent and should be able to distinguish between friends and foes.
- **Righteousness:** He must rule justly, be a man of virtue and uphold spiritual wisdom.
- **Self-control:** He should be able to control his senses and anger.
- **Benevolence:** He should have a friendly disposition while interacting with all his subjects and should strive for the prosperity of his kingdom.

Kingship and State

- **King:** In Valmiki Ramayana, kings were from the warrior class (kshatriyas) and kingship was hereditary. The king's powers, however, were not absolute. He was subservient to the Dharma and had to work for the overall welfare of all his subjects. It is mentioned in the Aranya Kanda that rishis (sages) advise Rama that it is a sin on the part of the king to collect more than $1/6^{th}$ of the earning of a person as tax.
- **Political Institutions:** Valmiki uses terms such as 'Sabha', 'Samiti' and 'Sansad', though all of them do not connote a political institution. A Sabha was a meeting place of the king and his ministers, a Samiti, a court of justice, and a Sansad, a social gathering of people. Important affairs of the state were deliberated upon in a Parishad. During his reign, Dasharatha would convene meetings of the Parishad before taking crucial decisions. Though the king wielded the final authority, the members of the Parishad had the freedom to express their views.
- **Social System:** The caste system had taken firm roots and only kshatriyas were deemed fit to rule. To maintain social order, the state continued with the practice of division of labour through the varnashrama (caste system). The varna system operated purely on hereditary lines.

2. Relevance of Rajadharma In Today's Environment

Even though the principles of Rajadharma enunciated in the Ramayana are of ancient origin, its core ideals still find relevance in today's environment. This is so because Rajadharma provides a timeless framework for righteous, ethical and people-centric governance. The core tenets can serve the nations well in their efforts to overcome the challenges of corruption, social injustice, power abuse and economic inequity.

Key Principles and their Modern Relevance

- **Primacy of Public Welfare (Prajapalana):** The fundamental tenet of Rajadharma squarely posits the responsibility for ensuring happiness, peace and prosperity of its citizens on the king. The king was expected to adhere to this principle even if there were to be a personal cost to be paid by the king while acting on this ideal. This principle finds a strong resonance with the modern notions of a welfare state, public service and ensuring happiness of its citizenry. Mahatma Gandhi interpreted this lofty notion as Ramarajya.
- **Rule of Law and Justice (Dharma):** The kingdom, why even its sovereignty, belonged to Dharma (righteousness/moral code) and not its ruler. The king was the custodian of Dharma. The long list of kings in the Ikshvaku dynasty, and more specifically the kings during the Ramayana period (King Dasaratha, King Rama and even King Janaka, though not a part of the Ikshvaku clan) were sterling upholders of law and justice. They operated within a robust legal framework, taking pains to dispense justice impartially and treat all individuals fairly. This principle is at the heart of modern democratic institutions and establishing a "rules-based global order".
- **Ethical and Moral Leadership:** Rama is epitomized as an embodiment of Dharma ("रामो विग्रहवान् धर्मः"), truthfulness (Satya), selflessness and integrity. At a time when the political and corporate landscapes across most parts of the globe are grappling with degradation in the ethical standards, this tenet of Rajadharma reminds one of the need for leaders to possess strong moral character and to take accountability for their actions, so that they can serve as role models for the society.
- **Consultative and Inclusive Governance:** Ramayana stresses the importance of consulting with trusted and knowledgeable advisors, ministers and intelligentsia, while taking critical decisions. This is the idea of participatory governance. Such consultative forums comprising individuals picked on the basis of their knowledge and expertise, promote inclusivity and social cohesion among diverse communities. In Ramayana, Dasharatha's cabinet had luminaries like Vashishta, Vishwamitra, Rishyashringa, Vamadeva and Gautama, advising him.
- **Responsiveness and Security:** An important responsibility of the ruler is to protect citizens from internal and external threats, as well as natural calamities. A parallel in today's context would be the functions of national security, disaster management and grievance redressal of citizens.
- **Diplomacy and Alliance Building:** There are many instances of Rama demonstrating strategic thinking, crisis management skills and alliance building efforts with diverse groups. We see Rama forging trans-border alliances with Sugriva's vanara community of Kishkinda and Vibhishana's people in Lanka for achieving the goal of greater peace in the neighborhood. Ramayana amply demonstrates the importance of diplomacy and global alliances, initiatives which are essential for fostering peace and trade between countries in today's complex global landscape.
- **Universal Well-being (Vasudhaiva Kutumbakam):** The overarching theme of the Ramayana is universal well-being, extending beyond just the human society. The principle of welfarism extends to the entire universe, including animals and nature. Modern-day equivalent for this would be environmental preservation and sustainable development, which are increasingly receiving attention from the policy makers and political leadership across nations. Formulation of United Nations Sustainable Development Goals is an outcome of such consciousness.

3. Evolution of Western Political Thought

Western political thought originated from the ancient Greeks during the period 500 BCE to 0 CE. Greek philosophers like Plato and Aristotle pondered over subjects such as justice, good governance and the state, and hence, it is believed that the Western political thought owes its origin to Greek philosophy.

The ancient Romans expanded on the concepts evolved by the Greeks. They developed principles like the rule of law and representative government. The Roman concept of natural law also cast its impact on Western political thought.

The Greek and Roman ideas were adopted by the Christian thinkers during the medieval period. Christian thinkers, led by Saint Thomas Aquinas, emphasized on the ideas of natural law and natural rights. Their thinking accorded a principal position to the Church in the running of the affairs of the state.

The Renaissance period saw a withdrawal from the orthodox position adopted during the medieval period. There was a revival of interest in the ideas of the Greeks and Romans. The Renaissance thinkers valued ideas such as human reason and individual liberty. Therefore, they broke away from Church domination and recognized the importance of a secular authority. A renowned political thinker of these times was Niccolo Machiavelli, who advocated the separation of politics from morality.

Modern Western political thought has its origin in the 17th and 18th centuries. Thinkers like Thomas Hobbes, John Locke and Jean Jacques Rousseau shaped the thinking during this period and ideals such as social contract, natural rights and republicanism emerged. Hobbes dwelt on the concept of social contract in his work *Leviathan*, wherein he argues on the need for people to transfer some rights to the sovereign authority for establishing political order. Locke proposed the ideals of natural rights and consent in his work *Two Treatises of Government*. He talked about individual rights to life, liberty and

property and believed that people would be ready to give their consent to the government to ensure protection of their individual rights. Rousseau propounded the idea of general will and republican government in works like *The Social Contract*. He wanted people to come together to form popular sovereignty based on the general will of the citizens.

The thinkers during the Age of Enlightenment valued reason and scientific thought. They criticized irrational traditions and absolutism and put forth ideas such as self-interest, separation of powers and limits on government freedom. The 19th century witnessed a debate between classical liberalism and conservatism. Liberals valued individual freedoms and limited government, while the conservatives believed in traditions and institutions.

20th century Western political thought was shaped by socialism, fascism, welfare capitalism and liberal democracy. Thinkers during this era debated on the role of the state in the economy and society. The idea of human rights assumed importance.

In summary, Western political thought evolved from ancient Greco-Roman ideas to modern day ideas of liberal democracy and value for human rights. Western political thought today revolves around individual liberty, rule of law, limited government, consent of the governed and democracy. The prevailing Western political thought has influenced the political systems in countries such as the USA, European Union, UK, France and other liberal democracies. Ideals like liberty, equality, property rights and representation form the core pillars of the Western model of governance.

4. A Brief Outline of the other Major Forms Of Modern Government

1. Authoritarianism and its Characteristics

Authoritarianism is characterized by a rejection of political diversity, a strong central government, restricted democratic rights, and a lack of separation of powers, all aimed at preserving the current political order. Such regimes often curtail civil liberties and the rule of law. Authoritarian governments can be autocratic, ruled by a single individual, or oligarchic, governed by a select few, and may manifest through a one-party system, military rule, or a dominant leader.

In his influential work, *An Authoritarian Regime: Spain*, Juan Linz outlined four defining traits of authoritarianism:

- Limited Political Pluralism: This is enforced by restricting the legislature, political parties, and interest groups.
- Emotional Justification for Legitimacy: The regime's authority is based on emotional appeals to the populace, portraying itself as a necessary evil to address clear issues like "underdevelopment or insurgency."
- Low Political Mobilization: Political activity is minimal, and opposition forces are suppressed.
- Ambiguous Executive Powers: The executive's authority is often unclear, adaptable, and used to extend its rule indefinitely.

In an authoritarian context, free and fair elections for the legislature or executive are absent. Human rights, including religious freedom, and fair competition between ruling and opposition parties are notably lacking. Globally, the number of authoritarian states increased from 1946 until the mid-1970s, after which it began to decline. Before 2000, dictatorships typically arose from coups d'état. Since 2000, however, dictatorships often emerge through the erosion of democratic norms, where a democratically elected leader gradually becomes autocratic. Numerous social controls are employed to suppress civil society. Political stability is maintained through control over, and support from, the military and bureaucracy, which remain loyal to the regime. Authoritarianism is marked by the ruler or ruling establishment having an "indefinite political tenure," often in a one-party state. The transition from an authoritarian regime to a more democratic government is known as democratization.

2. Dictatorship and its Characteristics

Dictatorship is a form of government where a leader holds absolute political power. The dictator's authority is supported by an inner circle of elites, mostly unelected, including advisers, generals, and other high-ranking officials. The dictator maintains control by influencing and appeasing this inner circle and suppressing any opposition, including rival political parties, armed resistance, or disloyal members within the inner circle itself. Dictatorships can be established through a military coup that forcibly overthrows the previous government or through a self-coup where elected leaders make their rule permanent. Dictatorships can be authoritarian or totalitarian and can be further classified as military dictatorships, one-party dictatorships, or personalist dictatorships.

The term 'dictator' traces its roots back to Latin, originating during the early Roman Republic era, where it described a constitutional role granting a leader temporary absolute power to manage emergencies. The 19th century saw the emergence of modern dictatorships, exemplified by Bonapartism in Europe and caudillos in Latin America. Throughout the 19th and 20th centuries, dictatorships and constitutional democracies became the predominant forms of government worldwide, gradually replacing monarchies, which had been the traditional form of governance. A key feature of a dictatorship is the suppression of freedom of thought and speech among the populace to ensure complete political and social dominance and stability. Dictatorships often use political propaganda to diminish the influence of those advocating alternative governance forms.

The 20th century experienced a surge in fascist and communist dictatorships in Europe. Fascism largely disappeared after World War II in 1945, while communism spread to other continents, remaining influential until the Cold War ended in 1991. The 1960s and 1970s saw a rise in personalist dictatorships in Africa and military dictatorships in Latin America. Dictatorships may attempt to present a democratic appearance, often holding elections to legitimize their rule or offering benefits to ruling party members, but these elections are neither competitive nor fair for opposition forces. Stability is maintained through coercion and political repression, which includes restricting access to information, monitoring political

opposition, and acts of violence. Dictatorships that fail to suppress opposition risk collapse through coups or revolutions. Totalitarianism is a form of dictatorship marked by a single political party and, more specifically, a powerful leader wielding personal and political influence. Power is maintained through a strong alliance between the government and a well-developed ideology. A totalitarian regime exercises "total control of mass communications and social and economic organizations."

3. Communism and its Characteristics

Communism is a political and economic ideology advocating for a classless society, where the means of production, such as factories and land, are owned by the community or state rather than private individuals. It typically involves a single-party government that controls the economy and distributes wealth based on need. Karl Marx and Friedrich Engels, the most renowned proponents of communist ideology, outlined its principles in works like *The Communist Manifesto*.

Core Principles

- Common Ownership: The community or state owns and controls major means of production, such as mines, factories, and farms.
- Classless Society: The aim is to eradicate social classes and the exploitation of labor.
- Distribution based on Need: Wealth is intended to be shared among citizens equally or according to their needs.
- Opposition to Capitalism: Communism fundamentally opposes capitalism and liberal democracy.

Historical Context

The Communist Manifesto, penned by Karl Marx and Friedrich Engels in 1848, serves as a cornerstone for communist ideology. During the 20th century, communist regimes were established in nations such as the Soviet Union and China, although they frequently strayed from the ideal and encountered numerous obstacles. In the present day, only a few countries officially adhere to communism, while many former communist states have transitioned to different forms of governance.

Characteristics of Communist States:

- Centralized Control: These nations typically have a dominant communist party that governs all facets of the state and economy.
- Absence of Private Property: Ownership of land and capital by individuals is prohibited.
- Eventual State Abolition: Ideally, communism envisions the state gradually disappearing once a classless society is achieved.
- Socialist Realism: This artistic and literary style is often employed for state propaganda, portraying an idealized version of communist society.

5. Rajadharma Vs. Western Political Thought

Although both the Ramayana's Rajadharma and Western political thought address governance principles and the ruler's responsibilities, they fundamentally differ in metaphysical and ethical aspects. The former emphasizes Dharma, a comprehensive moral and cosmic order, while the latter focuses on secular rationality, individual rights, and social contracts.

No.	Feature	Ramayana's Rajadharma	Western Political Thought
1	Foundation	The foundation of this concept lies in Dharma, which is viewed as a comprehensive, unchanging moral and cosmic law that dictates every facet of life. Crucially, the king is bound and answerable to Dharma; the king does not create this moral order.	This system is mainly grounded in secular logic and laws created by people, rather than divine or eternal order. Authority typically stems either from the agreement of the populace (as in a social contract) or from the practical needs and interests of the governing state (as seen in Machiavellian thought).
2	Ruler's Role	The monarch, exemplified by figures like Rama, serves as a moral model, embodying the ideal of a "philosopher king." Their primary duty (prajapalana) involves ensuring the complete well-being (both physical and spiritual) and security of their people, sometimes requiring immense personal sacrifice (for instance, the banishment of Sita).	The concept of the ruler's purpose differs based on the philosopher. It ranges from guaranteeing the natural rights of citizens (as advocated by Locke) to preserving social order through the exercise of complete authority (as argued by Hobbes), or simply pragmatically obtaining and keeping power (as discussed by Machiavelli).
3	Source of Legitimacy	Moral authority is gained through following Dharma and divine approval; while the kingship is frequently passed down through heredity, it is conditional upon the ruler governing justly.	The right to rule typically arises from the agreement of the people being governed, adherence to constitutional law, or the successful application of power to guarantee order and stability.
4	State's Goal	The ultimate goal is to achieve Ramarajya or Dharmarajya, which refers to an ideal, perfectly governed society. This society is distinguished by peace, economic success, fairness, and social cohesion, all maintained through morally sound and ethical governance	The objectives typically centre on achieving political stability, safeguarding the rights of individuals (as emphasized by Locke), or the effective deployment of state power (as advocated by Machiavelli).

Similarities ·

- Welfare of the People: Both political traditions, in their own ways, acknowledge the ruler's duty to ensure the well-being, safety, and prosperity of the populace. ·
- Rule of Law/Justice: Both systems stress the significance of a fair legal framework. In the Rajadharma, this is achieved by upholding Dharma and delivering unbiased justice, including administering 'danda' (punishment) to wrongdoers. Western philosophy regards the rule of law as a safeguard against arbitrary authority. ·

- Consultative Governance: The Rajadharma outlines a governance model where the king seeks advice from a council of ministers and wise individuals (Sabha and Parishad, respectively) before making important decisions. This resembles the representative assemblies and advisory bodies found in many Western political systems.

Differences·

- Morality vs. Pragmatism: Rajadharma places utmost importance on the king's personal virtue and moral behaviour as essential for governance. Western thinkers like Machiavelli separated politics from personal morality, suggesting that a ruler might need to be ruthless to maintain the state. ·
- Holistic Welfare vs. Material Focus: Rajadharma aims for a comprehensive 'spiritual welfarism' that includes cosmic well-being. Western thought, particularly in its modern forms, tends to emphasize material well-being, economic growth, and individual freedom. ·
- Ruler's Accountability: In Rajadharma, the king is ultimately answerable to a higher, eternal moral law (Dharma). If the king fails in his duty, it can lead to disorder or even justify his removal. In Western political thought, accountability is often structured through institutions, elections, or the right to revolution if the social contract is breached (Locke).

6. Rajadharma Vs. Authoritarianism

The Ramayana portrays Rajadharma as a system of righteousness, ethical, and people-centred governance that fundamentally limits autocracy. While the king wields considerable power, his authority is not absolute; it is contingent on upholding Dharma and ensuring the welfare of his subjects.

No.	Feature	Ramayana's Rajadharma	Authoritarianism
1	Source of Authority	The authority to rule is derived from upholding the moral and cosmic law (Dharma) and from guaranteeing the welfare and well-being of the populace.	The authority is absolute and is based entirely on the discretion and personal wishes of the ruler, with no conditions or limitations placed upon it.
2	Limitations on Power	There are significant moral and ethical limitations on the ruler's power, as the king is accountable to the cosmic and moral law known as Dharma.	Power is total, is exercised without restriction or rule (arbitrarily), and is not subject to any scrutiny or limitation from outside forces.
3	Decision Making	The process involves seeking advice and opinions from others, and its main focus is on ensuring the prosperity and health of the people being governed.	Decisions are made according to the ruler's private wishes, passing impulses, or personal gain (for example, Ravana in the Ramayana).
4	Ideal	The concept describes a welfare state where the populace enjoys life free from anxiety and in a condition of economic success and abundance.	This system possesses the inherent risk of devolving into tyranny if the person in authority fails to be a just and righteous ruler.

7. Rajadharma Vs. Dictatorship

No.	Feature	Ramayana's Rajadharma	Dictatorship
1	Source of Authority	Authority originates from upholding the moral order (Dharma) and the necessity of safeguarding the welfare of the population. Therefore, power is not absolute but is dependent on the ruler's adherence to righteous conduct.	Power is total, is concentrated in a single authority, and is frequently gained through violence or pressure. The ruler stands outside the legal system and is not accountable to the law.
2	Goal of Governance	The main objective is the well-being, tranquillity, and financial success of every person governed (an ideal state often termed 'Ramarajya').1	The focus is on keeping the ruler in authority, advancing his personal objectives, and frequently, and the crushing of any disagreement or opposition.
3	Use of Force / Punishment	The use of Danda (punishment or coercive power) is employed to uphold justice and maintain social order, ultimately serving to protect the populace.	Coercive power is frequently applied randomly to control, repress, and generate fear among the general population.
4	Morality / Ethics	This system demands that the ruler possesses a high degree of moral soundness, practises self-control, and maintains ethical behaviour.	Moral principles are often ignored in favour of whatever is politically convenient, personal enjoyment, and securing one's own survival. Ravana, despite being a devoted worshipper of Shiva, became a dictator, which ultimately caused his ruin.

8. Rajadharma Vs. Communism

No.	Feature	Ramayana's Rajadharma	Communism
1	Foundation	The basis of action is moral, ethical, and spiritual responsibilities (Dharma).	The basis of action is materialistic philosophy and principles drawn from economic theory.

2	Governing Structure	The system of governance is monarchical, meaning it is based on the rule of a single, virtuous king.	The political structure is envisioned as communal, ideally stateless, or temporarily existing as a "dictatorship of the proletariat" during a transitional period.
3	Social Order	The system actively maintains the existing traditional arrangement of social classes (known as varnashrama).	The goal is to completely eliminate all social classes and the structure of hierarchy.
4	Role of Religion / Spirituality	It is considered fundamental to both the administration of the state and to the moral life of its people.	This ideology is typically atheistic or secular in nature, viewing religion as a mere opiate or distraction for the masses.
5	Focus	The goal is to achieve just governance, fairness, public well-being, and peace through the exercise of moral authority.	The aims are to achieve equality in wealth and income, establish a system of shared ownership of resources, and end the exploitation of one group by another.

9. Conclusion: Everlasting Legacy Of Ramayana

Ramayana continues to captivate the minds of many Indians and others even in this age, because the values of goodness, honesty, sincerity, obedience, duty and ethics espoused in the Itihasa are eternal. These values are 'sashwat', that is, everlasting or imperishable. At every stage in Ramayana, the importance of leading a virtuous life following the prescribed Dharma is emphasized, not only for attaining happiness at the individual level but also for leading an ideal life as a citizen in the society. For a society to have virtuous citizens in the majority, the ruler plays an important role. "Yatha raja, tatha praja" - As is the king, so are the subjects. Leaders set the example for others to follow.

Ramayana's Rajadharma offers a participative governance model, whose key parts are appropriate even in today's polity. If the hereditary tradition of kingship and varnashrama are shorn off, the major tenets of Rajadharma are relevant even today, as they offer a moral compass to the ruler to govern his subjects in a just manner. It is only through a just administration that the society can remain stable, equitable, harmonious and happy.

The ethics-based, welfare-oriented and participative-style governance model of Rajadharma scores better than the authoritarian, dictatorship and communist political systems. This is because a ruler following Rajadharma is a "servant leader" guided by an unwavering moral code, which is in stark contrast to the unrestrained power wielded and personal interest enjoyed at the cost of the citizens', inherent in the authoritarian, dictatorship and communist frameworks.

As regards the liberal democracy system, there is an emerging realization in the West that too much focus on individual rights and freedoms tends to ignore the fact that individuals are part of a larger communion. Excessive individualism can weaken social bonds and security. Material prosperity is valued more than spiritual and ethical values, leading to greater inequality in the society. Excessive emphasis on rights leads to responsibilities getting overlooked. A proper balance between individualism and community, rights and responsibilities and material and spiritual values, is therefore required; something that the core principles of Ramayana's Rajadharma can easily be adapted to.

Dr. Arnold Toynbee (1889 – 1975), the noted English historian, after reviewing the history of the entire mankind, observed in his book *A Study of History,* "It is increasingly becoming clear that a chapter which has a western beginning will have to have an Indian ending, if it is not to end in the self-destruction of the human race…..At this supremely dangerous moment in human history, the only way of salvation for mankind is the Indian way, emperor Ashoka and Mahatma Gandhi's principle of non-violence and Sri Ramakrishna's testimony to the harmony of religions. Here we have an attitude and spirit that can make it possible for the human race to grow together into a single family, and in the atomic age, this is the only alternative to destroying ourselves". Here, Toynbee is actually echoing the age-old wisdom propounded by the ancient Indian rishis, "Vasudheiva Kutumbhakam" – 'The World is One Family'.

The tenets of Ramarajya, with its strong emphasis on the values of morality, peace, justice and prosperity, can never ever get dimmed. Ramarajya is a beacon of light for illuminating the path of commoners, communities, societies, leaders, rulers, nations and the globe itself, for as long as this planet exists. As Mahatma Gandhi remarked, "Ramarajya means a return to the ultimate Indian value of Dharma, upheld since time immemorial".

10. References

1. Aadikavi Valmiki (5000 BCE or earlier), 'Srimad Valmiki Ramayana, Part-I and Part-II (with Sanskrit Text and English Translation)', *Gita Press, Gorakhpur, India*
2. K. Srinivasan (February 3, 2013), 'A king's duties', *The Hindu Newspaper*
3. Plato (~380 BCE), 'The Republic', *FingerPrinti Classics, Published 2024*
4. Prashanta, N. (2018). Ideal polity as seen in Ramayana: Its relevance for contemporary society. *International Journal of Creative Research Thoughts, 6*(4). https://ijcrt.org/papers/IJCRT1135614.pdf
5. Richard J Arnesan (October 24, 2025), 'Western political philosophy to the end of the 19th century', *Encyclopedia Britannica*

Science and Technology in Ramayana

Jayanthi Shreekrishna
Karthik N
Sharayu S Kulkarni
Bharatiya Vidya Bhavan, Mumbai.
(drjayanthi1999@gmail.com)
(knhdfcergo.com)
(kulkarni.sharayu.s@gmail.com)

Ramayana consisting of 24,000 shlokas, divided into 7 Kandas, written by AdiKavi Valmiki, focuses on different periods of Rama's life, dating back to ~5000 BCE, Treta Yuga. In this paper we shall delve into engineering, hydraulic, and architectural feats, construction,use of mterials of the longest and first Rama Setu by the civil engineers Nala and Neel, and advanced water management systems like the reservoir at Shringaverapura. The period saw the development of advanced technologies, through concepts like the Pushpaka Vimana, measurement of distance between India and Srilanka.

Keywords:- Bala Kanda, Ayodhya kanda, Kishkindha Kanda, Astronomy and Chronology, Epic, Valmiki Ramayana, Ramcharitmanas, Goswami Tulsidas, Khar and Dushan, Biology and Medicine, Engineering

1. Introduction

The Ramayana, is a Mahakavya, an Itihasa of the highest order, composed, written in गीर्वाण वाणी and ratified by AdiKaviguru Maharshi Valmiki during Rama's time [1]. It was Hanuman, a celibate, wrote the first version of the Ramayana on clay tablets, celeberated for his unwavering devotion and love for Rama and who was always with Rama from the 4th Kanda. The sage Valmiki, the traditional author of the Ramayana, was devastated to think his version might be inferior. Hanuman avoided this and is said to have thrown them into the sea, making his version unavailable today. Other prominent writers are Goswami Tulsidas, who wrote the Ramcharitmanas[2] in Awadhi in the 16th century, and Sage Ved Vyasa, who wrote the spiritual Adhyatma Ramayana, Rishi Kamban, who was titled as kavichakravarthi authored The Kamba Ramayanam [3] a masterpiece written in Tamil during the 12th century. This timeless epic has been treated with utmost care by all acharyas in their famed commentaries. The Krittivasi Ramayan (or Śrīrām Pãcālī) and the Balaramdas Ramayan (or Dandi Ramayana/Jagamohana Ramayana) are major regional adaptations that brought the Sanskrit epic to the common people in Bengal and Odisha, respectively. These regional versions often include unique episodes and deviations from the Valmiki text, reflecting specific local interpretations and theological emphases, such as the focus on Bhakti.

2. Ramayana

It is one of the largest ancient epics in world literature and consists of nearly 24,000 shlokas (couplet verses), divided into seven kandas (chapters), is divided into seven kandas (1.Bala kanda, 2.Ayodhya kanda, 3.Aranya kanda,4. Kishkindha kanda In the Kishkindha kanda, it is from Jambavan that we learn about Hanuman's super-simian powers by hearing the story of his birth and all the boons he received when he was struck down by Indra's thunderbolt. Hanuman also hears this story, perhaps for the first time, and he is immediately both empowered and inspired to leap over the ocean in search of Sita., 5.Sundara kanda, 6.Yuddha kanda,7. Uttara kanda), and about a total of 500 sargas (chapters).[25][26]. In each kanda interpretation of Ramayana we can envisage the exemplary science and technological advance involved during that time.

Interpretations of the Ramayana from a scientific viewpoint often focus on areas like astronomy, geography, engineering, and medicine described within the text, with proponents arguing that Sage Valmiki's detailed descriptions correlate with verifiable facts and advanced ancient knowledge.

Valmiki's Ramayana provides detailed astronomical references, including planetary positions and solar eclipses, which some researchers have used to attempt to scientifically date the events of the epic.

3. Astronomy and Chronology

Valmiki's Ramayana provides detailed astronomical references, including planetary positions and solar eclipses, which some researchers have used to attempt to scientifically date the events of the epic.

Bala Kanda is noted for containing precise astronomical descriptions of the planetary positions at the time of Lord Rama's birth. Maharishi Valmiki has recorded in Bal Kand, sarga 19 and shloka eight and nine (1.18.8,9), that Shri Ram was born in Ayodhya, around noon on ninth tithi of Chaitra lunar month Shuddha Navami, on Punarvasu Nakshatra(4) Gemini constellation and Pllux star, with five planets Jupiter in Cancer, Mars in Capricon, Sun in Aries, Venus Pieces and Saturn in Libra in exalted positions and Moon is in its own house cancer, Lagna as Cancer, cancer was rising in the east. These details conclude 10th of January in the year 5114 BC if viewed from latitude/longitude of Ayodhya (25°N 81°E) happens to be birthdate of Lord Rama. This is exactly the time and date when Ramnavami is celebrated all over India till date.

These are the lines from Ramcharitmanas by Goswami Tulsidas.(Balkand). On the 9th day of Chaitra Month (Hindi Calendar). It was Shukla Paksha . The moon has entered the Asterism (pattern) named Abhijit, which is favourite to Lord.

It was day time when Lord Ram was born , it was neither too cold nor too hot. It was a holy time which gave rest to the world .

नौमी तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता
मध्यदिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोक बिश्रामा ||

Once, in Ramayana's Ayodhya kanda

King Dasharatha told to his courtiers – "The coronation of Rama is most appropriate, beautiful and holy, woods and trees are full of flowers and is Chaitra month. Punarvasu nakshatra that day and next day it would be Pushya nakshatra, when he would be eager to hand over the kingdom to Rama." — Ramayana Ayodhya kind, 4th saga, shloka.21,22 (2.4.21,22)

"Astrologers have told Dasharatha that his star was surrounded by malefic planets like Sun, Mars and Rahu. Under such planetary configurations, the king either dies or falls in some deep conspiracy. Thus, before he faces any such problem, he would take over the kingship" — Ramayana 2.4.18

Astronomy playsits role in Rama's war with Khar and Dushan , when in the 13th year of Ram's exile, during a war with Khar and Dushan, Valmiki describes a solar eclipse. Planets, visible to unaided eyes were from East to West – Saturn, Sun, Moon, Mars, Mercury, Venus, Jupiter. Mars was in the middle of this chain. Rarely, all the planets are in the day sky. The occurrence of a solar eclipse at that time makes it absolutely unique. Sage Valmiki described this as below.

In the middle of his army, Khar, was looking like Mars in the middle of the planets in the sky. When Khar moved with his army towards Rama for the battle, a red coloured evening appeared to be descending all over. – Ramayana: 3.23.1

The sun was covered by a dark coloured disc that had red coloured corners. – Ramayana: 3.23.3

Although it was daytime, it started appearing to be evening, because it was eclipse time. – Ramayana: 3.23.9

The sun was caught by Rahu because of which the sun lost its glow and brightness. Various animals and birds started making noises as if it was dusk. – Ramayana: 3.23.12 [4]

Khar told Rama – "I want to say many things about my prowess but I would not, because if in the `meanwhile sunset occurs, there would be a break in the battle." – Ramayana: 3.29.23. These are two examples sited from Ramayana , that during that time people had a good knowledge of Astronomy. [5]

A US-based software that helps predict solar/lunar eclipses plus distance and location of other planets was used to convincingly corroborate the dates and planetary positions as narrated by Maharishi Valmiki. [6]

'The Astronomical Code of the Rig Veda', has also listed 63 ancestors of Sri Ram who ruled over Ayodhya. Sri Ram's ancestors have been traced out as: Sri Ram, King Dasharatha, King Aja, King Raghu, Ki...

In Kishkindha kand there is a reference to solar eclipse (4.15.3) on the day Vali was killed. Software shows a solar eclipse on 3rd April 5076 BC which was the only solar eclipse during the entire year.[7]

In Sunder kand there is a reference to lunar eclipse when Hanuman spots Sita in Ashok Vatika (5.19.14, 5.29.7, 5.35.87). Sky view reveals lunar eclipse starting from 4.15 pm on 12th September 5076 BC from Colombo (7°N; 80°E).

Thus the planetary references in Valmiki Ramayan correspond to actual sky seen from the given places around 5100 BC in the same sequence as narrated. The way in which archaeological, paleobotanical, genetic, oceanographic, geological, ecological and remote sensing research reports corroborate the astronomical dates is amazing! Our quest for learning more about our cultural heritage, though destruction caused by floods, earthquakes and invasions etc.,[8] would be far greater, yet we have proved our ancestors during the period of Ramayana as quoted by sage Valmiki as shlokas in Ramayana, were very advanced in Astronomy and many fields.

4. Biology Medical Science

1. Kaushalya mata's Protection for her son

It was the practice for the mothers in the olden days to give a packet of food to their children when they travelled to another place. Kausalya also wanted to do the same thing when Rama was about to leave for the forest. She thought deeply about what food she should give to Rama, something that would remain fresh and sustain him for fourteen long years. Then she decided to give him Dharma, the ever fresh and non-perishable eatable, telling him, 'Raghava, the Dharma which you so earnestly protect with courage and discipline will always protect you'. Kausalya gave Rama Dharma as a companion, as it were.

इति पुत्रस्य शेषांश्च कृत्वा शिरसि भामिनी।
गन्धैश्चापि समालभ्य राममायतलोचना।।2.25.37।।
ओषधीं चापि सिद्धार्थां विशल्यकरणीं शुभाम्।
चकार रक्षां कौशल्या मन्त्रैरभिजजाप च।।2.25.38।।
यं पालयसि धर्मं त्वं धृत्या च नियमेन च।
स वै राघवशार्दूल धर्मस्त्वामभिरक्षतु।।2.25.3।।

The large eyed Kausalya placed the remains of the offerings on Rama's head and applied sandal cream to his body.[9] She tied an auspicious medicinal herb known as Vishalyakarani to his arm for attainment of his objectives. The duty which you are carrying out with courage and self-discipline, Oh tiger amongst the Raghu descendants will alone protect you. Following Dharma is itself a prime medicine, food, saviour, protector from evil.

2. Science involved to acquire progeny

King Dasharatha of Ayodhya performed the Putrakameshti Yajna under the supervision of Rishyashringa. After its successful completion, the god of fire, Agni, appeared and gave a bowl of payasam to the King of Ayodhya, which was provided to his three queens in order to promulgate his sons Rama, Lakshmana, Bharata, and Shatrughna. The consumption of the sacred payasam, an elixir prepared by the gods blessed queens with conception, leading to the births of the four sons.

3. Sanjeevani Booti

The story of Hanuman bringing a magical herb from the Himalayas to revive Lakshmana indicates knowledge of potent medicinal plants and the practice of advanced medicine/herbalism. Lakshmana were knocked down by Indrajit in the battle-front. The army of monkeys fainted. Sugreeva, Nila, Angada and Jambavan could not understand what to do. Jambavan called and told Hanuman about the herbs in details. The story of the Sanjeevani herb, which revives Lakshmana from near-death, highlights a sophisticated knowledge of potent medicinal plants. In the Yuddha Kanda, the physician Sushena directs Hanuman to a specific mountain peak in the Himalayas.

Valmiki Ramayana, Yuddha Kanda, Sarga 101, Shlokas 31-33 (approximate substance):

सौम्य शीघ्रमितो गत्वा शैलमोषधिपर्वतम् || 6.102.23
पूर्वन् हि कथितो योअसौ वीर जाम्बवता शुभः |
दक्षिणे शिखरे तस्य जातामोषधिमानय || 6.103.24
विशल्यकरणी नाम विशल्यकरणीन् शुभाम् |
संजीवकरणीं वीर संधानीं च महौषधीम् || 6.102.25
संजीवनार्थं वीरस्य लक्ष्मणस्य महात्मनः

"Proceeding from this place with full speed, O gentle one!, to the mountain called Oushadhi. Bring here for restoring the great-souled and heroic Lakshmana to consciousness, the precious herb Vishalyakarani (remover of arrows) by name. Sanjiivakarani (life-giving) and the precious herb, Sandhanakarani ,joiner of bones."

Hanuman ultimately carries the whole mountain peak because he cannot identify the specific herbs, showing the crucial and immediate effect of the medicine. Lakshmana was made to breath to plant and he revived. This again shows our ancestors in that period were very proficient the medical field. The Sanjivani herb is a focal point for ancient herbal medicine or Ayurveda. This herb is said to possess the power to revive a person from a near-death or unconscious state , like Lakshmana, highlighting the search for panacea or critical care medicine. The physician Sushena from Lanka diagnosed Lakshmana's condition and prescribed the exact location and method to retrieve the herb. This showcases specialized diagnostic skills and advanced botanical knowledge. The descriptions in the epic actually mention a group of four medicinal plants: Mritasanjeevani for reviving life, Vishalyakarani for removing the pierced arrows, Sandhanakarani for restoring the damaged skin, and Savarnyakarani. The story of Hanuman bringing a magical herb from the Himalayas to revive Lakshmana indicates knowledge of potent medicinal plants and the practice of advanced medicine/herbalism.

4. Chemical Technology

1. Preservationof King Dasharatha's Body

King Dasharatha's body was preserved in a large vessel or tub (droni) of oil infused with medicinal herbal concoction, to prevent decomposition until his son Bharata, who was away to his maternal uncle's house, could return to perform the final rites. The absence of the eldest son Rama made immediate cremation impossible according to tradition. This technique is mentioned in Vedic texts and the Ramayana as an effective way to preserve a body for an extended period in that era by Ayurveda tradition, as an ancient technique for temporary body preservation. The tale of King Dasharath is just one example of cadaver preservation throughout history. These preservation methods have contributed to the advancement of medical knowledge and anatomical understanding those days.People knew the technique of preservation the dead temporarily.

तैलद्रोण्यामथामात्या सम्वेश्य जगतीपतिम्।
राज्ञस्सर्वाण्यथादिष्टाश्चक्रुः कर्माण्यनन्तरम् ।।2.66.14।।

Valmiki Ramayanam

The counsellors, instructed (by Vasistha and others), placed the king's body in an oil tub with the understanding that the funeral rites were to be performed hereafter. (Ayodhya Kanda, Chapter 76) The use of chemicals and preservatives to preserve King Dasaratha's body is mentioned, suggesting ancient knowledge of embalming or preservation techniques.

2. King Jatayu's Motal Remains

When the bird king Jatayu died after fighting Ravana, Lord Rama and Lakshmana personally performed his cremation to ensure the soul attained heaven. Rama built the pyre, ignited it, and offered rice balls (pindas) and water oblations, following the sacred formulas.3.68. 31-34. After Vali was killed by Rama, Vali's body was placed on a pyre and was cremated according to the scriptures.

5. Architecture

The Ramayana describes magnificent cities and palaces, such as the grand architecture of Lanka, which reflects advanced knowledge of planning and construction. According to the Uttara Kanda of the Ramayana, the city of Lanka was originally built by the divine architect of the Devas, Vishwakarma. It was initially created for Shiva and later seized by the Rakshasa brothers, eventually coming under Ravana's rule. It is decribed as स्वर्णमयी लङ्का. The city of Lanka is extensively described in the Sundara Kanda by the observations of Hanuman and Yuddha Kanda of the Valmiki Ramayana. Magnificent Structure: Ravana's capital, Lankapuri, is described in superhuman terms. The central palace complex was a massive collection of edifices, described as reaching over a yojana in height, and fortified with high protective walls, deep trenches, and various engines of war. The descriptions suggest advanced knowledge of town planning, including well-laid streets, ramparts, gates, and elaborate internal structures. These are described in Sundara kanda, Sarga 2 and Yuddha kanda, Sarga 3., which reflects advanced knowledge of planning and construction.

6. Defence of Lanka

The strategic location on a mountain peak, surrounded by forests and guarded by a large army, reflects a sophisticated approach to defense and urban design. These detailed descriptions within the Ramayana highlight a vision of a highly planned and technologically advanced urban center, reflecting a sophisticated imagination of city planning and construction in ancient Indian literature

Yuddha Kanda, Sarga 3, Shlokas 22-28: These shlokas are part of Hanuman's description of Lanka's strength to Rama. They detail the city's location on a mountain peak, its inaccessibility, deep trenches, various engines of war ("Sataghnis"), and the specific number of formidable rakshasa warriors positioned at each of the four gates and the central division. Lankini was the presiding ogress of Lanka to protect the city of Lanka.

7. Technological Marvels

Aeronautics

Pushpaka Vimanam or Flying Chariot or flying machine is perhaps the most famous example, a celestial vehicle capable of flight. It was self-propelled and could change size and speed on command. This is often compared to modern aircraft or drones. Such a technologicaly advanced Aircraft was owned and used by Ravana, further indicating an advanced knowledge of aeronautical engineering. The text describes it with features that resonate with modern high-tech transport. The Pushpaka Vimana is the peak example of ancient aeronautical engineering. Thought-Controlled Navigation: It is explicitly stated to move according to the will or thought-power of its master. This aligns conceptually with modern fields of Brain-Computer Interfaces (BCI) or advanced Automated Control Systems (AI-driven navigation). The Vimana was said to be capable of expanding or contracting its size to accommodate the number of passengers, suggesting a form of adaptive architecture or volumetric flexibility unheard of in typical mechanical engineering.

Propulsion Theories are speculative. Texts like the Vaimanika Shastra describe various propulsion systems, including those based on mercury vortex engines or solar power. Though scientifically debunked for feasibility under current laws, these ideas reflect early attempts to conceptualize powerful, non-combustible energy sources

Pushpaka Vimana is mentioned in Sundara Kanda of Valmiki Ramayan. Lord Hanuman while on his search for Sita Mata in Ravana's palace, he sees the best among all the aerial vehicles which is Pushpaka Vimana. It is to be noted that Ravana had many aerial vehicles and Pushpaka Vimana is just one among them. Abduction of Sita did not take place in Pushpaka Vimana, as Valmiki Ramayana clearly mentions that the aerial vehicle used by Ravana was destroyed in the battle against Jatayu. According to Ramayan, Ravana never made Pushpaka Vimana. It was created by Vishwakarma for Lord Brahma. Later it was given to Kubera. Valmiki Ramayan clearly states that Ravana snatched it after defeating Kubera in a battle. [10] Whatever wonderful aeroplane by the name of Pushpaka, decorated with all kinds of precious stones, made by Visvakarma in heaven for lord Brahma, whatever plane Kubera obtained by great austerity from Lord Brahma, Ravana obtained that plane by prowess defeating Kubera. After the death of Ravana, Vibhishana presented this aerial vehicle to Rama for returning to Ayodhya. Once Rama reached Ayodhya, he returned the Pushpaka Vimana back to its original owner Kubera. [11]

Then, Rama, for his part, spoke to that excellent aerial car, "Serve as a transport to Kubera, the lord. I permit you to leave" These Vimanas have speech recognition. Thus permitted by Rama, that excellent aerial car, thereupon proceeded towards the northern direction, so as to reach the abode of Kubera the lord of riches.[13]

That wonderful aerial car, Pushpaka which was seized by Ravana once, went in speed to Kubera, as impelled by Rama's advice

There the great Hanuma saw a great aerial car, the best among best of aerial cars, shining with the name of Pushpaka with the rays of precious stones, and capable of traveling long distances.

नियुज्यमानाः च गजाः सुहस्ताः
सकेसराः च उत्पल पत्र हस्ताः |
बभूव देवी च कृता सुहस्ता
लक्ष्मीः तथा पद्मिनि पद्म हस्ता ll5.7.14

Images of elephants in a lotus-pool with filaments of lotus on body, with lotus petals held in their trunks, were devoted to the worship of an image of Goddess Lakshmi. And also an image of Goddess Lakshmi with four graceful hands and holding lotus in Her hand was made to exist in Pushpaka. [12]

वहन्ति यम् कुण्डशोभिताननना
महाशना व्योमचरा निशाचराः |
विवृत्तविध्वस्तविशाललोचना
महाजवा भूतगणाः सहस्रशः ll 5.8.6.

The Pushpaka was borne by multitudes of Bhutas whose faces were shining with earrings, who were demons ranging in the night sky. They were gluttons endowed with great speed, and they had big, rolling and frightening eyes.[14]
Also note it had the capacity to accommodate hundreds if not thousands. Number of people Ram had accompanied in it ro return to Ayodhya from Lanka Is the proof. It was in the courtyard of Ravana palace with a mountain like height. Just like we launch spaceship in Srihari Kota

8. Engineering

Ram Setu bridge contruction

It is also called as Adam's Bridge, since they do not sink. The construction of a massive bridge across the ocean to Lanka by the Vanara sena is a major feat of engineering described in this mahakavya. ISRO's Jodhpur and Hyderabad researchers created the first full underwater map of Ram Setu, confirming 99.8% is submerged. Using NASA's ICESat-2 satellite, they mapped from Rameshwaram Island, India, to Mannar Island, Sri Lanka. The text details the use of specific types of wood, floating stones and engineering techniques. These stones are very light, like the pumice stones. Therefore it becomes easy to carry for them. These are described by Vlmiki vividly as poems in Uddha kanda and sarga 22. The structure itself is a real-world geological formation, which some interpretations suggest had a man-made top layer. In Valmiki Ramayan it is mentioned that Shri Rams' army constructed a bridge over the sea between Rameshwaram and Lanka. After crossing this bridge, Shri Rams' army had defeated Ravana. Recently, NASA put pictures on the Internet of a man-made bridge, the ruins of which are lying submerged in Palk Strait between Rameshwaram and Sri Lanka. According to the Ramayana, The Vanara army gathered various natural materials, including massive rocks, trees, and logs, and dragged them to the seashore and they are tied to each other. The text describes some of the stones as "floating stones". Ram Setu was built under the supervision of a monkey army led by Nala and Neel using floating stones, large boulders, rocks, mud, and tree trunks. Nala and Neel are the son's of Vishwakarma, the celestial architect.[12,13] Hence possessed an inherent boon and skill for construction equal to his father. The engineering technique involved filling the shallowest parts of the sea with these materials, creating an embankment or bund. The materials were bound with ropes, and measurements were taken. Scientists propose that the structure is a natural chain of limestone shoals formed by tectonic movements and corals, though evidence of human modification exists. The bridge was described as having a width of ten yojanas and a length of one hundred yojanas. A yojana is an ancient unit of measurement, estimated to be around 8 to 12 miles. The bridge construction of 100 yojanas got over in mere 5days and is written by Valmiki in Ramayana, in Uddhakandam in 22nd sargam. Now some these stones have come ashore. These are exhibited for the public every day.

9. Weaponry and Warfare

1. Astras and Shastras

The epic features various celestial weapons, or astras, invoked by mantras (chants) and possessing immense destructive power.

2. Brahmastra

Described as the most powerful and irresistible weapon, capable of causing widespread destruction, often interpreted as an ancient equivalent of a nuclear weapon. he Nuclear Analogy The Brahmastra is a divyastra (divine weapon) created by Lord Brahma, the Creator, to uphold dharma (righteousness) and satya (truth).. It is not a physical weapon in the modern sense but is invoked by a specific mantra and intense mental concentration, often using an ordinary object (like an arrow or a blade of grass) as a medium. Once discharged, the Brahmastra is generally irresistible and cannot be counterattacked or defended against, except by another equally powerful divine weapon (like another Brahmastra, Brahmashirastra, or the Brahmadanda).It causes widespread environmental destruction , complete annihilation of the target . Descriptions in the

Mahabharata and Ramayana mention that the earth trembling and becoming scorched by a terrible heat. Fierce winds blowing upward, accompanied by a thick gloom. All life in the affected area ceasing to exist, with animals dying and men and women becoming infertile. The land becoming barren, with nothing, not even a blade of grass, growing there for many years (sometimes specified as 12 Brahma years in the case of the more powerful Brahmashirastra). Damages are similar to nuclear explosion. The comparison of the Brahmastra to a nuclear weapon is a popular modern interpretation based on the descriptions of mass destruction, fiery explosions, and long-lasting environmental contamination (like radiation fallout). Some modern speculation suggests that the ancient descriptions of these effects sound similar to the aftermath of atomic blasts observed in Hiroshima and Nagasaki.

However, many scholars view this as a pseudo-scientific claim, emphasizing that the astras are mythological, divine weapons whose power and effects (which could sometimes be precisely targeted or even recalled, as Arjuna did) were subject to the wielder's spiritual power and divine will, unlike modern nuclear physics.

3. Guided Missiles

Some astras are described as being controlled from a distance or returning to their user, drawing parallels to modern guided missiles or reusable projectiles.

4. Defensive Shields

Specific weapons, like the Brahma Danda, were capable of absorbing incoming attacks, similar to modern protective energy fields or shields.

10. Conclusion

दुर्लभं भारते जन्म मानुष्यं तत्र दुर्लभम् l
विप्रत्वम् दुर्लभम् तत्र कृष्णप्रीति: तत्र दुर्लभा…

This verse by Adi sankaracharya considers Shri Krishna's love as rare in human life, but it does not mean that Ram's love is not rare. First it is rare blessing to be born in Bharata desha; It is even rare is to be born as a human, in that to be born as Brahmin is very rare. The latter part of the verse says, it is rarest to be born as Krishna devotee also. Therefore, devotion to both Rama and Krishna is considered rare and important in the Indian tradition. We are proud of India's heritage, culture, thought, culture, science, technology, music, history and especially food we are part of our karma.

भाग्यशाली है जिन्होंने भारत में जन्म लिया।
भाग्यशाली ते सन्ति ये भारते जाताः।
भारते जन्म प्राप्य अहं बहु गर्विता अस्मि। जय भारत माता ।
नाहं कर्ता हरि: कर्ता ।

11. References

1. Dushyanth Sridhar Ramayanam: Vol I, Book
2. https://ramcharitmanas.info/read-ramcharitmanas/
3. https://tamilnation.org/literature/kamban/kambaramayanam.htm
4. https://www.valmiki.iitk.ac.in/sloka?field_kanda_tid=3&language=dv&field_sarga_value=23
5. Pushkar Bhatnagar's book 'Dating the Era of Lord Ram: Discover the Actual Dates of the Lifetime of Lord Ram' (Rupa publication) .
6. Read more at: https://organiser.org/2024/01/07/214704/bharat/sri-ram-in-ayodhya-how-bharat-has-taken-the-world-on-a-journey-from-mythology-to-scientific-verification/
7. https://www.valmiki.iitk.ac.in/sloka?field_kanda_tid=3&language=dv&field_sarga_value=23
8. https://kalyan98.wordpress.com/2007/12/25/ramayana-era-based-on-planetarium-software/
9. https://www.valmiki.iitk.ac.in/
10. Valmiki Ramayana - Sundara Kanda - Sarga 9
11. Valmiki Ramayana - Yuddha Kanda - Sarga 121
12. https://www.valmiki.iitk.ac.in/sloka?field_kanda_tid=5&language=dv&field_sarga_value=8
13. Valmiki Ramayana - Yuddha Kanda - Sarga 127
14. https://www.valmikiramayan.net/utf8/sundara/sarga8/sundarasans8.htm
15. https://www.valmikiramayan.net/utf8/baala/sarga27/balaitrans27.htm
16. Om Prakash, June 2012, Rama Setu a bridge built by Lord Rama Odisha review D:\backup\data\review\or-2012\j
17. Dr. V M Das, Adam's Bridge Formation (Floating of Stones) By Virtue of Prayer Done By Lord Ram rather than Any Miracle Claimed By Hindu Believers . it Was Lawlessness That Triggered By Unconditioned Thought Expression By First order Of Universe (AGE By Quantum Entanglement), IOSR Journal of Research & Method in Education (IOSR-JRME) e-ISSN: 2320–7388,p-ISSN: 2320–737X Volume 7, Issue 6 Ver. VII (Nov. – Dec. 2017)

“विधि का विधान और श्रीरामशलाका” (श्रीरामचरितमानस के विशेष सन्दर्भ में)

राहुल रञ्जन
हंसराज महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
(rahulranjanskt@gmail.com)

भारतीय जीवन-शैली में पूर्वजों का संदेश, सनातन-पद्धति का परिवेश और हिन्दुत्त्व का समावेश – इनसब का बोध एक साथ बहुत ही सहजता से हो जाता है जब हम अपने घर में श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीता को रखा हुआ पाते हैं| श्रीराम मानव जाति के आदर्श हैं| मानवीय मूल्य, सामाजिक मर्यादा और नैतिक नियमों से आबद्ध इनका व्यक्तित्त्व हमसभी के लिए सदैव प्रेरणा का स्रोत रहा है| पारमार्थिक ज्ञान होते हुए भी इन्होनें अपना जीवन और संदेश व्यवहार और यथार्थ के मध्य ही रखा है तभी तो मानव जीवन के विभिन्न पड़ावों में हृदय का साधारणीकरण हो जाता है| श्रीराम और श्रीरामचरितमानस जन-मानस से जुडी वह अवधारणा है जिसके बिना मानव-मूल्यों की परिकल्पना नही की जा सकती| जीवन-दर्शन की सनातन संस्कृति एवं हिन्दुत्त्व की अगुवायी करने वाला श्रीरामचरितमानस वह ग्रन्थ है जिसमें श्रीराम आध्यात्म के पर्याय हैं, जो कि आस्था और श्रद्धा का विषय है, जहाँ तर्क की गति नहीं है| यही कारण है कि तुलसीदास की अन्य कोई याचना या उद्देश्य नहीं रहा, केवल श्रीराम.....!

“कामिहि नारि पियारि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम|
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम||” - उत्तरकाण्ड, दोहा १३०(ख)

(जैसे कामी को स्त्री प्रिय लगती है और लोभीको जैसे धन प्यारा लगता है, वैसे ही हे रघुनाथजी! हे रामजी! आप निरन्तर मुझे प्रिय लगिए|)

1. प्रस्तावना

वास्तविक भक्त का व्यक्तित्त्व और भक्ति का स्वरुप इसी सिद्धांत को बताता है कि भक्त, भक्ति और आराध्य के बीच और कुछ नही| आराध्य ही भक्ति का लक्ष्य होता है, कोई अन्य वस्तु नही | मीरा की भक्ति का विषय और लक्ष्य भी केवल और केवल उनके आराध्य – कृष्ण हैं और कुछ नही| अतः वास्तविक भक्ति में उसके निमित्त भौतिक वस्तुओं, नानाप्रकार की सुख-सुविधाओं का आधान अथवा उनकी वांछा नही रहती है| श्रीराम मानसचित्त के लोकनायक हैं, राजा, रंक, फकीर सबका समावेश है; माता-पिता, गुरु-शष्य, परिवार, समाज, मित्र, राष्ट्र, प्रकृति, जानवर, शत्रु, सेवक आदि सभी का कर्त्तव्य-अधिकार, आचार-व्यवहार, वचन-बद्धता, मर्यादा श्रीरामचरितमानस में श्रीराम के व्यापक व्यक्तित्त्व के अन्तर्गत पठनीय है| इसप्रकार संभवतः ही कोई सांसारिक-विषय श्रीरामचरितमानस से बाहर रहा है| अतः श्रीरामचरितमानस मानव-जीवन-दर्शन का एक ऐसा अभिभावक-ग्रन्थ सिद्ध होता है जो जनमानस की समस्याओं को इंगित करते हुए, उन्हें दर्शाते हुए उनका समाधान करता है|

पारमार्थिक सत्य हो या परम पुरुषार्थ (मोक्ष) की अवधारणा, इस मर्त्यलोक में सांसारिक नियमों की अपनी प्रतिष्ठा है, प्रायः यथार्थवादी दृष्टि ही इस व्यवहार जगत को चलाती है| और इसके चलने-चलाने में सहयोग, सहानुभूति, निर्देशन, अनुभव, आशीर्वाद, मार्गदर्शन, प्रेरणा, उद्देश्य आदि की आवश्यकता स्वाभाविक तो होती ही है साथ ही साथ आवश्यक भी होती है| इस संसार में कोई भी व्यक्ति बिना कर्म किये नहीं रह सकता, मन्द बुद्धि भी कर्म करता ही है| फिर चाहे वह कर्म मन से किया जा रहा हो, वचन से किया जा रहा हो या शरीर से किया जा रहा हो| और जब कर्म होगा तो उसके फल की चिंता भी होगी, चाहे वह अवचेतन मन या मन के किसी कोने में ही स्थान ले कर क्यूँ न बनी रहे – यही यथार्थ है| किसी के द्वारा किया जाने वाला कर्म शुभ अथवा अशुभ हो सकता है, और उसी के अनुसार उसका फल भी| गोस्वामी जी कहते हैं –

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी | ईसु देइ फलु हृदयँ बिचारी ||
करइ जो करम पाव फल सोई | निगम निति असि कह सबु कोई || अयो. का. ७६/४

अर्थात् शुभ और अशुभ कर्मों के अनुसार ईश्वर हृदय में विचार कर फल देता है| जो कर्म करता है वही फल पता है| ऐसी वेद की नीति है, यह सब कोई कहता है| फिर भी अपनी कर्म-फल की जिज्ञासा को शांत करने के लिए मानव यथासमय और यथासंभव प्रयास करता रहता है| शास्त्रों और धर्मग्रंथों में हम यह देखतें हैं कि ईश्वर भी जब इस मर्त्यलोक में अवतरित हुये तो उनका व्यक्तित्व भी इस सिद्धांत से अलग नही रहा| मानस में शंकरजी ने जब सती का त्याग किया तो उस प्रसंग में सती कहती हैं –

"सो फलु मोहि बिधाताँ दीन्हा | जो कछु उचित रहा सोइ कीन्हा ||" – बा.का. ५८/२

(उसका फल विधाता ने मुझको दिया, जो उचित था वही किया|)

2. विस्तार

कर्मफल की दिशा और दशा पर विचार तो होता ही है चाहे वह कर्म करणीय हो या अकरणीय हो| जीवन है तो कर्म होगा ही, तभी तो इसे "कर्मप्रधान" कहा गया है| देवगुरु बृहस्पति कहते हैं –

"करम प्रधान बिस्व करि राखा | जो जस करइ सो तस फलु चाखा ||" अयो. का. २१८/२

(उन्होंने विश्व में कर्म को ही प्रधान कर रखा है | जो जैसा करता है, वह वैसा ही फल भोगता है|)

जब कर्म होगा तब तदनुरूप कमोबेश उसके फल की चिंता भी बनेगी और शुभ-अशुभ की जिज्ञासा भी| मानव जाति का कोई भी वर्ग इस मनोविज्ञान से अछूता नही है चाहे वह आस्तिक हो या नास्तिक, अध्यापक हो या विद्यार्थी, व्यापारी हो या नौकरीपेशे वाला, राजनीतिक हो या प्रशासक आदि| इस जीवन के विभिन्न पड़ावों पर अपना कार्य करते हुए कभी संशय की, तो कभी अनिच्छा की, तो कभी त्याग की, तो कभी परिवर्तन की, तो कभी उलझन की, तो कभी भ्रम आदि की द्वंद्वात्मक स्थितियाँ बनती रहती है – इस उहापोह में हम विचलित होते हैं और मार्ग खोजते हैं, किन्तु मिलता वही है जो हमारे कर्म के योग्य है| तुलसीदास जी कहते हैं –

"भल अनभल निज निज करतूती| लहत सुजस अपलोक बिभूति||" - बा.का. ४/४,५

(भले और बुरे अपनी-अपनी करनी के अनुसार सुन्दर यश और अपयश की संपत्ति पाते हैं|)

लेकिन इसक्रम में मित्र, गुरु, अभिभावक, अनुभवी-व्यक्ति, ज्योतिषी, धर्मगुरु आदि हमारे सामने होते हैं और हम अपने सामर्थ्य और धैर्य की परीक्षा देते हुए आगे बढ़ते हैं| कभी ठगे जाते हैं, कभी पथभ्रष्ट होते हैं, कभी किसी के चंगुल में फँस जाते हैं और फँसते ही चले जाते हैं, तो हमें कभी उदासीनता का अनुभव होता है, तो कभी सफलता मिलती भी है और कभी मृगतृष्णा की तरह मिलती हुई नजर आती है, ऐसे में ऐसी स्थितियों का लाभ उठाने की मंशा रखने वालों की दुकानें भी खूब चलती रहती हैं| यह सत्य है हमसब इसका अनुभव करते ही हैं| हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि हमारा अधिकार केवल कर्म पर ही है, उस कर्म के आधार पर ही हमें सुख-दुःख का भोग करना पड़ता है| मानस में देवता कहते हैं –

"जीव करम बस सुख दुख भागी" ....अयो.का. ११/२

(जीव अपने कर्मवश ही सुख-दुःख का भागी होता है |)

प्रसंगवश भरत को समझाते हुए माता कौशल्या कहती हैं –

"जनि मानहु हियँ हानि गलानी | काल करम गति अघटित जानी ||" अयो.का. १६४/३

(काल और कर्म की गति अमिट जानकर हृदय में हानि और ग्लानि मत करो |)

इसी प्रसंग में और भी कहती हैं –

".....तजिअ बिषादु काल गति जानी ||" अयो.का. १७५/१

(काल की गति को जानकर विषाद का त्याग कर देना चाहिए |)

इसलिए जीवन की विपरीत और विषम परिस्थितियों में हमें शोक नहीं करना चाहिए, अपितु सदैव ईश्वर से यह प्रार्थना अवश्य करनी चाहिए कि हम अच्छे कर्म करें, हमारा प्रयास हमेशा सत्कर्म में ही होना चाहिए |

इस संसार में बड़े-बड़े धर्मगुरु, ज्योतिषी, कर्मकाण्डी आदि मौजूद है| कोई सहजता से हमें मिल जाता है तो किसी से मिलने के लिए महीनों प्रतीक्षा करनी पड़ती है, कोई कम पैसे में काम करता है तो कोई अधिक पैसे लेता है – साधारण मनुष्य उलझता जाता है और इनसब चक्करों में अक्सर हम फंसते चले जाते हैं| हम यह अनुभव करते है की यहाँ केवल समय व्यतीत होता है और आशा बनी रहती है| होता वही है जो हरि की इच्छा होती है, शंकरजी मानस में कहते हैं –

"हरि इच्छा भावी बलवाना".....बा.का. ५५/३

(हरि की इच्छारुपी भावी प्रबल है|)

जब समय आता है तो चीजें अपने आप ठीक होती चली जाती हैं, तभी तो कहा गया है कि "भाग्य से ज्यादा और समय से पहले किसी को कुछ नहीं मिलता|" गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं –

"होइहि सोइ जो राम रचि राखा| को करि तर्क बढ़ावै साखा|| बा.का.५१/४

(जो कुछ राम ने रच रखा है, वही होगा | तर्क करके कौन शाखा (विस्तार) बढ़ावे |)

लोकभाषा में लोग भी कहते रहते है "सब समय का फेर है, सब करम का लेखा-जोखा है|" कर्म की गति को न रोका जा सकता है न ही टाला जा सकता है –सबकुछ ठीक होते हुए भी श्रीराम का वैवाहिक जीवन कष्टमय रहता है| तभी तो राजा दशरथ के वचन, कैकेयी को वरदान, राम का वनवास, दशरथ की मृत्यु आदि प्रसंगों को रेखांकित करते हुए मुनि वसिष्ठ दुःखी होकर भरत को कहते हैं –

"सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ |
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ ||" अयो.का.१७१

(हे भरत! सुनो, भावी (होनहार) बड़ी बलवान् है | हानि-लाभ, जीवन-मरण और यश-अपयश, ये सब विधाता के हाथ हैं|)

सभा में बड़े-बड़े ज्योतिषियों और विद्वानों के रहते हुए भी महाभारत का युद्ध रोका न जा सका|

कबीर भी कहते हैं -

"करम गति टारै नाहिं टरी||
मुनि वसिष्ठ से पंडित ज्ञानी, सिधि के लगन धरि|सीता हरन मरन दसरथ को, बन में बिपति परी||१||
कहँ वह फंद कहाँ वह परिधि, कहँ वह मिरग चरि|कोटि गाय नित पुन्य करत नृग, गिरगिट-जोन परि||२||
पाण्डव जिनके आप सारथी, तिन पर बिपति परी| कहत कबीर सुनो भै साधो, होने होक रही||३||"

होनी तो हो के ही रहती है, चाहे वह सामूहिक हो या व्यक्तिगत | मनुष्य को अपने किये हुए शुभ-अशुभ कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है | देवताओं में भी ऐसा सामर्थ्य नही है जो विधि के लेख को मिटा सकें| गोस्वामी जी कहते हैं –

"कह मुनीस हिमवंत सुनु जो विधि लिखा लिलार |
देव दनुज नर नाग मुनि कोई न मेट निहार ||" बाल. का. ६८

(विधाता ने ललाट पर जो कुछ लिख दिया है, उसको देवता,दानव,मनुष्य,नाग और मुनि कोई भी नहीं मिटा सकता|)

जो कर्म हमने किया है उसको तो भोगना ही है, और जिस कर्म को हमने किया नही वह हमारे सामने आता नही| लेकिन हमलोग प्रायः यह देखते हैं कि कोई व्यक्ति ऐसा है जो बुरे काम कर रहा है, फिरभी वह सुखी-संपन्न है| और कोई व्यक्ति ऐसा है जो बहुत अच्छे कर्म करता हुआ भी दुःखी-दरिद्र है| ऐसा क्यों? कारण यह है कि केवल वर्त्तमान के कर्म को देखकर हम कोई निर्णय नही ले सकते| भारतीय दर्शन-परम्परा के कर्म-सिद्धान्त के अनुसार भी प्रारब्ध को भोगना ही पड़ता है| इस प्रसंग में तीन प्रकार के कर्म बताए गए हैं –

१. क्रियमाण कर्म / संचीयमान कर्म – वह कर्म जो इस जीवन में दैनन्दिन (वर्त्तमान समय में) किया जा रहा है एवं भविष्य में जिसका फल प्राप्त होगा|
२. संचित कर्म – दैनन्दिन या वर्त्तमान समय से पहले किया गया कर्म, वह चाहे इस जन्म का हो या पूर्व जन्म का और जिसका कर्मविपाक (फलभोग) आरम्भ नहीं हुआ है|
३. प्रारब्ध कर्म – जिन कर्मों का या कर्माशयों का फलभोग आरम्भ हो चुका है, अथवा वर्त्तमान शरीर या जीवन में प्राणी जिन पूर्व कर्मों का फल भोग रहा है|

ये कर्म ही कर्मवाद के आधार हैं| जो हमें अपनी दार्शनिक सिद्धांतों से प्राप्त होता है –

१. कृतप्रणाशशून्यता और २. अकृत-अभ्यागमशून्यता | कर्ता के द्वारा किये गए कर्म के सुख अथवा दुःख रुपी फल उसको अवश्यम्भावी रूप से प्राप्त होता है अर्थात् कृत का प्रणाश असंभव है| उसी प्रकार संसार में कर्ता के द्वारा न किये हुए कर्म का फल कभी भी उसे प्राप्त नही होता है अर्थात् अकृत का अभ्यागम असंभव है| जनमानस की भाषा में इसे हम विधाता की रचना भी कह देते हैं .....जिसे टाला नहीं जा सकता| प्रसंगवश अपनी माता को विकल देखकर पार्वती जी कहती हैं -

"जननिहि बिकल बिलोकि भवानी, बोली जुत बिबेक मृदु बानी|
अस बिचारि सोचहि मत माता, सो न टरइ जो रचइ विधाता||" बा. का. ९६ /३

(हे माता! जो विधाता रच देते हैं, वह टलता नहीं; ऐसा विचार कर तुम सोच मत करो|)

लेकिन फिर भी यह संसार मोहात्मक है और हमसब माया से बंधे होते हैं| बहरहाल चाहे दार्शनिक पद्धति हो या आध्यात्मिक सबकुछ कर्म पर ही आश्रित है, भाग्य का निर्माण भी कर्म से ही होता है, कर्मश्रृंखला ही रचना की सामग्री है| ध्यान देने योग्य बात यह है कि कर्म किस रूप में किया जा रहा है, वह शुभ है या अशुभ, करने योग्य है या न करने योग्य? हमें इसका मार्गदर्शन चाहिए....! हमें इसका आध्यात्मिक मार्गदर्शन चाहिए कि हमारा निर्णय लाभप्रद है या नहीं, अथवा हमारे संकल्प की अप्रत्यक्ष गति की दिशा और दशा ठीक है कि नहीं? इसके लिए सबसे सहज, सरल और विश्वसनीय उपाय हमारे पास क्या है? इस विषय पर हमारा आध्यात्मिक अभिभावक कौन है? निःसंदेह श्रीरामचरितमानस की "रामशलाका प्रश्नावली"| आज, प्रतियोगिता और प्रतिद्वन्द्विता के इस समय में हमें आध्यात्मिक मार्गदर्शन चाहिए, चाहे हम जिस क्षेत्र में काम कर रहे हों| विशेष रूप से युवापीढ़ी को जिनपर भविष्य की जिम्मेदारियाँ हैं| हमें ऐसा अभिभावक चाहिए जो निर्णय लेने में हमारी आध्यात्मिक सहायता करे| जिसके लिए हमें बहुत ज्यादा भाग-दौड़ न करना पड़े, व्यर्थ में पैसे खर्च न हो जाए - जो कि अकसर होता है, लेकिन उसका अपेक्षित लाभ हमें नही मिलता| और इसके साथ ही इस क्रम में हमारे विचार या भाव भी उजागर हो जाते हैं, कई बार हमारे न चाहते हुए भी दूसरों के सामने आ जाते हैं, साँझा करना

पड़ता है, उसकी गोपनीयता नही रह जाती|जनमानस एवं लोकहित में ऐसा सर्वसाधारण आध्यात्मिक अभिभावक अथवा उपाय है - श्रीरामचरितमानस की "रामशलाका"| जो पलभर में हमारी समस्याओं का समाधान कर देती है|

चूँकि श्रीराम हमारी आस्था के विषय है, वे हमारे आराध्य हैं, इसलिए उनपर श्रद्धा और विश्वास रखते हुए नौ चौपाइयों में आबद्ध श्रीरामशलाका – किसी कार्य को करने के लिए, जीवन के किसी मोड़ पर उत्पन्न हुई असमंजस की स्तिथि में समाधान के लिए, "किं कर्त्तव्य विमूढ़" वाली कठिन अथवा उलझन भरी परिस्थिति से हमें बहार निकालने के लिए,हमारा प्राथमिक और प्रमुख सलाहकार है| क्योंकि यह श्रद्धा का विषय है, इसलिए यहाँ तपस्या, तर्क और गणित अपना स्थान नहीं ले पाता| अतः यह कोई ज्योतिषीय समाधान या उपाय नहीं देता अथवा इच्छापूर्ति का सिद्धान्त प्रस्तुत नहीं करता अपितु हमारा और हमारे घर का आध्यात्मिक एवं पुस्तैनी अभिभावक है, जो हमारी आस्था और विश्वास होने के वास्ते स्वाभाविक रूप से हमारा पथ-प्रदर्शक है|

श्रीरामशलाका प्रश्नावली का स्वरुप

प्रस्तुत है गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीरामशलाका का यथावत् स्वरुप –

इस रामशलाका प्रश्नावली के द्वारा जिस किसी को जब कभी अपने अभीष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम उस व्यक्ति को भगवान् श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान करना चाहिए| तदनन्तर श्रद्धा-विश्वासपूर्वक मन से अभीष्ट प्रश्न का चिंतन करते हुए प्रश्नावली के मनचाहे कोष्ठ में अँगुली या कोई शलाका रख देना चाहिये और उस कोष्ठक में जो अक्षर हो उसे अलग किसी कागज या स्लेटपर लिख लेना चाहिए| प्रश्नावली के कोष्ठक पर भी ऐसा निशान लगा देना चाहिए जिससे न तो प्रश्नावली गन्दी हो और न प्रश्नोत्तर प्राप्त होनेतक वह कोष्ठक भूल जाए| अब जिस कोष्ठक का अक्षर लिख लिया गया है उससे आगे बढ़ना चाहिए तथा उसके नवें कोष्ठक में जो अक्षर पड़े उसे भी लिख लेना चाहिए| इस प्रकार प्रति नवें अक्षर को क्रम से लिखते जाना चाहिए और तबतक लिखते जाना चाहिए, जबतक उसी पहले कोष्ठक के अक्षर तक अँगुली अथवा शलाका न पहुँच जाए| पहले कोष्ठक का अक्षर जिस कोष्ठक के अक्षर से नवां पड़ेगा, वहाँ तक पहुँचते पहुँचते एक चौपाई पूरी हो जायेगी, जो प्रश्नकर्ता के अभीष्ट प्रश्न का उत्तर होगी| यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि किसी-किसी कोष्ठक में केवल "आ" की मात्रा (ा) और किसी-किसी कोष्ठक में दो-दो अक्षर हैं| अतः गिनते समय न तो मत्रवाले कोष्ठक को छोड़ देना चाहिए और न दो अक्षरोंवाले कोष्ठक को दो बार गिनना चाहिए| जहाँ मात्रा का कोष्ठक आवे वहाँ पूर्वलिखित अक्षर के आगे मात्रा लिख लेना चाहिए और जहाँ दो अक्षरोंवाला कोष्ठक आवे वहाँ दोनों अक्षर एक साथ लिख लेना चाहिए|

सु	प्र	उ	बि	हो	मु	ग	व	सु	नु	बि	घ	घि	इ	द
र	रु	फ	सि	सि	रहि	बस	हि	म	ल	न	ल	प	न	अं
सुज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	ई	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	रा	य
पु	सु	थ	सी	जे	इ	ग	म	सं	क	रे	हो	स	स	नि
त	र	त	र	स	हूँ	ह	व	व	प	चि	स	हिं	स	तु
म	का	ा	र	र	म	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	ा
ता	रा	रे	री	हु	का	क	खा	जू	ई	र	रा	पू	द	त
नि	को	जो	गो	न	मु	जि	यँ	ने	मनि	क	ज	प	स	त
हि	रा	मि	स	रि	ग	द	न्मु	ख	म	खि	जि	म	त	जं
सिं	ख	नु	न	को	मि	निज	कँ	ग	धु	ध	सु	का	स	र
गु	ब	म	अ	रि	नि	म	त	ा	न	हँ	ती	न	क	भ
ना	पु	व	अ	ा	र	त	ा	ए	तु	र	न	नु	बे	थ
सि	हूँ	सु	म्ह	रा	र	स	स	र	त	न	ख	ा	ज	ा
र	ा	ा	ता	धी	ा	री	ा	हू	हीं	खा	जू	ई	रा	रे

उदहारण के तौरपर इस रामशलाका प्रश्नावली से किसी प्रश्न के उत्तर में एक चौपाई निकल दी जाती है| पाठक ध्यान से देखें| किसी ने भगवान् श्रीरामचन्द्रजी का ध्यान और अपने प्रश्न का चिंतन करते हुए यदि प्रश्नावली के * इस चिह्न से संयुक्त "म" वाले कोष्ठक में अँगुली या शलाका रखा और वह ऊपर बताये क्रम के अनुसार अक्षरों को गिन-गिनकर लिखता गया तो उत्तरस्वरूप यह चौपाई बन जाएगी –

हो इ हि सोइ जो राम* रचि रखा | को क रि त र्क ब ढा वै सा खा ||*बा.का.५१/४*

यह चौपाई बालकाण्ड के अन्तर्गत शिव और पार्वती संवाद में है| प्रश्नकर्ता को इस उत्तरस्वरूप चौपाई से यह आशय निकालना चाहिए कि कार्य होने में संदेह है, अतः उसे भगवान् पर छोड़ देना श्रेयस्कर है|

इस चौपाई के अतिरिक्त श्रीरामशलाका प्रश्नावली से आठ चौपाइयाँ और बनती हैं, उन सबका स्थान और फल सहित उल्लेख नीचे किया जाता है| कुल नौ चौपाइयाँ हैं –

१. सुनु सिय सत्य असीम हमारी | पूजिहि मन कमाना तुम्हारी || बा.का.२३५/४

स्थान – यह चौपाई बालकाण्ड में श्रीसीताजी के गौरी पूजन के प्रसंग में है| गौरीजी ने श्रीसीताजी को आशीर्वाद दिया है|

फल – प्रश्नकर्ता का प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा|

२. प्रबिसि नगर कीजे सब काजा | हृदयँ राखि कोसलपुर राजा ||सु.का.४/१

स्थान– यह चौपाई सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है|

फल – भगवान् का स्मरण करके कार्यारम्भ करो, सफलता मिलेगी|

३. उधरहिं अंत न होई निबाहू | कालनेमि जिमि रावन राहू ||बा.का.६/३

स्थान – यह चौपाई बालकाण्ड के आरम्भ में सत्संग-वर्णन के प्रसंग में है|

फल – इस कार्य में भलाई नहीं है| कार्य की सफलता में संदेह है|

४. बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं | फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं ||बा.का.२/५

स्थान - यह चौपाई भी बालकाण्ड के आरम्भ में ही सत्संग-वर्णन के प्रसंग की है|

फल – खोटे मनुष्यों का संग छोड़ दो| कार्य पूर्ण होने में संदेह है|

५. मुद मंगलमय संत समाजू | जो जग जंगम तीरथराजू ||बा.का.१/४

स्थान – यह चौपाई बालकाण्ड में संत-समाजरूपी तीर्थ के वर्णन में है|

फल – प्रश्न उत्तम है| कार्य सिद्ध होगा|

६. गरल सुधा रिपु करहिं मिताई | गोपद सिन्धु अनल सितलाई ||सु.का.४/१

स्थान – यह चौपाई श्रीहनुमानजी के लंका में प्रवेश करने के समय की है|

फल – प्रश्न बहुत श्रेष्ठ है| कार्य सफल होगा|

७. बरुन कुबेर सुरेस समीरा | रन सन्मुख धरि काहुँ न धीरा ||लंका.का.१०३/४

स्थान – यह चौपाई लंकाकाण्ड में रावण की मृत्यु के पश्चात् मंदोदरी के विलाप के प्रसंग में है|

फल – कार्य पूर्ण होने में संदेह है|

८. सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे | रामु लखनु सुनि भए सुखारे ||बा.का.२३६/२

स्थान – यह चौपाई बालकाण्ड में पुष्पवाटिका से पुष्प लानेपर विश्वामित्रजी का आशीर्वाद है|

फल – प्रश्न बहुत उत्तम है| कार्य सिद्ध होगा|

इस प्रकार रामशलाका प्रश्नावली से कुल नौ चौपाइयाँ बनती हैं, जिनमें सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तराशय सन्निहित हैं|

3. निष्कर्ष

श्रीरामचरितमानस हमारी श्रद्धा, भक्ति और विश्वास का वह समन्वय है जहाँ हम अपने आध्यात्मिक अभिभावक को खड़ा पाते हैं| हिन्दुत्त्व की यह परम्परा सनातन और स्वाभाविक है, पद्धति श्रेयस्कर है, जो मानवजाति को विरासत के रूप में प्राप्त है|

अतः श्रीराम में पूरी श्रद्धा रखते हुए हम यह अनुभव करते हैं कि "श्रीरामशलाका" हमारे सांसारिक जीवन और जीवन-शैली में उठाने वाले उन तमाम प्रश्नों का उत्तर देती है, जब उसमें उलझन, उहापोह, द्वन्द्व, संशय, भ्रम, करना चाहिए अथवा नही करना चाहिए – जैसी स्तिथि बनती है|

4. सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

१. सर्वदर्शनसंग्रह - माधवाचार्य,(सम्पा.)उमाशंकर शर्मा'ऋषि',चौखम्बा विद्याभवन,वाराणसी,१९७७
२. षड्दर्शनसमुच्चय - हरिभद्रसूरि,(सम्पा.)महेंद्र कुमार जैन, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,दिल्ली,२००६

३. श्रीरामचरितमानस – गोस्वामी तुलसीदास, गीताप्रेस, गोरखपुर, २०२३
४. श्रीमद्भगवद्गीता – वेदव्यास (शांकरभाष्यसहित), (सम्पा.) वी. सदानन्द, कम्पलीट वर्क्स आफ श्रीशंकराचार्य(भाग-६), समता बुक, मद्रास,१९८३
५. वेदान्तसार – सदानन्द, (सम्पा.) डॉ. राममूर्ति शर्मा, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, १९८९
६. अनुपयुक्त दर्शन तथा नीतीशास्त्र के आयाम – जटाशंकर एवं अम्बिकादत्त शर्मा (डॉ. रमेश चंद्र सिन्हा अभिनन्दन ग्रन्थ) अखिल भारतीय दर्शन परिषद्, न्यू भारतीय बुक कारपोरेशन,दिल्ली,२०१३
७. भारतीय दर्शन का इतिहास – सुरेन्द्रनाथ दासगुप्ता,(अनुवाद – कलानाथ शास्त्री एवं सुधीर कुमार गुप्त), राजस्थान ग्रन्थ अकादमी, जयपुर,१९८८
८. पुरुषार्थचतुष्टय – प्रेमवल्लभ त्रिपाठी, राजविद्या ग्रंथमाला, वाराणसी, १९७०
९. रामचरितमानस का टीका-साहित्य, डॉ. त्रिभुवन नाथ चौबे, संभावना प्रकाशन, सुल्तानपुर,१९७५

रामचरितमानस महाकाव्य की प्रासंगिकता

सन्तोष खन्ना
(santoshkhanna25@gmail.com)

भारत के आदि कवि बाल्मीकि रचित संस्कृत महाकाव्य रामायण और तुलसीदास कृत रामचरितमानस विश्व के एक ऐसे महानतम अनूठे महाकाव्य हैं जिसमें सभी प्रकार के वैश्विक मूल्यों और आदर्श प्रतिमानों का प्रतिपादन किया गया है विशेष रूप से 15वीं शती में रचित यह रामचरितमानस महाकाव्य विविध मानव मूल्यों की दृष्टि से उस समय जितना प्रासंगिक था, आज भी उतना ही प्रासंगिक है और भविष्य में भी उसका महत्त्व कभी कम नहीं होगा। उस समय की परिस्थितियां जन जन के इतने प्रतिकूल थी कि उनकी खुलकर सीधे-सीधे आलोचना व्यवहारिक नहीं थी किंतु तुलसीदास की प्रत्युत्पन्नमति ने रामचरितमानस की रचना कर यह प्रदर्शित किया कि व्यवस्था को कैसा होना चाहिए और मानव जीवन और समाज में मर्यादा और अनुशासन का कैसा महत्व होना चाहिए। इसके लिए उन्होंने पुरातन काल से विदित रामकथा को अपना प्रतिपाद्य विषय बनाया और उसकी ऐसी विलक्षण और अनुपम प्रस्तुति की कि उसका स्वरूप सार्वकालिक और सर्वजनीन हो गया है। अतः कहा जा सकता है कि 'रामचरितमानस महाकाव्य शाश्वत मानव मूल्यों का आकाशदीप है जिसमें वैश्विक दृष्टि है और उस के माध्यम से मानव मात्र के कल्याण की कामना है। रामचरितमानस युगवाणी है जो आधुनिक काल में भी उर्ध्वगामी जीवन दृष्टि और व्यवहार धर्म तथा विश्व धर्म का संदेश देती है।।

1. प्रस्तावना

समूची भारतीय चिंतन परंपरा बल्कि विश्व चिंतन परंपरा और साहित्यिक क्षेत्र में रामचरितमानस का स्थान बेजोड़ है। उसमें प्रतिपादित मानव मूल्य आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने वह उस काल और परिवेश विशेष में से थे जब इसकी रचना हुई थी बल्कि यह भी कहा जा सकता है कि आज के उपभोक्तावाद, बाजारवाद, आतंकवाद, परस्पर प्रतिस्पर्धा और पारिवारिक रिश्तों की सूखती सलिल के संदर्भ में तुलसी द्वारा प्रतिपादित हर विचार और सिद्धांत और भी अधिक प्रासंगिक हो उठे हैं।आज भारतीय मानस भारत की प्राचीन समृद्ध संस्कृति से विमुख हो आयातित संस्कृति विचारधारा और जीवन शैली को गर्व से अपना रहा है और इसका परिणाम यह हुआ है कि समाज में सब ओर हिंसा, अपराध, अराजकता और अफरातफरी का माहौल बन चुका है और पारिवारिक पद्धति भी विघटन के कगार पर है। लगता है कि अब तक की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक उपलब्धियां कहीं उन में तिरोहित न हो जायें। ऐसे में भारतीय समाज को सायास रामचरित मानस में दिग्दर्शक मार्ग पर चल कर अपनी खोई सांस्कृतिक सम्पदा को पुनः अर्जित करना होगा।

2. विस्तार

सामान्यतया भारतवासी पूरी पृथ्वी और विश्व के सभी मानवों को एक परिवार की तरह मानते हैं। उसकी हर प्रार्थना में यही भाव व्यक्त होते हैं। यथा धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सद्भावना हो, विश्व का कल्याण हो। ईश्वर हम सभी को बुराई, असत्य और अधर्म के विरुद्ध खड़े रहने की शक्ति प्रदान करें। हमारे वेदों और उपनिषदों में भी मानवीय उदात्त विचारों का ही प्रतिपादन किया गया है। प्राणीमात्र को अच्छे चरित्र वाला बनाने के भी कई प्रेरक मंत्र हैं। इस संबंध में पूरा मंत्र देखिए:-

'अयम् निज: पेरो वेती गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानां तु वसुधैव कुटुंबकम्।'

यह मंत्र महोपनिषद और अन्य ग्रंथों में विद्यमान है। यह मंत्र भारतीय प्राचीन संस्कृति और सनातन धर्म की मूल भावना को प्रतिपादित करता है। इस मंत्र का मूल भाव यह है कि भारतीय धर्म, भाषा, जाति पाति, क्षेत्र और देश के भेदभाव के बिना संपूर्ण पृथ्वी और मनुष्य जाति को एक परिवार मानते हैं। वसुधैव कुटुंबकम का मंत्र यहां के निवासियों का आधारभूत अध्यात्म है, सोच है, दर्शन है, जीवन शैली है। इसी संस्कार ने भारतीयों की मानसिकता में इतना घर कर लिया है कि भारत ने कभी किसी अन्य देश को अपने आधिपत्य और अधिकार में लेने के के लिए कभी किसी पर आक्रमण नहीं किया। समय-समय पर बाहरी आक्रांता भारत पर आक्रमण कर इस देश को अपने आधिपत्य में लेते रहे तो भी भारत ने इसी उदार और उदात्त सोच के कारण स्वयं को कभी यह युयुत्सु संस्कार नहीं दिया। यह उसकी शक्ति कहो या कमजोरी, वह बाहरी आक्रांताओं से एकजुट होकर उनसे लोहा नहीं ले सका चाहे उसके लिए उसे सदियों तक कितने ही विपरीत परिणाम क्यों ना भुगतने पड़ें हों। बाहरी आक्रांताओं ने न केवल इस देश को लूटा और सभ्यता और संस्कृति को नष्ट करने का निरंतर प्रयास किया, यहां तक कि धार्मिक मान्यताओं को कुचलने के लिए यहां के

हमारे देशवासियों का धर्म परिवर्तन किया। इतिहास गवाह है कि पहले आक्रांताओं ने यहां के वासियों का धर्म परिवर्तन कर उन्हें इस्लाम धर्म में शामिल कर लिया। बाद में इसाई मिशनरियों ने भी यहां लोगों को ईसाई बनाना शुरु किया और यह प्रक्रिया इस समय भी कुछ सीमा तक जारी है।

भारत ने इस उदात्त संस्कृति के कारण चाहे कितने ही विपरीत परिणाम भुगते हों या भुगत रहा हो, किन्तु वसुधैव कुटुंबकम् का संस्कार हमारी आदत और आचरण में शुमार हो कर रह गया है। इसलिए मध्यकाल के अंधे युग में जब महाकवि तुलसीदास राम चरित मानस की रचना कर रहे थे तो भी वह 'सर्वभूतहिते रत्ता' की भावना का महिमामंडन कर रहे थे। वह मानस में श्री राम के मुखारविंद से कहलाते हैं;

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।

अर्थात् दूसरों की भलाई के समान दूसरा कोई धर्म नहीं है। जो व्यक्ति दूसरों को सुख देता है, दूसरों की भलाई कर के प्रसन्न होता है, उसके समान संसार में कोई भी व्यक्ति सुखी नहीं है और दूसरों को पीड़ा पहुंचाना बहुत बड़ा पाप है।

मनुष्य की यही भावना उसे भ्रातृत्व की भावना से जोड़ती है। विश्व बन्धुत्व की भावना का विकास ही अन्ततः विश्व शान्ति एवं प्रेम की स्थापना को सम्भव कर सकता है। इसी भावना को आधार बनाकर गोस्वामी तुलसीदास ने पारिवारिक मूल्यों को इतना उदात्त रूप दे दिया है क्योंकि परिवार के अंदर रहकर ही मनुष्य का पर उपकार की भावना से साक्षात्कार होता है। परिवार में परहित की यही भावना का विस्तार विश्व परिवार की भावना का रूप ले लेता है। परिवार विश्व की वह लघु स्थली है जहां मनुष्य में उदात्त भावनाओं का परिपाक होता है। तुलसीदास ने अपने पात्रों के माध्यम से परिवार में प्रेम, स्नेह, त्याग और अन्य उच्च कोटि के सदाचार और शिष्टाचार का प्रतिपादन किया हैं। तुलसीदास माता -पुत्र, पिता -पुत्र, भाई -भाई, पति-पत्नी, मित्र -मित्र, ससुर -बहू, सास- बहू ,भाभी -देवर आदि रिश्तों में उदात्त मूल्यों के माध्यम से एक आदर्श व्यवस्था चाहते हैं।

वर्तमान में पारिवारिक रिश्तों के क्षरण के संदर्भ में हमें चेतना होगा और तुलसीदास कृत रामचरितमानस मानस में जिन रिश्तों का उदात्तीकरण किया गया है उनका अनुशीलन कर हमें पारिवारिक एकता को पुनः स्थापित करना होगा।

राम विश्व संस्कृति के अप्रतिम महामानव है। यद्यपि मानस में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का ऐसा चरित्र चित्रण किया गया है कि वह न केवल आदर्श पुत्र हैं, आदर्श पति हैं, आदर्श भाई हैं मित्र हैं यहां तक कि वह दुश्मन के प्रति भी आदर्श व्यवहार करते हैं। इसी प्रकार, नारीत्व का उदात्त आदर्श सीता का चरित्र समूची मानव जाति के लिए अत्यंत प्रेरक है। वर्तमान काल में स्वतंत्रता के भ्रम में स्वछंदता का मार्ग चुन कर दिग्भ्रमित होती नारी को अब भी सीता के उदात्त चरित्र से सीखने की जरूरत है। इस तरह तुलसी ने मानस में जिस प्रकार पारिवारिक और मानव मूल्यों की स्थापना की है वे परिवार,समाज, देश और विश्व के लिए आज भी बहुत उपयोगी हैं। राम जैसा पुत्र बहुत पुण्य प्रताप से मिलता है। मानस में तुलसीदास सन्तान के मां बाप के प्रति कर्तव्य को रेखांकित करते हुए राम से कहलाते हैं:-

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी,
जो पितु मातु वचन अनुरागी।
तनय मातु पितु तोष निहारा
दुर्लभ जननी सकल संसारा।

अर्थात् हे माता! सुनो वही पुत्र भाग्यशाली हैं जो माता-पिता के वचनों का पालन करने वाला है। हे माता ! माता पिता को संतुष्ट रखने वाला पुत्र सारे संसार में दुर्लभ है।

राम का राज्याभिषेक होने वाला है और उसे मिलता है चौदह वर्ष का बनवास। वर्तमान काल में जो परिवारों की स्थिति हो गई है उसमें आप सोच भी नहीं सकते कोई बेटा राम जैसे त्याग की भावना से संप्रक्त होगा। आजकल मां बाप को बच्चों से ही ड़र लगने लगा है। आज इस कलिकाल में संतान को उनके भले के लिए समझाना भी मुश्किल हो गया है। मां बेटे की भलाई के लिए उससे कहती है कि वह कंप्यूटर पर खेल में समय न गंवा कर अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान दे। बेटे को अपनी मां का मना करना अच्छा नहीं लगता और वह मां की हत्या ही कर देता है। कोई दूसरा बेटा मां से नशे करने के लिए पैसे मांग रहा है और मां जब पैसे देने से मना करती है तो वह उसे चाकू से गोद देता है। प्रायः ऐसी घटनाएं रोज पढ़ने सुनने में आ रही हैं। आज की संतान को हम सद्संस्कार नहीं दे पा रहे हैं। मानस के राम इतने संस्कारी है:

प्रात काल उठ के रघुनाथा ,
मातु पितु नावहिं माथा।

इसी प्रकार, नारी के कर्त्तव्य के बारे में मानसकार ने राम से कहलाया है कि
कि नारी का धर्म है वह सास ससुर का पूरा सम्मान करें:

एहि ते अधिक धरम नहीं दूजा
सादर सास ससुर पद पूजा।

इसी तरह मानस कार ने सास ससुर के बहुओं के प्रति धर्म का भी उल्लेख किया है।दशरथ अपनी कौशल्या आदि रानियों से कहते हैं;-

‘वधु लरिकनी पर घर आई/
राखेहु नयन पलक की नाई।’

अर्थात् बहू अभी बच्ची है पराए घर से आई हैं इनको इस तरह से रखना जैसे नेत्रों को पलकें रखती हैं अर्थात् जैसे पलकों में आंखें सुरक्षित रहती है, सास ससुर का अपनी बहुओं के प्रति यदि इसी प्रकार का भाव हो तो पारिवारिक जीवन कितना खुशहाल हो जाए। आजकल परिवारों में सास और बहू के कारण घरों में अशांति देखने को मिलती है। बहूएं भी संयुक्त परिवार में न रहकर अपना अलग रहना चाहती है अथवा सास ससुर उन्हें वह स्नेह और मान सम्मान नहीं दे पाते जो वे अपनी बेटियों को देते हैं जबकि बहू अपना मायका छोड़ कर एक पराए घर को अपनाती है इस संबंध में आज के लिए मानस से बहुत कुछ सीखा जा सकता है।

मानस में भाईयों के बीच परस्पर प्रेम प्यार भी एक मिसाल है। जब राम को चौदह वर्ष का बनवास मिलता है तो लक्ष्मण उसके साथ जाने की जिद्द करते हैं और उनके साथ जा कर ही मानते हैं। राम का भरत के प्रति स्नेह और विश्वास अप्रतिम है। जब भरत रामचंद्र को वन से वापस चलने के लिए मनाने उनके पीछे बन में जाते हैं तो लक्ष्मण उनकी भ्रातृप्रेम भावना को समझ नहीं पाते और वह भरत के बारे में टिप्पणी करते हैं कि भरत अयोध्या का राज पा कर राजमद में अंधा हो रहा है तो राम का भरत के प्रति विश्वास देखिए। राम कह उठते हैं,:

भरतहि होई न राजमद
विधि हरि हर पद पाई
कबहुं कि कांजी सीकरन
हरि सिंधु बिनसाई।

आज भारत ही क्या समूचा विश्व आतंकवाद के गिरफ्त में फंसा है। रामचरितमानस में भी राक्षस वर्ग आतंकवादियों की भूमिका में थे जिसका केंद्र लंकापति रावण था। उस समय भी नारी उत्पीड़न और नारी अपहरण की समस्या थी। मानस में तुलसी कहते हैं:-

‘करहिं उपद्रव असुर निकाया।
नाना रूप धरि करि माया।।
जेहि-जेहि देस धेनु द्विज पावहिं।
नगर पुर गांव आग लगावहिं।। ‘

रामचरित मानस के अरण्य काण्ड में राम ऋषि मुनियों से मिलते हैं तो एक जगह अस्थि-समूह देख कर वह पूछते हैं कि यह सब क्या और क्यों कर है तो राम जी को वह बताते हैं कि यहां राक्षसों ने उत्पाद मचा रखा है और वह ऋषि मुनियों को मार कर खा जाते हैं तो तब राम जी ऋषि-मुनियों को उनकी रक्षा का वचन देते हैं और उन्होंने
धरा को निशाचरहीन करने के लिए शपथ खाई थी। तुलसीदास की इस संदर्भ में यह चौपाई देखिए:

‘निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाई पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमनि्ह जाइ जाइ सुख दीन्हा।।’

अर्थात् राम जी ने भी आतंकवाद के प्रति ज़ीरो टॉलरेंस के सिद्धांत को अपनाया था। भारत भी आतंकवाद का भी कई बार शिकार हुआ है और हो रहा है। कश्मीर में आतंकवादी गतिविधियों से भारतीय जन को बहुत कष्ट उठाने पड़े हैं। वहां तो दशकों से एक भरी पूरी सेना उनको नियंत्रित करने के लिए तैनात हैं और समय समय पर हमारे सैनिक अपने जीवन का बलिदान देते आ रहे हैं। जम्मू कश्मीर में पहलगाम में छः महीने पहले हुए आतंकी हमले के बाद भारत ने आतंकवाद के खिलाफ जीरो टोलरेंस की नीति के अंतर्गत आपरेशन सिंदूर किया और उसमें पाकिस्तानी आतंकी ठिकानों को तबाह किया और सौ डेढ़ सौ आतंकियों को मार गिराया। तब सेना के अधिकारी प्रवक्ता ने तो आपरेशन सिंदूर के संदर्भ में रामचरितमानस के उस प्रसिद्ध दौहे का उदाहरण देते हुए कहा था कि ‘भय बिन होय न प्रीति

अभी भारत के अंदर दिल्ली में लाल किले के पास बहुत बड़ी आतंकवादी घटना हुई। संबद्ध एजेंसियां इन आतंकवादी तत्वों से सख्ती से निपटने का प्रयास कर रहीं हैं। आतंकवाद के प्रति जीरो टॉलरेंस की नीति को पूरी तरह अंजाम देना होगा।

3. निष्कर्ष

वर्तमान युग में क्षरित हो रहे मानव मूल्य के संदर्भ में रामचरितमानस में प्रतिपादित मानवीय मूल्यों की अत्यधिक ज़रूरत है। राम ने अपने जीवन में जिन मर्यादाओं की स्थापना की थी उनको आज़ हर आदमी को जीवन में उतारने की ज़रूरत है। राम ने जीवन संघर्ष में शौर्य के साथ-साथ धैर्य और त्याग का भी परिचय दिया था। राम ने अपने जीवन में जो विलक्षण त्याग किया था वह अन्यत्र दुर्लभ है। उच्चतर जीवन मूल्यों के साथ जीना और अन्याय के विरुद्ध युद्ध करना ही राम का रामत्व है। आज की घोर प्रतिस्पर्धात्मक राजनीति के संदर्भ में अगर मानस में प्रतिपादित आदर्शों को अपनाया जाए तो राष्ट्र ख़ुशहाल हो सकते हैं।

आज के आत्मकेंद्रित समय में रिश्ते नाते बेमानी हो गए हैं और परिवार व्यवस्था का क्षरण हो रहा है । किंतु राम परिवार की तरह मर्यादाओं का अनुपालन कर हम इस दल-दल से बाहर निकल सकते हैं । मानस में पर्यावरण- प्रदूषण जैसी वैश्विक समस्या का भी समाधान मिल जाएगा । मानस में जब 'सिया राम मैं सब जग जानी'' की बात की जाती है तो उसके माध्यम से जिस समष्टि की बात की जाती है उसमें संपूर्ण जीव -जगत् सम्मिलित है। तुलसीदास एक स्थान पर कहते हैं फल तोड़ कर खाना अच्छा है लेकिन पेड़ काटना अपराध है ।भारत में धर्म और भाषा के विवाद का उल्लेख करते हुए तुलसीदास ने मानस में समन्वय का भाव को दिखाया है। उत्तर का गंगाजल रामेश्वर में चढ़ता है तो वह राममय हो जाता है। राम शिव भक्त हैं राम दक्षिण में जाकर शिव की पूजा करते हैं। राम का यह अभियान उत्सव उतर - दक्षिण की एकता स्थापित करने का प्रयास है। अतः रामचरित मानस को आज अपना आदर्श बनाइये और शांति का जीवन बिताइये।

जब पारिवारिक रिश्ते धन, बल और बाजार के आधार पर तय होने लगे हैं, ऐसे में हम रामचरितमानस का अनुशीलन करेंगे तो हमारी चेतना का भी परिपाक होगा और हम मानव मूल्यों से प्रेरित होकर उन्हें अपने जीवन में उतारने के लिए क्रियाशील हो उठेंगे ऐसे में मानस में प्रतिपादित मूल्य नई आशा की किरण लेकर आते हैं।

4. संदर्भ

1. महोपनिषद, 6. 71-75
2. तुलसीदास कृत रामचरितमानस
3. 'रामचरित की प्रासंगिकता' , लेखिका: डॉ शकुन्तला कालरा
4. डॉ शकुन्तला कालरा की पुस्तक 'रामचरितमानस की प्रासंगिकता', एक विवेचन, समीक्षात्मक आलेख, सन्तोष खन्ना, नवग्रह टाइम्स समाचार पत्र दिनांक 9 फरवरी,2024
5. रामचरित मानस और सीता की कर्मठता आलेख, नवग्रह टाइम्स समाचार पत्र, 10 अप्रैल, 2024
6. रामचरित मानस में परिवार का महत्व आलेख - सन्तोष खन्ना
7. अध्यात्म संदेश आन-लाइन मासिक पत्रिका,
8. उज्जैन
9. ' मैं सुकुमारी नाथ बन जोगू' आलेख

मानस में संज्ञा

विनीता मिश्रा
(mishravinita07@gmail.com)

भगवान शंकर के मानस में बसी रामकथा जो माता पार्वती की विशेष अनुनय पर भगवान शंकर ने विशेष कृपा करते हुए उन्हें सुनाई, बताई और समझाई. यदि माता पार्वती की विशेष विनय न होती और भगवान शंकर की विशेष कृपा न होती तो हम सब रामचरितमानस के इस अपरिमित आनन्द से वंचित रह जाते. मानस में बसे ज्ञान और प्रेम अनादि-अनंत तो होते ही हैं, गूढ़-गहन भी होते हैं. उस अथाह आनन्द सागर की थाह पाना तो दूर दर्शन भी संभव नहीं. धन्य हैं माँ पार्वती जिनकी जिज्ञासा ने सुनने की इच्छा उत्पन्न की और कृपा है महादेव की कि उन्होंने मन में बसे इस सरोवर को वाणी की गंगा के द्वारा पार्वती को माध्यम बना संसार के कल्याण और आनन्द के लिए प्रवाहित कर दिया. शंकर ने अपने शीश पर जटाओं के ही मध्य में गंगा को नहीं समो रखा था बल्कि रामकथा के आनन्द रस की एक और गंगा अपने मानस में समो रखी थी. शीश वाली गंगा का रस तो जल था जिसे भगीरथ के तप ने संसार के लिए जलधार के रूप में संसार तक पहुंचाया. पर मानस के सरोवर का आनन्द रस वाणी रस के रूप में संसार तक पहुंचा.और वाणी के प्रवाहित होने के माध्यम हैं शब्द. वाणी और शब्द दोनों ही में तत्व तो एक ही है. गोस्वामी जी ने इस रहस्य को उजागर करने के लिए ही लिख दिया है:-

गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न.

वाणी जिन शब्दों के द्वारा रामकथा का बखान कर रही है उन शब्दों के अर्थ शंकर के मानस में बसे भाव ही तो हैं. जो भाव हैं, वे अर्थ हैं और जो वाणी है वह शब्द हैं. आज मानस के शब्द आगार से हम संज्ञा विमर्श के द्वारा कुछ देर इस मानसरोवर में डुबकी लगायेंगे. संज्ञा शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत शब्द संज्ञ से हुई है जिसका अर्थ है- नाम या परिचय.

अब आते हैं मानस में संज्ञा पर, मुझे तो लगता है सब संज्ञाओं के शीर्ष पर एक ही संज्ञा है और वह है- परमेश्वर का नाम- **राम.**

पर इस राम से परिचय कराने के लिए पहले नाम से परिचय करना आवश्यक है. नाम के पश्चात उनके गुण से परिचय करना आवश्यक है. अतः गोस्वामी जी ने राम के नामों का अथाह भण्डार इस मानस के माध्यम से हमें सौंप दिया है.

'नाम न जाने गुण जानें तो, शायद जाने राम को.
गुण की परख मानव कर ले तो फिर पहचाने राम को.'

मानस की विशिष्टता है कि गुण बताकर गोस्वामी जी चरित को जनवा देते हैं. सामान्यत: हम किसी के गुण के बारे में बात करें तो यह अमुक व्यक्ति की विशेषता होगी और उसके लिए विशेषण होगा. किन्तु मानस में यह विशेषता व्यक्ति विशेष के नाम को उजागर कर देती है, उसका परिचय बन जाती है. अंग्रेजी में इन्हें **एपिथेट** कहते हैं, हिंदी में हम इन्हें **'नाम विशेषण या विशेषण नाम, विशेष नाम या गुणवाचक नाम'** भी कह सकते हैं. पर मानस के अंदर यह विशेषता है कि यह विशेष नाम उनके भक्तों और प्रियजनों के लिए गुणवाचक नाम ही उनके प्रिय नाम और संबोधन बन गए. जैसे माता पार्वती माता सीता को मनचाहे वर की प्राप्ति के लिए वर का नाम नहीं बतातीं, कहतीं हैं- **'करुनानिधान सुजान सीलु सनेह जानत रावरो.'** और जब अशोक वाटिका में हनुमान जी का माता सीता से साक्षात्कार होता है तो हनुमान अपना परिचय राम दूत के रूप में देते हुए कहते हैं - **'राम दूत मैं मातु जानकी. सत्य सपथ करुनानिधान की.'** इन दोनों प्रसंगों में राम के गुणवाचक नाम की गहनता और गूढ़ता दोनों छिपी हैं. साथ ही देखिये तो माता पार्वती यह आशीश सिया को दे रहीं हैं क्योंकि सिया राम की है और राम को ही सिया मिलेंगी. किंतु लंका के अशोकवन में हनुमान **मातु जानकी** कह रहे हैं. राम की सिया का अपहरण कौन कर सकता है? जनकनन्दिनी जानकी का अपहरण हुआ है और हनुमान उन्हें फिर वही विश्वास दिला रहे हैं जो वरदान और आशीष के रूप में माता पार्वती ने सिया को दिया था. इस प्रकार विभिन्न संज्ञाएँ मानस के कोड हैं, इनमें बड़े गूढ़ रहस्य छुपे हैं. **कृपानिधान** की कृपा हो जाये तो मनुष्य इन्हें डिकोड कर सकता है. अब देखिये गोस्वामी जी ने इन संज्ञाओं में किस प्रकार सीता और राम दोनों को पिरो दिया है. इन कुछ संज्ञाओं को जो विशेष नाम हैं देखिये तो इसमें स्त्रीलिंग और पुर्लिंग दोनों का समावेश है - **करुनानिधान, करुनाकर, करुनासिंधु, करुणासागर, करुणानिकेत, करुनाअयन** आदि. इन विशेष नामों में जो भगवन्नाम संज्ञा हो गए हैं; करुना माता सीता हैं तो सिन्धु, निकेत, सागर आदि राम.

ऐसा ही कृपा, दया आदि के साथ है.

कुछ ऐसे एपिथेट जिनमें दोनों ही शब्द पुर्लिंग हैं, जैसे - **सुखधाम, सुखकंद, सुखसागर**; ये भगवान के गुण रूप को सगुण करने वाली संज्ञा हो चुके हैं. जबकि सुख, तो एक निर्गुण भाव है जो अनुभवगम्य है, देखा या दिखाया नहीं जा सकता किन्तु राम का नाम होकर वह भी सगुण हो गया है. **अखिलेश्वर, जगतपति, जगदीश, जगदाधार, जगदम्बा** ये संसार और संसार के स्वामी रूप को बताने वाली संज्ञाएँ है. इसके साथ ही वंश आधारित संज्ञाएँ - **रघुकुलतिलक, रघुराया, भानुकुलनाथा.** भगवान के लिए बड़े ही सुन्दर गहरे अर्थ वाले विशेष नाम गोस्वामी जी ने लिए हैं- **रमापति, सियापति \ वर, जानकीबल्लभ,** आदि. अब यह आपको खोजना है कि किस संज्ञा का उपयोग उन्होंने कहाँ और क्यों किया है? नारद प्रसंग में वे **रमापति** हैं क्योंकि राम की क्रिया स्वरूपा रमा ही तो नारद को माया में उलझा रही हैं, सांसारिक माया से बचाने के लिए. इसी तरहआप खोजेंगे तो इन नामों की महिमा भी जानेंगे और भगवान की लीला भी.

यहाँ तक कि गोस्वामी जी ने शत्रु आधारित नाम से भी उन्हें गाया है - **खरारि, रावनारि, असुरारि, त्रिपुरारि, पुरारि** आदि. एक उदहारण :- **खरारि नाम का उपयोग महत्ता और तात्पर्य:-** 13 बार इसका उपयोग हुआ है. 14 वर्ष के वनवास में 14 हज़ार सैनिकों को अकेले पराजित कर समाप्त किया. सबको अपना रूप दे दिया, सब आपस में लड़ मर कट गए. सारूप्य मुक्ति का प्रसंग है यह. खर का अर्थ - खरपन, सख्त, कठोर, तीक्ष्ण, हानिकर, अमांगलिक, मूर्ख, अशोभनीय-भद्दा, दूषण का भाई, दूषण दोष है और खर द्वेष भावना है. द्वेष भावना बहुत बड़ा दोष है. इस तरह की संज्ञाओं को रचकर गोस्वामी जी प्रभु राम के सर्वव्यापी रूप को तो स्थापित करते ही हैं. साथ ही यह भी समझाने का प्रयास करते हैं कि प्रभु स्वयं तो शोभासिन्धु ही हैं परन्तु अपने भक्तों के भीतर के इस खरपन जैसे दोष के ऐसे शत्रु हैं कि उसका नाश कर अपने भक्तों को भी सुन्दर रूप स्वरूप प्रदान करते हैं. अतः इस संज्ञा के साथ आप कृपालु या सोभा सिंधु जैसे विशेषण पायेंगे. ऐसी संज्ञाओं पर शोध करना अपने आप में एक विलक्षण शोध कार्य होगा. जो प्रभु की विलक्षणता को और भी उजागर करेगा.

कृपासिंधु खरारि, सोभा सिन्धु खरारि (प्राकट्य प्रसंग), कृपालु खरारि.

भगवान कितने बड़े कृपालु और दयालु हैं कि अपने शत्रु का नाम भी धारण कर उन्हें भी स्मरणीय बना दिया. इस भाव को अगर आपने अनुभव कर लिया तो भगवान से प्रेम किये बिना रह नहीं पायेंगे.

भगवान के अंग और शस्त्र को भी गोस्वामी जी ने भगवन्नाम से सुशोभित होने का अवसर दे दिया - **राजीवनयन: कमल के समान नेत्र वाले राम, आजानुबाहु: जानु तक पहुँचने वाले जिनके हाथ हैं वह राम, जानु का अर्थ घुटना आजानु का अर्थ घुटनों तक, सारंगपानी: जिनके पाणि में शारंग धनुष है, पाणि अर्थात हाथ.** अपने भक्तों के शत्रुओं (जो वास्तव में उसके दोष और विकार ही हैं) का नाश करने के लिए ही गोस्वामी जी को भगवान का यह **धनुर्धर** रूप बड़ा प्रिय है और वह उन्हें बार बार **धनुपानी** कह उठते है. यदि राम **शारंगपाणि** हैं तो भगवान शंकर को गोस्वामी जी **शूलपाणी** के नाम से गाते हैं.

शंकर को बार बार **पुरारि अर्थात त्रिपुरारि** कहा है. क्यों कहा है? तीनों लोकों में जिस असुर का बोलबाला है वह हैं अहंकार. और शंकर इसी अहंकार का तीनों लोकों में तीनों काल में नाश करते हैं.

सती को कब **सती** कहा कब **दक्षसुता** नाम से गाया? अगर इस रहस्य को समझना चाहते हैं तो वह इन नामों में ही छुपा है. अगस्त्य मुनि के पास शंकर के साथ गईं तो **सती भवानी** पर लौटीं **दक्षसुता…**

एक बार त्रेता जुग माहीं. संभु गए कुम्भज रिसि पाहीं.
संग सती जगजननि भवानी. पूजे रिसि अखिलेस्वर जानी.
मुनि संग बिदा मागि त्रिपुरारी. चले भवन संग दच्छकुमारी.

सती जिनका गुण है सत को धारण करना, जब सत को धारण करती हैं तब **जगज्जनी, भवानी** हैं किन्तु जैसे ही उनकी दक्ष प्रदत्त कुशल, दक्ष बुद्धि में शंका का समावेश होता है असत भाषण कर बैठती हैं. यह बुद्धि ही हैं जो जीव का कल्याण भी कर सकती है और सर्वनाश भी…..

इसी तरह हम लोग माता सीता के नाम - **जनकनन्दिनी, मिथलेशकुमारी, वैदेही, जानकी** आदि संज्ञाओं पर मंथन कर माँ जानकी के जगदम्बा स्वरूप और लीला रूप को और अधिक समझ सकते हैं. एक उदहारण देखिये:-

सत्यसंध प्रभु बधि करि एही. आनहु चर्म कहति बैदेही.

वैदेही; जो विदेह पुत्री है अर्थात् देहभाव से मुक्त है वह देह के ऊपरी आवरण चर्म पर मोहित हो रही है और उसको प्राप्त करने की इच्छा कर रही है वह भी प्रभु राम से. दोनों ही ऐसा जाने कितना कुछ पीछे ऐसे छोड़ आये हैं जैसे मार्ग का पथिक मार्ग में पड़ने वाले पेड़, उसकी छाया आदि छोड़ आता है.

यह संज्ञा माँ के लीलास्वरूप को दिखा रही है. क्योंकि प्रभु के लिए गोस्वामी जी लिखते हैं:-

तब रघुपति जानत सब कारन. उठे हरसि सुर काज सँवारन.

रघु के वंशज, जो अपने आचरण और कर्त्तव्य पालन से रघुपति हो गए यह संज्ञा प्रभु राम के ईश्वर और नर दोनों ही रूपों का दर्शन कराती है.

इसी तरह हनुमान के नाम: - पवनसुत; जब देवताओं ने उन्हें लंका के लिए जाते देखा तो पवन देव के पुत्र किन्तु जब मेघनाद से युद्ध कर रहे हैं तब **प्रभंजनजाया**. पवन देव के विनाशकारी रूप के द्वारा जन्मे हनुमान जिन्हें इन्द्रजीत भी जीत नहीं पा रहा है-

उठि बहोरि कीन्हसि बहु माया. जीति न जाइ प्रभंजनजाया.

पवन वही है किन्तु एक देवस्वरूप, कल्याणकारी और दूसरी आँधी तूफान जैसी विनाशकारी.

इसी प्रकार हम वनों के लिए, पर्वतों के लिए, वृक्ष, नगर आदि के लिए प्रयुक्त संज्ञाओं का मंथन करेंगे तो इस कथा के अनेक गूढ़ तत्व नवनीत के रूप में हमारे सामने आयेंगे.

शंकर के लिए - अखिलेश्वर, कैलाशपति, महादेव, उमानाथ, उमापति, उमेश; गरुण के लिए - **खगराज, खगनाथ, नभग, उरगारि, पन्नागरि, हरिजान, खगेश, आदि... आदि.. आदि.**

गोस्वामी जी ने गुण आधारित नामों का इतना प्रयोग क्यों किया है इसका आधारभूत कारण वे आरंभ में ही बता देते हैं -

रूप बिसेष नाम बिनु जानें. करतल गत न परहिं पहिचाने.

तो अब यह रूप विशेष है या विशेष नाम है या फिर रूप और नाम का जो शाश्वत सम्बन्ध है उस गुण को हम इन संज्ञाओं में पा सकें ऐसा चाहते हैं वे....

रूप बताओ, नाम बताओ, गुण बताओ कहीं न कहीं से तो मनुष्य को राम के नामों में राम का दर्शन हो जाये क्योंकि कलयुग में राम का नाम अवतार ही हुआ है. इसलिए उन्होंने नाम की खूब महिमा गाई. रचने-गाने के पश्चात् भी उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया उन्हीं के ऊपर और कह दिया,

सोई जानइ जेहि देहु जनाई.

गुण आधारित संज्ञाओं के साथ गोस्वामी जी अपने प्रिय राम को अनेक नामों से गाते हैं और साथ ही निर्गुण ब्रह्म का निरूपण भी करते हैं और वहां पर सगुण और निर्गुण के मध्य राम नाम को ही दोनों में सम्मिलित पाते हैं, बताते हैं. किन्तु देखिये तो कितनी कुशलता से वे सभी गुण आधारित संज्ञाओं में उन गुणों को रख देते हैं जो सगुण-साकार रूप में दिखते ही नहीं हैं, केवल अनुभवगम्य हैं जैसे - कृपा, करुणा, दया, सुख, प्रेम आदि.

गोस्वामी जी चाहते हैं कि भगवान की कृपा से कोई भी वंचित न रह जाये इसलिए सुर, असुर, भक्त, शत्रु सभी के द्वारा उनके लिए संज्ञाएँ रचते हैं और अपने नाम के लिए भी कह देते हैं - **तुलसीस**. फिर भी कोई छूट रहा हो तो **दीनदयाल, दीनानाथ, दीनबंधु.** जो जैसे नाता चाहे वैसा नाम ले प्रभु से मनचाहा नाता जोड़ ले. इन नामों का कहाँ तक बखान करूँ क्योंकि जिस नाम की महिमा स्वयं प्रभु राम नहीं कह सकते उसे मुझ सी अकिंचन कब तक बखानेगी?

कहौं कहाँ लग नाम बड़ाई. राम न सकहिं नाम गुन गाई.

अतः बस इतना समझ लीजिये कि राम सेतु के विकल्प के रूप में हम सबको नाम सेतु मिल गया है जिसे पकड़े-पकड़े हम सब भवसागर को पार कर जायेंगे. ऐसा विश्वास यदि मन में दृढ़ हो गया तो समझिये उसका सब काम हो गया.

अन्य संज्ञाएँ

मानस में गंगा, समुद्र, नदी, वन, पर्वत, वृक्ष, राक्षस, रावण, मेघनाद, अस्त्र-शस्त्र, रथ, नगर, फल फूल, वस्तु, वस्त्र संज्ञाओं का भण्डार है. पर्यायवाची संज्ञाओं का खजाना है मानस. मानस में संज्ञा के मर्म को समझ लिया तो समझिए मानस के मर्म को समझ लिया। यहाँ पर दो उदाहरण लेते हैं - मन्दिर और भवन। इनका उपयोग जिस तरह से गोस्वामी जी ने सुन्दरकाण्ड में किया है वह मानस की संज्ञाओं के मर्म को समझने का अच्छा उदहारण है:-

गयउ दसानन मंदिर माहीं. अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं.
सयन किये देखा कपि तेही. मंदिर महुं न दीखि बैदेही.
भवन एक पुनि दीख सुहावा. हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा.
रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाई.
नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरस कपिराई.

वैसे तो मंदिर और भवन दोनों का ही अर्थ निवास स्थान है. पर हम मंदिर और भवन दोनों ही संज्ञाओं को विशेष निवास स्थान के रूप में देखते हैं. पहली चौपाई में देखिये हनुमान जी दशानन के मंदिर में वैदेही को ढूंढ रहे हैं और विभीषण के गृह जहाँ रामायुध अंकित हैं वहाँ भवन लिख रहे हैं. पर इसका मर्म गोस्वामी जी कितने गूढ़ ढंग से लिख भी दे रहे हैं- अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं. कितनी बिचित्र बात है कि रावण का महल मंदिर और विभीषण का महल भवन! बात तो बड़ी विचित्र है, इतनी विचित्र कि कहने की नहीं, समझने की बात है. जो समझ सके उसने इसके मर्म को जान लिया. दशानन के भवन देह सुख को भोगने के मंदिर है, तो भला देह के मंदिर में वैदेही मिल सकती है? वैदेही तो देहात्म बोध से मुक्त है? भोग के मंदिर में भक्ति खोजने से भी नहीं मिलेगी - मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा. केवल खोजा नहीं शोध कर डालिए तब भी वहाँ भक्ति नहीं मिलेगी. दशानन: दसों इन्द्रियों को देह के सुख में लगाये हुए जीव के लिए उसकी देह ही उसका मंदिर है वह दिन रात देह की ही सेवा और पूजा में तो लगा रहता है. देह सुख की नगरी लंका में देह सुख से अलग होकर, देह से भिन्नता का बोध होने से ही, राम के आयुध अंकित होते हैं जिससे उन आयुध

से हमारे देह भोग के सुख रूपी दोषों को नाश करने के लिए कभी न कभी प्रभु राम को उस धनुष को उठाने के लिए आना ही पड़ेगा. और राम दूत हनुमान को रावण और विभीषण दोनों के लिए राम का सन्देश लेकर आते हैं. देह भोगी रावण की आसक्ति उस सीता पर है जो वैदेही के रूप में अशोक वाटिका में विद्यमान है. रावण के मंदिर में तो हनुमान वैदेही को खोज रहे हैं किन्तु विभीषण से जानकी माता के दर्शन की इच्छा कहते हैं. इस प्रसंग में वैदेही के जनकसुता से होते हुए जानकी माता के दर्शन करने में यदि सीता माता के लिए प्रयुक्त हर संज्ञा के मर्म को जानने का प्रयास करेंगे तो प्रभु कृपा से इस देह की नगरी में जानकी माता से भेंट अवश्य होगी, पहले उसे माता के रूप में देखने की इच्छा हो, बिना राम के आयुध के दर्शन किये सीता से भेंट संभव नहीं. पहले भाव, फिर रामायुध जो लंका जैसी दैहिक सुख की नगरी में भी दोषों से जीव की रक्षा करने में समर्थ है. (ज़्यादातर बदमाशों को बन्दूक तान कर दिखाने से ही समर्पण के लिए विवश कराया जा सकता है, हर दोषी पर बन्दूक चलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती.)

संज्ञा की भाषा

अब थोड़ी सी बात संज्ञा शब्दों की भाषा के बारे में कर ली जाय. 'रामचरितमानस' शंकर के मानस में बसी कथा तो है ही पर इसकी भाषा जन के मानस में बसी भाषा है. जन भी कौन ? जो राम के अवध में बसे हैं और उनकी भाषा है अवधी. अवधी भाषा लेने के पीछे एक कारण यह भी समझ आता है कि भगवान के नाम को लेने में या कथा चरित को गाने में भगवान भाषा और विभक्ति नहीं केवल भाव और भक्ति देखते हैं. जिस काल में संस्कृत का धीरे धीरे लोप हो रहा था, उसे पढ़ने और पढ़ाने वाले दोनों ही जीवन के संघर्ष में फँस चुके थे. भाषा के साथ-साथ धर्म का भी लोप हो रहा था. भाषा, धर्म, भक्ति सभी समाज से लुप्त हो रहे थे.

कौन बताये, कौन सिखाये, कौन समझाए? ऐसे में गोस्वामी जी भगवान की प्रेरणा से भगवान की भक्ति को उनके नाम के साथ लेकर आ गए और यही था भगवान का नाम अवतार. जो सरल, सहज, व्याकरण मुक्त, सबके द्वारा बोली जाने वाली भाषा में भगवान की भक्ति का साधन बना रामचरितमानस रच दी. जब कुछ लोग भाषा की शुद्धता और अशुद्धता को भगवान और भक्ति से भी ऊपर उठाकर बैठे थे, ऐसे में गोस्वामी जी ने कितना सरल सूत्र दे दिया

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे
बिहँसे करुनाऐन चितइ जानकी लखन तन.

प्रभु करुणा के धाम हैं जो केवट के अटपटे बैन से हँस पड़ते हैं अर्थात प्रसन्न हो उठते हैं उन्हें प्रसन्न करने के लिए संस्कृत हो, अवधी हो, शुद्ध हो अशुद्ध हो, तत्सम हो तद्भव हो, सही हो या अटपट हो…. कोई अंतर नहीं पड़ता, अंतर केवल प्रेम के भाव का है, भाषा का नहीं

रामहि केवल पेमु पियारा जानि लेहु जो जाननिहारा.

इसी के साथ मैं अपने भाषा ज्ञान की अल्पज्ञता के साथ इस प्रेम और ज्ञान के अनंत सागर जिसे रामचरितमानस कहते हैं; की संज्ञाओं पर आधारित अपने वक्तव्य पर विराम लगाती हूँ. क्योंकि

हरि अनन्त हरि कथा अनंता. कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता.

हरि के गुण अनंत, कथा अनंत, नाम अनंत तो संज्ञा और उसकी चर्चा भी अनंत. जब जब जहाँ जहाँ जिस जन्म में आप सरिस संतों का साथ मिलेगा; कथन और श्रवण का सुन्दर अवसर फिर मिलेगा, इसी कामना के साथ –

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर माँगऊँ.
जेहि जोनि जन्मौं कर्म बस तहँ राम पद अनुरागऊँ.

Rama and Krishna the Eternal Dharma

Sakshi Goyal
Indian Institute of Technology Roorkee, Roorkee
(sakshi_g@dm.iitr.ac.in)

Chetan Gaur
Self Employed
(chetansbsc@gmail.com)

Rama and Krishna, the two divine incarnations of Vishnu, embody the timeless essence of dharma expressed through distinct yet complementary paths. Rama exemplifies duty as the preservation of righteousness; Krishna reveals compassion and discernment as its renewal. Rama stands for discipline, sacrifice, and moral steadfastness, upholding truth through his conduct. Krishna represents wisdom and participation, guiding humanity toward self-awareness through the Bhagavad Gita. This paper explores how both avatars, though distinct in action and context, reflect the same eternal principle of balance, justice, and spiritual evolution. By tracing how divine wisdom adapts yet remains constant through time, this paper formulates a integrative framework where ancient Indic ethics inform modern governance, sustainability, and moral ecology.

1. Introduction

Dharma, the eternal law that upholds both cosmos and consciousness, lies at the heart of Indian philosophical and ethical thought (Saha, 2022). The Bhagavad Gita defines it most simply as duty, the rightful action that sustains harmony within the individual, society, and the natural world (Bhagavad Gita 3.19, trans. Radhakrishnan, 1948). Indian philosophy views duty not as external compulsion but as conscious participation in the larger rhythm of existence. Unlike contemporary sustainability models grounded in policy or technology, the Indic conception begins with moral consciousness as the foundation of balance between human and natural systems. When performed with integrity and awareness, it becomes service to life itself, sustaining the moral and ecological order of the world (Chakrabarti, 2018).

Modern theories of sustainability emphasize technological advancement and resource management, Indic philosophy approaches balance through the moral law of dharma, which binds ethical responsibility with cosmic order (Rao, 2021). The Ramayana and the Mahabharata offer two complementary visions of this principle through the lives of Rama and Krishna. In the Ramayana, Rama embodies the dharma of discipline, self-restraint, and duty. In the Mahabharata, Krishna reveals the dharma of discernment, where right action arises from inner understanding and compassion, guided by self-knowledge rather than external command. Together, the two epics trace the evolution of duty from outer conformity to inner realization, from the performance of law to the understanding of its purpose (Hiltebeitel, 2011).

For the ancients, this consciousness of duty sustained both social harmony and environmental stability. The well-being of a kingdom depended not on law or coercion but on the sincerity with which individuals performed their roles (Singh and Singh, 2025). In modern terms, this aligns with the principle of sustainable development, where continuity of life depends on ethical awareness rather than material accumulation (Gupta, 2020). Accordingly, this study aims to reinterpret the dharmic philosophy of Rama and Krishna as a normative framework for sustainability, linking moral consciousness with environmental balance. This paper interprets their teachings as an integrated moral framework in which dharma, understood as duty, anticipates sustainability itself. By examining the philosophical depth of Eternal Dharma alongside its practical implementations, the study proposes how these principles can inform education, governance, leadership, ecological order, technology and innovation, and collective welfare in the modern age.

2. The Eternal Dharma and Its Contemporary Relevance

The idea of Eternal Dharma finds its earliest articulation in the Vedic concept of ṛta, the cosmic rhythm that sustains both natural and moral order. The Rig Veda describes this harmony as the principle by which "the sun rises and sets, the winds blow, and the rivers flow without failing in their course" (Rig Veda 10.190.1, trans. Griffith, 1896). This vision transforms morality into a cosmological act in which the performance of duty becomes participation in the maintenance of universal equilibrium. This vision anticipates modern systems theory's concept of equilibrium and self-regulating cycles within natural and social systems. In later Upanishadic and epic thought, ṛta was interiorized as dharma, a prescriptive ideal binding cosmic, ecological, and human systems into one moral continuum (Radhakrishnan, 1948; Hiltebeitel, 2011; Panikkar, 1977).

Rama and the Dharma of Order

In the Ramayana, dharma manifests as social and ecological order upheld by discipline, truth, and restraint. If ṛta symbolized the cosmic rhythm of harmony, Rama translates that rhythm into moral practice within human society. Portrayed as *Maryada Purushottama*, the ideal man, he preserves balance not through power but through obedience to duty. When Kaikeyi reminds him of his father's promise, Rama's acceptance of exile without resentment becomes the supreme act of moral equilibrium.

Valmiki records, "Hearing his father's words, Rama bowed his head, saying, 'Let it be done as you command'"(Ayodhya Kanda 18.30, trans. Goldman, 1984). His action embodies svadharma, one's rightful role performed for truth's preservation. During his vanavasa (forest exile), Rama's interactions with hermits, rivers, and trees reveal reverence for nature as moral kinship. The Aranya Kanda describes the forest as "a place where every leaf and creature is to be protected" (Valmiki Ramayana 3.10.11). The Yuddha Kanda envisions an ecological ideal: "During Rama's reign, no one suffered, trees bore fruit in every season, rivers ran clear, and creatures lived without fear" (Yuddha Kanda 128.98-100, trans. Pollock, 1986). Ecological stability here arises not from policy but from ethical leadership.

Through his example, the epic portrays dharma as preservation, the reflection of cosmic order in human justice. Governance under Rama-Rajya exemplifies what modern ethics describes as sustainability, the alignment of ecological integrity, social justice and moral responsibility (Gupta, 2020). For Rama, satya represents harmony with universal truth, and ahimsa embodies non-harm in thought, word, and deed. Together they form the foundation of ethical governance and non-exploitative development (Sinha, 2021; Parel, 2000).

Krishna and the Dharma of Awareness

If Rama embodied dharma as stability, Krishna appears in an age where that stability had fractured. The Mahabharata depicts a world weary of ritual correctness, where righteousness must be rediscovered through awareness. Krishna redefines dharma as consciousness guided by discernment. In the Bhagavad Gita, he declares, "To action alone you have a right, never to its fruits" (Bhagavad Gita 2.47, trans. Radhakrishnan, 1948). Here, virtue shifts from external rule to inner intention, establishing awareness as the center of moral life.

Krishna's counsel transforms duty into disciplined participation in moral order. "By performing prescribed work without attachment, man reaches the Supreme" (Bhagavad Gita 3.19). Detachment (vairagya) refines motive, turning action into selfless service. The Udyoga Parva records his plea for peace, warning that reconciliation surpasses conquest (Mahabharata 5.95.10, trans. Ganguli, 1884). The Shanti Parva later echoes this: "Non-injury, truth, and forgiveness constitute the triple path of dharma" (12.110.10).

Krishna's teaching introduces an ecological vision grounded in reciprocity: "From food creatures come, from rain food is produced, from sacrifice rain arises, and sacrifice is born of action" (Bhagavad Gita 3.14). Human responsibility thus extends into the natural world; neglecting this cycle brings disorder (Bhagavad Gita 3.16). This principle anticipates ecological sustainability as participation rather than control (Rao, 2021; Shiva, 2016).

Leadership in Krishna's philosophy functions as moral education: "Whatever a great person does, others follow" (Bhagavad Gita 3.21). Authority becomes service through self-mastery, corresponding to participatory sustainability models that emphasize empowerment over enforcement (Sen, 1999).

Krishna's insight culminates in self-governance: "Let a person lift oneself by the self, for the self alone is friend and the self alone is enemy" (Bhagavad Gita 6.5). Awareness thus becomes freedom's foundation.

A society that governs itself through consciousness needs fewer laws to govern externally, anticipating moral autonomy as the basis for sustainable civilization (Radhakrishnan and Moore, 1957; Sharma, 2008).

In essence, Krishna transforms dharma from preservation of order to participation in consciousness. Awareness, in this vision, is the truest form of sustainability, harmonizing inner intention with universal law.

Continuity and Adaptation from Rama to Krishna

Through Rama, dharma takes external form; through Krishna, it becomes internal awareness. This shift marks the progressive interiorization of cosmic order into moral consciousness, an evolution from regulation to realization. Between these epochs, the Dharmashastra tradition codified virtue in law, while the avatars restored its living essence. The Bhagavad Gita (4.8, trans. Radhakrishnan, 1948) proclaims, "For the protection of the good and the re-establishment of righteousness, I appear age after age," affirming the cyclical restoration of ethics through time.

The principle of Sanatana Dharma functions as a self-correcting moral system that adapts without losing its foundation in truth. It is capable of continuous moral renewal without ideological rigidity, maintains integrity through transformation. In Rama's era, righteousness manifests as disciplined compassion; in Krishna's, it matures into reflective participation. The Taittiriya Upanishad (1.11.1) instructs, "Speak the truth, practice righteousness, and do not neglect duty," asserting that constancy resides in intent, not form. This mirrors modern resilience theory, where integrity is maintained through adaptation (Folke et al., 2002; Sachs, 2015).

This conception parallels sustainability frameworks in which adaptive systems renew moral and ecological balance. The welfare of the world, lokasangraha, depends on understanding interdependence as the root of harmony. The Bhagavad Gita (3.25, trans. Radhakrishnan, 1948) states, "The wise act without attachment, desiring the welfare of the world." Within this continuum, the principle of yajna, understood as reciprocal offering, links human action to cosmic regeneration, while niskama karma, or selfless action, ensures that such offerings are performed without attachment to results. Together, they transform duty into conscious participation in the rhythm of creation, where giving sustains receiving and detachment perfects responsibility. Here, metaphysical insight converges with ecological principle.

Viewing dharma through this continuum reveals it as the earliest articulation of sustainable ethics, a vision where awareness sustains duty and duty sustains life. As Panikkar (1989) observed, life becomes sacred when human action resonates with the universe's rhythm. The teachings of Rama and Krishna together articulate one enduring truth: sustainability, whether moral or ecological, is the practice of alignment with reality itself.

3. The Integrative Framework of Sustainable Dharma

The continuity between Rama and Krishna reveals dharma not as an abstract doctrine but as a living principle capable of renewal across ages. It evolves from Rama's outward discipline to Krishna's inward awareness, from preservation to participation, and from the moral law of order to the wisdom of consciousness. This dynamic adaptability is the essence of sustainability itself, the ability to remain true while transforming through time. The teachings of both avatars invite not only reflection but also practical application. To understand how these principles can guide modern civilization, it becomes necessary to translate dharma into a structured integrative framework that connects ethical consciousness with social and ecological action.

Rooted in the wisdom of the Vedas, the Ramayana, and the Bhagavad Gita, the "Integrative Framework of Sustainable Dharma" (see figure 1) organizes the moral evolution of dharma into seven interconnected cyclic principles: Rta, Svadharma, Satya, Ahimsa, Yajna, Lokasangraha, and Nishkama Karma. Each stage in this order represents a widening circle of awareness through which 'human conduct' aligns with the rhythms of the universe. Together, they outline how cosmic order becomes lived responsibility and how awareness matures into compassionate action.

Figure 1 *The Integrative Framework of Sustainable Dharma*

This framework operationalizes the transition from spiritual principle to policy relevance, illustrating how dharma provides a scalable moral architecture for sustainability. **Rta**, first stage, affirms that harmony between the natural and moral orders is the foundation of all sustainability. It calls for alignment of human systems with the rhythms of nature and reminds us that environmental restoration begins with ethical balance. **Svadharma**, second stage, transforms this cosmic awareness into personal and social responsibility. Rama's acceptance of exile in obedience to his father's promise and Krishna's counsel to Arjuna both demonstrate that duty performed with integrity sustains collective harmony. **Satya**, third stage, extends this insight into truthful conduct, making transparency and accountability the basis of ethical governance and institutional trust.

Ahimsa, fourth stage, deepens the framework into compassion that embraces all living beings. It redefines non-violence as ecological empathy and moral restraint, guiding human innovation toward the preservation of life. **Yajna**, fifth stage, introduces the law of reciprocity, teaching that progress depends on the willingness to offer, share, and regenerate. In contemporary language, it speaks to fairness in resource use and inter-generational equity. **Lokasangraha**, sixth stage, broadens this principle to the collective sphere, asserting that the welfare of the world is inseparable from the welfare of the self. Finally, **Nishkama Karma**, seventh stage, perfects the cycle by releasing action from attachment to results. In this realization, purpose transcends personal gain and action becomes an offering of consciousness to the whole.

These seven principles form a continuous cycle of moral evolution in which each idea naturally flows into the next. The framework restores the holistic view of sustainability found in ancient Indian thought by uniting the spiritual, ethical, and ecological dimensions of existence. It demonstrates that dharma is not only philosophy but also lived practice, a means by which awareness is expressed through right action.

In modern discourse, this integration of moral and ecological order finds resonance in movements such as the Earth Charter and India's environmental policies, where sustainability is understood as interdependence rather than limitation. The practical articulation of this framework is summarized in Table 1, which aligns primary scriptural references with modern interpretations, practical applications, and contemporary examples. It highlights how the wisdom embodied by Rama and Krishna can guide individuals, institutions, and societies toward a balanced and enduring order.

Together, these principles re-articulate Sanatana Dharma as a self-correcting moral system that sustains harmony through the balance of truth, compassion, and selfless service. In a world marked by ecological uncertainty and ethical fatigue, this framework offers not a retreat into tradition but a renewal of timeless insight. It invites humanity to rediscover ethics as ecology and sustainability as dharma in action.

Table 1 Integrative Framework of Sustainable Dharma: Scriptural Foundations, Modern Interpretations, and Practical Pathways

Stage	Primary Scriptural References	Ancient Ethic	Modern Interpretation	Practical Implementation	Illustrative Application
1. Rta |*Cosmic Order*	Rig Veda 5.62.1; Valmiki Ramayana, Balakanda 1.24.11	Harmony between natural and moral law sustaining life's rhythm.	Ethical alignment of human systems with natural law, integrating ecological balance and planetary responsibility.	Environmental governance rooted in ecological limits, restoration-based planning, and sustainability ethics education.	India's National River Ganga Rejuvenation Mission integrates ecological balance with sacred duty, expressing rta as policy.
2. Svadharma *Rightful Duty*	Valmiki Ramayana, Ayodhya Kanda 18.30; Bhagavad Gita 3.35	Personal and social responsibility aligned with truth and capacity.	Individual and institutional accountability grounded in one's rightful role and capacity.	Ethical leadership programs, civic responsibility initiatives, and integrity standards in professions.	Civil servants' ethical codes and teachers' civic oaths reflect svadharma as public service ethic.
3. Satya *Truth in Conduct*	Valmiki Ramayana, Ayodhya Kanda 109.27; Taittiriya Upanishad 1.11.1	Truth as alignment with moral and cosmic reality.	Truth as epistemic responsibility, aligning perception, speech, and action with reality.	Transparent institutions, open data ecosystems, fact-based policy processes, and media ethics frameworks.	The Right to Information Act (2005) embodies institutional transparency grounded in satya.
4. Ahimsa *Compassionate Action*	Valmiki Ramayana, Aranya Kanda 30.3; Mahabharata, Anushasana Parva 115.1	Non-harm and empathy toward all beings.	Compassion as an ecological and moral discipline that restrains harm and cultivates empathy toward all life forms.	Ethical innovation standards, sustainable production cycles, and humane governance across sectors.	The Chipko Movement exemplifies ecological non-violence and reverence for all life.
5. Yajna *Reciprocal Offering*	Valmiki Ramayana, Balakanda 14.12; Bhagavad Gita 3.10–16	Mutual giving that sustains social and ecological cycles.	Reciprocity as the moral law of exchange sustaining ecological and social balance.	Shared stewardship of resources, equitable policy design, inter-generational justice, and community resilience programs.	Community-based forest management and carbon offset programs mirror yajna as mutual offering.
6. Lokasangraha*CollectiveWelfare*	Valmiki Ramayana, Uttara Kanda 128.98; Bhagavad Gita 3.21	Cooperative action for the welfare of all.	The spirit of collective upliftment that binds individual welfare with social harmony.	Community empowerment, cooperative economies, and inclusive social design prioritizing equity.	Self-help groups and cooperative banking illustrate lokasangraha as shared social welfare.
7. Nishkama Karma *Detached Service*	Valmiki Ramayana, Uttara Kanda 97.12; Bhagavad Gita 2.47	Action performed selflessly and with awareness.	Selfless action performed with awareness, free from attachment and ego-centered motive.	Value-centered leadership, public service ethics, volunteerism, and organizational cultures of mindful purpose.	The concept of seva in Gandhian philosophy and volunteer-led initiatives like ISRO's open-science culture express nishkama karma.

4. Reflections and Learnings for Contemporary Society

Building upon the theoretical foundation, this section interprets how the Integrative Framework of Sustainable Dharma applies to education, governance, leadership, ecological order, technology and innovation, and collective welfare in the modern age. The framework extends beyond philosophy into the lived spheres of harmony between human and natural systems (see Figure 2). Its principles, drawn from the Ramayana and the Bhagavad Gita, gain renewed significance when placed against the ethical and ecological challenges of contemporary civilization. The moral imagination that once guided early societies now finds renewed relevance in classrooms, public institutions, and environmental movements. The dialogue between ancient insight and present realities reveals continuity rather than contrast. The same principles that sustained cosmic order in ancient thought can reorient modern society when interpreted through awareness and responsibility.

Figure 2 *The Five Axes of the Integrative Framework of Sustainable Dharma*

(This diagram represents Sustainable Dharma as the central axis of awareness from which five moral dimensions radiate: Education, Governance & Leadership, Human–Nature Relationship, Technology & Innovation, and Collective Welfare. Each axis articulates operational principles that integrate moral consciousness with functional domains, converging toward harmony between human and natural systems.)

Education represents the first axis of transformation. In Indic thought, knowledge is inseparable from character, and learning is a process of awakening rather than accumulation. Krishna's guidance to Arjuna was not instruction but illumination; it transformed confusion into clarity and hesitation into action. The contemporary education system, often driven by competition and measurable output, can rediscover its ethical purpose by integrating value-based learning, civic consciousness, and environmental ethics. Such an approach redefines education as an instrument for cultivating awareness, positioning learning as a moral act within the discourse of sustainability. When responsibility becomes an outcome of understanding rather than compliance, education contributes directly to social and ecological balance.

Governance and leadership form the second axis of reflection. Rama's rule exemplifies service-oriented authority where power exists to preserve balance and ensure justice. His reign, remembered for truth, empathy, and environmental harmony, signifies governance as stewardship. In the Bhagavad Gita, Krishna extends this idea by redefining leadership as self-mastery through action. Leadership in both epics rests on moral clarity, not command. Modern governance, often constrained by complexity and mistrust, can draw from this dharmic model to build institutions grounded in transparency and ethical accountability. Policies that integrate social welfare with ecological care become expressions of satya, or truth manifested through governance. In this light, leadership becomes not the assertion of control but the practice of moral ecology.

The relationship between human activity and nature offers third axis of reflection. The Vedic principle of yajna, denoting reciprocal sustenance between humanity, divinity, and the environment, anticipates ecological ethics long before the modern sustainability movement. It teaches that consumption without renewal disrupts the rhythm of creation. Practices such as regenerative agriculture, local stewardship, and circular economies embody the spirit of yajna in contemporary form. Alongside it, the ideal of ahimsa expands non-harm into ecological empathy, promoting restraint and compassion as ethical responses to material abundance. Together, these principles form the philosophical foundation for sustainable development, reminding society that progress divorced from reverence endangers both nature and morality.

Technology and innovation, viewed through the dharmic lens, add another layer and the fourth axis of this reflection. The Bhagavad Gita teaches that the moral quality of action depends on the consciousness of the actor. Nishkama karma, understood as action free from attachment, offers an enduring ethical vision for the modern age shaped by algorithms and automation, where decisions increasingly bypass human reflection. It reclaims consciousness as the guiding principle of creation, reminding that true innovation arises from awareness, not desire. Creativity, in this light, becomes an act of mindfulness guided by moral foresight. When invention serves collective welfare, technology transforms into an instrument of dharma rather than domination. The purpose of creation, whether ancient or modern, is to extend care rather than control. Progress measured by awareness instead of speed turns innovation into a moral act and situates technological advancement within the evolution of ethical consciousness.

Finally, the principle of lokasangraha integrates the fifth axis, all dimensions of social and ecological life. It envisions a world sustained through shared responsibility and collective good. Krishna's declaration that "the wise act for the welfare of all" provides a moral compass for institutions, corporations, and citizens alike. Social equity, participatory governance, and community-based action become practical manifestations of this principle. When society acts with awareness of interdependence, it mirrors the equilibrium once described as dharmic order. This alignment transforms sustainability from an external policy into a collective ethic, a shared moral vision that unites action and awareness.

Seen together, these reflections affirm that the dharmic worldview offers not nostalgia for the past but a framework for renewal in the present. The ancient vision of harmony finds its modern expression in education, governance, leadership, ecology, and technology. The Integrative Framework of Sustainable Dharma thus re-frames sustainability as a moral orientation, a conscious way of living, learning, and creating in rhythm with the moral order of existence. By recovering this alignment, contemporary society reconnects with the sacred continuity between human intention and universal balance.

5. Conclusion

The Ramayana and the Mahabharata together illuminate dharma as the eternal rhythm that sustains both the cosmos and the human spirit. Through Rama, dharma manifests as disciplined compassion that preserves order; through Krishna, it becomes enlightened wisdom that renews it. Read together, the two epics reveal a continuum of moral consciousness where right action and right awareness converge into harmony.

The Integrative Framework of Sustainable Dharma draws upon this continuum to reinterpret timeless wisdom for the present age. It demonstrates that sustainability arises not from external control or technology but from the alignment of human will with moral truth. When education nurtures awareness, governance upholds justice, and innovation serves compassion, the ancient ideal of balance becomes a living ethic. In this sense, Sustainable Dharma bridges the ancient philosophy of the epics with the contemporary pursuit of sustainable development, translating moral insight into practical guidance for modern civilization.

In the final vision of the Ramayana, Rama's reign is portrayed as an age where truth, compassion, and justice governed both society and nature. Thus, Rama-Rajya emerges not merely as mythic memory but as an enduring archetype of ethical and ecological governance. The timeless truth that sustains civilizations is the same that sustains ecosystems: dharma as the rhythm of right awareness.

"नाधर्मः धर्ममुत्सृज्य कदाचित्संप्रवर्तते।
धर्मस्य तु सदा रक्षासद्धिरेव प्रदर्शिता॥"

(वाल्मीकि रामायण, युद्धकाण्ड ११४.३२)

"Unrighteousness can never uphold the world by forsaking righteousness.
The protection of dharma has always been shown by the virtuous."
(Valmiki Ramayana, Yuddha Kanda 114.32)

This verse encapsulates the enduring message of the epics and of Sustainable Dharma itself, that balance, justice, and continuity are preserved not by external law but by inner awareness. When dharma informs human intention, sustainability emerges as the natural equilibrium of existence.

6. References

1. Bhagavad Gita (trans. Radhakrishnan, S., 1948). London: George Allen & Unwin.
2. Chakrabarti, A. (2018). The Philosophy of Dharma in Indian Thought. Journal of Indian Philosophy, 46(3), 289–305.
3. Folke, C., Carpenter, S., Walker, B., Scheffer, M., Elmqvist, T., Gunderson, L., & Holling, C. S. (2002). Resilience and sustainable development: Building adaptive capacity in a world of transformations. Ambio, 31(5), 437–440.
4. Ganguli, K. M. (1884). The Mahabharata of Krishna-Dwaipayana Vyasa. Calcutta: Bharata Press.
5. Goldman, R. P. (1984). The Ramayana of Valmiki: Ayodhya Kanda. Princeton University Press.
6. Gupta, S. (2020). Ethics, Sustainability, and Indian Philosophical Traditions. Indian Journal of Environmental Studies, 27(2), 115–132.
7. Hiltebeitel, A. (2011). Dharma: Its Early History in Law, Religion, and Narrative. Oxford University Press.
8. Panikkar, R. (1977). The Vedic Experience: Mantramañjari. University of California Press.
9. Panikkar, R. (1989). The Intrareligious Dialogue. Paulist Press.
10. Parel, A. (2000). Gandhi, Freedom and Self-Rule. Lexington Books.
11. Pollock, S. (1986). The Ramayana of Valmiki: Yuddha Kanda. Princeton University Press.
12. Radhakrishnan, S., & Moore, C. A. (1957). A Sourcebook in Indian Philosophy. Princeton University Press.
13. Rao, K. S. (2021). Indic Ecology: Dharma as a Framework for Sustainable Living. International Review of Environmental Ethics, 14(1), 67–84.
14. Rig Veda (trans. Griffith, R. T. H., 1896). London: E. J. Lazarus & Co.
15. Sachs, J. (2015). The Age of Sustainable Development. Columbia University Press.
16. Saha, R. (2022). The Moral Universe of Dharma: A Philosophical Overview. New Delhi: Motilal Banarsidass.
17. Sen, A. (1999). Development as Freedom. Oxford University Press.
18. Sharma, A. (2008). Hindu Ethics: Purity, Abortion, and Euthanasia. State University of New York Press.
19. Shiva, V. (2016). Staying Alive: Women, Ecology, and Development. Zed Books.
20. Singh, M., & Singh, R. (2025). Dharma and Governance in Classical India: Lessons for Sustainability. Asian Ethics Review, 9(1), 45–60.
21. Sinha, P. (2021). Satya and Ahimsa in Public Leadership: Revisiting Rama Rajya. Journal of Indian Governance Studies, 15(3), 44–58.
22. Taittirīya Upanishad (1.11.1). In Radhakrishnan, S. (Trans.), The Principal Upanishads (1953). London: George Allen & Unwin.

Glimpses of Sustainable Micro-Enterprises from Shri Ramcharitmanas

Kritika Sharma
Vinay Sharma
Navneet Arora
Indian Institute of Technology Roorkee
(kritika_s@me.iitr.ac.in)
(vinay.sharma@ms.iitr.ac.in)
(Navneet.arora@me.iitr.ac.in)

The principles of micro-enterprises have existed in the communities of Bharata Varsha from time immemorial. The spirit of coexistence, cooperation, cumulative growth, and interdependence were at the core of the hearts of the people of India. Secondly, the product's quality and value were much superior to what is obtained using modern techniques. The things were pure and clean. The processes were eco-friendly and people-friendly. There was harmony with other living beings and nature. Communities were more strongly bonded. This paper brings the attention to the prosperity associated with the Ram Rajya that can stimulate the micro-enterprises in the present scenario.

1. Introduction

Gandhian principles of economy (*Gandhian Economics: Principles of Trusteeship, Self-Reliance, and Ethical Production*, n.d.) and rural entrepreneurship (Prabhakar et al., 2017) expresses the need of the Bharat varsha to shift to localized production instead of large scale industrialization. The reasoning behind this is the exploitation of the migrated workforce and prosperity of a selected section of the society. Localized production encourages the development of local skills and proper utilization of local resources in a sustainable manner. Gandhian principles oppose the over exploitation of the resources for mass industrialization that is devastating for the nature and the ecological balance.

The Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) sector of India works on these Gandhian principles. This sector is normally located in rural and semi-urban regions of the country and contributes greatly to the Indian economy (Rathi & Kumar, 2023). An interesting fact about this sector is that it involves low investment and generates huge employment (Rahuman, 2024). Also, MSMEs inspire entrepreneurship at local levels (Surender, 2024). MSMEs employ large number of people, generally mostly from the rural areas (Singh & Gupta, n.d.). This sector encourages local industrialization and helps reduce the economic inequality. Also, MSMEs have contributed to women entrepreneurship leading to women empowerment (Hubballi & Shyam, 2023). Although MSMEs are inspired from Gandhian principles of rural entrepreneurship, they still need more efforts to align themselves with some major issues such as sustainable use of resources, environmental sustainability and holistic rural development (Jayswal, 2024).

Interestingly, all the basics and the principles behind the establishment of MSMEs and their encouragement in the Gandhian principles can be traced back to Shri Valmiki Ramayan and Shri Ramcharitmanas by Tulsi das ji. The cooperation and prosperity of the society at the time of King Dashrath (Lord Rama's father) and Lord Ram Himself gives important instructions and guidelines on how the societies can prosper from local entrepreneurship and sustainable utilization of resources. Also, this paper will highlight an important micro-enterprise from the sacred hills of Devbhoomi Uttarakhand, locally known as Gharat (traditional watermill) in the Himalayas.

2. Glimpses from the Ramayana and Shri Ramcharitmanas

In the Bal Kand of Shri Ramcharitmanas, it is mentioned that when Lord Rama, accompanied by his brother Lakshmana, reached Janakpuri (presently in Nepal and parts of Bihar in India), he saw beautiful wells, rivers and ponds filled with water as pure and sweet as nectar. It highlights how the natural reservoirs of water were pure and clean. The stairs were built from precious stones. It demonstrates the prosperity of a local region that the general staircase was built of costly gems and stones. The gentle breeze was cooling and aromatic. This indicates complete absence of any kind of air pollution.

There is description of different kinds of colorful birds and flower species in the different parks and gardens of the kingdom. The cities were beautifully decorated. The marketplaces were flourishing with prosperous businessmen selling different kinds of products. The prosperity of the time is compared to the treasurer of the demigods Kuber. Such was the

prosperity of the local businessmen. The description also indicates that there was no economic inequality among the various businessmen.

In the Uttara Kand of Shri Ramcharitmanas, when Lord Ramchandra was enthroned as the King of entire earth in the capital Ayodhya, all the three worlds became free from all sorts of miseries.

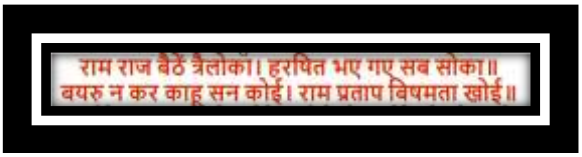

The people were happily engaged in different kinds of work according to their abilities and qualities. The people were free of any sort of fear, sorrow and disease.

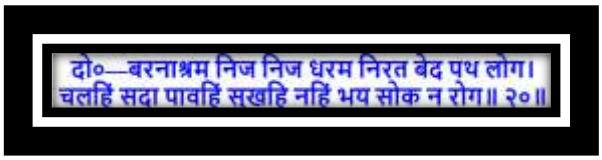

There was no immature death, and no misery ever haunted the people during Rama Rajya. Everyone was beautiful and healthy. There were no poverty and pity. The people were intelligent and decorated with all auspicious symptoms. Everyone was grateful and faithful. Deception was completely absent. It is mentioned that during the reign of Lord Rama, living entities whether movable, or immovable never suffers from any distress born of time, activity, nature and quality.

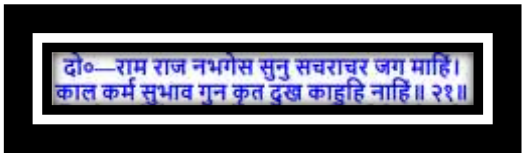

There was no crime and the word punishment was absent in the kingdom of Lord Rama. There was abundance of milk and the earth is flourishing with farmlands and agricultural activities. The mountains were full with precious gems and stones. The rivers were filled with pure, clean and cool waters. Ocean and seas never crossed their boundaries and filled the shores with pearls and gems, which people collected. There were no such disasters such as cyclones and tsunamis troubling the people.

The sun produced heat as much as necessary and there was timely rainfall. All these descriptions indicate the perfect climate and weather that affected people's mental, physical and social well-being. These also indicate absence of any form of climatic issues.

In the Valmiki Ramayana, there are also such mentions during the reign of King Dashrath that reflects the prosperity of all citizens. In the Bal Kand, it is mentioned that when King Dashrath ruled, there was timely rainfall and there was good harvest. The citizens were happy and healthy. People were satisfied and truthful. Deceit in any from was absent. There was no want of anything. All citizens stored valuable possessions, grains and had abundance of cattle stock. Everyone wore gold ornaments. People never died prematurely.

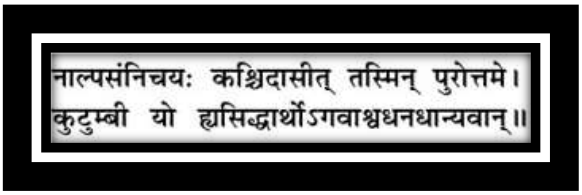

All these descriptions indicate that all the kingdoms flourished during Lord Rama's and Lord Dasrath's reign. It can be reasoned out that the underlying reasons for the people's prosperity and absence of climatic issues is the favorable use of resources, sustainable entrepreneurship and ecological harmony. There is no mention of big industries and factories. There was no economic inequality. Thus, the Ramayana and Shri Ramcharitmanas encourage and inspires sustainable models for the economic prosperity of Bharat Varsha.

3. An Example from Uttarakhand

The Ramayana model of sustainable economic development highlights few key features that are enumerated as:

- Sustainable Resource Usage
- Maintaining Ecological Balance
- Ensuring Economic Equality
- Abundance of farm and agricultural lands
- Protection of cattle and livestock
- Cooperation and harmony among fellow living beings

A Gharat, or a traditional watermill is one such entrepreneurial venture that existed in the Himalayas since time immemorial. This sustainable system, or an energy generating source has certain characteristics that compare with the Ramayana Model of sustainable economic development. These characteristics are mentioned as follows:

- Environment-and Eco-friendly
- Clean and cheap
- Low operating and maintenance cost
- Communal harmony and cooperation
- Products with high nutritional value (Bhatt et al., 2021)

Gharat is environment-and-eco-friendly as it is built completely from natural materials such as clay, mud, stone, bamboo, wood, cow dung, etc. It is clean as it uses the flow of water from the natural reservoirs of water and converts it into mechanical energy, primarily to grind grains and spices (Kothari et al., n.d.). It is cheap as no large equipment, or machinery is required in its operation. It is for the same reason that it has low operating and maintenance cost. Also, when Gharats were abundant in the Himalayas, people in the villages contributed in the construction, repair and maintenance of the Gharats. People would assemble around the Gharats, and would discuss a huge variety of matters. These became the centers of dissemination of knowledge too (Sharma et al., 2008). As the Gharats utilize the natural flow of water, the speed of grinding is less as compared to modern grinding machines, thus the nutritional value of the products is not lost during the operation of grinding in Gharats (Leiro et al., 2015).

There are many such Indigenous and Traditional Knowledge Systems that can benefit from the Ramayana model of economic development and develop as micro-enterprises.

4. Conclusion

The paper discussed the importance of micro-enterprises for the economic development of Bharat Varsha. Gandhian principles of rural entrepreneurship and micro-enterprises find their roots in the scriptures of the Ramayana and Shri Ramcharitmanas, read and sung in India since the ancient times. Besides blessing the readers with the devotion and love for Lord Rama, these scriptures encourage the society to adopt a sustainable model for economic development and develop the micro-enterprises following that model. With the help of the description of the sustainable model of economic development derived from the Ramayana and Shri Ramcharitmanas, the society can flourish while ensuring economic equality for all the stakeholders and beneficiaries. This will also ensure sustainable utilization of resources, prevent over exploitation and maintain ecological balance.

5. References

1. Bhatt, A., Rana, D., & Lal, B. (2021). Gharat: an environment friendly livelihood source for the natives of western Himalaya, India. Environment, Development and Sustainability, 23(12), 18471–18487. https://doi.org/10.1007/s10668-021-01455-4
2. Hubballi, S. R., & Shyam, D. (2023). International Journal of Research Publication and Reviews Role of Micro, Small, and Medium (MSMEs) in Indian Economy. 4(9), 3086–3095.
3. Jayswal, B. K. (2024). Gandhi ' s Vision of Rural Development and Its Impact on Contemporary Indian Policies. 7(7), 4894–4904.

4. Kothari, V., Bisht, Y., Society, H., & Ratan Tata Trust, S. (n.d.). Enabling Appropriate Technologies for Water Management and Improved Livelihoods in the Remote Uttarakhand.
5. Leiro, A. E., Paredes, L. D., & Lentz, M. A. (2015). Assessing Gharats of the Kamand Valley.
6. Prabhakar, A., Commerce, R., & College, A. V. N. (2017). Gandhian Views on Rural Entrepreneurship in India. 4(891).
7. Rahuman, M. A. (2024). A Study on Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) in India - Opportunities and Challenges. September. https://doi.org/10.34293/commerce.v12i4.8133
8. Rathi, S., & Kumar, P. (2023). THE IMPACT OF MICRO, SMALL AND MEDIUM ENTERPRISES (MSMES) ON The Impact Of Micro, Small And Medium Enterprises (Msmes) On Indian Economy in India. August.
9. Gandhian Economics: Principles of Trusteeship, Self-Reliance, and Ethical Production.
10. Sharma, R. C., Bisht, Y., Sharma, R., & Singh, D. (2008). Gharats (watermills): Indigenous device for sustainable development of renewable hydro-energy in Uttrakhand Himalayas. Renewable Energy, 33(10), 2199–2206. https://doi.org/10.1016/j.renene.2007.12.023
11. Singh, N., & Gupta, O. P. (n.d.). Growth of Micro, Small and Medium Enterprises (MSMEs) in India and its Role in Indian Economy. 5(4), 1–5.
12. Surender, K. (2024). The Role Of Micro, Small , And Medium Enterprises (Msmes) In Shaping The Indian Economy. 12(9), 376–388.

The Earth Does Not Belong to Us; We Belong to the Earth: An Eco-Concern in Ramayana

Rachana
CMP College, Prayagraj
(rachana.srivastava87@gmail.com)

The Ramayana, one of India's most revered epics, offers profound ecological insights that resonate with contemporary environmental ethics. Far from being a mere mythological narrative, it portrays nature as sacred, sentient, and inseparable from human existence. Forests, rivers, animals, and landscapes are not passive settings but active participants in the moral and spiritual journey of its characters. This paper explores how the Ramayana embodies the principle that "the Earth does not belong to us; we belong to Earth," emphasizing ecological humility, interdependence, and stewardship. It argues that the epic's environmental ethos offers valuable lessons for sustainable living and ecological justice in the modern age.

Keywords- Ecology, Environmental Ethics, Sustainability

1. Introduction

The Ramayana, one of the most revered epics of Indian civilization, is not merely a tale of dharma, devotion, and heroism—it is also a profound ecological text. Its narratives reflect a worldview where nature is sacred, interconnected, and inseparable from human existence. The statement *"The earth does not belong to us; we belong to the earth"* captures the ecological humility embedded in the epic, reminding us that humanity is not the master of nature but a participant in its eternal cycle.
From Valmiki's grief at the killing of a bird to Sita's birth from the furrow of the earth, the Ramayana consistently portrays forests, rivers, mountains, and animals as living entities deserving reverence. The exile of Rama, Sita, and Lakshmana into the forest is not simply a political or moral episode—it is an immersion into ecological living, where harmony with the environment becomes a form of dharma. The epic warns against exploitation and greed, symbolized by Ravana's hubris, and celebrates stewardship, restraint, and respect for biodiversity.

In today's age of climate crisis, the ecological wisdom of the Ramayana acquires renewed relevance. Its vision anticipates modern principles of sustainability, teaching that ecological imbalance arises when humans forget their place within nature's web. By revisiting this ancient text, we rediscover an ethic of humility and stewardship: the earth is not our possession, but our mother, our sustainer, and our ultimate refuge. The Ramayana consistently portrays forests, rivers, mountains, and animals as divine entities rather than inert resources**.**

About Ramayana

Forests (Aranya): The exile of Rama, Sita, and Lakshmana into the forest is not a descent into wilderness but an entry into a sacred space. The forest is depicted as *Tapovan* (forest of penance), where sages live in harmony with flora and fauna.

Mountains and Rivers: Chitrakoot, Ganga, Yamuna, and Sarayu are revered as living beings. They are not mere geographical features but embodiments of spiritual energy, worshipped and respected.

The epic begins with Valmiki witnessing the killing of a bird in love. His grief transforms into the first *sloka* (verse).

mā niṣāda pratiṣṭhāṁ tvam agamaḥ śāśvatīḥ samāḥ

|yatkrauñcamithunādekam avadhīḥ kāmamohitam ॥

This can be translated as: O hunter, may you never attain eternal peace, for you have killed one of a pair of cranes in love. This sloka is significant because it is the first verse that Valmiki uttered spontaneously after witnessing the hunter kill the male crane.

This moment illustrates that nature feels, suffers, and responds to human actions. Violence against nature is seen as a disruption of cosmic harmony. The bird's death is not trivial—it is a moral violation, showing that animals are sentient beings with intrinsic value. Sita's birth from the furrow symbolizes the earth's fertility and maternal role. Her final return to Mother Earth signifies the cycle of life and the truth that humans belong to the earth. Sita embodies the sentience of soil and land, reinforcing the idea that the earth nurtures, feels, and reclaims. The Ramayana highlights interspecies solidarity: Jatayu, the bird, sacrifices himself to protect Sita. The monkey army (Vanaras) and bears ally with Rama, showing animals as moral agents and companions. These episodes affirm that animals are sentient beings capable of loyalty, sacrifice, and dharma.

Dharma, Riti and their relationship to eco-concern

Aranya Kanda (Book of the Forest) in the *Ramayana* is the richest section for exploring eco-concern. It vividly portrays forest

life, human–nature relationships, and the ethical responsibility of living in harmony with the environment. Rama, Sita, and Lakshmana's exile is not punishment but a return to nature. The forest becomes a space of dharma and learning, where human beings must adapt to the rhythms of the natural world. Their life in the forest reflects humility: they live simply, relying on fruits, roots, and rivers, embodying sustainable living. The forest is depicted as *Tapovan* — a place of penance, meditation, and spiritual growth. Hermitages thrive in balance with wildlife, showing that human settlements can coexist with ecosystems without exploitation. The forest is not hostile wilderness but a sanctuary of biodiversity and spiritual energy.

Non-violence (Ahimsa): Killing animals or exploiting resources without necessity is condemned. Rama and Lakshmana protect sages and hermitages from rakshasas who disrupt ecological balance. His abduction of Sita and exploitation of nature symbolize greed and ecological imbalance. *Aranya Kanda* anticipates modern sustainability principles:

- Respect for biodiversity
- Restraint in consumption
- Recognition of interdependence

It teaches that ecological crisis arises when humans forget their place within nature's web. The exile narrative resonates with the idea that humans belong to the earth, not the other way around.

In the Ramayana, *dharma* is not limited to social or familial duties; it extends to responsibility toward nature. Kingship and leadership are measured by how rulers protect forests, rivers, and biodiversity. A king who destroys nature violates dharma. This reflects the principle that humans are stewards, not owners, of the earth. The Ramayana condemns unnecessary killing of animals or exploitation of resources.

With the help of Hanuman, a monkey, Rāma encounters Sugriva at the start of Kiṣkindha kaṇḍa (the book's fourth section). Sugriva offers to assist Rāma in discovering Sita's location. Sugriva informs Rāma of the curse placed on Vali, Sugriva's older brother, by the sage Matanga. When Vali and Dundubhi, a demon posing as a buffalo, engage in combat, Vali kills the buffalo and tosses it by the horn near the hermitage of the sage Mataṅga, killing numerous trees and plants (by the corpse of the buffalo). Having seen the destruction of natural vegetation and splashing of blood around, the sage curses him stating, "If the perverted fellow by whom these trees have been smashed while throwing away the corpse of a demon... remain in this forest, of mine – which has been nurtured (by me) like my own offspring – for the destruction of its leaves and shoots as well as for the extinction of its fruits and roots, I shall assuredly curse them too"15 [Valmiki-Ramayaṇa 2006, part 1, 778) From Sage Mataṅga's words, one can clearly perceive the deep anguish he experiences over the destruction of the forest's vegetation. The devastation feels so personal to him that it is as though his own being has been wounded. This episode embodies the principle of *advaita* (non-dualism), wherein the sage identifies and shares the emotions of the trees and plants as fellow beings. In condemning Vali for felling the trees he had nurtured like his own children, Matanga places ecological sensitivity at the heart of his curse. He decrees that Vali shall be transformed into stone should he ever enter the forest again. This reflects a profound eco-aesthetic sensibility, where the notion of "non-dualism" resonates with Cheng's second keystone model.

Advancing further, Rāma, aided by Sugrīva, sets out on the quest to find Sita. Sugriva is entrusted with leadership of the mission among the Vanaras (monkeys). He summons an immense army drawn from every corner of the land, accompanied by their distinguished chiefs—satbali, Kesari (Hanuman's father), Vinata, Nila, Gaja, Jambavant, Rumana, Gandhamadana, Aagada, Rambha, Nala, and many others. To organize the search, Sugriva dispatches these leaders in different directions, providing them with detailed instructions on the geography, natural features, and strategies for survival over the course of a month. Impressed by the precision and breadth of Sugriva's guidance regarding the terrain, biodiversity, and physical characteristics of diverse regions, Rāma asks him how he came to possess such remarkable and comprehensive knowledge.

"The trees there are thronged with birds and are ever full of flowers and fruits, possess an ethereal fragrance, taste and touch and yield all one's desires. Other excellent trees yield costumes of every shape and size and even so ornaments set with pearls and cat's eye jewels – costumes and ornaments which are fit for women and even so for men. Other excel lent trees bear fruit which can be gladly partaken of in all seasons; while still other excellent trees bring forth wonderful fruits looking like precious gems. Other trees in this land yield beds provided with variegated coverlet and garlands…"16 [Valmiki's Ramayaṇa 2006, part 1, 894].

In Sundar Kand, Hanuman's leap across the ocean is one of the most celebrated episodes of *Sundara Kaṇḍa*. His journey highlights the immensity and sacredness of natural landscapes — oceans, mountains, and skies are not inert backdrops but living forces that test and support him. The ocean itself is invoked as a sentient entity, offering passage when Hanuman prays, showing that nature responds to humility and devotion. Hanuman rests on Mount Mainaka, which rises from the ocean to offer him respite. This episode illustrates that mountains are living beings with agency, capable of compassion and support. It reinforces the ecological ethic that humans are not separate from nature but part of its kinship network. As Hanuman enters Lanka, he encounters lush groves, gardens, and forests. These landscapes are described with reverence, showing the abundance and fertility of nature even in enemy territory. The Ashoka grove, where Sita is kept, becomes a sacred ecological space — a site of resilience, hope, and communion with trees and plants.

Sita's presence in the Ashoka grove symbolizes her deep bond with nature. She draws strength from trees and plants, treating them as companions in her suffering. This reflects eco-feminist values: women and nature share resilience, nurturing power, and vulnerability under domination. Her prayers to the earth and trees embody the truth that humans belong to the earth, and the earth sustains them in times of crisis. Lanka, surrounded by lush forests and guarded by natural barriers,

represents both the bounty and fragility of ecosystems. Ravana's violation of dharma—abduction of Sita and exploitation of resources—symbolizes human arrogance against nature's balance.

The ecological insights of Sundarkand resonate with today's environmental crises. The epic warns against ruthless exploitation of resources and emphasizes ethical coexistence with nature. The phrase "We belong to the Earth" is a reminder that climate change, deforestation, and species extinction are consequences of forgetting our place in the ecological order.

Ayodhya, the realm of lord Ram, the people of Ayodhya were leading a lifestyle which was a combination of rural and urban. These people had all the civic amenities which were required for a reasonable and comfortable living. Their life was balanced, and people used their intellect but also adhered to their intuition. They didn't believe in a materialistic, gaudy and flashy display of wealth but in an ethical framework, equality, fraternity, simplicity, satisfaction and prosperity while ensuring sustainability. They were leading a peaceful and prosperous life without harming the flora and fauna of the region which has been described as Sanskriti. Kiskindha, which was called the kingdom of Vanaras, was the embodiment of living in harmony with nature, which was visible in their dwelling and food habits. It was rich in Biodiversity and the flora and fauna of the region were well preserved. In Ramayana, there is a reference to the Madhuban forest protected by the rulers of Kiskindha. In Kiskindha there were many skilled leaders like Hanuman, Sugreev, Bali, Nal, and Neel who were well-versed in various fields of Law, administration, engineering, geography, psychology, and spirituality. The dwellers of Kiskindha were very simple, honest, innocent, healthy and powerful. They behaved and acted spontaneously. They were living a harmonious life without destroying the flora and fauna of the region. A framework of equitable laws of nature was followed in Kiskindha which has been described as Prakriti. The kingdom of Lanka was ruled by Ravan who was very egoistic and of demonic tendency. Like Ravan, the inhabitants of Lanka were very greedy, dishonest, egoistic, and self-centred. They were only concerned about their pleasure and happiness. They didn't care about the well-being of their society and environment. They misused their power and exploited natural resources to satisfy their own need and interests. There are mentions of the destruction of forests spanning many kilometres resulting in reduced rainfall and depletion of some rivers and lakes. They killed many wild animals and oppressed and subjugated the common people. The people of Lanka think that the whole world was for their benefit and consumption. There were no harmony and sustainability in their way of living. In Lanka, there was an ugly, gaudy and flashy display of wealth and consumerism in its urban area which was earned through unethical means. People didn't adhere to their intuition but were living only by their intellect which leads to manipulative mental processes that have been described as Vikruti.

2. Conclusion

As a result, we may observe that the Ramayana depicts the protagonists' and other people's environmental consciousness. While the culture we live in is engrossed with the capital, Rāma is perceived as someone who is extremely aware of his surroundings, demonstrating his eco-ethical approach. Living sustainably and in balance with nature is the only way to avoid this anthropocentric world that is endangering the planet's very existence. Even a character's goodness is heavily influenced by how they treat nature, since well-known figures who are portrayed as virtuous and moral are also eco-ethical and eco-aesthetes. The text's portrayal of all life forms as reflections of ourselves may help us reestablish an eco-friendly connection with environment, thereby promoting eco-ethics for preserving and shielding it from ecological harm or biodiversity loss.

The Ramayana, beyond its mythic grandeur and moral lessons, offers profound ecological wisdom. The narrative consistently reminds us that human life is inseparably bound to the rhythms of nature. Forests are not merely backdrops but living sanctuaries; rivers are not just pathways but sacred lifelines; animals are not incidental but integral companions in dharma. The exile of Rama into the forest, the reverence shown to rivers like the Ganga and Godavari, and the ecological symbolism of vanaras and rakshasas all highlight a worldview where nature is sacred, not subordinate. The epic teaches that exploitation of the Earth leads to imbalance and destruction, while harmony with it ensures sustenance and peace.

Thus, the Ramayana anticipates modern eco-critical concerns: it warns against anthropocentric arrogance and affirms that the Earth is not a possession but a shared home. To belong to the Earth is to accept responsibility for its preservation, to live with humility, and to recognize that dharma itself is incomplete without ecological balance. In today's age of climate crisis, this ancient wisdom resonates with urgency. The Ramayana's eco-ethics remind us that sustainability is not a modern invention but a timeless truth: we are custodians, not owners, of the Earth.

3. References

1 Goldman, Robert P., trans. *The Ramayana of Valmiki: An Epic of Ancient India*. Princeton University Press, multiple volumes, 1984–2019.

2 Narayan, R. K. *The Ramayana: A Shortened Modern Prose Version of the Indian Epic*. Penguin Classics, 2006.

3 Shastri, Hari Prasad. *The Ramayana of Valmiki*. Shanti Sadan, 1952.

4 Bose, Buddhadeb. *The Ramayana*. Orient Longman, 1973.

5 Sharma, Arvind. *The Rāmāyaṇa and the Environment: An Ecocritical Reading*. Journal of Dharma Studies, vol. 2, no. 1, 2019, pp. 45–62.

6 Devi, Mahasweta. "Forest as Home: Tribal Ecology in Indian Epics." *Indian Literature*, vol. 35, no. 2, 1992, pp. 112–124.

7 Mukherjee, Sujit. *The Ramayana and Its Significance in Indian Culture*. Sahitya Akademi, 1990.

8 Kinsley, David. *Hindu Goddesses: Visions of the Divine Feminine in the Hindu Religious Tradition*. University of California Press, 1988.

9 Guha, Ramachandra. *Environmentalism: A Global History*. Oxford University Press, 2000.

10 Shiva, Vandana. *Staying Alive: Women, Ecology, and Development*. Zed Books, 1989.

Guidance from Ramayana on Navigating Moral and Ethical Dilemmas in Life

Prateek Khanna
(prateekkhanna.bea@gmail.com)

The Ramayana offers timeless guidance on navigating moral and ethical dilemmas in life, emphasizing dharma (righteousness) as the cornerstone of decision-making. Through the characters and their actions, the epic imparts profound lessons on ethics and integrity. Rama's unwavering adherence to duty, even at personal cost, underscores the importance of prioritizing ethical principles over personal desires. Sita's resilience in adversity and Hanuman's selfless service exemplify the virtues of patience, loyalty, and compassion. Moreover, the downfall of Ravana serves as a cautionary tale against ego and unethical behaviour. By balancing duty, wisdom, and empathy, the Ramayana provides a robust framework for resolving conflicts with integrity. Its enduring lessons inspire individuals to act ethically, uphold truth, and confront challenges with courage and faith.

1. Introduction

Ancient epics often serve as repositories of wisdom that transcend time and cultural boundaries. The Ramayana, attributed to the sage Valmiki, is one such epic that offers profound insights into human behaviour, ethical decision-making, and moral principles. As one of the foundational texts of Indian civilization, its influence extends beyond religious significance to provide practical guidance on navigating life's complex moral landscape. This paper explores how the Ramayana, through its narrative structure and character development, presents a comprehensive framework for addressing ethical dilemmas in contemporary contexts.

The relevance of the Ramayana's ethical teachings persists because the fundamental moral challenges faced by humans remain consistent across millennia. While technological advancement and social evolution have transformed the external conditions of human life, the internal tensions between duty and desire, self-interest and community welfare, and immediate gratification versus long-term principles continue to define the human moral experience. The epic addresses these tensions through exemplary characters who navigate similar dilemmas, providing models of ethical reasoning that can be adapted to modern circumstances.

This research examines how the Ramayana constructs its ethical framework through four primary mechanisms: character exemplars who embody specific virtues, narrative consequences that demonstrate ethical cause-effect relationships, explicit philosophical discourse on dharma, and contextual ethics that adapt principles to specific situations. By analyzing these mechanisms, this paper aims to distill actionable guidance for contemporary ethical decision-making.

2. Methodology

This paper employs a textual analysis approach, examining both the canonical Sanskrit Ramayana of Valmiki and significant regional variations that emphasize different ethical dimensions of the narrative. The analysis focuses on pivotal decision points within the narrative where characters face moral dilemmas, identifying the principles invoked, the reasoning process demonstrated, and the consequences portrayed. Additionally, the research draws on secondary literature from ethics, religious studies, and cultural anthropology to contextualize and interpret the Ramayana's ethical framework.

To ensure comprehensive coverage of the epic's ethical dimensions, the analysis is organized around key character studies (Rama, Sita, Hanuman, and Ravana), thematic ethical principles (dharma, satya, ahimsa, and tyaga), and categories of moral dilemmas (conflicting duties, personal versus public good, means versus ends, and responding to injustice). This structured approach allows for systematic extraction of ethical guidance applicable to contemporary scenarios.

3. Literature Review

Scholarly examination of ethics in the Ramayana spans multiple disciplines and interpretations. Early works by scholars like Sukthankar (2016) focused primarily on dharma as a rigid code of conduct within the epic, while later research by Goldman (1990) and (Shulman. D., 2007) emphasized the text's portrayal of dharma as contextual and adaptable. Richman's (2001) work on diverse Ramayana traditions highlights how different cultural contexts emphasize various ethical aspects of the narrative, suggesting the epic's ethical framework is not monolithic but multifaceted.

Contemporary scholarship has increasingly explored the relevance of the Ramayana's ethics to modern challenges. (Patel, P., & Chauhan, D., 2025) examines applications of Rama's leadership principles to business ethics, while Chakrabarti (2014) analyzes the epic's approach to environmental ethics through its portrayal of forest dwelling and respect for nature. Feminist

interpretations by scholars like (Sutherland, S.J., 1989) and (Pal, D., 2022) have critically examined the epic's gender ethics, particularly surrounding Sita's trials and the concept of female honour.

This paper builds upon existing literature while focusing specifically on extracting practical ethical guidance for contemporary moral dilemmas. Unlike previous studies that either focused narrowly on specific ethical themes or broadly on the epic's cultural significance, this research systematically maps the Ramayana's ethical framework to categories of real-world moral challenges faced by individuals in modern contexts.

4. Dharma: The Cornerstone of Ethical Decision-Making

4.1 Conceptualizing Dharma in the Ramayana

The Ramayana presents dharma not simply as a set of rules but as a comprehensive ethical orientation that encompasses duty, righteousness, moral order, and appropriate conduct according to one's role and context. Throughout the epic, dharma functions as the primary criterion for evaluating actions and decisions. When characters face difficult choices, the narrative consistently invokes dharma as the standard against which options must be measured.

Significantly, the Ramayana portrays dharma as simultaneously universal and contextual. Certain principles—truth-telling, non-violence, compassion—apply broadly, while other aspects of dharma depend on one's specific role, stage of life, and circumstances. This nuanced conception allows the epic to address the complexity of real-life ethical dilemmas where context matters without descending into moral relativism.

4.2 Hierarchy of Dharmic Principles

The epic establishes a clear hierarchy of dharmic obligations that helps resolve apparent conflicts between competing principles. Rama's decisions throughout the narrative demonstrate that dharma related to promises and truth (satya) generally supersedes dharma related to personal relationships or desires. When faced with exile on the eve of his coronation, Rama prioritizes honoring his father's promise over his rightful claim to the throne, demonstrating how commitment to truth outweighs personal entitlement.

Similarly, the epic suggests that dharma related to protection of the vulnerable takes precedence over non-violence. Rama's decision to wage war against Ravana is justified primarily through the dharma of protecting the weak and oppressed, indicating that the principle of non-harming (ahimsa) may be contextually subordinated to the duty of protection when necessary.

4.3 Dharma as Process Rather Than Mere Outcome

The Ramayana emphasizes that adherence to dharma involves not just reaching the right outcome but following the right process. This is illustrated when Rama could have simply killed Vali directly but instead chose to challenge him openly, albeit with strategic advantage. Even when the outcome seems justified, the narrative suggests that means matter in ethical action.

This procedural aspect of dharma provides guidance for contemporary ethical dilemmas by suggesting that ethical decisions require attention to not just what is decided but how the decision is reached. The epic portrays ethical characters engaging in deliberation, seeking counsel, considering consequences, and maintaining transparency—practices that remain relevant to modern ethical decision-making.

5. Rama: Ethical Leadership Through Personal Sacrifice

5.1 Prioritizing Duty Over Personal Desire

Rama's character serves as the central ethical exemplar in the Ramayana, with his unwavering commitment to dharma manifesting most dramatically in his acceptance of forest exile. Despite being the rightful heir to the throne and having widespread popular support, Rama unhesitatingly accepts fourteen years of exile to honor his father's word to Queen Kaikeyi. This decision illustrates the epic's central ethical principle: personal desires and entitlements must be subordinated to dharmic duty.

This choice is particularly instructive because the narrative presents Rama with multiple legitimate justifications for rejecting exile. His teacher Vasishtha argues the promise was extracted through manipulation and therefore invalid. The citizens argue that their collective welfare should outweigh a private promise. Even his father King Dasharatha suggests the promise could be reconsidered. By rejecting these seemingly reasonable arguments, Rama demonstrates that ethical principles must sometimes be maintained even when pragmatic considerations suggest otherwise.

5.2 Constancy Across Changing Circumstances

The Ramayana portrays ethical character as maintaining consistent principles across changing external circumstances. During his forest exile, Rama continues to live by royal ethical standards despite being removed from the palace. He defends the forest sages from demonic forces, respects the territorial boundaries of forest dwellers, and maintains his personal discipline. This consistency illustrates that ethical principles transcend social context—what is right remains right regardless of whether one is a crowned prince or a forest dweller.

This aspect of Rama's character offers guidance for navigating modern ethical challenges that often arise when individuals move between different contexts with seemingly different moral expectations. The epic suggests that core ethical principles should remain constant even as their application might adapt to new circumstances.

5.3 Balancing Justice and Compassion

One of the most ethically complex situations in the epic occurs after Rama rescues Sita from captivity. Despite his personal desire to reunite with his wife, Rama requires Sita to undergo an ordeal by fire (agni pariksha) to prove her purity before accepting her. This controversial episode demonstrates Rama's struggle to balance personal compassion with his public responsibility as a future king concerned with social perception and precedent.

While interpretations of this episode vary widely, it illustrates the Ramayana's recognition that ethical leadership often involves balancing competing ethical obligations. The narrative doesn't present Rama's decision as unambiguously correct, allowing readers to engage with its ethical complexity. This nuanced portrayal suggests that even exemplary ethical individuals may face situations where perfect solutions are impossible and difficult balancing is required.

6. Sita: Moral Courage and Resilience in Adversity

6.1 Ethical Autonomy Within Constraints

Sita's character demonstrates ethical agency even within severely constrained circumstances. During her captivity by Ravana, she maintains her moral integrity despite threats, manipulations, and isolation. When offered wealth and power as Ravana's queen, she firmly rejects these enticements, demonstrating that ethical choices remain possible even under extreme duress.

This portrayal offers guidance for contemporary situations where individuals face pressure to compromise their values due to external constraints or power imbalances. Sita's example suggests that internal ethical commitment can persist regardless of external limitations on autonomy.

6.2 Truth as Ethical Power

The Ramayana portrays adherence to truth (satya) as a source of moral power that transcends physical force. When Sita undergoes the agni pariksha, her unwavering commitment to truth protects her from the flames, with the fire god Agni himself emerging to proclaim her purity. This episode establishes truth as an objective reality with tangible power rather than merely a subjective virtue.

This conception of truth as an ethical force offers guidance for contemporary dilemmas involving truth-telling under difficult circumstances. The epic suggests that alignment with truth provides ethical protection that may not be immediately apparent but ultimately vindicates the truth-teller.

6.3 Dignified Response to Injustice

Perhaps Sita's most powerful ethical lesson comes through her response to unjust treatment. When subjected to public suspicion despite her innocence, she maintains her dignity without becoming bitter or vengeful. Her eventual decision to return to the earth rather than continue suffering unjust suspicion demonstrates moral autonomy and self-respect in the face of persistent injustice.

This aspect of Sita's character offers guidance for ethically responding to wrongful treatment without perpetuating cycles of harm. Her example suggests that maintaining dignity, speaking truth, and sometimes withdrawing from harmful situations can constitute ethical responses to injustice that preserve personal integrity without escalating conflict.

7. Hanuman: Selfless Service and Applied Intelligence

7.1 Devotion as Ethical Foundation

Hanuman introduces devotion (bhakti) as an ethical motivating force distinct from mere duty or self-interest. His selfless service to Rama demonstrates how devotion to worthy principles or individuals can generate extraordinary ethical action without expectation of personal reward. When asked to search for Sita, Hanuman undertakes the mission with complete commitment, overcoming seemingly impossible obstacles through devotion-inspired courage and resourcefulness.

This devotional aspect of ethics offers guidance for sustaining ethical commitment through difficult challenges. The epic suggests that connecting ethical action to deeply held values and commitments provides motivational resources that mere rational calculation of duty cannot supply.

7.2 Intelligence in Ethical Action

The Ramayana presents Hanuman not merely as physically powerful but as intellectually discerning. His search for Sita in Lanka demonstrates that ethical effectiveness requires wisdom and strategic thinking. When infiltrating the enemy city, Hanuman carefully considers various forms he might take, ultimately choosing an approach that would minimize harm while accomplishing his mission.

This portrayal suggests that ethical action requires not just good intentions but intelligent execution. Hanuman's ability to adapt his approach to circumstances—sometimes using strength, sometimes using stealth, sometimes using persuasion—demonstrates that ethical effectiveness depends on discernment about appropriate means in specific contexts.

7.3 Emotional Intelligence in Ethical Communication

When Hanuman finally locates Sita, he demonstrates remarkable emotional intelligence in how he communicates with her. Recognizing her vulnerability and potential suspicion, he approaches gradually, speaks gently, and presents Rama's signet ring as proof of his identity. This careful approach prevents adding to her distress despite his urgency to confirm her location.

This episode illustrates that ethical action includes not merely what one does but how one does it. Hanuman's consideration of Sita's emotional state represents compassion as an essential component of ethical conduct, suggesting that truly ethical action accounts for its impact on others' wellbeing.

8. Ravana: The Ethical Perils of Unchecked Power

8.1 Knowledge Without Ethical Application

The Ramayana presents Ravana not as ignorant of ethics but as knowledgeable yet unwilling to apply ethical principles to himself. As a learned scholar and devotee of Shiva, Ravana possesses knowledge of dharma but exempts himself from its constraints. When advised by his brother Vibhishana to return Sita and make peace with Rama, Ravana dismisses this ethical counsel, illustrating how knowledge without application leads to moral failure.

This aspect of Ravana's character offers guidance regarding the insufficiency of mere ethical knowledge. The epic suggests that intellectual understanding of ethics must be accompanied by the humility to apply ethical standards to oneself rather than seeking exemptions based on power or special status.

8.2 The Corrupting Influence of Ego

Ravana's downfall illustrates how unchecked ego (ahamkara) distorts ethical reasoning. Despite his intelligence and accomplishments, Ravana's excessive pride prevents him from acknowledging wrongdoing or accepting wise counsel. Even when confronted with certain defeat, his ego prevents the ethical reassessment that might have saved him.

This portrayal offers guidance regarding the ethical importance of managing ego and cultivating humility. The epic suggests that genuine ethical wisdom includes the capacity to recognize one's mistakes and limitations—a capacity that ego directly undermines.

8.3 The Limitations of Partial Virtue

Interestingly, the Ramayana attributes certain virtues to Ravana, including courage, knowledge, and devotion to Lord Shiva. However, these partial virtues ultimately prove insufficient because they exist alongside major ethical failures regarding respect for others' autonomy and dignity.

This nuanced portrayal suggests that ethical character requires comprehensive rather than selective virtue. The epic implies that compartmentalized ethics—following principles in some domains while violating them in others—ultimately undermines moral integrity.

9. Ethical Decision-Making Framework Derived from the Ramayana

9.1 The Four-Step Process

Based on the ethical reasoning demonstrated throughout the Ramayana, a systematic framework for ethical decision-making can be derived:

1. **Dharma Identification**: Determine the relevant ethical principles and duties applicable to the situation, considering universal dharma and context-specific dharma based on one's role and relationship to others involved.
2. **Hierarchical Evaluation**: When multiple principles apply, evaluate their relative importance using the hierarchy suggested by the epic: truth and promises generally supersede personal benefit; protection of the vulnerable may supersede non-harming when necessary; and public welfare may sometimes require personal sacrifice.
3. **Deliberative Consultation**: Seek counsel from those with relevant ethical wisdom, considering multiple perspectives before making decisions. Throughout the epic, ethical characters engage in dialogue before major decisions—Rama consults with Lakshmana, Hanuman, and others.
4. **Integrated Implementation**: Execute the decision with attention to both ends and means, considering how the manner of implementation affects its ethical quality. The epic consistently emphasizes that right action involves both right intention and right execution.

9.2 Balancing Competing Ethical Considerations

The Ramayana acknowledges that ethical dilemmas often involve competing considerations that must be balanced rather than simplistically resolved. When Rama must choose between his duty as husband and his duty as king regarding Sita's return from captivity, the narrative presents this as a genuine dilemma without a perfect solution.

This aspect of the epic offers guidance for navigating the complexity of real-world ethical challenges that rarely present clear-cut answers. The Ramayana suggests approaching such dilemmas with careful deliberation, consultation, and respect for the legitimate tensions between competing ethical principles.

9.3 Contextual Application of Principles

While upholding certain principles as universal, the Ramayana acknowledges that their application may vary according to context. The concept of apad-dharma (ethics during distress) recognizes that extreme circumstances may temporarily modify ethical obligations. When Hanuman destroys parts of Lanka to create a diversion, this destruction is justified by the emergency context of rescuing Sita and the broader mission of restoring dharma.

This contextual dimension of ethics offers guidance for adapting principles to unique or extreme situations without abandoning them entirely. The epic suggests evaluating contexts not as excuses to discard ethics but as factors that inform how universal principles should be applied in particular cases. Contextual adaptation in the Ramayana is never arbitrary but follows discernible patterns that maintain ethical coherence across different situations.

The epic demonstrates three criteria for legitimate contextual adaptation of principles:

1. The adaptation serves to protect or restore a higher ethical principle
2. The adaptation is temporary rather than permanent
3. The adaptation is undertaken with awareness of its exceptional nature

These criteria help distinguish legitimate contextual adaptation from mere rationalization of unethical behavior, providing guidance for situations where strict application of ordinary ethical rules may be impossible or counterproductive.

10. Application to Contemporary Ethical Dilemmas

10.1 Professional Ethics and Integrity

The Ramayana's ethical framework offers valuable guidance for navigating contemporary professional dilemmas. Rama's unwavering commitment to truth despite personal cost provides a model for maintaining professional integrity even when honesty might result in career setbacks or financial losses. This principle applies directly to modern ethical challenges involving truth-telling in organizational contexts, such as whistleblowing, financial reporting, or disclosure of product defects. Similarly, Hanuman's combination of devotion and strategic thinking offers guidance for balancing loyalty to organizations with ethical discernment. His example suggests that organizational loyalty should never become blind obedience but must be guided by higher principles. This framework helps professionals navigate situations where organizational demands conflict with ethical standards, suggesting that genuine organizational service may sometimes require respectful challenge to unethical directives.

10.2 Leadership Ethics

The concept of Ram Rajya (Rama's rule) provides a model for ethical leadership that remains relevant across cultural and historical contexts. The epic portrays ideal leadership not as domination or exploitation but as service-oriented stewardship that prioritizes collective welfare over personal benefit. Rama's leadership approach emphasizes leading by example rather than mere proclamation—a principle that directly addresses contemporary leadership challenges involving ethical modeling and organizational culture.

The epic's portrayal of Ravana's downfall despite his knowledge, power, and partial virtues offers cautionary guidance regarding the ethical perils of leadership. His inability to accept counsel, recognize his mistakes, or control his desires illustrates how power can corrupt judgment when not balanced by humility and self-restraint. This narrative provides a framework for understanding ethical failures in modern leadership contexts, from corporate scandals to political corruption.

10.3 Ethical Response to Injustice

Contemporary societies continue to struggle with appropriate responses to injustice, whether personal or systemic. The Ramayana offers nuanced guidance through its portrayal of characters responding to wrongful treatment. Sita's maintenance of dignity without bitterness when faced with unjust suspicion provides a model for preserving moral integrity amid unfair treatment without perpetuating cycles of resentment and retaliation.

At the same time, Rama's eventual confrontation with Ravana demonstrates that opposing injustice sometimes requires forceful resistance rather than mere acceptance. This balanced approach offers guidance for discerning when accommodation versus resistance represents the more ethical response to wrongdoing. The epic suggests evaluating this choice based on the broader impact on dharma rather than personal preference or emotion.

10.4 Navigating Conflicts Between Public and Private Roles

Modern individuals often face tensions between their public responsibilities and personal relationships, creating ethical dilemmas that resist simple resolution. The Ramayana acknowledges such tensions, particularly through Rama's difficult decisions regarding Sita's return from captivity, where his role as king comes into tension with his role as husband.

The epic doesn't provide simplistic answers to such dilemmas but rather a process for navigating them with integrity. This process includes careful deliberation, consultation with diverse perspectives, transparent reasoning, and acceptance of the inherent limitations of human decision-making. By portraying even exemplary characters as struggling with such tensions, the Ramayana offers realistic guidance for managing similar conflicts in contemporary contexts.

11. Ethical Framework for Conflict Resolution

11.1 Prioritizing Truth over Victory

When conflicts arise, the Ramayana consistently emphasizes truth (satya) as more important than victory. This principle appears throughout the epic, including Rama's decision to openly challenge Vali rather than attacking by stealth despite tactical disadvantage. Similarly, when Ravana's son Indrajit uses illusion to appear to have killed Sita, Hanuman verifies the truth before reporting back—illustrating that accurate understanding must precede effective action.

This truth-centered approach offers guidance for modern conflict resolution by prioritizing factual clarity and honest communication over tactical advantage. The epic suggests that sustainable resolution requires acknowledging rather than distorting reality, even when truth complicates one's preferred narrative.

11.2Recognizing Legitimate Interests Across Divides

The Ramayana portrays even antagonists as having certain legitimate interests and qualities. Ravana is recognized as learned, powerful, and devout to Lord Shiva despite his ethical failures. By acknowledging these qualities, the epic presents conflict not as a simplistic battle between absolute good and absolute evil but as opposition to specific harmful actions while recognizing the complex humanity of opponents.

This nuanced portrayal offers guidance for modern conflict resolution by distinguishing between opposing harmful behavior and dehumanizing opponents. The epic suggests that effective resolution requires recognizing legitimate interests on all sides while firmly opposing specific violations of dharma.

11.3 Offering Paths to Redemption

The Ramayana consistently portrays possibilities for redemption when characters acknowledge wrongdoing. Vibhishana, despite being Ravana's brother, is welcomed into Rama's camp when he breaks with his brother's unethical choices. Even Ravana is offered opportunities to avoid destruction by returning Sita and making amends—opportunities he rejects due to pride rather than their unavailability.

This redemptive dimension offers guidance for resolving conflicts through reconciliation rather than perpetual punishment. The epic suggests that ethical conflict resolution includes creating pathways for reintegration when opponents demonstrate genuine commitment to ethical principles.

12. Cultivation of Ethical Character

12.1Virtues as Habits of Character

The Ramayana portrays ethical character not as innate but as developed through consistent practice. Characters like Rama and Hanuman demonstrate virtues—courage, compassion, truthfulness, self-discipline—that have become habitual through repeated application. This developmental perspective on virtue offers guidance for ethical growth by emphasizing that moral character is cultivated rather than merely inherited.

This approach aligns with contemporary virtue ethics while providing concrete examples of virtue development through narrative. The epic suggests that ethical improvement requires deliberate practice of virtues across varying circumstances until they become second nature.

12.2The Role of Ethical Exemplars

Throughout the Ramayana, ethical development occurs not just through abstract principles but through relationship with exemplary individuals. Characters like Lakshmana and Hanuman develop ethically through their association with Rama, whose example provides both inspiration and practical guidance for virtuous living.

This emphasis on exemplars offers guidance for ethical development in contemporary contexts by highlighting the importance of identifying and engaging with individuals who embody admirable virtues. The epic suggests that ethical growth is inherently relational rather than purely individualistic, occurring within communities of practice where virtues are demonstrated, recognized, and reinforced.

12.3Integration of Intellect, Emotion, and Action

The Ramayana portrays ethical character as involving the integration of understanding (intellectual), feeling (emotional), and behavior (practical). Ethical exemplars in the epic demonstrate not just knowledge of principles or mere emotional responsiveness but the alignment of thought, feeling, and action in coherent ethical expression.

This integrated approach offers guidance for holistic ethical development that addresses cognitive, affective, and behavioral dimensions of character. The epic suggests that genuine ethical growth requires developing ethical understanding, cultivating appropriate emotional responses to moral situations, and practicing consistent ethical action until these dimensions reinforce rather than undermine each other.

13. Conclusion

The Ramayana provides a comprehensive ethical framework that remains remarkably relevant to contemporary moral challenges. Its approach to ethics—emphasizing dharma as the cornerstone of decision-making while acknowledging contextual complexity—offers guidance that balances principle with practical wisdom. Through exemplary characters who demonstrate both ethical achievement and ethical struggle, the epic presents ethics not as abstract theory but as lived practice navigating real dilemmas.

The Ramayana's ethical framework is particularly valuable for contemporary contexts in four respects:

First, it offers a process-oriented approach to ethical decision-making that focuses not just on outcomes but on how decisions are reached, emphasizing deliberation, consultation, and consideration of multiple perspectives.

Second, it presents ethics as simultaneously principled and contextual, maintaining commitment to core values while acknowledging that their application must respond intelligently to specific circumstances.

Third, it portrays ethical development as a lifelong process of character cultivation rather than mere rule-following, offering guidance for developing habits of virtue that sustain ethical action across diverse situations.

Fourth, it demonstrates the integration of seemingly different ethical approaches—duty-based, virtue-based, and consequence-sensitive—in a coherent ethical framework that draws on the strengths of each perspective.

In a world of increasing moral complexity and ethical uncertainty, the Ramayana reminds us that the fundamental human challenges of balancing competing obligations, controlling destructive desires, responding to injustice, and maintaining integrity amid adversity have been faced by generations before us. Its enduring ethical wisdom offers not simplistic answers but a thoughtful framework for navigating these challenges with courage, compassion, and commitment to dharma.

14. References

1. Patel, P., & Chauhan, D. (2025). Exploring Human Values in the Epic Ramayana. *Journal of General Education and Humanities*, *4*(2), 299-308.
2. Chakrabarti, A. (2014). The moral psychology of the Ramayana: Virtue ethics in ancient India. *Journal of Religious Ethics*, 42(3), 401-419.
3. Goldman, R. P. (1990). *The Ramayana of Valmiki: An Epic of Ancient India*. Princeton: Princeton University Press.
4. Pallathadka, H., Roy, P. D., Devi, T. B., & Imphal, M. Unexplored Dimensions of Lord Rama's Character: A Comprehensive Review of Subtle Virtues and Their Contemporary Relevance.
5. Dalwadi, P. (2024). Lessons on ethics, courage and loyalty for today's organisations from the Ramayana. *International Journal of Multidisciplinary Research and Growth Evaluation*, *5*(02).
6. Pal, D. (2022). Feminist Analysis of Adaptations of the Ramayana. *Integrated Journal for Research in Arts and Humanities*, *2*(5), 13-17.
7. Shulman, D. (2007). The Language of the Gods in the World of Men: Sanskrit, Culture, and Power in Premodern India. By SHELDON POLLOCK. Berkeley and Los Angeles: University of California Press, 2006. 703 pp. $75.00 (cloth). *The Journal of Asian Studies*, *66*(3), 819-825.
8. Richman, P. (2001). *Questioning Ramayanas: A South Asian Tradition*. Berkeley: University of California Press.
9. Sukthankar, V. S. (2016). *On the Meaning of the Mahabharata*. Motilal Banarsidass.
10. Sutherland, S. J. (1989). Sītā and Draupadī: Aggressive behavior and female role-models in the Sanskrit epics. *Journal of the American Oriental society*, 63-79.

The 16 Gems that Adorn Sri Rama

Brinda Narayanan
(bnarayan321@outlook.com)

1. Introduction

One great thinker has aptly defined the world as God's workshop for making men. Long long ago, into this world of misery and mirth, came a man who was part of the soil but whose feet were above the soil. He was divinity in the disguise of a man. He came, smiled, suffered, led and sacrificed. He carried his heart in his hand, like a palm branch waved all discords into peace and moulded the hearts and heads of the people with whom he came into contact. He was born a man on earth, became the uncrowned king of the people and ultimately rose to the position of a man of God. Yes, that man, that God man is Sri Rama, the undisputed leader of his times and the personification of Dharma. For generations to come, humanity has been trying to emulate him, inherit at least a few of his noble qualities and follow in his footsteps of dharma. Great men like Mahatma Gandhi, Saint Tulsidas, Samarth Ramdas, Sri Ramakrishna Paramahamsa, Saint Thyagaraja and many others were ardent followers of Sri Rama and were able to lead humanity by virtue of their ennobling qualities and creations which they acquired through their intense faith and adherence to the path of dharma so endearingly and intensely followed by Sri Rama. Even today it is very hard to believe that such an ardent follower of dharma as Sri Rama existed in flesh and blood on this earth. What made him so unique, so endearing and so emulative that even today Sri Rama shines as beacon light to guide humanity into the path of dharma?

2. How the story of Ramayana unfolds

In the opening chapter of Valmiki Ramayana, sage Narada visits his ardent disciple sage Valmiki at his hermitage and during their conversation they dwell upon the 16 characteristics or 'gunas' of a 'Uttama Purusha' and thus the epic of Valmiki Ramayana unfolds. Those are the glittering gems that adorn Sri Rama and make him the most endearing personality for human kind to admire and emulate for generations. In this paper a humble attempt has been made to delineate a few of those characteristics with illustrations from Sri Rama's life.
Sage Valmiki poses the following questions to sage Narada:

कोन्वस्मिन्साम्प्रतं लोके गुणवान्कश्च वीर्यवान् |
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रत:॥1.1.2॥
चारित्रेण च को युक्तस्सर्वभूतेषु को हितः ।
विद्वान्क: कस्समर्थश्च कश्चैकप्रियदर्शनः ॥1.1.3॥
आत्मवान्को जितक्रोधो द्युतिमान्कोऽनसूयक: ।
कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे ॥1.1.4॥
एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे ।
महर्षे त्वं समर्थोऽसि ज्ञातुमेवंविधं नरम् ॥1.1.5॥

"Who in this world lives today endowed with excellent qualities, prowess, righteousness, gratitude, truthfulness and firmness in his vows? 1.1.2

Who is that one gifted with good conduct, given to the wellbeing of all living creatures, learned in the lore (knowledge of all things that is known), capable of doing things which others cannot do and singularly handsome?1.1.3

Who (among men) is self restrained? Who has conquered anger? Who is endowed with brilliance and free from envy? Who is that when excited to wrath even the devatas, are afraid of (let alone foes)? 1.1.4

O Maharshi, I intend to hear about such a man whom you are able to place? Indeed great is my curiosity".

3. The 16 Gems the Adorn Sri Rama explained

Sage Narada responds saying that such a person is none other than Sri Rama, born in the race of king Ikshvaku and he goes on to describe the ennobling qualities of Sri Rama or rather the gems that adorn Sri Rama.

1. Guṇavān (गुणवान्) -Virtuous, 2.Vīryavān (वीर्यवान्) - Heroic/Powerful, 3.Dharmajñaḥ (धर्मज्ञः) - Knower of Dharma, 4.Kṛtajñaḥ (कृतज्ञः) - Grateful, 5. Satyavākyaḥ (सत्यवाक्यः) - Truthful, 6. Dṛḍhavrataḥ (दृढव्रतः) - Firm in resolve/Steadfast, 7.

Cāritravaan (चारित्रवान्) - Of excellent conduct, 8. Sarvabhūteṣu hitaḥ (सर्वभूतेषु हितः) - Well-wisher of all beings, 9. Vidvān (विद्वान्) - Learned, Wise, 10. Samarthaḥ (समर्थः) - Capable, Efficient, 11. Ekapriyaḥ (एकप्रियः) - Universally beloved, 12. Ātmasaṃyama-vanaḥ (आत्मसंयमवान्) - Self-controlled, 13. Jitendriyaḥ (जितेन्द्रियः) - Master of the senses, 14. Viditaḥ Lokasya (विदितो लोकस्य) - Well-known/esteemed by the world, 15. Prakṛti-priyaḥ (प्रकृतिप्रियः) - Loved by the people, 16. Śīla-sampannaḥ (शीलसंपन्नः) - Possessor of noble character.

Illustrations of the Characteristics of Rama through Illustrations

Now let us unearth some of the most precious gems that adorn Rama, through illustrations from his life viewed through the lenses of sage Valmiki (as described in Valmiki Ramayana), the Tamil poet Kamban (as described in Kamba Ramayana) and saint Tulasidas (as described in Ramcharitamanas) and a few others.

Dṛḍhavrataḥ (दृढव्रतः) - Firm in resolve/Steadfast

- In Ayodhya Kandam, King Dasharatha was making elaborate arrangements for the coronation of Sri Rama. Queen Kaikeyi provoked by the ill advice of evil Mantara, asks Dasharatha for 3 boons . Dasharatha though not inclined by his own sweet will to grant them, is constrained to keep up his word according to his dharma. Kaikeyi informs Rama that he is ordered by king Dasharatha to be in exile for 14 years and her son Bharata will be coronated the king. Rama immediately accepts that as the king's order without even questioning. For him keeping his father's promise is the foremost dharma and he is steadfast in fulfilling this. Rama tells Kaikeyi "सुनु जननी, मैं पूरन करिहउँ,पितु के बचन, मम परम धरम." (Ramcharitamanas) - Meaning "Mother, I shall surely fulfill Father's words . For me, that is the highest dharma". He never once wavered from his commitment even though he was well aware of the many hardships that may follow this commitment."Ulagam muzhudhum ulukkiya podhilum alagu asaiyadha aanmai udayaan" (Kamba Ramayana) - Meaning "Even if the whole world trembles, his soul will not move a hair's breadth." No amount of persuasions from Lakshmana, Bharata, Sumantra, Guha, Sita, the sages, his ministers and his subjects could make him sway even a bit from his commitment. Such was his resolve.
- He resolves and remains committed to his Ekapatni Vrata throughout his life even though kings before him in Ikshvaku clan including his own father, have married many women . "Oruttikke uriya oruyir" (Kamba Ramayana) .Meaning:"A life meant for only one woman."
- In Balakanda sage Vishwamitra requests Dasharatha to send Rama with him Although Dasharatha hesitates, Rama stands firm and supports the sage's request. He does not turn back even when facing the terrifying Taṭaka and other dangers. This indicates that Rama will never retreat when a righteous call is made to him.
- In Aranya Kanda, Rama vows to protect the sages from the demons who were Ravana's subordinates. He remains steadfast and ultimately protects them by defeating Ravana who had great boons bestowed upon him and who was a staunch Shiva Bhakta.
- In Aranya Kanda, after Sita's abduction Rama resolves to defeat Ravana and rescue Sita. Despite many obstacles such as the death of Jatayu, the arduous task of ocean crossing, the fall of many vaanaras, the despair in Kishkinda and the incapacitation of Lakshmana during the war, Rama steadfastly vows to defeat Ravana and rescue Sita and he succeeds in his mission in the Yuddha Kanda.

Kṛtajñaḥ (कृतज्ञः) - Grateful

- Gratitude to Jatayu : Rama never forgets the help that he received from Jatayu, the king bird that fiercely fought with Ravana while he was abducting Sita. Ravana cuts its wings with his sword and eventually Jatayu died in the combat. "Ullam urugi udiram sindhinadhu, udambu urukka, ugandha nandri unarndavan" (Kamba Ramayana) Meaning : "Rama's heart melted, His body trembled, for he recognized the great gratitude due to the bird". He even performs the final rites for Jatayu, something extraordinary in royal dharma .
- Gratitude to Hanuman : After Hanuman returns from Lanka on completion of his mission, Rama gratefully acknowledges that Hanuman has done something no one in the world could do. In a rare gesture he also embraces Hanuman. He also says"तुम्ह सम प्रिय मोहि नहिं कोऊ (Ramcharitamanas)।" Meaning : "No one is as dear to me as you are". This falls in the realm of deep friendship.
- Gratitude to Guha : Rama is ever grateful to Guha for his unconditional and self effacing love. Rama treats Guha as his own brother . He says "Guhanodum Aivaranom" (Kamba Ramayana) Meaning : "With Guha now we are five brothers". There is a deep emotional bondage between Guha and Rama with Guha being charged with emotion and tears in his eyes upon seeing Rama in forest robe. In a famous quote from Kamban, Rama says "Ennai thandhai pol kathaye, Guha" - Meaning - "Guha, you have protected me as a father would"!
- Gratitude to Sabari. Rāma accepts fruits that Sabari has chewed, not just tolerating but celebrating her devotion. He eats them "knowing the measure of her love" - this is Rama's acknowledgement of Safari's devotion and pure bhakti.

- Gratitude to Bharata : Rama is ever in admiration of Bharata's purity of heart calling him "the blessed one". He openly praises Bharata's purity, devotion and says Bharata's righteousness sustains the kingdom.

Guṇavān (गुणवान्) -Virtuous

- Rama is the embodiment of all virtues. Rama's virtues are rooted in the principles of dharma—he is the ideal son, brother, husband, and king. Vālmīki's portrayal is deeply philosophical and moral, focusing on Rama as the perfect man who follows dharma even in the face of personal loss and hardship.
- In the Ayodhya Kanda when king Dasharatha orders Rama to go into exile, Rama obeys even without blinking his eyes. He says "न हि धर्मेण मार्गेण स्वधर्मेण गच्छतु" (Valmiki Ramayana) - Meaning "I must follow the path of duty. This is my dharma as a son.". Here, Rama's devotion to duty shows his selflessness, even at the cost of personal happiness.
- Rama's Compassionate Leadership: When Rama is about to kill Ravaṇa, he recalls the many virtues of his opponent and undertakes the war only out of necessity for dharma
- Rama's devotion to Truth : When Sita is sent to the forest in Uttarakāṇḍa because of public rumor, Rāma upholds his commitment to truth and public honor, even at the cost of personal suffering."सत्यं तु धर्मतत्त्वज्ञा, न सदा कृतनिष्ठिता" Meaning - "Truth is the foundation of dharma, and it should never be abandoned, even for the beloved."

Dharmajñaḥ (धर्मज्ञः) - Knower of Dharma

- When Rama went into exile, Bharata was not in Ayodhya. When he returned back to Ayodhya and learnt about all the happenings, he was under extreme anger and grief, angry with his mother for sending Rama into exile and under grief because he did not want to become a king superseding his beloved brother Rama. So he decides to meet Rama in person and to persuade him to return back to Ayodhya and comes with his small entourage to the forest. Guha mistakenly thinks that he has come to fight with Rama and hence offers to fight Bharata himself But Rama knows the character of his brother and replies to Guha "भरतः धर्मपरः… मम प्रियतमः"- Meaning "Bharata is righteous… he is most beloved to me." Rama understands Bharata's purity and does not allow misunderstanding or violence to occur. He prevents adharma before it even arises.
- **Vibhiṣhaṇa's sharanagati :** When Vibhiṣhaṇa seeks refuge in Rama, everyone advises Rāma to reject him. But Rama being the dharmatma overrules their rejection and declares the famous dharma-sentence: "सकृदेव प्रपन्नाय… वयं न परित्यजामः" - Meaning: "One who comes to me once for refuge—I do not abandon."- Yuddha Kāṇḍa 6.30 (Valmiki Ramayana). Rama treads the path of dharma even when it appears to be politically dangerous.
- Sita's fire ordeal (Agnipariksha) - When Rama defeated Ravana and brought back Sita from Ashokavana, he made her go through the agnipariksha not because he was doubtful about Sita's character but to uphold Raja dharma . In fact he had immense faith in Sita's chastity. Rama himself admits "लोकस्य हितकाम्यया" - Meaning "For the welfare of society, I acted so."(Valmiki Ramayana) Yuddha Kaṇḍa 118. When there is a conflict between personal dharma and raja dharma a king is expected to rise above his personal prejudice and uphold raja dharma and that is exactly what Rama followed as a dharmajna.

Sarvabhūteṣu hitaḥ (सर्वभूतेषु हितः) - Well-wisher of all beings

- Rama was compassionate to all living beings He never discriminated against anyone be it human or non-human. Vālmīki frequently describes Rama as: "सर्वभूतहिते रतः"- Meaning "Delighting in the welfare of all beings."(Ayodhya Kaṇḍa 1.7). This is one of the earliest descriptions of Rama by Valmiki.
- We have already seen Rama's compassion to Jatayu, Hanuman and Sabari.
- Rama was compassionate even to his enemies. He gave refuge to Vibhishana even though he was a rakshasa and his staunch enemy Ravana. He was even compassionate to Ravana to such an extent that he performed his last rights. Upon Ravana's death Rama is struck with grief . According to Kamban, Rama says "En ediriyunum iniyavan van" - Meaning "Even though my enemy he is dear to me.". He weeps at Ravaṇa's fall: "Pagaivarkkum uttra parivu" (Kamba Ramayana) - Meaning "Compassion that extends even to enemies."
- In the Yuddha Kanda, when Ravana is completely disarmed by Rama ultimately, Rama turns compassionate and dharmajna and tells Ravana "Indru poi naalai baa" (Kamba Ramayana) Meaning - "You don't have any arms and I do not want to fight a nirayudhapani. So please go and come tomorrow fully equipped with your army". This is the height of compassion.

4. Conclusion

Sri Rama is a shining example of the heights to which the humans can elevate themselves by cherishing, imbibing and upholding dharma and related noble qualities. Even in the midst of severe conflicting problems, Rama held onto the path of dharma. It wasn't an easy path. But Sri Rama was steadfast in his resolution to uphold dharma and ultimately succeeded. Let

us follow in Sri Rama's footsteps and elevate ourselves. For this one has to do many sacrifices and pass through trials and tribulations in life. But to be extra-ordinary one cannot perform only ordinary feat. For this one needs a mind and will like Sri Rama. Rama's exemplary qualities can help humans to achieve this.

Foot note

This paper has tried to unearth a few of the rare gems that adorn Sri Rama. Many of the illustrations cited above will cover his other characteristics also hence in order to remain within the bounds of space and time it has been restricted to 5 qualities.

5. References

1. Valmiki Ramayana
2. Kamba Ramayana
3. Tulsidas's Ramcharitmanas
4. A few internet resources

Vālmiki's Vānaras: Human or Humanoid

Dhruv Parikshit
(dhruvparikshit15@gmail.com)

This paper explores the argument that the Vānaras of the Vālmiki Rāmāyana, including Hanumān, Sugriva or Jāmbvan, were not literal monkeys or Humanoids but rather human tribes with a distinct cultural identity. Evidence from the epic-whose extant text has evolved over time due to redactions and interpolations (to be discussed later in the paper) suggests the Vanaras had capital cities (like Kishkindha), strong governance and strong multi-storied houses. Key textual analysis points to the Vānara "tail" (langula) being an ornament or symbolic marker, not a biological appendage. Furthermore, the biological impossibility of their mythical birth to sages, Nagas or Rikshas and the subsequent offer of human maidens to Hanuman support the interpretation of Vānaras as a distinct, forest-dwelling human society with animal-inspired totems which let to their selections of attire and names.

1. Introduction

The Vālmīki Rāmāyaṇa, alongside the Vyāsa's Mahābhārata, stands as one of the two foundational historical texts of Vedic Indian culture. While over 300 different versions of the Rāmāyaṇa are said to exist, the original work by the sage Mahārishi Vālmīki is universally held in the highest esteem and considered the definitive account, a preference rooted in the tradition that the sage and Lord Rāma were almost contemporaries, lending the text unique historical authenticity. Despite its revered status, a clear, broad consensus is notably lacking in contemporary society regarding the actual appearance and nature of the Vānaras (the forest beings) within the epic. This paper explores the argument that the Vānaras of the Vālmīki Rāmāyaṇa, including prominent figures like Hanumān, Sugrīva, and Jāmbvan, were not literal monkeys or humanoids, but rather distinct human tribes with a sophisticated cultural identity. Evidence from the epic suggests the Vānaras possessed attributes indicative of an advanced human society, including established capital cities (such as Kiṣkindhā), strong governance structures, and the use of multi-storied dwellings. Key textual analysis points to the Vānara "tail" (lāṅgūla) being interpreted as an ornament or symbolic marker, not a biological appendage. Furthermore, the biological impossibility of their mythical birth to sages, Nāgas, or Ṛkṣas, coupled with human-like social practices such as the subsequent offer of human maidens to Hanumān, supports the interpretation of Vānaras as a distinct, forest-dwelling human society that utilized animal-inspired totems which informed their attire and nomenclature. This investigation is necessitated by the understanding that the epic's extant text has evolved over time due to redactions and interpolations, factors that will be discussed further in this paper.

2. Vālmiki's brief Introduction in Various Literatures

There are several misconceptions regarding Valmiki. It is often believed that he was once a bandit named Ratnakar, who attained divine knowledge (Brahmajnana) through the penance of Lord Shiva and began chanting the name of Rama. References to this story can be found in the Anushasana Parva of the Mahabharata, the Bhavishya Purana, the Skanda Purana, and the Adhyatma Ramayana section of the Brahmanda Purana. However, the Mahabharata contains only a brief mention of this, not a detailed account. In the book "Ramkatha Utpatti aur Vikas", Camille Bulcke provides a detailed distinction between the different historical figures known by the name Valmiki. The Valmiki mentioned in the Anushasana Parva is different from the Valmiki associated with Lord Rama. Many scholars of the Mahabharata believe that the Anushasana Parva is a later addition to the epic. K. M. Ganguli, in his Mahabharata commentary (KMG Mahabharata), writes: "The Anusashan Parva, like the Santi Parva before it, is a long hiatus in the narrative of the Mahabharata. Set on the deathbed of Bhishma, the Anusasana Parva is a huge treasure-trove of Brahmanic lore which is obviously a later interpolation in the epic." Along with various scholars, the late former IAS officer Shri M. R. Yardi, in his works Epilogue of Mahabharata and Mahabharata: Its Growth and Genesis, confirms, based on statistical and linguistic studies that a large part of the Anuśāsana Parva is not authentic and has evolved over time. His studies indicate that only chapters 1–27; 125–134; and 154 of the BORI Critical Edition of the Mahabharata are original, while the rest are interpolations. In the Spitzer Manuscript, the list of Mahabharata parvas (books) does not include the Anushasana and Virata Parvas. Former IAS officer Dr. Pradip Bhattacharya, another notable scholar and translator of the Mahabharata, also supports this view. The Virata Parva was originally part of the Vana Parva, which explains its absence from the Spitzer Manuscript. In Al-Biruni's writings, the Anushasana Parva is also not mentioned, suggesting that during his time, its content might still have been merged within the Shanti Parva. In the Bhavishya Purana (Pratisarga Parva, 4.10), the story appears in a more detailed form. There, a hunter (Mriga Vyadha) is described as someone who robbed and killed people. The Saptarishis (Seven Sages) instructed him to chant the word "Mara." Repeating it

continuously, he began chanting "Rama" instead, and eventually became Sage Valmiki. The Skanda Purana recounts the story of Valmiki in four different sections, each with slight variations. However, the Skanda Purana in its original form is not fully available, and its Critical Edition is still being developed — Universiteit Leiden: The Skandapurāṇa Project. One manuscript was discovered in Nepal, which differs by at least 95% from the version found in India. In the Skanda Purana, Valmiki's story appears in: Vaishakhamasa Mahatmya (Chapter 21, Vaishnava Khanda), Avantikshetra Mahatmya (Chapter 24, Avanti Khanda), Nagara Khanda (Chapter 124) and Prabhasakshetra Mahatmya (Chapter 278, Prabhasa Khanda). The Brahmanda Purana's Adhyatma Ramayana (Ayodhya Kanda, Sarga 6) also narrates this story, in which Valmiki himself recounts his transformation. According to the Uttara Kanda of the Valmiki Ramayana (93.17 and 96.19), Sage Valmiki was the tenth son of Pracheta. In the Manusmriti (1.35), Pracheta is described as the brother of sages such as Vasishtha, Narada, Pulastya, and Kavi. It is widely accepted among scholars that the Uttara Kanda was not composed by Valmiki himself. Puranic literature presents several contradictions regarding Valmiki. Among modern scholars, Pandit Bhagavadatta, a research scholar, wrote in his work that Sage Valmiki might have taught a branch of the Yajurveda, likely associated with the Krishna Yajurveda. In the Taittiriya Pratishakhya (5.36; 9.4; 18.6), a few sutras are attributed to Valmiki, suggesting that he may have composed texts related to Vedic pronunciation and grammar.

The Depiction of Vānaras in the Vālmiki Rāmāyana

Maharshi Valmiki is regarded as the Ādi Kavi (the first poet), and his composition, the Ramayana, is considered the Ādi Kāvyam (the first epic). In ancient Indian tradition, the term Kavi (poet) was also synonymous with Rishi (seer). In the opening section of his Ramayana, Valmiki clearly explains how this poem was composed and how readers are meant to receive it:

आश्चर्यमिदमाख्यानं मुनिना सम्प्रकीर्तितम्। परं कवीनामाधारं समाप्तं च यथाक्रमम्॥ (1.4.21)
श्रूयतामिदमाख्यानमनयोर्देववर्चसोः। विचित्रार्थपदं सम्यग्गायकौ तावचोदयत्॥ (1.4.27)

The expressions "Āścaryam idam ākhyānam" ("this wondrous narrative") and "Vichitrārtha-padam" ("adorned with words of intricate and layered meaning") indicate that the Ramayana was written in a way that fills the reader with wonder and employs verses rich in poetic ornamentation and multiple meanings.

A prime example of Valmiki's literary mastery can be seen in the episode describing Hanuman's journey to Lanka. Valmiki uses the word "Plava", meaning "a leap." When Angada asks the assembled Vanaras about their power to leap across the ocean, the verse reads: **ब्रुवध्वं यस्य या शक्तिः प्लवने प्लवगर्षभाः॥ (4.64.24)**

Here, Plavana means "leaping or bounding." The word Plavaga (another name for Vanara) literally means "one who leaps." Similarly, when Lakshmana builds a raft from wooden logs to cross the Yamuna River, Valmiki calls it a Plava or Mahāplava

— काष्ठसङ्घातमथो चक्रतुः सुमहाप्लवम्॥ (2.55.14)

This demonstrates Valmiki's poetic brilliance. His verses often carry layered meanings and visual imagery. Through his refined diction, the reader imagines Hanuman not swimming or merely jumping, but flying across the ocean. This vivid imagery arises not from literal narration but from Valmiki's artistic choice. Even today, writers and filmmakers use such symbolism like visual metaphors, hidden Easter eggs and clever story callbacks, to give their stories deeper meaning and visual depth full of meaningful metaphorical charm. Valmiki did not play with words for exaggeration or mystification, it was simply his creative style, an example of poetic liberty (kāvyātmaka svatantratā). Those familiar with literature and art can appreciate this aesthetic freedom. Given that Valmiki's tradition is also credited with teaching branches of the Yajurveda and composing works on Vyākaraṇa (grammar), it is no surprise that his Ramayana blends historical storytelling with wondrous poetic expression and multi-layered meanings. This is a testament to his genius and the enduring beauty of his epic.

Sugriva and the Human Nature of the Vānaras

Sugriva was the king of the Vanaras. In the Valmiki Ramayana, Vanaras are often described with terms like jana (people) and nara (men), which suggest their human-like qualities, for instance:

हृष्टपुष्टजनाकीर्णा (4.26.41); नारीमध्यगतं स्थितम् (4.34.6)

Here, the words jana and nara are clearly used for them, indicating that they were perceived as people rather than literal monkeys. These Vānaras also possessed the ability to change their appearance or form. When Shri Rāma and Lakshmana arrive, Sugriva, frightened by their presence, instructs Hanuman —

तौ त्वया प्राकृतेनैव गत्वा ज्ञेयौ प्लवङ्गम। (4.2.24)
कपिरूपं परित्यज्य हनुमान्मारुतात्मजः। भिक्षुरूपं ततो भेजे शठबुद्धितया कपिः॥ (4.3.2)

In these verses, Sugriva tells Hanuman to abandon his Vanara form and go in his natural form to observe the strangers. Hanuman, using his intelligence, takes the form of a bhikshu (ascetic) and approaches Shri Rama and Lakshmana.
When Rama meets Sugriva for the first time, Sugriva too assumes a human form:

श्रुत्वा हनुमतो वाक्यं सुग्रीवो हृष्टमानसः। भयं चराघवाद्घोरं प्रजहौ विगतज्वरः॥ (4.5.8)
सकृत्वा मानुषं रूपं सुग्रीवः प्लवगर्षभः। दर्शनीयतमो भूत्वा प्रीत्या प्रोवाच राघवम्॥ (4.5.9)

Meaning: "Hearing Hanuman's words, Sugriva's mind became joyful and all fear, especially of his brother Vali, left him. He became calm and confident and then took on a beautiful and gentle human form to converse respectfully with Lord Rama. Filled with devotion and affection, he began to speak with him."

Here, Sugriva himself seems to have camouflaged, changing his look as the situation and tribal customs required. These events are not presented as miracles; they reflect the natural way of life of the Vanaras, who could change forms at will.

Throughout the Valmiki Ramayana, there are several such references to the Vanaras appearing in their natural human-like form:

देवगन्धर्वपुत्रैश्च वानरैः कामरूपिभिः। दिव्यमाल्याम्बरधरैः शोभितां प्रियदर्शनैः॥ (4.33.6)
ते कृत्वा मानुषं रूपं वानराः कामरूपिणः॥ (6.130.43)

Before the Great War against Ravana in Lanka, Shri Rama held a council with Vibhishana and Sugriva. He instructed them that the Vanaras should not abandon their Vanara appearance during battle, for if they assumed human forms, it would be difficult to distinguish between their army and Ravana's. Only seven individuals would remain in human form — Rama, Lakshmana, Vibhishana, and Vibhishana's four ministers:

न चैव मानुषं रूपं कार्यं हरिभिराहवे॥ (6.37.33)
एषा भवतु संज्ञाने युद्धेऽस्मिन् वानरे बले। वानरैव नश्चिह्नं स्वजनेऽस्मिन् भविष्यति॥ (6.37.34)
वयं तु मानुषेणैव सप्त योत्स्यामहे परान्। अहमेषमम भ्रात्रा लक्ष्मणेन महौजसौ॥ (6.37.35)
आत्मना पञ्चमश्चायं सखा मम विभीषणः। सरामः कृत्यसिद्ध्यर्थं एवमुक्त्वा विभीषणम्॥ (6.37.36)

These verses reveal that the Vanaras, though symbolically called "monkey warriors," were in fact portrayed with human traits, social organization and even the power of transformation features suggesting that they were a distinct tribe or community of forest dwellers rather than literal simians.

Hanuman, Sugriva, Jambavan, Angada, and other Vanaras were not monkeys in the literal sense. The terms Vanara, Vanaukas, Vanchari, Plavanga, Shakhamriga etc. were used more as descriptive titles or epithets rather than biological categories. Taking them literally would be a mistake.

In Bālakāṇḍa (Sarga 17), the origin of the Vanaras is described, where it is clearly stated that sages, Rikshas (bears), Nagas (serpents), and others created them —

"देवा महर्षिगन्धर्वास्तार्क्ष्या यक्षा यशस्विनः। नागाः किम्पुरुषाश्चैव सिद्धविद्याधरोरगाः॥ (1.17.20)"

If one takes Riksha to mean "bear", Naga as "serpents" and Vanara to mean "monkey," then it becomes biologically impossible for a bear or a serpent to give birth to a monkey. It is universally accepted that the Maharshis were human, and they, too, are said to have given birth to Vanaras. Among Sugriva's foremost warriors was Archisman, the son or descendant of Rishi Marichi —

मरीचिपुत्रं मारीचमर्चिष्मन्तं महाकपिम्।(4.42.3).

This implies that these Vanaras were, in fact, members of distinctive tribal communities that identified themselves with animal names and adorned themselves with ornaments, symbols or attire inspired by those animals. Hanuman, Sugriva, and Jambavan likely belonged to such indigenous clans. That is why throughout the Valmiki Ramayana, we repeatedly find references to the Vanara warriors appearing in their human-like form. In a verse of Sundarakanda(CE 5.49.25), where Hanuman is describing Sugriva, there is a textual variation:

सुग्रीवो न हि देवोऽयं नासुरो न च राक्षसः। न दानवो न गन्धर्वो न यक्षो न च पन्नगः॥(5.51.27)
and
सुग्रीवो न हि देवोऽयं नासुरो न च मानुषः । न राक्षसो न गन्धर्वो न यक्षो न च पन्नगः ॥ (CE 5.49.25).

The reading "mānuṣa" in the second verse reading appears to be a later addition. In the original Valmiki Ramayana, vanaras are repeatedly described in human form. It seems that a scribe, perhaps considering vanaras to be some other kind of being, added "mānuṣa" alongside all the other demographics such as devas, asuras, rakshasas, danavas, etc. In popular understanding, these demographics are all distinct from human beings, each group looks different, their bodies are unusual and they are clearly separate from humans. Version 1 ("नासुरो न च राक्षसः / न दानवो न गन्धर्वो") has smooth phonetic transitions between words and avoids awkward consonant clusters that slow chanting, whereas Version 2 ("नासुरो न च मानुषः / न राक्षसो न गन्धर्वो") introduces a slightly harsher stop with 'मानुषः', which is metrically acceptable but stylistically less elegant. Classical Sanskrit poets preferred semantically coherent and phonetically flowing catalogues, which Version 1 preserves but Version 2 doesn't. Furthermore, the narrative makes little sense if Hanuman is supposed to frighten Ravana by saying Sugriva is not a human, what fear would Ravana have from a human? Even in some manuscript traditions where vanaras are human, the "mānuṣa" reading does not appear. The verse describes very powerful races(devas, asuras, rakshasas, danavas, etc), so including humans as different races feels out of place. It is possible that some later manuscript copyists, influenced by the puranik notion (or the mythical boon given by Brahma) that only a human could kill Ravana may have added this reading. This chapter (5.49) in the Critical Edition shows multiple variants of this particular shloka, but other shlokas are almost without variations. Taken together with textual, metrical, phonetic and narrative evidence, this indicates that the "mānuṣa" reading is a later addition and not part of the original Valmiki's text.

Sarpavamsa in Vedic Tradition

In the Rigveda, Hymn 10.76 is attributed to Jaratkarna Airāvata, a serpent sage (Sarparishi); Hymn 10.64 belongs to Arbuda Kādraveya, another serpent-born seer; and Hymn 10.186 is dedicated to Sārparājñī, a female sage from the serpent lineage. These names represent mantra-draṣṭā ṛṣis (seers) born in the Sarpavamsa (serpent lineage). The Nāgas or serpent clans mentioned in the Valmiki Ramayana and Mahabharata are connected to these same ancient lineages of serpent-descended sages.

The Śatapatha Brāhmaṇa (13.4.3.9) records:

"अर्बुदः काद्रवेयः राजेत्याह तस्य सर्पा विशस्तऽद्यऽआसतऽइति सर्पाश्च सर्पविदश्च-उपसमेता भवन्ति।"

Meaning, "On the fifth day, after the completion of the sacrifices, the Hotṛ says, 'Arbuda Kādraveya is the king; his subjects are serpents, the serpents and the knower of serpents (sarpavid) gather here.' Then they are instructed: 'Serpent lore is sacred knowledge; this is the Veda'. Thus, he recites a section of the Serpent Lore." This passage makes it clear that figures like Jaratkarna Airāvata and Arbuda Kādraveya were not literal serpents but belonged to a human tribe or lineage known as the Nāga or Sarpavamsa. The Śatapatha Brāhmaṇa explicitly states that along with the "serpents," the Sarpavids (the learned experts in serpent-lore and science) also assembled there. Hence, these were human communities identified with serpents either symbolically or to signify their deep knowledge of "serpent-lore" (Sarpavidyā). The word Kādraveya itself means "descendant of Kadru," the mythic ancestress of the serpent race. In this anthropological light, one may also question whether similar totemic or symbolic identities extended to the Vānara communities of the Ramayana, the groups who, like the Nāgas, may have represented distinct indigenous tribes identified by animal-based names and attributes rather than zoological species.

Kimpuruṣa

Some people identify the Vānara with the Kimpuruṣa. The word Kimpuruṣa literally means "What kind of man is this?", suggesting not a mythical creature but a distinct group of humans with unusual customs or appearance. In Bālakāṇḍa (1.17.20), several Vānaras are described as having originated from the Kimpuruṣas.

From a biological point of view, beings of the same physical form give birth to offspring of their own kind; therefore, the Vānaras could not have been part-animal, part-human hybrids. A close reading of Sarga 17 makes it clear that the Vānaras reflected the traits, behavior, and even outward appearance their attire and basic ornaments of their ancestral tribes- as expressed in the verse:

"यस्य देवस्य यद्रूपं वेषो यश्च पराक्रमः।अजायत समस्तेन तस्य तस्य सुतः पृथक्।। (1.17.18)"

Meaning, "Each son was born bearing the exact form, attire, and valor of the deity from whom he originated."

When Kumbhakarna arrives, the Vanaras, filled with fear, begin to flee. Angada roars at them like a lion, admonishing:

"आत्मानमत्रविस्मृत्यवीर्याण्यभिजनानि च । क्वगच्छतभयत्रस्ताःप्राकृताहरयोयथा।। (6.66.5)"

Meaning, "Angada says: 'Forgetting your own valor and the honor of your lineage, you are running away in fear like ordinary Vanaras!'"

(Although the riddle of giants such as Kumbhakarna in Valmiki's Ramayana and Ghatotkacha in Vyasa's Mahabharata are a separate topic with their own set of questions, they will be discussed later in a different analysis.)

If the Vanaras were literal monkeys, would Angada have used such words with this sense of honor and shame? The distinction is clear, the Vanaras are portrayed as human-like beings capable of pride, courage and moral reflection.

Similarly, consider the women of Kishkindha. If they were considered a non-human species, it would be odd that Lakshmana felt embarrassed upon seeing them:

"कूजितं नूपुराणां च काञ्चीनां निनदं तथा। सन्निशम्य तत श्रीमान्सौमित्रिर्लज्जितोऽभवत्॥ (4.33.25)"

Meaning, "Hearing the tinkling of anklets and the sound of hand ornaments, the illustrious Saumitra (Lakshmana) felt embarrassed."

"स तां समीक्ष्यैव हरीशपन्तीं तस्थावुदासीनतया महात्मा। अवाङ्मुखोऽभून्मनुजेन्द्रपुत्रः स्त्रीसन्निकर्षाद्विनिवृत्तकोपः॥ (4.33.39)"

Meaning, "The noble Lakshmana, seeing the Vanara king's wife (Tara), stood composed, lowered his head, and restrained his anger in the presence of the wise Tara."

In the same way, when Hanuman reached Lanka in search of Mother Sita, he saw many women sleeping in a state of physical repose. For a brief moment, his mind was unsettled, and he questioned the righteousness of his actions. Yet he quickly calmed himself, reflecting that he had observed these women without lust or immoral intent, remaining fully focused on his duty to find Sita.

"निरीक्षमाणश्च तदा ताः स्त्रियः स महाकपिः ॥ जगाम महतीं चिन्तां धर्मसाध्वसशङ्कितः। परदारावरोधस्य प्रसुप्तस्य निरीक्षणम्॥ इदं खलु ममात्यर्थं धर्मलोपं करिष्यति। न हि मे परदाराणां दृष्टिर्विषयवर्तिनी ॥ अयं चात्र मया दृष्टः परदारापरिग्रहः ॥ (5.11.36-47)"

Meaning, "The great Vanara became deeply concerned, fearing that by seeing these women he might violate dharma. He thought: 'Observing women, asleep in their private quarters, is certainly a serious breach of dharma. Yet my gaze carried no desire; my purpose was duty alone, to find Janak's daughter Sita. My sight was not driven by lust, only by responsibility.'"

These passages highlight that the Vanaras were portrayed as human-like beings capable of moral judgment, ethical concern and social sensitivity. If they had been a separate species, Hanuman's or Lakshmana's reactions such as embarrassment, self-restraint, ethical reflection etc. would not have been meaningful.

When Lord Shri Rama's arrival in Ayodhya was imminent, he sent Hanuman to meet Bharata. Upon hearing the news of Shri Rama's approach, Bharata was overjoyed and offered Hanuman numerous gifts. These included countless cows, many villages, and sixteen maiden women:

"गवांशतसहस्रं च ग्रामाणां च शतंपरम्। सकुण्डलाश्शुभाचारा भार्याः कन्यास्तुषोडश॥ (6.128.44)"

Meaning, "O noble Hanuman, for bringing me this sweet and auspicious news, I shall grant you thousands of cows, a hundred villages, and sixteen virtuous maiden women, well-behaved, adorned with earrings, beautiful noses, moon-like faces, golden complexions, and decorated with various ornaments."

At this time, Hanuman had abandoned his Vanara form and assumed a human appearance:

"इतिप्रतिसमादिष्टोहनूमान्मारुतात्मजः। मानुषः धारयनृपमयोध्यां त्वरितोययौ॥ (6.128.19)"

Even though Bharata was fully aware that Hanuman belonged to the Vanara lineage, he still gave him human women as gifts. This clearly indicates that, in Bharata's perception as well, the Vanaras were considered fully human in form and social status. This episode further reinforces the view that the Vanaras were not monkeys in the literal sense. If Hanuman were biologically a monkey, Bharata offering him human maidens would have been completely incongruous. Such a gift only makes sense if the Vanaras were in fact human, a forest-dwelling tribal community that adopted "Vanara" as a title or identifier. Even today, people in various regions carry surnames such as Singh, Nag, Mor, Bhalerav, Panwar, and Makar, which literally mean lion, serpent, peacock, bear, leopard, and crocodile. Many of the surnames in circulation today are inspired by animals, and in Hindu society they are considered part of respected ancestral lineages. In ancient epics, human societies were often associated with animal names. In the Aranyakanda of the Valmiki Ramayana (Chapter 14) and the Adi Parva of the Mahabharata (Chapter 65), poetic-mythical accounts describe the origin of various clans. The lineages of Vanaras, Rikshas (bears), and Nagas are traditionally connected to sages. For instance, Prajapati Daksha married several daughters to the royal sage Kashyapa. One of these daughters was Krodhavasha. Her children were Mrigi, Mrigamanda, Hari, Bhadramada, Matangi, Sharduli, Shveta, Surabhi, Sursa, and Kadru. The lineage of Kadru has already been discussed earlier; the Riksha lineage is said to have descended from Mrigi, which eventually produced Riksharaja Jambavan. The Vanara lineage is said to have descended from Hari, which is why Vanaras are also called "Hari." Based on these poetic genealogies,

it can be inferred that Devi Hari's marriage likely took place into the lineage of Sage Pulastya. All these accounts were written poetically so that they could be easily remembered and passed down through generations. Using poetry and narrative made it simpler for society to preserve and recall the genealogical knowledge. In contrast, if names and facts were recorded in a plain, literal manner, they would have been far more susceptible to loss, as written records could easily be destroyed. The same fate befell many branches of the Vedas, lost over the last 3,000–3,500 years for similar reasons.

How Did Hanuman Set Lanka on Fire?

If all Vanaras were human, the description of Hanuman's tail in the Sundarakanda becomes significant. Ravana himself states:

"कपीनां किल लाङ्गूलमिष्टं भवति भूषणम्। (5.53.3)"

Meaning, "For the Vanaras, the tail (lāṅgūla) is indeed a cherished ornament." Here, the word "ornament" clearly indicates that the tail was not a natural biological part of the body but an artificial or decorative element.

Later, the text describes:

"ततः पश्यन्त्विमं दीनमङ्गवैरूप्यकर्शितम्। समित्रज्ञातयस्सर्वे बान्धवाः ससुहृज्जनाः॥ (5.53.4)"

Meaning, "Now all his friends, acquaintances, relatives, and well-wishers see this pitiable one, afflicted by bodily defect and weakness."

Here, the tail is referred to as an "aṅga", which in Sanskrit can also mean a symbol or sign. This further strengthens the argument that the Vanara tail was not a biological organ but a symbolic or ornamental feature. Moreover, in later chapters of the Ramayana, Valmiki never mentions Hanuman's burned tail as part of his body.

Every living being loves all parts of its body equally; no being considers one part more beloved than others. Here, Ravana explicitly calls the tail a beloved part and an ornament, signaling that it was symbolic or decorative, not natural.

Understanding the subsequent verses poetically, the descriptions, like Sita praying to Agni for Hanuman's protection, are allegorical embellishments. Importantly, Sita's prayers are for Hanuman himself, not for his artificial tail:

"यद्यस्ति पतिशुश्रूषा यद्यस्ति चरितं तपः। यदि चास्त्येकपत्नीत्वं शीतो भव हनूमतः॥ (5.53.28)"

"If I am devoted to my husband, if his conduct is like a sage, and if he is a devoted husband, O Agni, be cool for Hanuman."

Hanuman himself reflects:

"दह्यमाने च लाङ्गूले चिन्तयामास वानरः। प्रदीप्तोऽग्निरयं कस्मान्न मां दहति सर्वतः॥ शिशिरस्येव सङ्घातो लाङ्गूलाग्रे प्रतिष्ठितः॥ (5.53.34-35)"

Meaning, "As his tail was burning, Hanuman thought: 'Why does this fire not burn me all around? The blazing fire appears only at the tip of the tail, yet I feel no pain; it is as if the cool season itself is settled there.'"

Thus, the fire affected only the tail and not Hanuman's body, clearly indicating that the tail was not biologically connected, it was a symbolic or artificial component.

Considering how epics like the Ramayana and Mahabharata evolved and are described as layered texts, such verses are possible. It is plausible that some descriptions, like Sita's perspective or poetic embellishments, were added later to enhance the narrative, rather than appearing in the original composition. Minor additions do not obscure the main evidences supporting the human-like portrayal of Vanaras.

Some scholars even consider the Lanka-dahan episode as a later interpolation. The Hindi scholar Camille Bulcke, in his book Ramkatha: Utpatti Aur Vikas (translated into English by former IAS officer Pradeep Bhattacharya), argues that the episode of Hanuman setting Lanka on fire in Sundarakanda may have been a later addition. He provides detailed references and analysis (pp. 409–411). In support of this, when Suka and Sarana, in the Yuddhakanda (28 in Gita Press, 19 in CE), describe the honor of Sugriva and Rama's army to Ravana, they do not mention Hanuman as having burned Lanka. This point deserves further discussion, because in the Aranya and Kishkindha Kandas, there is almost no mention of the tails of vanaras. Scholars such as the late M. R. Yardi, the late Camille Bulcke, and former IAS officer Pradip Bhattacharya have also emphasized this point in their writings.

In conclusion, no matter how one examines the description of the tail in Sundarakanda, the textual evidence indicates that Hanuman's and other Vanaras' tails were not natural body parts but artificial or symbolic.

Tails of other Vanaras

Now extending this point only, Ravana planned to send his spies, Suka and Sarana, into the Vanara army. He instructed:

"भवन्तौ वानरंसैन्यं प्रविश्यानुपलक्षितौ। परिमाणंच वीर्यंच ये च मुख्याः प्लवङ्घमाः॥ (6.25.4)"

Meaning, "You two should enter the Vanara army unnoticed. Observe its numbers, strength, and identify the key Vanaras." In response, the two Rakshasa warriors assumed Vanara forms to blend into the army:

"इति प्रतिसमादिष्टौ राक्षसौ शुक सारणौ। हरि रूप धरौ वीरौ प्रविष्टौ वानरम् बलम्॥ (6.25.10)"

Meaning, "Thus, following Ravana's command, the two valiant Rakshasas, Suka and Sarana, assumed the form of Vanaras and entered the Vanara army."

It is possible that the Vanaras commonly wore certain ornaments or symbolic accessories and Ravana's spies simply adopted these to appear as Vanaras. Vibhishana was able to recognize Suka and Sarana despite their disguise and at Rama's command, they were sent back to Ravana. When questioned, they provided detailed information about the Vanara army.

Here we will only talk about their tails. The Vanaras had a habit of striking their tails like hunters to produce sound, demonstrating enthusiasm and vigor:

यस्यलाङ्गूलशब्देनस्वनन्तिप्रदिशोदश। एषवानरराजेनसुग्रीवेणाभिषेचितः ॥ (6.26.16)

We do not observe such behavior in any tailed animal today. It is possible that their tails were not merely a bodily appendage but a distinctive feature of their tribal tradition. Similar practices are known elsewhere, for instance, in Egypt, kings used to wear bull tails as a symbol of strength.

All Vanaras reportedly had multicolored tails:

योऽसौशतसहस्राणिसहस्रंपरिकर्षति ॥ (6.26.28) यस्यवालाबहुव्यामादीर्घलाङ्गूलमाश्रिता।
ताम्रापीतास्सीताश्चेताःप्रकीर्णाघोरदर्शना ॥ (6.26.29) अदीनोरोषणश्चण्डस्सङ्ग्राममभिकाङ्क्षति।
एषोऽप्याशंसतेलङ्कांस्वेनानीकेनमर्दितुम् ॥ (6.26.30)

It is likely that such multicolored tails were a tribal custom, since it seems physically improbable for a single vanara's tail to display red, black, yellow, white and other colors simultaneously. Similar descriptions recur in the next chapter:

स्निग्धायस्यबहुव्यामावालालाङ्गूलमाश्रिताः। ताम्राःपीतास्सिताश्चेताःप्रकीर्णाघोरकर्मणः ॥ (6.27.2)
प्रगृहीताःप्रकाशन्तेसूर्यस्येवमरीचयः। पृथिव्यांचानुकृष्यन्तेहरोनामैषयूथपः ॥ (6.27.3)

Samanda, a vanara born of a Gandharva woman, is described as having a black tail. He is depicted as extremely old, being the progenitor of the Vanaras:

यःस्थितंयोजनेशैलंगच्छन्पार्श्वेनसेवते। ऊर्ध्वंतथैवकायेनगतःप्राप्नोतियोजनम् ॥ (6.27.17) यस्मान्नपरमंरूपंचतुष्पादेषुविद्यते।
श्रुतस्संन्नादनोनामवानराणांपितामहाः ॥ (6.27.18) येनयुद्धंपुरादत्तंरणेशक्रस्यधीमता। पराजयश्चनप्राप्तस्सोऽयंयूथपयूथपः ॥
(6.27.19) यस्यविक्रममाणस्यशक्रस्येवपराक्रमः। एषगन्धर्वकन्यायामुत्पन्नःकृष्णवर्त्मनः ॥ (6.27.20)

Here, Samanda is described as being as tall as a mountain, which is clearly Valmiki's poetic exaggeration; in reality, neither humans nor humanoids could ever reach such proportions.

Habitat of Vanaras

According to these descriptions of Yuddhakanda (CE 6.16-20), the vanaras are said to have lived on the banks of the Ganga (present-day northern India), the Parnasha River (now identified with the Banas River in Gujarat), the Hemavathi River (in Karnataka), in mountainous caves, along the Narmada River (central India), and the Gomati River (Gomti River in Uttar Pradesh). They are also mentioned to have lived on Mount Ramya (location unclear), in the Vindhya Range (central India), on Mount Sahya (probably the Sahyadri or Western Ghats in western/southern India), on Mount Pariyatra (an ancient name; possibly tied to the Puranic "Pariyatra Mountains" in western India), and even in the Himalayas (present-day northern India/Nepal). All these locations, which extend across the length and breadth of India, demonstrate that the Vanaras described by Valmiki were a human tribe rather than actual humanoid creatures.

Why does it seem Valmiki talks about literal Humanoid Vanaras?

For this, MR Yardi says - "*The ambivalent attitude of the epic poet seems to be due to his unfamiliarity with the tribal customs and their totemic devices. The term vanara simply denotes their habitat in a forest, rana, and is synonymous with vanacara and vanaukas which terms are also used. The word vanara is quite compatible with their being a forest-tribe with*

monkey as their totemic symbol. Jämbavat, a Rksa Chief, who was a valued counselor of Sugriva, belonged to a forest tribe, whose totemic emblem was a rksa or bear. Jatayus, who risked his life to rescue Sita from the clutches of Ravana was a member of a forest-tribe with vulture as its totemic emblem. Had he really been a vulture, it is very doubtful if Rama would have given him a cremation with Vedic rites (3.46.26, 35 VR). It seems that Valmiki, not knowing the customs of the forest-tribes and their totemic devices, treated them actually as monkeys, rksa and vultures."

Also, Dr R Rangan provides some insights on what we can make of Valmiki's Vanaras. He mentions a shloka from ***Mahabharata's Shantiparva (50.3)***:

गोभिः समुद्रेण तथा गोलांगूलक्षवानरैः । गुप्ता रामभयोद्विग्नाः क्षत्रियानां कुलोद्वहाः ॥

Meaning, While Kshatriyas were hiding due to the fear of Parashu Rama, they were guarded by cows, sea, apes and bears.

He adds, "Suggestive meaning of the above verse is that as Kshatriyas lived in islands they are said to be guarded by sea. They lived by making a livelihood through milk. Thus, they are called as guarded by cows. They must have lived in disguise of apes and bears. This is indicated as guarded by them. So, there is a possibility of humans, living in the disguise of apes and bears."

He further writes, "I don't know whether Valmiki denotes such kind of Bhairags as Vanaras. But surely many Bhairags in Ramanandi tradition consider themselves as Vanaras. Mahipati, in his text named Dasa Vijayam or Sant Vijayam, the story of a great saint Samartha Ramdas, the Guru of Shivaji, narrates that priests around Shivaji were curious to know what Gotra (lineage) Ramdas belongs to. While asked, Ramdas said, I belong to Vanara-Gotra. Samartha Ramdas was in Vanara-Bhava.", Dr. R Rangan outlined multiple possible interpretations of what the Vanaras of the Valmiki Ramayana might represent as a clan or community, yet he intentionally avoided stating his own definitive position. In his view, Rama and all characters associated with the Ramayana ultimately fall within the realm of individual faith. At the same time, he upholds a scientific approach with the same firmness with which he respects the spiritual and devotional perspectives.

3. Conclusion

In conclusion, the Vanaras of the Valmiki Ramayana are best understood not as literal monkeys or mythical humanoids but as a distinct, forest-dwelling human society or tribe. The text itself shows this clearly that the Vanaras have an organised society, proper leadership and even a capital city like Kishkindha. Their behaviour, rules, and values are also the same as other human characters of the epic as seen in Hanuman's thoughtful decision-making in Lanka and Lakshmana's careful control over his anger. Crucially, the references to the Vanara "tail" (lāṅgūla) is described more like a decorative tribal emblem or an important symbol, not a physical animal tail. Later passages mentioning human maidens being given to Hanuman further confirm that the Vanaras were socially human. When we keep Valmiki's poetic style in mind and also note that some parts of the text were added later, and hence our epics like Valmiki's Ramayana and Vyasa's Mahabharata came to be known as'layered texts among scholars, by this the picture becomes even clearer that the Vanaras were a human community that used animal-based names, symbols, and traditions as part of their tribal identity.

4. References

1. Baroda's Valmiki Ramayana Critical Edition.
2. Gitapress Valmiki Ramayana.
3. IIT Kanpur Valmiki Ramayana.
4. MR Yardi's Epilogue of Ramayana.
5. MR Yardi's Ramayana: Its growth and Genesis.
6. Camille Bulcke's Ramkatha.
7. Pradeep Bhattacharya's writings on epics like Mahabharata and Ramayana.
8. Dr. R Rangan's Valmiki Ramayana.
9. Dr. R Rangan's Ramayana Insights.
10. Dr. R Rangan's Uttara Kanda.
11. Pandit Bhagwadutt's Bharatvarsh ka Brihad Itihasa.
12. Pandit Bhagwadutt's Vaidik Vangmaya ka Itihasa.

Rāvaṇa of Vālmīki Rāmāyaṇa and Phammachak of Chinese Dai Rāmāyaṇa (Lanka Sip Ho): A Critical Comparison

Irfan Ahmad
Sikkim (Central) University, Gangtok
(iahmad@cus.ac.in)

The Dai ethnic minority of Yunnan province of China possesses four widely known versions of the epic in their folksongs as well as folktales, at least since the fourteenth century. Mandarin Chinese translation of the most popular version was published by Yunnan Ethnic Minorities Literature Research Institute under the aegis of the Chinese Institute of Social Sciences almost fifty years back with the transliterated title Langa Xihe in Mandarin (兰嘎西贺). The English transliteration of the title of the original epic is Lanka Sip Ho which is in Tai Lue language (henceforth the Dai epic to be written as the Lanka Sip Ho). The literal meaning of the Dai epic Lanka Sip Ho is "Ten Heads of Lanka", which is equivalent to the Sanskrit term Daśānana (ten-mouthed), an epithet of Rāvaṇa, the ten-headed antagonist in the Vālmīki Rāmāyaṇa (henceforth to be written as "the Rāmāyaṇa"). Finally, the study finds several interesting similarities and differences between the two characters and concludes that Phammachak in the Lanka Sip Ho originates from Rāvaṇa of the Rāmāyaṇa and has been localised and interpolated in the course of time.

1. Introduction

Localised versions of the *Rāmāyaṇa* in Southeast Asia are well known, be it the *Ramakien* in Thailand, the *Kakawin Rāmāyaṇa/* the *Rāmāyaṇa Java* in Indonesia, the *Hikayat Siri Rāma* in Malaysia, the *Reamker* in Cambodia, the Phra Lak Phra Rāma in Laos, the Yama Jatav in Myanmar, and the Maharadia Lawana in the Philippines (Srinivasan, p. XXIII-XXXVII). In fact, Padma Bhushan Acharya Satya Vrat Shastri has done extensive research on the *Ramakien*, Thailand's localised *Rāmāyaṇa* (Shastri, 2020), and has also retold the story in Sanskrit verse through his book— *Shriramkirti Mahakavyam* (Shastri, 2020a). However, not much is known about the *Rāmāyaṇa* in Yunnan province of China, popular among the local Dai ethnic minority [傣族; Pinyin: Daizu] living in Xishuangbanna, Dehong, Simao and Lincang, which might also be called the Dai *Rāmāyaṇa*. Versions of the Dai *Rāmāyaṇa* are sung by Dai Buddhist monks in their temples or are narrated as Buddhist stories in religious gatherings. In fact, Theravada Buddhism reached the Dai region from India as early as during the 6th to 8th centuries and got amalgamated with the local religions [Li, p. 94]. The Dai *Rāmāyaṇa* has also been written and transcribed on palm leaves apart from the oral tradition (*Lanka Sip Ho*, p. 232). One of the earliest available manuscripts of the Dai *Rāmāyaṇa* was written by Sudawan and later transcribed by Pho Phra In [the last syllable is not a typographical error] in 1312 CE (Dao, p. 218).

The manuscript of the *Lanka Sip Ho* was discovered only in the year 1956 (Fu, p. 40). Dao Xingping translated the Dai epic into Mandarin from the palm leaf folk transcripts of *Major Lanka* [大兰嘎; Pinyin: Da Langa] in 1959, but it could not be published (*Lanka Sip Ho,* p. 234). Perhaps the abrupt halt in publication was due to the prevalent political situation in China. During 1978- 1979, Gao Dengzhi and Shang Zhonghao edited the translation of Dao Xingping and submitted the same to Yunnan People's Press in 1979. The following year, Yunnan Ethnic Minorities Literature Research Institute under the Chinese Institute of Social Sciences requested Yan Wenbian to translate a larger version of the Dai epic, which was edited by Wu Jun. In 1981, a collated version was published by Yunnan People's Press on the basis of the translations of Dao Xingping [edited by Gao Dengzhi and Shang Zhonghao] and Yan Wenbian [edited by Wu Jun] (*Lanka Sip Ho,* p. 234).

Interestingly, in 1981, Yan Wenbian discovered another manuscript named *Lanka Xishuang He* [兰嘎西双贺; Pinyin: Langa Xishuang He], literally meaning "The Twelve Heads of Lanka". It was translated into Chinese by Yan Wen, Yan Feng and Wang Song and titled *Shi'er Tou Mowang* [十二头魔王 The Twelve-headed Demon], and was published by China Folk Art Publishing House [中国民间文艺出版社; Pinyin: Zhongguo Minjian Wenyi Chubanshe] in 1990 (Fu, p. 40).

Search of the keyword *Lanka Sip Ho* in the National Digital Library [NDL] has only one meaningful result, in the form of a journal article, namely "Tai-Lue Performance in Contemporary Thailand: Devising a Local *Rāmāyaṇa* Tale for Today's Diverse Audiences" while the exact search in Google Scholar has two results. One is the article found on NDL, while the other is a conference paper titled "The Cultural Influence of Sipsong Panna on Thailand Since the 1980s: The Case of the Lue Literary Work *Kham Khap Lanka Sip Hua*". The Shodhganga portal did not return any results for the same keyword. Notably, any mention of this Chinese Dai Rāmāyaṇa is also missing from Camille Bulcke's encyclopaedic work—Ramakatha: Utpati aur Vikas (Bulcke).

Famous Indologists Dr Raghu Vira [father of Padma Bhushan Dr Lokesh Chandra] and D Chikyo Yamamoto translated two particular versions of Ramakatha in China as early as 1938. However, the author of this article could not find any Indian or Western scholarship on the *Lanka Sip Ho*. Legendary Chinese scholar Ji Xianlin did pursue a brief comparative study of the Dai epic vis-a-vis the *Rāmāyaṇa* in 1984, however it is hardly known in the academic world, much less in India. In fact, Indira Gandhi National Centre for the Arts (IGNCA), an institution under the Union Ministry of Culture, Government of India, in an online digest on "The Foreign Journey of *Ramakatha*" categorically claims that "in Chinese literature, there exists no original creation based on *Ramakatha*" and does not provide any information about the Chinese Dai *Rāmāyaṇa* ("Ramkatha ka Videsh Bhraman" [in Hindi]).

The Critical Edition of the *Rāmāyaṇa* has been used for reference. The Critical Edition was brought out (from 1951 to 1975) by the Oriental Institute, Baroda. It was produced by an illustrious group of editors after consulting around 2000 manuscripts (Debroy, *The Vālmīki Rāmāyaṇa I*, p. XVII), and hence is regarded as the most authentic version of the *Rāmāyaṇa*. There exist two English translations of the Critical Edition. The first one was rendered by Robert P. Goldman, et al., and the second (also the latest one) by Bibek Debroy. Goldman's translation is regarded as highly scholarly, while Debroy's translation provides more lucid reading, and even Debroy agrees to it when he writes in the introduction to his popular translation, "The Goldman translation is academic in style. This translation's style is more popular (Debroy, *The Vālmīki Rāmāyaṇa I*, p. xxiv)". The translation by Goldman, et al. is highly annotated and, hence, has been a natural choice for reference.

The *Rāmāyaṇa* is regarded as fundamental to the cultural consciousness of not only India but also several Southeast Asian nations. It is one of the largest ancient epics of the world literature. The critical edition is divided into 7 books [*kāṇḍas*], consisting of 18,766 verses [*ślokas*] in 606 chapters [*sargas*] (Vālmīki, V. VII, edit. Shah, p. 53).

Mandarin Chinese translation of the Dai epic— the *Lanka Sip Ho*— translated by Dao Xingping and Yan Wenbian, et al. and published under the aegis of the Yunnan Ethnic Minorities Literature Research Institute under the Chinese Institute of Social Sciences in the year 1981, has been used as a reference book to study the *Lanka Sip Ho*. The book has 237 pages in total, much shorter than the Sanskrit epic, and has been divided into 22 chapters by the translators, just for the sake of clarity and ease of reading.

Dao Xingping translated the Dai epic into Mandarin in 1959, as a part of folk literature research on the occasion of 10th anniversary of formation of the Peoples' Republic of China (PRC) but it could not be published ultimately due to the logistic issues, and perhaps due to the ensuing political situation of China. In 1981, the finally edited version, namely the *Lanka Sip Ho*, was published by Yunnan People's Press on the basis of the translations of Dao Xingping and Yan Wenbian (*Lanka Sip Ho*, p. 234). No particular manuscript or author of the manuscript has been mentioned in this referred translation, even though it contains a detailed afterword. Hence it might be safe to say that there is no concrete information about the same, or at least, there exists no consensus regarding the author of the *Lanka Sip Ho*.

2. Salient Interpolations in the Lanka Sip Ho with Regards to Rāvaṇa

2.1 Lanka of the *Rāmāyaṇa* vs Lanka of the *Lanka Sip Ho*: A Brief Outline

As per the *Rāmāyaṇa*, Lanka is an island situated south of the Indian sub-continent (Vālmīki, trans. Lefeber, 4.57.22-23, p. 177). The inhabitants, both male and female, are described as cannibals (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 5.11.11-12, p. 145). Even Rāvaṇa once threatens Sītā with these words, "Listen to what I have to say, my lovely Maithili: If within the space of twelve months, you do not yield to me with a sweet smile, the cooks shall chop you into minced meat for my breakfast" (Vālmīki, trans. Pollock, 3.54.22, pp. 206-207). Though Vibhīṣaṇa is described by Śūrpaṇakhā as an exception who is righteous and not like the *Rakshasas* (Vālmīki, trans. Pollock, 3.16.20, p. 124). Hence, we may conclude that most of the inhabitants of Lanka are depicted as malevolent. Even Robert P. Goldman, in his seminal translation of the Critical Edition of the *Rāmāyaṇa*, annotates the *Rakshasas* as "a class of violent and bloodthirsty demons regarded as the implacable enemies of Brahminical culture and civilisation" (Vālmīki, V. 1, trans. Goldman, p. 274).

The *Lanka Sip Ho* describes Lanka as an island in a boundless ocean, a link between the Eastern and the Western world, as well as a place for resting the merchant ships (*Lanka Sip Ho*, p. 2). Interestingly, it describes the subjects of Lanka as industrious and virtuous (*Lanka Sip Ho*, p. 2), and only a few relatives of Phammachak are depicted as cannibals (*Lanka Sip Ho*, p. 103).

2.2 Genealogy and Nomenclature:

The character of Rāvaṇa in the *Lanka Sip Ho* corresponds to Phammachak [捧玛加; Pinyin: Pengmajia; Brahmachakra?]. The name of Phammachak's mother is Kutithila [古蒂提拉; Pinyin: Guditila] (*Lanka Sip Ho*, Introduction, p. 1), which might be a distant derivation of Kaikasī, the name of Rāvaṇa's mother (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.15-25, pp. 247-248). Phammachak is the mind-born son, i.e., the *Mānasa Putra* of Mahapheng [玛哈捧; Pinyin: Mahapeng] (*Lanka Sip Ho*, p. 12), which seems to be a derivation from Mahābrahmā. Mahābrahmā is regarded as a Buddhist deity (deva), the maker and creator, father of all that have been and shall be (Rawat, p. 43). "Mahābrahmā (大梵天; Pinyin: Dafantian) is the unborn ruler over all, especially according to Buddhism, over all the heavens of form, i.e. of mortality ("Mahābrahmā")."

In contrast, Rāvaṇa is the son of the sage Viśravas (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.15-25, pp. 247-248), grandson of sage Pulastya (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.2.21-27, p. 228), and great-grandson of the first of Hindu trinity of supreme gods—Lord Brahmā— himself (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.49.25, p. 271).

Phammachak has only two brothers— Kunapha [衮纳帕; Pinyin: Gunnapa] and Piyasha [彼亚沙; Pinyin: Biyasha]— and no sisters (*Lanka Sip Ho*, Introduction, p. 1). Rāvaṇa has seven brothers— Kumbhakarṇa (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.26, p. 248), Vibhīṣaṇa (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.27, p. 248), Khara— son of his mother's sister (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.24.30, p. 286), Duṣaṇa (Vālmīki, trans. Pollock, 3.16.20, p. 124), Mahodara (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.57.16, p. 302), Mahāpārśva (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.57.16, p. 302) and Kubera Vaiśrāvaṇa [step-brother] through step-mother Devavarṇinī (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.3.3-7, p. 229), as also two sisters— Śūrpaṇakhā (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.27, p. 248) and cousin sister Kumbhinī [Kumbhinasi] (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.25.25, p. 288).

Phammachak has three wives— Suwanni [苏婉妮; Pinyin: Suwanni], Sukanta [苏甘塔; Pinyin: Suganta] and Manda [曼达; Pinyin: Manda] (*Lanka Sip Ho*, Introduction, p. 1), while Rāvaṇa has two wives namely, Maṇḍodarī, the principal wife (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.12.15-16, p. 256; Vālmīki, trans. Lefeber, 4.56.66, p. 270) and Dhanyamālinī (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.59.29, p. 315), and thousands of co-wives (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.111.8, p. 472). Of course, there is a possibility of Dhanyamalini and Maṇḍodarī being the one and same person. Dhanyamalini is mentioned only twice in the *Rāmāyaṇa*; firstly at 5.20.37, and secondly at 6.59.29. The action attributed to her at 5.20.37, is attributed to Maṇḍodarī at 5.56.66.

Phammachak has three sons— Yingtashita/ Mikha [英达西达/米卡; Pinyin: Yingdaxida/ Mika] born from Sukanta, the second wife; Feimalankan [菲玛兰敢; Pinyin: Feimalangan] from Manda, the third wife and Waiyala [歪亚拉; Pinyin: Waiyala] from Suwanni, the first wife (*Lanka Sip Ho*, Introduction, p. 1). Rāvaṇa has six sons as mentioned in the Sanskrit epic — Meghanāda [Indrajit] (*Vālmīki,* trans. Goldman and Goldman, 5.46.14-15, p. 243), Akṣaya [Akṣayakumāra] (*Vālmīki,* trans. Goldman and Goldman, 5.45.1, p. 238), Atikāya (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.57.24, p. 303), Triśira (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.57.21, p. 303), Narantaka (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.58.1-3, pp. 308-309) and Devāntaka (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.58.24, p. 310).

2.3 Religious Beliefs

Rāvaṇa's father, Viśravas is a brahmin sage (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.10, p. 247), and so is his grandfather Pulastya (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.2.4, p. 227). Though his mother Kaikasī is a rākṣasī (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.1-2, p. 246), and he himself is depicted as a rākṣasa (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.21-22, p. 247), he worships Brahmā— the supreme God of creation of the Hindu "trinity"— for thousands of years to seek boons (Vālmīki, trans. Goldman et al, 6.80.23, p. 388). He even worships *linga*, a symbol of Hara [Śiva] (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.31.39-40, p. 308).

In contrast, the *Lanka Sip Ho* mentions Buddhist temples and pagodas all over Lanka and fails to mention the presence of any other religion over there (p. 3). Additionally, Phammachak has been depicted as the son of the Buddhist deity— Mahābrahmā— while his mother Kutithila too is a devout Buddhist (*Lanka Sip Ho*, p. 9). Hence, it can be concluded that residents of Lanka, including Phammachak, are Buddhist by birth.

2.4 More Importance to Anti-hero in the Lanka Sip Ho

The *Lanka Sip Ho* begins with the story of birth and devilry of Phammachak [捧玛加, Pinyin: Pengmajia] (*Lanka Sip Ho*, p.2), the Rāvaṇa as referred to in this version. He is also referred to as Chao [召; Pinyin: Chao] Phammachak, literally meaning Shri Phammachak (*Lanka Sip Ho*, Introduction, p. 1), where Shri is an honorific title.

In sharp contrast, the *Rāmāyaṇa* begins with the *Balakanda*, i.e., the narration of the birth and education of Rāma and his brothers. It seems, the Dai society finds the demonic character of Phammachak so fascinating that it is willing to build the epic on the foundation of his narration. The Dai epic does end with the narration of Rāmā, but the character of Phammachak even appears at the fag-end of the epic in the form of a spirit who causes the banishment of Sheela, the Dai equivalent of Sītā.

2.5 The Birth

Rāvaṇa is regarded as a legitimate son, i.e., an *Aurasa Putra* ("Aurasa", p. 108) of Brahmin sage Viśravas and R*akshasi* Kaikasī (Bhatia). Explaining his birth, sage Agastya tells Rāma, "After some time, Rāma [Rāma], the young girl, who had been addressed in this fashion, gave birth to a horrendous and very fearsome child, who had the form of a rākṣasa" (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 7.9.21, p. 247). Hence, it would be safe to say that Rāvaṇa is not considered to be a mind-born son of sage Viśravas.

In contrast, Phammachak is mind-born by Mahapheng [玛哈捧; Pinyin: Mahapeng]— the Buddhist deity— when his mother Kutithila, a recluse [*Bhikshuni*] in a forest serves ten mangoes to him (*Lanka Sip Ho*, p. 11). It seems to be a unique event as the fruits are not consumed by her but by the deity himself.

2.6 Phammachak Molests Sheela in her Previous Birth

Sheela [西拉; Pinyin: Xila], in her previous birth, is an anonymous young female *sanyasin* (recluse) living in a forest, and Phammachak tries to outrage her modesty, so she self-immolates by jumping into the fire (*Lanka Sip Ho*, pp. 35–37). Later,

she grows as a forest tree at exactly the same place where she once self-immolated, which ultimately turns into a beautiful baby girl, Nang Sheela (*Lanka Sip Ho,* p.51), while baby Sītā is found by King Janaka while he is ploughing a field (*Vālmīki,* trans. Goldman, 1.65.14, p. 249).

Interestingly, this narration of the previous birth of Sheela is quite similar to the narration of Vedavatī, the previous birth of Sītā (*Vālmīki,* trans. Goldman and Goldman, 7.17.23-7.17.31, pp. 268-269). On the advice of one of his ministers, Phammachak throws the baby girl into a river to avoid her curse; she floats in the river for a week to be ultimately picked by King Kanaka (*Lanka Sip Ho,* p.52).

2.7 Phammachak Participates in King Kanaka's Martial Contest

While there exists no mention of Rāvaṇa in the martial competition organised by King Janaka to select a suitable groom for Sītā, Phammachak, too, is invited to the contest at the court of King Kanaka. He is able to lift the bow but fails to shoot any arrow (*Lanka Sip Ho,* p.56). Even after the completion of the marriage ceremony, he tries to snatch away Sheela when Rāmā is returning back to his kingdom along with his bride and others (*Lanka Sip Ho,* pp.65-67).

2.8 Phammachak and Lakṣmaṇa–Rekhā

The episode of Śūrpaṇakhā's encounter with the princes is completely missing in the *Lanka Sip Ho*; however, a female demon named Talihata [妲里哈达; Pinyin: Dalihada], who has been described as a relative of Phammachak, along with her two sons, tries to devour Rāmā, Sheela and Lakana [the Dai equivalent of Lakṣmaṇa] while finding them roaming in a forest, but her sons are killed by Rāmā and Lakana. To take revenge, she ultimately persuades Phammachak to abduct Sheela while she herself turns into a golden deer to enchant her (*Lanka Sip Ho,* pp. 103-105). Interstingly in the Dai epic, there does exist a character named Yueyaka (月雅嘎; Pinyin: Yueyaga), a man-eating demoness, who is commanded by Phammachak to turn into a fake Sheela and float as a dead body on the sea near Rāmā's camp (*Lanka Sip Ho,* pp.147-149). Yueyaka relates to Candranākhā, a name of Śūrpaṇakhā in several *Rāmāyaṇas*, including *the Paumchariyam*, the Jain Rāmāyaṇa in Prākrit composed by Vimalasūri (*Paumacariyam*, p. 312), as "Yue" (月) means moon, while "yaka" seems to be a corruption of "nakha" (Ahmad, *Apni Maati* 116-119).

The episode of *Lakṣmaṇa–Rekhā* has a diversion from its popular concept in the sense that Lakana draws a circle around Sheela using a bow and requests the earth goddess to take care of her, while going away to see Rāmā. When Rāmā understands the trap of the golden deer, he hits the earth using his leg, in frustration and indignation, hence offending the earth goddess [土地神; Pinyin: Tudi Shen] who withdraws her protection of Sheela (*Lanka Sip Ho,* pp. 107-108). Interestingly, there exists no narration of *Lakṣmaṇa–Rekhā* in the *Rāmāyaṇa*, where Lakṣmaṇa requests the divinities of the forest to protect Sītā instead of drawing a line while going away to see Rāma (Vālmīki, trans. Pollock, 3.44.30, p. 178). Notably, one of the first if not the first narration of *Lakṣmaṇa–Rekhā* is found in the *Raṅganātha Rāmāyaṇa* (Ranganatha, p. 153), originally in Telugu language and composed by the poet Raṅganātha in the early 14th century (Rao, p. 59).

2.9 Waiyala— Son of Phammachak:

Another major diversion exists in the form of Waiyala [歪亚; Pinyin: Waiyala], a *mahāmāyāvī* [full of deceitful illusion] son of Phammachak, who furtively gatecrashes Rāmā's camp at night and makes everyone, including Rāmā and Lakana, fast asleep with his hypnosis and then kidnaps both Rāmā and Lakana. However, this episode is similar to the episode of Mahirāvaṇa in *Śrī Kṛttibāsa Rāmāyaṇa*, who secretly carries away Rāma and Lakṣmaṇa to the netherworld after making them fast asleep through his hypnosis at night (Krittibas, p. 345). Interestingly, Mahirāvaṇa, too, is regarded as a son of Rāvaṇa (Krittibas, p. 337).

2.10 Phammachak Worships the Devils before the Final Battle

In the *Rāmāyaṇa*, while Indrajit conducts a sacrificial ceremony to please Goddess Nikumbhilā (Vālmīki, trans. Goldman and Goldman, 5.22.41, p. 179) at the Nikumbhilā shrine (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.69.23, p. 356), in the *Lanka Sip Ho*, it is Phammachak himself who offers such a sacrifice to please evil spirits (*Lanka Sip Ho,* pp. 174-175). In both instances, the sacrificial ground is vandalised, and hence, the sacrifices are rendered incomplete and fruitless. Interestingly, no such ceremony has been mentioned with regard to Yingtashita, the Dai equivalent of Indrajit.

2.11 Phammachak's Wives Exhort Phammachak to Make Peace with Rāmā

In the *Rāmāyaṇa*, only Maṇḍodarī, the chief wife of Rāvaṇa, exhorts him to make peace with Rāma (Vālmīki, trans. Goldman et al., 6.99.13, p. 442), while Dhanyamālinī, the other wife of Rāvaṇa, is not on record asking Rāvaṇa for peace.

In contrast, in the *Lanka Sip Ho,* all three mentioned wives together request Phammachak—right before his final battle— to return Sheela to Rāmā, seek his pardon and present him with the best of tributes (*Lanka Sip Ho,* p. 187).

2.12 Rāmā-Phammachak Final Battle and Mianzi

Piyasha tells Rāmā that Phammachak could be killed only by his own celestial bow, which was gifted to him by their father Mahapheng [玛哈捧; Pinyin: Mahapeng], the Buddhist deity. However, his ten heads must be collected in the celestial tray of Ingta [英达; Pinyin: Yingda; derived from Indra] to avoid destruction of the earth. Notably, Indra, apart from being a Hindu

god, has also been incorporated into the Buddhist pantheon as a guardian of the *Dharma* and the king of the *Deva* realm ("Indra", p. 372).

Anuman (阿努曼; Pinyin: Anuman; derived from Hanumān) manages to get both the bow of Phammachak and the tray of Ingta. When Phammachak sees Rāmā equipped with that heavenly bow, he begs for his life. On being asked by Rāmā to apologise publicly, Phammachak replies that he would prefer to be killed rather than tender a public apology and face humiliation (*Lanka Sip Ho*, pp. 181-186). Here, the psyche of Phammachak could be related to the concept of *Mianzi* or *Mien Tzu* [面子; Pinyin: Mianzi] of the Chinese civilisation, meaning—keeping up with the appearance. It may also be explained as honour and authority, regardless of morality, differentiated with the concept of *Lian* or *Lien* [脸; Pinyin: Lian] explained as a sense of shame with regards to morality (Hu, pp. 46–61).

2.13 Clay Figurine of Phammachak and Banishment of Sheela:

The *Lanka Sip Ho* further continues with their life after the return to the palace. One day, Queen Sheela makes a clay figurine of Phammachak, on repeated requests of the palace maids who are curious to have a glimpse of his peculiar look. However, the figurine abruptly comes to life. Rāmā happens to see the figurine, which makes him very angry and raises doubts about his wife's conduct. When his mother, Sukanti [苏甘嫡; Pinyin: Sugandi], tries to mediate, Rāmā reacts by saying that the kingdom's subjects are already circulating their despicable opinion about Sheela, which would ridicule his kingship.

Rāmā, therefore, orders Lakana to take Sheela to a forest and execute her. Once they are in the forest, Lakana unwillingly takes out his sword but finds Sheela suddenly surrounded with thousands of flowers. He perceives the divine message and returns back after wishing her good luck. Thereafter, she takes shelter in the hut of an anonymous forest-dwelling sage (*Lanka Sip Ho*, pp. 206-213).

The reintroduction of the character of Phammachak in this episode in the form of his spirit at the fag end of the epic highlights the fascination or even the obsession of the author with regard to the characterisation of the demon. Notably, Rāma ordering Lakṣmaṇa to execute Sītā is unheard of in the Indian *Rāmāyaṇas*.

3. Conclusion

Phammachak of the Chinese Dai epic— *the Lanka Sip Ho*— closely resembles the Rāvaṇa of the *Rāmāyaṇa*, even though there exist several diversions in the plot. One can deduce that the character of Phammachak is a highly localised and shortened version of Rāvaṇa, suiting the religious and cultural background of the Dai people. Although an honorific of Chao (Śrī) is often added before his name, he is not respected due to his misdeeds but is awed and feared due to his unrivalled strength and brute force.

Phammachak is depicted as a Buddhist by birth whose father is none other than the Buddhist deity Mahābrahmā and whose mother is the princess of Lanka and a pious Buddhist recluse. Still, he is depicted as the epitome of unquenchable lust and illegitimate violence. His character, much like Rāvaṇa, has been used to exemplify a person of a highly religious and imperial family who disrespects his legacy, becomes a tyrant emperor, loses the moral authority to rule, turns into the worst of the anti-social element and ultimately gets destroyed along with his kith and kin. Just like Rāvaṇa, Phammachak is evil personified, and his fall is a glaring example of the triumph of good over evil. The character of Phammachak has been developed as an exemeplary social message to the Dai society to uphold virtue and denounce evil.

4. References

1. Ahmad, Irfan. "Śri Rāma in Chinese Dai Rāmāyaṇa: Origins of Certain Major Interpolations in the Epic Compared to Vālmīki Rāmāyaṇa". in *Rāmāyaṇa and Modern Management*. Edited by Omprakash Gupta, Shri Ram Charit Bhavan, Houston, USA, 2024.
2. Ahmad, Irfan. "चीनी ताए रामायण 'लंका सिप हो' में भारतीय रामायणों से प्रेरित व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का अनुवाद: एक अंतर्वस्तु विश्लेषण". *Apni Maati* (UGC Care listed), Vol-54, Chittorgarh, Sep 2024.
3. "Aurasa" (In Hindi). *A Practical Hindi-English Dictionary*. Edited by Mahendra Chaturvedi and B. N. Tiwari, National Publishing House, New Delhi, 5th edition, 1979.
4. Bhatiya, Kiran. "Shivamahimnah Strotam (In Sanskrit), Shloka 11," *Vyakhya*, https://www.vyakhya.org/sms-toc/s11/, Accessed 30 Jun 2024.
5. Bulcke, Camille, *Ramakatha: Utpati Aur Vikas रामकथा: उत्पति और विकास (Ramakatha: Origin and Development)*. Hindi Parishad Press, Allahabad University, 1950.
6. Dao, Sirui. The Cultural Influence of Sipsong Panna on Thailand Since the 1980s: The Case of the Lue Literary Work Kham Khap Lanka Sip Hua. *13th International Conference on Thai Studies "Globalised Thailand? Connectivity, Conflict & Conundrums of Thai Studies"*, Chiang Mai, Thailand, 15-18 Jul 2017.
7. Debroy, Bivek (trans.). *The Valmiki Ramayana*. Penguin Books, V. I-III. (In English), 2017.
8. Fu, Guangyu."Luomoyanna zai Taibei he Yunnan 罗摩衍那在泰北和云南 (*Rāmāyaṇa* in Northern Thailand and Yunnan)". *Minzu Wenxue Yanjiu*. V. 2, 1997.
9. Goldman, Robert P. *The Rāmāyaṇa of Vālmīki: An Epic of Ancient India*, Princeton University Press, 1984 -2016.
10. Hu, Hsien Chin. "The Chinese Concepts of 'Face.'" *American Anthropologist*, vol. 46, no. 1, 1944.

11. "Indra." *The Princeton Dictionary of Buddhism*, edited by Robert E. Buswell Jr. and Donald S. Lopez Jr., Princeton University Press, Princeton and Oxford, 2014.
12. Ji, Xianlin. "Luomoyanna Zai Zhongguo 罗摩衍那在中国 (*Rāmāyaṇa* in China)", *Ji Xianlin Wenji*, V. 8, Jiangxi Jiaoyu Chubanshe. Feb 1984/ 1996. Note: This article was first published in Feb 1984. However, the referred book, namely, *Ji Xianlin Wenji*, a collection of several of his articles, was published in 1996.
13. Krittibas. *Shri Krittibas Rāmāyaṇa* (In Hindi). Trans. Nandkumar Awasthi (1973). Bhuvan Vani Publishers, Lucknow
14. *Lanka Sip Ho 兰嘎西贺* (in Chinese). Trans. by Dao Xingping, et al. Yunnan Renmin Chubanshe, Kunming, 1981.
15. Li, Jiang. "Daizu wenhua shenfen yu minzu xinli yanjiu——yi《*Langaxihe*》dui《*Luomoyanna*》zhi bianyi yu chuangxin wei shijiao 傣族文化身份与民族心理研究——以《兰嘎西贺》对《罗摩衍那》之变异与创新为视角 (A Study of Dai Cultural Identity and Ethnopsychology: From the Perspective of the Variation and Innovation of the *Lanka Sip Ho* with regards to the *Rāmāyaṇa*)". *Guizhou Daxue Xuebao (Social Science Edition)*, Vol. 28/ 06, Nov. 2010.
16. "Mahābrahmā." *Digital Dictionary of Buddhism*, Buddhism Dict. Net, http://buddhism-dict.net/cgi-bin/xpr-ddb.pl?59.xml+id(%27b5927-68b5-5929%27), Accessed 6 Jul 2024.
17. *Paumacariyam with Hindi Trans. Part I* (2005). Dr H. Jacobi (Ed.), Prakrit Text Society, Ahmedabad.
18. "Ramkatha ka Videsh Bhraman" (In Hindi), Accessed 2 May 2024 at https://ignca.gov.in/coilnet/rktha007.htm, and "Cheen ki Ramkatha" (in Hindi), Accessed 2 May 2024 at https://ignca.gov.in/coilnet/rktha016.htm). Indira Gandhi National Centre for the Arts (IGNCA), Ministry of Culture, Government of India.
19. Ranganatha. *Ranganatha Rāmāyaṇa* (In Hindi). Trans. by A.C. Kamakshi Rao. Edited by Avadhanandan. Bihar Rashtrabhasha Parishad, Patna, 1961.
20. Rao, P. Adeswara. "Changes in the Theme and Characters of the *Ranganatha Rāmāyaṇa*". In *Indian Epic Values: Rāmāyaṇa and its Impact*. Edited by G. Pollet, Peeters Press and Deparment of Oriental Studies, Leuven: Belgium, 1995.
21. Rawat, Virendra. *Glossary of Buddhism*. Arise Publishers and Distributors, Delhi, 2012.
22. Shastri, Satya Vrat. *Rāmāyaṇa in Southeast Asia*. V-I, Sahitya Akademi, Delhi, 2020.
23. Shastri, Satya Vrat. *Sri Ramkirti Mahakavyam* (In Sanskrit). Shivalik Prakashan, 2020. (Sanskrit-English Bilingual)
24. Srinivasan, K.S.. "Rāmāyaṇa Tradition in South East Asia". In Krishnamoorthi, K. and S. Jithendara Nath, edited. *A Critical Inventory of Rāmāyaṇa Studies in the World, Volume II (Foreign Languages)*. Sahitya Akademi, 1993.
25. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. I: The Balakanda. Critically edited by G. H. Bhatt, Oriental Institute, Baroda, 1960.
26. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. II: The Ayodhyakanda. Critically edited by P. L. Vaidya, Oriental Institute, Baroda, 1962.
27. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. III: The Aranyakanda. Critically edited by P. C. Divanji, Oriental Institute, Baroda, 1963.
28. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. IV: The Kisikindhakanda. Critically edited by D. R. Mankad, Oriental Institute, Baroda, 1965.
29. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. V: The Sundarakanda. Critically edited by G. C. Jhala, Oriental Institute, Baroda, 1966.
30. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. VI: The Yuddhakanda. Critically edited by P. L. Vaidya, Oriental Institute, Baroda, 1971.
31. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa—Vol. VII: The Uttarakanda. Critically edited by Umakant Shah, Oriental Institute, Baroda, 1975.
32. Vālmīki. The Vālmīki Rāmāyaṇa. Translated by Bibek Debroy. Penguin Books, vol. 1-3, 2017.
33. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 1, translated by RobertP. Goldman, PrincetonUniversity Press, 1984.
34. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 2, translated by Sheldon I. Pollock, PrincetonUniversity Press, 1986.
35. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 3, translated by Sheldon I. Pollock, PrincetonUniversity Press, 1991.
36. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 4, translated by Rosalind Lefeber, PrincetonUniversity Press, 1991.
37. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 5, translated by RobertP. Goldman and Sally J. Sutherland Goldman, PrincetonUniversityPress, 1996.
38. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 6, translated by RobertP. Goldman et al., Princeton UniversityPress, 2009.
39. Vālmīki. TheRāmāyaṇaofVālmīki:AnEpicofAncientIndia, vol. 7, translated by RobertP. Goldman and Sally J. Sutherland Goldman, PrincetonUniversityPress, 2017.
40. Vira, Raghu and Chikyo Yamamoto, editors. Rāmāyana in China. Sarasvatī Vihāra Series, Nagpur, 1938 (Reprint 1955).

Was Rāvaṇa an Ideal Brother? A Comparative Reading of the Rāmāyaṇa

Kartik Iyer
Vigyan Darshan Research Organisation
kartikiyer76@gmail.com

Mohit Gaur
International Hindu University
(mohitgour@vigyandarshan.com)

This paper examines whether Rāvaṇa can be considered an ideal brother through a comparative reading of the Rāmāyana. While popular belief associates Sītā's abduction with Rāvaṇa's revenge for Śūrpaṇakhā, Vālmīki's text reveals his true motives were lustful desire and pride. In contrast, Rāma embodies dharma and fraternal selflessness: he offers Bhārata the throne and willingly accepts exile, while Śatrughna restrains his anger toward Mantharā, recalling Rāma's forgiveness. Rāvaṇa's brotherhood is driven by ego and attachment; Rāma's by virtue and compassion. The study highlights the Rāmāyaṇa's ethical insight, Dharma, and humility, which sustain harmony, whereas lust and arrogance lead to ruin.

Keywords: Rāmāyaṇa, Rāvaṇa, Śūrpaṇakhā, Dharma, fraternal ethics, Sanskrit textual analysis, Rāmāyaṇa studies, feminist reinterpretations, Dravidian Readings.

1. Introduction

Rāma was not merely an ideal man; he was the living manifestation of righteousness (*Dharma*), truth, virtue, and nobility. In the *Bālakāṇḍa*, his character, conduct, and temperament earned him the epithet *Maryādā Puruṣottam*, "The Supreme Upholder of Dharma." *Vālmīki* introduces him as being born into the *Ikṣvāku* dynasty, known for his restraint, valour, brilliance, patience, and mastery over his senses.

Rāma was intelligent, ethical, soft-spoken, radiant, and the destroyer of enemies. His form was handsome and strong, with broad shoulders, a conch-shaped neck, and a wide jaw. He was a knower of the Vedas and Vedangas and an expert in the *Dhanurveda* (science of archery). Profoundly learned, endowed with memory and talent, *Rāma* was a guardian of *Dharma* (righteousness), a lover of truth, and a benefactor of his people. Majestic like the ocean in depth, steadfast as the Himalayas, powerful as *Viṣṇu*, gentle as the moon, wrathful as fire, forgiving as the earth, and generous as *Kubera*, such was *Rāma*, the beloved son of *Daśaratha* and *Kausalyā,* a true well-wisher of his subjects and the personification of virtue. ***(Gītā Press, 2024, pp. 59–61) (ValmikiRāmāyaṇa, Balakanda, Sarga 1)*** In fact, the *Vālmīki* says, "*Rāma* is virtue incarnate, pious and unfailing prowess. He is the ruler of the entire humanity, even as *Indra* is the ruler of the gods." ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 812***

In contrast to this exalted *Ārya* ideal, a modern distortion has emerged: that *Rāvaṇa* was an "ideal man" or an "ideal brother" who avenged his sister's insult. Some even go so far as to claim that on *Duṣśerā*, effigies of *Rāma*, not *Rāvaṇa*, should be burnt. ***(Dussehra 2025, 2025) (Hussain, 2025)***

In the preface to *SachiRāmayan* (*The Rāmāyaṇa – A True Reading*), Periyar E.V. Rāmasamy writes that Ravana abducted *Sītā* to avenge the disfigurement of his sister, *Śūrpaṇakhā*. Periyar portrays *Rāvaṇa* as a humanized and rational character, a ruler driven by emotion and justice for his kin, rather than as a demon. Conversely, he critiques *Rāma's* actions, questioning the moral hierarchy presented in the traditional epic.Through this reinterpretation, Periyar sought to challenge caste hierarchies and divine authority, turning the *Rāmāyana* into a discourse on social justice and human dignity. ***(Periyar, 2011, p. 6)*** This paper seeks to address and refute such misconceptions through a comparative study of the *Valmiki Rāmāyana.*

2. Literature Review

Feminist rewritings often portray *Śūrpaṇakhā* not as an antagonist but as a marginalized woman subjected to humiliation. Authors like Kavita Kane reinterpret her actions through themes of gender injustice and body-shaming, shifting focus away from her aggression toward victimhood. ***(Sharma & Jha, 2023)*** Dravidian ideological readings, especially influenced by Periyar, recast *Rāvaṇa* as a southern cultural hero and *Rāma* as an Aryan oppressor. ***(Periyar, 2011, p. 6*****) (Chhetri*****, 2021)*** *Śūrpaṇakhā'*s mutilation is interpreted as symbolic of North–South conflict, though such claims rely on political narratives rather than primary textual sources. Modern psychological analyzes depict *Śūrpaṇakhā* as shaped by emotional neglect and trauma. Her behaviour is explained using modern behavioural frameworks, introducing motives not present in the *Vālmīki Rāmāyaṇa.* ***(Dirghangi & Mohanty, 2020)*** Contemporary novels and plays exercise creative liberty, presenting *Rāvaṇa* and *Śūrpaṇakhā* in sympathetic, complex shades. These retellings enrich literary discourse but cannot serve as authoritative evidence for historical or scriptural claims.

3. Methodology

This study is based on the *Vālmīki Rāmāyaṇa* in its original Sanskrit form and employs textual, comparative, and contextual

analysis to examine the notion of *Rāvaṇa* as an "ideal brother." Relevant verses from the *Āraṇya*, *Sundara*, and *Yuddha Kāṇḍas* were analyzed to understand his motives and actions. The ethical and moral contrast between *Rāma* and *Rāvaṇa* was highlighted to distinguish *Dharma* from *Adharma*. Each episode was interpreted within its cultural context to maintain authenticity. Modern reinterpretations glorifying *Rāvaṇa* were critically reviewed in light of primary textual evidence to ensure objectivity and scriptural accuracy.

4. Rāvaṇa's Character and the Myths Surrounding Him

In Indian consciousness, *Rāvaṇa* is depicted as a mighty yet fallen king, ruined by arrogance and lust. A common belief is that *Rāvaṇa* abducted *Sītā* to avenge his sister *Śūrpaṇakhā's* humiliation. However, if we turn to the primary text, the *Valmiki Rāmāyaṇa*, this interpretation does not stand. *Rāvaṇa*'s true motive was not vengeance but desire, the lust to possess *Sītā*, the embodiment of beauty and virtue.

- **The *Śūrpaṇakhā* Episode and the Role of Falsehood**

In the *Āraṇyakāṇḍa*, *Śūrpaṇakhā* encounters *Rāma* in the forest. Infatuated, she proposes marriage. When *Rāma* declines, she turns to *Lakṣmaṇa*, who also rejects her and, at *Rāma*'s command, disfigures her by cutting off her nose and ears.
Śūrpaṇakhā had attempted to seduce *Rāma* by belittling *Sītā*, saying:

Imāṃ virūpām asatīṃ karālāṃ nirṇatodarīm।
Anena saha te bhrātrā bhakṣayiṣyāmi mānuṣīm. ॥ 27 ॥ (Vā. Rā., Ara 17.27)

This verse says, "I am richly endowed with power. I am able to range at will by dint of my strength. Therefore, be my husband for long. What can you hope to accomplish with *Sītā*, your partner? Being deformed and ugly too, she is not worthy of you. I alone stand as a match for you. Look upon me as your wife. Along with this brother of yours, I shall devour this ugly, vile, hideous human lady with a sunken belly. Then, beholding the peaks of mountains and forests of every description, you, full of concupiscence, will wander with me through the *Daṇḍaka* forest. Thus addressed, the descendant of *Kakutstha* (*Rāma*), laughing at the large-eyed one, began to speak these words, skilled as he was in speech." ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 760)***

Ity uktvā mṛgaśāvākṣīm alāta-sadṛśa-īkṣaṇāṁ
ātām mṛtyu-pāśa-pratimām āpataṁtīm mahābalaḥ।
Vigṛhya Rāmaḥ kupitaḥ tato Lakṣmaṇam abravīt॥
Krūraiḥ anāryaiḥ Saumitree parihāsaḥ kathaṁcana।
Na kāryaḥ paśya Vaidehīm kathaṁcit saumya jīvatīm॥ (Vā. Rā., Ara. 18.17–19)

These verses say, "Saying so, the woman, whose eyes shone like live embers, highly enraged as she was, rushed upon the fawn-eyed *Sītā*, even as a large meteor would descend on the constellation known by the name of *Rohiṇī*. Checking by his very menacing sound, the woman, who was rushing towards *Sītā* like the noose of Death, *Rāma*, who was possessed of extraordinary might, now angrily said to *Lakṣmaṇa,* "You should in no case jest, O son of *Sumitrā*, with cruel and unworthy people. See the princess of *Videhaḥ* surviving with great difficulty (having narrowly escaped being devoured by the ogress), O gentle brother!" ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 762)***

When *Rāma* refused, she attacked *Sītā* out of jealousy, prompting *Lakṣmaṇaa's* punishment. Nowhere does the text suggest that she was motivated by familial honour or revenge. Later, she went to her brothers, *Kharaḥ* and *Duṣaṇaḥ*, who sent an army of 14,000 demons against *Rāma*, all of whom were slain. The survivor, *Akampan*a, then informed *Rāvaṇa* of the event. ***(Vā. Rā., Ara., Sarga 19–20)***

Akampana's words were not about avenging a sister's insult but about exploiting *Sita's* beauty as a weapon to weaken *Rāma*:

Bhāryā tasya uttamā loke Sītā nāma sumadhyamā।
Śyāmā samavibhaktāṅgī strī-ratnaṁ ratna-bhūṣitā॥ 29॥
Nai va devī na gandharvī nāpsarā na ca pannagī।
Tulyā sīmantinī tasyāḥ mānuṣī tu kuto bhavet॥ 30॥
Tasyāpahara bhāryā tvaṁ taṁ pramathya mahāvane।
Sītāyā rahito Rāmo na caiva hi bhaviṣyati॥ 31॥ (Vā. Rā., Ara., 31.29–31)

To summarize the purport of these verses, "In all the worlds, there is no woman like *Sītā*, slender-waisted, dark, radiant, adorned with jewels. She is superior to any goddess, *Apsarā*, or *Nāga* maiden. Take her away, for *Rāma* cannot live without

her." Thus, *Rāvaṇa's* decision to abduct *Sītā* was based on lust and strategy, not sisterly revenge. ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 796)***

- **Śūrpaṇakhā's Deception**

When *Śūrpaṇakhā* met *Rāvaṇa*, she exaggerated *Sītā's* beauty and lied that *Lakṣmaṇa* had disfigured her because she tried to bring *Sītā* to her brother. Her speech is filled with sensual imagery meant to provoke *Rāvaṇa's* lust:

tāṃ tu vistīrṇajaghanām pīnottaṅgapayodharām |
bhāryār the tavānetuṃ udyatāhaṃ varānanām || 21 ||
virūpitā 'smi krūreṇa lakṣmaṇena mahābhuja |
tāṃ tu dṛṣṭvā 'dya vaidehīṃ pūrṇacandranibhānanām || 22 ||
manmathasya śarāṇāṃ ca tvaṃ vidheyaḥ bhaviṣyasi |
yadi tasyām abhiprāyo bhāryārthe tava jāyate || 23 ||
śīghram uddhriyate pādo jayārtham iha dakṣiṇaḥ || 24 ||
(Vālmīki Rām. Ar. 34.21–24)

In short, it can be summarized as "I went to bring that charming *Sītā* for you, O mighty *Rāvaṇa*, but the cruel *Lakṣmaṇa* disfigured me. Today, if you see her full-moon face and golden form, you will fall under the arrows of *Kāma* (desire). She is your worthy consort."

(Gītā Press, part I 2024, p. 804)

The text contains no reference to any motive of revenge. Her deceit inflamed *Rāvaṇa's* passion, leading him to devise a plan, with *Mārīca's* help, to abduct *Sītā* through trickery (the golden deer episode).

In Rajagopalachari's account, *Śurpaṇakhā,* driven by unquenched desire for *Rāma*, resolves to abduct *Sītā* to secure his attention. Seizing an opportunity when *Rāma* is at the river and *Sītā* alone, she attempts to attack *Sītā*, unaware that *Lakṣmaṇaa i*s nearby. *Lakṣmaṇa* intercepts her, and in the ensuing struggle, he mutilates her and drives her away. Bleeding and enraged, *Śurpaṇakhā* flees into the forest, calling upon her brothers and the *Rākṣasā* kings for aid. This version, reflecting Kamban's Tamil retelling, emphasizes *Śurpaṇakhā's* bestial passion and cunning, depicting her as capable of assuming a beautiful human form to entice *Rāma*, consistent with *Valmīki's* description of her as *Kāmarūpiṇī* (one able to assume any form). The episode underscores her aggressive desire and the consequential punishment meted out by *Lakṣmaṇa*. ***(Rajagopalachari, 1958, p. 136)***

- **Rāvaṇa's Own Words**

When *Rāvaṇa*, disguised as a sage, revealed his true nature before *Sītā*, his words exposed the true motive behind his act, not vengeance, but desire. His own confession in the *Araṇyakāṇḍa* and later in the *Sundarakāṇḍa* lays bare the lust that governed his actions. When *Rāvaṇa*, disguised as a sage, confronted *Sītā*, he revealed his true nature:

Bahvīnām uttamastrīṇām āhṛtānām itas tataḥ |
sarvāsām eva bhadraṃ te mamāgramahiṣī bhava || 28 ||
(Vā. Rā., Ar., 47.28)

"Become the foremost queen among all the numerous excellent women carried away from here and there by me."

(Gītā Press, 2024, part I, p. 841)

If his act had been motivated by revenge, he would not have proposed marriage.
In the *Sundarakanda*, *Rāvaṇa* even justifies his deed:

Svadharma rakṣasāṃ bhīru sarvathaiva na saṃśayaḥ |
gamanaṃ vā parastrīṇāṃ haraṇaṃ saṃpramathya vā || 5 || (Vā. Rā., Su., 20.5)

"It has always been the peculiar course of conduct prescribed for ogres, O timid one, to approach sexually the wives of others or to bear them away by force: there is no doubt about it." ***(Gītā Press, 2024, part II, p. 112)*** Thus, by his own admission, lust, not justice, was his driving force.

- **Rāvaṇa's Fall through Lust**

If *Rāvaṇa's* motive had truly been fraternal vengeance, he would have challenged *Rāma* to open battle. Instead, he resorted to deceit, which exposes his moral weakness and uncontrolled passion. *Maṇḍodarī's* lament after *Rāvaṇa's* death confirms this:

Aprāpya taṃ caiva kāmaṃ maithilīsaṅgame kṛtam |
pativratāyās tapasā nūnaṃ dagdho'si me prabho || 23 ||
(Vā. Rā., Yud., 111.23)

This verse reads, "The desire you had to unite with the virtuous *Sitä* could never be fulfilled. By the power of her chastity, you have been destroyed. Death, which was to be brought about on account of *Sitä*, was invited by you from afar. Rid of her grief, the princess of *Mithilā* will now sport with *Rāma*. I, however." ***(Gītā Press, 2024, part II, p. 769)*** She meant that the desire *Rāvaṇa* had to unite with the virtuous *Sitä* could never be fulfilled, and that by the power of her chastity, he had been destroyed. Even his wife testifies that *Rāvaṇa'*s downfall stemmed from lust for another's wife.

- **Rāvaṇa appoints lieutenants to kill Rāma**

In the *Aranyakāṇḍa*, Canto 54, *Rāvaṇa* instructs his powerful *Rākṣasa* lieutenants to occupy *Janasthāna,* a place recently emptied by *Rāma's* conquest of *Kharaḥ* and *Dūsana*. He urges them to act with vigilance and to destroy *Rāma*, reflecting the *Rākṣasās'* ferocity and enmity (21–28). Following his command, the eight ogres set out toward *Janasthāna*, remaining unseen (29). ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 54)*** *Rāvaṇa*'s strategy of separating *Rāma* from *Sitä* to weaken him and ultimately kill him demonstrates that the abduction of *Sitä* was driven by political ambition and lust, rather than any motive of avenging a sister. This clearly positions the *Sītāharana* (abduction of *Sītā)* as a calculated act of desire and power, rather than a personal vendetta, highlighting *Rāvaṇa's* morally corrupt and self-serving character.

5. Rāma and his Brotherhood

The *Rāmāyaṇa* not only narrates the epic events of *Rāma's* life but also highlights the moral and ethical values embodied in his relationships. Among these, the bond between *Rāma* and his brothers stands out as a model of duty, respect, and selflessness. Their interactions provide insight into ideal conduct and the principles of *Dharma* in familial relationships. Brahma Muni has provided an explanation and analysis of *Rāma* and his brothers' attitudes and conduct toward each other, which we can examine.

- **Generosity**

yā prītir bahumānashca yayy ayodhyānivāsinām |
matpriyārthaḥ viśeṣeṇa bharate sā vidhīyate ||7|| (Va.. Ra., Ayo., 43.7)

It reads as, "While *departing for exile, Rāma says, 'The love and respect the people of Ayodhya feel for him should be shown toward Bhārata, to please him.* ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 454)***
While departing for exile, *Rāma* instructs that the love and respect the *Ayodhyā* citizens feel for him should now be directed toward *Bhārata*. This demonstrates *Rāma's* extraordinary generosity: though he is renouncing the kingdom, he orders the citizens to honour *Bhārata* as they would him. Otherwise, when power passes into someone else's hands, people generally do not display such generosity; often, they become agitated.

- **Rāma's qualities compared with Bhārata's**

There is no doubt that *Bhārata* himself was an ideal figure. Yet *Rāma* possessed qualities absent in *Bhārata,* offering lessons even to the virtuous *Bhārata*. For example:

tāṃ prekṣya bharataḥ kuddhaṃ śatrughnam abravīt |
avadhyāḥ sarvabhūtānāṃ pramadā kṣamyatāmiti ||21 ||
hanyamānāmiṃ pāpāṃ kaikeyyā duṣṭacāriṇīm |
yadi māṃ dhārmiko rāmo nāsūyen mātṛghātakam ||22 ||
imāṃpi hatāṃ kubjāṃ yadi jānāti rāghavaḥ |
tvāṃ ca māṃ caiva dharmātma | nābhibhāṣyate dhruvam ||23 || (Va.. Rā.. Ayo. 77.21–23)

It translates as, *"Seeing Kubjā and Śatrughna enraged, Bhārata said, 'All beings' women are inviolable; otherwise, I would have killed the sinful Kaikeyī. If the righteous Rāma did not rebuke me, I would have committed matricide. And if Raghava hears of my killing Kubjā, he would never speak to you or me.'"* **(Gītā Press, 2024, part I, p. 579)**

Here, *Bhārata* restrains *Śatrughna* from killing *Kubjā*, emphasizing respect for women while acknowledging *Rāma's* moral authority to guide them. Similarly:

na doṣaṃ tvayi paśyāmi sūkṣmapyariśūvan |
na cāpi jananī bālyāt tvaṃ vigarhitumarhasi ||17 ||

It reads as *"I perceive no fault in you, even though you are delicate; nor can you blame your mother for your infancy."* ***(Va. Rā. Ayo. 101.17) (Gītā Press, 2024, part I, p. 653)***
Rāma reassures *Bhārata* that he does not hold him accountable and that *Bhārata* cannot condemn *Kaikeyī* for circumstances beyond his control.

Although *Bhārata's* sacrifice was immense, and he went to *Chitrakūṭa* to persuade *Rāma* and lived in *Nandigrāma* in ascetic retirement, he was not as capable a ruler as *Rāma*. The people's love and loyalty were ultimately for *Rāma*. As *Rāma* instructs, the affection and honour the citizens feel for him should now be directed toward *Bhārata*.

Bhārata himself acknowledges *Rāma's* superior qualifications: *"Who else but the intelligent, virtuous, and knowledgeable Rāma, devoted to Dharma, can rule the kingdom like him?"*

(Va. Rā. Ayo. 82.11) (Gītā Press, 2024, part I, p. 590)

After *Rāma* returns from the conquest of *Laṅkā*, *Bhārata* expresses his own inability to bear the responsibilities of governance:

dhuramekākinā nyastāṃ vṛṣabheṇa balīyasā |
kiśoravad guru bhāraṃ nāhaṃ voḍhum utsahe ||3 ||
gatiṃ khara iva aśvasya haṃsasyeva vāyasaḥ |
nānvetum utsahe vīra tava mārga-marindam ||5 || (Va. Rā. Yuddha. 128.3,5)

This implies that *"O Rāma! Just as a strong bull cannot bear the weight of a cart shaft alone, and as a donkey cannot match the speed of a horse or a crow the flight of a swan, so too am I incapable of bearing the burden of state before you"*

(Gītā Press, 2024, part II, p. 834)

- **Rāma's qualities compared with Lakṣmaṇa's**

Lakṣmaṇaa's sacrifice and devotion are exemplary: he left home to accompany *Rām*a into exile, without taking his wife, *Urmilā.* Yet *Rāma* possessed virtues surpassing even *Lakṣmaṇa's*, making him an ideal even in comparison to *Lakṣmaṇa.* Their comparison can be summarized by considering *Lakṣmaṇa's* thoughts and actions in contrast to *Rāma's* higher conduct. *Lakṣmaṇa* tells *Rāma* that he will slay anyone who sides with *Bhārata* or seeks his advantage; softness is dangerous, he argues, for the gentle are easily dominated. If even their father, *Daśaratha*, incited by *Kaikeyī*, feels enmity, then those worthy of death should be slain. ***(Va. Rā.., Ayo. 11.11–12 (Gītā Press, 2024, part I, p. 327)***

Similarly, when *Lakṣmaṇaa* climbs a tree on seeing *Bhārata* arrive at *Chitrakūṭa* to fetch *Rāma* back to *Ayodhyā* and vows to kill that wicked *Bhārata*, accusing him of coming to the forest to murder *Rāma,* he repeatedly reassures him. *Rāma* insists that *Bhārata* has come only to meet him and that killing either one's father or one's brother is an unrighteous and detestable deed. The Sanskrit passage expresses this conviction directly:

pituḥ satyaṃ pratiśrutya hatvā bharatam āhave |
kiṃ kariṣyāmi rājyena sāpavādena lakṣmaṇa ||13 ||
kathaṃ nu putrāḥ pitaram hanyuḥ kasyāñcid āpavi |
bhrātā vā bhrātaraṃ hanyātsaumitre prāṇam ātmanaḥ ||16 ||
(Va. Rā.., Ayo. 97.13, 16) (Gītā Press, 2024, part I, p. 636)

The verse expresses that, "Having sworn to keep our father's word, if I were to kill *Bhārata* in battle, what would I gain by a disputed throne*, Lakṣmaṇa*? How could sons ever slay their father in any circumstance? How could a brother slay his brother, O *Lakṣmaṇa*, taking away his very life?"

These are the observations of Brahma Muni, and such translations reflect his own interpretations.

- **Lakṣmaṇa as Second Self: Rāma's Transfer of Authority**

Next, we examine further instances of *Rāma's* renunciation and his love for his brothers. *Rāma* addresses *Lakṣmaṇa* with folded palms, entrusting him with both the duties and pleasures of kingship and acknowledging him as his "second life":

lakṣmaṇemāṃ mayā sārtha praśādhi tvaṃ vasundharāṃ।
dvitīyaṃ me'ntarātmānaṃ tvāmiyaṃ śrīrupasthitā ॥ 43 ॥
saumitre bhuṅkṣva bhogāṃstva miṣṭān rājyaphalāni ca।
jīvitaṃ cāpi rājyaṃ ca tvadarthaṃ abhikāmaye ॥ 44 ॥
ityuktvā lakṣmaṇaṃ rāmo mātārāvabhivāḍā ca।
abhyanujñāpya sītāṃ ca yayāṃ svaṃ ca niveśanam ॥ 45 ॥ (Va.. Rā.., Ayo. 4.43-45

The text may be rendered as, "Rule you beneficently over this earth with me, O *Lakṣmaṇa*! This royal fortune has come to you, who is my second life. Enjoy, O *Lakṣmaṇa*, the pleasures coveted by you as well as the rewards of sovereignty (religious merit and fame, etc.). I desire to live and even to rule, but for you. Having spoken to *Lakṣmaṇa* as aforesaid and greeting both

his mothers, *Kausalyā* and *Sumitrā*, and having secured leave to depart on behalf of *Sītā* too, *Rāma* retired to his own palace." ***(Gītā Press, 2024, part II, p. 303)***

- **Sacrifice of Kingship: Fraternal Allegiance by *Rāma***

Let us illustrate one more instance of *Rāma's* profound renunciation and fraternal trust, highlighting his detachment from power and worldly desires. It reflects the ethical ideal that sovereignty is secondary to *Dharma, moral duty, and the well-being of his brothers.*

Saṅgatyā bharataḥ śrīmān rājyenārthī svayaṃ bhavet |
praśāstu vasudhāṃ sarvām akhilāṃ raghunandanaḥ || 17 || (Va. Rā., Yuddha. 123.17)

The underlying meaning is, "If, by association with rulership or through his mother's influence, the illustrious *Bhārata himself* has become desirous of sovereignty, then let the delight of the *Rāghus* (*Rāma*) rule the entire world without exception." ***(Gītā Press, 2024, part II, p. 820)***

This verse appears when Rāma sends Hanumān to meet Bhārata upon returning from exile. Rāma instructs Hanumān to observe Bhārata's intentions, whether he remains devoted or has developed attachment to royal authority. The phrase "saṅgatyā rājyena" implies the corruptive influence that kingship and association with power can exert. Yet Rāma's following statement, "praśāstu vasudhāṃ sarvām akhilāṃ raghunandanaḥ," reflects his absolute detachment and fraternal trust, affirming that if Bhārata indeed desires sovereignty, Rāma would gladly let him rule the world. Rāma further instructs Hanumān, "O Hanumān, after understanding his mind and his intention, inform me of them" **(Gītā Press, 2024, part II, p. 820)**

This moment captures *Rāma's* deep sense of renunciation *(Tyāga)* and detachment *(Vairāgya*), which lie at the heart of righteous rule in the epic. His generosity and trust stand in stark contrast to worldly politics, offering a vision of kingship that values duty, honour, and love for one's family over mere possession or power.

6. Critical Discussion

Many scholars and writers have presented arguments in favour of *Rāvaṇa*, and some have even attempted to portray *Śūrpaṇakhā* in a more sympathetic light. In this section, we critically examine their claims, analyze the characters of *Rāvaṇa* and *Rāma*, and evaluate their actions and motivations in the context of the *Rāmāyaṇa*, drawing on both textual evidence and logical reasoning.

Some observations made by some scholars are as follows: *Surpankha's* mutilation, specifically the disfigurement of her nose and ears, symbolizes a punishment rooted not only in her attempt to attack *Sītā* but also in her sexual assertiveness and independence (Kané, 196; De, 2; McLain, 35; Erndl, 68, 83). Feminist readings highlight that her "dishonourable crime" was the display of desire for *Rāma* and *Lakṣmaṇa*, making her a target for patriarchal control, in contrast to *Sītā's* idealized, obedient femininity (Kané, 190; Erndl, 10). *Śurpaṇakhā's* punishment serves as a warning to women, reinforcing societal expectations of female chastity and submission, and demonstrates how epics propagate regressive notions of sexuality by disciplining women who challenge patriarchal authority (De, 2; McLain, 35). Her character embodies the tension between independent female agency and gendered societal norms, emphasizing the broader dynamics of power and control in patriarchal cultures (Erndl, 68, 83). ***(Sharma & Jha, 2023)***

For interpretations of this kind, it is often argued that feminist readings view the mutilation of *Śurpaṇakhā* as a response to her sexual assertiveness and independence, suggesting that these qualities are framed as the primary reasons for her punishment. Such types of interpretations risk overlooking the ethical and cultural framework of the epic. In the context of the *Rāmāyaṇa*, both men and women are bound by *Dharma* and propriety; *Rāma* himself is portrayed as *Ekpatnivra*t (vow of monogamy), and all sons of *Daśaratha* are equally committed to this practice. Śurpaṇakhā's attack on *Sītā* was life-threatening. The actions of *Rāma* and *Lakṣmaṇa* were driven by their moral responsibility to protect the honour and safety of their family.When *Śurpaṇakhā*, a fierce *Rākṣasī*, expressed her intention to harm *Sītā* to *Kharaḥ,* it clearly highlighted the danger she represented.

She says:

eṣa me prathamaḥ kāmaḥ kṛtastatra tvayā bhavet |
tasyāstayocha rudhiraṃ piveyam aham āhave || 20 ||(Va. Rā., Ar. 19.20)

"This foremost desire of mine may be accomplished by you there, viz., that I may drink on the battlefield the blood of that lady as well as of those two brothers." **(Gītā Press, 2024, part I, p. 764)**

Her aggressive intentions justify Lakṣmaṇa's intervention, reinforcing Dharma and protecting Sītā. Critiquing Sītā or justifying Śurpaṇakhā's aggression as a result of past trauma does not align with a holistic reading of the text nor with the ethical norms it upholds. Śurpaṇakhā herself acknowledges Rāma's restraint after her mutilation

ekā kathaṃcinmuktārha paribhūya mahātmanā |
strīvadhaṃ śaṅkamānena rāmeṇa viditātmanā || 12 || (Va.. Rā.., Ara. 34.12)

"I alone was spared somehow, after disgracing me in the form of mutilation, by the high-souled Rāma, who has realized the Self, afraid as he was of the sin of killing a woman." **(Gītā Press, 2024, part I, p. 803)**

This verse demonstrates *Rāma's* respect for women, even in dealing with a violent *Rākṣasī* like *Śurpaṇakhā*. Had *Rāma* not exercised restraint, *Śurpaṇakhā's* attack on *Sītā* would likely have ended fatally. By sparing her, *Rāma* upholds *Dharma* and shows moral discipline, emphasizing ethical conduct over vengeance. While sympathetic readings of *Śurpaṇakhā* seek to "whitewash" her actions, such an approach undermines the narrative logic and moral framework of the *Rāmāyaṇa,* where her transgression warranted a corrective, rather than arbitrary, response. Thus, acknowledging both the cultural context and the characters' *Dharma* is essential for a balanced scholarly analysis.

As noted by **Dirghangi and Mohanty (2020**), several interpreters have questioned *Rāma's* moral perfection, citing episodes like the killing of *Vāli*, *Sītā's* banishment, and the mutilation of *Śurpaṇakhā.* Their study attempts to "articulate the voice of *Śurpaṇakhā*, who has been traditionally, though unfairly, portrayed as a monster, an adulteress, and wicked and flawed."

They observe that *Śurpaṇakhā*, desiring *Lakṣmaṇa*, is mocked and humiliated by both *Rāma* and *Lakṣmaṇa*, who treat her as an object of ridicule. Enraged by rejection and insult, she attempts to attack *Sītā*, but *Rāma* orders *Lakṣmaṇa* to punish her. Following *Rāma's* command, *Lakṣmaṇa* brutally mutilates *Śurpaṇakhā* by cutting off her nose and ears, an act of excessive cruelty that leaves her in unbearable pain and disgrace. "She narrated the dreadful scene to him but at the same time did not forget to describe the extraordinary beauty of *Sītā*. She was shrewd enough to realize that even if her plight did not move *Rāvaṇa* to avenge her, *Sītā's* extraordinary beauty would certainly force him to take some action. Her words aroused a passionate desire in Ravana, and to avenge her sister's dishonour, he abducted *Sītā* and carried her to *Laṅkā*." ***(Dirghangi & Mohanty, 2020)***

Chhetri mentions Neelakantan's reinterpretation of *Rāvaṇa*, which humanizes him as a product of social marginalization and caste oppression, rather than portraying him as a demonic antagonist. He portrays *Rāvaṇa* as "half Brahmin and half *Rākṣasa",* who faced discrimination for his dark skin and low-caste lineage, yet rose through self-learning to master ten Vedic sciences (Neelakantan, 2011, pp. 19–41). This portrayal echoes Periyar's *Sacchi Rāmayan*, where *Rāvaṇa* is seen as an oppressed yet dignified figure who resisted Aryan domination. Both writers articulate the subaltern voice that seeks to challenge the deification of *Rāma* and the vilification of *Rāvaṇa*. This interpretation humanizes *Rāvaṇa* and reframes the *Rāmāyaṇa* as a cultural and social conflict rather than a divine battle. It views *Rāma* and Ravana as mortal representatives of two contrasting civilizations, the Aryans (*Devatās*) of the north and the Dravidians (*Rākṣasās*) of the south. Through the lens of colour, caste, and hierarchy, the narrative exposes how social dominance shaped perceptions of virtue and evil. *Rāvaṇa*, born of a Brahmin father and a *Rākṣasī* mother, embodies the tension of mixed identity and caste exclusion. His dark complexion symbolizes the oppressed Dravidian self, and his denial of education reflects systemic discrimination. Yet, through personal effort, he attains mastery over the ten Vedic sciences, transforming into a symbol of intellectual and cultural resistance ***(Chhetri, 2021)***

Pavithra and Dinesh Kumar's analysis of Kavita Kane's fiction indicates that Kane's retelling of the *Rāmāyaṇa* **r**ehabilitates *Śurpaṇakhā's* character. The narrative implies that no one is born evil; rather, adverse experiences and emotional deprivation during early life shape one's later behaviour. *Śurpaṇakhā's* transformation from a well-behaved woman to a vengeful figure is attributed to psychological wounds and insecure attachment, reflecting how past reinforcement and emotional neglect can distort moral development. ***(Pavithra and Dinesh Kumar, 2024)*** Thus, Kane's interpretation seeks to humanize *Śurpaṇakhā* by exploring the psychological roots of her actions, replacing mythic condemnation with empathetic understanding.

As we examine the above interpretations and the *Rāmāyaṇa*, *Rāma* consistently demonstrates profound respect for women. He honours *Kaikeyī* despite her role in his exile and greets the liberated *Ahalyā* by touching her feet ***(Gītā Press, 2024, part I, p. 208)*** and accepts *Śabrī*'s humble hospitality (***Gītā Press, 2024, part I, p. 923),*** acts that signal esteem and compassion across social boundaries. Even in war, *Rāma's* conduct contrasts sharply with *Rāvaṇa's*: though *Rāma* kills *Vāli,* he does not violate *Vāli's* wife, whereas *Rāvaṇa* abducts and dishonours women. Thus, the epic teaches a principle of dignified treatment of women; when a woman transgresses, *Rāma* administers decisive punishment, but only after moral hesitation and restraint, an example being his initial reluctance before slaying *Tāṭakā*. (***Gītā Press, 2024, part I, p. 144),*** Overall, the *Rāmāyaṇa* presents an ethic that balances respect for women with firm action against moral disorder. Also, it is recognized by **Dirghangi and Mohanty (2020**) that *Śūrpaṇakhā's* mutilation was not the cause of *Sītā's* abduction, nor does the *Vālmīki Rāmāyaṇa* establish any causal connection between the two events.

Rāvaṇa's actions in the *Rāmāyaṇa* are driven by desire and ambition, yet notably, he does not seek revenge against *Śurpaṇakhā* for her humiliation, nor does he act out of familial vengeance. His abduction of *Sītā* reflects personal desire rather than retribution for his sister, highlighting that lust and ego, rather than duty or justice, guide his conduct. In contrast, the *Rāmāyaṇa* consistently emphasizes *Rāma's* profound love and respect for his brothers, as well as their devoted affection toward him. This mutual bond of care, sacrifice, and fraternal loyalty forms the ethical and emotional core of the epic, underscoring that *Dharma*, virtue, and family devotion constitute the principal voice and enduring moral lesson of the *Rāmāyaṇa*.

7. Conclusion

Rāma stands as the living embodiment of *Dharma (righteousness),* compassion, and self-restraint. *Rāvaṇa*, in contrast, was not an ideal brother but a lustful and short-sighted ruler. The *Valmiki Rāmāyaṇa* itself bears witness: *Rāma* was the guardian

of truth, forgiveness, and moral order, whereas *Rāvaṇa* was adulterous, arrogant, and unjust.

The message of the *Rāmāyaṇa* is clear: knowledge, wealth, and power cannot save a man who succumbs to arrogance and lust. Only adherence to truth, righteousness, and restraint leads to eternal honour. *Rāvaṇa*, blinded by desire, brought about his own destruction at the hands of *Rāma*. Hence, it is *Rāma*, the *Maryāda Purushottama*, whom we must emulate, not *Rāvaṇa*. Thus, the critiques advanced by Periyar and other commentators regarding the *Rāmāyaṇa* can be critically examined and effectively addressed through close textual analysis. The epic unmistakably foregrounds *Rāma's* exemplary fraternal love, juxtaposed against *Rāvaṇa's* lust-driven desires and political ambitions, thereby reinforcing the ethical, moral, and *Dharmic (*righteous) principles central to the narrative.

8. Declarations

- **Funding**

The JBM Group, India, provided financial support for this study. The decision to publish, the preparation of the manuscript, the data collection and analysis, and the study design were all outside the funders' purview.

- **Conflicts of Interest**

The authors declare that they have no conflict of interest.

- **Consent for Publication**

All authors have reviewed and approved the manuscript and consent to its publication.

- **Availability of Data and Materials**

The datasets generated and/or analysed during the current study are available from the corresponding author upon reasonable request.

- **Authors' Contributions**

All authors contributed equally to writing, reviewing, and approving the final manuscript.

- **Acknowledgements**

The JBM group's support is greatly appreciated and acknowledged by the authors, who also thank the VDRO team for their cooperation, which significantly improved the quality of this work.

9. References

1. Brahm Muni, S. (2021). Rāmayan ki vishesh shikshayen (pp. 49–53). Vijaykumar Govindram Hasanand. https://archive.org/details/20221124_20221124_2339/page/n3/mode/2up
2. Chhetri, K. (2021). Deconstructing the character of Ravana: Revealing the dichotomy of perceptions. Education & Research International Journal of Cultural Studies, 7(7), 1–8. E-ISSN 2454-9916. https://share.google/5HsAf3302bHrzv9s8
3. Dirghangi, A., & Mohanty, S. (2020, January). De-mythifying the Rāmāyaṇa: A study of the "devoiced" Surpanakha. Proceedings of the International Conference on Arts and Humanities. https://doi.org/10.17501/23572744.2019.6102
4. Gītā Press. 2024. Vālmīki Rāmāyaṇa. Part I. English Translation. Archive.org Digital Edition.
5. Available at: https://archive.org/details/valmiki-ramayana-part-1/
6. Gītā Press. (2024). Vālmīki Rāmāyaṇa, Part 2 English translation Archive.org Digital Edition. https://archive.org/details/valmiki-ramayana-part-2/page/112/mode/2up
7. Hussain, A. (2025, October 3). Tamil Nadu police arrest one after a video of burning a Lord Ram effigy goes viral. India Today. https://www.indiatoday.in/india/tamil-nadu/story/tn-trichy-lord-ram-effigy-burning-ravana-praise-video-one-arrested-police-warn-others-2797049-2025-10-03
8. Pavithra, P., & Dinesh Kumar, G. (2024). Reinterpretations of Surpanakha in Kavita Kane's Lanka's Princess. International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), 12(4). https://www.ijcrt.org/papers/IJCRT24A4537.pdf?utm_source=
9. Periyar, E. V. Rāmasamy Naicker. (2011, September 1). Sachchī Rāmāyaṇa (Rāmadhār, Trans.). Nagpur: Moolnivasi Prachar-Prasar Kendra. https://share.google/bM0oaYMJfHcZ6cMCF
10. Rajagopalachari, C. (1958). Rāmāyaṇa (p. 136). Bharatiya Vidya Bhavan. https://archive.org/details/dli.ernet.52033/page/n3/mode/2up
11. Sharma, N., & Jha, S. (2023). Assertion or transgression: A critical study of Surpankha as an unwelcomed girl child in Kavita Kané's Lanka's Princess. Journal of International Women's Studies, 25(5), Article 8. Bridgewater State University. https://www.researchgate.net/publication/372412345_Assertion_or_Transgression_A_Critical_Study_of_Surpankha_as_an_Unwelcomed_Girl_Child_in_Kavita_Kane's_Lanka's_Princess
12. "Dussehra 2025" (2025) - Times of India Lifestyle Desk. (2025, October 3). Dussehra 2025: 5 places in India where Ravana is not burnt but worshipped. The Times of India. https://timesofindia.indiatimes.com/life-style/travel/destinations/dussehra-2025-5-places-in-india-where-ravana-is-not-burnt-but-worshiped/photostory/124232928.cms

वाल्मीकि रामायण में धर्म की सार्वभौमिकता: दक्षिण-पूर्व एशियाई रामायण के सन्दर्भ में

संजीव मिश्र

हिन्दू अध्ययन केन्द्र गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय ग्रेटर नोएडा उत्तर प्रदेश

(sanjee55_css@jnu.ac.in.)

धर्म भारतीय जीवनदर्शन का वह आधार है जो केवल धार्मिक आस्था का विषय न होकर समस्त सृष्टि के संतुलन, सामाजिक मर्यादा और मानवीय आचरण का नियामक सिद्धांत है। वाल्मीकि रामायण में धर्म का स्वरूप व्यापक और सर्वसमावेशी है, जहाँ धर्म को प्रजापालन, नीति, करुणा, सत्य और न्याय के रूप में देखा गया है। "धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा" — यह वैदिक उद्घोष रामायण के प्रत्येक प्रसंग में प्रतिध्वनित होता है। राम का चरित्र धर्म की इस सार्वभौमिकता का मूर्त रूप है, जहाँ वे व्यक्तिगत सुख से ऊपर उठकर लोककल्याण को धर्म मानते हैं। राम का वनगमन, पिता की आज्ञा पालन, प्रजा के प्रति उत्तरदायित्व और सत्यनिष्ठा सभी धर्म के वैश्विक मूल्यों का प्रतिपादन करते हैं। जब भारतीय संस्कृति दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों जैसे थाईलैंड, कंबोडिया, इंडोनेशिया, लाओस और मलेशिया तक पहुँची, तब वहाँ की स्थानीय परंपराओं ने रामकथा को अपनाते हुए उसे अपने सांस्कृतिक सन्दर्भों में ढाला। फलस्वरूप 'रामकियेन' (थाईलैंड), 'रीमकेर' (कंबोडिया), 'रामकेर्ति' (लाओस) 'काकावीन' (इण्डोनेशिया) जैसी कथाएँ विकसित हुईं, जिनमें धर्म की वही आत्मा प्रवाहित होती है जो वाल्मीकि रामायण में विद्यमान है। इन संस्करणों में राम सत्य, नीति और करुणा के प्रतीक हैं; सीता निष्ठा और मर्यादा की प्रतिमूर्ति हैं। दक्षिण-पूर्व एशियाई रामायणों में धर्म का अर्थ केवल धार्मिक अनुशासन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक एकात्मता और मानवीय मूल्यों का समन्वय है। इस प्रकार रामायण ने धर्म की उस सार्वभौमिकता को मूर्त रूप दिया जो जाति, भाषा और भौगोलिक सीमाओं से परे समस्त मानवता को जोड़ती है। अतः वाल्मीकि रामायण और उसके दक्षिण-पूर्व एशियाई रूपांतर धर्म की विश्वमानवता के अद्भुत प्रतीक हैं, जो आज भी सांस्कृतिक संवाद और नैतिक जीवन के आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

1. प्रस्तावना

धर्म से अनुप्राणित संस्कृतियों ने ही दुनिया को आदर्श समाज का मार्ग दिखाया है। धर्म किसी भी समाज की वह जीवनदायिनी शक्ति है जिसके अनुगुम्फन से वृद्धि के साथ नैतिक एवं सामासिक विकास की अपार सम्भावनायें स्वतः मार्ग दे दिया करती हैं। धर्म से अनुप्राणित परम्परा रूपी स्रोतस्विनी प्रवाहित होती है तब उसके कूल पर मनुष्य, खग-विहग, पशु आदि सभी अपनी तृष्णा को समाप्त कर तृप्त होते हैं। धर्म किसी भी राष्ट्र का प्राणतत्त्व है। उसे खोकर जीवित रहने का अर्थ है बिना सुगन्ध के पुष्प की भांति निरर्थक हो जाना। धर्म ही वह आधारशिला है, जिसका अवलम्ब लेकर किसी भी राष्ट्र का भव्य प्रासाद निर्मित होता है। धर्म ही वह तत्त्व है जिसके द्वारा कोई जाति अपने पूर्व गौरव, महान् आदर्श द्वारा संसार की अन्य जातियों से अपने को पृथक् करती है। अथर्ववेद में एक स्थान पर आया है- 'विश्वस्त्वं मातरमोषधीनां ध्रुवा भूमि पृथ्वीं धर्मणा धृताम्' [1]अर्थात् पृथ्वी धर्म को धारण करती है। इसी प्रकार तैत्तिरीय आरण्यक में कहा गया है धर्म सम्पूर्ण जगत में प्रतिष्ठित है, धर्मनिष्ठ के पास ही (अपने संकटों के निवारण हेतु) प्रजाजन आते हैं, धर्म से ही पाप दूर होते हैं, धर्म सबकी प्रतिष्ठा है इसलिए धर्म को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है" यथा 'धर्मो विश्वस्थ जगतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठ प्रजा उपसर्पन्ति, धर्मेण पापमपनुदति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद् धर्मं परमं वदन्ति'[2]। इसी प्रकार महाभारत में कहा गया है- 'धारणादधर्म मित्याहु धर्मो धारयते प्रजाः। यः स्यात धारणसयुक्तः स धर्म इति निश्चयः'[3]

अर्थात् जो धारण करता है, एकत्र करता है, अलगाव को दूर करता है उसे धर्म कहते हैं। ऐसा धर्म प्रजा को धारण करता है। जिसमें प्रजा को एकसूत्रता में बांध देने का सामर्थ्य है वह निश्चय ही धर्म है। धर्म समस्त राष्ट्र एवं प्रजा की रक्षा करता है। राम को धर्म पालन का उपदेश दिया गया और धर्म उनकी रक्षा करेगा ऐसा वृत्तान्त वर्णित है – 'यं पालयसि धर्मस्त्वं धृत्वा च नियमेन च। स वै राघव शार्दूल धर्मस्त्वामभिरक्षतु'[4] अर्थात् जिस धर्म का तुम पालन करते हो वह धर्म ही तुम्हारी रक्षा करेगा। अतः धर्म किसी भी संस्कृति का अप्रतिम समर्थ साधन और साध्य दोनो है जिसके द्वारा हम पुरुषार्थ की सिद्धि सम्पादित करते हैं।

---

[1] अथर्ववेद १२.१.१८

[2] तै.आ. १०.६३

[3] महाभारत कर्णपर्व ६८.४८.

[4] वा.रा. २.२५.३

भारतवर्ष की धर्म अत्यंत प्राचीन है और गौरवशाली भी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने बहुत उचित ही लिखा है कि 'हम कोई नौसिखिए नहीं हैं, जो रातों रात अनजान जंगल में पहुँचाकर अरक्षित छोड़ दिये गये हों। हमारी परम्परा महिमामयी, हमारा उत्तराधिकार विपुल और हमारा संस्कार उज्ज्वल है।'[5] ऋग्वेद से समारम्भ होने वाली संस्कृत एवं राष्ट्र के धर्म की अजस्र तरङ्गिणी लौकिक महाकाव्यों के उदधि में अक्षुण्णता को अद्यावधि धारण कर रही है। ऋग्वेद में सम्प्राप्त संवादसूक्तों एवं आख्यानों का ब्राह्मण ग्रन्थों में किञ्चित् विस्तार मिलता है, परन्तु ये आख्यान तब तक पूर्ण नहीं हैं जब तक इतिहास और धर्म का अनुशीलन न करते हों। अतः भारतीय धर्म की आबाधता की परीक्षा हेतु इतिहास एवं धर्म का अवलोकन करना आवश्यक हो जाता है। भारतीय परम्परा में आदि ऐतिहासिक ग्रन्थ अथवा इतिहास के रूप में रामायण को सम्मान प्राप्त है। अतः रामायण महाकाव्य होते हुये भी इतिहास है और इतिहास होते हुये भी महाकाव्य भी। रामायण की परक्रिया इतिहास की प्रसिद्धि सर्वविदित है।

महर्षि वाल्मीकि द्वारा विरचित होने से रामायण को आर्ष काव्य भी कहा जाता है। वाल्मीकि ने ब्रह्मा की आज्ञा से रामकथा का प्रणयन किया। रामस्य अयनमिति रामायणम्। 'न ते वागनृता काव्ये काचिदत्र भविष्यति। कुरू रामकथां पुण्यां श्लोकबद्धां मनोरमाम्॥'[6] राम की यात्रा एवं उस यात्रा का धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक महत्त्व को प्रतिपादित करने वाला ग्रन्थ रामायण के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

वेदों और धर्मशास्त्रों में हमें धर्म का स्वरूप और उपदेश तो मिलता है किन्तु उस धर्म का प्रयोग कैसे होना चाहिए, इसका मूर्त रूप मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के चरित्र में मिलता है। तैत्तिरीय उपनिषद् में स्पष्ट निर्देश है कि यदि कर्त्तव्य के निर्णय में या सदाचार के विषय में शंका हो तो सदाचार में लगे उत्तम विचारवालों के आचरण को देखकर उसके स्वरूप का निश्चय कर लेना चाहिए- 'अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्ति विचिकित्सा वा स्यात्। ते तत्र ब्राह्मणाः स युक्ता आयुक्ताः अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथाः ॥'[7]

तैत्तरीय उपनिषद् के इस कथन के आलोक में यदि हम धर्मपूर्ण आचरण का आदर्श किसी एक महापुरुष में देखना चाहें तो इसके श्रेष्ठ उदाहरण मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ही हैं।

महर्षि वाल्मीकि भारतीय धर्म की निर्बाधता को तभी सुनिश्चित कर देते हैं जब रामायण की रचना करते समय उदात्त गुणों एवं चरित्र आदि वाले पात्र की अपेक्षा करते हैं। आदि कवि महर्षि वाल्मीकि अपने काव्य के लिए एक ऐसे आदर्श नायक धीरोदात्त नायक का अनुसंधान कर रहे थे जिसमें सभी सद्गुणों की प्रतिष्ठा हो जिसका जीवन ही धर्म और सदाचार की कसौटी हो। उन्होंने देवर्षि नारद से पूछा -

कोन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान् ।
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः ॥
चारित्रेण च को युक्तः सर्वभूतेषु को हितः ।
विद्वान् कः कः समर्थश्च कश्चैकः प्रियदर्शनः ॥
आत्मवान् को जितक्रोधो द्युतिमान् कोऽनसूयकः ।
कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे ॥[8]

वाल्मीकि कह रहे हैं कि ऐसे गुणों वाला, धर्मज्ञाता, कृतज्ञ, सत्यवक्ता, दृढव्रत, चरित्रवान और सभी प्राणियों के हित में लगा रहने वाला कौन ऐसा व्यक्ति विद्यमान है? इसके उत्तर में नारद उनको बताते हैं कि भगवान् राम इन सभी गुणों के आदर्श हैं और आप उनको ही अपनी कथा का आधार बनाएं -

श्रुत्वा चैतत् त्रिलोकज्ञो वाल्मीकेर्नारदो वचः। श्रूयतामिति चामत्र्य प्रहृष्टो वाक्यमब्रवीत् ॥
बहवो दुर्लभाश्चैव ये त्वया कीर्तिता गुणाः। मुने वक्ष्याम्यहं बुद्धा तैर्युक्तः श्रूयतां नरः ॥ इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः। नियतात्मा महावीर्यो द्युतिमान् धृतिमान् वशी ॥
बुद्धिमान् नीतिमान् वाग्मी श्रीमान्शत्रुनिबर्हणः। विपुलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः ॥
महोरस्को महेष्वासो गूढजत्रुरिंदमः। आजानुबाहुः सुशिराः सुललाटः सुविक्रमः ॥[9]

वाल्मीकि के राम धर्म की साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं क्योंकि राम का चरित्र धर्म का मूल है इसलिये समस्त परम्परा के आदर्श राम हुये और मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये, जैसा कि कहा गया है 'रामादिवत्वर्तितव्यं न रावणादिवत्।' राम पिता की आज्ञा पालनहेतु राज्य त्याग कर वन गये यह पिता की आज्ञापालन का उदात्त रूप है। राम स्वयं कहते हैं कि पिता की सेवा तथा उनकी आज्ञा का पालन ही परम धर्माचरण है-

'न ह्यतो धर्मचरणं किञ्चिदस्ति महत्तरम्। यथा पितरि शुश्रूषा तस्य वा वचनक्रिया ॥'[10]

---

[5] नाखुन क्यों बढते हैं – हजारी प्रसाद द्विवेदी
[6] रा. बाल काण्ड २.३५
[7] वल्ली १, ११ अनुवाक
[8] वा. रा. बालकाण्ड १.२-४
[9] बा.का. १.६-१०

वाल्मीकि ने राम के जीवन को इतना उदात्त चित्रित किया है कि इससे बढकर कोई आदर्श हो ही नही सकता। वाल्मीकि कहते हैं "रामो द्विर्नाभिभाषते" अर्थात् राम दो तरह की बात नहीं करते। तुलसीदास जी भी लिखते हैं रघुकुलरीति सदा चलि आई। प्राण जांय पर वचन न जाई ॥

यहां ध्यातव्य है कि धर्म सामान्य को अनेकों विशेष धर्मों में विभक्त किया जा सकता है अथवा धर्म के कई स्वरूप हो सकते हैं। धर्म के अनेकों रूपों में भी राम आदर्श हैं इसलिये हि वाल्मीकि ने राम को "रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्यपराक्रमः" कहकर सम्बोधित किया। रामायण की अनेकों घटनाओं से सभी प्रकार के धर्मों का शुद्ध आचरण का उदाहरण राम के रूप में देखा जा सकता है-

राम विश्वामित्र के आग्रह पर ताडका नामक राक्षसी का वध करने हेतु उनके साथ गये। किन्तु ताडका वध के समय भी राम के मन में एक संशय उत्पन्न हुअ कि स्त्री पर प्रहार करना उचित है अथवा नहीं और इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि समाज की रक्षा और पाप के विनाश के लिये राजा के लिये स्त्री वध वर्जित नहीं होता। अतः ताडका का वध किया।

अल्पवीर्या यदा यक्षा श्शूयन्ते मुनिपुङ्गव। कथन्नागसहस्रस्य धारयत्यबला बलम्॥[11]

न हि ते स्त्रीवधकृते घृणा कार्या नरोत्तम। चातुर्वण्यहितार्थाय कर्तव्यं राजसूनुना॥[12]

नृशंसमनृशंसं वा प्रजारक्षणकारणात्। पातकं वा सदोषं वा कर्तव्यं रक्षता सता॥[13]

नरेश मेहता का खण्ड काव्य "संशय की एक रात" में उन्होनें युद्ध की अनिवार्यता के प्रश्न पर राम के मन की द्विविधा को चित्रित करते हैं। राम में मन में संशय का उदय युद्ध की समस्या को लेकर होता है। शान्ति स्थापना के लिए युद्ध अनिवार्य और अपरिहार्य है। इस विभीषिका को सामाजिक एव वैयक्तिक धरातल पर सभी युगों में भोगा जा रहा है।' विभीषण का चिन्तन और भी तीव्र है। नैतिक मूल्यों की रक्षा और अनैतिकता के विरोध में ही उसे राष्ट्र विरोधी कार्य करना पड़ा। राम ऐतिहासिक काल के आरम्भ में युद्ध के बीज नहीं बोना चाहते हैं। आने वाली पीढ़ी इस रक्तपात को अपना सकती है। राम युद्ध-संन्धि सभी से मुक्त होना चाहते हैं- इतिहास के हाथों बाण बनने से अधिक अच्छा है। स्वयं हम अँधेरों में यात्रा करते हुए खो जाएँ। राम तो मानवता को जगाना चाहते हैं-

मैं केवल युद्ध को बचाना चाहता रहा हूँ बन्धु !
मानव में श्रेष्ठ जो विराजा है। उसको ही।
हाँ, उसको ही जगाना चाहता रहा हूँ बन्धु ![14]

राम अपना चिन्तन परिषद् की इच्छा को समर्पित कर देते हैं। युद्ध विरोधी भाव प्रखर ही रहते हैं किन्तु मध्य रात्रि के निर्णय के साथ ही राम के संदिग्ध मन में संकल्प उभरने लगता है। इसके साथ ही राम का संशय शमित हो जाता है, सभी प्रश्न तिरोहित हो जाते हैं, लोकमत के आगे राम का संशय युद्ध के दृढ़ निश्चय में परिवर्तित हो जाता है-

प्रश्नों की बेला अब नहीं रही। युद्ध की वास्तविकता सूर्योदय ला रही।[15]

राम समस्त प्रजा ने राजकुमार के रूप में स्वागत किया, समस्त प्रशासन उनके राजा बनने से प्रसन्न था, राम को सभी भाइयों का निर्विरोध समर्थन प्राप्त था किन्तु माता कैकेई के वरदान में राम के लिये वनवास मांग लिया, इस स्थिति में राम को तीन परामर्श प्राप्त हुए, १. राज्यसिंहासन को छीन कर राज्य पर शासन करना। लक्ष्मण द्वारा, २. दशरथ को बन्दी बनाकर कारगार में रखा जाये और राज्य पर शासन करो। दशरथ स्वयं, ३. अयोध्या का त्यागकर नया राज्य बसाकर शासन किया जाये। कुलगुरु वशिष्ठ द्वारा।

इन विकल्पों के उपलब्ध होते हुए भी राम से सबसे समीचीन उपलब्ध धर्म का चयन किया। अर्थात् राम ने ऐसी स्थिति में सत्य धर्म का चयन किया। साथ ही यह भी संदेश दिया कि जब धर्म पालन के लिये अनेकों विकल्प उपलब्ध हो तब व्यक्ति को सर्वोच्च उचित धर्म का पालन करना चहिये न कि नियमों और अपवादों को आधार बनाकर धर्म से भागना चाहिये।

'न ह्यतो धर्मचरणं किञ्चिदस्ति महत्तरम्। यथा पितरि शुश्रूषा तस्य वा वचनक्रिया ॥'[16]

राम धर्म की ही नहीं अपितु धैर्य की भी प्रतिमूर्ति हैं। राज्याभिषेक के किञ्चित् समय पूर्व ज्ञात होता है कि पिता की आज्ञा से वन को जाना है तब भी उनके मुख मण्डल की आभा में किञ्चिदपि रोष नही दिखाई पडता है, जिसका वर्णन वाल्मीकि करते है कि राम सम्पूर्ण गाम्भीर्य, धैर्य एवं विनय से युक्त हैं और स्वयं ही पिता के व्याकुल होने पर पिता से वन जाने की आज्ञा मांग रहे हैं-

'न वनं गन्तुकामस्य त्यजतश्च वसुन्धराम्। सर्वलोकातिगस्येव लक्ष्यते चित्तविक्रिया॥'[17]

---

[10] रा,अयोध्या काण्ड १९.१२

[11] बा.का. १.२५.२

[12] बा.का. १.२५.१६

[13] बा.का. १.२५.१७

[14] संशय कि एक रात – नरेश मेहता

[15] संशय कि एक रात – नरेश मेहता

[16]

[17] अ.का.१९.३३

ऐसे ही चित्रकूट प्रकरण में जब भरत गुरुजनों सहित राम को राज्य हेतु प्रत्यावर्तन करवाने के लिये जाते हैं, तब भी राम भरत का आग्रह अस्वीकार कर देते हैं और पिता की मृत्यु के बाद भी पिता की आज्ञा का त्याग न करने का निश्चय व्यक्त करते हैं-

'लक्ष्मीश्चन्द्रादपेयाद् वा हिमवान् वा हिमं त्यजेत्। अतीयात् सागरो वेलां न प्रतिज्ञामहं पितुः॥'[18]

राम ने इससे भी आगे जाकर आदर्श प्रस्तुत किया है। माता कैकेई के वरदान मांगने और पिता की आज्ञा से वनगमन करना पडा किन्तु राम माता कैकेई पर रोष न करके कहते हैं -

बनभुवि तनुमात्रत्राणमाज्ञापितं मे सकलभुवनभारः स्थापितो वत्समून्नि।
तह सुकरतायामावयोस्तर्कितायां मयि पतति गरीयानम्ब ते पक्षपातः॥[19]

अर्थात् वनप्रान्तमें केवल अपनी देहकी रक्षा करनेका कार्य मुझे दिया गया और सारी पृथ्वी के पालन का भार भरतके शिर पर डाल दिया गया। यदि यहाँ पर हम दोनों के कार्योंकी सुकरताका विचार किया जाय तो मां, लोग तुमको राम के प्रति पक्षपात करने का दोष देंगे।

राम समरसता की स्थापना में अग्रसर रहे और ऐसे आदर्श प्रस्तुत किये जो आज तक भारतीय धर्म के उद्धारक राम बने हुये हैं। निषाद के प्रति मैत्री भाव तत्कालीन समस्त जनजातीय समुदाय को मुख्यधारा से जोडने का कार्य तो करता है साथ ही उनके मुख्य धारा में जोडे जाने की वकालत भी करता है। सबरी के उच्छिष्ट फल भक्षण स्वयं में भक्ति एवं समरसता का अप्रतिम उदाहरण बना हुआ है। जटायु के प्रति पितृत्व भी जीव मात्र के प्रति मानव धर्म की उद्घोषणा करता है।

राम अपने क्षत्रिय होने की बात कहते हैं, क्षत्रिय इसलिए धनुष धारण करता है कि संसार में कहीं आर्त-शब्द न हो 'क्षत्रियैर्धार्यते चापो नार्तशब्दो भवेदिति'[20] इसलिए राम अपनी प्रतिज्ञा बड़े स्पष्ट शब्दों में सुनाते हैं-

'अप्यहं जीवितं जयां त्वां वा सीते सलक्ष्मणाम्। न तु प्रतिज्ञां संश्रुत्य ब्राह्मणेभ्यो विशेषतः॥'[21]

क्योंकि उन्हें सत्य सदा प्रिय रहा है- 'सत्यमिष्टं हि मे सदा'[22]

राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, जो धर्म के सभी रूपों में उत्तम हैं। समाज की व्यवस्था को शुद्ध रखने हेतु एक राक्षसी का वध भी करते हैं, पत्नी के लिये समुद्र लाङ्घ कर रावण का वध करते हैं किन्तु वही राम धर्मनियम के कारण पत्नी का परित्याग भी करते हैं। सुग्रीव के साथ अन्याय करने पर बाली का वध भी करते हैं साथ ही बाली के पुत्र अङ्गद को युवराज भी बनाते हैं, रावण का वध भी करते हैं साथ ही लङ्का का राज्य विभीषण को सौंपते हैं। राम जिस रावण का वध करने हेतु युद्ध कर रहे हैं उसी रावण को निशस्त्र होने पर जीवित भी छोडते हैं। राम धर्म की किसी भी परिभाषा के लिये उचित उदाहरण नहीं हैं अपितु कोई भी परिभाषा राम से अपने औचित्य को प्राप्त करती है। रामो विग्रहवान् धर्मः यह उक्ति सत्य ही राम के स्वरूप को परिभाषित करती है।

राम केवल पितु धर्म, मित्र धर्म, राजधर्म के ही परिपोषक नही अपितु नीति के महत्तम उदाहरण भी प्रस्तुत किये हैं। रावण की मृत्यु के पश्चात् विभीषण अन्तिम संस्कार हेतु आज्ञा मांगते हैं तब राम की उक्ति है –

'मरणान्तानि वैराणि निर्वृत्तं नः प्रयोजनम्। क्रियतामस्य संस्कारो ममाप्येष यथा तव॥'[23] अर्थात् शत्रुता मृत्यु के साथ समाप्त हो जानी चाहिये, यह अब् मेरे लिये भी वैसा है जैसा तुम्हारे लिये है। राम ने जटायु का अन्तिम संस्कार किया और विभीषण को रावण का अन्तिम संस्कार करने का आग्रह किया जो कि अन्त्येष्टि संस्कार की महत्ता को स्थापित करता है। षोडष संस्कार भारतीय धर्म का अभिन्न अङ्ग बने हुये हैं।

राम जितने कोमल हैं उतने ही धर्मपालन में कठोर भी हैं। राम कहते हैं कि चोर को राजा दण्ड दे अथवा मुक्त कर् दे ऐसी स्थिति में चोर पाप से मुक्त हो जाता है परन्तु चोर को दण्डित न करने वाला राजा अवश्य पाप का भोग करता है। अतः राजा को उचित दण्ड देना ही चाहिये। शासनाद् वापि मोक्षाद् वा स्तेनः पापाद् प्रमुच्यते। राजा त्वशासन् पापस्य तदवाप्नोति किल्विषम् ॥ [24]

राम की दृष्टि में कृतघ्नता के लिये भी कोई क्षमा नही है, सुग्रीव के प्रसङ्ग में कहते हैं कि कृतघ्न व्यक्ति के मृत शरीर का मांस मांसाहारी जीव भी नही खाते हैं। 'कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः'[25] । बाली वध के कारण के रूप में रामचरित मानस में राम ने कहा है कि चार व्यक्तियों को कुदृष्टि डालने वाले का वध करना पाप नहीं है- 'अनुज वधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी। इन्हई कुदृष्टि बिलोकई जोई। ताहि बधे कछु पाप न होई'

राम के जीवन का लक्ष्य क्या था, यह बात, प्रथम सर्ग में मूल-रामायण में वाल्मीकि के नारद से प्रश्न में ही बीज रूप में व्यक्त कर दी गयी कि इस समय संसार में गुणवान् वीर्यवान्, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवाक्य, दृढव्रत, चारित्र से युक्त, सभी प्राणियों का हित करने वाला विद्वान् समर्थ आदि कौन है।

---

[18] अ.का.११२.१८
[19] चम्पू रा. अयो.का. २५
[20] वा.रा. ३.१०.३
[21] वा.रा. ३.१०.१६
[22] वा.रा. ३.१०.१८
[23] यु.का.११२.२५
[24] किं का. १८. ३२
[25] किं का. ३४.१२

वस्तुतः राम के महनीय व्यक्तित्व की यह सूचना मात्र थी जो बालकाण्ड में नारद के उत्तर में व्यक्त हुई है। यदि सबको समेटकर एक शब्द में व्यक्त किया जाय तो वह 'चारित्र' है। हम समझते हैं कि इस शब्द में राम के निर्दिष्ट अनेक गुण सिमट आते हैं, जैसे उनका धर्मनिष्ठ होना, अपने कुल के गौरव के प्रति जागरूक होना, सत्य वचन या अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहना, पिता के वचन-सत्य की रक्षा के लिए अर्पित होना आदि। राम का यह चारित्र रामायण में आद्योपरान्त अनुस्यूत है, तथा सूत्र की भाँति कथावस्तु की माला को धारण किये हुए है। अलक्षित होकर नहीं, बल्कि गूंथी हुई मणियों के भीतर से परिलक्षित होकर। इसी कारण राम मारीच के अनुसार, विग्रहवान् धर्म (रामो विग्रहवान् धर्मः) हैं।

राम ने रावण आदि राक्षसों का संहार किया, सम्भवतः यह उनका पार्यन्तिक उद्देश्य नहीं था, बल्कि वह एक क्षत्रिय का कर्तव्य था, जिसका उन्होंने पालन किया, और साथ ही जो उनके दुर्धर्ष पौरुष के अनुरूप भी था। कालिदास ने राम के मुख से उनके उद्देश्य को 'यश' के रूप में निर्देश किया

"रक्षोवधान्तो नहि मे प्रयासो व्यर्थः स वैरप्रतिमोचनाय"[26]

इसलिए राम ने सीता का पुनः परित्याग का कठोर निर्णय लिया था, क्योंकि "यशोधनानां हि यशो गरीयः"[27]

भवभूति के राम, लोकाराधन को अपने जीवन का चरम लक्ष्य बताते हैं और कहते हैं-

स्नेहं दयां च सौख्यञ्च यदि वा जानकीमपि। आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।।[28]

वाल्मीकि के राम के व्यक्तिव में भी यह सब कुछ चरित्र में सिमटा हुआ अभिव्यक्त, हुआ है। सत्य और धर्म की रक्षा एवं पालन के लिये राम अपने आदर्श वैदिक परम्परा से प्राप्त करते हैं और उनका सदैव पालन करते हैं। एक स्थल पर माता कौशल्या से कहते हैं कि धर्म का पालन ही लोक में परम धर्म है, और सत्य भी धर्म में ही प्रतिष्ठित होता है। "धर्मो हि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम्"[29] यद्यपि यह वाक्य भी उपनिषद् की श्रुति से अनुप्राणित है जहां धर्म के आचरण का निर्देश दिया गया है "सत्यं वद धर्म चर"[30]

रामकथा का प्रभाव एवं उसकी विश्वव्यापी यात्रा -

रामकथा की यह यात्रा लोक में ऋषि वाल्मीकि ने प्रसारित एवं स्थापित की। ध्यातव्य यह है कि राम का चरित्र इतना उदात्त एवं प्राञ्जल था जिससे लोक में उनकी प्रतिष्ठा मर्यादा पुरुष के रूप में हुई और उसी से प्रभावित होकर भगवान् वाल्मीकि ने रामायण की रचना किया। राम का चरित्र भारत सहित लगभग आधी दुनिया की धर्मयों को जोडने का पर्याप्त अकेला साधन है और रहा है। प्रायशः भारत की ऐसी कोई क्षेत्रीय धर्म नही है जिनमें राम के द्वारा स्थापित आदर्श एवं रामत्व का पुट न हो। भोजपुरी, मगही, अङ्गिका, अवधी, वनवासी, मैथिली, बुन्देली, बघेली, निमाडी, उडिया, तेलुगु, मुण्डारी आदि लोक साहित्यों में शताब्दियों से रामकथा का स्थान सुरक्षित रहा है।

राम का आकार इतना महत्तम रहा जिसक कारण अनेकों पन्थों एवं धर्मों तठा धर्मयों ने राम का स्वधर्मीकरण करके अपनी धर्म को संवर्धित किया तथा एक विशिष्ट स्थान बनाया। जैसे- जैन और बौद्ध साहित्य को भी राम के आदर्शों का आश्रय लेना पड़ा इसी के कारण जैन साहित्य में विमलदेव का पउमचरिय, रविषेण का पद्मपुराण, स्वयम्भू का पउमचरिय तथा बौद्ध रामायण की रचनायें हुई। साथ ही असमिया रामायण, कृत्तिवास बाङ्ला रामायण, नेपाली रामायण, उडिया रामायण, मैथिली, पञ्जाबी, कश्मीरी, तेलुगु, कन्नड, तमिल, मलयालम, गुजराती आदि रामायणों की रचना हुई।

राम के उदात्त चरित्र के कारण उनका आकार बृहत्तम हो गया और मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये। उनके द्वारा स्थापित आदर्श न केवल भारत के लिये अपितु संसार के अनेकों देशों के लिये प्रेरणास्पद रहे हैं। यही कारण है कि अनेकों देशों ने अपनी संस्कृति के आदर्शों में राम का समावेश किया है। सभी संस्कृतियों ने राम के आदर्शों का यथानुसार क्षेत्रीकरण करके अपने अपने इष्ट के रूप में स्थापित किया। अतः कहा जा सकता है कि सबके अपने अपने राम हैं किन्तु सबमें राम के आदर्श एवं धर्मपालन का पुट समान रूप से दिखायी देता है। राम के इसी व्यापक प्रभाव के कारण जैन, बौद्ध, तिब्बती, चीनी, इस्लाम सभी धर्मों अथवा पन्थों में रामायणों का प्रणयन हुआ है, जो इस प्रकार है-तिब्बती रामकथा, खोतानी रामायण, चीनी रामकथा, दशरथ-कथानम्, मंगोलिया की रामकथा, जापानी रामकथा, इण्डोनेशिया की रामकथा, रामायण ककविन, मलयेशिया की रामकथा, कम्बोडिया की रामकथा, रामकेर्ति का कथासार, थाईलैण्ड की रामकथा रामकियेन का सार, लाओस की रामकथा, फालक फालाभ की कथा, फिलीपीन्स की रामकथा, ब्रह्मदेश की रामकथा, सिंहली रामकथा आदि। यद्यपि वाल्मीकि रामायण से इनकी पात्र रचना एवं कथा में यत्र तत्र कथञ्चित् भेद मिलता है तथापि राम के कर्तव्य एवं चरित्र सभी को वाल्मीकि के ही इष्ट हैं। कथा में सीता रावण की पुत्री होना, रावण का चित्र बनाने के कारण सीता का निर्वासन, वाल्मीकि द्वारा सीता के द्वितीय बालक की सृष्टि, रामकथा के पात्रों के पारस्परिक रक्त-सम्बन्ध, बौद्ध प्रभाव से कथा सुखान्त बनाया जाना आदि भेदों द्वारा देशीकरण एवं स्वधार्मिकीकरण किया गया है यथा दक्षिण पूर्व एशिया के अधिकतर देश बौद्ध या मुस्लिम धर्म के अनुयायी हैं इसलिए मलेशिया की रामायण में रावण को भगवान शंकर के बजाय अल्लाह से वर माँगते दिखाया गया है।

2. निष्कर्षत

[26]. रघुवंश. १४.४१

[27]. रघुवंश. १४.३५

[28]. उ.रा.च. १.१२

[29] वा.रा. २.२१.४१

[30] तैत्तरीय उपनिषद शिक्षावल्ली ११.१

यह कहा जा सकता है कि राम न केवल एक महापुरुष हैं, बल्कि धर्म, मर्यादा और कर्तव्य के आदर्श प्रतीक भी हैं। उन्होंने अपने जीवन में सत्य, न्याय, करुणा और संयम जैसे मूल्यों को अपने आचरण में उतारकर एक ऐसे आदर्श की स्थापना की जो युगों तक अनुकरणीय बना रहेगा। चाहे वह पिता की आज्ञा का पालन हो, राज्य के कर्तव्यों का निर्वहन हो या पत्नी के प्रति प्रेम और सम्मान राम ने हर स्थिति में धर्म का मार्ग चुना। वाल्मीकि के राम किसी भी परिस्थिति में भी अपनी धर्मपरायणता को कदापि नही त्यागते अपितु धर्म ही उनका मार्गदर्शक है। इसी धर्मपरायणता न उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम बनाया जिसके कारण देश के घर घर में तुलसीदास की रामचरितमानस को वह अभीष्ट स्थान मिला जो अन्य पात्रों को नही प्राप्त हुआ, यह राम का औदात्य है। यही औदात्य और धर्मपरायणता विश्व संस्कृतियों में राम का समावेश करके उन्हें उत्कृष्टतर बनने का अवसर भी प्रदान करते हैं फलतः सम्पूर्ण विश्व में शताधिक रामाश्रित ग्रन्थ लिखे गये जो तत्तत् संस्कृतियों एवं समाजों को उनके आदर्श स्वरूप की ओर ले जायेंगे। इण्डोनेशिया जैसे देशों में रामलीला का मञ्चन किया जाता है और रामलीला को वहां राज्याश्रय प्राप्त है। राष्ट्रपति सुकर्णो के समय में पाकिस्तान का एक प्रतिनिधिमंडल इंडोनेशिया की यात्रा पर था। उस दौरान प्रतिनिधिमंडल को वहाँ रामलीला देखने का मौका मिला और वह इस बात से हैरान था कि एक मुस्लिम देश में रामलीला का मंचन क्यों किया जाता है। इस बारे में जब उन्होंने राष्ट्रपति से सवाल किया तो उन्होंने सद्यः जवाब दिया, हमने अपना धर्म बदला है, अपनी संस्कृति नहीं। अतः यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से निकलता है कि राम धर्म के प्रतिमान हैं, जिन्होंने न केवल अपने युग को दिशा दी, बल्कि आज भी मानव समाज के लिए नैतिक मूल्यों का प्रेरणास्रोत बने हुए हैं। भारतीय समाज में राजा भी धर्म के अधीन होता है और राम तो स्वयं धर्म की साक्षात् मूर्ति हैं यह निर्बाध सिद्ध है।

भरत चरित्र की भव्यता

उर्मिला त्रिपाठी
(urmilatripathi@gmail.com)

1. प्रस्तावना

भारत में त्याग, प्रेम, तपस्या की शिक्षा देने के लिए भरत का आविर्भाव हुआ है। राम उन्हें राज्य का भोग करने का आदेश करते हैं, किन्तु भरत उसका त्याग कर राम को ही वन से लौटा लाने के लिए निश्चय किये बैठै हैं। फिर भी राम अपने वचन से डिगते नहीं, तो वशिष्ठ के संकेत पर भरत उनकी चरण पादुका लेकर लौट आते हैं और उसे ही सिंहासन पर स्थापित कर स्वयं तपस्वी वेश में शासन करते हैं। इसका आध्यात्मिक पक्ष यह है कि महात्मा भरत भी अवतारी पुरूष थे। वे भगवान विष्णु के पांचजन्य शंख के अवतार थे। उनका भी जन्म देवांश के रूप में हुआ था। साथ ही, वे श्रीराम के समान ही सभी गुणों से सम्पन्न थे।

2. विस्तावर

खण्ड-1

तुलसीदास कृत श्री रामचरितमानस में चित्रकूट में हुए ‘‘राम-भरत-वशिष्ठ संवाद’’ इन तीनों पात्रों चरित्र पर रोशनी डालता है, पर भरत, जिनके ऊपर निर्णय लेने का उत्तरदायित्व आया, उनकी भव्यता खिलकर प्रत्यक्ष होती है। भरत पाषाण से भी अमृत निकाल लेते हैं और भावनात्मक व्यक्ति को तो किसी और ही लोक में पहुँचा देते हैं। वे चैतन्य को जड़ और जड़ को चैतन्य बना देते हैं।

रामराज्य की महिमा का वर्णन रामचरितमानस, विभिन्न रामायणों के अलावा पौराणिक ग्रन्थों में भी किया गया है।

रामराज्य का अभिप्राय केवल भौतिक उन्नति नहीं हैं। इसका तात्पर्य केवल बहिरंग विकास ही नहीं, जब तक हमारे जीवन का अंतःकरण का, मन और बुद्धि का विकास नहीं होता तब तक यंत्र बुद्धि से बड़ा हो जायेगा। चेतना की अपेक्षा जब जड़ का महत्व अधिक समाज में आ जाता है तब उसके द्वारा जो कार्य होते वह दूरगामी दृष्टि से बड़े अकल्याणकारी होते हैं।

श्री राम की यात्रा के बाद श्री भरत की चित्रकूट यात्रा का क्या उद्देश्य है? श्री राम आगे जाते हुए लोगों के मन, बुद्धि, हृदय में श्री भरत की महिमा प्रतिष्ठित कर रहे थे, मानो वे प्रेरणा दे रहे थे कि आप लोग भी भरत का दर्शन करके भी जीवन में धन्यता का अनुभव कर सकते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है कि श्री राम के दर्शन से मुक्ति भले ही प्राप्त हो जाये पर मनुष्य के मन के रोग दूर नहीं होते और हमारे सामने छप्पन प्रकार के व्यंजन अगर थाली में परोस दिये जायें पर हम में इन्हें पचाने की क्षमता नहीं है तो हम उसका स्वाद नहीं ले सकते।

तो मुख्य समस्या है हमारे मानस रोग कैसे दूर हों? स्वस्थ का अभिप्राय है स्व में स्थित हो जाना व अस्वस्थ का तात्पर्य है स्व से दूर चले जाना। जो व्यक्ति का स्व है आपका हमारा अपना जो स्वरूप है, वह शास्त्र कहते हैं-

‘‘ईश्वर अंश जीव अविनाशी, चेतन अमल साध सुख राशि।’’

जीव ईश्वर का अंश है और वह अंश होने के नाते, ईश्वर में जो गुण विद्यमान हैं वही उसमें भी विद्यमान हैं। जैसे बादल जब आकाश में छा जाते हैं तो सूर्य को वो नष्ट नहीं कर सकते हैं पर बादल होने पर सूर्य हमें दिखाई नहीं देता है। सत्य तो यह है कि बादल सूर्य को नहीं, हमारी आपकी आँखों को ढंकता है। हमें स्व/स्वरूप में स्थित होना है और मूलतः जो हम हैं जिसे हम भूल चुके हैं। उस भूल की हमारे जीवन में जब विस्मृति हो जाती हैं तो उसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति स्व में स्थित नहीं रह पाता, अस्वस्थ हो जाता है।

श्री भरत की भूमिका क्या है? जब श्री राम वन की ओर प्रस्थान करते हैं तो उनके दर्शन से ग्रामवासी, स्त्री-पुरूष वनवासी और मुनि सब अपने आपको बड़ा धन्य महसूस करते हैं।

जब त्रिवेणी प्रयाग के महर्षि भारद्वाज ने प्रभु श्री राम भद्र का दर्शन किया तो उनके साथ जनक नंदिनी सीता और श्री लक्ष्मण भी हैं। वे इतने आनंदित हुए कि उन्होंने कहा कि ‘‘मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि जीवन में जितनी तपस्या की, जितनी साधना की है, उसका परिणाम आपका दर्शन है।’’ यह सुनकर प्रभु मुस्काए, उसका अर्थ यह था कि आपको जो यह प्रतीत होता है, यह आपकी एक भावना है, मेरे प्रति प्रीति है। एक वृक्ष में जब फल आने लगते हैं तो लगाने वाले को कितनी ही प्रसन्नता होती है। साधना और तपस्या का वृक्ष जो लगाया गया, प्रभु आपके दर्शन के रूप में उसका फल प्राप्त हो गया।

बाद में जब उनके आश्रम में श्री भरत आये जो नम्रता की मूर्ति थे, अभिमान का उनमें लेश भी नहीं था एवं वे तो उनके सामने लज्जा व संकोच से बैठे हुए थे, तो महर्षि भारद्वाज बोले - ''भरत तुम्हारे आने से पहले श्री रामभद्र से एक बात मैंने कही थी और कहने के साथ-साथ एक वस्तु उनसे मांगी थी, लेकिन मेरी बात सुनकर वे मुस्कुराये और वह वस्तु मुझे नहीं दी और मांगा यही था।''

अब करि कृपा देहू वर येहू,
निज पद सरसिज, सहज सनेहू।।

आपके चरणों में सहज प्रेम हो यह वरदान दीजिए, तो प्रभु तो इतने प्रसिद्ध उदार हैं फिर भी वह मौन रह गए। उनका उद्देश्य संभवतः दूसरा था। फिर उन्होंने एक वाक्य जोड़ा-

सब साधन फल सुफल सुहावा,
लखन राम सिय दर्शन पावा।।

इन धारणा में मुझे आज भी कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है। पर भरत आज मैं यह कहे बिना नहीं रहूँगा कि

सब साधन फल सुफल सुहावा,
लखन राम सिय दर्शन पावा।।

लेकिन उनके दर्शन का भी फल आपका दर्शन है।

आम के पेड़ पर लगे कच्चे हरे आम, आम तो होते हैं पर उनमें मिठास नहीं होती, आपके दर्शन से उनमें मिठास आ गई।

खण्ड-2

भरत सरिस को, राम सनेही।
जग जपु राम, राम जपु जेही।।

सारा जगत राम को जपता है और राम भरत को जपते हैं।

रामचरितमानस हमें धर्मों में जो श्रेष्ठ धर्म है उसका चुनाव करना सिखाता है और और महाभारत हमें सही और गलत का चुनाव करना सिखाता है। राम के राज्य अभिषेक के पहले गुरू वशिष्ठ, मुनि विश्वामित्र और भगवान राम की एक गुप्त वार्ता हुई। वशिष्ठ ने राम को वनवास दिलवाने के लिए अपनी असमर्थता प्रकट की और राजर्षि विश्वामित्र ने कहा कि मैंने श्री राम से ताड़का वध कराया, धनुष यज्ञ कराया व उनका विवाह सम्पन्न कराया। मेरा कार्य यहाँ पूर्ण हो जाता है। तब रात्रि में भगवान राम माता कैकैयी के पास गये और अपने राज्यभिषेक होने का समाचार उन्हंे दिया और प्रसन्नता से भीगी कैकैयी के स्तन से दूध टपकने लगा। राम ने उनसे कहा आपके पास जो दो वरदान धरोहर के रूप हैं आप उनका उपयोग कीजिये। हमें वन जाना है वहाँ बहुत काम करना है जैसे बालि वध, रावण वध इत्यादि। कैकैयी ने मना कर दिया तो राम उदास मन से जाने लगे। फिर कैकैयी ने उन्हें बुलाकर कहा ''मैं माँ की तरह तो आपकी इच्छा पूर्ण नहीं कर सकती पर एक भक्त के नाते अपने भगवान के लिए आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।'' तब,

चैदह बरस राम वनवासी,
तापस वेश विशेष उदासी।।
यह वर मांगा।

खण्ड - 3

चित्रकूट में जब श्री भरत सभी परिवार जन एवं सेना के साथ पहुँचते हैं तो पांचवी सभा तक भी जब कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया जा सका तो उसे लेने का उत्तरदायित्व भरत पर आया। राम जी ने उन्हें सिर्फ इतना संकेत दिया कि भैया भरत तुम ऐसा करो और मुझसे भी वही करवाओ जिसको रघुकुल की रीति और प्रतिष्ठा और धर्म की रक्षा पर कोई आंच ना आये। तुम ही रघुकुल के दीपक हो। तब भरत जी उनसे ''रजाई'' अथवा ''राजाज्ञा'' देने को कहते हैं क्योंकि राजा तो राम ही हैं और अवलंब के रूप में उनसे कोई चिन्ह मांगते हैं। श्री राम ने अयोध्या से बिना चरण पादुका के ही मुनि वेश में वन को प्रस्थान किया था। यहाँ कहते हैं कि राम का एक और अवतार उनकी चरण पादुका के रूप में अवतरित हुआ जिसे भरत ने शिरोधार्य किया।

3. निष्कर्ष

भरत चरित कीरति करतूती।
धरम सील गुन बिमल बिभूती।।
समुझत सुनत सुखद सब काहू।
सूचि सुरसारि रूचि निदर सुधाहू।।

भावार्थ: भरत के चरित्र, कीर्ति और करनी से सबको सुख मिलता है। उनके धर्म, शील और निर्मल ऐश्वर्य को समझने में गंगा और अमृत से भी बढ.कर आनंद आता है।

4. संदर्भ ग्रंथ सूची

1. तुलसीदास कृत रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. श्रीमद वाल्मीकीय रामायण - महर्षि वाल्मीकि प्रणीत, गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. अध्यात्म रामायण, गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. श्री राम किंकर जी महाराज के व्याख्यानों पर आधारित।
5. राम प्रिय भरत - डॉ. आदित्य शुक्ल।
6. शत्रुघ्न श्रीनिवासाचार्य पं. शम्भुनाथ शास्त्री वेदान्ती, भरत-चरित का आध्यात्मिक पक्ष।

Leadership Redefined: The Principles of King Bharata's Rule

Lalita Singhal
(Singhal.ls108@gmail.com)

King Bharata's leadership in the Ramayana is often overlooked. True leadership, as he shows, is not measured by charisma or influence but by an example set by the leader through his own qualities. His reign had not only increased loyalty, devotion, and love among the people, far more than the original, but also motivated them to look forward to a shared purpose, reflecting the immense inspirational power of such virtues. This paper seeks to explore the learnings one can take and imbibe them in positions of authority bringing about a positive change for all.

1. Introduction

The true leadership displayed by Bharat Maharaj stands at an exceptionally high level. He was given the kingdom very unexpectedly, at a highly sensitive time. King Dashrath, a loving father deeply pleased with Lord Rama, had intended to give the kingdom to him. Yet the ideal of the time dictated that a father should not publicly favor his own son or daughter, as it could appear as partiality and undermine the prince or princess's merit. Instead, princes were expected to shine on their own and were given opportunities to do so.

Dashrath Maharaj called for an assembly of priests to counsel on who should be the next king. He did not wish to personally declare Lord Rama as king, but the assembly, already deeply impressed by Rama, could not stop praising his virtues. Dashrath was secretly pleased, yet, to maintain his image as a strict father and fair king, he asked if the assembly wished him to step down early. The priests joyfully replied that although Dashrath was a king of perfect qualities, his only fault was having Lord Rama, who was too virtuous, as his son. Thus, it was decided that Lord Rama's coronation would soon take place.

This shows the immense anticipation surrounding Rama's coronation. Yet, unexpectedly, their beloved Rama had to leave for exile, and Bharat had to be made king instead. For any ordinary person, it would be easy to assume that Bharat had coveted the kingdom and sent Rama away. The scrutiny was intense. Kaushalya, his elder mother, spoke bitterly: "You, who have a desire for the kingdom, have obtained this invincible kingdom. Alas! By the cruel deed of Kaikeyi, it has come to you so soon!" (2.74). She even urged him to send her into exile or heaven. Imagine the pain he must have felt hearing such words. Even Dashrath Maharaj uttered harsh words even if not directly: "If Bharat feels cheerful for having got this imperishable kingdom, let the obsequial rites performed to me after my death not reach me" (Ayodhya Kand 2.42.9). The kingdom's inhabitants were in deep despair, perhaps unimaginable to us today. In those times, the actions of elders automatically defined the child. Because Kaikeyi acted cruelly, she was heavily scrutinized as someone who had abandoned righteousness. Naturally, Bharat became perceived as an enemy, despite his innocence as he was her son and someone who gained the kingdom through her.

Yet Bharat showed immense courage, pacifying his dear mother. His words reassured her that he had not strayed from righteousness: "O son! Fortunately, your mind, endowed with nobility, has not swerved from the righteous path. You will obtain the world of the blessed, along with Lakshmana" (Ayodhya Kand 2.75.62). This was a test of his integrity, which he passed with remarkable success.

Bharat Maharaj was later brought to before the assembly of ministers, where he was urged to take over the kingdom. Yet he astonished everyone with his response. It was customary in such assemblies to praise the one about to become king, highlighting only their good qualities. The reasoning was that prolonged praise, even superficially, instills faith and regard for the person. When a king is to be coronated, it is ensured that ministers and subjects speak highly of him.In such a situation, it would have been easy for a modern man to become proud or justify to himself that once he rules properly, everything and everyone will fall into place. But Bharat Maharaj was unlike this. Without a hint of hesitation, he addressed the assembly, declaring that his sole purpose was to bring Lord Rama back to the kingdom, for Rama was the rightful king.

The effect was immediate. The anxious, grief-stricken assembly was overcome with joy and delight. Tears of happiness streamed down the eyes of these venerable men (Ayodhya Kand 2.79.16). Bharat Maharaj even instructed the council to prepare a path to the forest to bring Lord Rama back. His qualities were such that he transformed the extreme sorrow, grief, and anxiety of the people into hope and inspiration. Moreover, he engaged his subjects in meaningful action to fulfill this righteous purpose.

When Bharat Maharaj went forth to retrieve Lord Rama, he first encountered Guha, Rama's close companion, who tested him to see whether his intentions were pure. Even after passing this test, Bharat had to face the harsh words of his beloved brother Lakshmana—who was like a father to him—accusing him of bringing an army to attack them. In reality, Lakshmana

could never truly believe such a thing. The brothers had grown up together, bound by deep affection. Lakshmana's words were spoken to magnify Bharat's glory, giving him the chance to prove before everyone that he was entirely faultless.

If Bharat had come alone, Lakshmana would not have spoken so sharply. But because he arrived with the people of Ayodhya—people who would have to accept his leadership for the next fourteen years—it was essential for them to witness Bharat's righteousness and unwavering devotion to Rama. Lakshmana is often misinterpreted, but the truth is that Bharat was profoundly dear to him.

Once again, Bharat Maharaj proved his innocence before all. The conversation that followed—his heartfelt plea for Lord Rama to return—remains one of the most intense and illuminating moments in the Ramayana, rich with lessons on duty, devotion, and humility. Bharat needed Rama to return not for his own comfort, but for the welfare of his subjects. As someone temporarily entrusted with the role of king, he had to uphold and impart dharma; without righteousness, the people would lose faith in him and sink deeper into despair.

Bharat did everything in his power to persuade Rama to come back, and in response, Rama used the opportunity to teach the timeless duties of an individual: the sanctity of a promise, the value of restraint, and the unshakeable commitment to truth. When Bharat finally realized that the vow made by their father had to be fulfilled—upheld not only by sages but by Rama himself—he accepted the decision with a heavy yet noble heart. Then came one of the sweetest and most touching exchanges in the entire epic. Bharat circumambulated Lord Rama, bowed deeply before him, and requested his sandals. Before everyone present, he placed Rama's sandals upon his head, and returned to Ayodhya with them. After returning to Ayodhya, Bharat stood before everyone and made a public declaration. Not even once did he say that he would rule the kingdom. He simply stated that he had brought Rama's sandals, and that only through the presence of these sandals had righteousness been restored. He did not credit himself in any way. He even went so far as to say that taking up this duty was like carrying a sin, and that it would be washed away only when he could return the sandals to Rama's feet.

He was then coronated with the sandals placed on the throne, and he took on the administrative responsibilities as their representative. Whenever he received gifts or honours, he offered them to the sandals first. In this way he made it clear to everyone that the kingdom belonged only to Rama, and he was merely serving in his place. He lived under great austerity. In Lord Rama's absence, he survived only on barley cooked in cow urine and wore simple tree bark instead of royal garments. Through this intense discipline, he won back the hearts of his entire kingdom and restored his honour. His way of living made his sinlessness clear to everyone.

2. Humility that Makes Power Gentle

A very important quality of a leader is that he should win the trust of his team. This is the most difficult part of authority, yet it is the very foundation of it. Without trust, people may listen outwardly but they cannot follow wholeheartedly. Even when correcting a mistake, a wise leader considers relationships. If a subordinate errs, it is often better to ask that person's own superior or guardian to guide them, because without trust between the two, direct correction may not inspire or uplift as the trust has yet to be established. True leadership understands the importance of influence that is earned, not imposed. And this requires a very careful balance of fiery leadership and the cooling humility with a dash of patience along with it.

King Bharata embodied this perfectly. He was a ruler who carried humility at his core, and this humility won the hearts of his subjects. Without it, the kingdom—already shaken by grief, suspicion, and shock—would have fallen apart. The scriptures state that the qualities of the Lord are unlimited: "guna sabdera artha — krishnera guna ananta; sac-cid-rupa–guna sarva purnananda" (Caitanya Caritamrita, Madhya 24.41). The humility of Lord Rama is eternally complete, yet in Bharata we witness a humility so deep that he placed Rama's sandals on the throne and ruled only as their servant. In doing so, his humility shone at a level extraordinary even from that which was shown of Lord Rama in the Mahabharata.

This humility of King Bharata transformed everyone around him. He had every opportunity to take the kingdom for himself, but the thought never entered his mind. Even in Rama's absence, the people remained peaceful because Bharata's character spoke louder than his position. Many had reasons to doubt him—after all, the kingdom had come to him under painful circumstances. He faced constant accusations of coveting the throne. But once he proved, through consistent conduct, that this was never his intention, trust naturally formed around him. He did not need to struggle for authority; people willingly stood behind him.

Humility is often misunderstood. Some believe a leader should avoid it, or they confuse humility with self-pity. But these two are completely different. True humility is honest. It springs from inner clarity and a sense of duty. A humble person lowers themselves not for applause, but because they know, deep within, what truly belongs to them and what does not. Self-pity, by contrast, is lamentation disguised as modesty, and it cannot endure pressure or responsibility.To genuinely win hearts, humility must be authentic and deeply rooted. This was Bharata's strength. No test could shake him—not the harsh words of loved ones, not public suspicion, not the profound pain of separation from Rama. His humility carried him through every challenge and ultimately brought him even greater respect. He did not act to win hearts, yet hearts came to him naturally because of who he was.

We as growing leaders in our own field should keep this quality of humility very close to our chest, as it not only grounds us in place, but also ensures that we are capable enough to take responsibility as someone of position.

3. Leadership Proven, not Bestowed

Nepotism is a problem often discussed in today's times. When someone is given power or position without demonstrating the

right qualities, it naturally invites criticism and mistrust. There is also a common belief that leadership can simply be taught through classes, workshops, or curated activities—that a polished exterior is enough. Many such courses exist, but they often attract people who are more interested in appearing capable than in cultivating integrity.

Bharata Maharaj stands in direct contrast to this. He was handed the kingdom because of Kaikeyi's misuse of her boons, an act that bore all the marks of favoritism and ambition. We can see through the example of Dashrath Maharaj on how important it was for the kings to ensure that people should not assume that there is favouritism behind these. For the incident where Bharat Maharaj was given the kingdom, on paper, it looked like the very definition of nepotism: a son receiving a throne he never earned. But the true test of character lies not in what one is given, but in how one responds to it. Bharata did not hide behind his mother's decisions, nor did he try to justify them. Instead, he proved—through his actions, not his words—that leadership is validated only when one rises above personal gain. He took the throne only as a caretaker, placing Rama's sandals on it to show that the true king was elsewhere. He lived with austerity, not comfort, and treated the responsibility as a burden he longed to return. He ruled the kingdom only after he won the hearts of the people by showing his utmost loyalty to Lord Rama.

Nepotism collapses under scrutiny when the person in power lacks depth. Bharata, however, rose above it because he never claimed it in the first place. What was bestowed on him did not define him; what he proved through his conduct did. In a world where titles can be purchased and appearances polished, his example reminds us that the substance of a leader is forged through character, not convenience. All the leaders who have been given the position of power through inheritance should keep this at the centre of their minds.

Building Fame and Honor

Leadership demands a reputation grounded in truth, not constructed through manipulation. Bharata Maharaj understood that a leader's honor is not a private possession; it is a public trust. His name had become associated with deceit even though he had neither conspired against Rama nor desired the throne. Instead of defending himself through mere words, he chose the harder path—action that demonstrated character. By immediately travelling to the forest to meet Lord Rama, he made it clear to the entire kingdom that he rejected the throne obtained through injustice. Even upon reaching the forest, he did everything within his power to persuade Lord Rama to return and reclaim his rightful position. When Rama remained firm in his vow, Bharata did not simply accept the situation; he waited until the rishis themselves acknowledged the truth of Rama's decision and instructed him to return. Only then did he consent to leave.

When Bharata Maharaj was unfairly criticized, he did not attempt to suppress it or defend himself through force; he embraced accountability even when he had no reason to. He never asked for the kingdom, but still he understood that his image must now reflect his internal values. As when that harmony of internal and external is broken, society begins to lose faith, and institutions weaken.

Through transparency, humility, and unwavering devotion to righteousness, Bharata Maharaj rebuilt his honor. He showed that fame earned through virtue becomes a safeguard, while fame constructed through deceit collapses under its own weight. His actions created a new narrative—one where moral clarity triumphs over misunderstanding. In doing so, he demonstrated that leadership is not an inherited privilege but a continuous commitment to aligning one's reputation with one's ethical principles.

Leaders often underestimate how deeply reputation shapes the morale of the people under them. An individual may claim that public opinion is irrelevant, but for someone in authority, perception becomes inseparable from responsibility. If the reputation of a leader is tarnished and it's foundation takes root, then no matter what it becomes extremely difficult or even next to impossible in some cases to go back to the time before. We can take the example of Asaram Baba and many such leaders who can now not rise back. While it is important that one should not care about words spoken about them when they are baseless, but when they seem to have even a little bit of strength, it is time to rise to the occasion instead of sitting passively. They should remain firm in their principles, and wait for the right time to hit the hammer and prove their integrity.

Ability to Inspire without Commanding

Bharata Maharaj had a rare quality where people obeyed him not because he held a position, but because he held their respect. Influence that arises from the heart is far stronger than influence enforced by rules. Even when he sat on the throne, he made it absolutely clear that the real king was Lord Rama. By doing so, he removed the possibility of ego entering his leadership. This alone inspired people more than any speech could. He never tried to "motivate" others in the modern sense. He did not orchestrate speeches, create emotional appeals, or force loyalty. Instead, his sincerity created an environment where people wanted to rise to his standard. Leadership becomes powerful when people feel ashamed to act wrongly in the presence of someone who lives rightly. Bharata's life created exactly that effect.

His austerity was not a performance; it was a living example. When citizens saw their ruler sleeping on the floor, living in simplicity, and treating the kingdom as a sacred trust rather than personal property, they began to mirror his behavior. Devotion, honesty, and responsibility spread through the kingdom almost effortlessly. The king's character became the people's culture.This is why Bharata's leadership stands apart. He never used force, pressure, or orders to maintain harmony. His strength came from integrity so pure that it naturally influenced others. When a leader embodies the values they want to see, their very presence becomes a guiding force. Bharata Maharaj proved that the deepest authority is not in issuing commands, but in awakening a desire in others to live with the same honor and devotion.

For those willing to rise into positions of authority, this truth remains essential. Leadership is not built on display, charm, or the cleverness to impress others. It demands an inner core so steady that it cannot be moved by praise, criticism, success, or failure. The have to cultivate an inner foundation which is so firm, that it naturally creates movement in those around them. People are not shaken by loud words; they are shaken by the presence of someone whose integrity does not waver.

4. Emotional Discipline

Emotional discipline is one of those invisible strengths that decides whether a leader holds a kingdom together or watches it crumble. It is not the suppression of emotion, nor the cold-hearted denial of feeling. It is the ability to feel deeply yet act rightly. A person may be torn inside, but if their actions remain aligned with truth, they are practicing emotional discipline.

Bharata Maharaj embodied this in a rare, almost startling way. His heart was shattered—he had lost his father, been separated from his brothers, blamed by his own people, and robbed of the life he imagined for himself. Yet not once did he let grief turn into anger, or pain into bitterness. He neither lashed out nor fell apart. His emotions moved, but they did not control him. This does not make him emotionless; it makes him powerful. A leader without emotional discipline becomes unpredictable. They bend to every mood, every fear, every insecurity, and the people under them are forced to bend along with them. Bharata, instead, let his sorrow refine him. He felt every injustice, every accusation, every heartbreak; yet he continued to act with clarity and devotion.

This is why his kingdom trusted him. Emotional steadiness is not about being unmoved; it is about being reliably moved in the right direction. Bharata Maharaj's discipline made him a shelter for others. When a leader can carry their own storms without letting them spill onto the people, they become someone others naturally turn toward. As leaders are pillars, not jellies or waters.

In today's world, many people in positions of authority carry unresolved negativity, personal grief, insecurity, or inner instability into their leadership. When the person at the centre is shaking, everything built around them eventually starts to shake as well. A leader who cannot manage their own inner turbulence ends up spreading it—through their decisions, through their moods, through their interactions. Over time, the organisation, team, or institution under them becomes weakened, confused, or fractured. This isn't because they are bad people; it is because unresolved inner chaos seeps into every corner of leadership. Authority magnifies whatever is inside a person. If there is pain, it spreads. If there is insecurity, it becomes policy. If there is resentment, it turns into culture.

That is why cultivating a strong inner core is not optional, rather it is foundational. When a leader has steadiness within, they can hold steady for others. When they have clarity within, they make decisions that uplift rather than unsettle. And when they have emotional discipline within, the people under them feel safe, seen, and guided. A leader's inner strength does not eliminate challenges; it simply ensures the leader does not collapse before the challenge does. In a world where authority is easily obtained but rarely sustained, an anchored heart becomes the rarest and most necessary qualification.

Service oriented leadership

The Bhagavad Gita As It Is describes sanātana-dharma as the eternal occupation of every living entity. Dharma is not a temporary duty; it is the innate quality that cannot be separated from its source—just as heat cannot be separated from fire. Śrī Caitanya Mahāprabhu explains this beautifully by stating that the constitutional position of the living being is to render service. No matter who we are or where we stand in society, service is the one activity we can never escape.

Society itself is built on this principle. The politician convinces the public that he is capable of serving them, and the public pays taxes with the expectation that service will be rendered. The businessman serves by providing goods, and the society serves him back with income and capital. Every relationship—economic, social, familial—rests on this unavoidable exchange of service. Service is not weakness; it is the fundamental structure of humanity. From this perspective, the capacity to serve becomes the real measure of leadership. The higher one rises, the greater must be their ability to render service. In the structure of varṇāśrama-dharma, the gradation is not based on privilege but on responsibility. Those positioned higher in authority must carry a deeper ability to sacrifice, support, guide, and uplift. When this is absent, authority becomes hollow. When it is present, leadership becomes transformative.

Service-oriented leadership is the kind of authority that turns the usual hierarchy upside down. Instead of standing above others, the leader stands beneath them—holding, supporting, and elevating their growth. It is subtle but powerful. When a leader sees themselves as a servant first, every action becomes cleaner, clearer, and more meaningful.

Bharata Maharaj is the perfect illustration. He did not rule to enjoy the kingdom; he ruled to protect it for Rama. His decisions were shaped not by desire but by responsibility. A servant-leader thinks in this way: What is needed? What will uplift others? What will preserve righteousness? The ego becomes a tool rather than a master. In this model, leadership stops being about personal achievement. It becomes an offering. The leader works so that others may flourish. They accept burdens so that others remain light. They take accountability so that others feel secure. This creates a kind of quiet influence—people follow not because they fear authority, but because they trust the intention behind it.

Service-oriented leadership also removes the constant hunger for validation. When one's purpose is to serve, there is no need to prove superiority. The leader's strength flows from sincerity, not dominance, and this sincerity becomes contagious. A community guided by such leadership develops humility, cooperation, and loyalty almost naturally.

5. Conclusion

Bharata Maharaj stands as one of the finest examples of what true leadership looks like. His life shows that authority is not

gained through birth, inheritance, or force—it is earned through character. Whether facing suspicion, accusation, grief, or responsibility, he remained unshaken because his inner foundation was strong. Humility was not a performance for him; it was his nature. Devotion was not a strategy; it was his identity. And service was not an occasional gesture—it was the very centre of his being.

He demonstrated that leadership is proven, not bestowed. Reputation must be built on truth, not image. Trust must be earned through integrity, not demanded through position. He corrected misunderstandings not with arguments but through action. He inspired without commanding, guided without imposing, and upheld dharma without seeking personal gain. Even in the deepest sorrow of Rama's exile, he carried the kingdom through stability and honor because he carried no desire for himself. The teachings of the Gita and the insight of our ācāryas reinforce the same principle: the eternal duty of every living being is service. When a leader accepts this wholeheartedly, authority becomes purified. The higher one rises, the greater their capacity to serve must become. Bharata Maharaj embodied this ideal so naturally that his entire kingdom could rest its faith upon him without fear.

In the end, his leadership reminds us that greatness is never about occupying a throne. It is about protecting it for the rightful person. It is about cultivating an inner core so steady that it shapes the world around it. And it is about understanding that service, humility, emotional discipline, and righteousness are not optional—these are the very forces that sustain society. His example continues to show that when leadership aligns with dharma, it does not merely rule a kingdom; it uplifts the hearts within it.

6. References

1. Valmiki. The Ramayana. Translated by Bibek Debroy, Penguin Classics, 2017
2. Kṛṣṇadāsa Kavirāja. Śrī Caitanya-caritāmṛta: Madhya-līlā. Translated by A. C. Bhaktivedanta Swami Prabhupāda, Bhaktivedanta Book Trust, 1975.
3. Bhagavad-gītā As It Is. Translated and commented by A. C. Bhaktivedanta Swami Prabhupāda, Bhaktivedanta Book Trust, 1972.
4. Śrīmad-Bhāgavatam. Translated by A. C. Bhaktivedanta Swami Prabhupāda, Bhaktivedanta Book Trust, 1972–1977.
5. Manu. The Manusmṛti: Laws of Manu. Translated by Patrick Olivelle, Oxford University Press, 2004.
6. Kellerman, Barbara. Leadership: Essential Selections on Power, Authority, and Influence. McGraw-Hill, 2010.

"रामायण में पर्यावरण संतुलन और पारिस्थितिक चेतना"

उत्तम वर्मन
स्मिता कुमारी
पटना विश्वविद्यालय, पटना
(uttam1995barman@gmail.com)

1. भूमिका

महर्षि वाल्मीकि कृत आदिकाव्य रामायण में पर्यावरण संतुलन और पारिस्थितिक जागरूकता का महत्वपूर्ण संदेश निहित है जो प्रकृति और मानव के अंतर्संबंधों पर प्रकाश डालता है और प्रकृति-संरक्षण की प्रेरणा देता है। वनों, नदियों, पशुओं और पौधों से संबद्ध यह महाकाव्य संदेश देता है कि प्रकृति के प्रति हानिकारक व्यवहार या पर्यावरण के प्रति उदासीनता के नकारात्मक परिणाम होते हैं। रामायण वर्तमान पारिस्थितिक असंतुलन और प्रदूषण से मुक्ति का मार्ग दिखाता है। इसमें वृक्षों, नदियों और वन्यजीवों के प्रति सम्मान और प्रेम दिखाया गया है, और यह सिखाता है कि मानव-प्रकृति का संबंध अटूट है। भरत का आश्रम में केवल न्यूनतम हस्तक्षेप का निर्णय और रामराज्य में पशु-पक्षियों के बीच सहज प्रेम जैसे प्रसंग इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। आदिकविवाल्मीकि न केवल रामायण के रचयिता हैं बल्कि भारतीय चिंतन परंपरा में पर्यावरणीय चेतना के प्रणेता भी माने जाते हैं। उनकी जयंती, जो आश्विन शुक्ल पूर्णिमा को मनाई जाती है, यह केवल एक धार्मिक उत्सव ही नहीं है, बल्कि यह उस कथा का प्रतीक है जिसमें मानव और प्रकृति के गहरे संबंध और पारिस्थितिक चेतना झलकते हैं। अतः रामायण के प्रारम्भ में ही क्रौंच पक्षी की हत्या से करुणा प्लावित होकर वाल्मीकिमुनि ने रामायण की रचना की थी। अतः वे काव्य के प्रारम्भ में ही जीवों के संरक्षण की चेतावनी देते हैं यो पर्यावरण संरक्षण का मूल मंत्र है क्योंकि प्रकृति के प्रति क्रूरता मानवीय प्रतिष्ठा नष्ट करती है। साहित्य और पर्यावरणीय चेतना का जन्म एक ही मार्मिक घटना से हुआ। आज भी जहां शिकार के विरुद्ध नैतिक अपील की जाती है वहां वन्यजीव संरक्षण अभियानों के लिए इस श्लोक को उद्धृत किया जाता है। तद्यथा-

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥"
(वा. रा. बालकांड- 1.18-19)

2. प्रासंगिकता

भारतीय साहित्य में पर्यावरण और पारिस्थिक विषयों के संरक्षण की दृष्टि अन्तर्निहित है। वाल्मीकि रामायण भी इस कसौटी पर खरा उतरता है। इसमें वर्तमान एवं आनेवाली पीढ़ियों का मार्ग दर्शन करने की क्षमता है। वाल्मीकि रामायण में मानव मात्र की श्रेष्ठता, सत्यभाषण, उदारता, मित्रता, आज्ञापालन, मधुर तथा संयत भाषण, धर्मसम्मत अर्थ और काम का सेवन, शरणागतों तथा पीड़ितों का रक्षण, वनों, वृक्षों, नदियों और वन्यजीवों एवं व्रत-निष्ठा आदि का वर्णन है जो इसे निःसंदेह एक अमर काव्य बनाते हैं। रामायण के किष्किन्धयकाण्ड में, वर्षा ऋतु का अत्यन्त सुन्दर वर्णन हैं। इस संदर्भ में, श्रीरामचंद्र भ्राता लक्ष्मण से कहते हैं कि वर्षा ऋतु में न केवल बादलों के उदर से जल की धाराएँ गिरती हैं, बल्कि उससे जुड़ी हवा भी चलती है। वह हवा मधुर और शीतल होती है। केतककुसुम की सुगंध से युक्त यह हवा, शरीर और मन को कपूर मिले शीतल जल के समान सुखदायक होती है। यह ग्रीष्म ऋतु से त्रस्त मनुष्य, पशु-पक्षी और वृक्षों सहित समस्त प्रकृति को पुनर्जीवित कर देती है। तब ऐसा लगता है कि इस मधुर हवा को कोई अपनी हथेलियों में भरकर पी सकता है। तद्यथा-

"मेघोदरविनिर्मुक्ताः कर्पूरदलशीतलाः।
शक्यमलिभिः पातुं वाताः केतकगन्धिनः॥"
(वा. रा. किष्किन्ध्याकांड- 28. 8)

शोध का उद्देश्य :- रामायण पर्यावरण संतुलन और पारिस्थितिक चेतना का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जिसमें प्रकृति के पॉचतत्वों (क्षिति, अप, तेज, मरुत्, व्योमादि) और जीवों को देवतुल्य माना गया है। मेरे प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य रामायण में प्राकृतिक संसाधनों के नियंत्रण, पर्यावरण संतुलन और जैव विविधता का अध्ययन और विश्लेषण करना है।

अध्ययन पद्धति :- मैंने इस शोध पत्र तैयार करने के लिए सहायक द्वितीयक विधि को अपनाया है। जिसके अंतर्गत विभिन्न पुस्तकों, शोध पत्रों, समाचार पत्रों, पत्रिका एवं इंटरनेट की भी सहायता ली गई है।

विवेचन :- महर्षि वाल्मीकि विरचित रामायण में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश जैसे पॉचतत्वों को पूजनीय माना गया है, जो पर्यावरण संतुलन का आधार हैं। राम और सीता का वन्यजीवों और वृक्षों के प्रति लगाव और भरत द्वारा आश्रम में न्यूनतम हस्तक्षेप की नीति दर्शाती है कि

प्रकृति को हानि नहीं पहुंचानी चाहिए। गंगा जैसी नदियों को मोक्षदायिनी और जीवनदायिनी बताकर उनके संरक्षण पर जोर दिया गया है। अयोध्या और अन्य नगरों के चित्रण में वाटिकाओं, उपवनों और तालाबों को शामिल किया गया है, जो शहरी पर्यावरण को बेहतर बनाने की प्रेरणा देते हैं। राम और सीता का पशु-पक्षियों के साथ परिवार जैसा व्यवहार उनकी गहरी पारिस्थितिक चेतना को दर्शाता है। रामराज्य में मनुष्यों, पशुओं और प्रकृति के बीच सामंजस्य दिखाया गया है, जहाँ हाथी और शेर भी एक साथ रहते हैं। भारतीय संस्कृति का विकास वनों और ऋषियों-महर्षियों के तपश्चरण से हुआ है, जिसे रामायण में दर्शाया गया है। रामायण के ये उपदेश आज के पर्यावरणीय संकटों के दौर में बेहद प्रासंगिक हैं, जो हमें प्रकृति के साथ सामंजस्य बिठाने और उसका संरक्षण करने की प्रेरणा देते हैं।

रामायण केवल रामकथा नहीं है, यह प्रकृति के सौंदर्य और उसकी जीवनदायिनी शक्ति का महाकाव्य भी है। वन, नदियाँ, पर्वत और जीव-जंतु यहाँ केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि कथा के सजीव पात्र हैं, जो मानव के नैतिक संघर्षों के साक्षी बनते हैं। वास्तव में वाल्मीकि काव्य का आरंभ ही एक पर्यावरणीय घटना से होता है, जब उन्होंने एक क्रौंच पक्षी के वध पर वेदना से भरकर प्रथम श्लोक की रचना की। यह क्षण भारतीय साहित्य में पर्यावरण संरक्षण की सबसे प्राचीन पुकार बन गया, जहाँ मानवीय क्रूरता के विरुद्ध प्रकृति की व्यथा स्वरूप गूँज उठी।

आज जब दुनिया जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई और जैव विविधता के ह्रास जैसी गंभीर चुनौतियों से जूझ रही है, वाल्मीकि जयंती हमें रामायण से प्रेरणा लेने का अवसर देती है। उनके श्लोक हमें बताते हैं कि प्रकृति केवल संसाधन नहीं है, बल्कि धर्म और जीवन की नींव है। रामायण का पर्यावरणीय संतुलन हमारे लिए आधुनिक संरक्षण प्रयासों का मार्गदर्शन बन सकता है।

महर्षि वाल्मीकि का जीवन स्वयं भी इस जागरूकता की मिसाल है। रत्नाकर डाकू से महर्षि बनने की उनकी यात्रा यह सिखाती है कि आत्मचिंतन और साधना से मनुष्य न केवल स्वयं बदल सकता है, बल्कि समाज और प्रकृति के लिए भी प्रेरणा बन सकता है। नारद मुनि से रामनाम का मंत्र प्राप्त करने के बाद उन्होंने वर्षों तक तपस्या की, वनस्पतियों और जीव-जंतुओं की संगति में रहे। धीरे-धीरे वे प्रकृति के साथ एकाकार हो गए और उनके भीतर से एक नए कवि का जन्म हुआ।

रामायण के सात कांडों में प्रकृति का वर्णन इतना जीवंत है कि यह महाकाव्य को पर्यावरणीय ग्रंथ बनाता है। बालकांड से उत्तरकांड तक, वाल्मीकि ने वनों को आश्रम, नदियों को जीवनदायिनी और पर्वतों को शरणस्थली के रूप में चित्रित किया। अयोध्याकांड में राम का वनवास प्रारंभ होता है, जहां चित्रकूट पर्वत का वर्णन प्रकृति की समृद्धि दर्शाता है। जल संरक्षण पर जोर देते हुए आदिकवि ने कहते है, प्रकृति के तत्व एक-दूसरे से जुड़े हैं, और उनकी शुद्धता जीवन का आधार है। चित्रकूट में राम-लक्ष्मण-सीता का आगमन प्रकृति के स्वागत का प्रतीक है, जहां वृक्ष फल प्रदान करते हैं और नदियां पवित्र जल। तद्यथा-

"वदनेनेव रुचिरं हृदयं हृदयं यथा।
जलेनेव जलं शुद्धं जलं चन्द्रमसा यथा॥"
(वा. रा. अयोध्याकांड- 2.5)

अरण्यकांड में पंचवटी का वर्णन वनों की जैव विविधता को उजागर करता है। यहां सूर्यवंशी राम वनवासी बन जाते हैं और प्रकृति के क्रोर में जीवन यापन करने लगते हैं। इस प्रकार वह प्रकृति और पर्यावरण से सामंजस्य करना सिख जाते है। रामायण में वनों और पर्वतों के विवेचन से वह स्पष्ट होता हैं कि वन न केवल सौंदर्य के उत्पादक हैं, बल्कि जीवन के आधार हैं। पंचवटी में राम का लताओं से सुशोभित पर्णकुटी में समय व्यतित करना मानव-प्रकृति के सह-अस्तित्व को दर्शाती है। तद्यथा-

"वनं यथा रमणीयं तत्र वृक्षाः समृद्धाः स्युः।
पर्वताः च यथा रम्याः तत्र पुष्पाणि च स्युः॥"
(वा. रा. अरण्यकांड- 27.52)

सुंदरकांड में अशोक वाटिका का वर्णन लंका की प्राकृतिक समृद्धि का निर्देश वताता है। वाटिका की विविधता जैसें वृक्ष, जल और पुष्प को दर्शाता है, लेकिन 'चुराकर' शब्द लालच के विरुद्ध चेतावनी देता है, जो पर्यावरण लूट का प्रतीक है। अशोक वाटिका में सीता के निर्वासन की अवधी में प्रकृति उनकी सांत्वना बन जाती है। तद्यथा-

"रम्यं च वनं दृष्ट्वा रम्यं च जलं पिबेत्।
हिमवन्तं च दृष्ट्वा रम्यं च पुष्पं च हरेत्॥"
(वा. रा. सुंदरकांड- 43. 26)

युद्धकांड में रामराज्य की कल्पना प्रकृति संतुलन पर आधारित है। रामराज्य में पर्यावरण आदर्श था—वृक्ष फलदायी, वर्षा संतुलित, वायु शुद्ध। पर्यावरण संतुलन तथा सतत विकास का मार्ग दिखलानेवाला श्लोक है-

"नित्यमूला नित्यफलास्तरवस्तत्र पुष्पिताः।
कामवर्षी च पर्जन्यः सुखस्पर्शौ मरुतः॥"

(वा.रा. युद्धकांड- 128.13)

उत्तरकांड में राम का राज्याभिषेक प्रकृति के उत्सव के साथ होता है, जहां नदियां स्वच्छ और पशु शांतिप्रिय। रामायण पर्यावरण को बहुआयामी दृष्टि से देखता है—जल, वायु, भूमि और जीव। जल प्रदूषण का विरोध स्पष्ट है। शासक की जिम्मेदारी अर्थात् वास्तव में मनुष्यों का पर्यावरण संरक्षण के प्रति सर्वश्रेष्ठ दायित्व हैं। रामायण में नदियां जैसे सरयू पवित्र हैं, जो जीवन चक्र बनाए रखती हैं। तद्यथा-

" राजतेक्षः सुगन्धं लभते सुगन्धं च यत्र।
नदीतीरेषु वनेषु च सुगन्धं च सुगन्धं च॥"
(वा. रा. अयोध्याकांड-15.8)

भरत का कथन से वन्य क्षेत्रों में न्यूनतम हस्तक्षेप की नीति दर्शाता है। रामायण में 200 से अधिक वृक्ष प्रजातियों का उल्लेख है, जैसे अशोक, खजूर, जो औषधीय और पारिस्थितिक महत्व रखते हैं। अतः रामायणकालीन समय से ही वनों को संरक्षण करने की शिक्षा मिलती हैं। तद्यथा-

" ते वृक्षानुदकं भूमिमाश्रमेषूटजांस्तथा।
न हिंस्युरिति तेवाहमेक एवागतस्ततः॥"
(वा. रा. अयोध्याकांड- 91.9)

3. निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हैं आज जब केवल भारत ही नहीं, पूरा विश्व पर्यावरणीय संकटों से जूझ रहा है, महर्षि वाल्मीकि की वाणी पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हो उठी है। रामायण हमें केवल मर्यादा पुरुषोत्तम राम की गाथा ही नहीं सुनाती, बल्कि यह भी सिखाती है कि प्रकृति का संरक्षण मनुष्यों के लिए अत्यावश्यक है। बिहार के विश्वविद्यालय जैसे संस्थान जब रामायण से जल संरक्षण के प्रयोग कर रहे हैं, और वाल्मीकि जयंती पर देशभर में वृक्षारोपण कार्यक्रम आयोजित होते हैं, तो यह वाल्मीकि के पर्यावरणीय दर्शन को जीवन्त बना देता है। वाल्मीकि जयंती हमें स्मरण कराती है कि धर्म केवल पूजा-पाठ में नहीं, बल्कि नदियों को स्वच्छ रखने, वनों को संजोने और जीव-जंतुओं की रक्षा करने में भी निहित है। प्रकृति प्रेम ही सच्चा धर्म है और यह संदेश आज भी उतना ही उपयोगी है जितना सहस्रों वर्ष पहले था। महर्षि वाल्मीकि की यह पुकार हमें जागरूकता का संचार करती है कि यदि हम प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करें, तो न केवल समाज, बल्कि समूची पृथ्वी अधिक सुरक्षित, सुंदर और संतुलित हो सकती है।

4. संदर्भ- ग्रंथ- सूची

1. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, (प्रथम एवं द्वितीय खंड), गीताप्रेस, गोरखपुर (सं०2064) ISBN 81-293-0016-8
2. उत्तररामचरितम्, व्या. डॉ. रामअवध पांडे, 2012, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी ISBN: 9788171248384
3. वर्मा, सुधा, आग्नेय एशिया में रामकथा, 1982, सोमा प्रकाशन मूल यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया से
4. शील, वेनीमाधव, कृत्तिवासी रामायण, 2020,
5. गोस्वामी, तुलसीदास, श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस, गौरखपुर, 2022
6. कुमार, मुकेश, रामायण सहस्र, 2024, पूजा प्रकाशन
7. दास, तुलसी, सुन्दरकाण्ड, 2023, गीताप्रेस, गौरखपुर,
8. कुमार, आनन्द, वाल्मीकिरामायण, Rajpal and Sons Publisher
9. काणे, पि. वि., संस्कृतकाव्यशात्रका इतिहास, मोतिलाल वेनारसी दास,
10. कीथ, ए. वि., संस्कृत साहित्य का इतिहस, मोतिलाल वेनारसी दास
11. Vaidya, C.V., History of Sanskrit Literature, 2011, Parimal Publications
12. Satsangi, Aditya, GLOBAL FOOTPRINTS OF Ramayan
13. Sawan, The Great Indian Epic RAMAYANA, मनोज प्रकाशन, 2022
14. Haryomo, Dr Timbhul; The Global Encyclopedia Ramayana, Ayodha Research Centre,

Dharma in the Digital Age: Integrating the Values and Worldview of the Ramayana into building Devalay, a Culture-Centric Social Platform

Abhinav Pandey
PMG Engineering Private Limited
(abhinav.pandey@pmg.engineering)

The Ramayana—one of the most influential Itihāsas of India—has shaped political thought, leadership models, social order, ethical decision making, and cultural life across South and Southeast Asia for millennia. In a rapidly evolving digital age, however, individuals and communities increasingly rely on globalized, algorithm-driven platforms that often dilute cultural identity, weaken intergenerational transmission of values, and reward superficial rather than meaningful content. This paper explores how the timeless value systems of the Ramayana can guide the design of modern digital ecosystems. Using Devalay—a new-age social media and cultural-engagement platform—as the primary case study, the paper demonstrates how Ramayana-based principles such as dharma-centric leadership, collective decision making, ethical commerce, community-first communication, cultural sensitivity, and intrinsic motivation can translate into product design, content guidelines, community rules, and digital well-being features. Drawing from Ramayana scholarship, prior management research, and comparative cultural frameworks, this paper argues that ancient Indian wisdom offers a robust and timeless blueprint for building ethical, culturally rooted, community-positive digital platforms suited for 21st-century India and its global diaspora.

Keywords: Ramayana, Indian Ethos, Digital Culture, Devalay, Dharma, Leadership, Community Design, Cultural Technology, Social Media Ethics, Digital Well-Being.

1. Introduction

1.1 Background and Motivation

Digital platforms have become central to contemporary social life, shaping identity, communication, and cultural engagement. However, extensive research points to their adverse psychological effects, including anxiety, social comparison, FOMO, and reduced subjective well-being (Keles et al., 2020; Beyens et al., 2020). Indian adolescents and young adults, in particular, report elevated social pressure, sleep disturbances, and emotional fatigue associated with algorithm-driven digital engagement (Gupta & Sharma, 2021).

Beyond individual mental health, scholars criticize mainstream platforms for promoting superficial interactions, performative self-presentation, and polarized discourse, often driven by attention-maximizing algorithms (Bucher, 2018; Vaidhyanathan, 2018). Their predominantly Western cultural framing further distances Indian users from the civilizational continuity, multigenerational bonds, and plural traditions characteristic of Indian society.

Parallel to these concerns, there has been renewed academic interest in Indian management thought and the relevance of classical texts—including the *Ramayana*, *Mahabharata*, *Bhagavad Gita*, and *Arthashastra*—for contemporary leadership and governance (Muniapan, 2010; Sharma, 2003). The *Ramayana* in particular has been widely studied for its insights on ethical governance, collective decision-making, people management, and dharmic conduct (Muniapan & Satpathy, 2010).

This paper brings these discourses together. It argues that the *Ramayana* not only informs leadership development but also offers a normative framework for designing digital platforms that prioritize authenticity, collective welfare, and cultural rootedness.

1.2 Ramayana and Management: Brief Review of Prior Work

Existing scholarship predominantly applies Ramayana-based insights to organizational leadership, ethics, and managerial effectiveness. Hermeneutic analyses emphasize Rama's virtues—ethical clarity, stakeholder consultation, compassion, and principled governance—as models for contemporary managers (Muniapan & Satpathy, 2010; Pandey & Wright, 2010). Expanding this stream, researchers examine leadership styles, cross-cultural ethics, motivation, team building, and corporate responsibility through the lens of Indian ethos (Sharma, 2003; Shah & Bhaskar, 2008; Srivastava et al., 2022).

However, two gaps remain.

1. Most studies apply Ramayana principles to traditional corporate or public-sector contexts, not digital or platform-based ecosystems.
2. There is limited systematic work linking Ramayana-derived ethical and governance principles to the design of technology-mediated communities, especially social media architectures.

This paper addresses these gaps by proposing a conceptual framework for applying Ramayana-based principles to digital platform design, governance, and community life.

1.3 Problem Statement

Contemporary social media platforms are structured around attention-maximizing and advertising-driven models that often undermine user well-being. Studies show that such architectures intensify comparison-based anxiety and compulsive usage patterns, particularly among younger users (Beyens et al., 2020), while algorithmic incentives favor emotionally charged or polarizing content at the expense of constructive dialogue (Tufekci, 2015).

These design logics are especially misaligned with Indian cultural contexts, where vernacular expression, indigenous knowledge, devotional content, and non-urban voices are frequently marginalized. As data and cultural influence increasingly consolidate within foreign-owned digital systems (Vaidhyanathan, 2018), Indian users who wish to remain digitally engaged while preserving rootedness face a tension between participation and cultural authenticity.

Against this backdrop, the Ramayana—especially the ideal of Ram Rajya—offers an alternative vision of ethical governance, harmonious communication, and welfare-oriented leadership. This paper therefore examines how principles derived from the Ramayana can be translated into design and governance models for a contemporary social media platform aligned with Indian values and collective well-being.

1.4 Purpose, Objectives and Research Questions

The purpose of this study is to formulate a Ramayana-based conceptual framework for value-centric digital platforms and to illustrate its applicability through Devalay, a platform dedicated to Indian cultural and civilizational engagement. This involves identifying Ramayana-derived principles relevant to governance, communication, community norms, and ethical value exchange; developing these into a unified "Digital Ram Rajya" model; and demonstrating how such principles can be practically embedded in platform design. The study also considers the implications of this framework for Indian management thought and digital governance.

These aims lead to four research questions

RQ1: Which Ramayana-derived principles are most suited to addressing contemporary social media challenges such as toxicity, superficiality, exclusion, and exploitation?
RQ2: How can these principles be synthesized into a coherent design and governance framework for digital platforms?
RQ3: In what ways does Devalay operationalize this framework through its features, community standards, and mission?
RQ4: What theoretical and practical insights arise when the Ramayana is treated not merely as a leadership text but as a design lens for digital ecosystems?

The remainder of the paper is organized as follows. Section 2 introduces the Ramayana as a civilizational text and identifies conceptual themes relevant to digital design, Section 3 develops the "Digital Ram Rajya" framework grounded in four pillars—Dharma, Samvāda, Sangha and Sevā. Section 4 presents Devalay as a case study of a value-centric platform. Section 5 maps Devalay's features to the proposed framework. Section 6 discusses theoretical and practical implications. Section 7 concludes.

2. Ramayana as a Source of Civilizational and Managerial Wisdom

2.1 The Ramayana as a Civilizational Text

The *Ramayana*, attributed to Maharishi Vālmīki, is not merely an epic but a foundational civilizational text that has shaped Indian moral imagination, social norms and political ideals for over two millennia. Its influence permeates family life, ethical frameworks, performing arts, temple practices and regional cultural forms. The epic's transnational diffusion—visible in traditions such as the *Ramakein* (Thailand), *Serat Rama* (Indonesia) and *Hikayat Seri Rama* (Malaysia)—attests to its enduring civilizational reach (Rosen, 2002).

Unlike Western epics that foreground individual heroism, the *Ramayana* emphasizes *dharma*, social harmony and collective welfare. Its depiction of *Ram Rajya* embodies an archetype of just and ethical governance, making the text a long-standing normative reference for thinkers, administrators and reformers concerned with moral and civic life.

2.2 Ramayana and Indian Management Thought

Contemporary scholarship increasingly recognizes the *Ramayana* as a reservoir of managerial and leadership insights grounded in Indian ethos. Muniapan (2010) and Muniapan & Satpathy (2010) argue that the epic presents a holistic leadership paradigm integrating ethical conduct, emotional maturity, strategic foresight and compassion. Chauhan (2020) identifies Rama as an exemplar of transformational leadership, characterized by integrity, self-discipline and collective decision-making.

Indian management theorists have contrasted these principles with Western managerial models, highlighting the Ramayana's emphasis on duty, humility and social responsibility over competitiveness or short-term gains (Sharma, 2003; Balakrishnan & Sivakumaran, 2013). Such literature offers culturally resonant guidance for Indian organizations balancing globalization with indigenous value systems (Srivastava et al., 2022).

Despite its richness, applications of the *Ramayana* remain concentrated in corporate or administrative contexts, leaving unexplored opportunities for domains such as digital platforms and virtual communities—spaces that increasingly shape modern life.

2.3 Leadership Virtues and Ethical Governance in the Ramayana

Lord Rama, revered as *Maryādā Purushottama*, represents the ideal of principled leadership. Key attributes highlighted in management literature include:

- **Equanimity and Emotional Regulation**: Rama's dignified acceptance of exile and composure during adversity demonstrate emotional stability essential for ethical leadership (Ayodhya Kāṇḍa, Ch. 19; Muniapan, 2010).
- **Collective and Consultative Decision-Making**: Rama's deliberations with ministers, sages and allies—welcoming even dissent—reflect an inclusive governance style (Ayodhya Kāṇḍa 100:16–18).
- **Commitment to Dharma**: His refusal to compromise ethical standards, even under pressure, positions him as a model of value-driven leadership (Pandey & Wright, 2010).
- **Compassionate Authority**: His empathetic relationships with citizens and allies align with contemporary theories of authentic, servant and ethical leadership.

These virtues, consistently upheld across episodes of the epic, offer a coherent framework for ethical governance—one that can extend beyond organizational settings to digital ecosystems.

2.4 Ram Rajya as a Governance Archetype

Ram Rajya symbolizes an ideal socio-political order built on justice, welfare, harmony and adherence to *dharma*. Scholars recognize it as a comprehensive model of ethical governance and public administration (Sharma, 2003; Muniapan & Dass, 2008). Its core features include:

- **Justice and Fairness**: Governance free from corruption and partiality.
- **Welfare Orientation**: Protection of vulnerable populations and promotion of collective well-being.
- **Social Harmony**: Minimizing conflict and nurturing unity across diverse groups.
- **Moral Order**: Ethical norms guiding personal and collective conduct.

While widely discussed in political and administrative contexts, its implications for digital governance—designing online spaces that cultivate safety, dignity and welfare—remain underexplored.

2.5 Themes Relevant to Modern Digital Ecosystems

Despite being an ancient text, the *Ramayana* offers thematic insights that align closely with the challenges of contemporary digital environments:

1. **Dharma (Ethical Conduct)**

The epic's emphasis on truth, responsibility and moral restraint can inform content integrity, misinformation policies and user conduct standards.

2. **Samvāda (Deliberative and Respectful Dialogue)**

Rama's consultative approach contrasts sharply with the adversarial and polarized discourse prevalent on modern platforms (Bucher, 2018).

3. **Sangha (Community and Social Cohesion)**

The narrative's inclusive alliances—with vanaras, rishis and forest communities—provide archetypes for digital inclusion, belonging and diverse representation.

4. **Sevā (Service and Collective Value Creation)**

The orientation toward service and collective welfare supports design principles for platforms that empower artisans, temples and cultural practitioners rather than extract value from them.

Collectively, these four themes—Dharma, Samvāda, Sangha and Sevā—constitute the conceptual building blocks of the "Digital Ram Rajya" framework proposed in Section 3.

2.6 Need for a Ramayana-Based Lens for Digital Platform Design

Commercial digital platforms, structured around attention-maximization and algorithmic amplification, struggle to support cultural continuity, vulnerable communities or meaningful dialogue (Vaidhyanathan, 2018; Tufekci, 2015). Their reactive and profit-oriented governance models often fail to promote ethical behavior, civic responsibility or psychological well-being.

For Indian users, this gap is particularly salient: digital participation increasingly requires navigating ecosystems misaligned with civilizational values of harmony, humility and service. A Ramayana-based design lens offers:

- A value-centric alternative to attention-driven algorithms.
- A culturally grounded framework for digital community and communication.
- A holistic approach to expression, belonging and well-being.
- A dharma-aligned governance model emphasizing fairness, safety and collective welfare.

Such an approach can help reimagine the digital sphere as a space that strengthens, rather than erodes, cultural and communal life.

3. Digital Ram Rajya: A Conceptual Framework for Value-Centric Social Platforms

3.1 Rethinking Digital Platforms through an Indian Civilizational Lens

Mainstream social platforms are built upon design logics—virality, algorithmic amplification, attention maximization—that prioritize commercial outcomes over user well-being (Vaidhyanathan, 2018; Bucher, 2018). These incentive structures generate polarization, misinformation, superficial engagement and identity commodification. For Indic cultural communities—devotees, artisans, spiritual practitioners, temple networks—such platforms often fail to provide dignity, contextual sensitivity or cultural resonance.

Drawing from the ethical and governance ideals of the *Ramayana*, this paper proposes the **Digital Ram Rajya Framework**: a value-centric model for designing online ecosystems rooted in *dharma*, harmony and collective welfare. The framework translates civilizational principles into actionable design norms for community standards, content integrity and platform governance.

3.2 Foundations of the Digital Ram Rajya Framework

The Digital Ram Rajya Framework arises from four core concepts distilled from the Ramayana—dharma, samvāda, sangha, and sevā—which together articulate an ethic of governance, communication, community life, and service-oriented contribution. These principles, deeply embedded in the epic's narrative logic, offer a civilizational vocabulary for reimagining digital platforms in ways that foreground cultural dignity, respectful interaction, and meaningful participation.

3.3 Pillars of the Digital Ram Rajya Framework

Dharma forms the ethical backbone of the framework, reflecting the Ramayana's insistence that leadership be transparent, fair, and oriented toward collective welfare. Applied to digital environments, dharma motivates governance models grounded in moral clarity: platforms are expected to uphold cultural dignity, safeguard vulnerable groups, maintain truthfulness in information flows, and ensure moderation processes that are transparent rather than arbitrary. Devalay adopts this approach through its firm boundaries against cultural misuse, disrespect, and harmful or exploitative content, illustrating how dharma can translate into clear community norms.

Samvāda represents the Ramayana's commitment to respectful, deliberative communication. Rama's consultative style—seen in his interactions with ministers, allies, and even dissenters—emphasizes humility, listening, and reflective dialogue. When applied to digital design, this principle encourages environments where calm expression replaces confrontational debate, culturally respectful language is normalized, and private communication is governed by consent, dignity, and restraint. Devalay's discourse culture, shaped by courteous greetings, reflective conversation, and strict DM etiquette, aligns closely with the samvāda ideal.

Sangha refers to the construction of inclusive, harmonious community. The Ramayana's narrative celebrates alliances that cross caste, linguistic, regional, and even species boundaries, projecting a vision of social cohesion that prioritizes shared purpose over individual assertion. This spirit translates digitally into design choices that elevate meaningful contributions rather than sensationalism, cultivate diverse cultural expressions, and actively prevent sectarian superiority or exclusion. Devalay's "Community Before Algorithm" ethos exemplifies this sangha-centric approach by structuring visibility around value and inclusivity rather than virality.

Finally, sevā infuses the framework with a service-oriented ethos, capturing the humility and devotion exemplified by characters such as Hanuman, Lakshmana, and Rama himself. In digital terms, sevā promotes content that enriches rather than distracts, commerce that strengthens trust rather than exploits faith, and creator cultures that prioritize teaching, storytelling, and cultural preservation over attention-seeking behavior. Devalay's marketplace norms, which encourage ethical selling and value-rich contributions, reflect this orientation toward service.

Underlying all four principles is a fifth integrative value: paramparā, or cultural continuity. The Ramayana places profound emphasis on honoring teachers, sages, lineages, and sacred knowledge, treating cultural inheritance as something to be protected rather than commodified. Digitally, this translates into strong attribution practices, respect for sacred imagery, accuracy in scriptural references, and safeguards against plagiarism or trivialization. Devalay's stringent cultural integrity policies embody this commitment, ensuring that heritage is transmitted responsibly in online spaces.

Together, these five interwoven principles—dharma, samvāda, sangha, sevā, and paramparā—form a cohesive framework for designing digital platforms grounded in civilizational values. Rather than treating platform norms as technical artifacts, the Digital Ram Rajya model positions them as ethical expressions of a worldview, demonstrating how ancient wisdom can meaningfully guide contemporary technological ecosystems.

3.4 Mapping Ramayana Themes to Platform Design Principles

Ramayana Theme	Leadership / Value Expression	Design Principle in Devalay
Dharma	Ethical governance, righteous conduct	Safety rules, anti-harm norms, clear moderation
Samvāda	Consultation, respectful dialogue	Comment/DM etiquette, tone recommendations
Sangha	Unity, belonging, social harmony	Community-first visibility, diversity of traditions
Sevā	Service, humility, contribution	Ethical marketplace, value-based content
Paramparā (Cultural Respect)	Honor for lineage and knowledge	Attribution policies, protection of sacred symbols

This mapping demonstrates that Devalay's design is not merely functional but value-derived, grounded in a civilizational ethos.

3.5 Scholarly Context and Contribution

Existing scholarship has examined the Ramayana primarily as a source of insights into leadership, ethics, and organizational behavior (Muniapan, 2010; Chauhan, 2020; Sharma, 2003; Pandey & Wright, 2010). However, this body of literature has not yet extended Ramayana-based principles into the realm of digital platform design or algorithmic governance.

The present study fills this gap by translating civilizational ethics into a structured framework for digital ecosystems, thus advancing Ramayana studies beyond traditional management contexts. By articulating the Digital Ram Rajya model and demonstrating its application through Devalay, the paper offers a substantive example of how ancient normative systems can inform contemporary technological infrastructures.

In doing so, it provides a culturally grounded alternative to dominant Western paradigms of digital governance, which often center on attention-maximizing architectures and market-driven logics (Gillespie, 2018; Tufekci, 2015). This contribution expands both Indian management thought and the emerging literature on ethical, culturally situated platform design.

3.6 Summary of the Framework

The Digital Ram Rajya Framework synthesizes five interrelated principles—dharma, samvāda, sangha, sevā, and paramparā—as a foundational ethic for designing culture-centric digital platforms. These values collectively emphasize ethical governance, respectful communication, community-first design, service-oriented contribution, and cultural stewardship. When integrated into platform architecture, they promote online environments that prioritize safety, meaning, and authenticity over virality or performative engagement. Taken together, these principles illustrate how the timeless ideals of Ram Rajya can be reinterpreted for the digital age, offering a coherent model for creating online spaces that nurture harmony and cultural continuity.

4. Application of the Digital Ram Rajya Framework to Devalay: A Case Analysis

While the Digital Ram Rajya Framework is conceptual, its practical relevance becomes clear when mapped to an existing, functioning platform. Devalay is a deployed social ecosystem available as a web application and as mobile apps on both Android and iOS. At the time of writing, it hosts over five hundred active users, more than one thousand temples, over one hundred deities and festivals, and several thousand user-generated posts. The platform is explicitly designed around Indian civilizational content—temples, festivals, gods, events, skills and services—rather than generic social updates, and it embeds Ramayana-inspired values into its architecture, moderation workflow, and community experience.

A defining feature of Devalay is that any registered user can initiate the creation of a temple, deity, festival or event entry. These submissions follow a rich structured schema and are then reviewed by administrators before being approved and made publicly visible. This review process is supported by an internal dashboard through which moderators manage incoming submissions, edits, service orders and jobs. As a result, Devalay combines user-led content creation with value-based gatekeeping, operationalizing the Ramayana's ideal of participatory, yet dharma-anchored, governance.

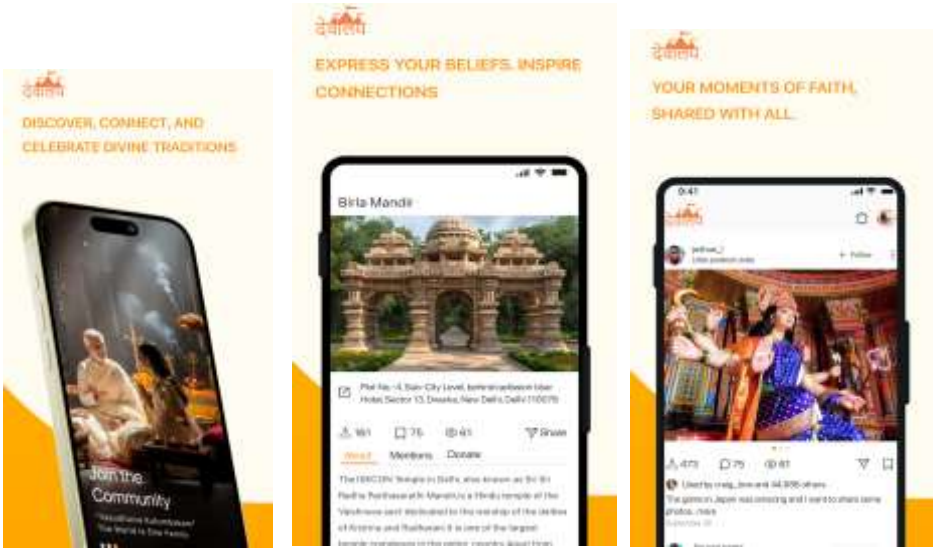

Picture 1 *Devalay App Interface and Pages*

4.1 Dharma-Aligned Governance in Practice

Devalay's governance model reflects the primacy of dharma in the Ramayana. Community participation is encouraged, but bounded by clear ethical and cultural norms. The community guidelines prohibit explicit, demeaning or sensational material, mockery of deities or traditions, and misleading claims, and they emphasize truthful, respectful and culturally sensitive expression. This is reinforced technically through the mandatory review of all newly created temples, festivals, events and deities, as well as through the ability of administrators to approve, save in draft, or reject submissions with reasons.

The structure of a typical temple record illustrates how dharma-oriented governance is instantiated in data design. For example, the entry for "Baba Balaknath Mandir" in Ghaziabad contains a formal title and subtitle, a narrative description of the temple's role as a nearly fifty-year-old spiritual and social hub, and distinct fields for legend, architecture, etymology and temple history. The legend explains the local faith in Baba Balaknath as a wish-fulfilling deity; the architecture field documents the two-storey layout, the use of orange and white colors, and materials such as white marble and tiles; the etymology field clarifies the straightforward devotional naming; and the history field situates the temple's emergence in the 1980s as a community space. Further metadata, such as address, nearest airport and railway station, landmarks and a Google Maps link, ensures geographic accuracy. By requiring such structured, context-rich and non-sensational information, Devalay steers content away from click-driven narratives and towards truthful, dharmic documentation.

Dharma-aligned governance also extends to economic flows. Donations on Devalay are routed directly to the temple or its governing trust rather than being interposed by the platform as an intermediary beneficiary. This reinforces the Ramayana-inspired ethos of transparent stewardship and minimizes the risk of financial exploitation in the name of faith.

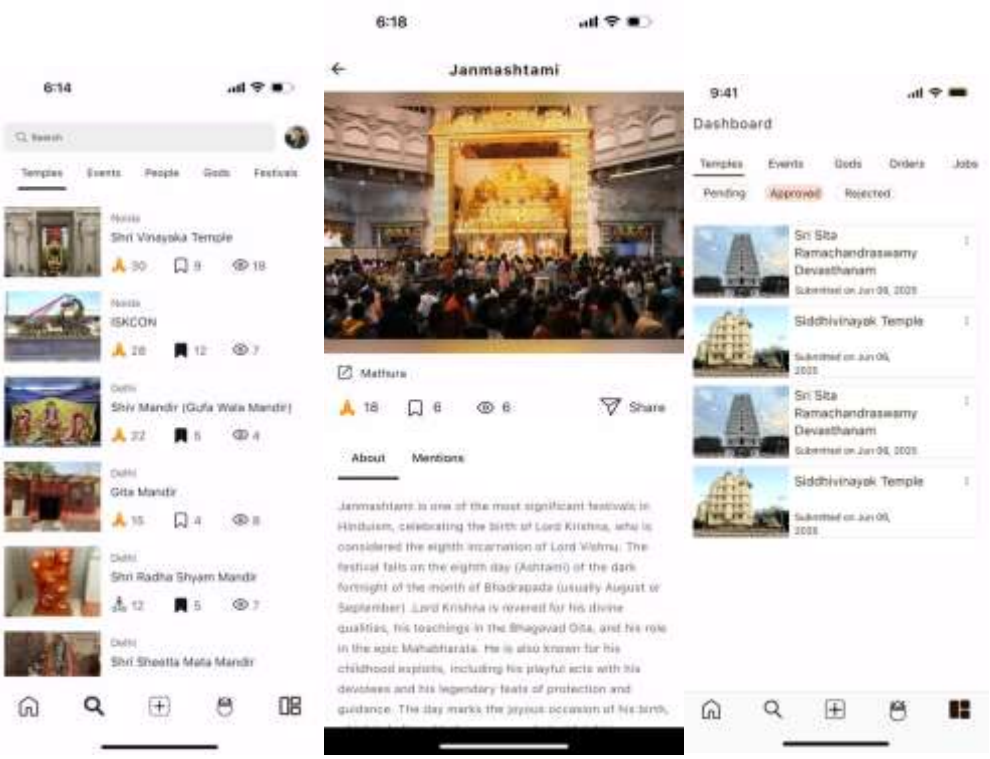

Picture 2 *Devalay App Interface and Pages*

4.2 Samvāda and Sangha: Communication, Community and Content Linking

The social layer of Devalay is designed to embody samvāda and sangha simultaneously. Users can follow one another, browse a feed of posts, and engage through likes, saves, shares and comments; however, interaction is framed as respectful dialogue rather than adversarial debate. Comment norms, onboarding texts and interface cues encourage civil greetings, humility in tone and question-oriented engagement, echoing Rama's consultative style with allies and counsel with sages. Direct messages are treated as sensitive spaces: the platform advocates consent-based messaging, prohibits harassing or flirtatious communication, and discourages the circulation of private exchanges without permission. This creates Lakshmana Rekha–like boundaries around personal dignity and psychological safety.

Sangha, or community, is fostered by a tight integration between content objects. Every temple, deity, festival or event serves as a semantic hub: posts that reference a particular temple, such as Baba Balaknath Mandir, or a deity, such as Tirupati Balaji, are associated with those entities and become discoverable through their pages. A user exploring a Janmashtami event in Mathura, for instance, encounters not only a textual description of its significance and instructions on how to celebrate, but also related posts, images and user contributions connected to that festival. In this way, Devalay constructs a networked map of devotion and culture, where individuals, temples, gods and festivals are interlinked rather than isolated.

The event and festival models illustrate how this network operates. The Janmashtami event record documents the spiritual meaning of Krishna's birth, the timing on the eighth day of Bhadrapada, celebratory practices such as fasting, midnight ārtī, Dahi Handi and charitable acts, as well as recommended "dos" and "don'ts" to preserve the devotional essence of the day. Similarly, the Ganesh Chaturthi festival entry records the tithi, duration, core legend of Ganesha's creation and beheading, spiritual significance in terms of new beginnings and removal of obstacles, and key rituals from installation to visarjan. These entries are then linked to associated deities (e.g., Shree Ganesha) and to posts and users engaging with the festival, thereby cultivating a digital sangha around shared practices and narratives.

4.3 Sevā and Ethical Commerce: Skills, Services and the Emerging Marketplace

Devalay's service layer is explicitly framed as sevā rather than mere commerce. Users can declare their skills across a detailed taxonomy that maps the contemporary ecosystem of spiritual and cultural work. The skills catalogue includes priests and ritual experts such as pandits, archakas, karmakāṇḍi pandits and tantra specialists; gurus, swamis and sanyasis; astrologers and vastu consultants; temple staff involved in daily operations, administration and volunteer services; educators such as śāstra ācāryas, vedapāṭhaśālā teachers and kathakars; performers including bhajan singers, kirtankars, classical dancers, and Ramleela actors; digital creators such as devotional bloggers and spiritual vloggers; traditional healers in Ayurveda, Siddha, yoga and meditation; and service providers such as pūjā samagri vendors, murti makers, temple architects, mandap decorators, sound and lighting providers, yatra organizers and tīrtha guides.

Devotees or communities can post service requests—such as organizing a festival, booking a priest for a ritual, arranging a Ramayana katha, or commissioning devotional art—which skilled users can then accept as jobs. These interactions are managed through a dashboard where both orders and assignments are tracked. The emphasis throughout is on clarity, reliability and fairness rather than aggressive selling. In line with the sevā pillar, the platform discourages exploitative practices such as miracle claims, multi-level marketing, manipulative pricing or spam-like promotion, and instead encourages honest description of services, transparent expectations and a spirit of service to the community.

The future roadmap further deepens this sevā orientation. Upcoming features include the ability for users to upload "Creations" such as devotional art, articles, books, paintings, songs and tutorials; to offer courses and e-learning modules; and to sell value-aligned products, all within a framework that foregrounds teaching, sharing and enrichment over pure monetization. In this way, Devalay aspires to host an ecosystem where knowledge, art and service circulate as offerings rather than as mere commodities.

4.4 Paramparā and Cultural Integrity: Temples, Deities and Narrative Depth

Cultural integrity is preserved on Devalay through meticulous attention to paramparā in the design of deity and temple profiles. The Tirupati Balaji entry, for instance, does more than display images. It records alternative names such as Venkateswara, Govinda and Srinivasa; lists associated festivals including Brahmotsavam, Vaikuntha Ekadashi and Rathasaptami; and explains Balaji's symbolism as the preserver of faith in Kali Yuga and a form of Viṣṇu who listens to sincere prayers. Narrative sections recount key legends, such as the divine descent of Venkateswara to Tirumala, his marriage to Padmavati, and the story of borrowing wealth from Kubera to finance the wedding, as well as contemporary practices like hair offerings as acts of surrender. Multiple gallery images of the deity, contributed by devotees, are curated under this profile, maintaining contextual coherence and devotional reverence.

Similarly, the Baba Balaknath Mandir profile preserves the local aarti text in its original script, includes detailed descriptions of its legend and architectural form, and situates it within its community trust governance structure. These choices reflect the Ramayana's emphasis on honoring teachers, lineages and sacred texts: knowledge is treated as something inherited and stewarded, not stripped of context and repackaged for novelty. Planned features such as virtual-reality tours of temples and events aim to extend this paramparā-preserving approach by allowing users to experience the spatial, ritual and aesthetic dimensions of sacred sites in immersive form, which is particularly relevant for diaspora devotees and those with limited mobility.

At the level of interaction, users can like, save and share any temple, deity, festival, event or post, with these engagements anchored back to the underlying cultural entities. This ensures that visibility accrues not only to individual creators but also to the temples, gods and traditions they represent, drawing attention back to the civilizational sources of meaning and not solely to personal brands.

4.5 Devalay as an Operational Model of Digital Ram Rajya

Taken together, these features illustrate how Devalay functions as a live instantiation of the Digital Ram Rajya Framework. Dharma is expressed through its review-based governance, truth-oriented content structures and direct donation flows. Samvāda appears in its emphasis on civil, consent-respecting communication and reflective discourse. Sangha is cultivated through the tight coupling of users, posts, temples, deities, festivals and events into a shared cultural graph, and through feeds that highlight culturally meaningful contributions over generic virality. Sevā is operationalized via the skills and services marketplace, the framing of work as offering, and the planned ecosystem of courses and creations. Paramparā is preserved through structured documentation, narrative depth, scriptural and historical contextualization, and future experiential features such as VR darshan.

Although still modest in scale—with around one hundred users and an expanding corpus of temples, deities, festivals and posts—Devalay already demonstrates that Ramayana-inspired values can be encoded into data models, user journeys and governance workflows. It thus serves not only as a case study but as an evolving laboratory for exploring how Indian civilizational ethics can guide the design of digital platforms that are simultaneously contemporary, participative and rooted in the ideals of Ram Rajya.

5. Discussion and Implications

The application of the Digital Ram Rajya Framework to a live, deployed system like Devalay offers substantial theoretical, managerial and cultural insights. It shows that ethical models derived from the Ramayana, long discussed in leadership and governance scholarship (Muniapan, 2010; Sharma, 2003; Pandey & Wright, 2010), can be translated into concrete data

models, workflows and user journeys within a functioning web and mobile platform. With more than one hundred active users, over one thousand temples, hundreds of deities and festivals, and several thousand posts already created and moderated, Devalay operates not as a conceptual prototype but as a working instantiation of civilizational values in the digital sphere. This makes it a useful case for examining how Indic epistemologies can inform the future of digital governance, community architecture and online well-being.

5.1 Theoretical Implications: Reframing Digital Governance Through Itihāsa

The Ramayana has increasingly been interpreted as a source of managerial and ethical principles beyond its traditional spiritual role (Muniapan, 2010; Rosen, 2002). This study extends that discourse by demonstrating that its concepts can function as design primitives for digital institutions. Through Devalay's structured representations of temples, deities, festivals and events, and its workflows for review, approval and attribution, the framework shows that dharma, samvāda, sangha, sevā and paramparā can be operationalized as mechanisms governing content integrity, community norms, marketplace interactions and knowledge stewardship. In this sense, the Ramayana is repositioned from a narrative of exemplary leadership to a source of computational ethics, capable of shaping schemas, moderation logics and recommendation structures.

This case also challenges the dominant Western paradigm of platform design, oriented around attention extraction, virality and hyper-individualistic metrics. Devalay's design places sacred entities—such as Baba Balaknath Mandir, Tirupati Balaji, Ganesh Chaturthi and Janmashtami—at the center of the information architecture, with users and posts orbiting around them. This temple–deity–festival centric graph, combined with review-based governance and direct donation flows, provides a counter-model grounded in community welfare and ethical restraint. It resonates with emerging scholarship on culturally situated AI and platform design that respects local epistemologies rather than assuming that global platforms must follow a uniform, value-neutral template.

5.2 Managerial and Organizational Implications

From a managerial perspective, Devalay demonstrates how digital communities can be governed through value-centric design rather than through rule enforcement alone. The requirement that every new temple, deity, festival or event entry pass through an administrative review, the insistence on detailed and truthful descriptions, and the prohibition of exploitative or sensational content collectively mirror Rama's ethos of fairness, transparency and moral consistency. Governance is not an afterthought but embedded in the very forms that users fill and the workflows that route content from draft to approval.

The platform's service and skills architecture offers further organizational insight. By allowing users to declare highly specific roles—such as pandit, archaka, bhajan singer, Ramleela actor, Ayurveda healer, yatra organizer or temple architect—and by matching them with service requests posted by other users, Devalay creates a structured marketplace that is explicitly framed as sevā. The dashboard for managing orders and jobs ensures accountability and clarity, while the discouragement of miracle claims, multi-level marketing and spam-like sales mitigates the tendencies of digital marketplaces to drift towards manipulation. This aligns with the Ramayana's focus on svadharma and intrinsic duty: work is positioned as contribution to community rather than as pure monetization. Management literature suggests that communities anchored in shared values exhibit greater psychological safety, lower conflict and more stable engagement (Sharma, 2003; Goel & Singh, 2014); the Devalay model, with its emphasis on trust and cultural alignment, is consistent with those findings.

5.3 Cultural and Civilizational Implications

Culturally, Devalay demonstrates that technology can amplify sacredness instead of trivializing it. The rich profiles for temples and deities—such as the multi-field documentation of Baba Balaknath Mandir's legend, architecture and history, or the Tirupati Balaji entry with its alternative names, associated festivals and narrative depth—illustrate how digital representations can preserve context, reverence and nuance. The platform brings small neighborhood temples and lesser-known shrines into the same digital frame as famous pilgrimage centers, thereby restoring their historical role as local social and spiritual nodes, now extended into the online realm.

Devalay also bridges generational and geographical divides. Youth can discover festivals, rituals and local temples accompanied by explanations of how to celebrate and why they matter; elders and temple staff can participate by contributing narratives, aartis and imagery without needing to master generic social media cultures; and Non-Resident Indians gain structured access to temples, events and traditions in their home regions. Planned features such as virtual-reality tours of temples and events further extend this bridging function, offering immersive encounters with sacred spaces to those who are geographically distant or physically unable to travel. In addition, the platform's strong emphasis on attribution, lineage acknowledgement and protection of artistic integrity helps preserve indigenous knowledge systems—including oral traditions, guru–śiṣya pedagogies and regional artistic practices—within a digital archive. In this respect, Devalay continues the Ramayana's historical role as a carrier of culture across regions, echoing its spread into Southeast Asia (Rosen, 2002).

5.4 Implications for Digital Well-being

The contrast between Devalay's design and that of mainstream social media has direct implications for digital well-being. Where dominant platforms have been associated with anxiety, social comparison, compulsive use and polarization, Devalay's design encourages reflective engagement and non-competitive participation. The centrality of temples, gods and festivals shifts focus from personal display to shared devotion and learning. The ability to like, save and share content is present, but

these interactions are anchored to cultural entities rather than to follower counts and public performance alone. Comment norms and consent-based messaging policies temper the likelihood of harassment and reactive conflicts, fostering an environment more analogous to a temple courtyard or satsang hall than to a shouting match.

By foregrounding narrative explanations—such as detailed "how to celebrate" guidance for Janmashtami or the spiritual significance of Ganesh Chaturthi—over short, attention-grabbing snippets, the platform implicitly encourages slower, more deliberate consumption. This can support emotional balance and cultural grounding, making Devalay a potential model for designing social systems that aim at psychological safety and meaning rather than only engagement.

5.5 Policy and Regulatory Implications

At the level of public policy, Devalay illustrates how Indian civilizational values can be concretely embedded into platform rules and workflows. As India develops its digital public infrastructure and explores national AI and platform governance frameworks, the Devalay model suggests that technology policy need not be culturally agnostic. The treatment of sacred imagery, the requirement of contextual accuracy for scripture-related content, and the direct routing of donations to registered trusts all point to regulatory patterns that could inform guidelines for other platforms dealing with religious and cultural material.

The Digital Ram Rajya Framework thus supports the possibility of Indian technology standards that express local values in ways analogous to how the GDPR reflects European commitments to privacy and individual rights. Rather than importing governance templates designed for culturally different environments, policymakers can look to frameworks like this to articulate India-centric norms around cultural protection, platform accountability and ethical monetization.

5.6 Limitations and Scope for Further Research

Despite its strengths, the framework and the Devalay case have limitations that merit careful consideration. One challenge concerns scalability: as user numbers grow and the diversity of traditions, regions and interpretations of dharma expands, value-based moderation will become more complex, and the risk of disagreement over what counts as "dharmic" content will increase. Another limitation lies in cultural specificity. The Ramayana-based lens is deeply rooted in Indian tradition; its direct applicability to multi-faith, global or secular platforms would require thoughtful adaptation, hybrid frameworks or dialogic integration with other normative systems.

There are also technical challenges in translating value-driven principles into algorithmic moderation and recommendation at scale. Context-dependent interpretation, linguistic diversity across Indian languages, and the risk of encoding bias all complicate attempts to automate dharma-based governance. Finally, rigorous empirical validation is still pending. Future research could undertake ethnographic studies of Devalay users to examine lived experiences of safety, meaning and belonging; computational analyses of content health and conversational tone; comparative studies with mainstream platforms on measures of well-being and cultural engagement; and longitudinal assessments of how such a platform influences temple visibility, artisan livelihoods and the transmission of ritual knowledge.

5.7 Summary

In summary, Devalay demonstrates that the ethical and governance principles articulated in the Ramayana can be implemented within a modern, multi-featured digital platform that is already operating at scale sufficient to reveal real-world dynamics. By centering temples, deities, festivals and skills, by structuring content and services as acts of sevā rather than pure commerce, and by preserving paramparā through careful documentation and attribution, the platform offers a concrete template for reimagining digital ecosystems through an Indic civilizational lens. Its implications extend beyond a single application to broader debates on digital well-being, cultural preservation and value-driven technological innovation. As a working example of Digital Ram Rajya, Devalay suggests that the future of digital civilization can indeed be shaped not only by code and capital, but also by the timeless ethical and philosophical resources of India's ancient heritage.

6. Conclusion

This study examined how the Ramayana—an enduring repository of ethical, cultural and administrative wisdom—can guide the design of contemporary digital ecosystems. By articulating the Digital Ram Rajya Framework, the paper demonstrated that foundational principles from the epic—dharma, samvāda, sangha, sevā and paramparā—can be translated into actionable models for platform governance, community behavior, content architecture and digital stewardship. The application of this framework to Devalay, a functioning platform with active users and a growing corpus of temples, deities, festivals and cultural posts, showed how ancient civilizational values can be operationalized within modern technological systems.

Devalay's architecture embodies these principles at multiple levels. Its governance workflows and review mechanisms reflect the Ramayana's emphasis on fairness, accuracy and moral restraint. Its communication norms—grounded in consent, decorum and respectful address—translate the epic's dialogic ethos into everyday digital interaction. The community-first design, with sacred entities at the center of the data model and users orbiting around them, mirrors the cooperative spirit of Ram Rajya. The sevā-oriented content and skills ecosystem, which encourages meaningful contribution rather than performative visibility, provides an alternative to the extractive logic of mainstream social media. Through attribution requirements, lineage acknowledgement and careful preservation of cultural narratives, Devalay also demonstrates how digital spaces can serve as vessels for safeguarding heritage knowledge rather than sites of its dilution.

At the same time, the framework's limitations warrant further attention. Scaling value-driven governance across diverse interpretations of dharma, ensuring applicability beyond the Indian cultural milieu and operationalizing ethical nuance within automated moderation systems present substantive challenges. Future research should include empirical studies of user experience, computational analyses of content health, and comparative evaluations of well-being outcomes across different platform architectures. Longitudinal work could further illuminate how culturally anchored digital ecosystems influence identity, participation and intergenerational knowledge transmission.

Despite these constraints, the central argument of this study remains clear: the Ramayana offers not only moral inspiration but a viable design philosophy for digital societies. Drawing from such civilizational reservoirs is not an exercise in nostalgia but a strategic response to contemporary concerns about polarization, misinformation and cultural erosion. The ethical ideals of Ram Rajya—justice, compassion, responsibility and social harmony—provide a powerful normative foundation for reimagining digital life. Viewed in this light, Devalay is both a concrete case and a broader proposition: that the digital future can be more humane, cohesive and culturally grounded when informed by the timeless values of India's intellectual and spiritual heritage.

7. References

1. Balakrishnan Muniapan, B., & Dass, M. (2009). Corporate Social Responsibility from the Bhagavad-Gita: Recognizing the Dharma of Business. *Journal of Human Values*, 15(2).
2. Balakrishnan Muniapan, B., & Satpathy, B. (2010). Leadership Lessons from the Ramayana for Modern Management. *International Journal of Indian Culture and Business Management*, 3(6).
3. Chauhan, S. (2020). Transformational Leadership Perspectives from Indian Epics: A Study of Rama's Leadership Virtues. *Journal of Management and Spirituality*, 12(1).
4. Goel, A., & Singh, S. S. (2014). Recruiting Professionals with the Mindset of Hanuman. *Journal of Economics, Business and Management*, 2(3).
5. Hofstede, G. (1983). National Cultures in Four Dimensions: A Research-Based Theory of Cultural Differences Among Nations. *International Studies of Management & Organization*, 13(1–2).
6. Muniapan, B. (2010). Ancient Indian Wisdom for Managers: The Relevance of Valmiki's Ramayana in Developing Managerial Effectiveness. *International Journal of Indian Culture and Business Management*, 3(6).
7. Pandey, S. K., & Wright, B. (2010). Connecting the Dots in Public Management: Political Environment, Organizational Goal Ambiguity, and the Public Manager's Role Clarity. *Journal of Public Administration Research and Theory*, 20(4).
8. Prabhupada, A. C. Bhaktivedanta Swami. (1998). *Bhagavad-Gita As It Is* (2nd ed.). Bhaktivedanta Book Trust.
9. Rosen, S. (2002). *The Hidden Glory of India*. Bhaktivedanta Book Trust.
10. Shah, S., & Bhaskar, A. U. (2008). Corporate Stakeholder Management: Western and Indian Perspectives—An Overview. *Journal of Human Values*, 14(2).
11. Sharma, S. (2003). Toward a Corporate Veda: Indian Ethos and Corporate Development. Journal of Human Values, 9(1).
12. Shrivastava, S. (2012). Dharma and Karma in Managerial Ethics: An Indian Perspective. *International Journal of Trade and Commerce–IIARTC*, 1(2).
13. Srivastava, P., Agrawal, R., & Dixit, S. (2022). Managerial and Technical Intellects through Lessons from Indian Epics. Journal of Management Research and Review, 9(4).
14. Valmiki. (n.d.). *Śrīmad Vālmīki Rāmāyaṇa* (Critical Edition). Various translations consulted.
15. https://apps.apple.com/in/app/devalay-by-pmg/id6745020898 (App Store)
16. https://play.google.com/store/apps/details?id=com.devalay&hl=en_IN (Play Store)
17. www.devalay.org (under development)

गुणसागर हनुमान

उषा श्रीवास्तव
(drusha236@gmail.com)

हनुमान जी भगवान राम के परम भक्त और संकटमोचन के रूप में जाने जाते हैं। उनकी भक्ति और शक्ति का वर्णन रामायण और अन्य प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। रामायण के माध्यम से हमें हनुमान जी की कई विशेषताओं की जानकारी मिलती हैं जिनमें अटूट भक्ति ,बल और साहस .अपार शक्ति, विनम्रता, बुद्धिमता ,चतुराई , एकनिष्ठता, निस्वार्थ सेवा भाव आदि प्रमुख हैं। हनुमान जी के गुणों से हम सीख सकते हैं कि सच्ची शक्ति और बुद्धिमत्ता भगवान की कृपा से मिलती है, और हमें अपने जीवन में भगवान की इच्छा का पालन करना चाहिए।

1. प्रस्तावना

"जय हनुमान ज्ञान गुन सागर। जय कपीस तिहुं लोक उजागर।।" हनुमान चालीसा की पहली चौपाई हनुमान जी की स्तुति करती हुई उन्हें ज्ञान, बल एवं गुणों का सागर कहती है । साथ ही उन्हें विद्यावान गुणी एवं चतुर कह वंदना भी करती है । हनुमान जी की महानता,बुद्धि,असाधारण गुणों और शक्ति का बखान भी करती है।

"अतुलित बल धामं हेमशैलाभ देहं।
दनुज वन क्रशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।।"

हनुमान जी भगवान राम के परम भक्त हैं, जिन्हें महावीर,बजरंगबली और पवनपुत्र जैसे कई नामों से भी जाना जाता है उन्हें 'अष्ट सिद्धि-नौ निधि के दाता' भी कहा जाता है। माता अंजना और पिता केसरी के अतिरिक्त उन्हें वायु देवता का पुत्र भी माना जाता है। हनुमान जी भगवान राम के सबसे समर्पित और निस्वार्थ सेवकों में सर्वश्रेष्ठ हैं। हनुमान जी अपनी अदम्य शक्ति, साहस और भगवान राम के प्रति अटूट भक्ति के लिए पूजे जाते हैं।

2. विस्तार

सर्वविदित है कि श्री हनुमान गुणों के सागर हैं अतः कुछ मुख्य गुणों की चर्चा करना आप के सम्मुख अवश्य करना चाहूँगी ।

1. **अटूट भक्ति:** वह राम के प्रति पूर्णतः समर्पित थे और उनकी सेवा ही उनका मुख्य उद्देश्य था। वह राम को विष्णु का अवतार मानते थे। राज्याभिषेक के बाद माता सीता ने हनुमान जी को मोतियों का एक बहुमूल्य हार भेंट किया। हनुमान जी ने उसे सहर्ष स्वीकार किया, लेकिन फिर वे एक-एक मोती निकालकर दाँतों से काटने लगे। जब कारण पूछा गया तो उन्होंने बताया कि वे जाँच रहे थे कि क्या मोतियों के अंदर भी "श्री राम" का नाम है क्योंकि जिस वस्तु में श्री राम का नाम नहीं है, वह उनके लिए मूल्यहीन है। तब लक्ष्मण उनसे पूछा कि क्या उनके शरीर में राम का नाम है? तब हनुमान जी ने सीना चीरकर अपनी भक्ति के प्रमाण के रूप में दिखाया कि उनके हृदय में, ही नहीं बल्कि उनके प्रत्येक कोशिका में, भगवान श्री राम और माता सीता की छवि अंकित थी। यह उनकी महानता और भक्ति की पराकाष्ठा का सर्वोच्च उदाहरण एवं अटूट भक्ति का प्रमाण है। हनुमान जी के गुणों से प्रभावित राज्याभिषेक के बाद श्रीराम ने सबको उपहार दिए,पर हनुमान जी को गले से लगा लिया और कहा कि उनके पास हनुमान की भक्ति का कोई मोल नहीं अतः श्री राम ने हनुमान जी को यह वरदान दिया कि जब तक राम कथा पृथ्वी पर प्रचलित रहेगी, तब तक उनके प्राण शरीर में निवास करते रहेंगे, कई मान्यताओं और प्रमाणों के अनुसार, हनुमान जी कलयुग में भी पृथ्वी पर मौजूद हैं और भक्तों के कष्टों को दूर करते हैं।
2. **वीरता और साहस** : उनकी शक्ति, बुद्धिमत्ता एवं वीरता का सबसे बड़ा उदाहरण सीता माता की खोज के लिए समुद्र पार कर कई राक्षसों से मुकाबला कर लंका में घुसकर उन तक पहुंचना,रावण को दरबार में अपनी शक्तियों से चौंकाना, पूंछ से लंका दहन तथा राम और रावण युद्ध में कई योद्धाओं का वध करना प्रमुख हैं । श्री हनुमान हमेशा निडर और साहसी रहे हैं सत्य का समर्थन किया और किसी भी डर से अपने कार्य में पीछे नहीं हटे। रावण के खिलाफ राम के युद्ध में अपनी शक्ति और बुद्धिमत्ता का उपयोग श्री राम को जीत दिलाने के लिए किया। सीता की खोज एवं समय पर संजीवनी बूटी लाना जैसे असंभव कार्यों को संभव करना उनकी वीरता और साहस के परिचायक हैं ।
3. **असीम शक्तियां**: हनुमान की शक्तियाँ इतनी असीम हैं कि पूरी सृष्टि भी उनकी शक्ति का दसवां हिस्सा भी सहन नहीं कर सकती। बाल्यकाल से ही उन्होंने अपनी शक्तियां का प्रदर्शन प्रारंभ कर दिया था । शरारत में अक्सर ऋषियों के ध्यान और पूजा में खलल डालते थे

उन्होंने एक बार एक ऋषि की 12 साल की तपस्या भंग कर दी थी अतः उनकी शरारतों से परेशान होकर, ऋषि अंगिरा और भृगुवंश के ऋषियों ने शाप दिया कि वे अपनी शक्तियों को भूल जाएंगे। पर जब भी कोई उन्हें उनकी शक्तियों की याद दिलाएगा, तब वे शक्तियों को फिर से प्राप्त कर लेंगे। जामवंत ने हनुमान जी को उनकी शक्तियों का स्मरण कराया, जिससे उन्हें अपनी शक्तियां याद आई और वे लंका जा सके।

हनुमान जी की शक्ति का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि जब उन्होंने बाली से युद्ध करने के लिए अपनी आधी शक्ति का एक हिस्सा उसके शरीर में समाहित किया तो बाली को लगा कि वह फट जाएगा। ब्रह्मा ने बाली से कहा कि अगर हनुमान अपनी पूरी शक्ति के साथ युद्ध करते तो बाली तुरंत समाप्त हो जाते। हनुमान की कहानी हमें सिखाती है कि साहस, भक्ति और विनम्रता, सभी

गुण एक साथ मिलकर एक शक्तिशाली व्यक्ति को बना सकते हैं। वह अपनी शक्तियों एवं क्षमताओं का उपयोग आवश्यकतानुसार करते थे, जैसे कि रामायण समुद्र पार करना,अशोक वाटिका में पेड़ पौधों को उखाड़ना ,रावण की सभा में बंधे जाने पर भी वीरतापूर्वक सामना करना, लंका दहन करना एवं संजीवनी बूटी लाना उनके अतुलनीय बल के प्रमाण हैं पर इसके लिए वे कभी श्रेय नहीं लेते थे ।

4. **बुद्धिमत्ता और चतुराई**: जब हनुमान को माता सीता का पता लग गया, तो उन्होंने उन्हें राम का संदेश देने के लिए श्री राम की मुद्रिका दी ताकि माता सीता उन्हें राम दूत के रूप में पहचान सकें। यह उनकी चतुराई और बुद्धिमत्ता का उदाहरण है जो जटिल समस्याओं का समाधान करने में मदद करती है। यह गुण उनके साहस, रणनीति, और भक्ति में भी झलकता है। वे न केवल शक्तिशाली थे, बल्कि उन्होंने कई बार अपनी बुद्धि का उपयोग करके जटिल समस्याओं को हल किया, जैसे कि सुरसा के रूप में बाधा को पार करने के लिए छोटे होकर निकलना, या संजीवनी बूटी लाने के लिए पूरे पहाड़ को उठा लाना। उन्होंने वानर सेना का कुशल नेतृत्व किया और सुग्रीव को राम की मदद के लिए राजी करने में भी चतुराई का परिचय दिया। सूर्यदेव से ज्ञान प्राप्त करते समय, अपनी गति से सूर्य की परिक्रमा करते हुए ज्ञान प्राप्त किया, जो उनकी सीखने की ललक और बुद्धिमत्ता को दर्शाता है।
5. **नम्रता:-** अपनी अद्वितीय क्षमताओं के बावजूद, हनुमान जी नम्र रहते हैं और अपनी शक्तियों का घमंड नहीं करते बल्कि ईश्वर की कृपा मानते हैं। नम्रता ही उन्हें अपार शक्ति के बावजूद अहंकार से दूर रखती है। वह अपनी सभी सफलताओं का श्रेय भगवान राम को देते हैं, एवं स्वयं को हमेशा राम का सेवक मानते हैं। उनकी विनम्रता, समर्पण और निस्वार्थ सेवा में भक्ति का प्रतीक है, जो दूसरों को भी सेवा भाव से प्रेरित करती है। जब वे राम-लक्ष्मण को कंधे पर बिठाकर पर्वत पर ले जा रहे थे, तब भी नम्रता से कहा कि यह मेरा कर्तव्य है।
6. **निस्वार्थता**: हनुमान जी के कार्य सदैव निस्वार्थ प्रेम से प्रेरित होते हैं, जो उनके त्याग और समर्पण को दर्शाते हैं। उनकी निस्वार्थता उनके चरित्र का एक मुख्य स्तंभ है, जो बदले में किसी भी चीज़ की उम्मीद किए बिना भगवान राम एवं माता सीता के प्रति उनके अटूट प्रेम और समर्पण को दर्शाता है। बदले में उन्हे किसी भी सुख-सुविधा या लाभ का कोई स्वार्थ नहीं था। उनकी निस्वार्थता का सबसे बड़ा उदाहरण सीता माता की खोज और उन्हें बचाने के लिए लंका की यात्रा है, जिसके लिए उन्होंने अपनी जान जोखिम में डाली।
7. **निष्ठा और वफादारी**: उनकी वफादारी ने उन्हें असंभव कार्य करने और भगवान राम की हर आज्ञा का पालन करने की शक्ति दी, जो भक्तों के लिए भक्ति का सबसे बड़ा उदाहरण है। जब राम ने

हनुमान को अपना भक्त बताया, तो हनुमान ने कहा कि वे राम के सेवक हैं यह उनकी निष्ठा और वफादारी का प्रमाण है। राम और सीता के प्रति उनकी निष्ठा और वफादारी अडिग है, जो उनकी प्रतिबद्धता और भक्ति का प्रमाण है।

8. **संकट में साहस:** जब रावण के सैनिकों ने हनुमान जी को पकड़ लिया और उनके अपमान के लिए उनकी पूँछ में आग लगा दी तब हनुमान जी ने सिर्फ विभीषण के घर को छोड़कर इसी आग से पूरी लंका नगरी को जलाकर राख कर दिया । लंका दहन रावण के लिए एक चेतावनी थी कि उसके राज्य का विनाश निश्चित है। लंका में आग लगाते समय उन्होंने अपने शरीर को जलने से बचाया नहीं, क्योंकि उनका लक्ष्य राम की सेवा और सीता की मदद करना था यह उनके संकट में साहस और धैर्य को दर्शाता है। वे विपरीत परिस्थितियों में भी साहस और धैर्य बनाए रखते हैं, जो दूसरों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।
9. **ज्ञान बुद्धि एवं चरित्र का सही आकलन :** वह अपनी बुद्धि का उपयोग सही निर्णय लेने और बाधाओं को पार करने के लिए करते थे, जैसे कि सुग्रीव और राम को मिलाने में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही । वह किसी भी व्यक्ति के चरित्र को गहराई से समझ सकते थे, जैसे कि उन्होंने विभीषण की वफादारी को पहचाना था।
10. **लक्ष्मण के लिए संजीवनी**: जब मेघनाद के शक्ति बाण से लक्ष्मण मूर्छित हो गए थे तब उनके प्राण बचाने के लिए, वैद्य सुषेण ने हिमालय के द्रोणागिरी पर्वत से संजीवनी बूटी लाने की कहा । जड़ी-बूटी की पहचान न कर पाने के कारण, उन्होंने पूरा पर्वत ही उठा लिया और समय से ले आए, जिससे लक्ष्मण जी के प्राण बच सके। रास्ते में रावण द्वारा भेजे गए कालनेमी के छद्म को चतुराई से मुकाबला कर मार गिराया। यहाँ तक कि भरत ने भी उन्हें राक्षस समझ बाण चलाया फिर भी वह सूर्योदय के पहले पहुँच गए ताकि लक्ष्मण के प्राण बच सकें ।

3. निष्कर्ष

“हरि अनंत हरि कथा अनंता” यह कथन हनुमान जी के गुणों पर सटीक बैठता है क्योंकि "गुणसागर हनुमान" अर्थात हनुमान जी ज्ञान और गुणों के अगाध सागर हैं, जिनकी महिमा तीनों लोकों में फैली हुई है। उनका जीवन दर्शाता है कि सच्चा बल वही है जो ज्ञान और सद्गुणों से युक्त हो। भगवान् राम से उनका रिश्ता केवल भगवान् और भक्त का नहीं है बल्कि उस प्रेम का है जिसमें कोई शर्त,कोई परिभाषा एवं सीमा नहीं है. ऐसा अद्भुत प्रेम भगवान राम को भक्त हनुमान से मिला। रामायण में हनुमान का चरित्र अटूट भक्ति, अविश्वसनीय शक्ति, वीरता, विनम्रता और निष्ठा का प्रतीक है।

गुणों के सागर, हे! पवनपुत्र महान,
शक्ति-भक्ति,विवेक के तुम ही हो स्वामी,
जन-जन के संकट हरते अंतर्यामी।
बल-बुद्धि साहस,भक्ति की,तीनों लोकों में निराली शान
इसीलिए श्री राम से मिला,अमरता का अद्भुत वरदान।
जय-जय, जय हनुमान ...

4. संदर्भ

1. रामायण
2. हनुमान चालीसा
3. अंतर्जाल
4. प्राचीन ग्रंथ और पुस्तकें

Indian Institute of Technology Roorkee